श्रीरामचन्द्राय नमो नमः ॥

समर्पण ।

स्वदेशानुरागी गुणिजनमण्डलीमण्डन सज्जन-
मनरंजन परोपकारनिरत संस्कृत भाषाप्रचार
तत्पर गुणवान् दयानिधान नीतिमान् धर्मप-
रायण वैश्यकुलकमलदिवाकर श्रीसेठवर्य
श्रीयुत खेमराज श्रीकृष्णदासजी
महोदयके करकमलोंमें; मुरादाबाद
आगमनके उपलक्ष्यमें यह ग्रन्थ
सादर समर्पित है ।

दोहा–द्विजज्वालाप्रसादकी, नितनवकी असीश।
पुत्रपौत्रयुतजीवहू, सुखयुतकोटिबरीश ॥

मुरादाबाद
११।१।०६

वशंवद
ज्वालाप्रसाद मिश्र.

यह पुस्तक खेमराज श्रीकृष्णदासने बम्बई खेतवाडी ७ वीं गली खम्बाटालेन निज "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-प्रेसमें अपने लिये छापकर प्रकाशित किया.

भूमिका.

सम्पूर्ण वेद शास्त्र पुराण और महात्माओंका यह सिद्धान्त है कि, किसीप्रकारसेभी ही यह मन भगवान्के चरणोंमें लगजाय तभी कल्याण होसकता है. गोस्वामी तुलसीदासजीने कहाहै कि, " देह धरे कर यह फल भाई । भजिय राम सबकाम विहाई ॥ सब साधनकर फल प्रभु एहा । होय रामपदपद्म सनेहा ॥ " यही मनुष्यजीवनका उद्देश भी है. इसी निमित्त ऋषि मुनियोंने भक्तिदर्शन तथा इतिहास पुराणोंमें बारंबार भक्तिका वर्णन किया है और सत्यभी है. भक्तिके विना मनुष्य अनायास संसारसागरके पार नहीं होसक्ता. इस भक्ति प्रगट करनेके निमित्तही पुराणादि सद्ग्रन्थोंमे वडे २ विचित्र प्रभावोत्पादक आख्यान वर्णन किये हैं. इस भक्तिरसमें निमग्न होतेही मनुष्यका मन शान्त होजाता है. और उसी समय तीनों ताप निवृत्त होजाते हैं और परमेश्वरकी सान्निध्यता प्राप्त होती है. इसी भक्तिसे मनुष्य चारों पदार्थोंका अधिकारी होता है, भक्ति प्राप्त करनेमें सत्संग एक मुख्य उपाय है इसीसे विवेक होता है पर विना हरिकृपाके सत्संगति प्राप्त नहीं होती. कहाभी है " विनुसत्संग विवेक न होई । रामकृपा विन सुलभ न सोई ॥ " जिनको सत्संगप्राप्त है इससमय वेही पुरुष बडभागी हैं, वेही भगवान्के चरणकमलोंके अनुरागी है अधिक क्या ? वही इस संसारमें यथार्थ सुखी है और वेही जीवितहैं सत्संगतिमेंही भक्तिरस भरे आख्यानोंका प्रवाह बहताहै परन्तु वह आख्यान बहुधा देववाणी संस्कृतमें पाये जातेहैं, और भाषाटीकासहित जो पुराणादि ग्रंथ प्रकाशित हुएहैं, उनमें भक्तिके सिवाय दूसरे प्रसंगभी स्थान २ पर वर्णित हुएहैं. इसकारण ऐसी आवश्यकता प्रतीत हुई कि, समस्तधर्मकी रीति नीतिसे सयुक्त सत्समागम तथा हरिभक्ति प्रकाशक, योगादि विषयोंसे अलंकृत भगवान् कृष्णचन्द्र तथा कौशलराजकिशोर भगवान् रामचन्द्रके चरित्रसे गुम्फित एक ग्रंथ भाषाछन्दोंमें रचाजाय कि, जिसके अनुशीलनसे साधु संत गृहस्थी वरागी ब्रह्मचारी वानप्रस्थ सभी हरिभक्ति और सत्समागमका लाभ प्राप्त करसकें इसी अवसरमें परम वैष्णव श्रीवेङ्कटेश्वरपदपद्मानुरागी गुणिजनमण्डलीमण्डन वैश्यकुलकमलदिवाकर सेठजी श्रीयुत खेमराज श्रीकृष्णदासजी महोदयने ऐसे ग्रंथकी रचना करनेमें मुझे प्ररणाकी, तब तो मैंने उत्साहित होकर वेद वेदान्त इतिहास पुराणादि ग्रंथोंका सार संग्रहकर ४७ अध्यायोंमें इतिहासायन, १२ मे कृष्णायन और ३० अध्यायोंमे रामायण प्रसंग वर्णन किया. इसके पाठसे चारोंवर्ण चारों आश्रम विश्राम पावेंगे इसीसे इसका नाम 'श्रीविश्रामसागर' रक्खाहै. इसके अवलोकनसे हरिजन तथा महात्माओंको सन्तोष होगा इसमें कुछभी सन्देह नहीं है। हरिभक्तोंकी भिन्नरुचि होती है, इसीसे इतिहास पुराणोंमेंसे अनेक प्रभावोत्पादक इतिहास

योगधर्मके आख्यान व्रत भक्तिविधानका संग्रहकर इतिहासायन भागकी रचना की है. इसमें कोई आख्यान अन्य कवीश्वरोंकाभी संग्रह कर लियाहै. कृष्णायनमें कृष्णचरित्र और रामायणमें न बहुत विस्तार न बहुत संक्षेपसे श्रीरामचन्द्रका चरित्र वर्णन कियाहै. और कविता इतनी सरल रक्खी है कि, सब छोटे बडे सुगमरीतिसे इसको पढ और समझ सकेंगे. इसके अवलोकनसे पाठकोंको जैसा आनंद होगा उसके कहनेकी कुछ आवश्यकता नहीं है. कारण कि, ऐसा कौन आस्तिक होगा कि जिसको हरिचर्चा भली न लगैगी? मनुष्यका परमधर्म यही है कि, रूप यौवन धन सम्पत्ति तथा प्रभुत्वके मदमें मत्त न होकर परमात्माका भजनकरै. कारण कि, मनुष्यजन्म बारंबार नहीं मिलताहै. ८४ लाख योनि भोगकर कभी नरशरीर मिलता है, इसपरभी जो अपना समय नहीं सुधारता वह व्यर्थ अपना जीवन गँवाताहै. जो उदाहरण पहले ऐश्वर्यवानोंके थे वे अब बहुत कम दिखाई देते हैं। महाराजोंके स्थानोंमे देवालय हवनकुण्ड तुलसी हरिचर्चा वेदघोष बराबर रहते थे, स्वयं ऐश्वर्यवान् सत्समागम करते थे. पर अब वह बातें कहांहैं? तोभी सर्वथा संसारसे उठ नहीं गई. श्रीमान् धीरवीर महाराजासाहब छतरपुरनरेश इसके उदाहरणस्वरूपहैं. औरभी कचित् २ हरिभक्तिकी चर्चा दिखाई देती है। एकदिन महारानी कटयास्यारीसे मैंने साक्षात् किया उनके निज स्थानमे देखा कि, जहां ऐश्वर्यवानोंके महलोंमे विदेशीय झाड़ फानूस लटके रहते हे, व्यर्थ चित्रोंसे स्थान सजे होते हैं, वहां इनका स्थान अवतारोंके चित्र तुलसीके वृंद देवालय ध्यानालय हवनकुंडसे शोभित था. चांदीकी जिल्द बँधी श्रीवेङ्कटेश्वर स्टीम् यंत्रालयकी सटीक रामायण चौकीपर शोभितथी, हरिचर्चा कथा करनेवाले अनेकों विद्वान् विद्यमानथे. महारानी स्वयं अपने हाथसे आरती करतीहैं, अधर्मीको अपने निकट नहीं आनेदेतीं, मैं यह सब कुछ देखकर बडा प्रसन्नहुआ. यदि इसीप्रकारसे दूसरे ऐश्वर्यसम्पन्न पुरुषभी अनुष्ठानकरैं तो धर्म और भक्तिका प्रवाह भारतवर्षके घर २ में बहनेलगै और मनुष्य हरिभक्तिमे लवलीन होकर हरिलोक पानेके अधिकारीबने। अबकीवार यह ग्रन्थ अत्यन्त शुद्धता तथा स्वच्छतापूर्वक छापा गयाहै।

शेषमे हरिभक्त महात्मा साधु सन्त सज्जनोंसे यह विनय है कि, यदि आप इस ग्रंथका आदर करेंगे तभी मेरा परिश्रम सफल होगा. आप लोगोंसे मुझे बहुत कुछ आशा है कारण यह कि, मैं भी एक आपही लोगोंमेंसे हूं।

सब प्रकारके स्वत्वसहित यह ग्रंथ सेठजी श्रीयुत **खेमराज श्रीकृष्णदासजी** महोदयको समर्पण करदियाहै कि, जो सर्वदा परोपकारानिरत सत्संगसेवी और गुणग्राही हैं.

सज्जनोंका चरणरेणु-**ज्वालाप्रसाद** मिश्र,

८।१।०९ } दिनदारपुरा-**मुरादाबाद.**

श्रीविश्रामसागरका विषयसूचीपत्र।

कृष्णायन.

श्रीविश्रामसागरका विषयसूचीपत्र ।

ग्रंथ समाप्ति ।

॥ श्रीः ॥

अथ श्रीविश्रामसागर-प्रारम्भः ।

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

मङ्गलाचरणश्लोकाः ।

आदिमध्यान्तहीनाय सच्चिदानन्दरूपिणे ।
सर्वरूपाय वीराय श्रीरामाय नमो नमः ॥ १ ॥
विघ्नवल्लीकुठाराय शिवपुत्राय धीमते ।
वक्रतुण्डाय देवाय गणानां पतये नमः ॥ २ ॥
पद्मभूप्रमुखा यस्य किंकरा अमृतांधसः ।
स सुधांशूल्लसच्चूडः कोपि देवोऽवलम्ब्यते ॥ ३ ॥
या जीवरूपा परमात्मरूपा या पुंस्त्वरूपा च कलत्ररूपा ।
या कामसङ्गापरिभिन्नकामा सा जानकी शं प्रददातु मह्यम् ॥ ४ ॥
नानाग्रन्थान् समालोक्य सारं संगृह्य यत्नतः ।
विश्रामोदधिग्रन्थोऽयं क्रियते लक्षणान्वितः ॥ ५ ॥

दोहा—श्रीगणपति वाणी सिया, रामचरण धर ध्यान ।
बहुग्रंथनको सार ले, कहुँ वन्दना बखान ॥ १ ॥
वंदौं शारदपदकमल, सकलसुमंगल मूल ।
बल बुधि विद्या देहु मुहिं, मातु रहो अनुकूल ॥ २ ॥

छप्पय—एकरदन सिधिसदन सदा सन्तन सुखदायक ।
शंभुसुवन गुणधाम शीशशशि देव विनायक ॥
सकल सिद्धिदातार अविद्यातमके नाशक ।
जो ध्यावै मनलाय तासुके भवदुखत्रासक ॥
जैजै गिरिशगिरिजासुवन जगद्विदितयश सुखकरण ।
करि प्रेम भक्त विनती करत बारबार प्रभुके चरण ॥ १ ॥

जय गिरीश कामारि शिवा अरधंग विराजै ।
भासितभूतिशरीर कंठविष अहि तनु छाजै ॥
मुण्डमाल मृगछाल शीश शशि गंग सुहाई ।
त्र्यम्बक दीनदयालु भक्तदुख देत नशाई ॥
जे त्रिविधतापहारी गिरिश कुन्दइन्दुदर गौरतन ।
यह दास नित्य वन्दनकरतकरहुकृपा प्रभुजानिजन ॥ २ ॥
बन्दौं महिसुरचरणकमल जगके अघघायक ।
बन्दौं श्रीरघुवीर लषणयुत जनसुखदायक ॥
बन्दौं गंगायमुन पापतमहरण दिवाकर ।
बन्दौं सुर ब्रह्मर्षि मनुज मुनि जीव चराचर ॥
पुनि वन्दौं कविजन सकल जिन वरणो प्रभुविमलयश ।
कृपाकरहु मिलि सकलजन कहौंचरितबलपाय तस ॥ ३ ॥

चौपाई ।

रघुपतिचरित विचित्र सुहाये । निगमागमपर जाहिं न गाये ॥
तदपियथामतिहरिजन गावहिं । मनगतिरोकअचलसुखपावहिं ॥
सुमिरण श्रवण कीर्त्तन सेवन । भक्तिअंग भाषत अस सज्जन ॥
करन सार्थक हित निजवानी । मंगलप्रद हरिचरित बखानी ॥
यह हरिजनको सहज सुभाऊ । बिनुहरिभजन रमत नहिं काऊ ॥
अस विचार मैं प्रभुगुणगाथा । वर्णहुँ नाय रामपद माथा ॥
कवितदोषगुण पिंगलमाहीं । वरणे शेष स्वामि सक नाहीं ॥

छन्द–मगण नगण अरु भगण यगण शुभ चारि कहाये ।
तगण सगण पुनि रगण जगण कवि अशुभ बताये ॥
मगण आदिगुरु चन्द्र देव निर्मल यशकारी ।
नगण आदिलघु देव सलिल आयुःकृतधारी ॥
भगण सकलगुरु देव भूमि श्रीकरन सुहावन ।

नगण सकल लघु देव स्वर्ग सुखकारी पावन ॥
तगण अन्तलघु देव व्योम फल शून्य कहावै ।
सगण अन्तगुरु पवनदेव परदेश घुमावै ॥
रगण मध्यलघु अग्नि देव फल दाह बतायो ।
जगण मध्यगुरु सूर्य देव रुजकारक गायो ॥
कवितांईकी आदिमें लीजै बात विचार सब ।
गुण वर्णत रघुनाथके अशुभनके फल सुभग तब ॥

दोहा—मगण नगण यह मित्रहैं, यगण भगणहैं दास ।
रगण सगणहैं शत्रु दोउ, तगण जगण औ दास ॥ १ ॥
तिनमें खगकचघनवचन, जडपरतच्छत अंक ।
यह सुखदायक जानिये, शेष नृपतिसे रंक ॥ २ ॥

यहिप्रकार पिंगलके माहीं । वरणे सकल छन्द शुभ आहीं ॥
सो विशेष मैं जानतनाहीं । विनय करहुँ सब सज्जनपाहीं ॥
भूल चूक जो मेरी होई । करिहैं सन्त सुधारी सोई ॥
ज्ञान बुद्धिबल नहिं चतुराई । वरणहुँ केवल कथा सुहाई ॥
ओछी मति चाहत बड काजा । वरणहुँ प्रभुकर यश सुख साजा ॥
रामसीयकर चरित सुहावन । सुनिहहिं सज्जनसबविधिपावन ॥
तुतरेपद जिमि बाल सुनावैं । मातपिता सुनिसुनि सुखपावैं ॥
तिमि सब सन्त सुनहिं मनलाई। वरणहुँ हरिकी कथा सुहाई ॥
निंदहिं खल कपटी अभिमानी। कलिमलभाजन अवगुणखानी ॥
तिनके वचन सन्त नाहिंमानत। गुणग्राहकता तजन न जानत ॥
मन उलूकके रविहि न आवै । चह निहि कोटियतन समुझावै ॥
निन्दाफल वर्णत मैं नाहीं । पावहिंगे समझहिं मनमाहीं ॥

दोहा—सबको सुखदायक कथा, रामचन्द्रकी भाय ।
ताके वर्णन श्रवणते, कलिमल सब जरिजाय ॥

यदपि भदेशभणित अतिमोरी । तदपि सन्तजन देहिं न खोरी ॥
रघुपतिचरित संग कबिताई । हुइहै सन्तजनन मनभाई ॥
हरिके चरित बिनाकविताई । प्राणविहीन शरीर रहाई ॥
वह तीरथ खल वायस केरा । संतहंसनहिं करत बसेरा ॥
पिंगलछन्दप्रबन्ध न होई । हरिगुण संजीवनहै सोई ॥
कहहिंसुनहिं सज्जनसब ताही । मधुकरसदृश सदा गुणग्राही ॥
वक्रगतिहिपावनजिमिसुरधुनि । तैसे हरिचरित्र कविता सुनि ॥
मज्जन करहिं सिद्धमुनिदेवा । यह प्रभावहरि हरिजनसेवा ॥

दोहा—लक्ष्मीपति अरु यज्ञपति, सकलभुवन पति जोय ।
वन्दौं भूपतिप्रजापति, करहुकृपा अब सोय ॥

पुनि हरिजनपदकमल मनाऊँ । जिनकीकृपा विमलमति पाऊँ ॥
तिनके संग फिरत हरि ऐसे । वत्स फिरत गायनसँग जैसे ॥
यद्यपि मैं खल अतिशयकामी । मनमलीन सबकुपथलगामी ॥
तदपि कृपाकर अपनो जानी । गहिहहिंसन्त मोर अव पानी ॥
अंगीकारकरहिं मम बानी । सेवकजान सन्तजन ज्ञानी ॥
शेषभूमि शिव विष प्रतिपालत । उदधिअग्नि राखत नहिंघालत ॥
बडेकरहिं जेहि अंगीकारा । पालत ताहि कष्टसह भारा ॥
रामभक्त जे सहज सुजाना । वंदन करहुँ तिन्हैं विधिनाना ॥

दोहा—मणिनकोपसम सन्तजन, आप सुतारी आहिं ।
जियत न छाँडत कबहुँ प्रण, तेहिते त्याग्यो नाहिं ॥ १ ॥
सन्तन सहज स्वभाव लखि, जान खलनकी रीति ।
निर्मितकीन्हों ग्रंथ यह, केवल हरिकी प्रीति ॥ २ ॥
गजकिशोरलखि श्वान जिमि, भूंकत पाछे जाहिं ।
पयगकुँवर निहार निज, तिन्हैं विलोकत नाहिं ॥ ३ ॥

शीशनाय करजोर दोउ, प्रणवों सन्तसमाज।
अमितपातकी भव तरहिं, जिनके चरणजहाज॥ ४॥

प्रणवों पुनि गुरुपदजलजाता। हरण शोकभ्रम मंगलदाता॥
जिनकी तनक दयाको पाई। मिटतसकलकलिमलकुटिलाई॥
मोसम पतित कौन संसारा। सकलपापको मैं भंडारा॥
सतगुरुकृपा जासुपर होई। गुणनिधान जगमें सो होई॥
करहुँ कहाँलौं गुरुहि बडाई। काग हंस जिहिं कृपाकराई॥
जिनकी कृपा कुसंग नशाई। दीन्हौं प्रभुचरणन पहुँचाई॥
सो शिवरूप जगतसुखदानी। मातुसदृश गुरुदार भवानी॥
काशी सम तिनको अस्थाना। तारकमंत्रसदृश जिहिंज्ञाना॥

दोहा—जिनकी कृपाकटाक्षते, टाट पाटमय होय।
भवभयहर दोउ चरणगुरु, बसो हियेमें सोय॥

पुनि अब अवध अवधपुरवासी। वन्दौं सब सिय रामउपासी॥
पुनि वन्दौं सरयू सरि पावनि। कलिकुटिलईत्रिदोषनशावनि॥
जाके सुमिरणपान कियेते। मिटहिं पाप परिताप हियेते॥
जो तहँ जपत नाम सुखरासी। निश्चय होत मुक्तिके वासी॥
दशरथराउसहित सब रानी। वन्दौं सुत जिहिं शारँगपानी॥
पुनि मिथिलेश सुनयना रानी। जिन अवलोके जगसुखदानी॥
भरत लषण रिपुदमन नमामी। जे सबभाँति रामअनुगामी॥
महावीर श्रीपवनकुमारा। वंदौं तव पद बारहिंबारा॥

छप्पय—जयति समीरकुमार जयति जय हरिदुखनाशक।
जयति देव हरिभक्त सुखद निश्चरकुलनासक॥
जयति विजय जयमूर्ति जयति सियसंकटटारन।
जयति ज्ञानगुणसिंधु जयति सबशोचनिवारन॥

जयति वसत जिहि हिये नित धनुशरधर रघुवंशमनि
सोइ प्रभु कृपाकटाक्षकरु सेवक जानहु मोहिं पुनि ॥

दोहा-पुनि वंदों सियपदकमल, अमल जोरि युगपानि ।
उत्पतिपालनलयकरानि, शक्तिरूप सुखदानि ॥

छप्पय-सरसिजसे दृग अरुण भाल कमलनकी सोहत ।
नीलकमलसम श्याम वदनछबि लखि मन मोहत ॥
सिंहसदृश कटि उदररेख कर धनुष विराजै ।
पीतउपरना धरे निरख छबि शारँग लाजै ॥
हेमआभरण सुभगतनु गजमुक्ताकी माल गर ।
इहि भाँति मिश्र वन्दनकरत जय सीतापति वंशधर ॥

दोहा-निर्गुणसगुणस्वरूप दोउ, गुणपालक गुणधाम ।
गुणाधीश गुणरहितकर, गुणदाता श्रीराम ॥ १ ॥
द्विजगुरुमातापिताकर, वधवा द्वेषी होय ।
जासु नाम विधि जपकिये, शुद्धहोतहै सोय ॥ २ ॥
अंध विलोचन पावहीं, मूक होत वाचाल ।
पंगु लँघे गिरि जासु बल, सो प्रभु होहु दयाल ॥ ३ ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर वन्दनावर्णनो नाम प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

दोहा-गावत रघुपतिसुयश नित, वंदौं वेद पुरान ।
जिनके सुमिरणध्यानते, मिलै भक्ति निर्वान ॥

वंदौं रामनाम अतिपावन । अचलअखण्ड नित्यमनभावन ॥
सबसुखकरण हरण सब दूषण । जपतानिरन्तर जेहि शशिभूषण ॥
भववारिधिकलिकलुषनशावन । सबसुखकरन मुनिनमनभावन ॥
मोक्षकरण दायक विश्रामा । कविभक्तनकहँ जीवनधामा ॥
धर्मविटपकर बीज निदाना । मंगलकरन हरन दुखनाना ॥

मानसरोग रहे बहु छाई । तिनके भेषज नाम सुनाई ॥
विपतिगहनवन नाम कुठारा । गज अज्ञान सुसिंह करारा ॥
मंत्रराज सबमंत्रन ऊपर । कहतसकल निगमागमकविवर ॥
सुमिरतसरललोक दोउ साधक । कामक्रोधलोभादिकबाधक ॥
जनमनशालिहेतु शुभवनसे । भक्तकल्पतरु दारिदशमनसे ॥
मुक्तिरूप तियके श्रुतिफूला । मुनिजनविहँगपक्षअनुकूला ॥
कलिमलतमरविभाँति निकंदन । ब्रह्मनेत्र भ्रमधूम प्रभंजन ॥
जन्मजन्मके कृत्य घनेरे । दुर्वासनानिवारक हेरे ॥
मरणजन्म दोउ क्षुधा पियासा । तिनको अमृत नाम सुवासा ॥
ज्ञानविरागकमलरवि नामा । मातपितासम कृतविश्रामा ॥

दोहा—बसहि जासु हिय नाम अस, सब मंत्रनको सार ।
प्रलयअनलविषकालते, तिनको हो निस्तार ॥

सोरठा—सुमिरि सु पावन नाम, संग्रहकर बहुग्रंथसे ।
जनदायकविश्राम, सागरको वर्णन करहुँ ॥

दोहा—सम्वत क्षितिऋतुअंकविधु, माधवशुक्ला तीज ।
चन्द्रवार आरंभकिय, रामभक्तिरसभीज ॥ १ ॥
कीन्ह ग्रंथ आरंभ यह, रघुपति आज्ञा पाय ।
अवधईशकरुणायतन, नितप्रति करैं सहाय ॥ २ ॥
श्रीगुरुचरणसरोजरज, निजनयननमें लाय ।
विमलकथा वर्णनकरहुँ, सुनि कलिकलुष नशाय ॥ ३ ॥
स्वर्गमोक्षधनकामना, जैसी जाकी होय ।
प्रेमसहित वरनैं सुनैं, पावहिंगे सोइ सोय ॥ ४ ॥
गिरिशभवानी सियरमण, जो जनपर अनुकूल ।
तौ वाणी फुर होय सब, निगमागमकी मूल ॥ ५ ॥

परउपदेश न चहौं बड़ाई । करौं कथा निजहित सुखदाई ॥
विविध कलेशकष्ट जेहिदेही । सुन यह कथा मोद मन लेही ॥
निगमपुराणभेद अतिगूढा । किमि समुझै कलिजीव विमूढा ॥
भाषामाहिं लिखत मैं सोई । समझसकै जाको सबकोई ॥
रचनाभेद अर्थ सोइ सांचा । वर्णहुँ चरित प्रेमरँगराचा ॥
बहुग्रंथनके चरित अपारा । मैं संग्रहकिय सहित विचारा ॥
प्रतिप्रसंग वर्णहुँ इतिहासा । जो सुनि होय सकलभ्रमनासा ॥
सबकर सार अंश यामाहीं । सुनि संदेह करै कोइ नाहीं ॥
सबकहँ यह दायकविश्रामा । ताते विश्रामोदधिनामा ॥
आदि अंत औ मध्य सुपावन । यहिमें प्रभुको नाम सुहावन ॥

दोहा—करुणा वीर बिभत्स अरु, शांत विषाद शृँगार ।
रौद्र हास्य वात्सल्य अरु, अद्भुत लेहु विचार ॥

सकलरसनको यामें स्वादा । सुकृती जन पावहिं अल्हादा ॥
संशय भँवर अर्थगंभीरा । हैं अध्यायतरंग सुनीरा ॥
दोहा कवित सोरठा जोई । कमल सुगंध भक्ति है सोई ॥
भ्रमरसंतजन तेहिमडराहीं । छंद विविधविधि मीन रहाहीं ॥
सीपसदृश सुन्दर चौपाई । रामनाम मुक्ताहलपाई ॥
हरिगुणताग सन्तजन माला । पोवहिं पहरहिं मोक्षविशाला ॥
नानाविधि पुनीत इतिहासा । सोई रत्नखान परकासा ॥
मनपर्वत तेहि सुरत लगाई । करै परिश्रम सोइ जन पाई ॥
शील क्षमा संतोष विशाला । भक्षक मोहशयन घडियाला ॥

दोहा—अर्थभाव अवरेखधुनि, युक्ति उक्ति अरु मास ।
अन्वय जमक विभेद सब, जलचर करत विलास ॥

वसत तहां श्रीयुत नारायण । निज अस्थान ब्रह्मपारायण ॥
जो चाहै हरिदर्शनपाई । निगमागम तेहि युक्तिबताई ॥

श्रद्धासम्बल नित करधारन । साधुसंग नित कर भयटारन ॥
तीजे भजन करै मनलाई । चौथे सकल अनर्थ विहाई ॥
निष्ठारुचि पंचम मनकरई । छठे ध्यान हितसे मनभरई ॥
सप्तम नाममाहिं आसक्ती । तापत्रय नाशक कर भक्ती ॥
अष्टम शुद्धभाव मनलावै । नवम प्रेमपयन्हान सुहावै ॥
दशम दरश निज प्रभुके पाई । आधिव्याधिसब जात नशाई ॥
निजस्वरूपसुख पावत प्रानी । यहि उपायबिन दरशनहानी ॥
रामकृपाबिनु श्रम सब होई । ऋद्धिसिद्धिसुखसुतलह सोई ॥
नदीसरितसम ग्रंथ अनेका । बहिआवैं यहिमाहिं विवेका ॥
चारवेद षट्शास्त्र सुहावन । अष्टादश पुराण मनभावन ॥
सबकरमत सबको विश्रामा । तेहिते विश्रामोदधिनामा ॥
पढहिं सुनहिं जो मनचितलाई । गोपदसरिससतरहिं भव भाई ॥

दोहा—कल्पवृक्षसम ग्रन्थ यह, सबअभिमतदातार ।
धर्म अर्थ कामादि सुख, देत पदारथ चार ॥ १ ॥
जिनके बुद्धिविवेक अरु, हरिपदरतिकछुनाहिं ।
प्रेम न उपजे पाठते, तिनके मनके माहिं ॥ २ ॥
जे हरिभक्त विवेकरत, ग्रन्थपठनरुचि मान ।
तिनको प्रतिपद सुखद यह, ते करिहैं परमान ॥ ३ ॥

सुखसम्पति वे सबही पावैं । हरिहरभक्त याहि मनलावैं ॥
कल्पितबात नहीं या माहीं । देखैं करि विचारबुध याहीं ॥
निजमतिते कल्पित कछु होई । तौ मुहिं दोष देहिं सब कोई ॥
जोकछुऋषिमुनिकथनकराहीं । सोइ कथा यहिभाषामाहीं ॥
बहुग्रंथनको संग्रह कीन्हा । यहिमें एकठौर धरि दीन्हा ॥
भाषाकहि जो निन्दै याहीं । तिनके हेत विनय अस आही ॥

सुरनरमुनि समुझत निजवानी । सोई हो तिनको सुखदानी ॥
ऋषिज्ञानीतज गरुडै शंकर । भेजो वायसनिकट विहँगवर ॥
हंसरूपधरि पुनि शिवजाई । कथा भुशुण्डीसे सुनपाई ॥
प्राकृतमें अजहूं समझावैं । कथापुराण मर्म तव पावैं ॥
इहिकारण जिहिकी जो वानी । सोई है तिनको सुखदानी ॥
सकलकाज निजवानीमाहीं । सबप्राणी नित करतरहाहीं ॥

दोहा-जो प्रमाण मानतनहीं, भाषाकर अज्ञान ।
तो वह अपने कृत्यकत, भाषाकरत अयान ॥ १ ॥
का भाषा का संस्कृत, सांचो चहिये प्रेम ।
प्रेमबिना रीझत नहीं, यह भगवतको नेम ॥ २ ॥
पुनि रघुपतिपदपंकरुह, प्रेमसहित मनलाय ।
कथाकरत प्रारंभ जहि, सुन कलिकलुपनशाय ॥ ३ ॥

फागुनशुक्लपक्ष जब होई । नैमिषक्षेत्र आव सब कोई ॥
प्रथम चक्रतीरथ अस्नाना । पंचप्रयाग बहुरि सन्माना ॥
न्हाय ब्रह्मसर अति सुखपाई । धेनुमतिहि आवत मुनिराई ॥
तिहिं ढिग व्यासदेवथल पावन । ऋषिशौनक तहँ रहैं सोहावन ॥
तहां सूत इकवासर आये । लखिशौनकअतिहितशिरनाये ॥
पगपखारि आसनबैठारी । आदरकीन विनयअनुसारी ॥
नाथ कछुक पूछन हम चाहीं । आयसु होय तौ प्रश्न सुनाहीं ॥
पूजापाय सूत अस भाखा । कहो सकल जो मनधरिराखा ॥
तब शौनक कह वचन सुनाई । जानत काल भेद बहुताई ॥
शास्त्र पुराण सकल तुम जानत । सकलविबुधजन तुमको मानत ॥
तुम दयालु भक्तनसुखदाई । तुम तज केहिकहँपूछहिं जाई ॥

दोहा-गुरुमहिमा कहिये प्रथम, पुनि महिमा हरिनाम ।
धर्माधर्मरुकर्मगति, ज्ञानभक्ति सुखधाम ॥

सुखदुख स्वर्गनरकके भेदा। गमनागमन कहो विधिवेदा॥
माया ब्रह्म जीव गति नाना। हरिहरजनके चरित महाना॥
अजअव्यक्तअनादिअकाया। केहिविधि सगुण भये सुरराया॥
चारिखान जग जीव कहाये। उत्पतिलयपालन कविगाये॥
योग यज्ञ जप तप व्रत दाना। वर्णाश्रमके भेद महाना॥
भिन्न भिन्न अब आपुबखानहु। हमैं सदा अनुगामी जानहु॥
शास्त्र विना नहिं सपनेहु ज्ञाना। ज्ञानबिना नहिं भक्ति बखाना॥
भक्तिविना सुख होय न कबहीं। तातें तुम वर्णहु यह सबहीं॥
सो शिरभार सहशहै भारी। हरिगुणचरण न नवै विचारी॥
जो नहिं सुनै ईश गुणग्रामा। सोश्रुतिअहिबिलसमदुखधामा॥
नैन जो हरिदर्शन नहिं करहीं। मोरपंखसम कवि उच्चरहीं॥
जो कर हरिसेवा नहिं करहीं। तेमललिप्त पाप नित धरहीं॥
जो जिह्वा नहिं हरिगुणकहई। सो दादुर सम निश्चय अहई॥
जे पग नाहिं तीरथहित जाहीं। जानहु सो स्तंभ सदाहीं॥
जेहि तनु हरिभक्ती नहिं आई। सो शवसम जानहु भयदाई॥

दोहा—यहि तनुकर फल जानिये, जब उपजे हरिभक्ति।
महिमा सुनिये गाइये, पइये निश्चय मुक्ति॥

सुनिअस वचन सूतसुख पायो। वेदव्यासपद पुनि शिरनायो॥
कछु क्षणमगन सुमूँदे नैना। पुनि बोले ऋषिसे मृदुबैना॥
जानहु प्रश्न तुम्हार सुहावन। कहत सुनतजगकोकरपावन॥
धन्य धन्य तुममुनिबडभागी। कीन्हेउ प्रश्न जगतहितलागी॥
हरिहरकथा जगतसुखदेनी। अघनाशन सुरलोकनिसेनी॥
महामोहतमनाशनकारी। भक्तन देत पदारथ चारी॥
कामधेनुसम अभिमतदाता। गुरुपदरजसम कृत अवदाता॥

कलिमलभेकग्रसन विषधरसी । क्रोधमहिषको दुर्गादरसी ॥
साधुसमाज उडुपरजनीसी । सन्तपोतपालक जननीसी ॥
ब्रह्मदरशको चक्षुपुतरीसी । मृगमनुआवांधन सुतरीसी ॥
लोभलवात्रासन बहरी सी । सद्गुणचयनकरन लहरीसी ॥
दोहा-मेटनको दुर्वासना, शलभ सदृश यहगाथ ।
भवभयहरणकरणसुख, असचरित्र रघुनाथ ॥
हरण अविद्या तूल हुताशन । गाथा यह अतिअमल सुहावन ॥
धर्म कर्ममय वीज रसासी । सुमतिकरनहितसुखददशासी ॥
भववारिधि शोषण कुंभजसी । जगनिर्वाह हेत विधि अजसी ॥
काम भुजंग हेत शंकरसी । हरिमहिमा कारन कविवरसी ॥
दारिद दुख मूषक बिलारसी । रामध्यान कारन खिलारसी ॥
सर्वभूत तरुवर वसन्तसी । भक्तिगन्धदायक कुसन्तसी ॥
विरतिज्ञान नरपति मोहनिसी । सुद सन्ताप दूव दोहनिसी ॥
देव पितर हित अन्न स्वधासी । सकल विश्वधारणवसुधासी ॥
प्रभुपद प्रीति करन तुलसीसी । हरिकीरतिकारण हुलसीसी ॥
कविजन पालन हेत गंगसी । भक्तिमुक्तिदायक तरंगसी ॥
भक्ति मुक्ति मंगलकी दायक । सुनहु कथा कलिमलअघ वायक ॥
दोहा-मंगल श्रोताके भवन, मंगल वक्ताधाम ।
मंगल लेखकके भवन, मंगल सुमिरहु राम ॥
इति श्रीविश्रामसागरे सन्मतआगरे कथाप्रसंगवर्णनो नाम द्वितीयोऽध्यायः २

दोहा-अमृतमय श्रीहरिचरित, नितप्रति सेवहि जोय ।
भववारिधिके दुःखसों, तेहि उद्वेग न होय ॥
कहिहौं असि हरिकथासुहाई । कहौं प्रथम गुरुमहिमागाई ॥
गुरु शंकर गुरु ब्रह्म मुरारी । श्रीगुरु ब्रह्म दीनदुखहारी ॥

गुरुकी शरण जो आवै प्रानी। होय तुरत चौरासी हानी॥
गुरुकी कृपा अमितगति पावै। गुरूकृपा यमत्रास नशावै॥
अतिपापी गुरुशरण जुआवहि। ताके दुःखनिकट नहिं जावहि॥
गुरुके वचन जाहि विश्वासा। फिर नहिं होय नरकमहँ वासा॥
वरणौं एक रुचिर इतिहासा। सुनहु मान हिय परम हुलासा॥
एक वधिक रह वनके माहीं। कपटी कुटिल दया मननाहीं॥
नाम तासु मारीच बतायो। करत ठगाई कालवितायो॥
तिहिइकदिनमनमाहिं विचारी। मोसम पतित न जगमें भारी॥
जबते जन्म लियो जगआई। पापकरत सब वैस गमाई॥

दोहा—हुइहै मेरी कौन गति, किमि हुइहै निस्तार।
निकसे गौतम ऋषि तहाँ, द्वियातप आगार॥

लखत व्याध तुरतहिउठिधायो। करिप्रणाम अस वचन सुनायो॥
मैं पापी अतिअधमशरीरा। तुम दयालु भंजन भवभीरा॥
ताते अब करि कृपा विचारी। मोहिं शिष्य कीजे निस्तारी॥
मुनि कह शिष्यकरै तोहिं जोई। अर्द्ध पाप ताके शिर होई॥
पाप पुण्य जिहि विधि बटजाई। पद्मपुराण कथा सोइ गाई॥
यदि तपसी अरु विषयी दोई। भोजनकरैं एकसँग सोई॥
बुरीभली संगति हुइजाई। आधो पाप पुण्य बटिजाई॥
छुइ अस्पर्श करै बतरावै। तहां पाप दशमांश बटावै॥
दर्शन ध्यान जासु वच सुनहीं। सप्तम अंश पाप बट गुनहीं॥
ध्यान धर्म जप तप कर जोई। सेवा तासु करत जो कोई॥
दशम अंश फल पावत सोई। पापपुण्य कोऊ किन होई॥

दोहा—ऋण करकै कर पाप जो, तीन भाग धन दात।
चोरीकर कर धर्म जो, पापपुण्य नहिं तात॥

जो काहूको प्रेरि करावै । छठमों अंश कर्मफल पावै ॥
धर्माधर्म प्रजाकर जोई । छठमों अंशनृपति लह सोई ॥
संध्या पाठ हवन अस्नाना । जप तप पूजानियमसुहाना ॥
इनमें बात करत जो कोई । छठा भाग पुण्यहि दे सोई ॥
दूजे कर जो धर्मकरावै । छठवाँ भाग पुण्य सो पावै ॥
पितापुत्र निजपति अरु नारी । गुरू शिष्य दोउ कहौं पुकारी ॥
पापपुण्य यह करिहैं जोई । अर्द्धअर्द्ध बटजावहि सोई ॥
यासे शिष्यकरों तोहिं नाहीं । बाट न रोंक मोरि वनमाहीं ॥

दोहा–कह्यो वधिक नहिं होइहो, जबतक गुरू हमार ।
तबतक जाननदेइहौं, कोटि करो उपचार ॥

सुनिमुनिहियअसकीन्हविचारा । इहिखलतेकिमिहो निस्तारा ॥
शिष्यबनत सब पापनिवारे । प्रेमसहित कस वचन उचारे ॥
कह मुनि दे गुरुदक्षिण मोहीं । पाछे करों शिष्य मैं तोहीं ॥
कह्यो व्याध मम ढिग जो होई । हे मुनिनायक लीजे सोई ॥
मुनि कहअबनकरहुकछुपापा । सुमिरहु राम मिटै सन्तापा ॥
परममंत्र तारक अविनाशी । हरे ब्रह्महत्या अघराशी ॥
अस कहि ऋषिचलिभेहरषाई । वधिकनामसे प्रीति लगाई ॥
जपत जपत बहुकाल बितायो । मरणसमयकरदिनजब आयो ॥
आये ताहि लेन यमकिंकर । पाछेते हरिगण आये वर ॥
कुंडलश्रवण मुकुटवर शीशा । पीतवसन भूषण तनु दीशा ॥
भुज विशाल सुन्दर वरचारी । चक्रादिक आयुध वरधारी ॥
हरिगणलखि यमदूत डराये । बोले वचन इतै कत आये ॥

दोहा–हरिगण बोले सुनहु तुम, वधिक वसतयहि ग्राम ॥
समय निकटहै तासुको, लैजैहैं हरिधाम ॥

सुनत वचन वे सब यमकिंकर । बोले वचन रोषहियरेकर ॥
वधिक नीच अतिशय यह पापी । सुरमुनिदुखद साधुसन्तापी ॥
बहुतक जीव हने अन्याई । सो किमि हरिके लोक सिधाई ॥
बोले गण जबते गुरु कीन्हा । तबते रामनाम चितदीन्हा ॥
तबते कछु न कीन्ह अपराधू । भयो जपत हरिके गुणसाधू ॥
असकहि ताहि विमानचढ़ाई । गे वैकुंठधाम हरपाई ॥
गुरुमहात्म्य अस लख्यो प्रतापा । यमदूतनहिय अतिसंतापा ॥
मनखिसाय निजधाम सिधाये । अस गुरुचरित पुराणन गाये ॥
नरतनुधरि गुरु सेयोनाहीं । ते जन अवशि नरकको जाहीं ॥

दोहा—गुरुशरणागत होय जो, नित सुमिरै श्रीराम ।
यहां पाय सुख विविधविधि, अन्त बसै हरिधाम ॥ १ ॥
गुरुविनु भवनिधि नाहिं तरै, कोटिन करो उपाय ।
बरु इन्द्रादिक देवते, ऐश्वर्यहु अधिकाय ॥ २ ॥

यामें कछु संशय है नाहीं । बिनु गुरुकिये न भवदुख जाहीं ॥
ब्रह्मशिष्यप्रकृती सुहाई । महत्तत्त्वशिष तासु कहाई ॥
तिहिकर शिष्य प्रणव ऋपि मानत । तिनके विष्णुजगतसबजानत
तिन हरि शिष्य लक्ष्मीगाई । तिनके विधि विधि शंभुगुसाँई ॥
प्रभु जब धरो रामअवतारा । विश्वामित्र गुरू किय भारा ॥
अरु शुकदेव जनकढिग जाई । शिष्यरूपसे विद्या पाई ॥
नारद औ मनु गुरुहि बड़ाई । धर्मजानकर बहुविधिगाई ॥
गुरुविहीन नारद ऋपिराई । जब जब हरिढिग बैठहिंजाई ॥
जब पुनि बिदाहोय चलिआवैं । रमानाथ सोइठौर धुवावैं ॥
एकबार नारद लखिपाई । जोरि हाथ दोउ विनय सुनाई ॥
कारण कौन भूमि शुधवाई । कृपासिंधु मोहिं कहो बुझाई ॥

दोहा-तब बोले हरि सुनहु मुनि, तुम गुरु भये न कौन ।
तातै इतनी ठौर हम, नित शुधाय करि लीन ॥
दीक्षाहीन जात जहँ प्रानी । होत अशुद्ध ठौर सुन ज्ञानी ॥
दीक्षित चरण परैं जब आई । तब सोइ थली शुद्ध होजाई ॥
कह नारद नहिं प्रथम सुनायो । यह मोरे मन अचरज आयो ॥
कह प्रभु तुम्हें दुःख मुनि होई । तातै नहिं समुझाई सोई ॥
तातै करो गुरू कहुँ जाई । नारद कही सु देहु बताई ॥
प्रातकाल मुनि मिलै जो तोही । करिये तुरत गुरू है ओही ॥
भोरभये ऋषिराउ सिधाये । धीमरदेहधारि हरि आये ॥
मुनि आगे है निकसे जबहीं । परे चरणमहँ नारद तबहीं ॥
ताहि गुरूकरि हरिपहँ आये । देखतही प्रभु हृदयलगाये ॥
दोहा-कौन कियो गुरु किमि कहो- सो कहिये मुनिराउ ।
मोहित गुरू कहीयह, चौरासीपहँ जाउ ॥
नारद सुन निजगुरुढिग आये । समाचार सब गुरुहि सुनाये ॥
गुरुबोले तुम हरिपहँ जाई । चौरासी लिखवावोजाई ॥
नारद हरिढिग आय सुनाई । चौरासी नहिं समुझि गुसाँई ॥
सो लिखिदीजे मोहिं बुझाई । ताहि समाझि भोगों मैं जाई ॥
कह प्रभु नवलख जलचरजाती । भ्रमत जीव इनमें बहुभाँती ॥
हैं पक्षी दशलाख घनेरे । भ्रमतरहत नभमयते घेरे
ग्यारह लाख कीटकृमि गाये । बीसलाख वनविटप सुहाये
तीसलाख पशुयोनि गिनाई । चारिलाख मानुष तनु भाई
यह चौरासी योनि कहावे । सब भोगेबिन अन्त न पावै
सुनत वचन नारद गे धाई । लख इनको गुरु वचन बनाई
यह उपदेश कीन्ह तुम दीना । जाते मोहिं गुरू तुम कीना
क्षणमें मेटिदई चौरासी । को कृपालु गुरुबिन सुखरासी

दोहा-गोविंदते गुरु अधिक हैं, यह जानो विश्वास।
गोविंद डारैं नरक जिहि, गुरू मिटावत त्रास ॥ १ ॥
है गुकार तमनाम रू, हरत करत परकास।
यही गुरूको अर्थ है, धर्मग्रंथ इतिहास ॥ २ ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर गुरुमाहात्म्य मारीचनारद कथावर्णनोनाम तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

दोहा-सुमिरि रामसेवक सुखद, सकल सुमंगलखान।
धर्मशास्त्रमत कहौं कछु, महिमा गुरू बखान ॥

गुरुमहिमासुनि शौनक ज्ञानी। बहुरि सूतसन बोले बानी ॥
नाथ मोहिं अनुगामी जानी। गुरुमहिमा पुनि कहो बखानी ॥
बोले सूत जु गुरुबिन करई। ताको काज सफल नहिं सरई ॥
गुरुबिन मुक्ति न पावत कोई। चौरासीभय मिटत न सोई ॥
ज्ञानभक्तिबिन गुरू न पावै। आत्मविचार स्वप्न नहिं भावै ॥
जप तप गुरुबिन किये अकारथ। बिनगुरु नहिं सूझत परमारथ ॥
होय गुरूलक्षण सत जामें। दीक्षाज्ञान फलतहै तामें ॥
योग्यगुरू जो होय गुसाँई। ताको करिये स्वामि बनाई ॥
यहिपर एक कहत इतिहासा। सावधान सुनु सुमतिसुपासा ॥
योजनचार अवधके उत्तर। एक नगर शोभित अतिसुन्दर ॥

दोहा-कृष्णदत्त इक द्विज बसत, तहां साधुसन्मान।
सुन्दरिनामा तासु तिय, करत विविधविधिदान ॥

करे दान बहुविधि मनलाई। धन शय्या पकवान मिठाई ॥
कोउ अतिथि विमुख नहिं जावै। सेवामें अतिशय मनलावै ॥
इकदिन सो द्विज ग्रामसिधाये। पाछे तेहिघर नारद आये ॥
रामचरित गावत सुखदाई। तिहिद्वारेहो निकसे जाई ॥

ऋषिहिनिरखिसोतियउठिधाई। विनती कीन्ह भवन लेआई ॥
चरण धोय आसन बैठारे। भवन सिंचायो अतिसुखभारे ॥
धूप दीप आरती सँभारी। बोली है बडभाग्य हमारी ॥
कियो निमंत्रण पाक बनाई। भोजनहित ऋषि गई लिवाई ॥
प्रेमसहित ऋषि भोजन कीन्हा। करिआचमनसुथलपगदीन्हा ॥
मातपिता तव धन्य सयानी। जिनकी कोखमाहिं जन्मानी ॥
सबविधि तव गुरु धन्य बड़ाई। जिन तुहि सेवा साधु बताई ॥

दोहा-मेरे तौ गुरु है नहीं, सुनि बोली अस नारि ।
क्षुधितजननको करतहौं, आदर धर्मविचारि ॥

सुने वचन नारदऋषि जबही। उगलदियो तेहि भोजन सवही ॥
तब सुन्दरि बोली करजोरी। भोजन उगलदिये किहि खोरी ॥
मुनिकह जो हरिभक्त सयाने। निगुरे गेह निमंत्रण माने ॥
अथवा जल पीवैं अविचारी। प्रायश्चित्त लगत सुनु नारी ॥
चान्द्रायणव्रत करै सुहावन। तब कहुँ होवै वैष्णव पावन ॥
इष्टापूर्त्त किये फल ताके। निष्फलहोत गुरू नहिं जाके ॥
ताते निगुरेकरको भोजन। करतनहीं सुन्दरि सुन सज्जन ॥
है यह निन्दितकर्म सयानी। याते होत बुद्धिकी हानी ॥

दोहा-ताते तेरे करहुओ, भोजन दीन्हों डारि ।
धरत उदरमें अधिक जो, नाशत ज्ञानविचारि ॥

तब सुन्दरि मनकीन्ह विचारी। दोष भयो मुहिमें यह भारी ॥
जपतप दान किये व्रत भारी। सो सब व्यर्थ होत यहिबारी ॥
गुरुबिन सब निष्फल भे मोरे। बिनऊं बारबार पग तोरे ॥
ताते अब करि कृपा विशाला। राममंत्र मोहिं देहु दयाला ॥
देखि प्रीति मुनि वचन बखाना। प्रथमहिं जाय करो अस्नाना ॥
कह तिययहि क्षण न्हान नजाऊं। ताको कारण कहि समुझाऊं ॥

जब यह जीव शरण हरि जावैं। यमगण कुललोगन भरमावैं ॥
पितु सुत मातकहत अस बानी। हमरे कुल नहिं भक्ति सुहानी ॥
कोउकह अबहिंजगतसुखलीजै। वृद्धभयेपर गुरू करीजै ॥
लखि अस विघ्न जु रहत चुपाई। ताको काल लेतहै खाई ॥
स्वारथवश रोवत निजलोगा। सुतवनिताकृत स्वारथसोगा ॥

दोहा—हरिके विमुख रह्यो यह, करैं न याको शोच।
मिटैं न कबहूं भाँतिसो, कर्म किये जो पोच ॥

तिहिते बाहर न्हान न जाऊं। देवहु दीक्षा हरि चितलाऊं ॥
सुनत वचन तबमुनि सुखपाई। तुलसीमाल कंठ पहराई ॥
कवनउ वर्ण होय जो प्रानी। तुलसीमाल सबहिं सुखदानी ॥
विधिहरिहरको साखी कीन्हा। राममंत्र ताको मुनि दीन्हा ॥
हरिसेवाके धर्म सिखाई। गमनतभये तुरत ऋषिराई ॥
पाछेते जब तेहिपति आयो। लखिमाला अतिक्रोध बढायो ॥
केहिके कहे माल गलडारी। कीन्हों मोर निरादर भारी ॥
धरहु उतारि न तो गलहोई। बोली तिय करजोरे दोई ॥
चहुतनु खण्ड २ हुइजाहीं। गलते माल जात कहुँ नाहीं ॥
सुनत वचन पति रह्यो चुपाई। मारे हुइहै लोगहँसाई ॥

दोहा—तिहिदिनते अबला कियो, अपने मन अस नेम।
पतिकर छुवो न पावही, भोजन राखत प्रेम ॥

लखि द्विज मन तव लज्जा पाई। गुरूकरनकी मनमें आई ॥
अबकै ऋषि आवहिं मम गेहा। करिहौं तिहि गुरु सहितसनेहा ॥
इहिविधि सो करिरहत विचारा। एकदिवस नारद पगुधारा ॥
लखि निजगुरू तिया हरषानी। पदपखारि बैठारसि आनी ॥
बोली है बडभाग्य हमारा। कृपा कीन्हजो प्रभु पगु धारा ॥

देवरूप निजगुरुको जानी। पंचप्रदक्षिण कीन्ह सयानी॥
आगे धरी भेंट कछु आनी। ऋषिसों बहुरि कही मृदुवानी॥

दोहा—वैद्य ज्योतिषी नृपति गुरु, देव मित्रजन जोय।
इनसों मिलिये भेंटधर, तौ फुर कारज होय॥

विविधभाँति पुनि पाक बनाई। नारदको भोजन करवाई॥
अचमनकर ऋषि आसनआये। उतद्विजनिजतियवचनसुनाये॥
गुरु दीक्षा मोहिं देहु दिवाई। बहुरि कहाँ अस अवसरपाई॥
तब सुन्दरि नारदढिग आई। दीक्षाहित अति विनय सुनाई॥
नारद कही नहावहु जाई। दीक्षा देहुँ नाम सुखदाई॥
सुनत वचन द्विज आतुरताई। चलो नहानदी सकुचाई॥
मगसें भइ पंडितते भेंटा। ठाटकीन्ह तिन्ह गहिकर फेंटा॥
पूछा कहाँ चले अतुराई। कृष्णदत्त सब बात सुनाई॥
सुनत वचन पण्डित कहताता। यहहै क्षौरकृष्णपख ताता॥
यामें दीक्षा लीजैनाहीं। कार्त्तिककी पूनो सुखदाई॥
सुनत लौटआये द्विजराई। नारदसे सब बात सुनाई॥
नारद सुनतगये विधिलोका। विप्रबाट कातिक अवलोका॥
सो तो कातिक आननपायो। वीचहि दुहुँन काल धरि खायो॥

दोहा—एकपलककी सुधि नहीं, वृथा कालकी आस।
हँसत काल अस नरनसे, नहिं मानत मम त्रास॥ १॥
अस विचार जे चतुरनर, करत शीघ्र शुभकाम।
इकपलमें कह होयगो, भजले सीताराम॥ २॥

इति श्रीविश्रामसागर सगमतआगर कृष्णदत्तकथावर्णनो नाम चतुर्थोऽध्यायः॥ ४॥

तब शौनक बोले पुनि बानी। तनुतज गये कहांदोउ प्रानी ॥
कह्यो सूत वह सुन्दरिनारी। चढ़ि विमानहरिलोक सिधारी ॥
द्विज पहुँचो यमके ढिग जाई। पापपुण्य जहँ न्याव चुकाई ॥
चित्रगुप्त बोले यमपाहीं। दान पुण्य जप याके आहीं ॥
हैं दो पाप अधिकही भारी। तिनहूँको हौं कहत उचारी ॥
इन द्विज कीन्ह यज्ञ इकबारा। कियो निमंत्रण विप्र सदारा ॥
तहां चल्यो इक हरिजन आयो। कृष्णदत्तसे वचन सुनायो ॥
क्षुधावन्त हम हैं द्विजराई। कछु भोजन हमको दे भाई ॥
सुन यह वचन क्रोध इन कीन्हा। अनुचितवचकछुकहिबेलीन्हा ॥
सुनत वचन तब चलिभे साधू। भयो यहै द्विजते अपराधू ॥
जासु यज्ञमें हरिजनआई। भोजन किये बिना फिरिजाई ॥
ताके पुण्य सकल घटिजाहीं। दिनप्रति पाप होत अधिकाहीं ॥
पुनि जब गुरू कियो यहि नारी। लखि इनने कीन्हीं रिसभारी ॥
ताते पुण्य भयो बहु छीना। कछु थोरो बाकी रखलीना ॥

दोहा—सुनि बोले यमराज यहि, दीजे गजकी देह।
भोगै निजकृत जाय फल, काहू नृपके गेह ॥

जब यमराज कही यह बानी। गजतनु पायो तुरत वह प्रानी ॥
वनमें कछु दिन दिये बिताई। चन्द्रसेननृपगृह पुनि आई ॥
यह सब चरितजानि द्विजनारी। मनमें शोचकीन अतिभारी ॥
मम पतिने वारणतनु पायो। कौनभाँति यह जायमिटायो ॥
करिइच्छा तिहि नृपके आई। कन्या भई सबन सुखदाई ॥
कुरुक्षेत्रको यह बडराजा। कन्याभइ बहु मंगल साजा ॥
दानकियो गुरु किय मुनिराई। ताते नृपकन्या भइ जाई ॥
गुरुनारदके दरशनकारन। जातिस्मर भइ सुता सुधारन ॥

कन्या जब कछु भई सयानी । गजपहँ गई पती निजजानी ॥
पुनि गजने पहिंचानो वाही । दुहूँओरते प्रीति निबाही ॥

दोहा–भई व्याहने योग्य जब, वह कन्या सुकुमारि ।
बूझि घड़ी शुभ नृप करी, रीतिस्वयम्वरसारि ॥

लखि वारण त्यागो जलपाना । मनमें करनलगो अनुमाना ॥
हुइहै कहा जात मम नारी । हे विधना कतबात बिगारी ॥
राजा लखि बहु यत्न करावा । तबहुँ अन्नजल गज नहिं पावा ॥
जब राजा मनमें दुखमानी । कन्या तब बोली मृदुबानी ॥
हेपितु जो मोहिं देहु रजाई । भोजन गजको देहुँ कराई ॥
सुनत वचन नृप आज्ञा दीन्हीं । कन्या जाय विनय तब कीन्हीं ॥
कहा शोचमानत मन भारी । खात न अन्न पियत नहिं वारी ॥
कह गज होत तुम्हार विवाहा । यहिते होत मोर मन दाहा ॥
जबते जन्म भयो इत मेरो । तबते निशिदिन तुमकहँ हेरो ॥
आनपुरुषको जैहौ ब्याही । यहै शोच मेरे मनआही ॥
ताते अन्न न खायो जाई । बार २ मनमहँ पछिताई ॥
कन्या कहै शोच जनिकीजै । वृथा काहि अपनो तनु छीजै ॥
मैं जो कही भजहु भगवाना । असअवसरनहिंफिरकरआना ॥
तब कातिककी आश लगाई । याहीविधि गजपदवी पाई ॥
तबकर्त्तासुमिरे तुम नाहीं । आयपरे चौरासी माहीं ॥

दोहा–सो मानो मेरी कही, जल औ भोजन पाउ ।
तुम्हैं छाँडि मैं अन्यसे, करब न अपनो व्याउ ॥

सुनि गजने भोजन तब कीन्हा । राजा कह्यो मंत्र कह दीन्हा ॥
कन्या कही नृपति सुनि लेहू । पूर्वजन्ममें मम पति एहू ॥
विप्रशरीर नारि मैं याकी । मैं गुरुकीन्ह देवऋषि साकी ॥

मम पतिहू कीन्हों बहुदाना। पै गुरु कीन नहीं सुख दाना॥
ताते वारणको तनु पायो। अब मम व्याहहेतु सुनिपायो॥
भोजन त्यागदियो दुख भारी। तब मैं वचन दीन निर्धारी॥
तुम तजि अन्य वरूंगी नाहीं। भोजनकियो हर्ष मनमाहीं॥
राजा सुनि कछु सांच न मानी। करन स्वयम्वरकी मनठानी॥
देशदेशके राजा आये। बैठे तहां सुवेश बनाये॥
करि शृँगार कन्याका रानी। बोलीपरममनोहर बानी॥
जो भावै तव मनहिं नृपाला। मेलो तासु गरे जयमाला॥
असकहिसंगसखीकरि दीन्ही। कन्या चली मालकर लीन्ही॥

दोहा–किहूँओर नहिं दृष्टिकिय, बाल चली तत्काल।
बैठे देखत नृपति सब, मेली गजशिर माल॥

सबने कही भूलभइ भारी। पुनि माला डारे सुकुमारी॥
माताहू तव कही रिसाई। पुत्री तेरी मति बौराई॥
नृपति त्याग गजके उरमाला। डारीकहा कीन्ह यह बाला॥
जासु काहु महिपालहि देखी। पहिरावहु जयमाल विशेखी॥
पुनि कन्या गजके शिर डारी। चलिभेनृपति दीन्ह करतारी॥
तव राजा अतिशयदुखपाई। लेअसि कन्यावध चितआई॥
तब विप्रन राजहि समुझायो। धर्मशास्त्रको वचन सुनायो॥

छंद–गोरुंटद्विज चोर सुता नारी व्यभिचारिणि।
यती भ्रष्टहोजाय अवध स्वच्छन्दविहारिणि॥
दशगोवधको पाप एक ब्राह्मणके मारे।
दश ब्राह्मण वधपाप एक स्त्रीसंहारे॥
दश स्त्रीवधपाप एक कन्यावधकीने।
दशकन्या वधपाप वधे संन्यासीलीने॥

दशदण्डीके वधसे जो पातक शिरहोय ।
सो इक हरिजनके वधे राजा समझो सोय ॥
दोहा—ताते हत्या त्याग कहुँ, लीजे वर खुजवाय ।
टीकाकरके तुरतही, नृपति देहु भँवरचाय ॥

राजा नारद विप्र बुलाये । वरढूँढनहित तुरत पठाये ॥
जहँतहँ सकल खोजकरी भारी । मिलो न वर कन्याअनुहारी ॥
कोउ न कोउ दोष तिनमाहीं । पावैं ताते व्याहत नाहीं ॥
हारपरे दोऊ फिरिआये । राजासे अस वचन सुनाये ॥
मिलो न वर सुनि नृप दुखपाई । कर्मविपाक सुता बचवाई ॥
तब विप्रन अस गिरा उचारी । कन्यावचन सत्य तपधारी ॥
तब सर्वत्र फैलगइ बाता । राजाको हाथी जामाता ॥
लज्जित नृपति महादुखपाई । तहँ इक अग्निकुण्ड खुदवाई ॥
आनि काठ अरु घृत बहुतेरा । जलनहेत नृप निश्चयहेरा ॥
दोहा—तेहिछिन आये देवऋषि, लीन्हें करतल बीन ।
क्यों त्यागत तनु नृपति तुम, कहि अस भुज धरिलीन ॥

क्यों तनु त्यागत वृथा भुआला । सुनि राजा वरणो सब हाला ॥
तब राजा सब कथा सुनाई । जिहिविधिकन्याकलहकराई ॥
सुता योगवर पावत नाहीं । ताते तनुत्यागहुँ दुखमाहीं ॥
कन्यापति हाथी बडहासा । पग २ पर निन्दा उपहासा ॥
विनु तनुतजे न अब विश्रामा । सुमिरिकहतनारद घनश्यामा ॥
इक उपाय सुनिये महराजा । करहु होय तौ पूरण काजा ॥
राममंत्र जो गज सुनि पावै । तौ अबहीं मानुष हुइजावै ॥
सुनि राजा कह विलम न लावहु । गजही दीक्षामंत्र सुनावहु ॥
जिहिसे मोर कलंक नशाई । सुताविवाहौं पुनि मुनिराई ॥

तब नारद हरिमंत्र सुनाई । ताके पातक दिये बहाई ॥
तेहिमुखते बालक प्रगटाई । जाकी शोभा कहीनजाई ॥
तिहिछिन भयो किशोर शरीरा । दृगविशाल अरु वपुगंभीरा ॥
लखिकुमार दोउ राजा रानी । इकटकरहि मुखआव न बानी ॥
सखिधनलखिणनिकीन्हबड़ाई । धन्यभाग्यनृपवर भल पाई ॥
तब कुमार ऋषिपद शिरनाई । बार २ की विनय बडाई ॥
जयजयजय मुनिवर विज्ञानी । किय उद्धार शरणसुखदानी ॥
गजतनुको दुखदियो छुडाई । को करिसकै तुम्हारि बडाई ॥

दोहा–जानी कृपा तुम्हारिते, मैं सत्संगप्रभाव ।
कृपा कीजिये दीजिये, अब उपदेश सुभाव ॥

तब मुनिवर शिक्षा उच्चारी । हियमें तिन धारी सुखकारी ॥
कन्या नृप अरु सो पटरानी । भइऋषिशिष्यसकलगुणखानी ॥
तिहि पाछे पंडित बुलवाई । व्याहहेतु शुभ लग्न धराई ॥
कहीज्योतिषिन भलदिन आजू । कीजै अवशि व्याहको साजू ॥
तब नरेश मन कीन्ह उछाहा । रीति प्रीतिसों कियो विवाहा ॥
दायज विविध भाँतिसों दीन्हा । दानमान परिपूरण कीन्हा ॥
दिनदिनसुखपायो अधिकाई । गुरुप्रताप दुखरह्यो न राई ॥
गुरुसम देव न दूजो कोई । गुरुकी कृपा सकल सुख होई ॥
पंच देवकी दीक्षा नीकी । गुरुसे लेइ भावना जीकी ॥
जैसी जाकी इच्छा होई । तौनदेवको पूजै सोई ॥
राममंत्र सबते अधिकाई । याकी महिमा कहीनजाई ॥
राममंत्र दीक्षित जो होई । ताको और मंत्र नहिं कोई ॥
अन्यमंत्रके जौन उपासक । ते हुइसकैं रामअवराधक ॥
गुरू शिष्य सम्बन्ध सुहाई । सब सम्बन्धनते अधिकाई ॥
यामें अन सम्बन्ध न लागै । याकेकिये सकलदुख भागै ॥

दोहा—ज्ञानबतावै हितकरै, तारै सतगुरु होय ।
नरकमँझावे शिष्यसे, करै अन्यथा कोय ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर गुरुमहिमाकृष्णदत्तकथा वर्णनोनाम पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

दोहा—विधिहरिहरकोविदगिरा, गणपतिसहित मनाय ।
वरणों नामप्रभाव कछु, सुनि कलिकलुष नशाय ॥

सुनि शौनक असविनयबखानी । नामप्रभाव कहो सुखदानी ॥
सुनि मुनिवचन सूत हरषाई । कहनलगे हरिकथा सुहाई ॥
नामप्रभाव सुनो मनलाई । जो शिव उमहि कह्यो समुझाई ॥
एकबार शिवसहित भवानी । बैठे गिरि पहँ वटतर आनी ॥
पतिहि प्रसन्न विलोकि भवानी । हाथ जोरि बोली मृदुबानी ॥
स्वामिन् रामनाम सुखदाई । निशिदिन जपतरहतमनलाई ॥
ताको अर्थ महात्म्य सुहावन । मोसे वरणहु प्रभु मनभावन ॥
कह शिव धन्य प्रिया मतितोरी । प्रीतिकराई हरिपद मोरी ॥
रामनामकर अमित प्रभावा । सन्तपुराण उपनिषद् गावा ॥
निगमागमजेहिपार न पावैं । सोकिहिविधिहमतुम्हैं सुनावैं ॥
जानत राम अर्थको रामा । अखिललोकदायकविश्रामा ॥
तदपियथामति जो लखिपायो । सो तुमसे वर्णहुँ मन भायो ॥

दोहा—कोटिकामतनु जासु छबि, मोहित कौन न होय ।
जनकनगर नर नारि सब, रमे देखकर सोय ॥

आये द्वीप द्वीप महिपाला । जनकसहित मोहे तत्काला ॥
परशुरामको क्रोध अपारी । मोहितहोगये राम निहारी ॥
वनविचरत खग मृग नर नारी । कोल भिल्ल गिरिसरद्रुमडारी ॥
रमे सबहिं मिलि सेवालाई । रसक्रीडाकर अर्थ बताई ॥

लखीनिशाचारिप्रभुछबिजबहीं। पतिकारण इच्छा की तबहीं॥
खरदूषणसह असुर अनेका। मोहे लखि प्रभु तजि निजटेका॥
दण्डकवनके ऋषिमुनि झारी। मोहितभये पुरुष इव नारी॥
निरखत बालिरम्यो तत्काला। दियेनलीन्हसिआयु विशाला॥
रावणसमर निशाचरवीरा। देखिराम मोहे रणधीरा॥
अवधनगरनरनारि जितेका। रमे रामतनु देख तितेका॥
रमुक्रीडा इन सबमें आई। औरहु सुनहु प्रिया मनलाई॥
रविआतप जलवीचि सयानी। कनकएक भूषण बहुजानी॥
गिराअर्थ अग्नी उष्णाई। नामसे भिन्न न भिन्न लखाई॥

दोहा-नामरूप तिमि जानिये, यदपि नाम अधिकाय।
रूपमिलत नहिं नामबिनु, नामरूप विनवाय॥

दोऊ नित्य अमर अविनाशी। प्रभु सत चेतन आनँदराशी॥
रामवदन 'र' 'आ' जानो उर। पुनिमकारदोउचरणजगत धुर॥
रेफ सकलचेतनको चेतन। निगमागमभाषतसबकविजन॥
कोटिभानुते अधिक प्रकासा। पूरिरह्यो जगमाहिं विकासा॥
सब देवनसत्ता इहिकेरी। विधि हरिहरवाणी इहिबेरी॥
सुरपति कोटि फणीशप्रभावा। तीरथकोटि अनन्य कहावा॥
इन सबसे अतिकोटि महाना। नामप्रभाव न जाय बखाना॥
इन सबमें सत्ता तिहि व्यापी। जीव चराचरमें रमआपी॥
हरत पाप सब जीवन केरे। जप कीन्हें आवत नहिं नेरे॥
नामकि उपमा नाम सयानी। गुप्तभेद तोहिं कहों भवानी॥

दोहा-रामनाम अंशांशसे, तीनसिद्धि प्रगटाय।
सोहंबीज सुहावनो, ॐकार सुखदाय॥

अर्द्धअर्द्धते करहु विचारा। सोवर्णहुँ नहिं करविस्तारा॥
अर्द्धाकार तेउ तुम जानो। रेफ सो अन्तरभूतहि मानो॥

हलमकारऊपर अनुस्वारा। ताते सिद्धजान ॐकारा॥
इहिविधि सोहंबीज पियारी। नासते प्रगटभये सुकुमारी॥
अस षटवस्तु नामके माहीं। वर्णन करहुँ मोह भ्रम नाहीं॥
परब्रह्म अरु जीव भवानी। महानादस्वर चारि बखानी॥
पंचम बिन्दु छठी पुनि माया। जिहिविधिरहतकहतसुखदाया॥
रेफसे परब्रह्म हुइगयऊ। जीव रकार आदिते भयऊ॥
मध्याकार नाद तिहिमानो। रा दीरघते स्वर पहिचानो॥
हलमकार प्रगटो अनुस्वारा। अनुस्वारते प्रणव उचारा॥
भये प्रणवते सत रज अरु तम। इनसे तीन देव पुरुषोत्तम॥
ब्रह्मा विष्णु महेश कहाये। सकलजगतजिन शक्ति उपाये॥
रसुक्रीडाकर करत विचारा। रम्योरहत सिगरो संसारा॥

दोहा—जो है प्रथमरकार सो, नारायणको रूप।
महाविष्णुआकारते, सकलसुरनके भूप॥ १॥
भये अनूप मकारते, महाशंभु सुखदान।
सकलजीव त्रैलोकके, रामके अन्तर जान॥ २॥

रामनामके कीन्हें ध्याना। सृष्टिध्यान हुइजात सुजाना॥
जैसे जो सींचै कोउ मूला। सींचजात तरु पल्लवफूला॥
रामनाम तजि अन्ते धावै। स्वप्नेहु सो सुखसुगति न पावै॥
इहिमें और भेद सुनु प्यारी। कहों कथा भवनाशनहारी॥
परमयोग शुभ रेफ बखाना। परमविराग रकार सुहाना॥
यह दोउ अग्निबीज मुनिगाये। वडवानल जिहि नाम कहाये॥
यह विचार जो नाम उचारै। शुभ अरु अशुभकर्म सबजारै॥
परमज्ञान विज्ञानक मूला। सो अकार हर भवनिधिशूला॥
यही बीज है प्रिये भानुको। सुमिरत करत प्रकाश जानुको॥

भक्तिस्वरूप मकार सुहावन। चन्द्रबीज त्रयतापनशावन॥
तीनकाण्ड रविशशि सब जाते। रसुक्रीडा वर्णत कवि ताते॥

दोहा—सत्त रकार अकार चित, आनँदरूप मकार।
सतअविनाशी चितसकल, घटवासी सुखसार॥ १॥
याहीको चेतन कहत, आनँदकृत आनंद।
नाम सच्चिदानंद है, ताहीते सुखकन्द॥ २॥

तत्पदब्रह्म रेफ तुम जानो। त्वम्पद जीव अकारहि मानो॥
हलअकार माया असिगाई। तत्त्वमसि श्रुतिसार कहाई॥
रेफ निरक्षर ब्रह्म सयानी। निराकार व्यापक शर्वानी॥
हलमकार इच्छाप्रकृति कह। सकलशक्तिसंयुक्त सकलमह॥
रसुक्रीडा अर्थन विस्तारी। कहों नाम अब मुख्य विचारी॥
वासुदेव नारायण विष्णु। कृष्ण ब्रह्महरि भव सब जिष्णु॥
परमेश्वर विश्वम्भर स्वामी। परमात्मा कलानिधि नामी॥
विश्वम्भर निष्कर्म कलुपहर। केशव कमलाकान्त मनोहर॥
विश्ववपुष भगवत बहुनामा। इनके जपे सिद्ध बहुकामा॥

दोहा—रामनाम सबनामते, अधिक जानि मनमाहिं।
परमप्रकाशक सर्वपर, रविशशि सम तम नाहिं॥ १॥
सुरगणमहँ अति शक्र जिमि, भक्तनमें हनुमान।
लोकनमें गोलोक जिमि, सरितन सरयूजान॥ २॥
नरनमाहिं जिमि भूपहै, धनुधारिनमहँ मार।
अद्रिनमें जिमि मेरुहै, गीता पाठनसार॥ ३॥
कामधेनु गोमाहिं जस, धर्म अहिंसा रूप।
वृक्षनमें सुरवृक्ष जिमि, वैनतेय खगभूप॥ ४॥

क्षमतमाहिं जिमि क्षमा सुहाई। सरस्वान सरमाहिं कहाई॥
कर्मन में हरिकर्म सुहावन। ब्रह्मज्ञान ज्ञाननमें पावन॥

पुरिनमाहिं जिमि अवध सुहाई । मंत्रनमें ॐकार कहाई ॥
रुद्रनमें मैं स्वरन अकारा । पुष्कर जिमि तीरथको सारा ॥
कौस्तुभमणि जिमि मणियनमाहीं । रामनाम सबते तिमि आहीं ॥
पार्वती पुनि विनय उचारी । नाम अर्थ कहिये त्रिपुरारी ॥
तब शिव कहनलगे सुखपाई । शिवा कथा सुनु चितमनलाई ॥
जीवनकी संज्ञा नर मानो । नर सबताके आश्रित जानो ॥
नरमें अयन कियो जिन पावन । इमि नारायण नाम सुहावन ॥
भक्तनके हर पाप अनेका । ताते हरि अस नाम विवेका ॥
जो सबमें बसरह्यो अनादी । भाषत वासुदेव सनकादी ॥
जेहि सब सुर सेवहिं सो केशव । कला अंशअवतार जु लेवव ॥
जो पोषत सब विश्वमँझारा । विश्वम्भर अस नाम उचारा ॥
पूररह्यो सबजगके माहीं । सर्वभिन्न निर्गुण गुणआहीं ॥
इहिते ब्रह्म कहावत सोई । एक अनेकरूप जो होई ॥
कृषि भूवाचकशव्द कहायो । निवृतिरूप णः ग्रन्थनगायो ॥
इन दोनोंको लेहु मिलाई । कृष्णअर्थ जानो गुणदाई ॥
विष्णु व्यापरह्यो जगमाहीं । तिहिबिन ठौर शून्य कहुँनाहीं ॥

दोहा—श्री विराग ऐश्वर्य सब, यश सुधर्म विज्ञान ।
षट् भग जामें नित रहत, सो कहिये भगवान ॥ १ ॥
राम नामते होय जो, सो नहिं काहूमाहिं ।
निश्चयकरि देखो प्रिया, सकलपुराण कहाहिं ॥ २ ॥
रामनामनिर्वर्ण लखि, सब वर्णन शिरताज ।
मुकुटछत्र दोउ जानिये, रेफरुबिन्दु विराज ॥ ३ ॥
नामप्रकृति अरु वर्ण यह, रामनाममय सर्व ।
रमुक्रीडाके अर्थ बहु, कहाकहौं मतिखर्व ॥ ४ ॥

विविधतीर्थव्रतदानबहु, विविधयोगजपदान ।
विविधज्ञानविज्ञानमख, तुलैं न नामसमान ॥ ५ ॥

सप्तकोटि जे मंत्र कहाये । रामनामसमता नहिं पाये ॥
रामनाम जो जपैं निरन्तर । चार पदारथनित तिनके कर ॥
गगन मौलिमें बसत रकारा । त्रिकुटीमाहिं अकार विचारा ॥
जिह्वावास मकार सुहायो । निजनिजथलउच्चार कहायो ॥
योगी अर्थ रकारहि ध्याना । अरु अकार ज्ञानिनमनमाना ॥
पूर्ण नाम जापी हरिदासा । भुक्तिमुक्तिकी धरत न आसा ॥
जैसे करैं प्रयोग सुहाये । तैसे साधकजन फलपाये ॥
ते सबसिद्ध शीघ्र होजाहीं । रामनाम सुमिरैं मनलाहीं ॥
पार्वती पुनि विनय सुनाई । जपकी रीति कहो समुझाई ॥
कहनलगे शिव सकलसुनाई । सुनो प्रिया सब कहों बुझाई ॥

दोहा—मंत्रपाय सतगुरूसे, जपै सहितविश्वास ।
कामक्रोधलोभादि सब, त्यागै भोगविलास ॥ १ ॥
संयमनियमविचारक, जपै निरन्तर नाम ।
ध्यानकरत हो जाय सो, हरिको रूप ललाम ॥ २ ॥

भाव कुभाव सहित जपु प्रानी । अवशि होय भवबंधन हानी ॥
प्रेमसहित जो जपहिं सुहावन । का आश्चर्य होत ते पावन ॥
रसना रामनाम जप कोई । मुक्तिलहै भवबंधन खोई ॥
जिन २ नाम जपो मनलाई । तिनके नाम कहतहौं गाई ॥
लोमश व्यास भुशुण्डी नारद । जनप्रह्लाद अगस्त्य विशारद ॥
भृगुशुकगणिकायमनगयन्दा । द्विजध्रुव वाल्मीकि सुखकन्दा ॥
नामप्रभाव भये सब पावन । औरनको पुनि कियो सुहावन ॥
नामप्रभाव शेष भू राखत । नामप्रभाव सकलदुख भाजत ॥

नामप्रभाव किये विषपाना। मैंनेहूं सुत प्रिया सुजाना॥
गणपतिसनकादिक मुनिज्ञाता। जीवन्मुक्त पूज्य सुखदाता॥
औरो वहुत भये हरिदासा। नामप्रभाव भये प्रभुपासा॥
सतयुग सत्यनिरत सब प्रानी। करिहरिध्यान करहिं भवहानी॥

दोहा—त्रेता तपमखसंयम, करिपावहिंनिस्तार।
द्वापर व्रतपूजनकरे, होत सकल भवपार॥

तपव्रत संयमयोग विरागा। कलिमें दीसत होय न यागा॥
ताते निगमागम अस गावा। कलिभवसिंधु नाम दृढनावा॥
नामप्रताप सबहि युग व्यापा। नामजपे नहिं कोउ संतापा॥
असविचार जे परमसयाने। जपैं नाम सन्तत सुखमाने॥
गजरथ वाजि देहिं नितदाना। जप तप व्रत कर सुनहिं पुराना॥
तीरथअटन योगकर साधन। नहिं कोउनामजपनसमपावन॥
चन्द्रहि प्रगटहोय वरु आगी। भानुउदय तम जाय न भागी॥
अघटनघटन चहै हुइजाई। नाम जपे विन भव न तराई॥

दोहा—गरुडै खाय भुजंग वरु, सिकताते घृत होय।
भजनबिना पर सुख नहीं, यह जानो सब कोय॥ १॥
अस विचार हरिनामको, जपहु सदा करि प्रेम।
यहै करै कल्याण नित, सबविधि हरिजन क्षेम॥ २॥
सबविधि ज्ञानी जानिये, योगी चतुर सुजान।
मिश्र सकलपालन करन, जो सुमिरै भगवान॥ ३॥
रामनामके अर्थ कछु, वरणे मतिअनुसार।
नामप्रभावअपार अति, को कवि पावै पार॥ ४॥
जे नास्तिक अहमितिभरे, निन्दहिं वेद पुरान।
तिनको मत उपदेशिये, यह रहस्य सुखदान॥ ५॥

सुनि शिवके सुन्दर वचन, पार्वती शिरनाय ।
तनु पुलकित गद्गदवचन, रही महासुखपाय ॥ ६ ॥

इति श्रीविश्रामसागरे सबमतआगरे नाममाहात्म्यवर्णनोनामषष्ठोऽध्यायः ६.

दोहा—सुमिरि सन्तगुरुरामसिय, विधिहरिहर सुखदानि ।
कूर्मकोलसद्ग्रन्थकी, कहुँ इतिहास बखानि ॥ १ ॥
कह शौनक प्रभुनामजपि, तरे कौन संसार ।
सो गाथा वर्णन करो, नाथ सहित विस्तार ॥ २ ॥
कह्यो सूत अगणित तरे, को कहिपावै पार ।
तदपि कहत संक्षेपकर, कछु निजमति अनुसार ॥ ३ ॥
बहुविधि तिनके सुयश अति, कह्यो पुराणन माहिं ।
सो कछु मैं वर्णन करौं, सुनि कलिकलुष नशाहिं ॥ ४ ॥

वाल्मीकि गज गणिका जोई । यमनकेर इतिहास भलाई ॥
प्रथमहिं वाल्मीकिकी गाथा । वर्णहुँ जिनवरणे रघुनाथा ॥
मित्रावरुण एक मुनिराई । कीन्हो महाविपिन तप जाई ॥
महाकठिन तप लखि सुरभूपा । पठई तहँ अप्सरा अनूपा ॥
निरखि ताहि मुनिकंपितगाता । ह्वैगो तहाँ रेतको पाता ॥
विघ्नजानि औरे वन जाई । करनलगे तप अतिमनलाई ॥
महातेज तिहि रेत निहारी । लै उर्वशी कुंभमें डारी ॥
ताहि कुंभते द्वै मुनि जाये । नाम अगस्त्य वसिष्ठ कहाये ॥
रेतशेष रहिगो तिहिमाहीं । ताते इक शिशु भयो तहाँहीं ॥
ताहि किरातिन लै घरआई । अपनी विद्या सकल पढाई ॥

---

१ कहीं ऐसाभी कथनहै कि, कीर्तिमुख नामक एक मुनि वनमें तप करतेथे स्वप्नमें उनका रेतपात हुआ तब बांबीपर रखकर ऋषि चले गये, इससे वाल्मीकि मुनि हुए। पर यथार्थमें यह वरुण प्रचेताके पुत्र हैं ।

हिंसा चोरी करत प्रवीना । भयो बाल पातक महँ लीना ॥
कियो विवाह जाति नहिं चीन्हीं । इकपथकेरि लूट तिहि दीन्हीं ॥
तिहि थल रह पथिकन कहँलूटै । मिलै न धन जेहिते तेहिकूटै ॥
इहिविधिकियो बहुतदिनवाता । यम कागज तेहि अघनसमाता ॥

दोहा–तिहि मारगह्वै इक समय, कढे सप्तऋषि आय ।
तिनके मारन हेत सो, गयो तुरंतहि धाय ॥

कह्यो देहु जो होय तिहारे । नातो सबै जाहुगे मारे ॥
तब सप्तर्षि कही हँसि बानी । यह किरात भल बात बखानी ॥
है लूटे मारे अति पापा । लहत जीव यमघर सन्तापा ॥
सो यमकी नाहिं राखत भीती । मारगलागि करहु अनरीती ॥
बात किरात बहोरि बखानी । यहि उद्यम जीवहिं ममप्रानी ॥
जो नहिं मार वित्त लै जैहैं । क्षुधाविवश बालक दुख पैहैं ॥
सुनत वचन मुनिगिरा सुनाई । पूँछ किरात बात घरजाई ॥
जो करि पाप वित्त हम लावैं । तुम सबहीको बाँट खवावैं ॥
तौन पापकर यमघरमाहीं । इहै दण्ड अवशि हमकाहीं ॥
ताके तुम भागी की नाहीं । देहु बताय ठीक हमपाहीं ॥
अस पूछो घरजाय किराता । कहैं जो घरके ऐसी बाता ॥
बाँटलेव यमदण्ड तिहारो । तौ तुम पापहेत धनुधारो ॥

दोहा–जो कुलके यमदंडमें, भागी होइँ न कोइ ।
तौ कंत कीजत पाप हठि, घोर दंड जिहिं होइ ॥

सुनिमुनिबातकिरात सिधारी । पूछ्यो बोलि भ्रात सुत नारी ॥
जो यमदंड हमें उत होई । ताके तुम भागी सब कोई ॥
सुत तिय उत्तर दियो प्रचंडा । हम न होब भागी यमदंडा ॥
पाप पुण्य नहिं हेत हमारो । तुम त्यागहु सो करहिं अहारो ॥

सुनि कुटुंबके वचन किराता । मुनिससीप गो शोच अघाता ॥
सुनी कुटुम्ब कथित सब बानी । मुनि कहतुमहिंलेहुअबजानी ॥
धन भागी कुल नहीं अभागी । तिनहितअघकारिबोपथलागी॥
तुमहिं किरात न उचितसुजाना । करहु उपायमिलहिनिरवाना ॥
सुनत सप्तऋपि वचन प्रमाना । भयो किरातहि तुरतविज्ञाना ॥
त्राहि त्राहिकर गिरो चरणमें । तुम समरथ संसार हरनमें ॥
दयालागि मुनि कह्यो उपाई । मरा मरा जपियो रटलाई ॥
मम आगम प्रयंत इतखपियो । मरामरानिशिवासर जपियो ॥

दोहा-अस कहि गे सप्तर्षि जब, बैठे तहां किरात ।
मरा मरा निशि दिन रटत, बामी भइ तेहिं गात ॥

बहुतकालवीते मुनि आये । खोजे ताहि कहूँ नहिं पाये ॥
योगदृष्टिकरि जब मुनि देखे । लगी बिमौट तासु तनु पेखे ॥
तब तिहिं निजहाथनते खींची । तुरत कमंडलुते जलसींची ॥
तासु शरीर पुष्ट अति कीन्हों । वालमीकि असनामहि दीन्हों ॥
कीन्हों राममंत्र उपदेशा । भजनकरनकहँ दियो निदेशा ॥
सो तमसा सरिता तटआई । तपकरिदिवबहुकाल बिताई ॥
एक समय नारद तहँ आये । मुनि आदर करितिहिं बैठाये ॥
कह्यो जोरिकर सुनहु ऋषीशा । तुमहिं कौन सबते बड़ दीशा ॥
को यहि लोक माहँ यहिकाला । तेजवान गुणवान विशाला ॥
शीलसमुद्र विश्वहितकारी । को समर्थ विद्यावरधारी ॥
इन्द्रियजित प्रियदरशन को है । को विजयी दारुण जग को है ॥
प्रभावंत को द्वेषविहीना । किहिरणमहँसुरगणभयलीना॥

दोहा-ऐसो जन जो होइ जग, तासु सुननकी चाह ।
सो जन जाननयोग तुम, वर्णन करु मुनिनाह ॥

वाल्मीकिके वचन सुहाये । सुनि नारदमुनि हरषित गाये ॥
ये सब गुण दुर्लभ जगमाहीं । पै हम कहैं बसैं जिहिं ठाहीं ॥
नृप इक्ष्वाकु वंश अभिरामा । भाषत लोग नाम जिहि रामा ॥
आतमजित विक्रम अतिभारी । तेजमान सम कोटि तमारी ॥
इन्द्रियजित वरबुद्धि विधाता । महाचतुर अरु नीतिविज्ञाता ॥
समर शत्रुसूदन करतारा । जिहिछविविजितअनंगअपारा ॥
वृषभकंध युग बाहु विशाला । कंबुकंठ हनु सुभग सुभाला ॥
उर आयत कर चाप महाना । जत्रु अंग अति पुष्ट बखाना ॥
अनघपीनभुजशशिसमआनन । विक्रमसें मानहु पंचानन ॥
सबमें शुभ सम सुंदर अंगा । निबिड नीलनीरद तनु रंगा ॥
पृथुलवक्ष तिमि अक्ष विशाला । महाप्रतापवान सबकाला ॥
लक्ष्मीवान् धर्मधुरधारी । सत्यसंध परजनहितकारी ॥

दोहा–महायशी विज्ञानयुत, भक्तनकेपरतंत्र ।
सदाचारधारक सदा, दिनकरवंश स्वतंत्र ॥

बिन रिपुजिते न लौटनहारो । सब संसारहि प्राणनप्यारो ॥
विधिसमान जग पोषक सोई । जिहिसम दयावान नहिं कोई ॥
एक विश्वको रक्षनकरता । धर्म पर्वतनको चक्रभर्ता ॥
सहि अधर्महर धर्मप्रचारी । सुहृद सुजनसेवक हितकारी ॥
वेद वेदांग तत्वको ज्ञाता । धीरधनुर्धर धरणिविख्याता ॥
सर्वशास्त्रको जाननहारो । सभाचतुरश्रुतिधर मतिवारो ॥
सबजीवनप्रिय तिहिंप्रिय जीवा । अति अदीन दीननपर सीवा ॥
परमसाधु सबबातविचक्षन । बसे ताहिमें सकल सुलक्षन ॥
सदा समीपी साधुसमाजा । जिमिसरितागणयुतशिरराजा ॥
सबते कोमल बोलत बानी । सबको जानतजनु निजप्रानी ॥

रूपरिपुकहँ उचित निहारी । तौ मिथनअ कहिय विचारी ॥
श्रीकौशल्या उदरसिंधुशशि । सब गुण रहे ताहि तनुमें बसि ॥

दोहा–सिंधुसरिस गंभीरता, धैरज सम हिमवान ।
चन्द्रसारिस अहलादक, विक्रम विष्णुसमान ॥

कालानलसम क्रोध कराला । क्षमा क्षमासम जासु विशाला ॥
धनदलजतलखिजिंहिधनदाना। सत्यवचनमहँ धर्मसमाना ॥
सो नृप दशरथ जेठकुमारा । तिलक करनकर कियो विचारा ॥
कैकेयि नृपकी तीसर रानी । सो पतिसों अस गिरा बखानी ॥
दियो पूर्व मोहिं द्वै वरदाना । सो दीजे अब वचन प्रमाना ॥
राम जाहिं वन भरतहि राजू । भयो नृपहि सुनि शोकहराजू ॥
दिय वनवास भूप रघुनाथै । चले जानकी लक्ष्मण साथै ॥
गंगा उतरि प्रयागहि आये । चित्रकूट निवसे सुखछाये ॥
रामशोक नृप स्वर्ग सिधाये । रामहिं भरत लिवावन आये ॥
दै पादुका बिदा प्रभु कीन्हों । आय अत्रिकहँ दरशन दीन्हों ॥
हति विराध शरभंगसमीपा । आइ मुक्तिदियरघुकुलदीपा ॥
फेरि सुतीक्षण आश्रम आये । पुनिअगस्त्यभ्रातहि सुखछाये ॥

दोहा–मुनि अगस्त्यको दरश दै, पंचवटीवसि राम ।
करि विरूप रावणभगिनि, मारचो खर संग्राम ॥

रावण सुनि मारीचपठायो । रामहिं सो लै दूरहि आयो ॥
हरी दशानन जनककुमारी । गीधहि राम दियो तहँ तारी ॥
हति कबंध शबरी फल खाई । कीन्हीं पुनि सुग्रीवमिताई ॥
सततालहनि बालि सँहारचो । मारुत पठै लंक प्रभु जारचो ॥
सीताखबिलहि सागरसेतू । बाँधि तरे कपि कटकसमेतू ॥
सकुल दशानन समरसँहारी । सीयलषणयुतअवध सिधारी ॥

महाराज अभिषेक कराई । राजे राजकरत रघुराई ॥
वाल्मीकि सुनि नारद वानी । बारबार मुनिपतिहि बखानी ॥
शिष्यसहित पुनि पूजन कीन्हों । नारद तुरत गगन पथ लीन्हों ॥
वाल्मीकि पुनि मज्जन हेतू । तमसातीर गये मतिसेतू ॥
तासु शिष्य भरद्वाजहि नामा । तिहिलगिनिकटकह्योमतिधामा ॥
पंकरहित यह घाट सुहावन । भरद्वाजमनमुद उपजावन ॥

दोहा–सज्जनचित्तप्रसन्नकर, अतिरमणीय सुनीर ।
कपटरहित जिमि पुरुषमन, हारक हियकी पीर ॥

धरहु कलश वलकल मम देहू । द्रुतमज्जनहित बढ्यो सनेहू ॥
भरद्वाज वलकल तब दीन्हों । लैवलकलविचरनमुनि कीन्हों ॥
तहँ विचरत वनमहँ मुनिराई । युगलक्रौंकुल परे दिखाई ॥
कामातुर आनँदरसभीने । आयो वधिक एक धनु लीने ॥
हन्यो विहंगहि सो जियघाती । बची विहंगी अति बिलखाती ॥
वाल्मीकि खगघात निहारी । दयाविवश अस गिरा उचारी ॥
अरे वधिक बहुकाल प्रयंता । लहै प्रतिष्ठा नहिं अघवंता ॥
क्रौंच काममोहित तैं मार्‌यो । धर्म अधर्म न कछू विचार्‌यो ॥
भनत कढ्यो श्लोक अतूला । सकल छंदरचनाकर मूला ॥

श्लोक–मानिषादप्रतिष्ठांत्वमगमः शाश्वतीः समाः ॥
यत्क्रौंचमिथुनादेकमवधीः काममोहितम् ॥ इति ॥

यहकहिपुनिमुनिमनहिविचार्‌यो । शोकविवशयहकहाउचार्‌यो ॥
चिंतत मुनि आये सरितीरा । कह्यो भरद्वाजहि मतिधीरा ॥
चारि चरण अक्षर बत्तीसा । तंत्रीलैयुत छंद मुनीशा ॥

दोहा–मेरे मुखते कढतभो, शोकरूप अश्लोक ।
भरद्वाजमुनि सुनि वचन, कंठकियो मति ओक ॥

पुनि मज्जनकरि चिंतत ताही । आये मुनि निज आश्रम माही ॥
भरि घट भरद्वाजहू आछे । आये गुरु आश्रममें पाछे ॥
शिष्यसहित बैठे मुनिराई । कथा कहत हरि ध्यानलगाई ॥
आयो तौनकाल मुखचारी । उठ्यो महामुनि ताहि निहारी ॥
जोरि पाणि किय दंडप्रणामा । बैठायो आसन अभिरामा ॥
विधिकहँ पूजि पूछि कुशलाई । आपहु बैठ्यो शासनपाई ॥
चित्तलग्यो अश्लोकहिं माहीं । वधिक विहंगहि वध्यो वृथाहीं ॥
क्रौंचिहि विलपतमें भारिशोकू । कह्यो जौन सो भो अश्लोकू ॥
यह चिंतत मुनिके मुख चारी । अतिप्रसन्न ह्वै गिरा उचारी ॥
कढीजो तेरे मुखते बानी । सो अश्लोक लेहु सति जानी ॥
सो जानहु यह मोर प्रभाऊ । ताते सुनहु वचन मुनिराऊ ॥
धर्मात्मा गुण गृह मतिवंता । वीर शिरोमणि कोशल कंता ॥

दोहा—सो रघुपतिकर चरित मुनि, तुम वर्णहु यहिरीति ।
नारदमुखते जस सुन्यो, छंदबंध बिनभीति ॥

प्रगटित गोपित राम चरित्रा । अरु सियलषणचरित्र विचित्रा ॥
अरु राक्षसकुलकेर विनासा । रघुबर तिलक अवधपुर वासा ॥
जो कछु तुव जानो नहिं होई । ह्वैहै विदित तुमहिं मुनि सोई ॥
राउर काव्य माहिं मुनिराई । हम वरदान देत हरपाई ॥
एकहु अक्षर मृषा न ह्वैहै । ह्वैहै सुखी सु कवि जो ज्वैहै ॥
महा मनोहर रघुवर गाथा । छंदबद्ध विरचहु मुनिनाथा ॥
सरित मही गिरि रहिहैं जौलूं । तुवकृत काव्य चले जग तौलूं ॥
रामचरित जौलौं कृत आपू । चलिहै जगमहँ परम प्रतापू ॥
तौलों तुव ममलोक निवासा । पुनि जैहो जहँ रमा निवासा ॥
अस कहि अंतरहितभे धाता । शिष्यसहितमुनिसुखीविख्याता ॥
सोइ अश्लोक शिष्य सब गावैं । बारबार तिहि प्रीति बढ़ावैं ॥
मोकहिं भो अश्लोक सुहावन । चारि चरणसम अक्षर पावन ॥

दोहा–वाल्मीकिमुनिके मनहिं, आई ऐसी नीति ।
छंदबद्ध रघुवर चरित, रचहुँ दोष सब जीति ॥
कवित्त–वंचत सरल असरलहै विचारकीन्हें,
उत्तमसगुणध्वनि धारित अनोपमा ।
रस त्यों मनोहर मनोहर वरण वृन्द,
सुभग पदावलीहू जमक जडोसमा ॥
रघुराज भूषणसमास संधिरीति वृत्ति,
लक्षणहू लक्षणा सुछंद हैं समासमा ।
नारायण रूप हरि पारायण जीवनको,
सुरासायण सत्य रामायण मनोरमा ॥
दोहा–नारदमुख सुनि वस्तु सब, रामचरित मन लाइ ।
रच्यो प्रथम संक्षेप मुनि, सूचन कथा बनाइ ॥ १ ॥
पूर्व अग्र जिन दर्भको, बैठि सुखासन ताहिं ।
जोरि पाणि करि आचमन, शिर धरि हरिपद माहिं ॥ २ ॥
रामायणके रचनको, कियो अरम्भ मुनीश ।
आदिअंत रघुवरचरित, ज्ञानदृष्टि तब दीश ॥ ३ ॥
रामलषणसीतासहित, अरु दशरथ महराज ।
रानिनसुत अरु राजको, जौन चरित्र दराज ॥ ४ ॥
गवनित भाषित हसित थिति, अरु कपिनिशिचरारि ।
हस्तामलकसमान तिहि, सिगरो परो निहारि ॥ ५ ॥
वेदरूप पै ललित अति, धर्म अर्थ सब ठौर ।
रत्नाकर इव रतनयुत, सब शास्त्रन शिरमौर ॥ ६ ॥
प्रथम जनम वरण्यो रघुपतिको । विक्रम अनुकूलता सुमतिको ॥
क्षमाशील सरलता सुनायो । विश्वामित्र समागम गायो ॥

तिहिनिशिकथा अनेक बखानी। धनुभंग बरण्यो सुखखानी ॥
कह्यो बरणि जानकीबिबाहू। रामबिबाद संग भृगुनाहू ॥
पुनि कीन्ह्यो रघुपतिगुणगाना। प्रभुअभिषेकसमाज बिधाना ॥
कैकेयीकृत सो रसभंगा। रामबिवास अनुजतियसंगा ॥
नृपविलाप पुनि स्वर्गपयाना। वरण्यो प्रजन विषाद महाना ॥
प्रजाविसर्जन गुहसंवादू। पुनि सुमंत आगम किय वादू ॥
गंगतरन दरशन भरद्वाजू। चित्रकूट निवसन रघुराजू ॥
कुटीरचन पुनि भरत पयाना। रघुपतिपाणि पिताजलदाना ॥
लै पादुका भरतफिरिआवन। नन्दिग्रामनिवास सुहावन ॥
दीन्हो अनसूया अँगरागू। पुनि शरभंगदरश अनुरागू ॥

दोहा—फेरि सुतीक्षणको मिलन, पुनि अगस्त्यगृह वास।
करन विरूपीराक्षसी, खरदूषणको नास ॥

बहुरि कह्यो दशकंठ अवाई। वधमारीचकथा पुनि गाई ॥
कह्यो फेरि वैदेही हरना। रामविलाप गीधकर तरना ॥
वधिकवंध पुनि दरशन गायो। पुनि जिमिप्रभुशवरीफलखायो ॥
सियाविरहवश रामविषादू। बहुरि कह्यो हनुमंतसँवादू ॥
ऋष्यमूक पुनि रामअवाई। कहीबहुरि सुग्रीव मिताई ॥
पुनि सुग्रीव वालिकर युद्धा। वालिवधनकृत रघुवरक्रुद्धा ॥
कह्यो विलाप कीनजिमितारा। पुनिसुग्रीवतिलक जिमिसारा ॥
वर्षाकाल प्रवर्षण वासू। पुनि सुकंठपर कोपप्रकासू ॥
पुनि वानरीसेन आगमनू। वर्णन पृथ्वीकर दुखशमनू ॥
पुनि मुद्रिका दान हनुमाने। गे जिमिकपि चारिहु दिशाने ॥
स्वयंप्रभाबिलदरशन गायो। सो जिमि सागरतट पहुँचायो ॥
पुनि अनशनव्रत कीशनकेरो। जिमि संपाति कीशदल हेरो ॥

दोहा–पुनि मारुतसुतगिरि चढ़ब, लंघन सिंधुबखान ॥
दरशन पुनि मैनाकको, सुरसा कपट विधान ॥
पुनि सिंहिकानिधनमुनिगायो। लंकापार कीश जिमि आयो ॥
कपिको लंका निशा प्रवेशा। पुनिदेखबो नगर सब देशा ॥
कह्योलख्योजिमिपुहुपविमाना। पुनि अशोकवाटिकापयाना ॥
सीतादरश मुद्रिकादाना। पुनिसीता संवाद विधाना ॥
पुनि राक्षसीसकलजिमिपेख्यो। त्रिजटा स्वप्न जौनविधिदेख्यो ॥
चूड़ामणि जिमि लै हनुमाना। कीन्हों भंग भवन तरु नाना ॥
वरण्यो सकल राक्षसिन त्रासा। असीसहस किंकरकर नासा ॥
मंत्रीसुतन विनाश बहोरी। सेनप्रपंचनिधन बरजोरी ॥
ग्रहण पवनसुतको पुनि गायो। पुनि लंका जिहि भाँति जरायो ॥
कूद सिंधु आगम यहिपारा। पुनि मधुवनजिमिकीशउजारा ॥
रामनिकट आगम पुनि गायो। चूड़ामणिजिमिकीश दिखायो ॥
रामसहित कपिसेनपयाना। मिलब सिंधुकर दैमणि नाना ॥
दोहा–कह्यो बिभीषण आगमन, सो जिमि कह्यो उपाय।
सिंधुसेतरचिबो वरणि, वसव सुवेलहि जाय ॥
कह्यो लंकघेरनि चहुँओरा। कीशनिशाचरको रण घोरा ॥
वरण्यो कुंभकर्णसंहारा। लक्ष्मण मेघनादजिमि मारा ॥
कह्यो बहुरि दशकंठविनाशा। मिलब मैथिली कीन्ह प्रकाशा ॥
तिलक विभीषणकोपुनिगायो। पुनिजिमिपुहुपविमानमँगायो ॥
फेरि अवध आगमन उचारा। बहुरि मिलब कैकयीकुमारा ॥
रामतिलक वरण्यो मुनिराई। पुनिकीशनजिमिकियोबिदाई ॥
प्रजनअनंद तजन वैदेही। वरण्यो पुनि रघुनाथ सनेही ॥
इतनो भूतचरित मुनि गायो। आगे और भविष्य गनायो ॥

तीन काव्यको उत्तर नामा । रच्योभविष्यचरितमतिधामा ॥
याते रामायण षट् कांडा । सतयों उत्तर कांड अखंडा ॥
जहँते पुनि भविष्य मुनि गायो । सो आठयों कांड छबिछायो ॥
अहैं कांड द्वै उत्तर ताते । यहिविधिआठकाण्डगनिजाते॥

दोहा–रामायण षट्कांडई, उत्तर भविष्य मिलाय ।
आठ कांड वर्णहिं सुकवि, अस परकरन लगाय ॥

करतरहे जब रघुपति राजू । रामायण विरच्यो मुनिराजू ॥
चौबिससहस सुखद अश्लोका । तथा सर्ग सतपंच अशोका ॥
रच्यो प्रथम षट्कांड उदारा । पुनि कीन्हों उत्तर विस्तारा ॥
फेरि भविष्यचरित मुनि गायो । आठ कांड यहिभाँति गनायो ॥
बहुरिकियोमुनिमनहिं विचारा । केहियाहिसिखवनकोअधिकारा॥
ताहिसमय मुनिनिकट सिधाई । गहे चरण कुश लव दोउभाई ॥
मधुर रूप मैथिली कुमारा । शील सुशय धृतिधर्म अगारा ॥
कोकिलकंठ सुआश्रमवासी । ताल राग सुर शास्त्र विलासी ॥
बुद्धिमान वर वेदविज्ञाता । तिनहिनिरखिलहिमोदअवाता॥
श्रीरामायण वेदस्वरूपा । तिनहिं पढ़ायो परम अनूपा ॥
रामायण सियचरित प्रधाना । कछुपुलस्त्यकुलनिधनप्रमाना॥

दोहा–सात जाति सुरकी सहित, तंत्रीलै युत सोइ ।
और गान उपकरनलै, तासु गान हठिहोइ ॥
करुण हास शृंगार अरु, रौद्र भयानक वीर ।
बीभत्सादिक रसन युत, रच्यो काव्य मुनिधीर ॥

ऐसी रामायण मुनिराई । दोउभाइन दिय गाय पढ़ाई ॥
शुभलक्षण सुरूपके रासी । मनहु रामतनु दुतिय प्रकासी ॥
सकल मूर्छनागतिजति ज्ञाता । गानशास्त्रमहँ परमविख्याता ॥

कुश लव रामायण पढ़िलीने । करि अभ्यास कंठगत कीने ॥
मुनिन निवासनमहँ नित जाई । साधुसमाजमाहिं सुख छाई ॥
कुश लव रामायण नितगावैं । मुनिमानस बहुभाँति लुभावैं ॥
सुनि सुनि रामायण मुनिराई । पुलकित तनु दृग वारि बहाई ॥
रामायण अरु कुश लवकेरी । मुदित प्रशंसा करहिं घनेरी ॥
प्रति अश्लोक सुनत छकि जाहीं । महामधुर अस दूसर नाहीं ॥
सुनत सुखद रामायण काना । रामचरित प्रत्यक्ष समाना ॥
ह्वै प्रसन्न कोउ कलशहि दीनो । कोउ वल्कलदीनोसुखभीनो ॥
मुनिकृत अतिअद्भुत रामायण । कविजनकहँआधार रसायण ॥

दोहा–आयुषपुष्टिप्रकाशकर, श्रुतिसमान अतिमंजु ।
सुधाधारसम श्रवणमहँ, रसिक मधुप मनकंजु ॥

एकसमय कुश लव दोउ भाई । गावत रामायण सुखछाई ॥
विचरत विचरत मुनिन निवासू । आये अवधनगर सहुलासू ॥
कोशलपुरमहँ खोरिन खोरी । गानकरत विचरैं शुभ जोरी ॥
जेइ सुनत तेइ छकिजावैं । सादर सदन दुहुँन लै आवैं ॥
पूजनकरि भोजन करवाई । आदर अतिकर करैं विदाई ॥
एकसमय साजि सेन अपारा । भाइन युत रघुनाथ उदारा ॥
खेलनचले शिकार सुखारी । मधिबजारकुशलवहिं निहारी ॥
वीणाकर शिर जटा सुहावन । वल्कलवसनअजिनअतिपावन ॥
महामनोहर सुंदर रूपा । मानहु सुछबिप्रजा दोउ भूपा ॥
नाथ देखि आपन अनुहारी । तुरतहि दूतन्ह कह्यो हँकारी ॥
ये मुनिबालक वेग बुलाई । दीजे सपदि सदन पहुँचाई ॥
अस कहि लौट रामगृह आये । सुवरण सिंहासन छबिछाये ॥

दोहा–लषण भरत रिपुदमन तहँ, बैठे प्रभुकहँ घेरि ।
सचिव सुहृद सामंत सब, हर्षित प्रभुकहँ हेरि ॥

यथायोगसब सभासुहाये । पुरजन प्रभुदरशनहित आये ॥
तहँ इक प्रतीहार कर जोरी । विनय करी बहुबार निहोरी ॥
जे मुनिबालक प्रभु बुलवाये । ते दोउ द्वारदेशमहँ आये ॥
प्रभु कह ल्यावहु तुरत लिवाई । शासन सुनत दूत द्रुत धाई ॥
कुश लवको लेगये लिवाई । रहे बंधुयुत जहँ रघुराई ॥
आनि नाथ मुनिबालक दोऊ । पूजनकियो नम्यो सब कोऊ ॥
रामरूप अनुहार निहारी । सकलसभासदमनहिविचारी ॥
ये क्षत्रिय मुनिबालक वेषा । आयसभा सुखदियोअलेषा ॥
सभासदन रुख जानि खरारी । सियासुतनकुशलवहिनिहारी ॥
कह्यो लषण प्रतताहि रघुनन्दन । येदोउ मुनिबालक कुलनंदन ॥
गाथा जौन गलीसहँ गाये । सो इत गावहिं आनँदछाये ॥
अस मम शासन देहु सुनाई । सुनतलषणकुशलवढिगआई ॥

दोहा—गावहु जो गावतरहे, अवधनगरकी खोरि ।
जोपै रघुवर रीझिहैं, सम्पति मिलहि अथोरि ॥

लषणवचनसुनि तहँ दोउ भाई ॥ वीणाके सुर सकल मिलाई ॥
वैठि रामसन्मुख सुखछाई । सभासदन आनन्द बढाई ॥
प्रभुमुखनिरखि महासुखपागे । श्रीरामायण गावन लागे ॥
छके सुनत सब निश्चलकाया । मोहे मनहु मोहिनीमाया ॥
कनकसिंहासन अतिहि उतंगा । सुननहिं परचो गानरसरंगा ॥
तब रघुपति अस मनहि विचारा । मोरे उठत उठै दरबारा ॥
कोलाहलवश सुख हतहोई । जाउँ समीप उठै नहिं कोई ॥
अस विचार प्रभु मंदहिमंदा । सिंहासनते रघुकुलचंदा ॥
उतरे आतुर बैठेहि बैठे । मानहु मोदसहोदधि पैठे ॥
आये रघुपति शिशुनसमीपा । उठे न कोउ सामंत महीपा ॥

सुननलगे अपनो यश नाथा । विंशतिसर्ग रोज सो गाथा ॥
जब समाप्त रामायण भयऊ । प्रभुनिजउरअतिअचरजठयऊ ॥

दोहा–सहस अठारह हेमकी, मुद्रा तुरत मँगाइ ।
दियो दुहुँन बालकनको, मुनिसुत पुनि शिरनाइ ॥ १ ॥
लियो न सो अस वचनकहि, हमहिं गुरू कहदीन ।
सबहि सुनायो गीत यह, लिह्यो न केहुकर दीन ॥ २ ॥
अस कहि कुश लव ह्वै बिदा, अद्भुत आनँद छाय ।
वाल्मीकिके आश्रमहिं, आये बहुरिसुहाय ॥ ३ ॥

और सुनो गणिका इक नारी । ताने कीने पाप अपारी ॥
अन्तसमय यमदूतन घेरो । लगे देन तिहि त्रास घनेरो ॥
ताही समय सन्त इक आयो । ताहि पालिका वचन सुनायो ॥
तुम साधूजन परउपकारी । संकटते अब लेहु उबारी ॥
साधू मनविचार तब कीन्हा । मंत्र याहिनहिंचहिये दीन्हा ॥
जो नहिं याको हो कल्याना । तौ हमार प्रण जाय महाना ॥
नामबिना कल्याण न होई । कौन भाँति यह बोलै सोई ॥
अस विचार बोले यह बानी । कीर पढावत जिहिविधि प्रानी ॥
सोई शब्द करो उच्चारन । बोली सो अस रामसुहावन ॥
नामलेत त्यागो तनु जबहीं । आये लेने हरिगण तबहीं ॥

दोहा–यमगणते तिहि छीनके, लैगे हरिके धाम ।
अस प्रताप हरिनामको, गतिदायक अभिराम ॥ १ ॥
और सुनहु गजराज जब, गयो पियन सर नीर ।
ताहि गह्यो तहँ ग्राहने, युद्ध भयो गंभीर ॥ २ ॥

कबहुँ खैंच गज लेहि किनारे । कबहूँ ग्राह खैंच जलभारे ॥
गजके सुतनारी अतिप्यारी । कछुदिनमें तज ताहि सिधारी ॥

व्याकुल क्षुधितभयो गजभारी। बल छूटो चिन्ता लखिवारी॥
तबहिं ग्राह खैंचो जलभीतर। यवभर शुण्ड रही जलऊपर॥
तब तिहि अर्धनाम गुहरायो। गरुडछाँडि हरि आतुर धायो॥
वाणीमें प्रगटे कियों पानी। अस प्रभु दीनबंधु सुखदानी॥
ग्राह मार गज कीन उबारा। को दयालु अस जगतमँझारा॥
अस प्रभुत्यागि भजहिं जे आने। कवितिहि नरपशु नामबखाने॥
सुनो कथा इक और सुहाई। बहिर्भूमि इक यवन सिधाई॥

दोहा-बैठो सो आशौचहित, तहँ इक शूकर आय।
मार थूथडी वेगसों, म्लेच्छहि दियो गिराय॥

लखत म्लेच्छ हराम पुकारी। ताको तनु छूटो तिहिवारी॥
यमके दूत लेन तिहि धाये। अतिआतुर हरिगण तहँ आये॥
बोले इहि लीन्हों प्रभुनामा। अब नहिं जाय तुम्हारे धामा॥
कह यमदूत हराम उचारा। नहिंप्रभुनाम लियो सुखसारा॥
तब हरिगण बोले मुसुकाई। चलि ब्रह्मःढिग न्यावचुकाई॥
वचन सुनतविधिलोक सिधाये। विधिशिवढिगपठयेसचुपाये॥
सुन शिव कहीनामदै जाको। करिहै न्यावभलीविधिताको॥
न्याव जाय वैकुण्ठ चुकाओ। हरिको सब वृत्तान्त सुनाओ॥
सुनत वचन सब गे हरिलोका। दर्शनकर सब भये विशोका॥
कह यमदूत चरण शिरनाई। पाप कीन्ह इहिने अधिकाई॥
इहि तनुत्याग हराम पुकारा। दूत कहत हरिपुरअधिकारा॥
अब प्रभु न्याव जौनविधिहोई। माथेमान करैं हम सोई॥
सुनत विष्णु प्रभुकीन्ह विचारा। नामप्रभाव अनन्त अपारा॥
जिन मम नाम सकृत उच्चारा। कहां रहा तेहि पापपहारा॥
पुनि बोले प्रभु सुनियो किंकर। रहनदेहुअब इहिको गणवर॥
सुनतचले यमदूत खिसाई। शिव विरंचि हर्षे मुनिराई॥

छन्द–मुनि सिद्ध सुर ब्रह्मादि हर्षे सकल जयध्वनि कररहे ।
नारद गणेश रु शेष शारद योगिजन मुदभररहे ॥
जो अधिक दुर्लभ पद सुरासुर यमन सो पद अररहे ।
सुन जपत अस शुभनाम जो नाहिं जगतपशुते नररहे ॥
दोहा–नामप्रभाव अपारहै, कहिनसकत हरि आप ।
ताते करहु निरन्तर, रामनाम शुभ जाप ॥
इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ग्रन्थउजागर वाल्मीकिगजगणिका यमनउद्धारवर्णनो नाम सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

अथ अजामिलकी कथा ।

दोहा–विधिहरिहरगणपतिगिरा, सुमिरि राम सुखदान ।
वरणौं श्रीमद्भागवत, शुभ इतिहास बखान ॥
सोरठा–कथा अजामिलकेरि, जो प्रसिद्ध भागवतमें ।
नारायण अस टेरि, लग्यो पार भवजलधिके ॥
विप्र अजामिल इक कोउ रहई । धर्मपंथ नितही सो गहई ॥
सदाचार महँ कियो सनेहा । सरित नहाय प्रात तजि गेहा ॥
यहिविधि बीतगयो बहुकाला । एकसमय सो विप्र उताला ॥
ईंधनलेन गयो बनमाहीं । शूद्र एक इग लख्यो तहांहीं ॥
लै दासी गणिका बहुतेरी । तिनमें काहूके प्रीति घनेरी ॥
विहरत रह्योनिजिधारिधि जहँवाँ । पहुँचो जायअजामिलतहँवाँ ॥
देखत ताहि नीक अतिलाग्यो । कछु क्षणठाढ़रह्यो अनुराग्यो ॥
लग्यो कुसंगदोष लिहिकाहीं । कह्यो अजामिल जबतिहिपाहीं ॥
जितनी अहैं तुम्हारी दासी । हमैं देहु इक लै धनरासी ॥

मान्यो शूद्र अजामिल वानी। दियो एक दासी छबिखानी॥
दै धन लै दासी गृह आयो। निजघरते घर भिन्न बनायो॥
निज नारीको भूपण लैकै। दिय दासीकहँ आदर दैकै॥

दोहा-पुनि गृहकी संपति सकल, दियो फूंकि तेहिहेत।
ब्याहीतिया निकारिकै, दासिहि दियो निकेत॥

जब तिहि सम्पति रहिगै थोरी। लग्यो करन तब पुरमहँ चोरी॥
मगमहँ लागिकरै जन घाता। औरहु किय अनेक उत्पाता॥
यहिविधि बीते वर्ष सतासी। भयो जबै आरम्भ अठासी॥
भाग्य विवश कोउ संत सिधारे। ठगनहेत घरमें बैठारे॥
दै भोजन घरमाँह बसायो। तिनके पास कछू नहिं पायो॥
ताही निशा अजामिलदासी। जन्यो एकसुत पितु सुदरासी॥
संतहु भवनभीतरहि आये। नारायण सुत नाम धराये॥
संत गये पुनि देशनकाहीं। फेरि अजामिल तेहिसुतमाहीं॥
कियो प्रीति अतिशयसुखछाके। यदपि रहे नवसत शठवाके॥
लहुरेसुतकहँ रोज खिलावै। तासुखचूमि मोद अति पावै॥
दशों पुत्र ठग चोर महाना। करहिंपापनहिंजाहिं बखाना॥
यहिविधि बीत्यो बरस अठासी। आयो काल अजामिलनासी॥

दोहा-रोगविवश अतिविकल भो, भये शिथिल सब अंग।
लग्यो चलन ऊरध पवन, भये नैन बदरंग॥

तब यमदूत नीतिभयरासी। आवत भे लीन्हें कर फाँसी॥
परे अजामिल कहँ तहँ देखी। भई तासुउर भीति विशेखी॥
डारे तुरत कंठमहँ फाँसी। मारिदंड लीन्हें जिय गाँसी॥
ताकी सुरति पुत्रमहँ लागी। मरन कालमें सोइ सुधिजागी॥
तब बालक सुतकहँ गुहरायो। जब नारायणमुख कढिआयो॥

तब चारिहु अक्षरते चारी। हरिके दूत कढे दुखहारी॥
छोरि कंठते ताकरि फाँसी। अतिशय यमदूतनकहँ त्रासी॥
ले तिहि जानचहे हरिलोका। तब यमदूत कहे भरिशोका॥
अहो कौन तुम रोकन वारे। धर्मराजको शासन टारे॥
याको कारण वेग बतावहु। तब यह पापीकहँ लेजावहु॥
तब हरिदूत वचन अस टेरे। हम किंकर नारायण केरे॥
यह अतिपुण्य कियो जगमाहीं। ताते लैजैहैं प्रभुपाहीं॥

दोहा—तब बोले यमदूत पुनि, यह अबलौं मरयाद।
पुण्यवान पापी लहत, स्वर्ग नरकको स्वाद॥

दुष्ट अजामिल अतिशयपापी। दासीरत ठग चोर सुरापी॥
ताते नरकयोग यह साँचो। याते पाप एक नहिं बाँचो॥
तब बोले हँसिकै हरिदूता। तुम मूरख सिगरे यमदूता॥
कौन सुकृत करिबेको राख्यो। जब नारायण मुखयहभाख्यो॥
कोटिजन्मअघअवलि बिलानी। एकजन्मकी कहा कहानी॥
तुम्हरो धर्म अधर्म न जाना। वृथा भरे अपने अभिमाना॥
सोवत जागत बैठत वागत। खाँसतखसतहँसतअरुभागत॥
टेक व्याज अरु बकत बिसूरी। पीवत खावत खंडहु पूरी॥
कढे वदनते जो हरिनामा। तौ अघजरतलहतहरिधामा॥
जेते अघ जग अहैं घनेरे। प्रायश्चित कहे तिन केरे॥
प्रायश्चित्त किये पुनि पापा। उपजत लहि वासना प्रतापा॥
पै हरिनाम कहे मुखमाहीं। सहितवासना पाप नशाहीं॥

दोहा—ताते सगरे दुरित को, प्रायश्चित्त प्रधान।
है हरिनाम उचारिबो, वेद पुराण प्रमान॥

कबित्त—पौन ज्यों जलधिपर वज्र ज्यों महीधरपर,
क्रोध जिमि सिद्धपर भानुतम दापपै।

ज्ञान ज्यों अज्ञानपर मान अपमानपर,
कुयशपै दान ज्यूं कृपान शत्रुतापपै ॥
कुलपै कुपूत ज्यों सुपूत ज्यों कुपूतपर,
जैसे पुरहूत दनुपूतन कलापपै ।
रघुराज रावनपै गंगज्यूं अपावनपै,
दावनपै दास तैसे रामनाम पापपै ॥ १ ॥
कृष्ण भोजराजपर भीम कुरुराजपर,
जैसे रघुराज मृगराज हैहयराजको ।
सिंहगजराजपर शंभु रतिराजपर,
पान जिमि लाज असकंद गिरिराजको ॥
शांतरसराजपै अनीति क्षितिराजपर,
क्रोध सिद्धिकाजपर गाज तृणराजको ।
पापन समाजपर जोर यमराज जैसे,
पापनपै तैसे कृष्णनाम ब्रजराजको ॥ २ ॥
कीटनपै भृंग जैसे भृंगपै विहंग जैसे,
पिपुल विहंग पै ज्यों बाज जोरवारहै ।
बाजपै ज्यों मारजार मारजारपै ज्यों श्वान,
श्वानपै तरक्षु तापै गज मत वार है ॥
गजपर सिंह जैसे सिंहहूपै शारदूल,
शारदूलहूपै जैसे शरभ उदारहै ।
शरभपै जैसे नरसिंह भाषै रघुनाथ,
पापनपै जैसे हरिनामको उचारहै ॥ ३ ॥

दोहा-गयो कंठको टूटिजब, पाश अजामिलकेर ।
उठ बैठ्यो चैतन्य है, चौंकि चितै चहुँफेर ॥ १ ॥

हरिदूतन यमभटनको, सुन्यो सकलसंवाद।
अतिगलानि मनमें भई, छूटचो सकल प्रमाद॥ २॥

होय वृथा मैं जन्म गमायो। जीवनको फल कछू न पायो॥
कबहुँ न होत मोर उदघाटा। मगनविषै जगझूठहि हाटा॥
मैं आरत ह्वै सुतहि पुकारा। नारायण सुख भयो उचारा॥
सोइ प्रभाव प्रभु दूत पठाये। गलते यमकी पाश छुड़ाये॥
ऐसो प्रभु तजि दीनदयाला। आन भजौं तौ होहुँ विहाला॥
अस विचारि तजि गृहपरिवारा। गयो अजामिल क्रुतहरि द्वारा॥
तहँ हरिभजन कियो कछुकाला। गयो त्यागि तनुयदुपतिआला॥
अरु यमदूत बहुरि यमपासा। आवत मे मन परमउदासा॥
यमसों कह्यो न करिहैं कामा। पापी जान लगे हरिधामा॥
भेद बताय देहु हमकाहीं। किहि ल्यावैं ल्यावैं किहिनाहीं॥
अबलौं तुमहिं नाथ हम जाने। अब हमको बहु नाथ दिखाने॥
अबलौं रुक्यो न शासन तेरा। अब तौ बीच परत बहुतेरा॥

दोहा—निजदूतनके वचन सुनि, यम करिकै तहँ ध्यान।
बोल्यो वचन सभीत अति, करि प्रणाम भगवान॥

क०घ०—समदरशी जे साधु हरिअनुराग रँगे,
तिनके सुयश को सुरेश सिद्ध गावैं हैं।
रक्षित गोविंदकी गदाते वै सदाइ रहैं,
उनके निकट काल कर्म नहिं जावैं हैं॥
भाषै रघुनाथ मानो मेरी कही बात साँची,
जोर न हमारो कछु तिनमें बतावैं हैं।
धोखहूमें तिनके समीप नहिं जइयो दूत,
बारबार तुमको विशेषके बुझावैं हैं॥ १॥

रसना न जाकी एक बार हू उचार्यो कृष्ण,
चित्त रघुराज जहु राजपद ध्यायोना।
कृष्णचन्द्र चरण सरोजमें न नायो शीश,
एकोरोज संतसंग खोजि मन ल्यायोना।
दुनियामें आय हरिदास नाम पायो नाहिं,
केशवकी सेवामें शरीरको लगायो ना।
ऐसे महापापिनको दूतो देह दंड देहु,
मनमें दयाको कारि कबहुं बचायो ना॥ २॥
रोज रोज जाय जग खोजि खोजि पापिनको,
ल्याय ल्याय नरक निवेशनमें नाइयो।
जाको जैसो अपराध ताको तैसो दैकै दंड,
यहीभाँति पापिनको पावन बनाइयो॥
भाषै रघुनाथ राखो हुकुम हमारो अस,
एक बात मेरी कही केहूं ना भुलाइयो।
धोखे अनधोखे दूतो बात यह घोखे रहो,
रामकृष्ण दासनके पास नहिं जाइयो॥ ३॥

इति श्रीविश्रामसागर सबरसआगर अजामिल प्रसंगवर्णनो नामाष्टमोऽध्यायः॥ ८॥

दोहा—सुमिरि गिरा गणपति शिवा, सकल सुमंगलदान।
धर्म दूतसम्वाद पुनि, कहुँ अस्कन्द बखान॥

सुनत दूतगण यमकी वानी। बोलत भये जोरि युगपानी॥
जगमें भारतके जो प्रानी। अस को नाम न लेत सुज्ञानी॥
जो उनके ढिग जान न पाई। तौ नरलोक करब का जाई॥

कह यमराज सुनो मम वानी । जो मैं कहूं करो सुखमानी ॥
राम कहत जो जगके माहीं । सो व्यवहार प्रेम कछु नाहीं ॥
गुरुसे रामनाम जिन पायो । अधिक प्रेमकर हृदय बसायो ॥
कितनेहू संकट दे कोई । त्यागै रामनाम नहिं सोई ॥
रामनाम त्यागै कहुँ नाहीं । सो हमरेलोकै नहिं आहीं ॥
अस हरिभक्त निहारो जबहीं । तजो दूरते तिहि मग तबहीं ॥
अरु जो छली होय बिन प्रीती । ताको लेआवो बिन भीती ॥
नरक डारि सब कर्म भुगावो । शासन मोर मान तहँ जावो ॥

दोहा—कहत दूत कर जोरकर, यह संशय मनमाहिं ।
पंचतत्त्वके सबहि तनु, हरिजन जानि न जाहिं ॥

हरिजन चिह्न कहो कछु गाई । जाते हम तिन ओर न जाई ॥
जिनको हम तुम्हरे ढिग लावैं । तिनके भेद कहहु जे आवैं ॥
तब यमराज कही मृदुवानी । भक्त चिह्न सुनिये सुखदानी ॥
गले विराजत तुलसीमाला । माथे चन्दन तिलक विशाला ॥
विधिहरिहरमें भेद न मानहिं । नित हरिकथासुनत मुदठानहिं ॥
लखत दीनजन दया विचारैं । हिंसामें नहिं पग कहुँ धारैं ॥
बाल वृद्ध सबके हितकारी । क्षमाशील सन्तोष विचारी ॥
मनक्रमवचन दुखद नहिं काहू । अतिउदार संतन चितचाहू ॥
यह हरिभक्त रूप हरिकेरे । कबहूं मत जइयो इननेरे ॥

दोहा—भक्तनमें जो कहूं कछु, कबहुँ दोष दरशाय ।
तिहि जानहु तुम देहकृत, भक्तन छुवत न काय ॥

भक्तनको बाधक सो नाहीं । यह निश्चय जानहु मनमाहीं ॥
औरनको पावन नित करहीं । अपने मन कछु दोष न धरहीं ॥
यथा गंगमें फेन दिखाई । किमि गंगाप्रभाव लघुताई ॥

ब्रह्मद्रवमें जो अवगाहीं । हरत ब्रह्महत्या क्षणमाहीं ॥
तथा सन्तजन हरिको प्यारे । सब दोषनके नाशनहारे ॥
भक्तनके लक्षण यह भाई । कहूं असन्तन कृत्य बुझाई ॥
तिन खलजन हरिभक्ति न भावैं । लखि साधुन मनरोष बढ़ावैं ॥
सो खल जे परनिन्दा करहीं । परसुखनिरखि हियेमें जरहीं ॥
सो खल जो हिंसारत होई । तजत सुमार्ग कुपथ चल सोई ॥
परधन हरै करै अपकारा । क्रोध अकारण रति परदारा ॥
त्रिनविधि भक्षत मांस बनाई । पियतसुराकर अति अधमाई ॥
गुरुपितुमातुवचन नहिं मानै । परदुखहेत रारि नित ठानै ॥
विप्र वेद अवतार न मानै । हरिपूजन मिथ्याकर जानै ॥
करैं पुराणन निन्दा भारी । ग्यारहपति करवावहिं नारी ॥
यह सब विमुखरामते आहीं । लायभरो यह नरकन माहीं ॥
पुनि यमदूत कहन अस लागे । वाणीसुधा प्रेमरस पागे ॥
कौनकर्मते करहु प्रकासा । स्वर्ग नरक जनपावत वासा ॥

दोहा-सुन बोले यमराज अस, सुनो सकल मनलाय ।
जौनकर्मते जीव यह, स्वर्गनरकमें जाय ॥

हिंसाशील वचन कटु भाखैं । वेदपुराण प्रतीत न राखैं ॥
गुरुहि न मान घातविश्वासा । ते सब लहैं नरकमहँ वासा ॥
देव विप्र तीरथ अरु सन्ता । निन्दा करैं सदा भगवन्ता ॥
असमय भोगतहैं जो नारी । उलटैं निगमअर्थ अघ भारी ॥
रजोवती अरु गर्भस नारी । जो भोगतहैं अत्याचारी ॥
तियको जो भेजत परपासा । आप खाँय सो धन अघरासा ॥
विप्रहि न्योत जिमावैं नाहीं । सो नर नरकवास नित पाहीं ॥
कैसहु नीच भक्त हरि होई । तिनसे तर्क करत जो कोई ॥

कह कटुवचन हँसै हहराई। निश्चय नरक परत सो जाई॥
जो निजदेह आत्मारूपा। मानतहैं तज ब्रह्म अनूपा॥
सलिलमात्र तीरथमय जाने। हरिअर्चै अरु गुरुहि न माने॥
निन्दहिं विष्णुसन्तनहिं ध्यावैं। सो जन अवशि नरकमहँ जावैं॥

दोहा–हरि चरणोदक तीर्थसम, रामसंत्रसम मंत्र।
जानत जो सामान्यकर, परत नरक निज तंत्र॥

गोशाला अरु ग्रामनमाहीं। देहिं अगिन परतिय मनलाहीं॥
बिनदेखे जो दोष लगावैं। द्यूतचौर्यकृत नरक सिधावैं॥
गऊ देव तीरथ अस्थाना। धर्मशाल गलियनमधि जाना॥
विष्ठा मैल करत जो कोई। हिंसाकृत नरकहि पड सोई॥
पूजत साधु नहीं घरलाई। तिन्हैं निरखि मन क्षोभ बढ़ाई॥
क्रोधगुरूसे बात चुरावैं। हरिहरयश तजि नरगुण गावैं॥
हरिभक्तन यश वर्णतनाहीं। रामविमुख नरकनकहँ जाहीं॥
परअवगुण जे कहत बखानी। परत जाय नरकनमहँ प्रानी॥
निजपति तज परपतिलपटाहीं। वच कठोर निज स्वामि सुनाहीं॥
अस तिय परति नरकके माहीं। यामें कछु संशय है नाहीं॥
पापकर्म नरकहिको द्वारा। ऊंच नीच नर नाहिं विचारा॥
नरक परत जिनकर्मन प्रानी। सो सब तुमसे कहा बखानी॥
जिनकर्मनते स्वर्गहि पावत। अब सो सुनो तुम्हैं समुझावत॥

दोहा–विप्रदेवगुरुपूजहीं, श्रद्धायुत करदान।
होमयज्ञव्रततीर्थकर, जपतपसंयम आन॥

परउपकार सदा मन लावहिं। अतिथि द्वारते विमुख न जावहिं॥
सब सुखदाई वचन सुनावैं। ते नर अवशि स्वर्गको जावैं॥
जो काहूको बुरा न कहहीं। रक्षा जीव करत नित रहहीं॥

औरनको नित देवहिं माना । आप सदा नित रहहिं असाना ॥
विधिहरिहरभक्तनहिं प्रणामा । करहिंसदासुमिरहि सियरामा ॥
ते वैकुण्ठलोकको जाहीं । सौमन्वन्तर तक सुख पाहीं ॥
पतिव्रता नारी जो होई । धर्मशील कोमलचित जोई ॥
रोगी कृपण पंगु पति होई । कामी क्रोधी कस किनु सोई ॥
ईशसमान जानकर सेवा । ताके वशीभूत सब देवा ॥
सो पतिव्रता स्वर्गको जावै । सतियन में उत्तम पदपावै ॥

दोहा-विहँगकपोतीके सरिस, बसै स्वर्गमें जाय ।
यहि आचरण किये सकल, कलिकपाप मिटजाय ॥

इति श्रीविश्रामसागर सन्नमतआगर यमदूतसम्वादवर्णनो
नाम नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

दोहा-विधिहरिहरगणपतिगिरा, सियाराम मनलाय ।
कहुँ इतिहाससमुच्चकी, कथा परमसुखदाय ॥

सुनत दूत पुनि पूछे लीन्हा । विहँग कपोत धर्म कहकीन्हा ॥
कहो कथा सोइ परम सुहाई । सुनत धर्म बोले मुसुकाई ॥
एक वधिक निर्दयी महाना । विपिनकरै वध खग मृगनाना ॥
एकदिवस काननमें गयऊ । खगमृगमिल्योनदुखमनभयऊ ॥
उत्तरदिशिते आँधी आई । भयो अँधेरो सूझ न राई ॥
प्रलयकालसम गर्जत बादर । वृष्टि होय नभते हिमपाथर ॥
जहाँ तहाँ जलही जल छायो । दौडतफिरत वधिक दुखपायो ॥
माघशीत तनु थरथर कांपै । बारंबार जीभ रद चांपै ॥
क्षुधितहोय इकतरुतर आयो । बैठ्यो तहां महादुख पायो ॥
तेहितरु रही कपोती कोई । भूगिरिपरी पवनते सोई ॥

ताहि पींजरे धरो उठाई। पुनि बैठो अतिक्षुतअकुलाई॥
मनमें शोच कपोती करई। मम पति इकलो अतिदुख भरई॥
इत व्याधेको शीत सतायो। बैठरह्यो तिहि बोल न आयो॥

दोहा–ताही समय कपोत सो, आयो निजतरुमाहिं।
देखनलगो विचारकर, प्यारी आई नाहिं॥

शोचसहित मन करत विचारा। बिन वनिता कैसो घरबारा॥
नारिपुरुष जब अन्तर होई। धिक तिहिनर जो घर कर सोई॥
तिय गृहस्थकी शोभा मानी। वनिताबिना कौन सुखदानी॥
इतउत नजर कपोत पसारी। लखी पींजरेमें निजनारी॥
विस्मितहो अस वचन उचारी। काकरिहौं अब तुम बिनप्यारी॥
देहौं त्याग आज निजप्राना। सुनत कपोती वचन बखाना॥
हेपति वृथा शोच अब त्यागो। दुःखमूल इस जगसे भागो॥
सुख दुखमिलनवियोगजितोई। कर्माधीन सबहि नित होई॥
देखो करि विचार मनमाहीं। काहूको जगमें कोउ नाहीं॥
तन धन धाम धरणि सुत दारा। इकदिन छुटिहैं अवशि विचारा॥
धर्माधर्म करत जो कोई। अन्त समय सोइ साथी होई॥

दोहा–किय अधर्म यमयातना, धर्मकिये सुरलोक।
पावै ताते धर्म नित, करहु छाँड सब शोक॥

आयो धर्म करनको अवसर। ताते पति कीजै तेहि चितधर॥
वधिक तुम्हारे थलपर आयो। यहि पूजो पावहु मनभायो॥
याको तुम जानो मत वैरी। बैठो आय शरणमें तैरी॥
विपतिपरे जो करै सहाई। तिहि यश त्रिभुवन जाय समाई॥
अतिथि जाय जो बिनसत्कारा। नाशै पुण्यपाप शिरभारा॥
धन वह गेहे पुरुष परिवारा। जिनते नित हो परउपकारा॥

तातें करहु अतिथि सेवकाई। तौ गृहस्थकी होय भलाई ॥
मत सेवामें देर लगावो। याके क्षुधा कलेश मिटावो ॥
सुनितियवचखगकरतविचारा। करहुँ कौनविधि इहिसत्कारा ॥
पुनि सन्मुख व्याधेके आयो। शिर झुकाय इमि वचनसुनायो ॥
कियो पवित्र आज ममगेहा। आज्ञाकीजै सहित सनेहा ॥
तब किरात बोलो सुखपाई। बाधत शीत सुमेटहु भाई ॥
तब कपोत ऊंचे उड़िजाई। वरतसमिध निज चोंच उठाई ॥
आनधरी अपने थल लाई। सूखी लकड़ी पुनि लखपाई ॥

दोहा-कछुक आपने नीडते, लकडी लीन्ह निकार ॥
धरी वधिक तट पंखते, अग्नी दीन्ह पजार ॥

तापो वधिक अधिक सुखपाई। चेतनहो कह गिरा सुहाई ॥
परउपकारी हो तुम भारी। मेरो दीन्हों शीत निवारी ॥
अब अतिक्षुधा सतावत मोहीं। कछु भोजन दे विनवों तोहीं ॥
तब कपोत मनमाहिं लजायो। धिक पशुपक्षी को तनुपायो ॥
चुन चुन नाज पेट निज भरहीं। परउपकार कौनविधि करहीं ॥
हैं धन मनुष कुटुमके पालक। हमसे तौ पलिसकतनबालक ॥
अतिथि निराश जाय घरमाहीं। ताके सबही पुण्य नशाहीं ॥
अस मन समुझचलो दृगपानी। शोचत शोचत बोलो बानी ॥
धीरज वधिक करो मनमाहीं। विलम क्षुधा मेटनमें नाहीं ॥
असकहि अग्नि प्रदक्षिणकरकै। कूदपरयो तामें मुदभरिकै ॥
लखिकौतुकगयोवधिकलजाई। हियेभई वैराग्य अवाई ॥
पूरबपुण्य हिये में जागो। लागो करन विचार सभागो ॥

दोहा-धन धन पक्षी जन्म तव, मुहिं मानुष धिक्कार।
नरतनु लहि सब वयसमें, कीन्हें पाप हजार ॥ १ ॥

कबहूं किये न सुकृत कछु, पीडित किये शरीर ॥
अब किहि विधिसे जायगी, यमत्रासनकी भीर ॥२॥

अब वनजाय करहुँ तप भारी । कहिअसदियो जालनिजफारी ॥
तुरत कपोती दीन निकारी । करनलगी सो मनहि विचारी ॥
पतिबिन जीवन वृथा हमारी । असकहिसोउगिरिअनलमँझारी॥
तुरत दिव्यतनु दोउजन पायो । सपदि विमान तहां चलिआयो ॥
दोउ परस्पर मिलि सुख पाई । पहुँचे सुखयुत सुरपुर जाई ॥
लखहु धर्मको अतुल प्रभावा । योगीजन दुर्लभ पद पावा ॥
जयजय सुरन कही तव बानी । सत्यलोक पहुँचे दोउ प्रानी ॥
चलो वधिक इत कानन आयो । मगनध्यान हरि सुरत लगायो ॥
अचल समाधि भई कछुदिनमें । इकदिन आगलगी तिहिवनमें ॥
तिहिमें जरिगो वधिकशरीरा । आयो तुरत विमान गँभीरा ॥
चढिविमान सो स्वर्गसिधायो । देखहु तपन प्रभाव सुहायो ॥

दोहा-कपटी कुटिल अधमतनु, सज्जनसंगति पाय ।
पाई गति सुनि दूतगण, रहे चरणशिरनाय ॥

बोले येहू देहु बताई । कहां जाय हम कहां न जाई ॥
धर्मराज बोले सुखपाई । सुनो देहुँ अस्थान बताई ॥
हरिके पूजनरत जो प्रानी । ले चरणोदक भोजन पानी ॥
कथा सुनै हरियशनितगावहिं । हरिहर मंदिर दर्शन जावहिं ॥
कुटुमसहित द्विजसाधुनसेवा । करहिं सदा जानहिं समदेवा ॥
हरिहरसन्तमाहिं छल नाहीं । कबहूं मतिजइयो तिनपाहीं ॥
जो सुत पितु आज्ञा नहिं टारैं । अतिथिआगमननहिं निरवारैं ॥
होमयज्ञकर द्विजन जिमावैं । सन्तजननको लखि शिरनावैं ॥
वेद पुराणन माहिं सनेहा । भूलि न जावहु तुम तिनगेहा ॥
अव जहँ होय तुम्हार निवासा । सोऊ सुनो मान विश्वासा ॥

हरिहररामकथा जहँ नाहीं। प्रभुकी भक्ति न जिनके माहीं॥
पुत्र पिता जहँ ठानत रारी। जिहिघरभीखनामिलतभिखारी॥
कण्टकवृक्ष जौनघरमाहीं। तहाँ निवास करहु भय नाहीं॥
यदि तहँ होय देवआराधन। तौ ऐसेहु घर जाउ न तुम गन॥

दोहा—जहाँ जीवहिंसा रहै, मद्य मांस अरु मीन।
भक्षणकर वेश्यानिरत, रहत झूठमें लीन॥

हरितजि पूजत प्रेत पिशाचा। तिनके गेह वास तव सांचा॥
तिन्हैं लाय नरकनमें डारो। और सुनो पुनि वचन हमारो॥
शून्य भवन जहँ दीप न बरई। गणिका जहां नृत्य नित करई॥
गृहजाले अरु जूँठन फैली। जहँ तहँ भूमि रही जो मैली॥
पर्व भये जो देहिं न दाना। करैं नहीं गंगा अस्नाना॥
निजघर आवैं सुता पराई। सहैं निरादर नित दुखपाई॥
पर्वपरे जो भोगहिं बाला। तिनके गेह बसहु सबकाला॥
प्रतिदिन बासी अन्न जु खाहीं। जिनगृह सन्त न आदर पाहीं॥
जहां क्लेश नित साँझ प्रभाता। साधु विप्रकी बूझ न बाता॥
दीपबिना जो भोजन खाहीं। बसहु जाय तिनके घरमाहीं॥

दोहा—मातु पिताको कटुकहत, रहत कुटुमसे वाम।
जाय बसहु तिनगेह तुम, जे न भजत सियराम॥ १॥
आप भक्त अरु गेहमें, होय कर्कशा नारि।
सुत कलत्र जन पापरत, नितप्रति मांस अहारि॥ २॥
तिनके भोजनको छुए, किये धर्म मिटजाय।
तिनके घर बसिये सदा, सो नित नरकमँझाय॥ ३॥

जो सतगुरुसे करत विरोधा। मातपितापर जिनके क्रोधा॥
खोले केश रहैं जो नारी। सास बहूमें जहँ नित रारी॥

मरघट औ चौराहेमाहीं। अजापुत्र जहँ अधिकरहाहीं ॥
यह अस्थान तुम्हारे नीके। जानलेहु निजमनकारि ठीके ॥
इनके सदृश और जो होई। हैं अस्थान तुम्हारे सोई ॥
औ जो अन्तसमय हरिनामा। लेइ त्यागियो ताको धामा ॥
धर्मराजके सुनि यह बैना। दूतनके मनमें भो चैना ॥
उठि उठि अस्त्र शस्त्र गह पानी। करनलगे निजकृत हठठानी ॥
जो यह कथा सुनहिं मनलाई। यमदूतनको त्रास नशाई ॥

दोहा-लक्षण धर्माधर्मके, कछु ग्रन्थन अनुसार।
वर्णन कीन्हें यथामति, सुनत होत भवपार ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ग्रंथउजागर गृहधर्म यमदूतसम्वादवर्णनो नाम दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

दोहा-विधिहरिहरगुरुरामसिय, सुमिरि सुमंगलदान।
नासिकेतको सारले, कहुँ इतिहास बखान ॥ १ ॥
धर्मराजने दूतगण, बोलसुनाई बात।
गंगयमुनके बीच इक, द्विज तिहि लावहु तात ॥ २ ॥

जाभू गिरितट नगर सुहायो। तामें विप्र रहत मुदपायो ॥
गोत्र अगस्त्य शालमलीनामा। आयुहीन भो लाउ निकामा ॥
सुनि यमदूत सकल हरषाई। चलतभये निजवाहनधाई ॥
कोइ कूकर शूकर असवारी। गुर्ज भयानक करमें धारी ॥
मायामहिष चढे कोउ आहीं। धनुशरकर बडदाँत दिखाहीं ॥
खरपर चढे भयानक देहा। केशगदा करलिये विदेहा ॥
चीतलसिंह कोउ असवारी। क्रोधरूप दृष्टी अरुणारी ॥
मुद्गर पाश हाथलिय कोई। इहिविधि चलतभये सब सोई ॥
आये सब तिहिपुरमें धाई। चले विप्रगृह सहित सहाई ॥

दोहा-दूसर द्विज तिहिपुर बसत, सोइ गोत्र सो नाम ।
विविधभाँति त्रासनलगे, यमगण जा तिहिधाम ॥
उभयघरीमें यमगण घेरी । जीव निकार लीन्ह द्विजकेरी ॥
बांधिपाशमें चलभे सबही । रोवनलगो कुटुमतिहिसबही ॥
तात मात सुत भ्राता यामा । तन धन परो रह्यो निजधामा ॥
जहँको तहां परोइ रहोई । द्विजके संग चलो नाहिं कोई ॥
भूसुरको आगे गण कीन्हों । यमपुर ओर गमन मनदीन्हों ॥
मृत्युलोकते यमपुरमाना । योजन सहसछियासी जाना ॥
आठ ठौर तिहि मारगमाहीं । अतिशय कष्ट परतसुखनाहीं ॥
पहलो दोसहस्र पथ जोई । तामें सुखदुख लहत न कोई ॥
आगे एकसहस योजन मग । भरे सिंह भयदेत पगहि पग ॥
जिन सत्संग कीन मनलाई । तिन्हकहँभयदुखहोत न राई ॥
दोहा-तिहिके आगे मग अधिक, कंटक भय भरपूरि ।
पांचसहसयोजन परत, चुभत होत दुखभूरि ॥
जिन गज यानपालकी दाना । कियो करत चढ तहाँ पयाना ॥
दोसहस्र योजन तिहि आगे । बालूतपत रहत भयलागे ॥
पादत्राण किये जिन दाना । तिन्हें न व्यापत दुःख महाना ॥
योजन द्वादश सहस अगारा । मारग बिकट खड्ग जिमिधारा ॥
जिन कीनो हितकर रथदाना । ते चलसकत नहित दुखनाना ॥
आगे आठसहस्रन योजन । मिलततहांजलअतिगम्भीरन ॥
महीदान कीन्हों जिन काहू । तेसुखपात नतो दुखलाहू ॥
तहँते योजन तीस अगारी । अंधकार दुखदाई भारी ॥
दीपदान तहँ आवत कामा । ठाकुरमंदिर बारत जामा ॥
की ब्राह्मणके घरमें जाई । बारत दीप महासुखपाई ॥
अथवा तीर्थकथाके माहीं । बारत दीप प्रकाश लहाहीं ॥

दोहा-शुचितीरथ अस्नान किय, पितर देव सन्मान।
धेनुयानवारणतुरँग, दीन महीसुर दान ॥ १ ॥
वसुयोजन पुनि मग मिलत, महाचढाव उतार।
होत तहां प्राणी विकल, भयपावत विकरार ॥ २ ॥

तेहिठाँ भूमि [illegible] [illegible]। सादर गणकश गमनत ज्ञानी ॥
सहस्रअठारह [illegible] आगे। तपनभानु अति लखिभयलागे॥
तिहि मारगमें सो सुख पावै। कूप बावली ताल खुदावै ॥
जे जलसर्पिदत सन्मानी। क्षणमें ताहि तरत तें प्रानी ॥
मारगवृक्ष देहिं लगवाई। ऐसो दान काम तहँ आई ॥
योजन छयासीसहस बखाना। यमपुरपंथ अगम अति जाना ॥
पुनि आगे सरिता वैतरणी। शतयोजनप्रमाण जिहि वरनी ॥

दोहा-तिमि झष नक्र कराल अति, पीवरुधिरमय नीर।
अगम सबहि अधमन अवशि, सो सरि यमपुर तीर ॥

जो अपने स्वामीको मारें। कन्या कामिनि द्विज संहारें ॥
जीवन वधकर सबहिं सताहीं। पुरजंगलमहँ आग लगाहीं ॥
तिन्हें प्यास तहँ लागहि भारी। रक्तपीव सोइ पीवें सारी ॥
मद्यपान अरु मांस अहारा। जुआचोर अरु कृतनटपारा ॥
जो पातकी वधनरत अहहीं। सो तिहि सरितकष्टअतिसहहीं ॥
कोइ उछरत कोइ डूबतजांहीं। कोउलहरिनसँगबहबिलखाहीं ॥
विच्छू सर्प डसत तहँ भारी। पापिन रुधिरपीवकर वारी ॥
पुण्यजननको सोइ घृत क्षीरा। दीखतहै सुनिये मतिधीरा ॥
जननि जनक सेवन गोदाना। किये तीर्थ सेये विधिनाना ॥
गंगासागर संगम माहीं। देहि दान चित विमलनहाहीं ॥
दृढमतधर अतिथिन सन्मानत। निगमागमकारि नेम बखानत ॥

हरि हर यश श्रुतिपुटकरि पीवत । जे जन रामनाम जपि जीवत ॥
ते तिहिसरितहि उतरत कैसे । गोपदगर्त्तजलहि नर जैसे ॥
इत सन्मानि साजि गो दीन्हीं । उत धरि पूंछसुगमसगुकीन्हीं ॥

दोहा–गोसठ धरि तिहि सरितमहँ, तरत लखे बहु जीव ।
बहुतक डूबत दुखसहत, तबहुँ न सुमिरत पीव ॥

धर्मी देवदेहधर जाहीं । पापी प्रेतशरीर समाहीं ॥
सब सुखलहत सुखी सब सुकृती । बहु दुखभरतजात बहुदुरिती ॥
इहिविधि नदी उतरि द्विजराई । तहँ यमपुरी दीख भयदाई ॥
योजन सहस तासु विस्तारा । तामें चार द्वार निरधारा ॥
पूरब पश्चिम उत्तर द्वारे । सुकृती जात चले सुखभारे ॥
दक्षिणद्वारहि सोई जाहीं । कीन्हें पाप जन्मभर आहीं ॥
दुष्टातमा विगत भय शीला । पुरुष असत्यनिरतदुश्शीला ॥
निगमागम पुराण गुरुदेवा । निन्दहिंजननिजनकतजिसेवा ॥
चोरी करैं शास्त्र नहिं मानैं । कन्या बेचैं अवगुण खानैं ॥
छलकरि विष देवहिं जो कोई । वेदपुराण न मानत सोई ॥
साधू ब्राह्मण सेवैं नाहीं । दान न किये पर्वके माहीं ॥
परतिय गुरुरमनी रत कन्या । निजतियतजि सेवतशठ अन्या ॥
ते सब दक्षिणद्वारे जाहीं । कवनिहुभाँति जहाँसुखनाहीं ॥

दोहा–तहाँ नरक बहुतन बने, निरखत रोम उठात ।
सुनहु सुचित मुनि धीरधर, जीव जहां दुखपात ॥ १ ॥
कुंभीपाकादिक नरक, पापिनको दुखदान ।
गेरत यमगण भीमतनु, यथायोग्यपहिचान ॥ २ ॥

रौरव मांझ पचैं गो घाती । रोवतहैं करि शब्द कुभाँती ॥
जो तिय मारहिं गर्भ गिरावहिं । तेलयंत्र तनु तासु पिरावहिं ॥

निजगुरुहन्यो हतेतिहि स्वामी। छुराधारते पीडित नामी॥
जे विश्वासघात नर करहीं। ते नर कालसूत्रमहँ परहीं॥
हरत जु शिशुवृद्धनके प्राना। तप्ततेलते पचत अयाना॥
जे परखेत हरहिं परदारा। जे नर पर धुरसीम बिगारा॥
ते गुडपाकनरक महँ पचहीं। हाहाकार शब्द तहँ मचहीं॥
चक्रनते तिनके तनु छेदहिं। मुद्गर परिघ मार दुख देवहिं॥

दोहा-मूढअगम्यागमनरत, भक्ष्याभक्ष्यहि खात।
तिनके तनुको क्रकचगण, छेदतहैं दुखदात॥

चोरवृत्तिकर जीवत जेई। बिनकारण परद्रोह करेई॥
बोलत अनृत पियत मद पापी। जे परनिन्दक जनपरितापी॥
ठौर भयंकर माँझ अपारा। यमगण तिनहिं देत बहुमारा॥
जे नर कन्यादान मँझारी। विघ्नकरत रौरवअधिकारी॥
दानदेत लखि भांजी मारहिं। ब्रह्मचर्यव्रत परकर टारहिं॥
परतपमहँ कर विघ्न अनेका। सुनत न हरियश पापविवेका॥
हरियशकहतसुनत बिचलावहिं। पराबिगारकहँ चित्त चलावहिं॥
प्रथम भखैं तिनके तनु कूकर।पुनिअसिपात्रमाहिंअतिदुखभर॥

दोहा-एकवर्णको देत जो, सो गुरु यह श्रुतिभाष।
तिनहिं न मानत मनुजते, रौरवकी अभिलाष॥

जे नर हरत दीनके प्रानन। मित्रहि मारत दाहत कानन॥
तिनहिं अँगारनमाँझ लुढावैं। यमगण दारुण त्रास दिखावैं॥
जे गुरुधनहारक संसारा। कृमिसंकुलमहँ परत निहारा॥
जे नर नृपह्वइ पाप कमावत। प्रजाविवाद न जानिचुकावत॥
युक्त अयुक्त न जानत सोई। करत सपक्ष न्याय शठ कोई॥
ते नर तहँ करपत्रमँझारी। डारेजात मिलत दुखभारी॥

बिनदेखे परदोष गिनावैं। यमगण तिनके नैन कढावैं ॥
अप्रिय बात सुनावत जोई। करनाछेद परत नर सोई ॥
दोहा-भूसुरसुरधन हरत जे, लोभी मनुज अजान।
ते सूचीमुखनरकमें, गेरेजात सुजान ॥
जे परतिय अभिलाखत प्रानी। निन्दत गौ सुर भूसुर जानी ॥
धर्मशास्त्र तीरथ हरिजनकर। निन्दाकरतसुनहुदुखतिनकर॥
पहिले शूलनपर बैठारी। देहिं परिघ मुद्गरकी मारी ॥
पाछे काक श्वान तिनके तन। छेदत दुखत निहारतवनतन ॥
भोगी बहुतकाल प्रियनारी। त्यागतताहिअधमअविचारी ॥
सो करपत्रमांझ दुखपावत। कहौंकहांलगिकोकहिआवत ॥
करपदबन्धन सांकरकेरे। यमपुर अधम पचत बहुतेरे ॥
दूत शमन अनुशासन पाई। नरकनमाँझ गिरावत जाई ॥
भूमिताम्रमय तहाँ विशेषी। तातल पावक जलत वरेखी ॥
दहति दहन वश सो महि कैसी। अतिदुस्सहप्रलयागिनिजैसी॥
तहँ नर कलुपजनक दुखपावैं। यमगण हनि तिहिमाँझजरावैं॥
खर नख खर रद नभ कच केते। खर रोमा सूचीमुख जेते ॥
अतितनुकृशतनुलहि सबपापी। तहँ दुखपावत जनपारितापी ॥
सांकर बाँधि बाँधि गण लावैं। अतिदृढ मुद्गर हनि तहँ ढावैं ॥
दुखलहि जब इत उत नर धावैं। यमगण धरितिहिमाँझगिरावैं ॥
पुनि निजकृतकरियादकरावैं। परिघनहनि बहु त्रास दिखावैं ॥
दोहा-लोभथंभ तिहिमांझ बहु, जलत ज्वलनवश सोइ।
तेहि भेंटत दुखलहहिं नर, परतियगामी जोइ ॥
यमगण ताहि मारि भेंटावत। परुषवचनपुनितिनहिंसुनावत ॥
कलनपरीजेहिबिनतोहिंपापी। मिलुकिन्तु ताहिनावितथअलापी॥

विधि हरि हर पूजन नाहिं कीन्हा। कबहुँन अतिथिन आदर दीन्हा॥
पूजे कबहुँ न गंग भवानी। दीन न दान विप्र सन्मानी॥
कीन्ह न हवन न तीरथ न्हायो। गुरुपदपद्म प्रीति नहिं लायो॥
आलस वश जे करत न धर्मा। ते नर अवशि नरकगत परमा॥
यह शुभ कर्म करत दिन राती। सुरपूजन तीरथ बहु भाँती॥
सत्य धर्मरत संयम साधत। श्रीहरि हर गुरुपद आराधत॥
ते नर जन्म २ सुख पावत। सुरपुर वसि अति सुनियश गावत॥
स्वर्गी पुण्य क्षीण जब होई। मर्त्यलोकमें आवत सोई॥
तिन्हैं पुण्यमय मिलत शरीरा। तियधन धाम सुभग तनु हीरा॥
जो फिरि धर्म करै सुख पाई। अधरम किय ते नरक सिधाई॥

दोहा—जबतक हरिकी भक्ति नहिं, मिटत न यह संसार।
यह लेखा यमराजकर, सो जानहु निरधार॥

दूतन यम यह विप्र दिखायो। धर्मराज लखि वचन सुनायो॥
रह्यो अन्य द्विज यहि वपु नामा। तिहिंतज इहिले कीन निकामा॥
तब दूतनने विनय उचारी। नाथ क्षमहु अपराध हमारी॥
धर्मराज दूतन अघ जाना। द्विजको अतिकीन्हों सन्माना॥
बिना समय द्विज मम ढिगआयो। असविचारियमवचनसुनायो॥
माँगहु वर जो द्विज मनमानी। अतिथिरूपतुमसबसुखदानी॥
कह द्विज कृपा करहु प्रभु सोई। गमन मर्त्यलोकहि पुनि होई॥
जितनी आयू शेष हमारी। तितने दिन तहँ रहूं सुखारी॥
जिहिते तव पुर आवन नाहीं। ऐसो धर्म कहो मुहिं पाहीं॥
कह यम पापी सुकृती दोऊ। मेरे पुर आवत हैं सोऊ॥

दोहा—रामभक्तिरत सन्त जन, तिनपर नहिं अधिकारि।
इकादिशि गरुड रु चक्र प्रभु, रक्षा करत मुरारि॥ १॥

एक ओर हरिपार्षद, एक ओर हरि आप ॥
रक्षा करते भक्तकी, दूर करैं सन्ताप ॥ २ ॥

ताते जो हरिभक्त सयाने । तज जग कर्म प्रेम हरिठाने ॥
बिनु हरिभक्ति कतहुँ कोउ जाई । क्षीणपुण्य भू आवत धाई ॥
रामभक्त ढिग पाप न आवै । भक्ति बीज अजरामर पावै ॥
ताते भक्ति करो मन लाई । तौ मम लोक न देखहु आई ॥
कातिक पुनि आसौज मँझारी । अन्न देत दीनन सुखकारी ॥
पूस माघकरि ईंधन दाना । पालत विप्र दीनके प्राना ॥
माधव ज्येष्ठ अषाढ महीना । जे जल देत मनुष्य प्रवीना ॥
तिनहित स्वर्ग सुरम्य अनूपा । वसहिंकल्पभरिलहिसुखरूपा ॥
फागुन चैत करत फलदाना । ते रविलोकहि करत पयाना ॥

दोहा-अन्न देत दुर्भिक्षमें, कनक देत सुरभिक्ष ।
महाप्रलय लगि ते वसत, सुरपुर धर्मी कक्ष ॥

जलद विष्णु जन दोनों भाई । वैद जु दीन विप्रसुखदाई ॥
तीनों अवशि अमरपुर वासी । होत विमानन चढि २ जासी ॥
तिनके यानन लगी तुरंगानि । सेवततिनकहँअमरनितम्बिनि॥
अब तुम गवनहुनिजपितुपाहीं । रोगहीन तनु अमर पुजाहीं ॥
हो अक्षय तपयोग तुम्हारा । यह मुनिवर वरदान हमारा ॥
सुनि अस चरण वंदि कर जोरी । गमनकीननिजथलहिबहोरी ॥
निजतनुमाहिं होउ पुनि जागी । लखितिहिमातुपिताभयभागी॥
जननि जनक पद जबतिहि वंदे । मेटि सकल दुख होत अनन्दे ॥
मात पिता बंधू हरषाई । कहन लगे सब अचरज पाई ॥
यमपुर गमन बहुरि को आवा । सुनहु न जगअस तेजप्रभावा ॥

असकहिमुनिसँग बैठकुशासन । पूछेहु सबन धर्म अनुशासन ॥
कस यमपुर पथ पुर पुनि कैसा । पुरकर वृत्त कहहु सब जैसा ॥

दोहा–स्वर्ग नरकबिच किमि लखे, पापी धर्मी होय ।
यमगण तन लेखक सभा, वर्णहु जस जहँ होय ॥

सुनत वचन नवि पितु पदकंजा । कहै कि सुनहु तात मुदगंजा ॥
अति दुस्तर यमपुर पथ माना । तव प्रताप मैं जात न जाना ॥
लखेहु धर्मपति अद्भुत रूपा । ज्वलितदहनछबिअकथअनूपा ॥
विविधरूप यमदूतन केरे । अतिविकराल जात नहि हेरे ॥
चित्रगुप्त मतिमान विलोके । स्वर्ग सुखी सब रहत अशोके ॥
कष्टत निरय अनेक प्रकारा । सहत कलेश दुरित कृत भारा ॥
यहिविधि सकलकथा समुझाई । जो देखा सब दीन सुनाई ॥
पहुँचो मैं दूजेके धोखे । सुनि यमराज मोहिं अतिपोषे ॥
सुनि सबकेमन अचरज आवा । नासिकेत तब गुरुहिं बुलावा ॥
राममंत्र लहि मोद बढायो । हरि सुमिरणमें समयबितायो ॥

दोहा–अन्तसमय सब कुटुम ले, पहुँच्यो हरिके धाम ।
तासे मिश्र विचारकर, भजहु राम घनश्याम ॥ १ ॥
नरतनु पाय न भक्तिरत, सो पाछे पछताय ।
चौरासी भरमत फिरै, जन्म अकारथ जाय ॥ २ ॥
इहि चौरासी फेरमें, खुलो एकही द्वार ।
याहि पाय जो ना कढै, घूमैं बार हजार ॥ ३ ॥
शिरपर गाजत काल हैं, यह शरीर थिर नाहिं ।
ताते हरि भजलीजिये, निश्चय करि मन माहिं ॥ ४ ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ग्रंथउजागर गृहधर्म
कर्मविपाकवर्णनो नाम द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

दोहा-विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिरि रामसुखदान ।
महभारत सद्ग्रन्थकी, कहुँ इतिहास बखान ॥
पुनि शौनक अस गिरा उचारी । सुनहु सूतजी विनय हमारी ॥
जगमें कोइ धनी कोइ रंका । कोइ भोगी रोगी निश्शंका ॥
रात दिवस कोइ दुखके माहीं । कोइ प्राणी जन्मत मरिजाहीं ॥
कोइ संततिको पावत नाहीं । बहुत कालतक कोई ज्याहीं ॥
मातपिता बालकपनमाहीं । काहूके मरजात नशाहीं ॥
सो यह नाथ कहो समुझाई । यामें मुहिं शंका अधिकाई ॥
बोले सूत सुनो मम वानी । कर्माधीन ईश गति जानी ॥
दुख सुख रोग शोक अरु भोगा । कर्माधीन लहत सब लोगा ॥
इक यापर वरणहुँ इतिहासा । सावधान सुन सुमति हुलासा ॥
दोहा-सकल शास्त्रज्ञाता गुणी, इक द्विज गुणनिधिनाम ।
नाम सुव्रता तासुकी, इक कन्या छविधाम ॥ १ ॥
चारवर्षकी वयसमें, मरी तासुकी माय ।
तब गुणनिधि मनमें कह्यो, बिनुतियगृहकिमिभाय ॥ २ ॥
कन्यायुत सो वनहिं सिधाये । देखे मुनि आश्रमहि सुहाये ॥
तहँ द्विज पर्णकुटी रचि रूरी । रहनलगे तिहियुत मुदपूरी ॥
विविध भाँतिके चित्रन लाई । और खिलौने देहिं दिखाई ॥
कन्या रहै प्रसन्न सदाहीं । मनमें करै उदासी नाहीं ॥
मातरहित अति बाल कुमारी । तिहिते द्विज संन्यास न धारी ॥
सुव्रता भई सयानी जबहीं । ब्याहकरनपितकियमनतबहीं ॥
इतनेमाहिं मृत्यु तिहि आई । मन इच्छा कछु होन न पाई ॥
कन्या पितहित करत विलापा । पिता पिता कहि कर सन्तापा ॥
मोहिं छाँडि कहँ पिता सिधाये । पुत्रीका कछु मोह न लाये ॥

अब को रक्षा करहि हमारी । भ्राता पिता न माता प्यारी ॥
अब कहकरहुँअनल तनु दहिहौं । कीगिरिवरते गिरि मरिजैहौं ॥
कन्याको रोदन सुनि भारी । आय जुरे तहँ ऋषि मुनिझारी ॥
सबने बहुत भाँति समुझायो । पर कन्या मन धीर न आयो ॥
ऋषिपत्नी बहुविधि समुझाई । पर कन्या कछु धीर न लाई ॥
लखि यमके मन करुणा आई । आये द्विजकर वेष बनाई ॥

दोहा—बोले तू मत रुदन कर, धर धीरज हिय माहिं ।
निजकृत कर्मन केर फल, कबहुँक जात सो नाहिं ॥

आगे किये भोग अब आवैं । अबके किये सो आगे पावैं ॥
कर्म शुभाशुभ जो कोइ करही । अवशिमेव ताको फल भरही ॥
कल्पकोटितक जात सो नाहीं । ज्ञानअग्निसे सन्त जराहीं ॥
ताते शोच न करु सुकुमारी । पाछिल कर्म मिलत फलभारी ॥
कन्या कहत कर्म कह कीन्हा । जिहिपलटेविधिअसफलदीन्हा
तब द्विज ऐसी बात बखानी । प्रथम जन्मकी सुनहु कहानी ॥
पूर्वजन्म नगरी उज्जैनी । गणिका रही चपल मृगनैनी ॥
पुरवासी वश तव बहुतेरे । तव आज्ञा पालक उहि वेरे ॥
तिहि पुर एक विप्र सुखदाना । ताको पुत्र बहुत विद्वाना ॥
जपतपनियम करै बहुभाँती । पापकर्मसे दूर सुजाती ॥

दोहा—सो निकसो तव द्वारसे, देखत भूलो ज्ञान ।
ठाढ रह्यो कंपित हृदय, तुहि निरखत मतिमान ॥

आदरकर तैं लियो बुलाई । आसन पर बैठो द्विज आई ॥
ताकी प्रीति तोहिं सों लागी । मात पिता नारी निज त्यागी ॥
खात पियत सोवत औ जागत । सोनिशिदिनतुमसोंसुख पावत ॥
इक दिन तेरे भवन मँझारी । शूद्र जाति कामी पशु धारी ॥

विप्र शूद्रते भई लराई । मारो विप्रहि शूद्र रिसाई ॥
विप्रहि यमकिंकर लेजाई । नरकबीच डारो दुखदाई ॥
भयते शूद्रहु गयो पराई । भयो शोर तिहिपुर अधिकाई ॥
द्विज गृह काहू खबर सुनाई । गणिकागेह मृत्यु सुत पाई ॥
सुनि पितु मातु दुखी अति नारी । कर रोदन तव धाम सिधारी ॥
पुत्र विलोकि अधिक दुख पाई । शाप दीन तोको दुखदाई ॥
कह माता तैं सुत वश कीन्हा । मनमोहनकर धन हरि लीन्हा ॥
पुनि मराय सुत कियो वियोगा । मातुहीन दुख परिहै भोगा ॥

दोहा-पिता कह्यो तेरो पिता, बाल अवस्थामाहिं ॥
मरिजैहै तुहिं छोंडकर, जहाँ हितू कोउ नाहिं ॥ १ ॥
नारी बोली दुख दियो, तैं मोको जिहि भाँति ॥
रहो कुमारी नाहबिन, दुख भोगो दिन राति ॥ २ ॥

तीन शापवश तैं दुखपायो । बिन भोगे नहिं कर्म नशायो ॥
सुनत सुव्रता बोली बानी । द्विज तव गिरा सत्यहमजानी ॥
वेश्याजन्म किये अघ नाना । बहुतनके धन हरे निदाना ॥
निशिदिन पाप कर्म मैं कीन्हा । भूलि सुमारग चरण न दीन्हा ॥
द्विजकी देह कौन विधि पाई । अरु तुमदरशदियोकिमिआई ॥
सो सब कारण कहौ दयाला । सुनि बोले यम वचन रसाला ॥
जौन कर्म ते द्विज तनु पायो । सुन जसदरशन हमहुँ दिखायो ॥
एक विप्र हरिजन गुणखानी । समदरशी गुण ज्ञाननिधानी ॥
जीव चराचरमें हरि देखत । कर्मनको फल हरिको अर्पत ॥
काम क्रोध मत्सर अभिमाना । सब त्यागे किय संयम नाना ॥
आश्रमबंधन कछु नहिं जाके । कुल कुटुम्बकर मोह न वाके ॥

दोहा-जित चाहे तित वशरहे, हर्ष शोक नहिं ताहि ।
एक रैनि बस द्वितीय दिन, चलै न रुकै कदाहि ॥ १ ॥

विचरत विचरत एकदिन, आयो नगर तुम्हार ॥
देखि स्वच्छता ठौरकी, वस्यौ रैन तव द्वार ॥ २ ॥

वसन मलीन कृशित तनु सारो । सबविधि विषय भोगते न्यारो ॥
अर्धरात तक प्रेम बढाई । बैठे भजन करत रघुराई ॥
कोटपालकी फेरी आई । पूछेहै तू को कहु भाई ॥
मौन रह्यो बोलो नहिं बानी । चोर चोर कहि धरो गुमानी ॥
द्विज कछु सत्य वचन समुझायो । दुष्टन मन विश्वास न आयो ॥
खैंच चले द्विजको बरजोरी । नहिं कछु कुज मानो धुर घोरी ॥
रही जाग तू निज घर बाला । शोर सुनत आई तत्काला ॥
दीप मँगाय लखो तैं जवहीं । बोली वचन तहाँ अस तबहीं ॥
यहनहिं चोर साधु संन्यासी । तजो याहि मेरे विश्वासी ॥
अस कहितिहिद्विजदियोछुडाई । करगहि तू मंदिर लें आई ॥
चरण धोय आसन बैठायो । धूप दीप कर पद शिरनायो ॥
कह्यो रहो कछु दिन मम गेहा । पहरो खाउ न कर सन्देहा ॥
सुनत वचन कह साधु सुजाना । धन्य मातु पितु तव जगजाना ॥
मोहिं कछु मातु चाहिये नाहीं । जगकेसुखसबक्षणकविलाहीं ॥
क्षुधा तृषा सुख भोग न केरी । इच्छा कछु न रही अब मेरी ॥
निज इच्छा इत पहुँचो आई । परउपकारी तैं अधिकाई ॥

दोहा—पर उपकार करहिं जे, धन धन ते नर नारि ।
होयँ तुष्ट भगवान अति, हुइ भवसागर पार ॥ १ ॥
तुमपर जगदीश्वर कृपा, करहिं वचन सुनमाय ।
जाहु शयन तुम करहु अब, हम सुमिरें रघुराय ॥ २ ॥

सुनत वचन तै विनय सुनाई । पापचारिणी मैं अधिकाई ॥
किहि विधि हों भवसागर पारा । कहो सुनत अस साधु उचारा ॥

भवसागर कर पार जु चाहै । सो हरिभक्त सदा निरवाहै ॥
काम क्रोध मद मत्सर ताई । त्यागन करहु दंभ सब भाई ॥
तृष्णा लोभ त्याग सब दीजै । इन्द्रियदमन नेम व्रत कीजै ॥
अस्थिरता एकांत निकेतन । दुखसुखसम मनहरिके चरणन ॥
सबमें आत्म करत परकाशा । जगत वस्तु सब पावहिं नाशा ॥
शम दम शील दया मनमाहीं । गुरुते गर्वित वचन सुनाहीं ॥
परदुख निरखि दूरकर देई । हरिजनकी सेवा मति भेई ॥
रामनाम सुमिरै मन लाई । सकल कृत्यमें भूल न जाई ॥
केवल रामनाम लवलाई । ताको भवनिधि जाय सुखाई ॥
मुक्त होय नाशै भवबंधन । फिरतिहि निकट नहीं यमकेगन ॥

दोहा—ताते यह आराधना, तुमहु करो मन लाय ।
भय निद्रा आहार सुख, सबयोनिन मिलजाय ॥ १ ॥
हरि सुमिरणके कारण, केवल मनुजशरीर ।
याते व्यर्थ न खोइये, भजिये श्रीरघुवीर ॥ २ ॥

अस उपदेशत भो भिनुसारा । उठी साधु कानन पगु धारा ॥
तेरो चित वैराग्य समायो । विषयविलासत्यागहरिध्यायो ॥
धर्म वृत्ति हियमें अति जागी । तजि घर काननमें मति लागी ॥
रामचरण पंकज भइ प्रीती । जगसे तजी मोहकी रीती ॥
द्विजरक्षा हरिभजन प्रभावा । जन्म विप्रकुलमें तैं पावा ॥
द्विजके शाप दुःख अस पायो । संतकृपा यमजाल नशायो ॥
सन्तकृपा नहिं नरक सिधारी । चौरासीमें पग नहिं धारी ॥
सन्तकृपा मैं दरश दिखावा । पूर्वकर्म सब वरणि सुनावा ॥

दोहा—दुख सुख सब फल कर्मके, यासे त्यागहु शोच ॥
कर्म किये फलपावहु, भले होय किमि पोच ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ग्रंथउजागर सुव्रतावाक्यवर्णनो नाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

सुनत सुव्रता वचन सुनावा। नाथ शोक तुम मोर नशावा ॥
तदपि मोह हियमें जगि आवत। पितानिरखिमनअतिदुखपावत॥
मुहिं उपदेशहु प्रभु यहि रीती। पुनि न मोह आवै कहु नीती ॥
सुनि द्विज कह सुनु कन्या वानी। जहँप्रीति तहँ दुखमनमानी ॥
बिन सनेह दुख पावत नाहीं। यथा विरक्तनके दिन जाहीं ॥
शत्रु मित्र सब जीवन माहीं। समता रखै नित्य हर्षाहीं ॥
हानि लाभ सुखदुख जो होई। कर्माधीन मान सब सोई ॥
जिमि गौतमी कियो मनलाई। पुत्र शोक तिहि भयो न राई ॥
कह्यो सुव्रता कहो बखानी। कह गौतमी कियो सुखमानी ॥

दोहा—कही विप्र तिय गौतमी, अति विरक्त मतिधीर।
ज्ञानवन्त अनुरागिणी, हरिपदरति, गत पीर ॥ १ ॥
वनमें करत तपस्या, आराधत भगवान।
ताको इक शिशु खेलत, गा तरुवर अज्ञान ॥ २ ॥
तहां सर्पने डसो तिहि, सो मरगो तत्काल।
एक वधिकने आय सोइ, पकर्यो सर्प कराल ॥ ३ ॥
लाय गौतमी ढिग कह्यो, इन खायो सुत तोर।
तासों याको मारिये, वचन मानिये मोर ॥ ४ ॥

कह गौतमी कहों सो कीजे। अबहीं त्याग सर्प यह दीजे ॥
यहि मारे सुत आवै नाहीं। वृथा लेउँ क्यों अघशिरमाहीं ॥
कही वधिक हिंसक ठगकी री। इनहिं वधे नहिंअघ कछुभी री॥
बालक दोषी यह अहि भारी। निश्चय याहि डारिहौं मारी ॥
कहै गौतमी मुये जो प्रानी। तिनको क्या मारत अज्ञानी ॥
रोगी हिंसक क्रोधी कामी। अयशी कृपण दरिद्री वामी ॥
तृष्णा मय बूढे अजताई। विषदाई जिन अग्नि लगाई ॥

निन्दक रामविमुख अति पापी। वेदविदूषक जन संतापी॥
भुजँग भूत तनु पोषक जोई। यह सब जीव मृतक सम होई॥
अपने कर्म मर्‍यो मम बारा। तुमहु कर्मवश जाय निहारा॥
अपने कर्म बँध्यो यह व्याला। कर्मनसे सुखदुःख विशाला॥

दोहा-परको पीडित जो करे, सो तैसो फल पाय।
जैसी वाणी कूपमें, करो तैस प्रगटाय॥

पिछले कर्म किये जिन जैसे। भोगे देहधारि सो तैसे॥
मम कुमार नहिं सर्प सँहारा। ताके कर्मनने तिहि मारा॥
ताते तज भुजंगको दीजै। वृथा काहि यहि दोषी कीजै॥
सुनत गौतमीवचन विशाला। मनुषगिरा तब बोलो व्याला॥
यामें मेरो दोष न राई। मृत्यु मोहिं प्रेरो बरियाई॥
इहि कुमारते कइयो बारी। काननमें भइ भेंट हमारी॥
बिना मृत्युकी आज्ञा पाये। मैं न डस्यो इहि सहज सुभाये॥
यह सुनि मृत्यु चली तहँ आई। वचन कहे इमि सत्य सुनाई॥

दोहा-मैं नहिं प्रेरो सर्पको, बध्यो सर्प नहिं बाल।
सोइ करत हम आयकर, देतजु आज्ञा काल॥ १॥
कालहि आज्ञा देत जो, ताहि जाउँ मैं खाय।
बिनआज्ञानहिंजातकहिं, अपने सहज सुभाय॥ २॥

छन्द।

सुने बैन जबमृत्युके सत्य जानी। धरेदेहआयो तहां काल मानी॥
कह्यो मृत्यु औ सर्पनेनाहिंखायो। न मैंनेतुम्हारे कुँवरको मरायो॥
मिलैफल वही यह करै कर्मजैसो। बिना भेद जाने हमैं दोष कैसो॥
मरैं वृद्ध बालक तरुण कर्महीसे। जियैंआयुभरअपनिइसधर्महीसे
कोई कर्महीसे हमें जय कराही। वसैंविष्णुकेधामविश्रामपाही॥

किये कर्महीसे कोई ऊंच नीचा । जगुतपत्तिपालनकरैकर्मसींचा ॥
किये कर्महीं कोउ जलसे डुबाई । जरै कोइअग्नीहलाहलकोखाई॥
कोई नित्यरोगी डसै सर्प काहू । कर्मकेकियेसुखदुखदानिलाहू॥

दोहा—काहुइ मारै सिंह बन, कोउ भेडिया खाय ।
कौन मिटावे कर्मगति, जहां रहै तहँ पाय ॥

चित्रकेतु सुत प्रथम जन्ममें । गजह्वै कहुँ घूमत रह्यो बनमें ॥
पगतर पिस मरिगइँ गिजाई । तिहि सवरानी तनु धरि आई ॥
सो विष दे सुतको सब नारी । बदला ले सुख मानो भारी ॥
शरवन्न दुख दशरथसे पायो । पुत्रशोकते प्राण गँवायो ॥
रामबाण वालीके मार्‍यो । द्वापरमेंनिज बदल विचार्‍यो ॥
कमठ अण्ड जिन सकल विदारे । अंधराज सुत शत गये मारे ॥
कर्मसे इन्द्र सहसभग पाई । कर्मसे नेत्र भये सब भाई ॥
कर्मसे रवि शशि पातक लेशा । कर्मसे सृजतनशतपुनिशेषा ॥
कहौं कहां लग कर्म बडाई । कर्महि नित्य प्रधान गुसांई ॥
सम्पति विपति कलेश अनेका । होत कर्मसे करहु विवेका ॥

दोहा—यामें दोष हमार नहिं, यह जानो निरधार ।
विधि हरि हर सब कर्म वश, जगके सिरजनहार ॥ १ ॥
सुनत कालके वचन अस, वधिक बुद्धिकहँ पाय ।
छोड़ दियो तिहि सर्पको, तीनों गयो सिधाय ॥ २ ॥
वधिक गौतमीके चरण, प्रेमसहित शिरनाय ।
भजन लगो भगवानको, निजकुल कृत्य गँवाय ॥ ३ ॥
सुनत वचन यह विप्रके, कहत सुव्रता बाल ।
दीन्हों मोहिं प्रबोध प्रभु, करिके कृपा विशाल ॥ ४ ॥
मेरे मनमें दुख नहीं, अब यह देहु बताय ।
अहो विप्र तुम कौन हो, कहिये सहज सुभाय ॥ ५ ॥

तब बोले सो विप्र अस, सुन द्विजराज कुमारि ।
मुहिं राजा यम जानिये, पापिन दुख दातारि ॥ ६ ॥
दीनदुखी तुहिं लखि सुकुमारी । कीन्हों मैं प्रबोध तुहिं भारी ॥
मनभावत वर माँगहु बाला । मैं देहौं करि कृपा विशाला ॥
तब कन्या अस वचन उचारे । मातु पिता गुरु बंधु हमारे ॥
वसैं स्वर्ग जबलगि शशि भानू । एवमस्तु यम कीन पयानू ॥
इत सुव्रता नियम दृढ धारा । लागी जप तप करन अपारा ॥
कन्द मूल फल भोजन करई । जगसुखतुच्छनमनतिहिधरई ॥
ज्ञान ध्यान हरिको नित ध्यावै । जपै निरन्तर हरिमन लावै ॥
इहि विधि तपसे कर्म नशाई । पहुँची रामधाम सुखदाई ॥
सुर मुनिको दुर्लभ गति जोई । तिया सुव्रता पाई सोई ॥
दोहा—तासों नितप्रति प्रेमसों, भजो मिश्र रघुनाथ ।
यही सयानो कामहै, वेद विदित गुण गाथ ॥ १ ॥
यह इतिहास पुनीत अति, श्रवण करै जो कोय ।
निश्चय करकै भव तरै, अन्त अमरपुर होय ॥ २ ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर गौतमीसुव्रताधर्मप्रसंगवर्णनोनाम चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

दोहा—विधि हरिहर गणपतिगिरा, सुमिरि राम सुखदान ।
महभारत सद्ग्रन्थकी, कहुँ इतिहास बखान ॥ १ ॥
शौनक बोले सूतसे, दान तपस्या माहिं ।
कौनअधिकसोवरणिये,सुनिकलिकल्मषनशाहिं ॥ २ ॥
सुनत सूत अस वचन बखाना । सावधान सुनु ऋषिय महाना ॥
तप ते दान अधिक सब जानत । श्रद्धा सहित करत जो मानत ॥

बहुत कष्टसे धन घर आवहि। जो परमारथ माहिं लगावहि॥
ताको यश त्रिभुवनमें छाई। बसै स्वर्गमें निश्चय जाई॥
जो सुधर्म कर फल नहिं चाहै। वह हरिभक्ति परमपद लाहै॥
कहौं एक इतिहास पुराना। जिहिसुनिबहु विधिपापनशाना॥
मुद्गल द्विज इक सुत सहनारी। कुरुक्षेत्रमें बसत सुखारी॥
चुनत शालि खेतनके माहीं। एक पाखतक जोरत जाहीं॥
डेढ सेर वे जब ह्वै जाहीं। पीस बनावत भोजन ताहीं॥
साधु विप्र सत्कारत आछे। नारी सुत सह पावत पाछे॥
इहिविधि बीतिगयो कछुकाला। दुर्वासा तब जानो हाला॥
लेन परीक्षा ताकी आये। सुन्दर हरिजन वेष बनाये॥

दोहा–दुर्बल तनु कारि वसन बिन, आये ताके द्वार।
लखत विप्र उठि धायो, तुरतहि चरण पखार॥

करि दण्डवत भवनले आवा। बैठारिसि पुनि वचन सुनावा॥
धन २ आज सुभाग्य हमारा। महाराज तुम इत पगु धारा॥
जिहि गृह साधु चरण नहिं आवैं। सो मरघट सम भूत रहावैं॥
तव दर्शन निर्मल घर भयऊ। दुरित पाप सबही जरगयऊ॥
भोजन रह्यो सो आगे राखी। हाथ जोर बिनती बहु भाखी॥
सुनतवचनऋषिअतिसुख पाई। भोजन करन लगे हरषाई॥
जेमचुको जूंठन जो रहऊ। गांठ बांधि दुर्वासा लयऊ॥
एको ग्रास न राखो ताहीं। विप्र प्रसन्न रह्यो मनमाहीं॥
दुर्वासा निजमार्ग सिधाई। विप्र मैल मन भयो न राई॥
तीनि मास ऐसहि चलि गयऊ। खांय जाय सो दोष न धरऊ॥
दिन २ प्रीति भाय अधिकावै। नेक रोष मनमाहिं न आवै॥
लखि दुर्वासा ऋषिकर भावा। प्रेम मगन अस वचन सुनावा॥

धन्य २ द्विजराज सयाना। भोजन दे कीनो बड़ दाना॥
यह तुव यश तिहुँ लोकहि छावा। अरु तुमने वैकुण्ठबसावा॥
दोहा-मुनिदुर्लभ हरिभक्ति सोइ, मिलिहै बिनहिं प्रयास।
सुनत वचन द्विज हर्ष भर, बोल्यो करि विश्वास॥ १॥
तुम जापर दाया करहु, मोक्ष न दुर्लभ ताहि।
धन्य भाग्य मैं धन्य हूँ, शोच मोह भ्रम नाहिं॥ २॥
इहिविधि होत बतकही, आयो एक विमान।
स्वर्गलोककी सम्पदा, तामें दिपत महान॥ ३॥
रत्नजटित शशि सदृश अति, जाकी प्रभा लखाय।
नभते लाये दूत तिहि, बोले वचन सुनाय॥ ४॥
तुमहित हम विमान यह लाये। चलो स्वर्गको हरि मनभाये॥
सुनत वचन मुद्गल कह बानी। सुरपुरकी कहु कथा बखानी॥
सुरपुरसुखदुखगुण अरु अवगुन। वर्णहु करहु दयाकरहरिजन॥
दूतन कहा सुनो मन लाई। तुम जानत पूछत किमि भाई॥
तदपि प्रश्न जस वर्णत सोई। तहँ नहिं जन्म मरण दुखहोई॥
क्षुधा तृषा भय लेश कलेशा। व्यापत तहां न सुरगण लेशा॥
कल्पवृक्षकी छाँह सुहाई। जो इच्छा सो सब सुखपाई॥
सुभग सेज पट भूषण नाना। रत्न जटित अरु मोलमहाना॥
दिव्य रूप अरु दिव्य अनूपा। वसन अप्सरा नाना रूपा॥
स्वर्गमाहिं जो सुख द्विजराई। सो हम तुमको दीन बताई॥
अब जे दुःख कहत सो गाई। सावधान सुन मन चितलाई॥
इक तो कर्म बनत तहँ नाहीं। जासे भोगै भोग सदाहीं॥
यथा कोइ संचित धन खाई। खातहि खात न्यून ह्वैजाई॥
तथा यहां कीन्हें शुभकर्मा। क्षीण होत नितप्रति शुभधर्मा॥

पुण्य लखत औरन को भारी। मनमें तृष्णा होत अपारी ॥
जब बहुपुण्य नाश होजाई। तब फिर मर्त्यलोकमें आई ॥
जप तप यज्ञ किये अधिकाई। वस सुरलोक इते फिरआई ॥
देवदूतके बैन सुहाये। मुद्गल सुन अस वचन सुनाये॥
काम क्रोध आदिक खलनाना। रहत जहाँसो कस अस्थाना ॥
स्वर्गमाहिं नहिं दुःख सिटाहीं। तौ वह काहु कामको नाहीं ॥
दोहा–हमें सुनाओ दूत वह, होय जो निश्चल धाम।
सुनत दूत अस कहन लिय, सुनहु विप्र गुणग्राम॥ १ ॥
स्वर्गलोक विधिलोक सब, परलयमाहिं बिलाहिं।
सदा सच्चिदानंद घन, विष्णुलोक ठहराहिं॥ २ ॥
इच्छामय दुखरहित सब, आनँदमय निरव्याधि।
तहां जाय हरिभक्तिकारि, करिकै अचल समाधि॥ ३ ॥
जहां वसत हरि सब गुणखानी। ऐश्वर्य कछु कहौं बखानी ॥
चौदह भुवन सकल ब्रह्मण्डा।राज्यकरतजोअजितअखण्डा॥
गढ वैकुण्ठ अजीत बखाने। चाकर रहत सभीत सयाने ॥
ब्रह्मा जहँके मंत्री गाये। सेना पति ईशान कहाये ॥
मातंग वसू जहां दिग्पाला। पानी भरत जहां घनमाला ॥
कोतवाल यमराज कहाये। अरुण छत्रसब बाजि बताये॥
चित्रगुप्त मुस्तौफि बखाने। लम्बोदरहि मनीषी माने ॥
कानूगोय देवपुर केरे। और वजीर मुअक्किल नेरे ॥
छन्द–सूबा जहांके शेषजी भंडारि जासु कुबेर हैं।
चौरासी लाखन जीव करत खवासि नित घेरे रहैं॥
प्रारब्ध भोगत भोग सबही तहँ दरोगा कर्म हैं।
अहदीअमितप्रहरीगजागिरतगिरकरनिजधर्म हैं॥ १ ॥

पदचर फिरत यमदूत हरिपदविमुख नरनप्रचारहीं ॥
सहिपेश लोक अनेक बंधन थल नरक उच्चारहीं ॥
हरिधर्म पोतनदीन ते शठ परत तहँ मँझधारहीं ॥
बिन वेद करत प्रतिग्रह जो तिन जान हू वेगारहीं ॥ २ ॥

दोहा–परवी जानो पंच गृह, मानो तहसिलदार।
जप तप व्रत महि दान कर, भरत जात भंडार ॥ १ ॥
काम क्रोध लोभादि खल, यह लूटत संसार ॥
पुनि सतसंगनकीबजह्नु, करतफिरत हुसियार ॥ २ ॥
मोदी हैं अनपूर्णा, देती सबै अहार।
हैं वकील महाबीरजी, विजय जय सुरखवार ॥ ३ ॥
शुचि सेवक प्रिय भक्तन, जिनहित धरत शरीर।
सरसहनाहै पवनसुत, लोक सकल जागीर ॥ ४ ॥
धर्म नवीन करार अति, भक्ति बड़ी सरकार।
नौबत अनहद बजत नित, बारहु मास उदार ॥ ५ ॥
है भूलोक बजार जहँ, कर्मन्नको व्यापार।
दीप रु खण्ड सेराइधनु, काल मृत्यु बिकरार ॥ ६ ॥

सब बन बाग अठारौ बागा। सप्त सिंधु हैं जासु तडागा ॥
पर्वत सब लखात जनु खंभा। अमल वितानअकाशअदम्भा ॥
वेद जहां बंदीगण रहहीं। नेति नेति करि हरिगुण कहहीं ॥
जिनकी प्रिया लक्ष्मी रानी। अली शारदा शची भवानी ॥
भक्ति मुक्ति को नित जहँ दाना। तहँ पहुँचतहैं सन्त सुजाना ॥
ऋद्धि सिद्धि हैं जहँकी दासी। निशिदिन करती रहतखवासी ॥
रोम रोम अगणित ब्रह्मण्डा। व्यापक विश्व अनीह अखण्डा ॥
को अस ताकर पार जु पावै। श्रुति अस विष्णु प्रभाव बतावै ॥
कह द्विज किहि विधि यह पद पाई। सो तुम मोको देहु सुनाई ॥

दोहा–ज्ञान योग औ भक्तिते, यह पद मिलै सुभाय ।
और उपाय न जगतमें, कही दूत हरषाय ॥ १ ॥
तबमुद्गलकह स्वर्गमें, अब हम जैहैं नाहिं ।
करेहु वंदना सुरनते, तुमहु जाहु गृहमाहिं ॥ २ ॥
देव दूत भेजे तुरत, आप भजे भगवान ।
करनी कर निज कुटुमसह, पायो पद निर्वान ॥ ३ ॥
तपते महिमादानकी, अधिक कही मुनिराय ।
श्रद्धासे किय भक्ति लहि, मनो कामना पाय ॥ ४ ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर मुद्गलप्रसंगवर्णनो नाम पंचदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

दोहा–विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिरि राम सुखदान ।
हरि धर्मोत्तर ग्रंथकी, वरणों कथा पुरान ॥
पुनि शौनक कह विनय सुनाई । पुण्य बढत किहि द्रव्य सुहाई ॥
बोलो सूत सुनो मनलाई । जिहिविधि धर्मद्रव्यअधिकाई ॥
न्याय सहित जो द्रव्य कमावै । परमारथमें ताहि लगावै ॥
बढै पुण्य अरु अघ कटजाई । सो नर वासा सुरपुर पाई ॥
अरु अधर्मसे धन जो लावै । जो सुकर्ममें ताहि लगावै ॥
ताको पुण्य फलतहै नाहीं । इहिपर इक इतिहास बताहीं ॥
सोरठ नगर एक सुखधामा । तहँ नृप वीरभद्र जिहि नामा ॥
करै पुण्य सो भाँति अपारा । गज रथ भूमि तुरंग हजारा ॥
मुक्ता पुच्छ रजत खुरकीनी । सुवरण सींग मढाय नवीनी ॥
पीठ पितम्बर दीन्ह उढाई । ऐसी दई द्विजनको गाई ॥

दोहा-शय्या पटके दान कर, कीन्हें यज्ञ अनेक।
तोषे याचक विविध विधि, रखी धर्मकी टेक॥

तिहिपर एक नृपति चढिआयो। लियो घेर तिहिनगर लुटायो॥
रानी नृपति अतिथिके वेपा। निकसिगयेनहिंकाहुहि देखा॥
आये एक नगर सहनारी। करमुद्रिका बेंच तहँ डारी॥
कछुकादिना इहि भाँति बिताये। पुनि पितुमामा गेह सिधाये॥
तहां कछुक आदर नहिं पायो। पुनि अपनीभगिनीगृहआयो॥
तहँ न लख आदर नृपरानी। जनकभ्रातढिग कीन पयानी॥
रहे तहां कछु काल बितायो। पाछे तहां लखो अनखायो॥
तहँ ते चलतभये दोउ प्रानी। जहांजाँय कोइ कहैं न बानी॥
विपतिपरे कहु काको कोई। केवल ईश सहायक होई॥

दोहा-पंकजकर पितु नीरानिधि, सुधाचंद्र विष भ्रात।
मित्रसूर्य ब्रह्मा सुवन, विश्वंभर जिहि मात॥ १॥
श्रीरम्भा भगिनी दोऊ, बहनोई हरि इन्द्र।
नाती शिव परिवार अस, मानत बहुत महेन्द्र॥ २॥
जारिदियो अस कमलको, आधीरात तुषार।
विपतिपरे पर एकहू, दियो न काज सुधार॥ ३॥

जब केहुभाँति न रह्यो उपाई। भिक्षावृत्ति करन मन आई॥
घर २ में भिक्षाको डोलैं। दीनवचन मुखते अति बोलैं॥
कछुककाल इहि भाँति बितायो। इकदिन तियसे वचन सुनायो॥
संभलगढ इक सेठ रहाई। माणिक नाम द्रव्य बहुताई॥
पुण्य बेंचने जाय जु कोई। तासे मोललेतहै सोई॥
कागज़पर लिखि तुला मँझारी। सोना तोलदेत समनारी॥
चलो चलैं तिहि ढिग हमजावैं। बेंचसुकृत कछु धन ले आवैं॥

जो जगमें तनु रहै हमारा। दानलेहिं करि विविध प्रकारा॥
कहराजा रानी सुनि लीजै। मारगको खर्चा कछु दीजै॥
सुनिरानी तुरते उठिधाई। इतउतते भिक्षा करलाई॥
तिहिदिन निशि तरुतरे बिताई। भोजन तियबिन सोयो राई॥
चलि दूसरदिन सरतट आयो। करस्नान नृपभौंरी लायो॥
सेंक साँक हरिभोग लगावा। क्षुधावन्त अभ्यागत आवा॥
हाहाकरि तिन विनय सुनाई। सुनिनृपमनहिं दयाअति आई॥

दोहा–धनपति होय दरिद्रयुत, तउ मनरहै उदार।
जन्मदरिद्रीधन लहै, कर न सकै उपकार॥ १॥
दो भौंरी अभ्यागतहि, आदरकर दी ताहिं।
दोपाई पुनि नृपतिने, चलत भये मगमाहिं॥ २॥
तीजे दिन गये शाहढिग, लख तिन किय सन्मान।
कहँसे आये काज कह, सोकरि कहो बखान॥ ३॥

सोरठते मैं आयो धाई। बेंचत पुण्य लेहु सो भाई॥
सुनि अस शाह कह्यो सुखपाई। बेंचहु पुण्य जु तुमकियभाई॥
कागज़पर लिखि तुला चढावहु। सांचीलिखहुद्रव्यजिहिपावहु॥
बहुतक यज्ञ पुण्य किये राई। सो लिख शाहू तुला उठाई॥
तापर चढो सो न कछु नाहीं। पलरा रहे समान तहाँहीं॥
पुनि गो गज मुक्ता धन चीरा। सब लिखि तुला चढाये वीरा॥
ते सब व्यर्थ भये तत्काला। लज्जित भयो महा महिपाला॥
सब सेवक हँसरहे तहांहीं। यह झूंठे धन ठगने आहीं॥
सेठ तबहिं पुनि वचन बखाना। कब कीनो यह तुम सब दाना॥
बीरभद्र कह जब हम राजा। सोरठके थे तब किय काजा॥
सुनत सेठ कह सुनो भुआरा। यह अधर्मकर धर्म तुम्हारा॥

दोहा-लूट बांध दुख प्रजहि दिय, बसनहीन किय नारि ॥
हरे वृक्ष काटे विविध, सत्य न्याव दिय टारि ॥

बछरा गऊ हरे बहुतेरे । फरियादी पहुँचे नहिं नेरे ॥
सो धन लेइ धर्म तुम कीन्हा । ताको पुण्य कहा चह लीन्हा ॥
जबते भये हीनधन राई । तबते कछु किय पुण्य सुहाई ॥
राजा कह भिक्षा हम पावैं । कहिय कहांसे धर्म कमावैं ॥
जब मैं तुम्हरेढिगको आयो । मारगमें सरवर इक पायो ॥
तिहितट भौरी चार बनाई । आयो अभ्यागत इक धाई ॥
क्षुधित देख दो ताहि खवाई । रंक भये यहि धर्म कमाई ॥
सुनिमाणिक लिखि तुलाचढावा । धरि सुवर्ण कछु तुला उठावा ॥

दोहा-परला अतिगुरुता गही, पुनि तिहि हेम चढाय ।
ज्यों ज्यों कंचन धरत तिमि, धर्मतुलागरुआय ॥ १ ॥
जहँ लगि शाह निकेतमें, रह्यो हेम धन जोय ।
सकल चढायो तुलापर, तिहिसमभयो न सोय ॥ २ ॥

तबहिं सेठ अस वचन उचारा । हेम रह्यो अब नहीं भुआरा ॥
तिहिंते जोहै सो ले लीजै । अपने गेह पयानो कीजै ॥
सुनि नृप बहु रथ तुरँग सँगाये । कनकभार तिनमहँ लदवाये ॥
लीन्हें सँग पदचर असवारा । नोकर कर घरको पगुधारा ॥
तीजे दिन घर पहुँचे जाई । लखि रानी मन सुख न समाई ॥
पुनि चतुरंगिनि सेन सजाई । निज शत्रूपर कीन चढाई ॥
रामकृपा तातें जय पाई । राज्य करन लागे हरषाई ॥
विविधभाँतिके उत्सव कीन्हें । विविध दान विप्रन कहँ दीन्हें ॥
तजि अनीति भक्तिहि मन लाई । नृप रानी हरितोषत सांई ॥
आवै साधु नगरके माहीं । भूपति तिहि सन्मान कराहीं ॥

दोहा–करिप्रणाम अति हेतसों, मंदिरलेहि बुलाय।
पदपखारि अतिप्रेमसों, भोजनदेहि जिमाय॥
कथा सुनैं हरि कीरति गावहिं। तजिसत्संगअनत नहिं जावहिं॥
सेवक सचिव काज पुर करहीं। विष्णुचरण सेवा चित धरहीं॥
विविधभाँति मेवा पकवाना। महिदेवन साधुनकर दाना॥
सुमन वाटिका बहुविधि बागा। लगवाये नृप अति अनुरागा॥
करैं जो धर्म कर्म नृपरानी। वासुदेव अर्पैं सुखमानी॥
नेमसहित हरिनाम उचारैं। क्रोध लोभ मद मोह न धारैं॥
विविध भाँति कर भोगविलासा। समयपाय तनुतजि अनयासा॥
तनुतज चतुर्भुजा वपुधारी। विष्णुलोक दोउ गये सुखारी॥
सुभग विमान चढे दोउ जाहीं। देवन मुदित पुष्प वर्षाहीं॥
जप तप योग अगमपद जोई। नृपहि मिल्यो रानीसह सोई॥
दोहा–ऐसो सुन्दर धर्मको, शौनक अधिकप्रभाव।
छूटगये बन्धन सकल, मोक्ष पदारथ पाव॥ १॥
तजि कुकर्म शुभकर्मसे, लावहु द्रव्य कमाय।
मिश्र लगाओ धर्ममें, जपतपते अधिकाय॥ २॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ग्रंथउजागर धीरभद्रमर्स-
गवर्णनोनाम षोडशोऽध्यायः॥ १६॥

दोहा–विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिरि राम सुखदान।
महभारत सद्ग्रंथकी, कहुँ इतिहास बखान॥ १॥
शौनक पूछो धर्मके, पदकहिये समुझाय।
उत्पति पालन नाशको, भेदसहित बिलगाय॥ २॥
कह्यो सूत जिहि धर्म बखाना। ताके चार चरण जगजाना॥
सत्य दया पुनि तप अरु दाना। तप सत दान उपाव नमाना॥

दया तहां विस्तार बतायो । क्षमाभये स्थिर कवि सो गायो ॥
लोभक्रोधते नाश बखाना । सतयुग चारौं चरण प्रधाना ॥
त्रेता तीन सु द्वापर दोई । कलियुग दानरह्यो इकसोई ॥
जिन यह किये धर्म अनुसारी । तिनकी कथा कहूँ दुइचारी ॥
नृप त्रिशंकु अतिप्रबल प्रतापी । द्विजगुरुसेबि असुरसंतापी ॥
तिनके सुत हरिचन्द्र नरेशा । जासु सुयश लखि डरोसुरेशा ॥
तारामती तासुकी रानी । रोहित कुमर सकल जगजानी ॥
जासु धर्मकीरति विधिनाना । फैलरही कौमुदी समाना ॥
जासु राज्यमें दुखी न कोई । निरुज शरीर सदा सुख होई ॥
चारौं वर्ण धर्म अनुसरहीं । सब गुणज्ञ पंडित नयकरहीं ॥
हरिके चरण नृपतिकी प्रीती । सुमिरण पूजन वंदन रीती ॥

दोहा—वापी कूप तडाग बहु, मारग दिये बनाय ।
विटप पुष्पमयवाटिका, शोभाअति दरशाय ॥ १ ॥
कृत्यकरे शुभनृपतिजो, सब अर्पै हरिहेत ।
भक्तिकरै भगवन्तकी, पूरणज्ञान सचेत ॥ २ ॥

अमितदान विप्रनको देही । देव विप्र गुरु साधु सनेही ॥
विष्णु विरंचि शंभु दरबारा । महामुनी यश करहिं उचारा ॥
एकसमय औरहु सबकोऊ । विश्वामित्र वसिष्ठहु दोऊ ॥
कियो विवाद स्वयंभु सभामें । यह हरिचंद्र यशी वसुधामें ॥
कह कौशिक जो लिये परीक्षा । रहै धर्म तौ सही समीक्षा ॥
असकहिकौशिकमुनिभुविआयो। लेन परीक्षा योग लगायो ॥
आय अवध नृपके वर बागा । कोलरूप तरु तोरन लागा ॥
घुरघुरात रव करत विशाला । डरलागत लखदशन कराला ॥
भयकरि रखवारे गे भागी । खबरि दीनभूपति रिस जागी ॥

ठये भट ते सब मिलि आये। शूकर नहीं निकारन पाये॥
पुनि हरिचंद्र तुरँग चढि आवा। शूकर निरखि तुरतही धावा॥
भगटत दुरत दूर लेजाई। तहँ इक पुत्री पुत्र बनाई॥
राजा नहिं वराह लखि पायो। पंडित बनि मुनि नृप ठहरायो॥
राजा आय चरण शिर नावा। महामुनी तब वचन सुनावा॥
कन्या पुत्र विवाहन काजा। महादान दीजै महराजा॥
कहौ जौन विधि मैं इनकाहीं। करैं तौन विधि व्याह यहाहीं॥

दोहा—कह्यो भूप शिरनायकैं, जिहि विधि शासन देहु।
तिहिं विधि होय विवाह इत, यामें नहिं संदेहु॥

कह कौशिक नृप साजहु साजू। देहु याहि पदवी महराजू॥
छत्र चमर आदिक यहिं देकैं। करहु विवाह सकल दुखछैकै॥
एवमस्तु हरिचन्द्र उचारो। महाराज कर विभव सँवारो॥
तब कौशिक अस वचन सुनायो। महाराज तुम याहिं बनायो॥
होय न भूप बिना महि केहू। ताते निज समान महि देहू॥
होहु जो सत्यवचन महराजा। तौ अब कीजै ऐसहि काजा॥
निज समान नृप कहुँ न निहारो। आपन राज सकल दै डारो॥
पुनि कौशिक तहँ कह्यो बहोरी। यह नृप भयो राज्यकर तोरी॥
अब मोको भूपति कछु दीजै। हेम तीन मन दे यश लीजै॥
कन्या कुँवर गुप्त ह्वै गयऊ। मुनिनृपसंगअवधको चलेऊ॥

दोहा—चढनलाग नृप वाजिपै, तब मुनि लीन छुडाय।
दानदेय ऋषिसुताको, चढत अधर्म समाय॥

असकहि कौशिक भये सवारा। पैदल चलि हरिचंद्र भुवारा॥
अश्वसमान चलो नहिं जाई। आगे बढ टेरैं ऋषिराई॥
राजाने अतिहीं श्रम पायो। संध्यासमय अवधमें आयो॥

सुखीसमे लखि नृप नरनारी। गे निजभवन भूप गुणधारी॥
शुभ आसनपर मुनि बैठारी। चरणधोय कृत भोगतयारी॥
मुनि कह प्रथम हेम मुहिं देहू। पाछे अपर बात तुम केहू॥
तब नृप कनक मराय मँगायो। कह्यो लेहु मुनि वचन सुनायो॥
जब तुम राज्यदान मोहिं दीन्हा। कोषसहित सब मैं लेलीन्हा॥
मेरा द्रव्य मोहिं क्या देहू। औरै कनक देइ यशलेहू॥
नाहिंन नाहिं कहो तुम राई। हम अपने आश्रमको जाई॥
कह नृप तनुरह करौं न ऐसी। भाषतहो तुम मुनिवर जैसी॥
सुतरानीकहँ सोनेकारण। बेंच लेहु हमको जगतारण॥

दोहा-तीनों जनको अग्रकर, बेंचन चले मुनीश।
चलो बिको परदेशमें, तब हम देहिं अशीश॥

प्रजाद्रव्य नृपकी है भाई। ताते यहां न बेंचन चाई॥
आगे मुनि पाछे नृपरानी। ता पाछे सुत रोहित जानी॥
चले बिकन काशी मनलाई। मग मुनि दूजी देह बनाई॥
राजहि निरखि समीप बुलावा। पूछेहु नृप वृत्तान्त सुनावा॥
सुनत वचन अस विप्र बखाना। गे मुनि दूर करहु जलपाना॥
कह नृप बिना हेमके दाना। हम करिहैं नाहीं जलपाना॥
अस कहि गे पुनि रानी आई। कह मुनि पियो गये पी राई॥
रानी गई पुत्र पुनि आवा। तिनहूँ वैसहि वचन सुनावा॥
कुमर कही वे वृद्ध हमारे। त्यागैं धर्म प्यासके मारे॥
हमतो दिये विना द्विज दाना। केहुविधि नाहिं करैं जलपाना॥
वचन सुनत मुनि गये लजाई। कीन्हीं तिनके धर्म बडाई॥
काशीमें इहि विधि गे आई। मुनि दीन्हें बजार बैठाई॥
मल भरि हेम विप्र इक दीन्हा। रानीलेइ गमन तिन कीन्हा॥

माली कुमर मोल लैलीन्हा। फुलवारीमें डेरा दीन्हा॥
राजहि लीन डोम इक आई। सोनपाय चलिभे ऋषिराई॥
नृपते श्वपच वचन कह भारी। नाँदन पानी भरो हमारी॥
नृप नांदनमें जल भरि आवैं। मुनि तिहि तोरैं नीर बहावैं॥
यह लखि लरत श्वपचकी नारी। काम न कर रह बैठ अनारी॥
यह लखि श्वपच नृपतिते कहऊ। मरघट निकट वास तब दयऊ॥
मृतकलिये आवै जो कोई। वसनदिये विन दाह न होई॥
निशा माहिं हमको सो दीजै। भोजन मात्र तात तुम लीजै॥

दोहा-सो मरघटमें बसत नृप, नितप्रतिधनदेआय।
सुखमानै सो डोम अति, हितकारीजनपाय॥

कछु दिनमें पुनि मुनि तहँ जाई। बनि अहि कुँवरडसो दुखदाई॥
रानीने यह जानो जबहीं। गई कुँवरढिग रोवत तबहीं॥
मृतक शरीर लिये तब रानी। आई मरघटमें बिलखानी॥
रोवत विविध भाँति दुखमानी। नृपनिजसुवन नारिपहिचानी॥
पुनि धरिधीरज नृपति बुझाई। देखहु सब जग माया छाई॥
पंचतत्त्वको रच्यो शरीरा। सोवतहै सो तुम्हरे तीरा॥
जीव नित्य रोवत किहि लागी। नश्वर विश्वविचारि अभागी॥
कछु दिनमें सबकर यहि हाला। ह्वैहै किमि दुखकरत कराला॥
फूल बोझ जिन शिर न सँभारे। तिन शिर न न काठ बहु डारे॥
शिरपीडा जिनकी नहिं हेरी। करत कपालक्रिया तिन केरी॥

दोहा-सकल जगतहै लवासम, मृत्यु बाजसम जान।
करत रहत संहार नित, सो देखत मतिमान॥

जैसे नचत दारुकी नारी। तैसे कर्म नचावत वारी॥
दश इन्द्रिनके देवमहाना। खैंचतहैं सब निजनिज थाना॥

पाँच चोर निशि दिन यहि माहीं। लूटत रहत सु भंग कराहीं॥
कैसे कुशल जीवकी होई। हरिपदरति सुख पावै सोई॥
मोह सदा दुःखनकर मूला। याके किये बढै अति शूला॥
सो तज तुम कर देहु चुकाई। पुत्रदाह कर घरहि सिधाई॥
रानी कह तुम जानत सारी। वसन न पास द्रव्यनहिं म्हारी॥
देहु कहांते देहु बताई। तब नृप कह लावहु कहुँ जाई॥
रानी चलि मारगमें आई। रातभई तब चलो न जाई॥
बैठरही जंगलके माहीं। विश्वामित्र पहूँचे ताहीं॥
राजाका बालक लै आये। तिहि मूर्च्छितकारि तहां धराये॥
रानी शोकविकल नहिं जाना। मुनि राजाढिग कीन्ह पयाना॥
कह्यो कि पुर डायनि इक आई। सो बालक लेगई उठाई॥
सुनि नृप तहँ बहु दूत पठाये। बालक सहित नारिकहँ लाये॥
लखि राजा अस कह्यो रिसाई। देहु श्वपचसे याहि मराई॥
गये दूत ले श्वपच समीपा। तिहि पठवा जहँ रहे महीपा॥
कहियो याहि मार तरवारी। ले मम नौकर वसन उतारी॥

दोहा-राजा रानी लखतही, पहचानी तत्काल।
आज्ञा स्वामी सुनतही, गही कृपाण कराल॥

ज्यों मारनको राजा धायो। वसुधा सह त्रयलोक कँपायो॥
विश्वास प्रगटे भगवाना। राजा करते लही कृपाना॥
धनधन नृप तुम धन तुव नारी। तुमसमान नहिं कोउ धुरधारी॥
धर्मकसौटी पर कस दीन्हों। विश्वामित्र तुम्हैं बड कीन्हों॥
घनप्रहार बिन सांचो हीरा। जानि नजाय सुनोमति धीरा॥
अस्त्र शस्त्र बांधत सब कोई। सोई शूर समरजय होई॥
विश्वामित्र तहां चलि आये। धन्यधन्यकहिनृपतिसुनाये॥

ऋषिन प्रभु कह वचन सिखाई । वृथा दुखी कीन्हों तुम राई ॥
रोहिताश्वको दियो जिवाई । नृप सुतकी मूरछा छुटाई ॥
काशीपति तहँवा चलि आवा । प्रभुदर्शनकरअति सुखपावा ॥
लेहु रुचै जो कछु वरदाना । नृपकहतुमबिनचहियनआना॥

दोहा-पुनि पूँछी नृपनारि ते, माँगी भक्ति विशाल ।
जहँ जन्मूं तहँ पतिमिलै,सुहिं हरिचन्द्र भुवाल ॥

रोहित-सरिस मिलै सुत वीरा । यह दीजै भंजन भयभीरा ॥
एवमस्तु कहि प्रभु इमि बानी । तुमसमान तिय जिहिकीरानी ॥
कस न होय तहँ धर्म अपारा । तुम करिहौ जगको निस्तारा ॥
चलहु अवध भोगो सोइ राजा । देहु प्रजाको सुख बहु साजा ॥
तब हरिचन्द्र नगर चलि आये । पुरवासिन लखि अति सुखपाये
सिंहासनपर नृपहि बिठाई । अन्तर्धान भये सुखदाई ॥
राजा कीन्हें भोग अपारा । प्रजा बन्धुजन सुख विस्तारा ॥
अन्तसमय सुरलोक सिधाये । यह इतिहासन बहुविधि गाये ॥

दोहा-हरिश्चन्द्रकी कथाको, जो सुनिहै धरध्यान ।
तिनकी सब मनकामना, सफल करैं भगवान ॥

इति श्रीविश्रामसागरे हरिश्चन्द्रउपाख्यानवर्णनो
नाम सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७॥

दोहा-विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिरि राम सुखदान ।
वर्णौं भारत मत कछुक, अरु दालभ्य बखान ॥

कह शौनक जीवन रक्षाकर । पुण्यहोय सो कहौ सूतवर ॥
सुनत सूत बोले मुसुकाई । धन्य प्रश्न मैं कहूँ बताई ॥
धर्ममूल जिवरक्षा जानो । सुनो तासुकर पुण्य बखानो ॥
सब तीरथ चाहै करि आई । गया माहिं पुनि पिण्ड पराई ॥

गज गो पट माणिक अरु हेमा । देहि विप्रको राखैं नेमा ॥
यह सब पुण्य जु तुला चढाई । जिवरक्षा समता नहिं पाई ॥
संयम नियम यज्ञ तप ठानै । व्रत औ दान करे मनमानै ॥
सबसे अधिक जीवरक्षकारी । कहूं यहां इतिहास विचारी ॥

दोहा—वर्णतहों शिबिभूपकी, कथा परमरमणीय ।
शरणागत पालनकियो, दे निजतनु कमनीय ॥

देशसिंधु सौवीर अधीशा । भयो चक्रवर्ती धरणीशा ॥
जाकी धर्मध्वजा फहरानी । त्रिभुवनविदितभयोनृपज्ञानी ॥
तीनलोकको कीरति छाई । अचरज सुण्यो देवसमुदाई ॥
बैठे देव शक्र दरबारा । कियो परस्पर वचन उचारा ॥
धर्मधुरंधर शिवि नृप सुनहीं । सतअरुअसतठीकनहिं गुनहीं ॥
तब वासव अस गिरा उचारी । लेव परीक्षा हम वपुधारी ॥
असकहि चल्यो बाजवपुधरिकै । अरु कपोत पावकको करिकै ॥
रगड्यो बाज कपोतहि कोपी । भज्यो सोजीवबचावन चोपी ॥
जहँ लगि रह्यो नृपति दरबारा । सिंहासनपर बैठ भुआरा ॥
दुक्यो कपोत सिंहासन नीचे । तिहिक्षण श्येनहु गयो नगीचे ॥
तब कपोत बोल्यो भयभारे । मैं शरणागत भूप तुम्हारे ॥
लेहु शत्रुसों मोहिं बचाई । कीरति आप जगतमें छाई ॥

दोहा—कह्यो श्येनसों तब नृपति, देहु कपोत बचाय ।
आयो यह बहुदूरते, मेरी शरण तकाय ॥

श्येन कह्यो यह मोर अहारा । तुम कस बारन करहु भुवारा ॥
यहै भक्ष विधिनिर्मित हमको । बारनकरतअयशअतितुमको ॥
कह्यो श्येनसों तब महिपाला । यह ममशरणागत इहिकाला ॥
लोभ ईर्षा भयवश होई । शरणागत पालक नहिं जोई ॥

सकल पापको फल सो पावै । तातें किमि कपोत दैजावै ॥
राजविभव महि तनु परिवारा । अहै धर्मके हेत हमारा ॥
तब कह श्येन एक जियराखी । बहुजियनाशहुयशअभिलाखी ॥
हम कुलसहित कपोतहि पैहैं । बिन कपोत सिगरे मरिजैहैं ॥
जो न धर्मसे होय अधर्मा । तौन धर्म नहिं धर्म सुकर्मा ॥
तब राजा बोल्यो अस बानी । शरणागत पालन प्रण ठानी ॥
सकल धर्म जेहैं जगमाहीं । जीव अभयप्रदान सम नाहीं ॥
पुनि शरणागत तजब विशेखी । सकल धर्मकर नाशपरेखी ॥

दोहा—सोइ पंडित सर्वज्ञ सोइ, सोइ ज्ञानी मतिधीर ।
सो कृतज्ञ औ तज्ज्ञ सोइ, हरै पराई पीर ॥

मुहिं इच्छा सुरपुरकी नाहीं । नहिं वैकुण्ठ लोभ मनमाहीं ॥
भुक्ति मुक्ति याचतहौं नाहीं । नरकपरन डर नाहिं मनमाहीं ॥
पर शरणागत तजहु न काहू । यह दृढनेम यहै बड लाहू ॥
जो प्रसन्न मोपर सुखराशी । हियमें यहै रहै विश्वासी ॥
नारि पुत्र तनु धन अरु धामा । जाय रहै नहिं मुहिं कछु कामा ॥
पर शरणागत तजौं न काहीं । माँग और जो कछु मनमाहीं ॥
कह्यो श्येनहै एक उपाई । जो कपोतको तुला चढाई ॥
ताहि तोल निज तनुकर मासू । मोहिं देहु नृप सहित हुलासू ॥
बचै कपोत धर्म रहिजाई । इहितें भूप न अपर उपाई ॥
श्येन वचनसुनि शिबि नृपराई । सुखी भये मनु सर्वस पाई ॥
बहुरि बाजसन भूपति बोले । पल मम लेहु कपोतहि तोले ॥
अस कहि तुला तुरत मँगवाई । दिय कपोत इक ओर चढाई ॥
एकओर निजतनु पल काटी । दियचढायभूपतिनिज माटी ॥
भयो कपोत गरू तिहि काला । एक ओर तब बैठ भुआला ॥

तुलवावन लाग्यो नृपराई। तब प्रगटे पावक सुरराई॥
करगहि भूप उतारि तुलाते। कह्यो वचन नायक वसुधाते॥
सत्य धर्म धुरधारक आपू। बढ़ै भूप तव दुगुन प्रतापू॥
हम इह लेन परीक्षा आये। जैसो सुनो देखि तस पाये॥

दोहा-जीवत भोगो अतिसुभग, तनु तजि हरिपुर जाय।
पानकरोगे प्रेमरस, पुनरागमन विहाय॥

तुम समान राजा जे अहहीं। सन्त समान कक्षते गहहीं॥
ऐसनकी निन्दाकर जोई। वर्ष कल्पशत रौरव होई॥
क्षमाकरहु अपराध हमारे। कीन्हें हम तुम निपट दुखारे॥
असकहिदोउनिजलोकसिधाये। नृपके अंग स्वस्थ सब पाये॥
अन्त अमरपुर राउ सिधारे। चढि विमान पाये सुखभारे॥
यह सम्वाद सुनै जो कोई। यमकिंकरकर भयनहिं होई॥
और कथा इक कहौं सुहाई। सावधान सुनु मनचित लाई॥
केकीनगर धनी इक रहही। बुद्धिमान धर्मी धन गहही॥
देवदत्त तिहि नाम बखाना। सुयशा नाम वाम जगजाना॥

दोहा-एक समय पति निकटजा, शीशनाय कहबैन।
बडे भाग्य नर तनु मिलै, भजै न करुणा ऐन॥

सो पाछे निश्चय पछिताई। जिमिमणिखोयकांचवरलाई॥
ताते कछु हरिभक्ति करीजे। यह नरदेह सफल करिलीजे॥
धर्मकरहु धनते अब स्वामी। इहि बिन नहीं कोइ अनुगामी॥
ऐसे वचन कहे जब नारी। शाहहिये सुख मानो भारी॥
धर्मकरन लागो मुदपाई। साधुसन्त कोइ विमुख न जाई॥
नवधाभक्ति माहिं चितलायो। विप्रसाधुगुरुअतिथिजिमायो॥
बहुत दिवस इहिभाँति बिताये। धर्म परीक्षा हित तव आये॥

धरे अघोरी तनु विकरारा। प्रश्न कियो इमि धनिक उदारा॥
वैश्य तुरत भीतर ले आवा। कहा करूं अस वचन सुनावा॥
कह्यो अघोरी क्षुधा महाना। आमिषहित हम कियो पयाना॥

दोहा–सुत तुम्हार पट्वर्षको, तिहि आमिषकी चाह।
दोनों मिलि वध करहु तुम, शोक करो तनु नाँह॥

अपने करते देहु खवाई। होमसकै तो अन्ते जाई॥
सुनत शाह निजसुत बुलवायो। तियसुत मारनको मन लायो॥
मारनलगे दोउमिलि जबहीं। बालक वचन कहत भा तबहीं॥
मतमारो मैं घरमें रहिहौं। अब हौ दूरन्न खेलन जैहौं॥
हे सुत खेल कर्ममें नाहीं। जन्मे वृथा जठरके माहीं॥
असकहि दोउजन कीनी घाता। खण्डखण्डआमिषनिलगाता॥
कह्यो अघोरीजी इत आवहु। आमिषघरचोयाहि अबपावहु॥
कह्यो अघोरी खैहों नाहीं। इतनेमें हम नाहिं अघाहीं॥
कछु निज २ आमिष मोहिं देहू। तो भरिजाय उदर मम एहू॥
जब दोउनिजतनुकाटनलीन्हा। तुरतै हाथ धर्म गहि लीन्हा॥
कह्यो कि हौं मैं धर्मसुहायो। लेन परीक्षा तव इतआयो॥
असकहि पुनिनिजरूपदिखावा। धन्य २ कहि वचन सुनावा॥
धर्महेत सुतको किय घाता। तुमसम अधिकनहींअसदाता॥
दिनदिन पुण्य बढै अधिकाई। त्रिपुलोक तीनों जनपाई॥
सुततुम्हार बालनके माहीं। खेलरह्यो यामें शक नाहीं॥
सुनि इक नौकर शाह पठावा। तिहिके संग कुमरचलि आवा॥
देख मातु पितु अति सुख भयऊ। हिये लगाय अंकभरि लयऊ॥
विदा भये करि धर्मबडाई। आयो इक विमान सुखदाई॥
बहुविधि मणिगण जहां विराजैं। देखतजेहिरविशशिदोउलाजैं॥

तिहि पर तिनको दियो चढाई। गे वैकुण्ठलोकको धाई॥
देवन पुनि जयजयति पुकारी। पुष्पवृष्टि कीन्हीं अतिभारी॥

दोहा—धन्य पतिव्रतनारि सो, धन्य सुवन हरिप्रीति।
जासों परमारथ सधै, धन्य द्रव्य औ रीति॥

इति श्रीविश्रामसागर सद्मत्तआगर ग्रंथउजागर शिविदेवदत्त प्रसंगवर्णनोनामाष्टादशोऽध्यायः॥ १८॥

दोहा—विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिरि राम सुखदान।
वरणौं भारत मत कछुक, पुनि इतिहास बखान॥

अग्निदेव कर सुत इक जानी। नाम शुदर्शन तिहि जगजानी॥
क्षमाशील तपधाम सुहावन। धर्मवान गुणवान सु पावन॥
बोधवान नृपसुता सयानी। व्याही गई ताहि सुखदानी॥
दोउ प्राणी कुरुक्षेत्र मँझारी। करैं धर्म नित जपैं मुरारी॥
नितप्रति विप्र साधुकी सेवा। करैं तिन्हैं जानैं समदेवा॥
इहिविधिकछुकसमयचलिगयऊ। मनमें द्विजअसशोचतभयऊ॥
तियको भावसन्तमें नाहीं। अर्ध अंग यहि वेद बताहीं॥
ममपाछे जो हरिजन आवै। सो तियते सन्मान न पावै॥
तासे धर्मक्षीण हो जाई। जो आदर हरिजन नहिं पाई॥
दोउ इकमतहो धर्मकराहीं। यहिसमसुखजगमें कोउनाहीं॥
अस विचार निज तियढिग जाई। बोलो वचन परम सुखदाई॥

दोहा—संतसेव हिय धरहुतिय, यासे अति कल्यान।
हरिसेवासे सहस्रगुण, साधुसेव सुखदान॥ १॥
निजमुखते वर्णन कियो, धर्मोत्तर भगवान॥
आगे धरि नैवेद्यको, शुद्ध करत लखिमान॥२॥

स्वाद दासमुखते नित लेहूं । मन वांछित ऐसनको देहूं ॥
सर्वाराधनसे सुन प्यारी । हरिको आराधन अतिभारी ॥
जनसेवा तिहिते अधिकाई । यह शिवआगममें कहिगाई ॥
विष्णुचरण पूजनकर जोई । अरु द्विज सन्त न सेवै कोई ॥
तिहिसे प्रभु सन्तोष न लहहीं । ताही दाम्भिक सज्जन कहहीं ॥
जहँ हरिजन आदर नहिं पावै । नशै पुण्य स्कन्द बतावै ॥
जहां सन्तजन आवत नाहीं । यवनक्षेत्र तिहि शास्त्र बताहीं ॥
जहां साधु हरिक्षेत्र सुहावा । यह वाराहपुराण बतावा ॥
साधु भजे हरिसेवा ऐसे । गर्भशिशू जमनीसे जैसे ॥
यह सब अमृत सार बतायो । इहिविधि तुमहुं करोमनभायो ॥

दोहा—श्रद्धासे हरिजननको, भोजन देय जु कोय ।
दानअन्न पर्वतसदृश, दिनदिन दूनो होय ॥

नरतनुपाय साधुनहिं सेवा । ते पशुसदृश पेटके देवा ॥
निशिदिन रहे कुटुंबमें लीना । कबहुं साधुसेवा नहिं कीना ॥
धिकधिक ताहि अमृतहि त्यागा । विषके हेत कियो अनुरागा ॥
ताते सुमुखि मान मम बानी । सुहितुहिकीअतिशयकल्यानी ॥
हरिजनकी सेवा तुम कीजे । प्रेमसहित चरणोदक लीजे ॥
यहै गृहस्थधर्म मुनि गाये । हरिजन कहूँ विमुखनहिं जाये ॥
सन्त वचन निश्चय कर दीजे । उनकी कही मान प्रियलीजे ॥
पतिके वचन करैं जो कामिनि । सोपतिलोकवसैं सुनुभामिनि ॥
सुन पतिवचन कहत भइ नारी । करिहौं मैं प्रभुवचन तुम्हारी ॥
धन्य भाग्य उपदेशो मोहीं । सेवहुँ हरिजन सबविधि ओहीं ॥
पत्नीसो जो पतिहि सम्हारै । पुण्यकर्मकर दोष निवारै ॥
सो पति जो तियकी पतिराखै । तासे केहुविधि झूंठ न भाखै ॥

ऐसे वचन नारिके सुनकै । अतिसुखमानोपतिहियगुनकै ॥
मिलिदोउ धर्मकरन तब लागे । तनमन साधुचरण अनुरागे ॥
इहिविधि बहुतक कालबितायो । तिनकोसुयशसकलजगछायो ॥
वारंवार मृत्यु तहँ आई । द्वारेहीसे सो फिरिजाई ॥
नहीं धर्म घटती कछु करहीं । ताते मृत्युत्रास नित टरहीं ॥

दोहा-इकदिन समिधा लेनको, कानन गे द्विज धाय ।
वहां वैष्णव वेषमें, धर्म पहूँचे आय ॥

बोधवतीसे जाय सुनायो । मन्मथने मुहिं बहुत सतायो ॥
तिहिते अंगसंग दे मोहीं । मैं याचन आयों तियतोहीं ॥
तब करजोर तिया अस भाखा । लेहु अन्नधन जो अभिलाखा ॥
पर यह बात उचितहै नाहीं । धर्मकहीहै यहि मनमाहीं ॥
केवल चहिये देह तुम्हारी । शीतल करिहौं मदनदवारी ॥
नहिं इच्छा तौ नाहिं करीजे । हम अन्तहु निजमारग लीजे ॥
सुनि असवचन शोचकिय नारी । ना कहते प्रणजाय हमारी ॥
संगमकिये पतिव्रतजाई । पुनि मनमें यह बात समाई ॥
पतिआज्ञा जो नारि कराई । पतिव्रत तिनको जातसुनाई ॥

दोहा-तब नारी कह धन्यमें, हमपर किरपाकीन्ह ।
यह तन धन सब आपको, धन्य दरश मुहिं दीन्ह ॥

तब सुनि धर्मकपाट लगायो । ताही समय सुदर्शन आयो ॥
वचन सुनत तिय अतिसकुचाई । अतिथी बोलो भेद सुनाई ॥
मोरमनोरथ पुरवत नारी । ठाढे रहो द्वारपगुधारी ॥
सुनत सुदर्शन अति सुखपायो । धन्यधन्य कहितिहि गुहरायो ॥
धन्याप्रिया तव पितु औ माता । जो तू भई सन्त सुखदाता ॥
आखिर तनु न रहत थिर नारी । हुइहैं क्षार पंच विस्तारी ॥
सो वपु हरिजन हेत लगायो । राख्यो धर्म हमहुँ सुखपायो ॥

अहो सन्त तुम तजि सब शंका । करहु भावतो मनभर अंका ॥
तन धन धाम साधुहित मेरो । कीजे निश्चय गेह बसेरो ॥
पुण्य हमार उदय भो आजू । पायो सुख सन्तनकर काजू ॥
वचन सुदर्शन भाषे जबहीं । आये धर्म निकसि तहँ तबहीं ॥

दोहा—कह्यो विप्र मैं धर्महौं, यह पतिव्रता सुनारि ।
लेन परीक्षा आयऊं, नहिं कछु दोष विचारि ॥ १ ॥
तुमसम विश्वासी तपी, तीनलोकमें नाहिं ।
जस कीन्हों नहिं करसकत, अन्यकोइ जग माहिं ॥ २ ॥
इकगणिका जन त्यागिकै, और पुरुष अस कोय ।
नारिदोष प्रत्यक्ष लखि, रोष करै नहिं सोय ॥ ३ ॥

तुमको रोष तनक नहिं आवा । और प्रशंसा वचन सुनावा ॥
मानरु मोह कृपणता नाहीं । इन्द्रियजित समदृष्टिसदाहीं ॥
विष्णुलोक तुम पावहु जाई । आजु विमान लेनको आई ॥
अर्धांगी तब नारि सुहाई । येहू संग तुम्हारे जाई ॥
अर्धअंगसे सरिता होई । अर्धअंग वैकुण्ठ रहोई ॥
जो कोइ यामें मज्जन करिहैं । तासु पाप निश्चय यह हरिहै ॥
अस कहि भये सु अन्तर्धाना । लाये हरिजन तहां विमाना ॥
पतिपती चढकर तिहि माहीं । जययुत विष्णुलोकको आहीं ॥
बोधवती सरिता भइ सोई । यह प्रसंग जानै सब कोई ॥
बैठी रही मृत्यु तिहि द्वारे । ते दोऊ तनु सहित सिधारे ॥
घर बैठे द्विज मृत्यु हराई । चली गई यमघर खिसिआई ॥

दोहा—यह इतिहास सप्रेम हुइ, पढै सुनै जो कोइ ।
मृत्यु अकाल न पावई, हरिपदरति अति होइ ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ग्रंथउजागर सुदर्शनकथा वर्णनोनामैकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥

दोहा-विधि हरिहर गणपति गिरा, सुमिरि राम सुखदान।
महभारत सद्ग्रन्थका, कहुँ इतिहास बखान॥

चन्द्रावती पुरी इकदेशा। चन्द्रसेन तहँ बसै नरेशा॥
द्विज हरिभक्त बसै तिहिग्रामा। बहुला गऊ रहै तिहि धामा॥
हंससदृश तिहि उज्वल अंगा। विचरै कानन अभय अभंगा॥
रोहितगिरि यमुनाके तीरा। तिहि कंदरमें जीवगँभीरा॥
तहाँ वृक्ष वेली अरुझानी। चारों ओर भरो तिहि पानी॥
चरत चरत बहुला तहँ आई। आयसिंहने ताहि दबाई॥
बोला वचन वचन नहिं पैहै। आज हमारे मुखमें जैहै॥
जो आवै इहि कंदर बीचा। ताकी अवशि करतहौं मीचा॥
सुनि अस वचन गऊ बिलखाई। बछरा छोटजान पछिताई॥
केहरि कह रोवत किहि काजा। मोसे नहिं उबरै तू आजा॥
बहुला कह नहिं निजतनुशोचू। तनु नश्वर कर कौन सँकोचू॥
प्रीति पुत्रकी हियमें भारी। तिहिते सुलगी मोह दवारी॥
प्रथम पुत्र मेरहै सोई। पियत दूध तृणचरत न कोई॥

दोहा-वत्सै क्षीर पियाय कर, फिर अइहौं तुमपास।
तब तुम लीजो खाय सुहि, मानो करि विश्वास॥

हँसकर सिंह कही अस वानी। शूलीचढिवत्सालय लिखानी॥
तैसे तू बछरे ढिग जाई। मोको मूर्ख बतावत गाई॥
घरमें जाय पुत्र लखपाई। जीवन देने फिर क्यों आई॥
ताते हौं देहौं नहिं जानी। सुनतवचनबहुलाअकुलानी॥
जो अघ मात पिता गौ मारे। बालक नारि गुरू संहारे॥
कन्या ऊपर जे धन लेहीं। अथवा दोउनसे धन जेहीं॥
करहिं साधुनिन्दा अति भारी। हरिहर तजि भूतन रति धारी॥

इनकर पाप होय शिर मेरे । नहिं आऊं जो मैं ढिग तेरे ॥
झूंठी साख सभामें भाखैं । अतिथिनिराशकरैंअतिमाखैं ॥
तुला चढाय न्यून जो तोलैं । कथामाहिं कलकलकरि बोलैं ॥
परनारी र चोर जुवारी । मदपायी औ मांस अहारी ॥
इनसे जो लागतहै पापा । नहिं आऊं पाऊं सन्तापा ॥

दोहा-प्रीतिकरत हरिविमुखते, हरिजनसे हिय रोष ।
नहिं आऊं तो मुहिं लगै, हरिपातक औ दोष ॥

मातु पिता सन्मान न करहीं । छिपकर स्वयं वस्तु मुख धरहीं ॥
पुनि विश्वास घातकर जोई । गुरुमें दोष लगावत कोई ॥
हरिहरजन गुण कह न सुनावे । पर अपकारनमें मनलावै ॥
औरहु पापकर्म जे भारी । नहिं आऊं तौ हूं अधिकारी ॥
सुन कह सिंह शपथ मैं मानी । जाउ जहां रुचिहो सुखदानी ॥
क्षीर पियाय वेग इत आवो । क्षुधालगीतिहिवेगि बुझावो ॥
यह मति जनियो कीन ठगाई । सुन बहुलाअसविनयसुनाई ॥
तुम्हैं ठगनकी समरथ काको । ठगै औरको ठगमिल ताको ॥

दोहा-असकहि आयसु सिंह ले, तुरत सिधारी गाय ।
पहुँची बछेरेके निकट, दुख सबगयो भुलाय ॥ १ ॥
सुखपायो लखि वत्स तिहि, चाटो गाय शरीर ।
दूधपियायो प्रेमभरि, छायरही तनुपीर ॥ २ ॥

जब माताको लखो उदासा । तब बछराअसवचनप्रकासा ॥
मातु विकलता तव तनु छाई । सो क्या कारण देहु बताई ॥
बहुला कहत दूध पीलेहू । जिहि कारण आई करनेहू ॥
लेहु निहार भली विधि बेटा । फिरनहिं मोरि तोरिहै भेंटा ॥
वनमें सिंह घेर मुहिं लीन्हा । छूटी जबहिं शपथ बडकीन्हा ॥

सो मैं अब जैहों तिहि पासा । जियमें सुत जनि होहु हरासा ॥
बोला वत्स माय मैं जैहों । तेरे बदले निजतनु दैहों ॥
मैं सुत तुम माता सम देवा । अवशि मोहिं चाहिय तवसेवा ॥
इहिते मम हुइहै उद्धारा । सुनि बहुला अस वचन उचारा ॥
हे सुत मृत्यु मोरि चलि आई । तू रह घरमें जिय सुखपाई ॥

दोहा-नखी नारि नृप शृंगि अरु, शस्त्रधारि नदि जान ।
इन विश्वास न कीजिये, यह उपदेश महान ॥ १ ॥
असकहि गौअन ढिगगई, मिली सबन अकुलाय ।
पूछन लागीं कुशल सब, तिहि सब कहा बुझाय ॥ २ ॥

मैं अब जात सिंहके पासा । विनय करहु मत होउ उदासा ॥
क्षमा करहु अपराध हमारे । सुन सब गायन वचन उचारे ॥
शास्त्रकहे जो प्राणहिं जाहीं । तौ तहँ झूंठ कहे अघ नाहीं ॥
ताते सिंह निकट मत जावहु । घरबैठो निजप्राण बचावहु ॥
बहुला कहत न अस तुम भाखो । बात असत्य हिये मत राखो ॥
निज प्राणन हित झूंठ बखानै । ताको बुधजन प्रेत लखानै ॥
परके प्राण रखनको कोई । झूंठकहे नहिं पातक होई ॥
जाकी मृत्यु मरै सोइ प्रानी । आप अकेलो संग न जानी ॥
सत्यसमान धर्म कहुँ नाहीं । नहिं असत्यसम पातक आहीं ॥
चतुरानन असत्य कहि वानी । जगमें नहिं पूजत कोइ प्रानी ॥
सियते असत नदी गौ भाषा । शापदीन तिहिकर मनभाषा ॥
नदीगुप्तह्वै बहत तहांहीं । भक्ष्य अभक्ष्य गायसबखाहीं ॥
उमाशंभुते कीन दुरावा । तज्यो शंभु सवअतिदुखपावा ॥

दोहा-नर वा कुंजर धर्मकहि, भो अंगुष्ठ पषान ।
ताते तजहुँ न सत्य मैं, असकहि कीन पयान ॥

सब गौअन तिहिं कीन जुहारी। सत्यहेतु जीवन निजहारी॥
बहुला चली चली तहँ आई। जोवत बाट जहाँ मृगराई॥
बोली सिंह जीउ अब खाई। क्षुधानिवारण को हौं आई॥
देख व्याघ्र असवचन उचारा। खावन चहत न जीव हमारा॥
सतवादी कहुँ दुख नहिं पावैं। यहसब निगमागम कहिगावैं॥
कीन्ह सत्य तुमने निज वानी। तुव आवन अचरज मैं मानी॥
सत्यमाहिं सब लोक बखाना। सत्य माहिं सब धर्म प्रमाना॥
ज्ञानमुक्ति सत्यहिके माहीं। सत्यहिमें शुभकर्म समाहीं॥
पुर तव धन्य धन्य तव धामा। धन्य चरत तृण जो सुखकामा॥
धन्यभूमि जहँ तुम पगुधारो। धन्य कृपीवन गेह तुम्हारो॥
दोहा-धन्य पियो जिन क्षीर तव, धन धन दरश तुम्हार।
दरश लह्यो मैं धन्य तव, सो जानो निरधार॥
अब बहुला मोहिं ज्ञानसिखावो। जिहिते मम कल्याण लखावो॥
बहुला कही वचन सुनि लेहू। हिंसाकरन छाँडि तुम देहू॥
हरिके सुमिरणमें चित धरहू। यह उपदेश मानकर करहू॥
को तुमहो जो असमति आई। सुनतसिंह अस गिरा सुनाई॥
मैं गन्धर्व महा अभिमानी। विद्यामें सम अन्य न जानी॥
देवशाप मैं हरितनु पायो। याहि तनुसे बहुपाप कमायो॥
तुम्हरे दरश पापकर नाशा। भयो हृदय अब ज्ञान प्रकाशा॥
अब प्रसन्न मैं तुम घरजावो। मम अपराध न मनमें लावो॥
असकहिप्रभुसुमिरणमनदीन्हा। भोजनपान त्याग सबकीन्हा॥
कछुदिनमें तनुतजि अनयासा। जायकियो सुरपुरमें वासा॥
बहुला इत निज धाम सिधाई। देखत वत्स महामुद पाई॥
सत्यवृति सबकोइ मनलाई। वत्ससहित गोजन हरषाई॥
अन्तकाल लहि कृपा रामकी। अधिकारी भइ मोक्षधामकी॥

छन्द-निजनृपति और प्रजासकल गोसाथ सुरलोकहि गई ।
चढ़ि चले सुभगविमान सब जग सत्यकी महिमा भई ॥
कहि जयति जयकार सुमन बर्षहिं दिव्यगोलोकहि छई ॥
कह मिश्र सुनहिं प्रसंग जो यह भक्ति अनुपम सो लई ॥ १ ॥

छप्पय-गेहमाहिं जो पढै सुखद सन्तति सो पावै ।
खरक माहिं जो पढै गऊ बहुतिक तहँ आवै ॥
दुखीपढै तिहि दुःखनाश निश्चयकर होई ।
रोगनहीं तनुरहै सुनै रोगी जो कोई ॥
बहुत महातम लिख्योहै कछुक कह्यो मैं गायके ।
स्तुतिचहै भगवान भज बारबार मनलायके ॥

दोहा-बहुलाको यह शुभचरित, सुनत प्रेमसे जोय ।
सदा रहै आनंदसे, मृत्युअकाल न होय ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर सुदर्शनबहुलाकथा
वर्णनो नाम विंशोऽध्यायः ॥ २० ॥

दोहा-विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिरि रामसुखदान ।
वरणौं जैमिनिमत कछुक, सकलसुमंगलदान ॥ १ ॥
अब वरणौं उत्तम कथा, सुनहु संत मनलाइ ।
सुरथ सुधन्वा भूप जिमि, लीन्हीं युक्ति बजाइ ॥ २ ॥

भूप युधिष्ठिर सो इक काला । वाजिमेधमखकियोविशाला ॥
छोड़्यो तुरँग पूजि सविधाना । चले संगमहँ सुभट महाना ॥
अर्जुन अरु प्रद्युम्न प्रवीरा । औरौ महारथी रणधीरा ॥
देशन देशन घूमत बाजी । करवावत रण राजन राजी ॥
आयो चंपकपुरी तुरंगा । महासैन्य पारथके संगा ॥
तहँ हंसध्वज नामक राजा । धर्मधुरंधर धीर विराजा ॥

दूत खबरि दीन्हों तिहि जाई। सुनु वृत्तान्त नयो नृपराई॥
अश्वमेधमख धर्मनरेशा। करतअहै विधिसहित सुवेशा॥
ताको वाजी सैन्यसमेतू। आयो तुम्हरे नाथ निकेतू॥
सँग प्रद्युम्न पार्थ धनुधारी। औरौ महारथी भट भारी॥
यह कारज मनमाँह विचारी। कीजै नाथ विलंब बिसारी॥
सुनत हंसध्वज दूतन बैना। होत भयो तुरंत मुय ऐना॥

दोहा–सचिव सुभट द्रुत बोलिकै, लाग्यो करन विचार।
बड़ो लाभ आयो नगर, सुनहु सुबुद्धि उदार॥

कवित्त–भूपति युधिष्ठिर मुकुंदप्रीतिपात्र पूरो,
कीन्हों अश्वमेधको अरम्भ याहिकालमें।
छोंड्यो यज्ञ वाजी दियो संग सैन्य राजी,
सत्य वीरताकी ताजी जीत काजीयुद्ध हालमें॥
कृष्णसखा पारथ प्रद्युम्न कृष्णपुत्र प्यारो,
औरो हरिदास आये उमँग उतालमें।
बांधिकै तुरंग करैं जंग सव्यसाचीसंग,
मिलै हरिदासनको लगै यही थालमें॥

दोहा–जहां पार्थ प्रद्युम्न हैं, ऐहैं तहँ यदुवीर।
यहीं व्यास यदुराजको, दरश करौ सब वीर।

कबहूँ नहिं देखे प्रभुकाहीं। गयो जन्म मम सकल वृथाहीं॥
हरिदासन रिझाय रण आजू। होइँ कृतारथ सहित समाजू॥
सचिव पुत्र पुरजन सब दारा। रहे सकल हरिदास उदारा॥
सुनत हंसध्वजकी अस बानी। महामोद अपने मन मानी॥
कह्यो नाथ यह औसर नीको। हरिदासन दरशन प्रिय जीको॥
नाथ निशंक निशान बजावहु। सकलसैन्यकहँ हुकुम सुनावहु॥

सुनत भूप अति मानि उछाहा । शासन दीन्हों पहिरि सनाहा ॥
सजहु सकल भट संगर हेतू । देखहु नैननि रमानिकेतू ॥१॥
वैष्णववीर सकल हरषाने । सजे सकल नहिं कोउ सकाने ॥
यकहत्तरि सहस्र गज माते । यकहत्तरि सहस्र रथ भाते ॥
तिमि यकहत्तरि लाख सवारा । लाख त्रिनवति पदाति उदारा ॥
फेरि भूप सब वीर बुलाई । यहिविधि शासनादियो सुनाई ॥

दोहा—एकनारिव्रत होय जे, कृष्णदास जे होय ।
सजैं सुभटते समरहित, और जाइ नहिं कोय ॥

एकनारिव्रत जे हरिदासा । निकसि चले ते सहित हुलासा ॥
भूप हंसकुलके दलमाहीं । कोउअसनहिंजो हरिजननाहीं ॥
ते सब दान विविधविध दीन्हें । सविधि अग्निमहँ होमउ कीन्हें ॥
ऊरध पुंड्र तिलक दै भाला । पहिरिपहिरि तुलसीकी माला ॥
कवच कुँडल सायक धनुधारी । समरमरनकहँ किये तयारी ॥
सब भट वाजत राज नगारा । आये सजुग भूपके द्वारा ॥
रहे भूपके पांच कुमारा । तिनके नामनि करौं उचारा ॥
यक शशिसेन द्वितिय शशि केतू । सुरथ सुधन्वा सुबल सूचेतू ॥
तेऊ संगचले सानंदा । युद्ध उछाहभरे स्वच्छन्दा ॥
निजनिजपतिन पेखि रण जाते । तियतियहियनहिं हर्ष समाते ॥
प्रमुदित करहिं परस्पर बाता । सखितुव अधरश्याम दरशाता ॥
तेरे पतिके हिय कदराई । तेरे अधरन प्रगट जनाई ॥

दोहा—तव सो कह्यो न कादरी, मेरे पतिकी वीर ।
हरि करते पतिमरण गुणि, मैं ध्यावों यदुवीर ॥

सोइ श्यामता अधरन छाई । नहिं कछु है मम पति कदराई ॥
यहिविधि वदहिं अनेकन वानी । वीरवधू अतिशय हरषानी ॥

आतपत्र चामर अस छत्रा। चले हंसध्वजशीश विचित्रा॥
चली सैन्य कछु वरणिन जाई। यहिविधि काढि पुरबाहिर आई॥
कह्यो हंसध्वज तब प्रण रोपी। सकलप्रवीरनपर अतिकोपी॥
जो कोइ मम शासन नहिं मानी। तौन दंड पैहै मम पानी॥
शंख लिखित उपरोहित दोई। रहे तहाँ जानत सब कोई॥
तिनकी कथा गर्वकी ऐसी। हेतुपाय्य वरणौं मैं तैसी॥
शंख लगायो इक वर बागा। तामें कियो परम अनुरागा॥
लिखित वाटिकागे इककाला। पके रहे तहँ बेर रसाला॥
लिखित तोरि बदरीफल खायो। पाछे तिन्हैं ज्ञान उर आयो॥
बिनपूँछे फल भक्षण कियऊ। यह हमसों अनुचित ह्वै गयऊ॥

दोहा—जो हम याको दंड नहिं, पाउब यहितनु माहिं।
स्वर्गगये दुर्गति लहब, संसारहु सुख नाहिं॥

अस विचारि भ्राताढिग आई। कह्यो पाप हमसों भो भाई॥
याको दंड देहु तुम अबहीं। नातो शुद्ध होय नहिं कबहीं॥
शंख विचार कियो मनमाहीं। बिना दंड यहिकी गति नाहीं॥
दंडदेनको यह संसारा। बिनभूपतिनहिंममअधिकारा॥
अस विचार राजाढिग आये। दोउ भ्राता वृत्तान्त सुनाये॥
राजा कह्यो शास्त्र तुम जानो। करे सोइ जो आप बखानो॥
शंख विचार कही तब बाता। बिना हाथ होवै मम भ्राता॥
राजा तुरतहि हाथ कटायो। दोउभ्रातन कछु दुख नहिं आयो॥
शंख लिखितको धर्मविश्वासा। भूपतिके उर रह्यो प्रकाशा॥
ताते शंखलिखित बुलवाई। नृपति हंसध्वज गिरा सुनाई॥
तुम पुरबाहर बैठहु जाई। महा कराह तेल भरवाई॥
नीचे पावक देहु लगाई। चुरनलगै जब तेल तपाई॥

दोहा—तव नहिं जे भट युद्धहित, आवैं मेरे संग।
तिनको डारि कराहमें, करहु भस्म सब अंग॥

शंख लिखित सुनि नृप रजाई। तैसहि कियो कराह चढाई॥
और वीर सब गे नृपसाथा। सुमिरत सुखद चरण यदुनाथा॥
नृपको लहुरो पुत्र सुधन्वा। शूर बली धर्मी सुखधन्वा॥
कृष्ण अनन्य उपासक पूरो। समर उछाह भरो अति रूरो॥
सो सजि समरखेत सबभाँती। मातुसमीप गयो अरिघाती॥
आये विजयहेत हय माई। लरौं युद्धमें देहु रजाई॥
यदुपतिसुत प्रद्युम्न पियारा। वैसहिं पारथ सखा उदारा॥
आये यज्ञतुरंगहि संगा। होई हरिदासन सँग जंगा॥
देखब अवशि सकल हरिदासन। ऐहै अवशि तहां भवनाशन॥
धन्य होब प्रभुदर्शन पाई। याते और कौन सुख माई॥
मातु कही सोहिनहै बानी। जाहु पुत्र शंका नहिं मानी॥
रणमहँ तोपितकरि प्रभुकाहीं। ल्यवहु द्रुत अपने घरमाहीं॥

दोहा—पारथ अरु प्रद्युम्नको, औरहु सब हरिदास।
दरश करावहु मोहिंकहँ, अपने आनि अवास॥

जूझि जंगमें जो तुम जैहो। जगमें सुयश मुक्ति हठि पैहो॥
जीवत रहे तो हरिकहँ लैहो। कुलसमेत तुम धन्य कहैहो॥
उभयभाँति उपकार तुम्हारो। पुत्र निशंक समर पगु धारो॥
सोइ युवती जगतीतलमाहीं। जासुत शूर समर मरि जाहीं॥
जासु पुत्र रणविमुख पराहीं। तिनसों बाँझ भली जगमाहीं॥
कही सुधन्वा तव असिवाता। जो तव गर्भजनित मैं माता॥
रणते विमुख कौनविधि ह्वैहौं। अस औसर कबहूँ नहिं पैहौं॥
असकहि मातुचरण शिरनाई। गयो नारिढिग आनँदछाई॥

माँग्यो तिहिसों वीर बिदाई। प्यारी रणकहँ देहु रजाई ॥
बोली हर्ष सुधन्वाप्यारी। मो सम कौन आजु जग नारी ॥
जासु कंत श्रीकंतसमीपा। सन्मुख युद्धगमन कुलदीपा ॥
जाहु समरकहँ प्राणपियारे। करहु दरश वसुदेवदुलारे ॥
दोहा-पै मोको दै लेहु प्रिय, यहीसमय रतिदान।
फेरि शुद्धह्वै समरकहँ, कीजे सपदि पयान ॥
तब रति दानदियो तिय काहीं। बहुरि सनाह पहिर तनु माहीं ॥
करि अस्नान दान बहु देकै। सिगरे आयुध धारण कैकै ॥
रथ चढि गवनो शंख बजाई। यतनेमें भो विलम महाई ॥
उतै हंसध्वज सैन्य निहारी। कहाँ सुधन्वा कह्यो पुकारी ॥
सबै वीर मेरे सँग आये। रह्यो सुधन्वा भवन डराये ॥
ल्यावो जमन घसीट उताला। दौरे जमन काढि करवाला ॥
मिल्यो सुधन्वा मारग माहीं। भूपति शासन कहतिहिकाहीं ॥
आइ सुधन्वा पिता समीपा। नायो शीश चरण कुलदीपा ॥
कह्यो भूप तैं सुत नहिं मोरा। नहिं अवलौं आवनभो तोरा ॥
जानि समर घर रह्यो सकाई। सकल वीरता दई बहाई ॥
कह्यो सुधन्वा तब करजोरी। पिता न है मोरी कछु खोरी ॥
दोहा-बिदा होन मैं मातुसों, गयो पिता यहि काल।
ताते भई विलम्ब कछु, पहुँच्यों नहीं उताल ॥
हंसकेतु तब द्वै निजदूता। शंखलिखितढिग पठयो पूता ॥
दूत आइ उपरोहित नेरे। कह्यो वचन अस भूपति केरे ॥
सुवन सुभट मंत्री सरदारे। युद्धहेत मम निकट सिधारे ॥
यह कादर सुधन्व सुत मेरा। कियो समर डर सदन बसेरा ॥
सबके पाछू मम ढिग आयो। याको दंड शास्त्र क्या गायो ॥

उचित सुधन्वाको जो दंडा। देहु विचारि पुरोहित चंडा ॥
शंख लिखित सुनि भूपसँदेशा। दियो विचारि विशेषिनिदेशा ॥
तात तेलभरि बडो कराहा। चढवायो यहिहित नरनाहा ॥
जो रणडर घर रहैं लुकाई। तप्ततेल तेहिं देहु डराई ॥
ऐसी भूप प्रतिज्ञा कीन्हीं। करहु अन्यथासुतसुखचीन्हीं ॥
होई जो भूपतिप्रण भंगा। हम नहिं रहब आपके संगा ॥
दूत कहौ अस मम संदेशा। करै उचित जो गुणै नरेशा ॥

दोहा-दूत हंसढिग निकटि चालि, कही पुरोहित बात।
राजा सचिव बुलाइकै, कह्यो करहु सुतघात ॥

सचिव सुधन्वै लियो बुलाई। शंखलिखितढिगचलेलिवाई ॥
सचिव सुधन्वै कह्यो दुखारी। राजपुत्र लखु विपति हमारी ॥
मेरे प्रभुके अहौ कुमारा। घात कौनविधि करैं तुम्हारा ॥
जो नहिं प्रभुकर शासन करहीं। दोऊ लोक हमार बिगरहीं ॥
कह्यो सुधन्वा परमनिशंका। सचिवकरहु नेकहु नहिं शंका ॥
जो कछु पिता रजायसु दीन्हीं। सो सब करहुधर्मनिज चीन्हीं ॥
यहि विधि कहत दूर दुख छाये। शंखलिखितढिगनृपसुतल्याये ॥
शंखलिखित लखि राजकुमारा। महाकोप कर वचन उचारा ॥
क्षत्री जन्म भूपकुल पायो। तापर तू कत समर डरायो ॥
तप्त तेलमहँ तो कहँ डारी। होई इच्छा पूर हमारी ॥
कह्यो सुधन्वा सहजहि बैना। करहु जो भावै मुहिं कछु भैना ॥
मोरि शूरता कादरताई। जानत हैंहैं हरि यदुराई ॥

दोहा-शंख लिखित अमरष भरे, बोले वचन कठोर।
जिहि विधि कीन्हों कर्म तुम, लेहु तासु फल घोर ॥

अस कहि कोपि पुरोहित पापी। राजकुँवर कहँ कादर थापी ॥
सचिवन कह्यो पकरि यहि लेहू। तप्तकराह डारि द्रुत देहू ॥

सचिव सुधन्वै द्रुत गहि लीन्हों। विस्मय हर्ष कछू नहिं कीन्हों ॥
सायुध वसन सहित तिहिकाला। डारनचले कराह कराला ॥
राजकुँवर तब हरिकहँ ध्यायो। मनहीमन प्रभुकहँ गुहरायो ॥
हे हरि करुणासिंधु मुरारी। नाथहाथ अब सुरति हमारी ॥
रह्यो जो कादरताकरि गेहू। तौ कराहमें भस्म करेहू ॥
जो न कादरी रोमहु कोई। तप्ततेल तौ शीतल होई ॥
असकहि जरत तेलमहँ वीरा। कूदि पऱ्यो सुमिरत यदुवीरा ॥
भरो तेल तहँ मनुज प्रमानू। बलकत ज्वाला कढत कृशानू ॥
गिऱ्यो तेलमहँ राजकुमारा। मानहु परयो गंगकी धारा ॥
तप्त तेल शीतल ह्वैगयऊ। लोगनके उर विस्मय भयऊ ॥

दोहा—शंख लिखित तब कोपिकै, सचिवन कह्यो सुनाइ।
चढो तेल बहुबेरको, ताते गयो जुडाइ ॥

अथवा चेटक कियो कुमारा। ताते नहीं भयो जरिछारा ॥
सचिव कह्यो नहिं तेल जुडाना। तुमहीं समुझि परत कछुआना ॥
शंख लिखित तब कोपि तहाहीं। नारिकेलफल लेकर माहीं ॥
दीन्हों डारि तुरन्त कराहा। तप्त तेलकी लेन सलाहा ॥
नारियर परत भये युग फारा। शंखलिखितके लगे कपारा ॥
लागत नारिकेरके टूके। गयो शीश तहँ फूटि दुहूँके ॥
यहअचरजलखिसचिवसमाजा। गये हंसध्वज रह जहँ राजा ॥
आदिअन्तते कह्यो हवाला। आयो दौरि द्रुतहि महिपाला ॥
मुख चूमत कराहि नरनाहा। कैंचिलियो निजपुत्र कराहा ॥
चामीकर रथ माहिं चढाई। चल्यो युद्धहित सुद्ध लिवाई ॥
भूप कह्यो तुम सुत निरदोषू। करहु मोर अपराध समोषू ॥
कह्यो सुधन्वा तब करजोरी। पिता अहै सब मोरि न खोरी ॥

दोहा—मैं नहिं जानहुँ हेतु कछु, जान देवकी लाल।
जे कहवावत दुःख जन, दाहत दीनदयाल॥
अस कहि मिल्यो सैन्यमहँ जाई। सबै वीर तिहि करी बड़ाई॥
हंसकेतु भूपति हरिदासा। सब वीरन अस वचन प्रकासा॥
तुलसीमाल गरमहँ डारहु। शस्त्रहनत हरिनाम उचारहु॥
समरमध्य अस क्षण नहिं जाही। बिन हरिनाम कढे मुखमाहीं॥
फेरि सुधन्वै शासन दीना। पकरहु पारथबाजि प्रवीना॥
सुनत सुधन्वा पिता निदेशा। पकरिअश्व ल्यायोतिहिदेशा॥
हंसकेतु नृप पद्मव्यूहराचे। ठाढभयो वीरता वृद्ध साचे॥
दूतन दौरि तुरन्त तहांहीं। कहे प्रद्युम्नहि पारथ पाहीं॥
हंसकेतु नृप धर्यो तुरंगा। ठाढो सेनसहित हित जंगा॥
तब पारथ प्रद्युम्न बुलाई। कह्योवचन अस भटने सुनाई॥
हंसकेतु पकर्यो मम वाजी। बाढे समर हेत दलसाजी॥
ताते कृष्ण पुत्र अस कीजे। अनुमति मोरि चित्तमहँ कीजे॥
दोहा—हम अरु तुम अरु सात्यकी, अरु अनिरुद्ध प्रवीर।
महारथी बहु संगले, युद्ध करहिं रणधीर॥
दलनायक तुम कृष्ण दुलारे। तुमसों सकल सुरासुर हारे॥
अहहु मोर तुम प्राणहु प्यारे। आगे लरहु न लखत हमारे॥
हमहिं समर करिहैं तुम आगे। तुम सँभार लीजो दल भागे॥
तब प्रद्युम्न कह्यो मुसुकाई। सुनहु सव्यसाची चितलाई॥
यह नहिं समर सुरासुर कैसो। यामें एक प्रसंग अनैसो॥
यह राजा अनन्यापितु दासा। ताते निर्फल जाइ प्रयासा॥
युद्ध जोर मर करब विशेषी। क्षत्रिय धर्म कर्म मन लेखी॥
सुनहु न हंसकेतु दल शोरा। जयहरि छाय रह्यो चहुँओरा॥

ऊर्ध्वपुंड्र भूषित भट भाला। लसत हिये तुलसीकी माला॥
वह राजा सब विधि अपनो है। पै याको जीतन सपनो है॥
पार्थ कह्यो सति कह्यो कुमारा। प्राणहुते प्रिय भूप हमारा॥
क्षत्रिय धर्म जान रण करिहैं। नहीं सखा जिति हैं की हारि हैं॥
दोहा–अस प्रद्युम्न पारथ उभै, करि संमत ससमाज।
सन्मुख सैन्य चलाइ दिय, युद्धकरनके काज॥
तब वृषकेतु वीर बलवाना। अर्जुनसों अस वचन बखाना॥
क्षणक रहहु मम युद्ध निहारहु। पुनिनिजविक्रमसकलपसारहु॥
अस कहि शंख शोर भल कियऊ। धीरहंसध्वजदलधसि गयऊ॥
लखि वृषकेतु सुधन्वा भाष्यो। कोउइकसमरकरनअभिलाष्यो॥
आवत चलो अकेल उछाही। खडे रहो इत सबै सिपाही॥
यासों हमहिं अकेले लरि है। कैसेके अधर्म अनुसरि है॥
असकहि चलो अकेल सुधन्वा। धारे पाणि बाण अरु धन्वा॥
पूछो तिहि सम्मुख रणजाई। कौन वीर तुम देहु बताई॥
कह वृषकेतु करण सुत जानो। तुम अपनो पितु नाम बखानो॥
कियो सुधन्वा नाम उचारा। मैं मरालध्वज भूप कुमारा॥
अस सुनि सो शर हन्यों अनन्ता। गयो सुधन्वा मूंदि तुरन्ता॥
तब सुधन्व जय कृष्ण उचारी। सायक मारि काट शर झारी॥
दोहा–फेरि हन्यो बहुबाण तिहि, रथ सारथि हति तासु॥
हिय हन शर मूर्च्छित कियो, पर्यो न ताहि प्रयासु॥
वृषकेतुहि सारथि लै भाग्यो। निजदलमाहिंआइ सो जाग्यो॥
कर्णकुमार पराजय देखी। धाये भट असमंजस लेखी॥
उतै हंसध्वज सैनहु धाई। जय हरि जय हरि छावत आई॥
मिले दोउ दल चलि तिहिठोरा। मानहु मिले सिंधुकरि शोरा॥

चले शस्त्र तहँ विविध प्रकारा। भयो धूरि धरणी अँधियारा॥
गिरे वीर बहु शोणित धारा। समर सुरासुर सरिस उचारा॥
तहां सुधन्वा रथहि धवाई। अर्जुनदल चालनि करि लाई॥
शर मारत जय यदुपति भाषै। हरिकी मिलन आश उर राखै॥
गयो वीर सन्मुख नहिं कोऊ। महारथी अति रथ रह सोऊ॥
क्षणमहँ चहत पार्थ दलनाशी। अस गुणि बढे वीर दल राशी॥
कृतवर्मा, सात्यकि अक्रूरा। रहे औरहू जे अति शूरा॥
ते सब जाय सुधन्वै नेरे। मोर विशिख ताहि बहु तेरे॥

दोहा-तहां धनुष टंकोर करि, शुद्ध सुधन्वा वीर।
हन्यो बाण मुख टेरि अस, जय जय जय यदुवीर॥

सुनि यदुवंशी यदुपति नामा। भये उछाहरहित संग्रामा॥
तब धरि धनुष सुधन्वा रणमें। कियो विरथसबकोइकक्षणमें॥
मारि बाण यक यक उरमाहीं। दियो गिराय धरणिसब काहीं॥
फेरि पार्थ भट मारन लाग्यो। हाहाकार करत दल भाग्यो॥
तब आयो प्रद्युम्न रणधीरा। सुलभ सरैं छाँडत धनुतीरा॥
चल प्रद्युम्न धनुषशर धारा। कटे मतंग तुरंग अपारा॥
कोउनहिं मरन भीति मन लेही। जय हरिकहत प्राणतजि देही॥
हंसकेतु दल कोउ अस नाहीं। भगै न कहै कृष्ण मुख माहीं॥
यदपि प्रद्युम्न बाणलगि मरही। मरतहि माधव मुख उच्चरही॥
देखि सुधन्वा सैन्य विनाशा। सन्मुख धँस्यो भरतशरआशा॥
उततें कृष्ण कुमारहु आयो। इतै सुधन्वा स्यंदन धायो॥
दोऊ वीर भये इक ठौरा। कहसुधन्व सुनु नाथ किशोरा॥

दोहा-तैं मम प्रभुसुत पाटवी, मैं तुव पितुपद दास।
आप आप पितुदरश की, रही सदा उर आस॥

तव प्रताप तुहिं तोषित करिकै । ह्वै हौं सुखी नाथ पद परिकै ॥
रण पूजन करिहौं प्रभु तेरो । यह कुलधर्म अहै सति मेरो ॥
अस कहि कृष्ण पुत्रपद माहीं । मान्यो शरप्रणामकिय ताहीं ॥
तब प्रद्युम्न अस मनहि विचारे । याते बनत सोहिं अब हारे ॥
असकहिशिथिलकरनरणलागे । भट सुधन्वके प्रेमहिं पागे ॥
इतै सुधन्वा तजि शरधारा । उत प्रद्युम्नहु वाण अपारा ॥
दोऊ वीर बराबर रणमें । मूर्छित होत भये इक क्षणमें ॥
जीत्यो सुधन्व तुरत संग्रामा । कोउ नहिं वीर रहे तिहिं ठामा ॥
तब अर्जुन धायो कर कोपी । मारि शरन लीन्हों रथ तोपी ॥
तहाँ सुधन्वा सब शर काटी । वदवानी अपनी परिपाटी ॥
सुनहु कृष्णके सखा पियारे । आजु मनोरथ पूर हमारे ॥
भीषम द्रोण कर्ण कृपवीरा । जीतेजितै करत रणधीरा ॥

दोहा—तब मेरो प्रभु सारथी, भयो धनंजय तोर ।
अब निजसारथि त्यागिकै, कृत आयो यहि ठौर ॥

बिन निजसारथि जीति न पैहो । कोटि करौ घरही फिरि जैहो ॥
ताते सारथि लेहु बुलाई । तब मेरे सँग करहु लड़ाई ॥
मैंतो हौं अनन्य हरिदासा । कबहुँ न दूसरि राखहुँ आसा ॥
अस कहि हन्यो नराच हजारन । पार्थहि कियो तुरन्त निवारन ॥
पावक अस्त्र धनंजय छाँड्यो । लै जलबाण सुधन्वा आड्यो ॥
अर्जुन दिव्य अस्त्र बहु मारै । सोऊ दिव्य अस्त्रसों वारै ॥
कौन्हुविधिनहिंजयलखिलीन्हों तब श्रीप्रभुकहँसुमिरणकीन्हों ॥
सुमिरतहीमें प्रगट मुरारी । सारथि भयो गोवर्धनधारी ॥
हरिको लखि सुधन्व सुखछायो । रथते उतरि चरण शिरनायो ॥
त्राहि त्राहि जय आरत हरना । तुमहो दीन दास दुखहरना ॥

कृष्णदासकी पूरहु आशा। तुव अवलंब तुम्हारे दासा ॥
जय सच्चिदानन्द घन राशी। जय पारथसारथि अविनाशी॥

दोहा-भयो जन्म आजहिं सफल, धन्य भयो मैं आज।
देव पितर तोपित भये, दरश पाय यदुराय॥

लखि सुधन्व हरि मोदित भयऊ। अर्जुन वाजिन बागन लयऊ ॥
पुनि रथ चढकरि प्रभुहि प्रणामा। करन लग्यो सुधन्व संग्रामा ॥
संगर महा भयावन भयऊ। सुरगण सकल प्रशंसा कियऊ॥
तव अर्जुन बोल्यो अस वानी। तीन बाण जे मैं संधानी ॥
तिनते जो तव शिर नहिं काटौं। तौ पितरन पूजन अघ पाटौं ॥
तव सुधन्व बोल्यो रणमाहीं। जो त्रै सायक काटौं नाहीं ॥
तौ हरिविमुख पाप मोहिं लागै। मेरो यश युग २ नहिं जागै ॥
हन्यो धनंजय प्रथमहिं बाना। काट्यो सो शर छोंडि महाना ॥
तज्यो सव्यसाची जव दूजो। दल्यो सुधन्वासुर तिहिं पूजो ॥
त्रिती बाण लिय पांडुकुमारा। तब यदुपतिअस वचन उचारा॥
सखा दास दोउ हौ प्रिय मेरे। कछुन कहौं अति अनुचितहेरे॥
छाँड्यो पारथ तीसर बाना। तहां सुधन्वा वीर महाना ॥

दोहा-काट्यो तीसर बाणहू, पै आधो शरजाय।
लग्यो सुधन्वा शीशमें, दीन्हों भूमि गिराय॥ १ ॥
तासु तेज प्रभु वदनमें, सबके लखत समान।
उठि कबंध पांडवभटन, हनतभयो सहसान॥ २॥

निरखि हंसध्वज पुत्र विनाशा। कियो विलाप बिसारि हुलासा॥
हा सुधन्व मम प्राणपियारे। धर्मधुरंधर धीर उदारे ॥
सुनत पुत्र परिताप तहांई। दूजो पुत्र सुरथ तहँ आई ॥
कह्यो पिता कत करहु विलापा। रणमृत करन उचित परितापा॥

यहि हित जननी जनमति जगमें। शूर होय कीरति हरि पगमें ॥
अबै जियत हौं मैं जगमाहीं। पिता शोच करिये कछु नाहीं ॥
हौं तोषित करिहौं प्रभु कांहीं। पारथ सहित प्रद्युम्न जहांहीं ॥
अस कहि रथ चढि आयुध धारी। करवायो दुंदुभी धुकारी ॥
सन्मुख संगर सुरथ सिधारा। जपत जयति वसुदेवकुमारा ॥
आवत सुरथ देखि यदुराई। अर्जुनको अस गिरा सुनाई ॥
महारथी इत सुरथ सिधारा। सन्मुख जाहु न पाण्डुकुमारा ॥
बंधु शोक व्यापी उर पीरा। मोर दास अनन्य रणधीरा ॥

दोहा–विजय लहब याते कठिन, अबै न सन्मुख जाहु।
पुनि प्रद्युम्नको बोलिकै, वचन कह्यो यदुनाहु ॥

जाहु सुरथसों करहु लराई। की बधिजाइ कि जाय पराई ॥
तब प्रद्युम्न अस गिरा उचारी। सुरथ गहे पितु प्रीति तिहारी॥
अहै अनन्य तुम्हार उपासी। सकै ताहिको संगर नासी ॥
क्षत्रिय धर्म करब हम जाई। मानि शीश महँ आप रजाई ॥
असकहि सन्मुख सुरथ धीरके। चल्यो कुँवर लै यूथ वीरके ॥
देखि प्रद्युम्न सुरथ तहँ आयो। बार बार चरणन शिरनायो ॥
कह्यो वचन सुन नाथदुलारे। रण बाँकुरे बीर अनियारे ॥
तुम मोहिं जीतन समरथ अहहू। सुभट सुरासुर जीतत रहहू ॥
जो मैं मरचों आप शर लागी। तौ न अकीरति जगमहँ जागी॥
रहो एक उरमें पछिताऊ। समर लख्यो न सखा यदुराऊ ॥
दे बताय रुक्मिणी दुलारे। सखा सहित जहँ पिता तिहारे ॥
तब प्रसन्न ह्वै कह्यो कुमारा। जहँ कपिध्वजफहरतछबिवारा॥

दोहा–सुरथदेख तिहि सुरथपर, सखा सहित पितु मोर।
जाहु दरश कीजै तुरत, सफल मनोरथ तोर ॥

सुरथ सुनत प्रद्युम्न मुख बानी । महा लाभ अपने उर जानी ॥
चल्यो तुरंतहि यान धवाई । पहुँच्यो खडे जहां यदुराई ॥
शिरधर कीन्ह्यों प्रभुहि प्रणामा । बोल्यो आज भयो फलकामा ॥
लेहु समर पूजो मम स्वामी । तुम सबके उर अन्तर्यामी ॥
अस कहि हन्यो अनेक नराचा । चले मनहु विकराल पिशाचा ॥
अर्जुन सों तब कह यदुराई । सावधान ह्वै करहु लराई ॥
यह रणधीर धर्मधुरधारी । पूरचो गगन पंथ शर मारी ॥
अर्जुन कह प्रभु आप प्रतापा । करैं न समर शत्रु संतापा ॥
दोऊ वीर बरोबर योधा । लरनलगेकारि करिअतिक्रोधा ॥
महायुद्ध भो दोहुँन केरो । हार जीति नहिं होत निबेरो ॥
तहां सुरथ बोल्यो गहि वाना । सुनु पारथ यह बाण प्रमाना ॥
कहु तुहिं हस्तिनपुर पहुँचाऊं । कहु पताल कहु गगनउड़ाऊं ॥

दोहा—तब अर्जुन सों हरि कह्यो, यहिप्रण झूठ न होइ ।
करहु विरथ तुमहीं प्रथम, तबै वृथा नहिं कोइ ॥

अर्जुन सुरथ विरथ करि दीन्हों । दूसर रथ चढियुद्ध सु कीन्हों ॥
सोउ रथ तुरत धनंजय काट्यो । सुरथतृतियरथचढिशरपाट्यो ॥
सोउ रथ दल्यो पांडुके नन्दन । यहिविधिकाटिदियोशतस्यंदन ॥
तब गांडीव धनुष प्रत्यंचहि । काट्योसुरथजक्यो नहिंनंचहि ॥
जब जब तजत सुरथ शर धारा । तब तब हरि हरि करत उचारा ॥
तब लै शर सुमिरत यदुनाहू । काट्यो पार्थ सुरथ कर बाहू ॥
बाहु कटत सन्मुख सो धायो । प्रभुपदपंकज चित्त लगायो ॥
तब अर्जुन लै सायक तीना । काटि युगुलपदअरुभुजदीना ॥
तबहुँ न रुक्यो सुरथ कर रुंडा । तब काट्यो पारथ पुनि मुंडा ॥
मुंड लग्यो अर्जुन उर आई । गिरचो धनंजय मुरछि तहांई ॥

सपदि शीश परश्यो हरिचरना। पार्षद रूप लह्यो शुभ वरना ॥
अर्जुन कहँ प्रभु लियो जगाई। तुरत बुलायो हरि खगराई ॥

दोहा—सुरथ शीश गरुडै दियो, फेंक्यो जाइ प्रयाग।
शिव निज मालामें धर्‌यो, जानि वीर बडभाग ॥

सुरथ सुधन्वा सम जग माहीं। वीर धीर हरि दासहु नाहीं ॥
युद्धसमर हरि सन्मुख आई। गये त्रिकुंठ निशान बजाई ॥
सुरथ सुधन्वा मरण विलोकी। भयो हंसध्वज भूपति शोकी ॥
सन्मुख चल्यो निशान बजाई। हरिदरशन अभिलाख महाई ॥
आवत हंसकेतु कहँ देखी। माधव मोदित भये विशेषी ॥
अपनो दास जानि यदुराई। दौरत भे निजभुज पसराई ॥
धावत आवत प्रभुहि निहारी। हंसकेतु सब शोक बिसारी ॥
दंड सरिसकिय भूमि प्रणामा। कहिजयजययदुपतिघनश्यामा ॥
लियो नाथ तिहि हिये लगाई। प्रेम विवश दृग वारि बहाई ॥
मंजुल वचन कह्यो सुनु राजा। धन्य धन्य तैं सहित समाजा ॥
तव सुत सरिस दास नहिं मोरा। लीन्हों भुवन हेरि चहुँ ओरा ॥
करहु न पुत्र शोक महिपाला। बसे विकुंठ दोउ यहि काला ॥

दोहा—तब बोल्यो करजोरि नृप, सुत पितु मातहु भ्रात।
मोरे हो यदुनाथ तुम, शोक न कतहुँ दिखात ॥

करहु मोर मंदिर प्रभु पावन। हेकृपालु यदुपति जगभावन ॥
अस कहि प्रेमविवश महिपाला। गिर्‌यो भूमिमें भयो विहाला ॥
तिहिं उठाय प्रभु हिये लगाई। दीन्हीं अपनी भक्ति महाई ॥
अर्जुन सों पुनि भेंट कराई। प्रद्युम्नादिक दियो चिन्हाई ॥
राजा बार बार शिर नाई। सादर पुर कहँ चल्यो लिवाई ॥
ससुत सखा युत प्रभुगृह ल्यायो। पूजनसविधिकियोसुखछायो ॥

दिय वरदान ताहि भगवाना । सुर दुर्लभ करि भोग विधाना ॥
अंतसमय करि मोपुर वासा । जहां वसत सिगरे मम दासा ॥
कह्यो हंसध्वज पुनि करजोरी । यहअभिलाषनाथ अबमोरी ॥
जबलौं जिऊं जगत महँ नाथा । तबलौं लहौं आप जन साथा ॥
एवमस्तु भाष्यो भगवाना । तुहिं समप्रियमोकहँनहिंआना ॥
पांच दिवस तहँ रहे मुरारी । नृपहिं सपुरजनकियो सुखारी ॥

दोहा-सुरथ सुधन्वा हंसध्वज, भये विमल हरिदास ।
तातें कछु विस्तार युत, कीन्हीं कथा प्रकास ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ग्रंथउजागर सुरथसुधन्वाभक्ति-युद्धवर्णनोनामैकाविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥

दोहा-विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिरि राम सुखदान ।
वरणों जैमिनि मत सहित, कछु स्कन्द बखान ॥ १ ॥
धर्मधुरंधर नीतिमय, नृप मोरध्वज राव ।
वधू पिंगला सहित सो, धर्म करत सुख पाव ॥ २ ॥

तासु राज्यमें दुखी न कोई । नहिं अधर्मसे धन ले सोई ॥
चारहु वर्ण भक्तियुत रहहीं । नृपरानी अतिशय सुखलहहीं ॥
जो कोइ साधु गेह निज आवै । चरणोदक लै भवन सिंचावै ॥
सन्तचरण जल तीर्थ समाना । तिनसम और तीर्थको आना ॥
साधुहि सिंहासन बैठारें । सोरह भाँति पूजि गुणधारें ॥
सात चोर मिलि कीन्ह विचारा । यह नृप साधु अधीन अपारा ॥
इहिसे साधुन वेष बनाई । घात लगाय हरहु धन भाई ॥
असं कहि सन्तन वेष बनाई । सातौं नृप गृह पहुँचे आई ॥
निरखि कियोनृप अतिसन्माना । पदपखारिनिजभाग्यबखाना ॥
सुत वनिता सब सेवा ठानी । अन्तःपुरमें टिके सुवानी ॥

दोहा–इकदिन राजा वन लखन, गये संगले साज।
इत चोरन वध रानिकर, धनले निकसे भाज॥

इतते चोर जात पगुधारे। उतते नृप आवत मुद भारे॥
साधुनको लखि नृप पहिचाना। उतरि अश्वते वचन बखाना॥
रानी सुत कछु सेव न कीन्हा। काहेजात न बोलत चीन्हा॥
बोले ठग तब हृदय सुखाई। साधु नहीं हम तस्कर राई॥
जीवदान दे कृपा करेहू। राजा कही वचन सुनि लेहू॥
यह धन धाम वाम सुत सारा। है सब सन्तन हितअविचारा॥
और चोर मत कहौ उचारी। है है साधुन निन्दा भारी॥
लोग चोर हरि जनहि बतैहैं। सुनत वचन हरिभक्त लजै हैं॥
अस कहि तिनहिंभवनलेआवा। रानि मृतकलखिक्रोधनछावा॥
वही भाँति सेवा तिन कीन्हा। चरण धोयसो जल ले लीन्हा॥
रानी मृतक लाय तहँ राखा। चरणामृत दे राम सु भाखा॥
तुरतहि प्राण जगे तनुमाहीं। राजा बोलो वचन तहांहीं॥
काहे सोय रही अस प्यारी। रूठि चले हरिजन न विचारी॥
रानी तब करजोर सुनायो। सोयगई मैं जान न पायो॥
पुनि चोरनकी पूजा ठानी। वे मनमें सब करत गलानी॥
तब राजा कहँ धन बहु लीजे। चोरी कर्म छाँडि अब दीजे॥
अस कहिबहु सम्पतिनृप दीन्हा। प्रेम समेत बिदा पुनि कीन्हा॥
लख अस प्रेम दास निज जाना। भे प्रसन्न तिनपर भगवाना॥
चक्र सुदर्शनको रखवारी। करदीन्हीं तिहि देशमँझारी॥
ईति भीति तहँ एको नाहीं। राज्य करत नृप निज पुरमाहीं॥
जिहिलखियमगण रहत सकाने। हरिजिहिगुणमुखआपबखाने॥

दोहा–मोरध्वज अरु ताम्रध्वज, पिता पुत्र हरिदास।
तिनको मैं वर्णन करौं, परम सुखद इतिहास॥

फिरत फिरत नृप धर्म तुरंगा। जीतत विविध नरेशन जंगा॥
रत्न नगर आयो तिहिं काला। जहँ मोरध्वज रह्यो भुवाला॥
मोरध्वज रेवाके तीरा। करत रह्यो हयमख मतिधीरा॥
भवन ताम्रध्वज ताहि कुमारा। रह्यो महाबल बुद्धि अगारा॥
मंत्री तासु बहुलध्वज नामा। सकल कर्म कारक मतिधामा॥
देखि तुरंग पट्ट तिहि बाँची। ताम्रध्वज मति युधहित राची॥
कह्यो सचिवसों पकरहु बाजी। होहु सजुग सिगरो दलसाजी॥
याते अधिक न दूसर काजू। क्षत्रिय धर्म दरश यदुराजू॥
ऐसो रह्यो मनोरथ मोरा। कब देखब वसुदेव किशोरा॥
यदुनन्दनको दर्शन कीजे। धारा क्षेत्र त्यागि तनु दीजे॥
उभय लोक अब लेहिं सुधारी। भई भाग्यकी उदय हमारी॥
अस कहि साजि सैन चतुरंगा। चल्यो ताम्रध्वज सहितउमंगा॥

दोहा-जबते सुरथ सुधन्व दोउ, लिये मुक्ति रणमाँहिं।
तबते अर्जुन संगमें, यदुपति रहे तहाँहिं॥

दूतन आइ खबर अस दीन्हों। नाथताम्रध्वज हय गहिलीन्हों॥
आवति संग सैन्य अति भारी। युद्ध करनकी किये तयारी॥
दूत वचन सुनि हरि अस बोले। रहहु न पार्थ और नृप भोले॥
अति विक्रमी मोरध्वजनन्दन। नाम ताम्रध्वज दुष्ट निकंदन॥
धर्म धुरन्धर धरणि उदारा। मोर अनन्य भक्त अविकारा॥
महाकठिन संगर यह होई। जानि परत बचि है नहिं कोई॥
अर्जुन कह्यो सुनहु यदुनाथा। विजय अवशि पांडव तुमसाथा॥
तब प्रद्युम्न तुरत प्रभु टेरा। गृध्र व्यूह विरचहु दल केरा॥
तुरत प्रद्युम्न विरचि खग व्यूहा। चल्यो संग लै वीर समूहा॥
यदुपति पार्थसैन्य मधि माहीं। और वीर बाँके चहुँ घाहीं॥

उतै ताम्रध्वज सैन्य समेता। आयो सुमिरत कृपानिकेता॥
देखि दूरिते यदुपतिकाहीं। कियो प्रणाम उतारि महि माहीं॥

दोहा—जय यदुपति करुणायतन, शरणागतके पाल।
सखा पुत्र युत दरश दे, मोको कियो निहाल॥

क्षत्रिय धर्म करौं कछु आजू। है यदुनाथ हाथ मम लाजू॥
असकहि कुँवर पसर करि दीनो। बाण चलाइ छाइ दल लीनो॥
उतै यादवी सैन्य प्रवीरा। मारत भये अनेकन तीरा॥
भयो भयावन तहँ संग्रामा। जूझे विविध बीर तिहि ठामा॥
वसुधा बही रुधिरकी धारा। प्रगटे प्रेत पिशाच अपारा॥
तहां ताम्रध्वज रथहि धवाई। आयो जहां वीर समुदाई॥
सात्यकि आदिक वीरन काहीं। मारि शरन किय विकल तहांहीं॥
सकल यादवी सैनहि मारयो। चहुँकित वेगवंत शर झारयो॥
कोउ नहिं सन्मुख रुक्यो प्रवीरा। आडि सक्यो कोऊ नहिं तीरा॥
तब प्रद्युम्न तहँ कियो पयाना। धारे कर कोदंड महाना॥
निरखि ताम्रध्वज हरिसुतकाहीं। किय प्रणाम संग्रामहि माहीं॥
बोल्यो वचन विनयरस साने। हैं हम तुव भुज विक्रम जाने॥

दोहा—पूर मनोरथ ह्वै गये, तुमको निरखि कुमार।
कौन घरी वह होयगी, देखब पिता तुम्हार॥

लखहु कछुक विक्रमहु दासको। सिखि राख्योजोकरिप्रयासको॥
असकहि विविध बाण संधाना। मारि चहूंकित भयो दिशाना॥
कियो लाघवी भूप कुमारा। कुँवर तुरंग तुरत संहारा॥
तब प्रशंसि तिहि कृष्णकुमारा। कह्यो वचन सुनु वीरउदारा॥
मम पितुके अनन्य तुम दासा। तोरे यश पूरित दश आसा॥
मैं हौं यदुपति पुत्र भुवाला। सुतते सेवक प्रिय सब काला॥

तुमसों हम सब विधिते हारे। प्रेम जँजीर पगन तुम डारे ॥
पै कछु विक्रम लखहु हमारा। क्षात्र धर्म कर करहु विचारा ॥
असकहि कुँवर धनुष टंकोरा। छाँड्योविशिखविविधअतिघोरा॥
चले अनेकन सायक पैना। विनशन लगी ताम्रध्वज सैना॥
चहुँदिशि रणरथ मंडल दीनो। मघा बूँद सम शरझरि कीनो ॥
रहेभुवन भरि पूरित बाना। कटे मतंग तुरंगहु याना ॥

दोहा-चारि दंडमहँ तासु दल, कीन्हों कुमर सँहार।
तीन क्षौहिणी हतगई, माच्यो हाहाकार ॥

तबै ताम्रध्वज रथहि धवाई। बोल्यो कृष्ण कुँवर ढिग आई ॥
साधु साधु रुक्मिणी दुलारे। तो सम विक्रम कहुँ न निहारे ॥
रोकहु रथ काटत हौं तोरा। लखु विक्रम रुक्मिणीकिशोरा ॥
महामंत्र आवत इक मोको। वार न करै जगत महँ सोको ॥
अस कहि जय यदुनंदन नाथा। मारचो बाण ऐंचि इक भाथा ॥
लागत बाण मदनको स्यंदन। भस्मभयो तब कह हरिनंदन ॥
जौन मंत्र पढि तैं शर मारा। सो त्रिभुवन नाहिं रोकनहारा॥
पुनि प्रद्युम्न बाण इक मारचो। तुरत ताम्रध्वजको रथ जारचो॥
चढि द्वितीयरथ भूपकुमारा। समरमध्य अस वचन उचारा॥
जो अनन्य मैं तुव पितु दासा। तो यह बाण करैं तव नासा ॥
अस कहि छोंडि दियो शर घोरा। लग्यो प्रद्युम्न हृदय बरजोरा ॥
मूर्च्छित भयो कुँवर संग्रामा। हाय हाय माचो तिहि ठामा ॥

दोहा-तब सात्यकी तुरंतही, मारत विशिख निकाइ ॥
जुरचो ताम्रध्वजसों सपदि, ठाढ रहो अरगाइ।

तुरत ताम्रध्वज सात्यकि काहीं। मूर्च्छितकियो परचोश्रमनाहीं ॥
तब अनिरुद्ध बाण तकि मारी। तासों युद्ध भयो अतिभारी ॥

सोऊ लगत ताम्रध्वज बाना। परचोमूर्च्छि महि वीरप्रधाना॥
औरौ महारथी जे आये। सबनिताम्रध्वज मारि गिराये॥
भगी पांडवी फौज डराई। समर ताम्रध्वज शर झरिलाई॥
तब अर्जुन सब भटन पुकारे। जैहौ कहां भागि भट भारे॥
मैं यह भटकर करौं विनासा। देखहु सगरे खडे तमासा॥
अस कहि पारथ सारथि काहीं। कह्यो चलहु प्रभु लै रथ ताहीं॥
तुरतहि यदुपति जात धवाई। दियो ताम्रध्वज पहँ पहुँचाई॥
पारथ सात बाण तिहि मारा। करि रथ खंडित सूत सँहारा॥
द्वितिय यान चढि भूप कुमारा। कुंती सुत सों वचन उचारा॥
आजुहि जन्म सफलह्वै गयऊ। रण आँखिनप्रभु देखत भयऊ॥
दोहा—यहि हित मैं बांध्यो तुरँग, यहि हित कीन्हौं रारि॥
यहिहित मारचो अमित भट, देख्यों आजु मुरारि॥
हे प्रभु दयासिंधु जगदीशा। तुम्हरे चरण मोर है शीशा॥
जस मैं राख्यों तुम्हरी आसा। तस दरशन दिय रमानिवासा॥
क्षत्रियकुलमें जन्म हमारा। क्षात्र धर्म युध तुमहिं उचारा॥
ताते जो आज्ञा प्रभु पाऊं। तौ पारथकहँ समर दिखाऊं॥
प्रभु प्रसन्नह्वै बोले वचना। करहु वीर विक्रमकी रचना॥
तब प्रभुपद पंकज शिरनाई। तज्यो ताम्रध्वज शरसमुदाई॥
पार्थहु सायक विविध पँवारा। होतभयो दशादिशिअँधियारा॥
बहुतकाललगि दोउयुध कीनो। विस्तृत भीति नमैं कहिदीनो॥
कह्यो ताम्रध्वज तब करजोरी। सुनहु नाथ विनती अस मोरी॥
जोइ जब किय प्रण दास तिहारे। तिनको तुमहिं जाय निरधारे॥
हौं प्रण अस करतो यहिकाला। सखासहितगहितुमहिंकृपाला॥
लागी पुन सहित पग पकरी। प्रेम जँजीरनमें पुनि जकरी॥

दोहा-लैजैहौं पितुके निकट, बसत नर्मदातीर।
वाजिमेधमख करतहैं, तहिं ध्यावत यदुवीर ॥

अस कहि तुरत ताम्रध्वज धायो। प्रभुपदपंकज ध्यान लगायो ॥
गहि प्रभुको लिय कंधचढाई। चल्यो जनकढिगआनँदछाई ॥
पारथहूं लीन्हों पछिआई। प्रद्युम्नादिक आये धाई ॥
देखि भक्तवत्सलता हरिकी। बिसरगई सुधि संगर अरिकी ॥
चली सैन्य सब हरिके पाछे। धन्य २ सब कह तिहिं आछे ॥
गयो ताम्रध्वज रेवातीरा। जहँ बैठो मोरध्वज धीरा ॥
दूत कह्यो आगे कछु जाई। आवत सुत हरि कंधचढ़ाई ॥
सुन मोरध्वज अचरज माना। सन्मुखदौरत कियो पयाना ॥
देख्यो पुत्रकंध प्रभुकांहीं। गिर्‌यो दंडसम धरणि तहांहीं ॥
कूदि कंधते प्रभु द्रुतधाई। मोरध्वजगहि लिय उरलाई ॥
मोरध्वज करगहि यदुराई। मखशालामें गये लिवाई ॥
तहां भूप सिंहासन मांहीं। बैठायो त्रिभुवन पतिकांहीं ॥

दोहा-पूजि सविधि पुनि कमलपद, सादरलियो पखारि।
सकुल सबंधु सदार नृप, लीन्हों शिर महँ धारि ॥

प्रभुपदपंकजअंकहि धरिकै। कह्यो मोरध्वज आनँदभरिकै ॥
आजु धन्य मैं सकुल भयोऊ। कोटि जन्मको दुरित गयोऊ ॥
तुव समान को दीनदयाला। मोहिं दरशदे कियो निहाला ॥
मैं पामर पापी सबभाँती। नाथ निरखि भै शीतल छाती ॥
सुत कुल बंधु धरणि धनधामा। प्रिय परिजन पुरजन वसुवामा ॥
प्रभुको अर्पण सकल हमारो। यह सगरो है नाथ तिहारो ॥
अस कहि उठि मोरध्वज राजा। अर्जुनयुत यादवी समाजा ॥
पूजन कीन्हों कृष्णसमाना। हरिते भिन्नभाव नहिं ठाना ॥

भूषण वसन विचित्र बनाई। यथायोग्य सब कहँ पहराई॥
सबको चरणोदक शिर धारयो। हरिते वर हरिदास विचारयो॥
नभते देव फूल बरषाहीं। धन्य २ कहि भूपतिकाहीं॥
सुतहि कह्यो तैं भो कुलतारन। मुहिं दरशायो वारन तारन॥

दोहा-मोरध्वजकी प्रीति लखि, भे प्रसन्न यदुनाथ।
बार बार ताको मिले, धरयो माथ पै हाथ॥

कह्यो भूप नहिं तुहिसम आना। धर्म धुरंधर भक्त प्रधाना॥
तो सुत सरिस न वीर त्रिलोका। बाजि बाँधि मेरो दल रोका॥
जीत्यो अर्जुनादि सब वीरा। सहसबाहु सम रिपु रणधीरा॥
मोपद प्रेमजँजीरन भारी। तेरे ढिग ल्यायो प्रण धारी॥
कहो मोरध्वज तब शिर नाई। नाथ रावरीहै प्रभुताई॥
तुम्हरे सुतहि सखहि जगमाहीं। अज शंकर जीता है नाहीं॥
ममकुमार तो केतिक बाता। निजजनप्रण राखहुसुखदाता॥
अस कहि तुरँग तुरंत सँगाई। सौंप्यो प्रभुहि चरण शिरनाई॥
लै तुरंग निज सैन्य लिवाई। चले नाथ भूपतिगुण गाई॥
यादव सकल सराहन लागे। नृपकी प्रीति रीति रसपागे॥
कछुकदूरि जब प्रभु कढि आये। तब अर्जुन हरिपद शिरनाये॥
विनय कियो करजोरि सुखारी। धन्य भाग्य यदुनाथ हमारी॥

दोहा-मोसम धरणीमें अपर, धन्य परत नहिं जोहि।
प्रभु सुतनृपति जितायकै, दियो सुयश जग मोहि॥

नाथ कहौं कछु करत ढिठाई। क्षमहु चूक जो नहिं बनि आई॥
मैं मानहुँ अपने मनमाहीं। मोते अधिक दास कोउनाहीं॥
अग्रज मोर धर्म अवतारा। को तिहि सारिस अपर संसारा॥
धर्म हेतु बहु सह्यो कलेशा। सो तुम जानहु सकल रमेशा॥

धर्मवान पदपंकज दासा। औरहु कहुँ अस रमा निवासा॥
तिहि यदुपति तुम देहु बताई। मोहिं द्वितियनहिंपरत लखाई॥
तब बोले माधव मुसुकाई। पारथ सुनहु वचन मनलाई॥
यदपि युधिष्ठिर अहैं अनूपा। धर्म धुरन्धर औरहु भूपा॥
जे द्विजहित सर्वस निज त्यागैं। तनधनतियसुतनहिं अनुरागैं॥
तब पारथ बोल्यो कर जोरी। को अस देहु बताइ बहोरी॥
करिकै यहि मोरध्वज राजा। जाके सुतसों आयुध बाजा॥
सुतको विक्रम भक्ति हमारी। लख्यो सखा संग्राम मँझारी॥

दोहा–मोरध्वजको धर्म व्रत, सखा जु देखन चाहु।
तौ द्विजवपु धरि तहँ चलौ, जाहिर करि नहिं काहु॥

पारथ कह्यो चलहु यदुनाथा। हमहूं चलब तिहारे साथा॥
तब अर्जुन अरु कृष्णकृपाला। धरचो विप्र वपु परम विशाला॥
तहँ राखि यादवी समाजा। चले परीक्षा कारण राजा॥
विप्ररूप धरि गे तहँ दोऊ। तिन कर कपट जान नहिंकोऊ॥
द्वारपाल द्रुत जाइ सुनाये। कछु कारज हित द्वैद्विजआये॥
सुनत भूप तुरतहि उठि धायो। दोउ विप्रन मंडपमें ल्यायो॥
सविधि पूजितिमिचरणपखारी। लीनों चरणोदक शिरधारी॥
करि प्रणाम पुनि बारहिं बारा। जोरि पाणि अस वचन उचारा॥
कहौ विप्र किहिकारज हेतू। कियो पवित्र हमार निकेतू॥
बोले विप्र सुनहु महराजा। हम आये जौने हित काजा॥
धर्म धुरन्धर धरणि मँझारी। तुम्हैं सुने द्विज आरतहारी॥
अतिशय कठिन मोरअभिलाषू। बनै जो राखत तौ प्रभुराखू॥

दोहा–दानीनाम तुम्हार सुनि, तुम्हरे ढिग नरनाथ।
धनहित हम आवतहते, लिये पुत्र निज साथ॥

मिल्योविपिनमहँ व्याघ्रकराला। मोरे सुतहि धरचो ततकाला॥
तव मैं परचो चरणमहँ ताके। विनय करी कहि वचन दयाके॥
मोरे एक पुत्र वनराऊ। छोड़ि देहु कर सरल स्वभाऊ॥
धर्मकिये सुधरत दोउ लोका। सब प्राणी नहिं पावत शोका॥
बाघ कह्यो हम मांस अहारी। दया धर्म नहिं रीति हमारी॥
तब मैं कह है कौन उपाई। देहौ त्यागि पुत्र वनराई॥
तब केसरी कही अस बाता। एक उपाय बची सुत ताता॥
भूप मोरध्वज नामक कोई। धर्मधुरंधर है इक सोई॥
अंग दहिन लावउ मोहिं पांहीं। तब मैं नहिं भक्षहुँ सुतकाहीं॥
अस मुहिं सिंह कह्यो महिपाला। सुनतहि मैं ह्वैगयो विहाला॥
दैहै राजा निजतनुनाहीं। किहिविधिमिलियपुत्रमुहिंकाहीं॥
विप्र वचन सुनि नृपति उदारा। कह्यो पाइ उर मोद अपारा॥

दोहा—धन्यभाग्य है मोरि अब, बचिहै विप्रकुमार।
विदितवेद अरु लोकहू, धर्म न सम उपकार॥

धन्य विप्रहित लगै शरीरा। विप्र काज लगि होत न धीरा॥
देहौं तुमहिं विप्रतनु आधा। करहि न सुतहि सिंह अवबाधा॥
अससुधि सुन आई तहँ रानी। तनयताम्रध्वजतिमिमतिखानी॥
दुहुँन विप्र वृत्तान्त सुनाये। तिरिया तनय महासुख पाये॥
नृपतिय कही अर्ध अँग नारी। मुहिंदै निज सुत लेहु उबारी॥
सुत कह आत्मज पुत्र कहावै। ताते पितहिरूप जग भावै॥
मुहिं दै सिंहहि निजसुतकाहीं। लेहु बचाय होउ सुख माहीं॥
मुनिहु कह्यो सूरति अब आई। वाणी बाघ जो मोहि सुनाई॥
नृपतिय तनय दोउ सुख भरिकै। निज निजकर में आरा करिकै॥
करैं मोरध्वज तनु युग फारा। तिहि लै मुहिं दै लेहु कुमारा॥

मुनि कहनृपतिविलँबनहिंकीजै । आरा उभयपाणिमहँ लीजै ॥
शिरते पगलों करु युग खंडा । उदयहोय कीरति मार्तंडा ॥

दोहा-सुनत मोरध्वजके वचन, तिरिया तनय उदार ।
आरा दिय नृपशिर निरखि, जन किय हाहाकार ॥ १ ॥
किय पयान कौतुकलखन, चढि चढि देव विमान ।
मंडपमधिभूपति खरो, आरा चलत महान ॥ २ ॥
धन्य धन्य सुर मुनि करत, बारहिंबार बखान ।
पुरजन परिजन दुखित अति, ठाढे वदन मलान ॥ ३ ॥

रानी कुमुदवती जिहि नामा । तनय ताम्रध्वज धर्महि धामा ॥
निजपतिनिजपितुशिरमहँआरा।खैंचत दुहुँशिशि त्यागि खंभारा ॥
विप्रकाज गुणिदुख भजि गयऊ । दोउनको प्रसन्नमन भयऊ ॥
चलत चलत आरा तिहिंकाला । आयो भूपतिके मधिनाला ॥
तबै वाम आँखी ते नीरा । बहनलग्यो मानहु भय पीरा ॥
दोउ द्विज देखि बहत दृगवारी । ह्वै उदास अस गिरा उचारी ॥
हम न लेब तनु भूपतिकेरा । यह करिहै नहिं कारज मेरा ॥
देत शरीर भयो दुख भारी । राजा वामनयन बह वारी ॥
लेत विप्र जो दुखभरि दाना । होतअहै तिहि नरक निदाना ॥
अस कहि विप्रदियो चल दोऊ । बरजत भे यद्यपि सब कोऊ ॥
तब बोले भूपति अस बानी । सुनहुविप्रदोउविनय प्रमानी ॥
तनुकी पीर बहै नहिं आंसू । और हेतु कछु करौं प्रकासू ॥

दोहा-दाहिन मेरो अंग यह, छिप्र विप्र हित लाग ।
वाम अंग यह है गयो, संयुत परम अभाग ॥

सो दुख रोवत बाईं आँखी । याको है यदुपति प्रभु साखी ॥
देखि धर्म वीरता भूपकी । हरिको खबर रही न रूपकी ॥

भये प्रगट तहँ दीनदयाला। चारिबाहु शोभित वनमाला॥
मणिमयमुकुट माथपै राजै। कोटिन भानुलखतजिहिलाजै॥
सजलजलदसमसुभगश्यामतन। पीतवसननव २ छबिछनछन॥
उर द्विजपद श्रीवत्स विभासा। अतिप्रसन्न मृदुहँसन विलासा॥
पकरि लियो आरा निजहाथा। धन्य धन्य कहयदुकुलनाथा॥
धर्मधुरंधर धीर प्रधाना। तुहिसमसुहिंप्रियजगनहिंआना॥
मनभावत वर माँगु भुवालू। बिना दिये सूखत मम तालू॥
हरिकर परस पाइ शिरघाऊ। भयो अरुज जसरह्यो सुभाऊ॥
भूपति सावधान करजोरी। कह्यो नाथ विनती यह मोरी॥
जो प्रसन्नहो दीनदयाला। तौ वरदेहु यही नँदलाला॥

दोहा—ऐसी औरे दासकी, कियो परीक्षा नाहिं।
आवत कलियुगघोर अब, नहिं दृढता तनुमाहिं॥

एवमस्तु कहि मुदित मुरारी। भूपतिसों पुनि गिरा उचारी॥
लेहु विप्र पार्थहुकर बाजी। पूरहु यज्ञ साजु सब साजी॥
तुम्हरे मखमें धर्म भुवाला। मानिहै आपन यज्ञ विशाला॥
तबै महीप मोरध्वज भाषा। अबनहिंनाथयज्ञअभिलाषा॥
जप तप यज्ञ योग फल जोई। दुर्लभ पाइगयो मैं सोई॥
जिहि हित योगी यत्न कराहीं। सो पायो बैठे घरमाहीं॥
अब सुत राज कोष परिवारा। लेहु सकल वसुदेवकुमारा॥
मोहिं देहु पदपंकजप्रीती। अबनहिं होय जगतकी भीती॥
एवमस्तु कहि कृपानिधाना। मिले महीपहिसुख न समाना॥
भूपति दै प्रदक्षिणा चारी। लै अपने सँगमें निज नारी॥
चल्यो विपिन सुमिरत गिरिधारी। भवसंभवसुखसुरति बिसारी॥
वन वसि करि हरिपदअनुरागा। दंपति गे विकुंठ बडभागा॥

दोहा-तब यदुपति पुनि ताम्रध्वज, राजासन बैठाइ ।
निजपदपंकजप्रीति दै, भवभय दीन छुड़ाय ॥
इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर मोरध्वज आख्यान
वर्णनो नाम द्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥

दोहा-विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिरिरामसुखदान ।
कहौं कथा श्रीभागवत, कछु ध्रुवचरित बखान ॥
सतयुगमें मनु नृपति विशाला । प्रजापाल अरु परमदयाला ॥
जिन जगमर्यादा बहु थापी । रह्यो नहीं जगमें कहुँ पापी ॥
मानवशास्त्र विचित्र बनायो । वेदनकर सब धर्म बतायो ॥
चलत सकलजग जासु अधारा । निजनिजकर्म निरत संसारा ॥
ताके दो सुत परम स्वरूपा । प्रियव्रत उत्तानपाद अनूपा ॥
प्रियव्रत राज कीन्ह बहुकाला । पुनि वनगवनो भजन दयाला ॥
भयो चक्रवर्त्ती महाराजा । नाम उत्तानपाद सुखसाजा ॥
कियो राज्यअतिनीति विचारी । रहैं धर्ममें सब नर नारी ॥
भूपतिके सुन्दर द्वै रानी । सुरुचिसुनीतिनामछबिखानी ॥
सुरुचितनय उत्तम अस नामा । सुत सुनीतिको ध्रुव मतिधामा ॥
सुरुचि सुहागिनि रही नरेशै । नहिं सुनीति पर प्रीतिविशेशै ॥
एकसमय नृप विशद अगारा । सचिव समेत बैठ दरबारा ॥
सुरुचि सुवन उत्तम तहँ आयो । नृप सहमोद गोद बैठायो ॥
इत सुनीति निजसुवन बुलाई । करि मज्जन भूषण पहिराई ॥
पहिरावो पुनि वसन रँगीला । दीन्हों भाल डिठौना नीला ॥
छोटिढाल छोटी तलवारी । छोटिधनुप अरु छोटि कटारी ॥
सुतहि साजि यहिभाँति पठायो । ध्रुव दरबार पिताके आयो ॥
किय प्रणाम चलि चटक तहाँहीं । पिता अंकलखि उत्तमकाँहीं ॥

दोहा—बैठनहित पुनि चलत भो, आयहु पितुके अंक ।
पंचवर्षको बालध्रुव, नोखा निपट निशंक ॥

कह्योसुरुचिकरिअरुणविलोचन। बैठहुमति पितुअंक सकोचन ॥
जन्मलियो नहिं उदर हमारे । जन गोद नहिं बैठनहारे ॥
मेरे उदर जन्म जो लेइत । तौ हम बैठनको कहिदेइत ॥
तपकरि मोर पुत्र तुम होहू । जनकअंककहँ तब अवरोहू ॥
सुरुचिवचन ध्रुव हृदय विशाला । भयेकुलिशसमकठिनकराला ॥
फिर्यो तुरत जननीढिग आयो । रोवनलग्यो महादुखछायो ॥
जननी कह्यो वच्छ कस रोवहु । अपनो दुख मोसों नहिं गोवहु॥
कहे बालसँगके खिलवारी ।सुरुचि जौनविधि वचनउचारी॥
अतिकलेशभर कह्यो सुनीती । पुत्र करहु रघुपतिपद प्रीती ॥
जो न अभागिनिके सुत होते । तौ काहे दुख पाते एते ॥
बिन हरि कोउ नहिं संकटनासी । भजहु जाइ सुतअवधविलासी॥
जिहि प्रभु राख गर्भमें लीन्हों । पानीके बुदबुद वपु कीन्हों ॥
गर्भदुःखके बाहर लायो । माताको जिहि क्षीर पियायो॥
पुनि सब अंक पुष्टकरि दीने । जन्मत मरत कर्म सँग लीने ॥
यह अपराधी ताहि न जानै । संकट परे तबै कछु मानै ॥
चौरासी लख योनिनमाहीं । भटकतफिरतलहत सुखनाहीं ॥
तिहिके ध्यान दुःख छुटजाई । ताते तिहि भजिये मनलाई ॥
विश्वरूप व्यापक भगवाना । ऐसीविधि जिहि वेद वखाना ॥
पद पाताल शीश अज धामा । अपरलोक अंगन्ह विश्रामा ॥
नयन सूर्य सबदिशा सुकाना । आश्विकुमार घ्राण जगजाना ॥
जीह अम्बुपतिवनजिहि केशा । मुखकृशानु दिनरैन निमेषा ॥
पवन श्वास बाहु दिग्पाला । रोमावलितरु विटप विशाला ॥

मायाहास नदी तनु नारी। अधरलोभ यमदशन उचारी ॥
पर्वत अस्थि शब्द बहुभोगा। सलिल वीर्यजानतबुधलोगा ॥
भृकुटि विलास काल कहिलावै। उदरसिंधु विराट मनभावै ॥
दोहा-अहंकार शिव बुद्धि अज, मन शशि चित्त महान।
व्यापरहो सब जगतमें, रूपराशि भगवान ॥ १ ॥
भजनविना सो नहिं मिलत, यह जानो निरधारि ॥
अस विचार सब शोच तज, भज सुत जाय मुरारि ॥ २ ॥
सुन अस वचन कहत ध्रुव वानी। तुम कत दुखी सुखी वहरानी ॥
याको भेद देहु समुझाई। रानी कह सुन सुत मनलाई ॥
पूर्वजन्ममें दान न दीना। सत्संगति हरिभजन न कीना॥
पूर्वजन्म अनुसार शरीरा। लह्यो सहत संकट अरु पीरा
नहिं जानत कस तुमसुत पाये। जो हरिचरणकमल मनलाये
हरि भजिये दुखनिकट न आवै। नहिं प्रारब्ध मिटै भुगतावै
कर्मरेख भुगतहिं सबप्रानी। राजा रंक धनी धनहानी ॥
हरिके भजन मिटत यह रोगा। नहिं प्राणी भुगतत बहुभोगा ॥
ताते तुम सुत ऐसे करहू। हरिके चरणकमल चितधरहू ॥
करहु प्रेम हरिदरशन पावो। जाते सब संकट बिसरावो ॥
इहिविधि माता ध्रुवहि बुझावा। उदय पुण्य पूरब है आवा ॥
दोहा-उठि माताके चरणलगि, कहन लगे तत्काल।
आज्ञा दीजे जाइ वन, भजिहौं दीनदयाल ॥
बोली मातु अबै तुम बारो। बहुसंवत जानि वन पगुधारो ॥
क्षुधा तृषा जब आनि सतावै। कौन तुम्हैं जलपान करावै ॥
शीत उष्ण वर्षा दुख भारी। ओढन और बिछावन डारी ॥
जीवजन्तु वन सिंह बराहा। इन्हैं निरखि उपजत भयमाहा॥

तुम बालक किहिविधिवनजैहो । वनके जीव निरख दुख पैहो ॥
बालक लखितुमपरसबधावहिं । तहँ उपायकरि कौन बचावहिं ॥

दोहा–सुनत वचन अस ध्रुव कह्यो, गयो कहां वह ज्ञान ।
अबहीं तें कहि ठौर सब, हैं रक्षक भगवान ॥

गर्भमाहिं जिनकी रखवारी । सो वनमें कह नाहिं मुरारी ॥
इमि कहि वचन सु ध्रुव तत्काला । निकसिचलोवनभजनगुपाला ॥
मंत्रिन खबर भूप पहुँचाई । तिन ध्रुवकोबहुविधिसमुझाई ॥
पर ध्रुवने मानी कछु नाहीं । भजनहेत चलिभे वनमाहीं ॥
मारगमाहिं देवऋषि मिलेऊ । कहां जात ध्रुवते अस कहेऊ ॥
को तव जननि जनकको नामा । हमसे कहो वसत किहिग्रामा ॥
कह ध्रुव माता पिता मुरारी । सोइ सब भाँति मोर हितकारी ॥
जोइ परिवार कुटुम सब जाती । पालत सृजत सोइ जगपाती ॥
जिहि ऐसे निजपितहि न जाना । भ्रमत फिरत दुखपावत नाना ॥
जगमें नामलेत जिहि प्रानी । सोउ मातुपितु कहहुँ बखानी ॥
नृप उत्तानपाद जिहि नामा । सो मम पितासकलगुणधामा ॥
प्रियव्रत जननि विमाता मेरी । मोसन वचन कहे अवहेरी ॥
मैं पितुअंक चढन जब लागो । निरखिमातहियअतिदुखपागो ॥

दोहा–तुरत पिताकी गोदसे, मोको दियो उतारि ।
कह्यो कि बैठे अंकमम, जन्मै उदर मँझारि ॥ १ ॥
मैं रोवत निज मातुढिग, गयो कह्यो समुझाय ।
पुत्र भजहु भगवानको, जन्म सफल होजाय ॥ २ ॥

मैं भगवान भजन अब करिहौं । प्रभुपदनिरखिसकलश्रमहरिहौं ॥
अब मुहिं ऐसो भेद बतावो । प्रभुपद प्रेमभक्ति दरशावो ॥
विनु हरिदर्शन मैं नहिं जैहौं । प्रभुकी रटनामें मन दैहौं ॥

तातें मुहिं हरिभक्ति पढ़ावो। कृपाकरहु गुरुमंत्र सुनावो ॥
मैं अतिबड़भागी मुनिराया। जो तुम्हार दर्शन शुभ पाया ॥
तातें अबजनि देर लगावो। करहु शिष्य मुहिं मंत्र बतावो ॥
नारद कह्यो बिहँसि रे बालक। विपिन जीवबहुमानुपघालक ॥
कृष्णभक्ति नहिं सहजहिं होई। कोटिनमहँ निबृती कोइ कोई ॥
सहजहिंमिलहिंनयदुकुलपालक। बीतत भजत जन्मबहुबालक ॥
वृथावैस नृप सुवन गमावै। यह प्रण छाँडिलौटिघरजावै ॥
मुनिवर कृपासिंधु यदुनन्दन। सुनिमुनिवचनकह्योनृपनन्दन॥
श्रीरघुपतिपद दुर्लभ देहै। को जब प्राण अवशि मम लैहै॥
बात तीसरी अब न मुनीशा। आज्ञा देहु धरौं पद शीशा ॥
बालक वचन सुनत मुनिराई। गद्गदकर दृगवारि बहाई ॥
है प्रसन्न निजअंक उठाई। चूमि वदन अस गिरा सुनाई ॥
धन्य धन्य बालक मतिधीरा। तुहिं मिलिहैं निश्चय यदुवीरा ॥

दोहा-पंचवर्षकी वैस तुव, कीन्हों अगम पयान।
अतिशय अटपट होतहै, क्षत्रिय कोप कृशान ॥

अम्नकहि ध्यान विधानबतायो। द्वादश अक्षर मंत्र सुनायो ॥
ठोंकि पीठि पुचुकारि बहोरी। कीन्हों बिदा सिद्धिकहितोरी ॥
मुनिवर पदमें धरि ध्रुव शीशा। पश्चिमचलो सुमिरि जगदीशा ॥
जौन विधान मुनीश बतायो। सोई करन लग्यो चित चायो ॥
करै यमुन सादर अस्नाना। पूजै हरि कहँ सहित विधाना ॥
तीनि तीनि दिन माँह कुमारा। कैथा बदरी करै अहारा ॥
प्रथम मास यहिभाँति बितायो। द्वितियमासपुनिहरिचितलायो॥
पट पट दिनमें पत्र पुराने। किय अहार महि झरे झुराने ॥
त्रितिय मास नवनव दिनमांहीं। किय केवल अहार जलकांहीं ॥

द्वादश द्वादश दिवस बिताई । मारुत भख्यो भजत यदुराई ॥
यहिविधि चौथो मास बितायो । मास पाँचयों जब पुनि आयो ॥
तब दशद्वार इन्द्रियन रोकी । हृदय मुकुंदरूप अवलोकी ॥

दोहा–खडो भयो इक चरणसों, अचल रोंकि निजश्वास ।
हृदय कमलमहँ थापिकै, मूरति रमानिवास ॥

कृष्णदास जब श्वासहि रोका । रुकी श्वास तबहीं त्रैलोका ॥
पुहुमी भारपाय ध्रुवपाऊ । दबी एकदिशि जिमि गजनाऊ ॥
सुर नर नाग उठे अकुलाई । काहुहि भेद न पन्यो जनाई ॥
विघ्नकिये देवन अधिकाई । भाँति अनेक अप्सरा गाई ॥
औरहु विघ्न भये तहँ नाना । तद्यपि अचल रह्यो ध्रुवध्याना ॥
कृष्णशरण गे त्रिभुवनवासी । कहे पुकारि त्राहि अविनासी ॥
त्रिभुवन भयो श्वास अवरोधा । नाशतत्रिभुवन को अस योधा ॥
देववचन सुनि कृपानिधाना । कह्यो भेद हमरो सब जाना ॥
भूपतितनय नाम ध्रुव जासू । भजनकरत मेरो मम दासू ॥
तिहि तपतेज रुद्ध जगश्वासा । किये कुमार मिलन ममआसा ॥
हौंतौ जाय दरश अब देहौं । तासु सकल मनशोक नशैहौं ॥
असकहि महामुदितमन स्वामी । सहितपारषदगण खगगामी ॥
आयो दिशाप्रकाश बढावत । रह्यो भूपबालक जहँ ध्यावत ॥
अचल खडो हिय हरिवपु देखै । हरिबिन और कछू नहिं लेखै ॥

दोहा–खडेभये सन्मुख हरी, लख्यो तिन्हैं सुकुमार ।
तब अतिअचरज मानि उर, लागे करन विचार ॥

धन्य धन्य नृपबालक येहा । किये निरन्तर ममपद नेहा ॥
मम मूरति अपने मन राखी । देखत मुइ खोलतनहिं आँखी ॥
अस विचार ध्रुव उर निजरूपा । अन्तरहित हरि कियेअनूपा ॥

चौंकिउठ्योचट चखनउघार्‌यो। सोइ वपु सन्मुखखरो निहार्‌यो ॥
बहन लगी दृगते जलधारा। महामोद महँ मगन कुमारा ॥
अनमिषचितवतकृष्ण स्वरूपा। मानत भयो भुवनकर भूपा ॥
मुखतैं सकल न गिरा उचारी। छक्यो सुछवि मूरति मनहारी ॥
उतरि गरुड़ते यदुपति धायो। ध्रुव उठाय निजहिये लगायो ॥
शीश सूँघ मुख चूमि मुरारी। बोल्यो वचन बहावत वारी ॥
भूप तनय मम प्राणपियारो। तैं अनन्यहै दास हमारो ॥
मांगु मांगु मनको वरदाना। तोर मनोरथ पूर निदाना ॥
मुखवशध्रुवहिसकलसुधबिसरी। कछुक बात मुखते नहिं निसरी॥

दोहा—अस्तुति चाहत करन कछु, पंचवर्षको बाल ।
पै न बनत रचना करत, यह जानी गोपाल ॥

पञ्चजन्य प्रभु शंख अमोला। दीन्हों परसकराइ कपोला ॥
शंखहि परसत वेदपुराणे। सकलशास्त्र ध्रुवहृदय समाने ॥
लाग्यो अस्तुति करन कुमारा। जय जय जयप्रभु कृपाअगारा ॥

दोहा—अखिलशक्ति धारक रहे, मेरे हियमें आय ।
मेरी वाणी कर कृपा, सोवत दीन जगाय ॥

इन्द्रिय करन चरण श्रवणादी। तिनको चेतन करहु अनादी ॥
पुरुष पुराण नाथ श्रीधामा। आपपगनको करहुँ प्रणामा ॥
एकहि तुम माया विस्तारिके। रचिके जग प्रवेशतिहि करिके ॥
देखिपरहु बहु वपु भगवाना। विविधदारु जिमि पावक नाना॥
करतारहुँ हे शरन तिहारे। ज्ञान शक्ति लहि जग विस्तारे ॥
पर्‌यो न श्रम सोवतसमजाग्यो। जगत विकार ताहि नहिंलाग्यो॥
ऐसे आप चरण भगवाना। को कृतघ्न जो धरे न ध्याना ॥
जन्म मरणके नाशनहारे। दासनके दुख दारनवारे ॥

दोहा—ऐसे तुमको जे कुमति, भजैं विषय सुखहेत ।
ते जनु सुर द्रुमनिकट चलि, माँगि वराटकलेत ॥

शूकर कूकर योनिहु नाना । होत विषयसुखमनुज समाना ॥
मनुजजन्मलहितुमहि न ध्यायो । सोइ शूकर कूकर कहवायो ॥
जो सुख आप कथामहँ नाथा । सुने आप दासनकी गाथा ॥
सो सुख ब्रह्मज्ञानपहँ नाहीं । तौ सुरसुख किहिलेखे माहीं ॥
कठिन कालकरबालहि लागे । कटै स्वर्ग सुखतरु जिहि माँगे ॥
भक्तिमान जे साधु तुम्हारे । निर्मल मन दायक उरधारे ॥
नाथ देह ध्रुहिं तिनकर संगा । अघगण हरणहार जिमि गंगा ॥
यह भवसागर घोर अपारा । यहिविधि सहजहि लगिहौं पारा ॥

दोहा—आप कथा आसव पियत, तासु न शांत न छाय ।
मैं फिरिहौं अतिशयअभय, दुख सुख सब बिसराय ॥ १ ॥
जे तुव पदपंकज सुरभि, घ्राणकरत लवलीन ।
तिनको सँग जे करहिं जन, तेई परमप्रवीन ॥ २ ॥

तनु सुत सुहृददार गृहमाहीं । ते कबहूँ सुधि राखत नाहीं ॥
यह ब्रह्माण्ड स्वरूप तुम्हारा । स्थूलरूप जिहि वेद उचारा ॥
अहै चराचरकेर निवासा । सत अरु असतहुजासु प्रकाशा ॥
आपरूप हम जानहिं सोई । ब्रह्मरूप परतो नहिं जोई ॥
ब्रह्म रूपमें है बहुवादा । होत विवादहि किये विषादा ॥
प्रलय समय धरिउरजगकाहीं । सोवहु शेष सेज सुखमाहीं ॥
प्रगटत नाथ नाभिजलजाता । ताते प्रगटत सदा विधाता ॥
जाके हैं फल बृहद हजारे । शेष सखा ते नाथ तिहारे ॥

दोहा—ऐसे यदुवर आपको, हम सब करहिं प्रणाम ।
कोटि जन्मअघ नशत द्रुत, लेत तिहारो नाम ॥

तुम हो नित्य मुक्त भगवाना। ज्ञानरूप हो शुद्ध सुजाना ॥
आदिपुरुष हौ अन्तर्यामी। अविकारी हौ त्रिभुवन स्वामी ॥
अहो जगतके पालनकरता। जगतविलक्षणजनसुखभरता ॥
त्रिविध शक्ति है यदपि विरुद्धा। रहहि तदपि तुवमहँ अविरुद्धा॥
एक अनेक आदि जगकारा। आनँदरूपी सदाऽविकारा ॥
सो प्रभुके शरणागत होहूं। तारहु अगन अवीसम मोहूँ ॥
केवल केशव पदअरविंदा। भजहिं जे जन ते नहिंमतिमंदा॥
त्रिभुवनविभव भोग सब जेते। तिनहिं तुच्छ लागत सब तेते॥

दोहा-पूरण फल तिनको अहै, सेवत तुव पदकंज।
तदपि दीन मम दासको, करहु नाथ भवभंज ॥ २ ॥
जिमि जननी निजबालके, गनत न कछु अपराध।
तिमि क्षमियो अपराध मम, केशव कृपाअगाध ॥ ३ ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ग्रंथउजागर ध्रुवस्तुतिवर्णनो नाम त्रयोविंशोऽध्यायः ॥ २३ ॥

दोहा-विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिरि राम सुखदान।
कहौं कथा श्रीभागवत, पुनि ध्रुवचरित बखान ॥

करि अस्तुति किय दंडप्रणामा। पुनिकरजोरिकह्यो मतिधामा ॥
अपनो मैं सरवस प्रभु पायो। यह मूरति छबि हों दृगछायो ॥
और न आश कछू मनमाहीं। यह मूरति हिय बसे सदाहीं ॥
तुमहिं पाय याचत संसारा। सो प्राणी मतिमंद गँवारा ॥
बिहँसि कह्यो तव कृपानिधाना। लेहु भूप तुम अस वरदाना ॥
छत्तिस सहस वर्ष महिकांहीं। शासन करो मुदित जगमांहीं ॥
पुनि मैं निज पार्षदन पठैहौं। यानचढाय विकुण्ठ वसैहौं ॥

धर्म धुरन्धर धरणि अधीशा । नैहै तोहिं सुरासुर शीशा ॥
मेरो रूप चक्र शिशुमारा । जामें सकल बँध्यो संसारा ॥

दोहा—सो तेरे करपर रही, ह्वैहै तासु अधार ।
सबके ऊंचे धाम जो, तापर वास तुम्हार ॥

असकहि औरहु दे वरदाना । प्रभु विकुंठको कियो पयाना ॥
ध्रुवहु भवन निज चला सुखारी । सुमिरत रमारमण गिरिधारी ॥
जब प्रयाग कहँ ध्रुवनियरान्यो । पै न उतानपाद नृप जान्यो ॥
दूत दौरि इक कह्यो भुवालै । निकरि गयो आवत सो बालै ॥
सुनि नृप ताहिदियोमणिमाला । चल्यो लेन आगू तिहिं काला ॥
सुरुचि सुनीतिचलीं दोउ रानी । चल्यो उत्तमहुअतिसुखमानी ॥
निरखिध्रुवहि भूपति द्रुतधायो । ललकिलपटिनिजहृदयलगायो
भयो मोद मनमिटी गलानी । लही फणिकमणिमनहुँहिरानी ॥
प्रथमसुरुचि कहँ ध्रुवशिरनायो । सकुचि सोसादर हियेलगायो ॥
पुनि उत्तमहिं कियो परणामा । मिल्योसोउभरिभुजनिललामा ॥
वंद्यो बहुरि जननि पदकाहीं । ताकर मोद जात कहिनाहीं ॥
हरिदाहिन दाहिन सब ताके । हरिविमुखी विमुखीवसुधाके ॥

दोहा—यहिविधि मिलि ध्रुव पितुसहित, आयो अमल अवास ।
पुरजन परिजन ध्रुव निरखि, माने पूरी आस ॥

ध्रुव ग्रहवसत बित्यो कछुकाला । तब उत्तानपाद महिपाला ॥
शील स्वभाव बुद्धि बल वेखा । अनुपम ध्रुव कुमारके देखा ॥
परिजन पौर सचिव सरदारा । ऐस सबै बोल्यो दरबारा ॥
भूपति कह्यो चौथ पन आयो । कानन गवन मोर चितचायो ॥
उत्तम ध्रुव कुमार मम दोई । संमत करै जाहि सब कोई ॥
ताकर राजतिलक करि देऊं । सुनहु मोर मनको अस भेऊ ॥

बुधि वीरता विवेक बड़ाई । सकल भाँति ध्रुवकीअधिकाई ॥
ध्रुव सब भाँति राज्यके योगू । यहिविधि जानहु मोर नियोगू ॥
भूपवचन संमत सबकीने । राजतिलक ध्रुवकूं करिदीने ॥
भूप गये कानन तपहेतू । ध्रुवकिय राज समाज समेतू ॥
जापर दाहिन राम कृपाला । दाहिनताहि जगत सबकाला ॥
उत्तम चढि इक समय तुरंगा । मृगयाहित गो शैल उतंगा ॥

दोहा-मिल्यो यक्ष यक विपिनमहँ, ताते भो संवाद ।
सो उत्तमकहँ वध कियो, जिमि लघुअहि उरगाद ॥

लौटि भवन उत्तम नहिं आयो । जननी तासु महादुख पायो ॥
हेरनगई विपिन सुतकाँहीं । जरी दवानल माँहिं तहाँहीं ॥
ध्रुवसों कह्यो देवऋषि आई । यक्ष हाथ हतिगो तुव भाई ॥
सुनत कियो ध्रुव कोप कराला । चढ्यो तुरतरथरुचिरविशाला ॥
चल्यो अकेल यक्ष पुर बीतै । रामकृपा ध्रुव परम अभीतै ॥
अलकापुरी निकट तब आयो । समर उछाही शंख बजायो ॥
कोटिन यक्ष सो सुनि २ धाये । ध्रुवपै अमित अस्त्र झरिलाये ॥
यक्ष सहाय रुद्रगण जेते । लगे करन ध्रुवसों रण तेते ॥
कियो तहाँ संगर अतिघोरा । अगणित यक्ष एक नृप छोरा ॥
धर्म धुरन्धर धरणि अधीशा । ध्रुवकरादियो सबन बिनशीशा ॥
हाहाकार करत सब भागे । माया करन फेरि बहु लागे ॥
शस्त्रमार मूँद्यो ध्रुवकाहीं । हरिबल ध्रुव शंका कियनाहीं ॥

दोहा-तब नारायण अस्त्रको, ध्रुव कीन्हों संधान ।
जारि यक्ष कोटिन तबै, भर्‌यो प्रकाश दिशान ॥

रणतजि गये जरत जे बाँचे । पुनि न समर कहँ ते मनराँचे ॥
यक्ष नाश लखि मनमहँ राजा । ध्रुवहि आय कह सहित समाजा ॥

अबनहिं यक्षनको वध कीजे। नाती गवन भवन मन दीजे॥
पुनि धनेश कह ध्रुवसों आई। तुमपै हम प्रसन्न नृपराई॥
यक्ष न हन्यो तोर बडभ्राता। नहिं यक्षन तैं कियो निपाता॥
जविन मरण कालवश जानो। आनहेतु याको नहिं मानो॥
माँगहु मन वांछित वरदाना। तुमपर हैं प्रसन्न भगवाना॥
बिहँसि कह्यो ध्रुव सुनहु नरेशा। हम नहिं मांगत छोंडि रमेशा॥
मांगहु तुम जो हो अभिलाषा। हम पूरण करिहैं सुख भाषा॥
जो वरदेहु मोहि बरियाई। हरिपद मम उरबसैं सदाई॥
एवमस्तु कहि गयो धनेशा। ध्रुवआयो यशपाय निवेशा॥
छत्तिस सहस वर्ष कियराजू। भाइन भृत्यन सहित समाजू॥

दोहा–यहि प्रकार हरिभजनमें, तत्पर ध्रुव बडभाग।
सेवत साधु बितैं दिवस, नित नव नव अनुराग॥

जानि वृद्धपन सुतदै राजू। गवन्यो विपिन भजत यदुराजू॥
तब पार्षदद्वै नन्द सुनन्दा। ध्रुवहि लेन पठयो गोविन्दा॥
लै भाषित विमान दोउ आये। ध्रुवहि नायशिर वचन सुनाये॥
चलो भूप तुहिं नाथ बुलायो। सुनिध्रुवतिनहिंसुखितशिरनायो॥
चढे विमान बजाइ निशाना। हर्षित कियो विकुण्ठ पयाना॥
मारगमें कह दासन पांहीं। मम माता रहिगे महि मांहीं॥
बिन तुहिं को ताको लै जैहै। बिनहरिको संसार छुटैहै॥
बिहँसि कह्यो हरिदास नरेशै। मतिकीजे ऐसो अंदेशै॥
जाके तुम सम भयो कुमारा। ताको कौन उधार विचारा॥
देखहु आगे आँखि उठाई। चढी विमान जाति तुव माई॥
आगे जाति निरखि निज माता। ध्रुव वंद्यो हरिपद जलजाता॥
जहँजहँ ध्रुव गमनत सुरधामा। तहँ तहँके सुर करत प्रणामा॥

दोहा-यहिविधि गये विकुंठ जब, हरिआगे चलिलीन ।
अचल धाम वैकुंठको, उत्तर द्वारो दीन ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ग्रंथउजागर ध्रुवचरित्र वर्णनो नाम चतुर्विंशोऽध्यायः ॥ २४ ॥

दोहा-विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिरि राम सुखदान ।
श्रीनरसिंह पुराणकी, कहुँ इतिहास बखान ॥
द्वारपाल हरिके प्रिय दोई । जय औ विजय जान सबकोई ॥
हरिमंदिर वैकुण्ठ मँझारी । किये रहत ताकी रखवारी ॥
एक समय सनकादि कुमारा । हरिदर्शनके हित पगुधारा ॥
जानलगे मंदिरके भीतर । दोउजनद्वारिकहतभे रिसकर ॥
प्रथमै हरिको आयसु लेहू । पाछे मंदिरमहँ पगुदेहू ॥
सुनि अस शापदीन्ह मुनिभारी । तीन जन्मतक होउ सुरारी ॥
सुनिअसविनयकीन्ह तिनभारी । तब मुनि ऐसी गिरा उचारी ॥
समरमरण हरिहाथ तुम्हारा । हुइहो मुक्त न पुनि संसारा ॥
बादसुनत हरि आतुर धाये । रमासहित तितही चलिआये ॥
बोले इन कीन्हों अघभारी । कियोभलीविधि दण्डप्रचारी ॥
दोहा-सनकादिक कह हम कियो, निश्चय अति अपराध ।
इन पालो निज धर्मको, हे प्रभु कृपा अगाध ॥
कह जय विजय दोष इन नाहीं । यह सब कर्मनके फल आहीं ॥
जो जस करहि फलै सो आई । दण्ड अनुग्रह सम हम पाई ॥
सुरहेलन प्रभु आज्ञा हानी । सोइफल पापभयो दुखदानी ॥
सो सब दीन्हों पाप बहाई । शापदेइ सुनिये मुनिराई ॥
यहवर दो जन्मैं जहँ जाई । तहँ प्रभुनाम न बिसरनपाई ॥
मंदयोनिकर दुख कछु नाहीं । केहु विधि सुमिरणहोयसदाहीं ॥

सुनत वचन मुनिचार लजाने। हरि तिन बहुत भाँतिसनमाने॥
मम इच्छासे सब यह भयऊ। तुमकत शोच वृथा मनदयऊ॥

दोहा-तुम्हरे वचनहिं मानकर, मैं करिहौं उद्धार।
तीनजन्ममें मुक्तहो, पुनि आवें मम द्वार॥

असकह प्रभु मुनि मंदिर लाई। बहुत भाँति सत्कार जनाई॥
ब्रह्मलोक पुनि मुनेय सिधाये। जयअरुविजयअसुरतनुपाये॥
हिरण्याक्ष इक महाप्रतापी। दूसर हिरनकशिपु सन्तापी॥
हिरण्याक्ष किय भू अधिकारी। देवनको दुख दीन्हें भारी॥
धारि वराहवपु श्रीभगवाना। हिरण्याक्ष वाध कियोमहाना॥
सो वाराहपुराण मँझारी। कथालिखी करकै विस्तारी॥
मैं प्रह्लाद कथा सुखदाई। भाषत हौं सुनिये मनलाई॥

दोहा-अब वरणौं प्रह्लादकी, कथा मनोहर जोइ।
जासु सरिस नहिं भक्त कोउ, कहहिं संत सब कोइ॥

दितिसुत दैत्य उभय बलवाना। हिरनकशिपु हिरनाक्षमहाना॥
हिरण्याक्ष वध सुन असुरारी। तपकी इच्छा मनमें धारी॥
काननकियो जाइ तपभारी। ह्वै प्रसन्न भाष्यो मुखचारी॥
मांगु मांगु दानव वरदाना। तो समकियो न कोउतपआना॥
असकहि छिरकि कमंडलु नीरा। कियो तासु अति पुष्टशरीरा॥
मांग्यो वर असुरेश विचारी। तुव कृतसृष्टि न मीचु हमारी॥
एवमस्तु तब विधि कहि दयऊ। दानवजीति सकल सुर लयऊ॥
जब दानव निकस्यो तपहेतू। तब सब सुरबांध्यो असनेतू॥
दानव निलै लूटि सब लीने। असुरन हनिनिकासि सबदीने॥
हिरनकशिपुकी जो इक नारी। लैसुरपतितिहिचल्योसिधारी॥
नारदमिले आइ मगु माहीं। गर्भवती देख्यो तियकाहीं॥

काकारिहौ पूछ्यो मुनिनाथा । कह्यो सुरेश जोरि युगहाथा ॥
याके गर्भमाहिं रिपु मोरा । ताको वध करिहौं यहि ठोरा ॥

दोहा-मुनिहि दया उपजी अतिहि, सुरपतिको समुझाय ।
लै गमन्यो निजसंगतिय, निज आश्रममें आय ॥

नारीउदर भागवत जानी । किय उपदेश ज्ञानविज्ञानी ॥
जब तपकर लौट्यो असुरेशा । तब पुनि जाय तुरंत निवेशा ॥
पुत्रसहित नारीकहँ दीन्हों । असुर अदोष मानि लैलीन्हों ॥
महाभागवत सो प्रह्लादा । सज्जनको दायक अह्लादा ॥
त्रिभुवनजीतिअसुर जब आयो । बालकनिरखिपरमसुखपायो ॥
कविसुत असुर चंस गुरु आमा । षंडामर्क रह्यो अस नामा ॥
कह्यो असुरपति तिनहिं बुलाई । मोबालक कहँ देहु पढ़ाई ॥
षंडामर्क बोलि प्रहलादै । लगे पढावन आसुर वादै ॥
पढै न बाल रटै मुखरामा । करै गुरू शिक्षण वसुयामा ॥
नीतिशास्त्र जब गुरू पढावै । तब प्रह्लादहि ताहि सिखावै ॥
नीतिशास्त्र मन तुमहुं न देहू । करहु रामपदपंकज नेहू ॥
विहँसे गुरु सुन बालक बानी । सिखवैमोहिं शिष्यजनुज्ञानी ॥

दोहा-कह्यो वचन तब शुक्रसुत, अस न पढहु सुख लेषि ।
जो सुनिहै दानवअधिप, तो कोपिहै विशेषि ॥

असकहि आसुर विद्या केरो । दियो पाठ गुरुसहित निवेरो ॥
गयो अनत गृह कारज हेतू । बालक बोलि तबै मतिसेतू ॥
लग्यो सुनावन कृष्ण प्रभाऊ । नवधा भक्ति सुधर्म सुभाऊ ॥
वहुरि बालकन कह्यो कुमारा । स्वप्न सरिस जानहु संसारा ॥
बिनुहरिभक्ति न मंगल होई । सत्य सत्य जानहु सब कोई ॥
छीजत क्षण क्षण आयुदाया । कोटिनादियेनपुनिकोउपाया ॥

जे क्षण कृष्ण भजनमें जैहैं। तेई सकल सफल हठि ह्वैहैं॥
हरिके होहु अनन्य उपासी। तब पैहौ बालक सुखरासी॥
नतो जियत भोगिहौ कलेशा। मरे पाइहो दंड विशेषा॥
राम कृष्ण गोविंद मुरारी। रसना रसनि यही सुखकारी॥
कालव्याल वागत सब शीशा। परे न जानि करत का ईशा॥
मायामोहित जीव अनेका। करत नकछुजगमोहिविवेका॥

दोहा–जो सुख सम्पति साहिबी, करन चहौ दुहुँ लोक।
तौ अनन्य रघुवर वचन, भजहु बाल बिन शोक॥

सुन प्रह्लाद वचन भ्रमघालक। राम भजन लागे सब बालक॥
षंडामर्क बहुरि पुनि आये। देखि दशा अतिशय दुख पाये॥
बोले सकल बालकन भाषी। यह का पढहु सबै सुख भाषी॥
कौन सिखायो तुम्हैं कुनीती। मानहु नाहिंमोहिं कछु भीती॥
बोले बालक एकहि बारा। इनहिं सिखायो भूपकुमारा॥
तब प्रह्लादहि कह्यो रिसाई। यह विद्या तुहिं कौन सिखाई॥
तब प्रह्लाद कह्यो मुसुकाई। राम प्रसाद गुरू हम पाई॥
तुमहुँ भजो हरि दीनदयाला। वृथापरे जगके जंजाला॥
बहुरि कह्यो गुरु जो हरि कहिहै। तौ परचंड दंड शिशु लहिहै॥
कह्यो सकल बालकन बहोरी। जो हरि कही त्रास तिहि मोरी॥
अस कहि गृहकारजहित गयऊ। पुनि प्रह्लादकहत अस भयऊ॥
करहि गुरूविद्या हित भासा। तुमहिं न दंड देनकी आसा॥
देखहु तुम निज हृदय विचारी। चार खान उपजत तनुधारी॥
अण्डज अण्डेते जन्माहीं। पिण्डज गर्भनते प्रगटाहीं॥
स्वेदज श्रमसीकरते होई। उद्भिज वारिसंगते सोई॥
भ्रमत जीव बहुयोनि मँझारी। कहि न जाहिं दुखप्रापत भारी॥

पाप पुण्य जब होय समाना । तब नरतनु पावत सुखदाना ॥
सो आवत पहले जलमाहीं । बहुरि अन्नमें जान सदाहीं ॥
जाके भवन जन्म संयोगा । सो सोइ अन्न करतहै भोगा ॥
तिहिते रस रससे सुखकारी । एक मासमें वीर्य निहारी ॥
सो युवतीमें आहुति पाई । बसत गर्भमें प्राणी आई ॥
रज वीरज कर लहि संयोगा । पँचयें दिन बुद्बुद उठि योगा ॥

दोहा—सतवेंदिन फेना उठत, दशौं पिण्ड बलबीश ।
मासदिवसकी अवधिमें, निकसन लागत शीश ॥ १ ॥
उभयमास भुज जंघ लखि, तीसर उदर लखाय ।
मास चतुर्थहि अंगुरी, कच रोमा दरशाय ॥ २ ॥
पंचम छठये मासमें, हाड मांस त्वच होय ।
सप्तम पूरे मासमें, गर्भ जु पूरो सोय ॥ ३ ॥
अष्टम श्वासावाकयुत, चेत होतहै ताय ।
सुधि आवत शतजन्मकी, शिरधुनिधुनि पछिताय ॥ ४ ॥
नवमें शिर नीचेकिये, मलविष्ठा कृमिवास ।
पऱ्यो रहत दुखपाय अति, मेटि सकै को त्रास ॥ ५ ॥

तब यह हरिकी शरण पुकारै । अहो देव कीजै उद्धारै ॥
दीनदयालु विरद संभारी । हरहु आज मम संकट भारी ॥
अबके जो बाहर मैं जाऊं । तौ भरिजन्म आप गुणगाऊं ॥
शौनक चारि ठौर यह प्रानी । बनै दुःख लहि पूरो ज्ञानी ॥
गर्भमाहिं शवके तटमाहीं । कथामध्य रति अन्त सदाहीं ॥
विनय सुनत तब कृपानिधाना । पवन चलायहु बाहर आना ॥
बाहर आय सु भूलो ज्ञाना । भूलि गई मति जगत भुलाना ॥
पितु शुक अधिक कुमर हुइ आना । रज अतिशय कन्या तनु पाना ॥

रज वीरज दो भये समाना। भयो नपुंसक सो जगजाना ॥
कर्मनुसार भोग सुख दुखकर। संचित प्रारब्ध क्रियमानर ॥
इनके तुल्य सदा तनु पावै। कुछ बढाय पुनिकछु भुगतावै॥
दोहा-इहिविधि लीन्हों जन्म ग, बोल सक्यो नहिं बैन।
जब आयो कछु चेत तब, रोवन लगो अचैन ॥ १ ॥
पितु महतारी मुदित भे, नामकर्ण पुनि कीन।
विष्ठामूत्रपरे रहत, क्रियाहीन मतिहीन ॥ २ ॥
मात पिता कछु भेद न जानै। किहिहित ममशिशुरोदनठानै॥
यहिविधि बालक भयो कुमारा। पढि कछु खेल कूद मनधारा ॥
माता कहत बढो मम वारो। नहिंजानत घटगयो सवारो ॥
पापकुमार अवस्था कीन्हें।पुनिविवाहकारितियमतिभीन्हें॥
तरुणाई कामागिनि जागी। वनितानेह रही लव लागी ॥
सूखहाडचाबत जिमि श्वाना। पियतरुधिरनिजपरतनजाना॥
तिन तनुतोरत गै तरुणाई। चालिसगये प्रौढ़ता आई ॥
पुत्र-सुताके दुखमें पागो। तिन पालनकी चिन्ता लागो ॥
धनहित करन लगो अघ नाना। जानत नहिं मरि यमपुर जाना॥
भजै न हरिहरिजन गुणलीला। कहै न सुनै मुदित मनशीला ॥
दोहा-बातनमें गो वृद्धपन, जरा आय नियरान।
दाँतगिरे सब बलगयो, डगमग पाँव पिरान ॥
दृग जलजात खाँसिहै भारी। खाट दुआरे दीन्हीं डारी ॥
क्षुधा तृषा जब आन सतावै। माँगत रहै कहां कोउ लावै ॥
घरके कहत मरत क्यों नाहीं। का यमराज बिसारिगये याहीं ॥
जिनके हित परलोक बिगारो।तिनसत्रजियतहिकीन्हकिनारो॥
इहिविधि मृत्यु आय लिय मारी। तनुले यहिपुर बाहर जारी ॥

दूतगये यमानिकट बुलाई । नरकमाहिं तिन दियो डराई ॥
बिनहरि भजन जियतदुखपायो । अन्तसमयहू नरक मँझायो ॥
इहिविधि भ्रमत फिरै चौराशी । कबहूँ नाहिं भजै अविनाशी ॥
नरतनु पाय भजै हरिनाहीं । आतम हति ते नरक मँझाहीं ॥
तिहिते नरक छोडि सब ताता । भजहु सदा हरि हर सुरत्राता ॥
बिनु हरिभजन तरिय जगनाहीं । यह सिद्धान्त गुणहु मनमाहीं ॥

दोहा-कहँ बालक यह ज्ञान तुम, पायो कहां बताव ।
हमरे तुम्हरे जन्मके, एकै संग प्रभाव ॥ १ ॥
कह प्रह्लाद पितागये, जब वन तपके काज ।
तब संगरकर लूटिगृह, मातहि गहि सुरराज ॥ २ ॥

तिहि अवसर नारद तहँ आये । कहे इन्द्रसे वचन सुहाये ॥
यहिके उदर भक्त भगवाना । देवन हितकारक सुखदाना ॥
याते नारि छाँडि यह दीजै । इतना कहा इन्द्र मम कीजै ॥
ताहि त्यागिकै शक्र सिधाये । नारद ताहि भवनलै आये ॥
दिये विविध मातहि उपदेशा । किये दूरतिहि कोटि कलेशा ॥
कह्यो जाहि ध्यावत सब देवा । विविधभाँति सों लावहिं सेवा ॥
मात पिता सुत बंधु अपारा । यह सब डारतहैं संसारा ॥
मृगतृष्णा सम धावत प्रानी । कबहूं नहिं बैठत सुखमानी ॥
जब हरि भजै सबै बिसराई । तब कहुँ शान्ति मिलैसुखदाई ॥
इहिविधि माताको समझायो । तब ताको मन सुखमहँ आयो ॥

दोहा-सो प्रसंग सब मैं सुन्यो, माताउदर मँझार ।
सोइ ज्ञान तुमसे कह्यो, मनमें करो विचार ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ग्रंथउजागर प्रह्लादज्ञान-कथनोनाम पंचविंशोऽध्यायः ॥ २५ ॥

दोहा—विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिरिरामसुखदान ।
पुनि प्रह्लादचरित्रकी, कहुँ इतिहास बखान ॥
सुनि प्रह्लादवचन सब बालक । भजन करनलागे जगपालक ॥
बोले तुम भलि बात बताई । नहीं भजनसें कछु अधिकाई ॥
हम तुम्हरी क्या करैं बडाई । जीवदानदे हमैं जिवाई ॥
तुम समान नहिं कोउ उपकारी । अब हमहैं सब शरण तुम्हारी ॥
यह संसार अपार कहायो । याको कोउ पार नहिं पायो ॥
यामें हरिको भजन सहारा । सो कहि तुम कीन्हों निस्तारा ॥
कह प्रह्लाद बात सब साँची । तेसमुझत जिहि प्रभुमतिराँची ॥
यहि भवतरन उपाय न कोई । नौका हरिके पग मृदु दोई ॥
सो सुख लहै चढै जो या पर । नातरु उछरत डूबत दुखभर ॥
मैं क्याकहूं शास्त्र सब भाखै । जिहितिहिविधिहरिपदमतिराखै
तुमसे अनुभव कहौं सुनाई । सावधानहो सुनिये भाई ॥
कौनहु जन्म जाय यह प्रानी । ह्वै है नहीं कबहुँ दुखहानी ॥
जब सुमिरै हरिको मनलाई । जीवन मरन तुरत कटिजाई ॥
दोहा—जो करिहो तुम हरिभजन, तो प्रसन्न गुरुहोइ ॥
मोसों कह एकान्तमें, अस जानहु सबकोइ ॥
कृष्णभजन पावहु जो दंडा । तौ हम जामिनहैं वरिबंडा ॥
गुरु अभिलाष मोरिभरिजानी । तुमहिं अजान गुणतगुरुज्ञानी ॥
सुनि प्रह्लाद वचन यहि भाँती । लगेभजनपुनि हरिदिनराती ॥
गुरू आइ अस दशा निहारी । हायहाय कहि भयो दुखारी ॥
गहि प्रह्लाद पाणि तिहिकाला । लैगवन्यो जहँ असुरभुवाला ॥
देखि पुत्रको दानवराई । लीन्हों मुदित अंक बैठाई ॥
कहो पढा जो पढहु कुमारा । तबै वचन प्रह्लाद उचारा ॥

कृष्णभक्ति पितु पढ़ी हमारी। जो भवकानन दहन दवारी ॥
शत्रु मित्र है कोउ जगनाहीं। व्यापित रामसकल जगमाहीं ॥
कठिन कराल अहैं संसारा। बिन हरि भजे न होत उबारा ॥
पिता त्यागि तुमहूँ जग आसा। होहु राम पदपंकज दासा ॥
बाल वचन सुन दानवराई। मानि मृपा मन हँस्यो ठठाई ॥

दोहा-षंडामर्कहि पुनि कह्यो, को मम रिपु जन आय।
सिखयो मेरे पुत्रको, एकान्तहि लैजाय ॥

लै बालक गमनहु गृहकाहीं। सावधान अब रहहु सदाहीं ॥
कोउ बालकहि न सिखवनपावै। करि छल तहँ निजदूत पठावै ॥
नृपति वचन सुन गुरु गहिबालै। गये बहुरि मोदित निज आलै ॥
लगे पढावन आसुर विद्या। जाहि वेद सब कहत अविद्या ॥
सुनि गुरुपाठ कहै मुसुकाई। रामकृष्ण यदुपति यदुराई ॥
सुनि अस वचन गुरूअति मापैं। कहा बकत रे शिशु असनापैं ॥
गृहकारज हित जब गुरु गवनै। कहहिंशिशुन सुमिरोसियवरनै ॥
पावहिं पढ़न न आसुर ज्ञानू। तमनहिंप्रविशअछतजिमिभानू ॥
यहि प्रकार बीत्यो कछु काला। देखि दशा गुरु भये विहाला ॥
अति त्रासित करि कह प्रह्लादे। रे शठ तोहिं भयो उन्मादे ॥
अब हम तुहिं नहिं नेकु पढैहैं। मारि कशा नृपढिग लै जैहैं ॥
असुरनाथ हमको अनखाहीं। निज सुत ढंग जानते नाहीं ॥

दोहा-असकहि कशा प्रहार किय, सो प्रह्लाद शरीर।
कुसुम सरिस अति सुखदमैं, नेकु भई नहिं पीर ॥

पकरि बाहु भूपति ढिग आये। षंडामर्क कोप अति छाये ॥
आशिषदै अस वचन उचारा। यह बालक कुल चहत उस्वारा ॥
मानत नहीं नेकु मम भीती। करत न कछु पाठन परप्रीती ॥

बरबस बकत विष्णु कर नामा। जो तुम्हरो वैरी दुखधामा॥
लेहु लाल अपनो महराजा। दमनहिं करब गुरू कर काजा॥
हमहीकहँ तुम दोष लगैहौ। बालककहँ नहिंत्रास दिखैहौ॥
सुन हिरण्यकश्यपु गुरु बानी। बैठायो निज अंकहि आनी॥
कहहु कहहु सिखयो गुरु जोई। हमरिहु सुनन लालसा सोई॥
तब प्रह्लाद कह्यो मुसुकाई। जय रघुनाथ राम रघुराई॥
गुरू गिरावत मुहि भव कूपा। कैसे गिरहुँ जानि मैं भूपा॥
जिनके उर न रामपद प्रीती। तेनहिं जानत नीति अनीती॥
कुमती करहि मनोरथ नाना। स्वप्नसरिससोसकलविलाना॥

दोहा—सुखसंपति अरु साहिबी, बिना भजे रघुनाथ।
मिटत वारिबुल्ला सरिस, मरे न लागत हाथ॥

सुनत पुत्रकी अनुपम वानी। कोपित भयो असुर अज्ञानी॥
पटकि अंकते बालक काहीं। बोल्यो वचन कठोर तहाँहीं॥
रे सुत शठ यह कौन पढायो। तासु नाम नहिं मोहिं बतायो॥
मेरो लघु भ्राता वधकारी। ताहि भजत भयछोडि हमारी॥
कबहुँ राम हरि जो मुखकहिहै। जीवनघात आसु तै लहिहै॥
मुहिं डर जो कहुँ रह्यो लुकाई। ताहि लियो तैं नाथ बनाई॥
लै गुरु जाहु भवन शिशुकाहीं। कहन न पावै हरि मुखमाहीं॥
अब जो कही दंड मैं देहौं। पुनि नहिं बालक मानिबचैहौं॥
कह प्रह्लाद सहज बिन भीती। सुनहु पितायाकी अस रीती॥
इन्द्रिय सबहैं जीव अधीना। जीवनाथ रघुनाथ प्रवीना॥
सहज ईशकर दास अनीशा। जपत हरिहि सुनु दानव ईशा॥
यामें कछुक मोर नहिं दोषू। जनक करहु तुम नाहक रोषू॥

दोहा—जो जानै यहि भेदको, तौ तिहि जगत हिराइ।
जो नहिं जानै भेद यह, ताहि न जगत सिराइ॥

सुनत कुपित कह शठ अस बानी। मुहिं सिखवत विज्ञानअज्ञानी॥
टारहु मम दृग पथ यहि काहीं। नातो मीच होत क्षण मांहीं॥
तब गुरु गहिकर भवन सिधारे। तिहिबुझाइ अस वचन उचारे॥
निजकुल धर्म तजहु नहिं ताता। जैहै बिगरि बनी सब बाता॥
कह प्रह्लाद मोरि नहिं बिगरी। तुमदेखहु निजबिगरीसिगरी॥
गुरुसकोप तब पुनि नृपपाहीं। कह्योआय शिशु मानतनाहीं॥
तुरत असुर प्रह्लाद बुलायो। बारबार दृग लाल दिखायो॥
दियो भटन कहँ हुकुम सुरारी। गजदंतन शिशु डारहु मारी॥
सुनि भट तुरत पकरि प्रह्लादै। ठाढ़ कियो चौहट करि नादै॥
महामत्त मातंग मँगाई। दीनो सन्मुख तासु चलाई॥
दंती दंत दियो उर कैसे। दंड एरंड पषाणहिं जैसे॥
टूटे रदकरि रव मखमोरा। प्रह्लादहि सुख दुखनाहिंथोरा॥

दोहा—अचरजमान्यो असुर सब, धाय हन्यो तिहि शूल।
टूटिगये सब लोह लगि, जैसे मूलक मूल॥

पुनि सबअसुरकोपअतिकीन्हों। बांधि तुरत प्रह्लादहि लीन्हों॥
कहे सकल धरणीखनि डारौ। गाडिदेहु यहि विधि यहिमारौ॥
खनिकै गहिर गर्त्त तिहिकाला। डारयो कुमरहि असुरकराला॥
तोप्यो उपर मृत्तिका भूरी। दियो पषाण उपरते पूरी॥
मरि प्रह्लाद गयो अस जाने। सोये रैन सुचित सुख माने॥
देखन हेत भोर लहि पैठे। निरखे प्रह्लादहि तहँ बैठे॥
असुर तबै सब अचरज माने। विस्मय हर्ष हीन तिहि जाने॥
पुनि प्रह्लादहि सकल सुरारी। लैनिजसंगहि चले सिधारी॥
रह्यो एक गिरि शृंग उतंगा। दीन्हों ताहि चढ़ाय उछंगा॥
बहु योजनकी रही ऊँचाई। तिहिते दिय हरिजनहि गिराई॥

गिरिसे गिरत मरो तिहि मानी । हरिचरित्र शठ कोउ नहिं जानी ॥
पै महिफूल तूलके तूला । हरिप्रभाव स्वनेहु नहिं शूला ॥

दोहा—देखि अछत असुरेश सुत, अचरज असुर विचारि ।
लगे कहन यहि भाँतिसों, किहि विधि डारिय मारि ॥ १ ॥
पुनि तिहि भगिनी ढुंढला, जिहि तनु जरैन आग ।
ले गोदी प्रह्लादको, बैठि गई सुखपाग ॥ २ ॥

चहुँदिशि उपले काष्ठ चिनाई । तामें अग्नि दई लगवाई ॥
तब निशिचर अतिशय हरषाये । काष्ठभार बहुतै तहँ लाये ॥
चरख फिरक जो कहु कहुँ पावै । डारि अनलमें अधिक बढावै ॥
वह्नी औ गुलगुलकी माला । डारहि अग्नी उठत विशाला ॥
कहै कि याहि जपो मनलाई । बडे भक्त प्रह्लाद कहाई ॥
इहिविधि रैनहि अग्नि पजारी । प्रात शान्त भइ जाय निहारी ॥
तामधि बैठे सुत अहलादा । धूरि उडाय रहे प्रह्लादा ॥
जरिगै सो निशिचरी अभागी । इनको अंग न लागी आगी ॥
सखा मिले प्रह्लादहि धाई । रामरामकी तहँ धुनि छाई ॥

दोहा—हरिकी महिमा दनुजपुर, बहुविधि गई समाय ।
पुनि तमचर हरिभक्तके, बधके करत उपाय ॥

सकलअंग पुनि जकरि जँजीरा । डारचो नीरधि नीर गँभीरा ॥
सागर तिहि तरंगमहँ लीन्हों । मंद मंद तटमहँ धरदीन्हों ॥
यहिविधि किये अनेक उपाई । हरिजन मरनहेतु बरिआई ॥
पै न विथा नेकहु तनु व्यापी । राख्यो निजकर कृष्ण प्रतापी ॥
जिहि रक्षत जगमें भुजचारी । द्वैभुज सकत ताहि किमि मारी ॥
असुरन्याइ दानवपति आगे । लज्जितवदन कहन अस लागे ॥
कौनहु विधिसु मरै नहिं मारा । काहकरिय अब नाथ विचारा ॥

कह्यो दैत्यपति वारुन पासा। बाँधि जाहु लै गुरुके पासा॥
सुधरै शठ सबविधि नहिं तबलौं। आवै गुरु न भार्गव जबलौं॥
शठ प्रह्लादहि तैसहि कीन्हें। गे गुरुभवन ताहि सँगलीन्हें॥
वारुन पाशहि अंगन बाँधी। राख्यो ताहि कोठरी धाँधी॥
गुरुकी अन्तरलहि प्रह्लादा। बोलि बालकन किय संवादा॥

दोहा–लखहु कृष्णपरभाव अस, मुहि मारलके हेत।
कीन्हें असुर उपाय बहु, पै न लग्यो कछु नेत॥

तुम जो कृष्णभक्ति असकरिहौ। कबहुँ न कालपाश में परिहौ॥
बालक लखि प्रह्लाद प्रभाऊ। सत्य मानि भे मृदुल स्वभाऊ॥
राम कृष्ण मुखभाखन लागे। गुरुके वचन त्यागि भय त्यागे॥
षंडामर्क फेरि तहँ आये। लखि बालकहगलालदिखाये॥
जरत बरत भूपति ढिग जाई। कह्यो नाथ रावरी दुहाई॥
अबहुँ न मानत बालक पापी। राउर त्रास नेक नहिं व्यापी॥
सुनि सुरारि भो तामस रूपा। लोचन प्रलयानल अनुरूपा॥
कह्यो पुत्र पापी प्रह्लादू। पढे अवशि यह जालिम जादू॥
विविधभाँतिते मरै न मारा। ताते मैं अस कियो विचारा॥
बोलि सभामधि अपने हाथा। लै करबाल काटिहों माथा॥
जा ले आवहु खल सुतकाहीं। अब विलम्ब कीजे क्षण नाहीं॥
असुर अधिपके सुनि अस बैना। धाये भट आये गुरुऐना॥

दोहा–पकरि तुरत प्रह्लादको, ल्याये सभामँझार।
सहज स्वभाव गोविंदजन, नहिं कछु हर्षखँभार॥

बोलो हिरणकशिपु विकराला। बालक आइ गयो तुवकाला॥
की मेरो अस शासन मानैं। की यमपुरको गैं पयानै॥
करिछल वंची बहुदिन काया। अब नहिं लागी राउर माया॥

हो जो तुव प्रभु ताहि बुलावै। देखौं किहि विधि तोहि बचावै॥
करिसि दुष्ट जाको गुणगाना। सो मेरो रिपु छली महाना॥
करिछल हन्यो मोर लघुभ्राता। सुहिंडर दुरो न कहुँ दरशाता॥
व्यापितजग भरोस अस तोको। क्यों नहिं दरशावतइत मोको॥
नाचत काल तौर तुव शीशा। आइ न कस रक्षत तुव ईशा॥
सुमिरु सुमिरु अपने प्रभुकाहीं। जियन उपाय राखु अबनाहीं॥
तब सहजहि हँसि कह प्रह्लादा। पिता तोहिं भो अतिउनमादा॥
किहि सुमिरों अरु काहि बुलाऊं। मो प्रभु तो दीखत सबठाऊं॥
असकौनहुथल पितु नहिं दीशा। जहँ न मोहिदीखतजगदीशा॥

दोहा-सो समता जग में करौ, ह्वै अनन्य हरिदास।
तौ तुमहूंको लखिपरै, सबथल रमानिवास॥

कवित्त-सुनि प्रहलाद वाद कोप मरयाद मोरि,
परम प्रमाद भरो नादकरि बोल्यो बैन।
भल यह बात कही चली नाहिं तोरोछल,
छलीविष्णु होयबली रोकैगलीकोऊहैन॥
रघुराज सकल समाजमध्यभाषों आज,
देव शिरताज तेरी लाजकाज क्यों अवैन।
शुंभ औ निशुंभ जंभ जोरदार वीर बीच,
परिहरि दंभ काहे खंभहीते प्रगटै न॥ १॥
असुरकुमार कियो बिहँसि उचार ऐसो,
हेन्यो बार बार हौं न हेरो अस ठौरहै।
जहँ ना दिखायो मोहि करुणसमुद्र छायो,
अतिमनभायो रूप देवकी किशोरहै॥
रघुराज रसादिवि निशा दिन दिशा वसु,

खाली ना खरारिसों विचार अस मोर है।
करि अनुकंपाको अरम्भ यहि खंभहीमें,
दीखतहै ईश मोहिं कैसो ज्ञान तोर है॥ २॥
सुनिप्रहलाद बैन धर्ममरयादभरे,
नाशि मरयाद कोप कीन्हों असुरेश है।
घोर शोर कैकै भरिदीनो महि चारोंवोर,
उठ्यो अतिजोरकै कँपायकै निवेश है।
फरकैं उदंड दोरदंडज अखंड वोज,
आमित घमंड भो प्रचंड काल वेश है॥
त्रासदै निदेश नपतेश अमरेशहूको,
मारयो दुष्टि मुष्टि मध्यखंभके प्रदेश है॥ ३॥
मुष्टिके हनत हेमकश्यपके खंभमध्य,
निकसी अवाज (ज्यों) गजराजकोटिगाजकी।
डोलि उठे गिरिराज बोलि उठे गजराज,
असुर समाज भाज सुधताजि लाजकी।
मुरिगो मिजाज त्योंहीं दुरिगो दराजवोज,
वाज भई वीरताहू दैत्य शिरताजकी।
उछल्यो उदधिराज विछल्यो गृहणराज,
ध्यानकी धमारि भूरि भूली भूतराजकी॥ ४॥
राखत सुपंथनको मारवत कुपंथन पै,
रघुराज भाषत अनन्द जग छायो है।
दरत सुरेशदुःख हरत कलेश सुख,
पूरण करत सब संतचित चायो है॥
दीननपै दायाको दिखावत दुनीमें तेज,

छावत दिशाननमें आननको भायो है ।
दास प्रह्लादको विश्वासको बढावत,
तुरंत फारि खंभको नृसिंह कढिआयो है ॥ ५ ॥
पक्ष सित बारस निराधसांझ चौदशको,
दुष्टदलदीह वारिबुल्लासों विलाइगो ।
धाई धाक धूलो जय शोरनाक मूलो मचो,
सुरउर आनँद उदधि उमगाइगो ॥
रघुराज प्रह्लाबैन सत्यहेत अंधकारि,
फारिकै उदर हरि शोणित अन्हाइगो ।
छुतही दलानमें दिगीशनके देखत,
दराज दैत्यराज वीर दीपसों बुताइगो ॥ ६ ॥
दोहा—दासकाज द्विजराज प्रभु, धारि रूप मृगराज ।
मार‍्यो असुर दराजको, सार‍्यो सब सुरकाज ॥

बैठ्यो सिंहासनमधि जाई । ज्वालामाल दिशानन छाई ॥
सकत न कोउ नरहरिकहँदेखी । भयो भयावन रूप विशेखी ॥
लै सुर भागे सकल विमाना । सहि न सके प्रभुतेज महाना ॥
कह्यो विरंचि रमाकहँ आई । निजपतितेज शांतकरु जाई ॥
रमा कह्यो अस प्रभुकर रूपा । देख्योसुन्यो न कबहुँ अनूपा ॥
नहिं जैहैं यहि काल समीपा । निरखि भयावन रूप प्रतीपा ॥
विधि तब कह प्रह्लाद बुझाई । करहु शांत प्रभुको तुम जाई ॥
नातो जरन चहत सब लोका । उपज्यो अति सबके उर शोका ॥
तब प्रह्लाद मंद मुसुकाई । सहज अभीत समीप सिधाई ॥
लाग्यो अस्तुति करन नाथकी । सन्मुख अंजलि जोरिहाथकी ॥
नरहरि लियो अंक बैठाई । शीश सूँघि दृगवारि बहाई ॥

निजरसनासों चाटतजाहीं। बारबार चूमत सुख काहीं ॥
बोले प्रभु प्रसन्न सुहिं जानू। माँगो मनभावत वरदानू ॥
कह प्रह्लाद भक्तिकरि माँगत। वे व्यापारी मैं अस मानत ॥
मोहिं न कछु चाहिये कृपाला। कृपाकरहु हे दीनदयाला ॥
पिता विमुख प्रभु तुमसन रह्यो। ताकी सुगति होय मन चह्यो ॥
सुनत वचन कह श्रीभगवाना। एक भक्त जिहिकुल सन्माना॥
वह निजपितुकी चौविस पीढी। अरु माताकी बीसहु सीढी ॥

दोहा-षोडश तारै वामकी, दश भगिनीकी तार।
द्वादश पुत्री तारकै, दश फूवा निरधार ॥ १ ॥
तारै आठों मौसिकी, सो जानहु सुत सोय।
कुल पवित्र जननी सफल, ऐस भक्तके होय ॥ २ ॥

तुम्हरे पितर स्वर्गके माहीं। सदा वसहिं सुख लहैं सदाहीं ॥
जब जगपति अस वचन सुनाये। सो प्रह्लादहिये अति भाये ॥
तब नरसिंह कही अस बाता। वचन हमार सुनहु तुम ताता॥
यदपि तुम्हें इच्छा कछु नाहीं। करहु राज्य मन्वन्तर कांहीं ॥
कह प्रह्लाद कठिन अति माया। सो कैसे तरिहौं सुरराया ॥
कह प्रभु तुमपर कृपा हमारी। सकै न माया तुमहिं निहारी ॥
जो यह चरित सुनै अरु गावै। सुखकर अन्त अभयपद पावै॥
भवबन्धनसे सो छुटिजाहीं। यामें कछु संशय है नाहीं ॥

दोहा-इहिविधि दानवअधिपकरि, सौंपि सुरन सुरथान।
दास विश्वासदिखाय अस, हरि भे अन्तर्धान ॥ १ ॥
यह चारित्र प्रह्लादकर, पढै सुनै जो कोय।
ह्यां भोगै सो विविधसुख, अन्त अमरपुर होय ॥ २ ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ग्रन्थउजागर प्रह्लादचरित्रवर्णनो नाम षड्विंशोऽध्यायः ॥ २६ ॥

दोहा—सुमिरि गिरा गणपति रमा, विष्णु सकल सुखदान॥
मार्कण्डेय पुराण मत, कहुँ भूगोल बखान॥ १॥
प्रभुइच्छासे प्रकृति यह, रचत बहुत ब्रह्मण्ड।
तिहिमें देव त्रय लसत, निज निज शक्ति अखण्ड॥ २॥
कह शौनक भूलोकमें, अवध कौन परकार।
आई है सो वर्णिये, करिकै कृपा अपार॥ ३॥

कहत सूत सुनिये मनलाई। एकबार जलबढ्यो अथाई॥
सब ब्रह्माण्ड लीन ह्वै गयऊ। जलबिन और कछू नहिं रहऊ॥
ले जीवनको तत्त्व भवानी। महाविष्णुमें आय समानी॥
शय्या शेष शयन हरि कीन्हा। माया मोहि न जागन दीन्हा॥
केवल श्वास रूप चहुँ वेदा। जागृत जानहिं जगकर भेदा॥
पुनि जग रचन समयजब आयो। प्रभुकी नाभिकमल प्रगटायो॥
तामें प्रगट भये सुखचारी। ब्रह्मा नाम देवसुखकारी॥
जलविलोकि मन कीन्ह विचारा। कोहै माता पिता हमारा॥
नीचे नाल पकर विधि धाये। अन्तन मिल्योऊपर पुनिआये॥
बहुत बार अध ऊपर आयो। पद्मनाभकर अन्त न पायो॥
तब नभते ऐसी भइ वानी। तपसे जानहुगे सुखदानी॥
सुनि विधि तपहित निज मन लावा। बहुत समयपर दरशनपावा॥

दोहा—विष्णुकर्णमलते भये, असुर प्रगट तहँ दोय।
लखि तिनको ब्रह्मांड रे, विनइ शक्ति तिन सोय॥

जय जय आदिशक्ति सुखदानी। जगनिर्माता सबसुखखानी॥
निगम नेति कहि तुमको गावै। मायाआदि अन्त नहिं पावै॥
भवभव विभवपराभव कारिणि। विश्वविमोहनिस्ववशविहारिणि॥
मोको प्रगट किये जलमाहीं। अस्तुति करी जात है नाहीं॥

हरि सोवतहैं देहु जगाई। असुरसँहारैं करहिं लराई ॥
तब माया हरि दिये जगाई। मधुकैटभ देखे दोउ भाई ॥
ब्रह्माको मारत दुखदाई। कर प्रभु क्रोध असुरपहँ धाई ॥
जलमें भई विविधविधि रारी। जीत न जाहिं असुर बलकारी ॥
संवत पांचसहस्र बिताये। मधुकैटभ तब वचन सुनाये ॥
है शूरता बड़ी भगवाना। हम प्रसन्न माँगो वरदाना ॥

दोहा-कह हरि तुमहो वध्य मम, यह दीजे वरदान्।
कहैं असुर जलमें नहीं, बाहर लीजै प्रान ॥

सुनिहरिनिजउरुदोउधारिलीन्हा। मारनकोजब निजमन कीन्हा ॥
तब बोले दोउ गिरा सुहानी। भूमि रचो तनुकी सुखदानी ॥
एवमस्तु कहि तिन्हैं सँहारा। ज्योतिवदनमें मिली अपारा ॥
कैटभारि मधुसूदन नामा। तबते भयो जपे गुणग्रामा ॥
तिनको मेद जप्यो जलमाहीं। नाम मेदिनी भूमि कहाहीं ॥
जिमि नलिनी सरपर उतराई। तिमिमेदिनी सकल जलछाई ॥
ताको शेष रूप किय धारण। फण हजार सब जगके कारण ॥
सहसनकोटि अर्ब योजनभर। तानीचे कच्छप शोभितवर ॥
पूरवदिशि मुख पाश्चिम पुच्छा। सोऊहरिवपु किय निजइच्छा ॥
ता नीचे हरिशक्ति अपारी। रही उठाय सकल भूवारी ॥

दोहा-भई मग्न जल भूमि जो, तिहि उधारि वाराह।
स्थापनकर जलऊपरी, कारि निजशक्ति अथाह ॥ १ ॥
तिहिरक्षाहित प्रभु किये, तहां आठ दिक्पाल।
ऐरावत वामन तथा, पुण्डरीक सुविशाल ॥ २ ॥

अंजन कुमुद पुष्पदँत गायो। सार्वभौम सुप्रतीक कहायो ॥
अष्टादशयोजन परमाना। इनको तनुनहिं जायबखाना ॥

दो योजनके दन्त बखाने। त्रययोजनकी शुण्ड सुहाने॥
षट्षट् योजन उच्च विशाला। ऐसे रहत आठ दिक्पाला॥
इहिविधि भूरचि कह प्रभुवानी। सृष्टि रचों विधि अब सुखमानी॥
सब ब्रह्माण्ड नाप विधि लीन्हों। ऊनपचासकोटि मितिकीन्हों॥
इतनें योजन जगत पसारा। सूर्यचन्द्रयुत कह श्रुतिसारा॥
मनसे सृष्टिरचन तब लागे। इच्छाते सुर मुनि उपरागे॥
सनकादिक इच्छासे ज्याये। तपहितते वनमाहिं सिधाये॥
वामअंगते पुनि शतरूपा। दहिनअंग उपजे मनुभूपा॥
तिनहूँ वनहि पयाना कीन्हा। ब्रह्मा शोकवारि दृग लीन्हा॥
ताते रुद्र प्रकट भे सोई। जिन्हें जगत मानत सबकोई॥
सो ब्रह्माकी आज्ञा पाई। विविधभाँतिकी सृष्टि बनाई॥

दोहा—अंग भंग कोइ पीन अति, कोउ अति तनुसे क्षीन।
कोइ बिनशिर कोउ अधिकशिर, बहुतनयन कोइ हीन॥

इहिविधि तिन बहु प्रजा उपाई। एकहि एक खान को धाई॥
तब विधि कही रचो मति आगे। गये विष्णुपहँ कहने लागे॥
प्रभुसे निजवृत्तान्त सुनावा। तहँ मनु शतरूपहि बुलवावा॥
बोले सुवन राज्य तुम करहू। वचन हमार हृदयमहँ धरहू॥
शम संतोष दया उरधारो। प्रजापाल निज धर्म विचारो॥
कह मनु देहु पुरोहित कोई। बोले विधि वसिष्ठकहँ जोई॥
कह वसिष्ठ सुनिये विधिवानी। दशकुक्करसम चक्री जानी॥
यक ध्वज दशचक्रीसम होई। दशध्वजसरिस नायका जोई॥
दशगणिकासम इक नृप गावा। दशनृपसम उपरोहित पावा॥
ऐसो मन्दकर्म मति देहू। अहो पिता विनती सुनिलेहू॥

दोहा-कह ब्रह्मा यहि कर्ममें, आगे लाभ तुम्हार।
ब्रह्म मनुजतनु धारिहैं, रविकुल वंश मँझार॥ १॥
तिनको नयनन निरखिकर, लीजो जन्म सुधार।
सुनि वसिष्ठ मन हर्षकरि, कीन्हों अंगीकार॥ २॥

पुनि मनु कह सो थलहि बतावहु। करहुँ राजधानी सुख पावहु॥
तब हरि अवध विकुण्ठहि आनी। दीन्हीं मनुको अतिसुखदानी॥
ले अधिदेव भूमिमें आये। श्रीपतिकोतनु लखिसुखपाये॥
कटि कांची अवन्तिका चरना। नाभि द्वारकाको बुध वरना॥
मायापुरी हृदय कहवाई। मधुपुरि कंठ सन्तजन गाई॥
काशि घ्राण शिर अवध बखानी। ताकी महिमाऋषिजन जानी॥
द्वादश योजन दीर्घ सुहाई। चौडी योजन तीन बताई॥
राजमार्ग सबही विधि सुन्दर। नानारत्न अलंकृत सरवर॥
जहँ तहँ तोरन वन्दनवारा। रत्नजटित शुभ बने किंवारा॥
भाँति भाँतिके मन्दिर भारी। जाहिदेखिविधिगतिलखिसारी॥
मागध सूत वन्दि गुण गावहिं। व्यापारी नानाविधि आवहिं॥
चहुँदिशि परिखा बनी सुहाई। ऊँचे भवन शिखर छबिछाई॥
बहुविधि बाजे निशि दिन बाजें। सुनि गंधर्व देवजन लाजें॥
यहिविधिसे सो सबगुणखानी। अवधमहिमनहिंजायबखानी॥
यहिविधि प्रजा सहित मनुराजा। राज्यकरैं निज सहित समाजा॥
तिनके दो सुत भये सुहाये। प्रियव्रत उत्तानपाद कहाये॥

दोहा-देवहुती आकूति अरु, परसूती यह तीन।
कन्याभई सुलक्षणी, विद्यामाहिं प्रवीन॥

मनुते भे मनुष्य मनुराई। तिहिते मानुष नाम कहाई॥
राज्य करत बहुकाल बितायो। इकदिनमनुकेमन अस आयो॥

विषयमाहिं बहुकाल बितायो । प्रभुनहिंभजनकियोमनभायो ॥
अस विचार पुत्रन नृप कीन्हा । तपहितवनकोनिजपगदीन्हा ॥
नारिसहित नैमिषमें आये । हर्षि गोमती नीर नहाये ॥
तहां तपत औरहु मुनिराई । इनहूँ तप ठानो मनलाई ॥
द्वादश अक्षर मंत्र सुहावन । जपनलगे दोऊ मनभावन ॥
कन्द मूल फल कछुदिन खाये । शाकखाय कछु वर्ष गँवाये ॥
षट्सहस्र सम्वत जलपाना । वर्षसहस्र वायु भख माना ॥
मन अभिलाष निरन्तर होई । देखहिं कबहुँ परमप्रिय सोई ॥
जासु अंशते सबजग देवा । उपजतहैं पावहिं तिहि सेवा ॥
नेति नेति जिहि निगम निरूपा । वेदशास्त्र जिहिअगुण अरूपा ॥

दोहा—सो प्रभु दर्शन देइकर, पूजहिं मनके काम ।
ब्रह्म सच्चिदानन्दमय, सकल जगत अभिराम ॥ १ ॥
सम्वत द्वादश सहस पुनि, रहे बिना आधार ।
तेज वृद्धि औ गात्र कृश, नेक न मानत हार ॥ २ ॥

विधि हर सहस्राक्ष कइ बारा । मनुसमीप ह्वै वचन उचारा ॥
माँगहु वर बहुभाँति लुभाये । परमधीर नाहिं चले चलाये ॥
तब अस भई गगनते वानी । मांगुनृपति जो तुहि मनमानी ॥
जब वाणी इनके हिय आई । पीतअंग ह्वै गये सवाई ॥
तब करजोर कही यह वानी । जौनरूप शिवध्यान लुभानी ॥
कागभुशुण्डि करत जिहिध्याना । श्याम स्वरूप लखैं भगवाना ॥
सुनत विनीत वचन सुखदाना । विश्ववास प्रगटे भगवाना ॥
श्यामशरीर लजत लखिकामा । मुखछबिसींव कोटिशशिवामा ॥
नव अम्बुज लोचन मदमोचन । सुन्दर दन्त कुन्द संकोचन ॥
चिबुक ग्रीव औ अधर सुहाये । शुकनासा सु कपोल सुहाये ॥

छन्द-अतिसुखद हास विलास प्रभुको कौनकवि वर्णन करे ।
मणिमाल उर वनमाल राजत तिलक अतिशोभा धरे ॥
श्रवणकुंडल लोल राजै मुकुट अतिशोभा शिरे ।
धनुषसम दोउ भौंह बाँकी बाँकपन शोभा हरे ॥
उरविशाल सुहावनी कटि क्षीण कसे निषंग हैं ।
हाथमें शारंग पीताम्बर परचो शुभअंग हैं ॥
उच्च कंध जनेउ राजत कचसुगंधित संग हैं ॥
नख सुहावन नाभि गहरी उदररेख अभंग हैं ।
पदकमल मुनिमन हरनकारी हरत पाप अपार हैं ॥
अंग अंगन लसत मुक्ता छबि उदधि गुणगार हैं ॥
वाम अंग विराजशक्ती अंश जिहि सुरनार हैं ।
उमा ब्रह्मानी रमा जो सृजत जग बहुवार हैं ॥
लख स्वरूप सुहावनो दोउ रावरानी मुदछये ।
दण्डसम गिरिचरणमें दोउ देहसुधि बिसरत भये ॥
प्रभु उठाय हिय लाय दोउजन हाथ निजशिरपर दये ।
लहहु वर जो होय रुचिमन कहत नृप सुखभर हिये ॥
देख कर पदपद्म प्रभुके काम पूरे हैं सबै ।
लालसा जो हिये कहते भयलगत है प्रभु अबै ॥
कहत प्रभु सब सकुच त्यागहु माँगलीजे नृप जबै ।
भक्त जो चाहैं मिलै जगराज औ महिमा सबै ॥
दोहा-कह नृप जो प्रभुदेतहौ, तौ यह देहु दयाल ।
तुमसमानसुत ऊपजे, गुणनिधि बाहुविशाल ॥ १ ॥
पुत्रवधू इहि शक्तिसम, मोरे घरमें आय ।
वसै प्रेमजगकी सदृश, होहु देहु सुखदाय ॥ २ ॥

देख प्रीति सुनि वचन सुहावन। एवमस्तु बोले जगपावन॥
आप सरिस देखहुँ नहिं काई। नृप तव पुत्र होब मैं आई॥
शतरूपहि लखि कह्यो कृपाला। देवि माँगुरुचि जौनविशाला॥
शतरूपा कह नृपहि जु दीन्हा। सोइ वर नाथ चहौं मैं लीन्हा॥
अन्तर इतो होय सुखदानी। जानौं तुम्हैं ईश गुणखानी॥
सुनि प्रभु कह जो तुमने मांगा। सोमैं दीन सहित अनुरागा॥
अब तुम ममअनुशासन मानी। बसो जाय सुरपतिरजधानी॥
तहँ कछु काल रहो सुखपाई। त्रेतायुग जब लगिहै आई॥
तब तुम हुइहो अवध नरेशा। पुत्र होब मैं तुव अवधेशा॥
इच्छामय नरदेह बनाये। अंशनयुत लखिहौ मन भाये॥
करिहौं चरित भाँति बहुतेरे। जो सुनि नर तरिहैं भवबेरे॥
तहाँ विप्र हरि देव प्रवीना। कनक लतायुत नारि नवीना॥
करी तपस्या भगवत हेता। अशनवसनतजअवधनिकेता॥
प्रभु तिहिढिग बोले असवानी। माँगुमाँगु वर जो मनमानी॥
नारिसमेत वचन ते बोले। कृपासिंधुसे वचन अमोले॥

दोहा–तुम समान जामात मुहिं, शक्तिसमान कुमारि।
मिलै मोहिं वर देहु यह, करुणामय सुखसारि॥

एवमस्तु कहि प्रभु मुसुकाये। बोले सुनहु वचन जियजाये॥
त्रेता जनकरूप अवतरिहो। तियासुनयनाइहितनु धरिहो॥
तहँ मम शक्ति भूमिजा होई। औरहु तीन अंशयुत सोई॥
तहँ जामात मिलब हम आई। कहि अन्तर्हित भे सुखदाई॥
मनुशतरूपा द्विज द्विजनारी। बसे जाय सब स्वर्ग मँझारी॥
जिमि महिमें अवतारे हैं आई। सो वर्णब आगे हम जाई॥
लोमश रामायणके माहीं। यह इतिहासलिख्योशकनाहीं॥
औरहु किते पुराणमँझारी। लिखी कथायहअतिविस्तारी॥

दोहा-पढ़ैं सुनैं जो यह कथा, लहैं कृपा भगवान ।
मिश्र सदा गुण गाइये, जो प्रभु दयानिधान ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ब्रह्माप्रादुर्भावअयोध्याउत्पत्ति स्वायंभुवमनुकथा वर्णनोनाम सप्तविंशोऽध्यायः ॥ २७ ॥

दोहा-विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिरिराम सुखदान ।
वरणौं शुकसंहिता मत, विष्णुपुराण बखान ॥

कह शौनक इमि बैन सुनाई । स्वायंभुव मनु पाछो पाई ॥
कौने राज्य कियो यह भारी । सो मोसे कहिये विस्तारी ॥
कह्यो सूत स्वायंभुव गयऊ । तब उत्तानपाद नृप भयऊ ॥
दूजे सुतकर प्रियव्रत नामा । वह अतिबली व्रतीजितकामा ॥
प्रियव्रत राज्यकीन्ह बहुकाला । प्रभुआयसुबहुविधिप्रतिपाला ॥
सात सुवन तिनके भे आई । सप्तखण्डकर भू तिन पाई ॥
जम्बू औरो प्लक्ष सुहावन । शालमली कुश क्रौंच सुहावन ॥
सिंहल औ पुष्कर शुभ द्वीपा । सातखण्ड करिदिये महीपा ॥
सबके चहुँदिशि शोभित सागर । क्षार क्षीरदधि मधुमदिराकर ॥
इक्षु और जलको शुभ घेरा । द्विगुणद्विगुण भरिरह्यो निवेरा ॥

दोहा-जम्बूद्वीप सुहावनो, लखयोजन विस्तार ।
जम्बूफलकर वृक्ष बड़, नदीनाम सुखसार ॥ १ ॥
मेरुआदि पर्वत जहाँ, गंगादिक सरि शुद्ध ।
नृप अग्नीध्र किये सुभग, नौविभाग परसिद्ध ॥ २ ॥
इलावृत्त रमणक हिरण्य, कुरुहरिवृषकिम्पुर्ष ।
भद्राश्व ध्वजमाल पुनि, भरतखण्डमें हर्ष ॥ ३ ॥

सौ योजन कर देश बनायो । सबै देशको मण्डल गायो ॥
त्रयशतमण्डल खण्ड कहाई । विष्णुउपासी रहत तहांई ॥

भरतखण्डमें आश्रम चारी। चारौं वर्ण वसत सुविचारी॥
ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य कहाये। और शूद्र निगमागम गाये॥
क्षारसिंधु यहिद्वीपहि घेरा। योजनलक्ष पुराणन हेरा॥
प्लक्षद्वीप तिहि आगे जानो। उभयलाख योजनपरिमानो॥
तामें पाकर विटप सुहावन। ताते प्लक्षद्वीप कहि पावन॥
इध्मबाहु तहँकर नृप जोई। सातपुत्र तिनके भे सोई॥

दोहा—जब सुभद्र शिवरास पुनि, क्षेम अभय हरिदास।
अमृत सातओं नाम से, सातखण्ड परकास॥ १॥
सरि गिरि द्रुम यहि मध्यमें, मर्यादाहित कीन।
विप्रहंस बुधवैश्य तहँ, क्षत्रिपतंगकहीन॥ २॥
शूद्रहि त्याग बखानहीं, पुनि ताके चहुँ ओर।
सागर तहँ रसको लसत, दोलख योजनशोर॥ ३॥

तरणि उपासक जन तहँ रहहीं। आगे द्वीप शाल्मली कहहीं॥
चारिलाख योजन परिमाना। रुद्रसहस योजन तरुजाना॥
सेमलतरु खगपतिको वासा। तिहिते शाल्मलिद्वीपप्रकासा॥
यज्ञबाहु राजा तहँ भयऊ। सातसुवनाहित भू निर्मयऊ॥
ऐयायन अविज्ञान सुरोचन। समरसोम परिभद्र विमोचन॥
विप्र सूत्रधर तहँ कहवावैं। नृपतिवीजधर मुनिजन गावैं॥
वैश्य वंशधर शूद्र दुःखधर। तिहिचहुँ ओर उपधिमदिराकर॥
योजन चारिलक्षके माहीं। चन्द्रउपासी तहां रहाहीं॥
तिहि आगे कुशद्वीप सुहावा। आठलाखयोजन मुनिगावा॥
रुद्रसहस योजन कुशकेरा। विटप उच्च तहँ निपट घनेरा॥
भूप हिरण्यरेत सुत साता। किय भूखण्ड सात विख्याता॥
नाभिगुप्त दृढरुचि वसुमाना। वसुविवक्तकस्तुतव्रत जाना॥

दोहा-कुशल कहत तहँ विप्रको, कोविद क्षात्रिहि नाम।
अभिजित वैश्यहि शूद्रको, कोकिल कहत निकाम॥ १॥
घृतसागर तिहि चहुँदिशि, योजन आठ सुलक्ष।
अग्नि उपासीजन तहां, सेवतहैं प्रत्यक्ष॥ २॥

क्रौंचद्वीप है तिहिके आगे। योजन सोलह लाख विभागे॥
क्रौंचविहँग रवि तेज समाना। वसत क्रौंच तिहिते भूनामा॥
है घृतकूट तहांको राजा। जन्मे सात सुवन सुखसाजा॥
सात खण्ड तिनहित भू कीन्हें। मर्यादाहित गिरितरु दीन्हें॥
विप्र तहाँ पुरुषा कहवावें। ऋषिवाराय क्षात्रि कहिगावें॥
भद्र वैश्य शूद्रनको देवक। तहँके मनुज उदकके सेवक॥
तहँ षोडश योजनके माहीं। क्षीरसिंधु शोभित शक नाहीं॥
आगे शाकद्वीप अतिभारी। बत्तिस लखयोजन विस्तारी॥
शाक पेड अतिविस्तृत अहई। तिहिते शाकद्वीप अस कहई॥
मोक्षातिथि नृप तहां सुहाये। ताके सात सुवन मुनिगाये॥
चित्रकेतु पवमान पुरोजय। धम्नाविश्व बहुरूप मनोजय॥
यहीनाम भूखण्ड कहाये। तहां विप्रवद बाल सुहाये॥

दोहा-क्षत्रिय कहत अभीर जहँ, वैश्य विरुज कहिवाय।
धारक शूद्र बखानियत, दधिसागर चहुँवाय॥ १॥
योजन बत्तिस लाखमें, सागरको परिमान।
पवन उपासी तहँ रहत, नयनागर गुणवान॥ २॥

पुष्करद्वीप सुतासु अगारी। चौंसठ योजनमें विस्तारी॥
पुष्करतरु तिहिमाहिं सुहावा। ताते पुष्करद्वीप कहावा॥
इन्द्रदवन राजा तहँ केरे। रमन धातुकी सतयुग हेरे॥
तिन भू दोयखण्ड करि दीन्हें। गिरि तरुमर्यादाहित कीन्हें॥

विप्र तहां पारस कहवाहीं। क्षत्रिय सकल भुजंग कहाहीं॥
वैश्य भरथरी शूद्र कुरंगा। शुद्धोदककर सिन्धु उतंगा॥
चौंसठ लक्ष जासु परमाना। योजनकर मुनिजनन बखाना॥
ब्रह्मउपासक तहां विराजैं। तिहिआगे बहुभूमी छाजैं॥
पौनेसोलह लाख प्रमाना। राती माटी भूमि बखाना॥
ताके अग्र हेम भू सोहै। लोकालोक अचल मन मोहै॥
आठकोटि उन्तालिस लाखा। योजन जानहु एकै पाखा॥
लोकालोक मध्य बहुतेरे। छोटे मोटे मेरु घनेरे॥
जम्बूद्वीप मध्य गिरि मेरू। लखयोजन प्रमाण तिहिकेरू॥
इकइस लोक बसत तिहिमाहीं। वर्णन करहुं नेक शक नाहीं॥

दोहा–यक्ष वासुकी भूत यम, किन्नर यक्ष महान।
ब्रह्मराक्षस राक्षस, काल चित्रगुप मान॥ १॥
योगिन गंध्रव अर्यमा, सत्य दिव्य अरु नाग।
पिप्पल विशुकर्मा तथा, देवलोक बडभाग॥ २॥
अग्नि पवन शिव ब्रह्म यह, तापर लोकविशाल।
ब्रह्मादिक आवत जहां, जगहित रक्षापाल॥ ३॥
एककोटि योजन कह्यो, भूमीतरेविलोक।
सहस बहत्तर योजन, तिहिविमानकर ओक॥ ४॥

इन्द्रपुरीपर उदय कराहीं। धर्मपुरी मध्याह्न टिकाहीं॥
वरुण पुरीपर अस्त बखाना। इहिविधिरविकीगतिपरिमाना॥

दोहा–अर्धलाख योजन रहै, धनदपुरी उतरेक।
इकिससहस योजन छसै, चलत पलक बिच एक॥

एकलाख योजन शशिलोका। ऊंचो रहत भानुते ओका॥
योजन सहस सु अडतालीशा। ताको है विस्तार मुनीशा॥

एकलाखपर भूसुत हेरा। तैंतालिस सहस्र कर घेरा ॥
इहिविधि लक्ष लक्ष दूरीपर। हैं ग्रह खेचर नखत मुनीवर ॥
वर्णहुँ सबहिं होय विस्तारा। यह जो मानकियो निरधारा ॥
निज आवर्ण सहित यह भाखा। केवल भू विस्तार न राखा ॥
जहँ लगि शक्ति आसुकी जाई। सो घनवर्गसहित करि गाई ॥
केवल भूकर अस विस्तारा। है नहिं मुनि सुन वचन हमारा ॥
जप तप सत नहिं जिनमनमाहीं। तिन्हैं सुमेरु दिखातैं नाहीं ॥
आदिसृष्टिको अस विस्तारा। उलट पुलटअब भयो अपारा ॥
अब संक्षिप्त भयो जगआई। जिमि ग्रीषममें सरित सुहाई ॥
रूस रूम फारस अफरीका। अंग्ल जर्मन अरु अमरीका ॥
इत्यादिक भूभागन नामा। कलियुगमें मुनिराज सकामा ॥
करिहै राज तहांके वासी। भरतखण्ड नर होहिं विलासी ॥
बहु भूभाग लुप्त ह्वै जाई। रहिहै अधिक जलहि जलछाई॥
तब पहिलो भूको विस्तारी। नहिं आवहिं तिन ध्यानमँझारी॥

दोहा—इहिविधि मैं तुमसे कह्यो, भू खगोल समुझाय।
अब क्या वरणौं कहहु सो, कह्यो सूत हरषाय ॥

तब शौनक अतिशय सुखपाई। बोले मधुर वचन हर्षाई ॥
श्रवणामृत तव वचन सुहाये। तृप्तहोत नहिं सत्य सुनाये ॥
अब सरयूकी कथा सुहाई। वर्णहु सो भूमध जिमि आई ॥
धन्य धन्य कहि बारहिं बारा। चतुर सूत मुनि वचन उचारा ॥
सरयूकी उत्पत्ति बखानौं। ब्रह्मा कहँ तुम भलविधि जानौ॥
जिन सिरज्यो सिगरो संसारा। तिनके भवन तीन रहिं दारा ॥
सन्ध्या स्वास्ति सावित्री नामा। जो दायक अभिमत विश्रामा ॥
ब्रह्मातनय मरीची भयऊ। नाम प्रेमजा प्रियविधि दयऊ ॥

कश्यपसुत मरीचिने जाये। तिनकी तिय दशनाम गिनाये॥
प्रथमै अदिति देव जिन जाये। दितिने दैत्य अमित जन्माये॥
कद्रूके जन्में बहु नागा। विनता सुत भे गरुड सभागा॥
भये चन्द्र सोमावति केरे। सुराव्रतीके सूर्य उजेरे॥
दनुने दनुज अधिक उपजाये। ताम्राश्येन गृध्र निर्माये॥
भये असोघाके खग केते। सरमाके श्वापदगण तेते॥
इला सुखद तरुवर निर्माये। अमृत फल दे जग सुखदाये॥
यह सब शक्ति नारिके रूपा। कश्यपके ढिग रहीं अनूपा॥
तिनपर कश्यपको अधिकारा। ताते कहवाई यह दारा॥
जामें जौन जीव तत् रहई। कश्यप सो तामें निर्मयई॥
धर्मतत्त्व सबमें अधिकाई। पुरुष पाय शक्ती उपजाई॥
ऐसी यह कश्यपकी नारी। सकलसृष्टि इमि कीनपसारी॥

दोहा—कश्यपके सुत भानु भे, तिनके भईं दो नारि।
सुता विश्वकर्मा प्रभा, छाया दूसर दारि॥ १॥
धर्मराज भे प्रभाके, छायासुत शनि जाय।
बहिन भई यमुना लखत, जिहिकलिकलुषनशाय॥ २॥

वडवारूप प्रभा पुनि धारा। रवितें भये अश्विनीकुमारा॥
तिनके मनु नारी शुचि रेखा। तिनके इक्ष्वाकू गुणलेखा॥
सरयूनदी इनहि नृप आनी। सो मैं तुमसन कहौं बखानी॥
एकबार मन कियो विचारा। सरिताबिन पुर शून्य हमारा॥
जो पुर निकट सरित वह आई। पावैं सुख नरनारि नहाई॥
अधम होत घरको अस्नाना। मध्य कूपकर मुनिन बखाना॥

१ अदिति, दिति, दनु, काष्ठा, अरिष्टा, सुरसा, इला, मुनि, क्रोधवशा, ताम्रा, सुरभी, सरमा. तिमि ये कश्यपकी स्त्रियोंके नामहैं।

सरिता न्हान श्रेष्ठ मुनि कहई। तामें न्हात सबै सुखलहई ॥
अस विचार नृप गुरुगृह जाई। निजमनकी सब बात सुनाई ॥
दोहा-तब वसिष्ठमन हर्षह्वै, गो कन्या ढिग जाय।
कह्यो नदी इक चाहिये, कहो ताहि कहँ पाय ॥
तब नन्दनि असकही बखानी। सुनो कहूं मुनिवर विज्ञानी ॥
एक समय वैकुंठ मँझारी। रमासहित राजत सुखकारी ॥
महादेव हरिदर्शन कारण। आये उमासहित जगतारण ॥
नारदादि सनकादि मुनीवर। चतुरानन इन्द्रादि सकलसुर ॥
आय आय सबहिंन शिरनावा। प्रभु आदरकर सबहिं बिठावा ॥
सभा निरखि शिवमन अनुरागे। ब्रह्मभूतहो नाचन लागे ॥
नारद वीणाकी धुनि कीन्हीं। ब्रह्मादिक गावन मति दीन्हीं ॥
छैहों राग रागिनी छत्तिस। सम गुणग्रामसप्तस्वर बात्तिस ॥
ताल मृदंग सितारहु बाजे। भयोविनोद सु अधिक समाजे ॥
देखि नृत्य उत्सव सुखपायो। वरलीजै यह विष्णु सुनायो ॥
दोहा-हरबोले तुवभक्ति बिन, और चाहिये नाहिं।
जलभरि नैनन हरि कही, भक्तिदीन सुखपाहिं ॥ १ ॥
भयो जबहिं जलपात विधि, लीन्ह कमंडलुमाहिं।
गुप्तभयो सोइ तीर्थ तुम, मांगलाउ विधिपाहिं ॥ २ ॥
तुरत वसिष्ठ ब्रह्मपुर गयऊ। तहँकी शोभा निरखत भयऊ ॥
भालतिलक विधिके अतिसोहै। वेद उचारत लखि मुनि मोहै ॥
आगे धरे कमडण्लु सोई। तब वसिष्ठ शिरनायो जोई ॥
रहे विधाता ध्यान लगाई। बैठिगये तहँ मुनि सुख पाई ॥
बहुत कालमें त्यागो ध्याना। सुतविलोकिअतिहृदयजुडाना ॥
कहि आगमन हेतु समुझाई। तब वसिष्ठ अस गिरा सुनाई ॥

इक्ष्वाकू यजमान हमारो। पुर सरिताबिन रहत दुखारो॥
तिनके पुरसमीप सरि नाहीं। तिहिते मैं आयउँ तुमपाहीं॥
कृपाकरिय सरि दीजै सोई। जिहिते मोर जगत यश होई॥
दोहा-सुनत वचन ब्रह्मा हरषि, दियो कमण्डलु नाय।
चल्यो प्रवाह प्रवेगसे, संग चले ऋषि धाय॥ १॥
ब्रह्मलोकते मेरु पर, गिरो सुजल झकझोर।
ऐरावत रद हनन कर, डारो पर्वत फोर॥ २॥
तहँ ते चल भू तिब्बत आई। मानसरोवर गयो समाई॥
ताहिनिरखि मुनि भये दुखारी। किहिविधिनदिअबचलैअगारी॥
तहँ हरिधाम अनूपम सोहा। अतिशयअमलनिरखिमनमोहा॥
तहँ तप कियो महामुनि भारी। क्षीणभई काया ऋषि सारी॥
तब प्रभु द्वारपाल भिजवाई। ऋषि वसिष्ठकहँ लियो बुलाई॥
द्वारपाल सँग मुनी सिधाये। श्रीभगवान चरण शिरनाये॥
लखि प्रभु मुनिसे वचन उचारा। कारण कवन कियो तप भारा॥
मुनि वसिष्ठ सब कथा बखानी। जिहिविधिमानससरितसमानी॥
कह प्रभु जलहि हिलोरहु जाई। निकरि चलैगी सरित सुहाई॥
तब वसिष्ठ जल जाय हिलोरा। निकसिचलीसरितावर जोरा॥
सरिसे चलि सरयू भा नामा। चली पायनी गिरिपुर ग्रामा॥
इहिविधि बही अवधतर आई। नृपपुरवासी लखि मुदपाई॥
दोहा-करि पूजन नृप विविधविधि, दीनो विप्रन दान।
आय आय सुर देव मुनि, नर तिय किय अस्नान॥ १॥
नाम वशिष्ठी सरयुकहि, महामोद सबपाय।
दरश परश मज्जन किये, ताप पाप मिटजाय॥ २॥
इमि सरयू आई अवध, कही पुराणन गाय।

किहिंग्रंथनमें वामपग, हरिसे प्रगटी आय ॥ ३ ॥
कल्पभेदके चरितबहु, शंकायोग सुनाहिं ।
भजन करहु भगवानको, ताप पाप मिटजाहिं ॥ ४ ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ग्रंथउजागर सरयूउत्पत्ति वर्णनोनाम अष्टाविंशोऽध्यायः ॥ २८ ॥

दोहा-विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिरि राम सुखदान ।
अग्निपुराण रु भागवत, कहु इतिहास बखान ॥
शौनक कह्यो सूतसन वानी । कहो गंग जिहि विधि भू आनी ॥
कह्यो सूत इक सगर भुआरा । बहुतैभाँति प्रजहि प्रतिपारा ॥
तिनके सुमति केशिनी नारी । पुत्रबिना सो रहत दुखारी ॥
तब नृपसंग तिया दोउ लीन्ही । तपहितगये वनहि मनदीन्ही ॥
भृगु ढिग जाय महातप कीन्हा । वरमाँगहु भृगु कहिबे लीन्हा ॥
कह केशिनी एक सुत देहू । एवमस्तु दूसर वर लेहू ॥
तब कह सुमति वचन सुनिलेहू । साठ सहस सुत मोकहँ देहू ॥
वरदे भृगु आश्रमहि सिधाये । बहुन समेत भवन नृप आये ॥
केशिनिके असमंजस भयऊ । किये उपद्रव नृप वन दयऊ ॥
सुमति जनी इक तूमरि सोई । तिहिमें पुत्र भये कह जोई ॥
घटघटमें तिन किय प्रतिपाला । भये बडे रणधीर विशाला ॥
एकबार नृप सगर सुजाना । अश्वमेधमख विधिवत ठाना ॥
दोहा-इन्द्र हरो हय यज्ञको, राख कपिलमुनि पाहिं ।
सेना कह्यो सुनाय नृप, खोज अश्वकर नाहिं ॥
साठ सहस सुत नृपति बुलाये । अश्वखोजके हेतु पठाये ॥
तिन बालन सब भूमि मँझारी । मिल्यो न कतहुँ अश्व रिसभारी ॥
तब लागे भू खोदन सबहीं । उत्तर कपिलदेव जहँ बसहीं ॥

तहां जाय तिन हय लखिपायो। बँधो पिछारी तप मनलायो॥
तब नृपसुवन कही कटुवानी। चोरि अश्व बैठा बकध्यानी॥
सुनत वचन ऋषि चितवाजबहीं। भे सब भस्म क्षणकमें सबहीं॥
समुझ वचन जे नर नहिं,कहहीं। ते इहि भाँति सदा दुख लहहीं॥
यहां नृपति अंशुमान बुलाये। नहिं आये सब कहि समुझाये॥
असमंजस सुत परम सयाना। ताहि पठायो नृप करि माना॥

दोहा–जिततित खोजहु सकल तिन, मिले गरुडमगआय।
कथा सुनाई जिमि जरे, नृपतिपुत्र दुखपाय॥

अंशुमान सुनि तुरत नहाई। अंजलि दीन्ह तिन्हैंदुखपाई॥
कपिलदेव ढिगपुनिचलिआयो। विनयकीनतबहयमख पायो॥
कही गरुड पुनि बात बखानी। गंगाभूमि सकहु जो आनी॥
तौ सब पितर परमपद जाहीं। और उपाय देखियत नाहीं॥
अंशुमान कह जिहि विधि गंगा। उत्पत्ती भइ कहो प्रसंगा॥
कहै गरुड़ जबबलिमखकीन्हा। इन्द्रलोकजयको मनदीन्हा॥
तब प्रभुमन निज कीन्ह विचारा। करत अन्यायअसुरयहभारा॥
वामनरूप धर्यो भगवाना। बावन अंगुल तनुपरिमाना॥
मांगन हेतु कहूँ जो जाहीं। गुरुता मानरहत कछु नाहीं॥
याते हरि वामन ह्वै गयऊ। अदितिजठरते जन्मत भयऊ॥

दोहा–ब्रह्मादिय उपवीत जब, भिक्षाहित भगवान।
राजा बलिके निकट कहँ, तुरतहि कीन पयान॥

शास्त्रवाद जब बलिसे भयऊ। राजा महा चकित ह्वै गयऊ॥
जो इच्छा लीजै ब्रह्मचारी। देहु तीन पग भूमि विचारी॥
राजा कही लखहु मम ओरा। पाछे मांगहु दान अथोरा॥
मोसम दानीके ढिग आई। याचक नहीं अन्य ढिग जाई॥

कह प्रभु द्विजै उचित संतोपा । असंतुष्ट कहुँ नहिं कहुँ तोषा ॥
असन्तुष्ट द्विज नृपसंतोषी । निलज नारि कुलवन्ती दोषी ॥
लज्जायुत गणिका जो होई । यह सब नशत जानिये सोई ॥
सुनत शुक्र बोले असवानी । यह भगवान लखहु नृपज्ञानी ॥
इनको दान देहु नृप नाहीं । राजा गुणत कही गुरुपाहीं ॥

दोहा—आदिपुरुष भगवानको, जो नहिं देहौं दान ।
बरबश लैतौ वशकहा, मैं करिहौं सन्मान ॥ १ ॥
यश कीरति युगयुग चलै, वश्यहोहिं भगवान ।
कहत शुक्र धनहीननर, पावत बहु अपमान ॥ २ ॥

मित्रनारिजन बन्धुनमाहीं । निर्धनसे कोइ भाषत नाहीं ॥
ताते धनकी रक्षा करहू । वचनमोरअतिहितचितधरहू ॥
कह बलि देन कह्यो वरदाना । देहुँ नतौ अघ होय महाना ॥
कह भृगु पांचठौरके माहीं । झूंठ कहे अघ लागत नाहीं ॥
निजतिय व्याहमध्य धनकारन । संकटप्राण होय जब मारन ॥
गोद्विज हिंसा टारनमाहीं । झूंठ कहे अघ लागत नाहीं ॥
जो रक्षक सबलोकनकेरे । असुरहते निजहाथ घनेरे ॥
मो आगे तिन हाथ पसारा । किमि न देहुँ सो करहु विचारा ॥
तन धन धाम धरणि जो मांगे । तो सब देहुँ भूमि किहि लागे ॥
अस कहि करन संकलप लागे । प्रविशो कवि झारीके आगे ॥
रुक्यो नीर प्रभु डाभ चलायो । आंख एक खो बाहर आयो ॥
पूर्णभयो संकल्प सु जबहीं । देह बढाई प्रभु निज तबहीं ॥
पग भू जंघलोक ध्रुव जाई । कटि गइ स्वर्ग उदर शिवपाई ॥
रविसुतलोक हृदय महँ आयो । कंठ गयो तपलोक सुहायो ॥
आनन सत्यलोक महँ गयऊ । ऐसो दीर्घ रूप प्रभु कियऊ ॥

अस वपु कर भू नापनलागे । देखि लोग सब अचरज पागे ॥
तल अरु अतल वितल सुनिराई । लोक तलातल भू बहुताई ॥
लोक रसातल अरु पाताला । एकचरण लिय नाप कृपाला ॥

दोहा—भूः भुवः स्वः तप महर, जनः सत्य यह सात ।
नापे दहिने चरणमें, अस बाढो प्रभुगात ॥

ब्रह्मलोक दूसर पग गयऊ । लखिविधितुरत धोयसोलयऊ ॥
धरचो कमण्डलुमें विधिआनी । सोइ भई गंगा सुखदानी ॥
इहिविधि गंगा भई सुहाई । तपकरि तिहि लावहु नृप जाई ॥
दोपगमाहिं लोक सब नापी । इकपगहेत कह्यो कर थापी ॥
तब बलिनृप निज पीठ झुकाई । एकलोकसम लेहु नपाई ॥
सुनत वचन रीझे भगवाना । कह्यो लेहु इच्छित वरदाना ॥
कह बलि ज्यों प्रभु दाया कीजे । तौ यहि रूप दरश नित दीजे ॥
एवमस्तु कहिं प्रभु सुखदाई । दीन्ह सुतलकी ताहि रजाई ॥
द्वारपालवपु कृपा निधाना । रहत तहां यह सब जगजाना ॥
कृपाकोप बड़जनकर ऐसो । हरिसन्मुख सबविधि फलतैसो ॥

दोहा—बड़ेबड़ेनते छल करहिं, जन्म न बिसरत सोय ।
वृंदा प्रभुके शिर लसत, गति वामन बलि जोय ॥ १ ॥
यह चारित्र सुन नृपकुमर, गये पिताके पास ।
अश्वदेय विधिवत कह्यो, प्रगट शोक इतिहास ॥ २ ॥

वैनतेय निजलोक सिधाये । नृपतियज्ञ पूरण करवाये ॥
अंशुमान कहँ दे नृपराजू । गे वन साधन हित निजकाजू ॥
अंशुमानकुल भये दिलीपा । तिन्हैं थापि वनगये महीपा ॥
भागीरथ दिलीपके भयऊ । कीरतिजासुसकलदिशिछयऊ ॥
तिन्हैं राज्यदे नृप वन गयऊ । भागीरथसुत काकुत्स्थ भयऊ ॥

भागीरथसुतको करि राजा। चले गंगहित तपके काजा॥
रविसन्मुख ह्वै ध्यान लगाये। तपनलगे इक चरण उठाये॥
सहस वर्षपर ब्रह्मा आये। माँगहु वर अस वचन सुनाये॥
कह नृप जो प्रभु कृपाकरेहू। गंगा भूमें आवनदेहू॥
कह ब्रह्मा हम छांडब जबहीं। जाइहि गंग रसातल तबहीं॥
तिहिते शिव आराधहु जाई। शिररखैं अस करहु उपाई॥
सहसवर्षमें शंकर आये। माँगहु वर यह वचन सुनाये॥
गंगा धरहु शीश भगवाना। एवमस्तु सुनि वचन बखाना॥
दोहा-ह्यां सुरसरि शिववचन सुनि, मन महँ कीन्ह विचार॥
जाँउ रसातल शिवसहित, नेक न लावहुँ बार॥
कृपासिंधु शिव कीन उपाई। निजशिरजटा सो अगम बनाई॥
सुनिनृपविनयछांडविधिदीन्हीं। शंकर सकल शीशपर लीन्हीं॥
यहिविधि सो हरजटा समानी। वर्षएकलों रहीं भुलानी॥
बहुरि भगीरथ बिनती कीन्हीं। शंभु निचोरि जटाते दीन्हीं॥
तिहिते भई तीन पुनि धारा। एक गई नभ एक पतारा॥
एक धार जो भूपर आई। भई सोइ यह गंग सुहाई॥
मन्दाकिनि सुरलोक कहाई। प्रभावती पाताल बताई॥
गंगा चली नृपतिके पाछे। आगे चले नृपति गुणआछे॥
दोहा-विविधदेश पावनकरत, गंगा सागर आय।
तारदिये सब सगरसुत, रह्यो सुयश महिछाय॥
इहिविधिते गंगा महिआई। जासु महातम कह्यो न जाई॥
दशसहस्र सम्वत व्रत करही। दान यज्ञ व्रत नेम सुधरही॥
सकल पुण्य यह तुलाचढावै। गंगन्हानसमता नहिं पावै॥
सुर मुनि देव सकलतहँ आये। गंगहेत व्रत तप मनलाये॥

हरिजन प्रभुपादोदक जानी। लगे न्हान अतिशय सुखमानी॥
जिमि रवि अंधकार सबनाशै। इहिविधि गंगा पापविनाशै॥
दर्शन किये जन्मशतकेरे। पिये जाहिं दोशतजनु हेरे॥
मज्जनकिये परम सुख पावत। सहस जन्मके पाप मिटावत॥
जो हस्तीसम न्हान न होई। तौ हरिधाम बसै नर सोई॥
विविधभाँतिके पापी जेते। न्हाये गंग तरैं सब तेते॥
गंग महातम अहै अपारा। को कवि वरणिसकै तिहिपारा॥

छंद–पार नहिं लहि सकत कविजन विष्णुचरणामृत महा।
वर्णंत निगम आगम यतनकर मिश्र मैं वर्णहुं कहा॥
जो प्रेम श्रद्धा नेम हियधारि गंगमें नित न्हावहीं।
वह पाय सुरदुर्लभ पदारथ अन्त हरिपुर पावहीं॥

दोहा–जन्मजन्मके पापहर, गंगाकर अस्नान।
नहिं को तीरथ जगतमें, गंगसमानमहान॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ग्रंथउजागर गंगोत्पत्तिवर्णनो नामैकोनत्रिंशोऽध्यायः॥ २९॥

दोहा–विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमरि राम सुखदान।
अब ब्रह्माण्डपुराणकी, कहुँ इतिहास बखान॥

पुनि शौनक बोले शिरनाई। गंगाकी उत्पति तुम गाई॥
अब प्रभु मोहिं कहो समुझाई। एकादशि कैसे जन्माई॥
सुनत सूत अस गिरा उचारी। धनधन शौनक बुद्धि तुम्हारी॥
पाप हरणकारी सुखदाई। प्रश्न तुम्हार ईश गुणपाई॥
सो इतिहास सुनावौं भाई। जस कछु बुद्धिहि रह्यो समाई॥
इक सुर असुर महा दुखदाई। सतयुग माहिं प्रगट भो आई॥

शंखासुर सुतपितुवध जानी । वनमें जाय कठिन तप ठानी ॥
ब्रह्मा आय वचन अस भाषा । माँगहु वर जो मन अभिलाषा ॥

दोहा-कह्यो असुर सब सृष्टिमें, हमैं न जीतै कोय ।
एवमस्तु कहि विधिगये, निजपुर आयो सोय ॥

भुजबलजिते सकलमहिपाला । लोकपाल दिग्पाल विशाला ॥
शक्रसहित सुर हारे सबहीं । असुरकिये निज थल वे तबहीं ॥
वरुण कुबेर काल यमराई । तजि निजथल सब गये पराई ॥
इहिविधिनिजवशकरिसबलोका।निजसेवक दिय थाप विशोका॥
सुरगणसहित इन्द्र तब जाई । शंकरसों सब बात सुनाई ॥
असुर हमैं प्रभु बहुत सतावा । अब यहिकर कछु करहु बनावा॥
कह शिव श्वेतद्वीपमें जाई । कमलनाभिको देहु सुनाई ॥
सुनि शिववचन इन्द्र तहँजाई । हाथजोरिअस विनय सुनाई ॥
जयजगदीश अजितअविनाशी। करुणामय घटघटके वासी ॥
जय जय दीनदयालु कृपाला । पूरणब्रह्म विराज विशाला ॥
जब जब विपति सुरन पर आई । तब तब तुम बहुभाँति नशाई ॥
अब सुरते प्रभु रक्षा कीजे । जीवदान देवनको दीजे ॥
दिग्पालनको बहुत सतायो । अबप्रभु दुःख नजातउठायो ॥
जाँय कहां किहिको प्रभुटेरैं । तुमबिन और कौन जिहि हेरैं ॥
जय जय जय प्रभुसबदुखहारी । अब प्रभु करहु सहाय हमारी ॥

दोहा-सुनत वचन कह विष्णु अस, अभयहोहु सुरवृन्द ।
असुरमार भूभारहर, करिहौं दुष्टनिकन्द ॥

यह सुनिसुरगणसकलसिधाये । निशिचर समाचार यह पाये ॥
सैनसहित सो तुरत सिधावा । देवनके तब सन्मुख आवा ॥
उठी धूरि रविगयो छिपाई । मारु २ धुनि तिहिक्षणछाई ॥

जय जय असुर कहैं छलकारी। देवनहू तव सेन सँभारी॥
जय २ कर अतिभई लराई। महा विकट सो कही न जाई॥
शक्तिशूल बहु बाण प्रचण्डा। भिन्दिपालअरुचक्रभुशुण्डा॥
चलनलगी दुहुँ ओरन माहीं। वार २ तनु कट २ जाहीं॥
मारु मारु कहि सुरगण धावहिं। असुरनिकन्दनको गुहरावहिं॥

दोहा—कालरूप सुर क्रोधकर, चलो असुर बलवान।
धनुचढाय सुरगणनके, मारन लागो बान॥ १॥
इन्द्रादिक बहु देवगण, तब सब गये पराय।
सन्मुख आयो विष्णुके, तबैं असुरखल धाय॥ २॥

छन्द—किय विष्णु क्रोध अपार। निजचक्र कियो प्रहार॥
नहिं घाव आयो ताय। तरज्यो तमीचर धाय॥
हरिपै सुकियो प्रहार। इहि भाँति युद्ध अपार॥
गये वीत वर्षहजार। मुनि सिद्ध हाहाकार॥
तब विष्णु रणदिय त्याग। पुनि असुर पाछे लाग॥
प्रभु विपिन बद्री आय। प्रविशे गुहामें धाय॥
रहैं सिंहवत तहँ नित्त। योजन तरणि बड वित्त॥
तबअसुरसो लखिद्वार। निजसेन सकल पुकार॥
ले संग योधा सर्व। प्रविश्यो गुहा युतगर्व॥
दानववधनके हेत। प्रभु किय उपाय सचेत॥
गये आप तौ तहँ सोय। कन्या प्रगट उर होय॥
बल तेज जासु अपार। है जगत जासु अपार॥
भुजचार दिव्यशरीर। भूषण वरायुध चीर॥
सो आदिमाया आहि। विधि शिव डरत लखि जाहि॥
लखि दनुजको तत्काल। तिहि कीन्ह युद्धविशाल॥

सब ओर लागी आग। कहँ जाहि निशिचर भाग ॥
भे भस्म सब देवारि। निकसी सुगंध अपारि ॥
तब इंद्र आये धाय। प्रविशे गुहामें जाय ॥
अरु नारदादि गणेश। कियो कन्दरा परवेश ॥
जगमात तहां निहारि। तनुपुलक लोचनवारि ॥
तब इंद्र भारि अनुराग। स्तुतिकरन तहँ लाग ॥

छन्द-जगजननि जय जय जयतिअघहरनी सदा जगकारिणी ॥
चक्र शूल कृपाण असिवर विविध आयुध धारणी ॥
सुखभवनि दुखदवनि माता पक्षहरि जगतारिणी ॥
रोगतमकहँ तरणि कलिमल हरणि स्वयंविहारिणी ॥

दोहा-भूत प्रेत ग्रह यक्षिनी, शाकिनि डाकिनि जोय।
नामलिये जगमात सब, दूर होतहैं सोय ॥ १ ॥
करि स्तुति बहु इन्द्र इमि, देवन हने निशान।
सुमन वरषि जय जय करी, तब जागे भगवान ॥ २ ॥
दिग्पालनयुत देवसब, रह जहँ तहँ शिरनाय।
देखि असुरवद विष्णुतब, बोले अतिसुखपाय ॥ ३ ॥

देवनको किय अतिकल्याना। माँगु देवि इच्छित वरदाना ॥
कहै देवितब तनु प्रगटाई। मारे असुर सबै दुखदाई ॥
याचन मोकहँ आवत नाहीं। देहु आप जो रुचिमनमाहीं ॥
कह प्रभु लोक रहो चल मेरे। नाम इकादशि कहैं घनेरे ॥
अष्टसिद्धिनवनिधिकी दाता। सदाचार फलप्रद सुरत्राता ॥
व्रत पूजा सुनेम नितधारी। मनोकामना लहि नरनारी ॥
ग्यारह इन्द्रिन रोंकहि जोई। करहिं इकादशि व्रत जो कोई ॥
ते सब मनोकामना पावें। यह महात्म्य एकादशि गावें ॥
इहि प्रकार प्रभु दे वरदाना। अन्तर्धान भये भगवाना ॥

दोहा-पुनि शौनक कह कौन विधि, व्रतएकादशि होय।
कौन अहार सुपान भल, वर्णन कीजै सोय ॥
सुनत सूत बोले मृदुवानी। सुनहु तात मैं कहत बखानी ॥
जो एकादशि करनी चाहीं। दशमीते अस नेम निवाहीं ॥
मास मसूर कांस तियसंगा। कोदो चना पलँग कुप्रसंगा ॥
यहसवप्रथमदिवसकरत्यागी। अल्पाहार करै बड़भागी ॥
मधु औ दशौं शाक परिहरई। होत विहान इकादशि उठई ॥
शुचि अस्नानकरै नर जबही। ठानै हरीकी पूजा तबही ॥
षोडशभाँति पूज भगवानै। उनके गुण बहुभाँति बखानै ॥
क्रोध लोभ मद काम रु माया। तोय तप्त मद रति सँग जाया ॥
निद्रा हास्य असतकरत्यागन। कुत्सित वचन त्यागदँतधावन ॥
दोहा-करै रात्रिमें जागरण, गुणगावै भगवान।
प्रातक्रिया करि विप्रको, देइविविधविधि दान ॥ १ ॥
आमिष तेल परानका, भोजन मैथुन गान।
यह द्वादशिको ना करै, ग्रंथनमें परमान ॥ २ ॥
इहिप्रकार जो करैं विधाना। तिनकर फल बहुग्रंथ बखाना ॥
बडे बडे तीरथ करिआवै। गोसहस्र जो दानकरावै ॥
होमयज्ञ जो करै हजारन। विप्रजिमावै बहुतकवारन ॥
एकादशीव्रत्त जो करई। सो इनसबकर फल अनुसरई ॥
व्रतविधिसहित करै विश्वासा। होय विष्णुपुर तिहिकरवासा ॥
पूरणफल नहिं किये अहारा। दुग्धपान फल अर्ध विचारा ॥
फलअहार फल है चौथाई। कंद आठवां भाग बताई ॥
करै उदरभर भोजन जोई। शतवां अंश तासु फल होई ॥
करै बार द्वै भोजन जोई। सहस अंश ताको फल होई ॥

दोहा-एकादशिको दिवसमें, अन्नखाय जो कोय।
अथवा देवे काहुको, ताहि दोष अति होय ॥ १ ॥
व्रतकीये जो विपयरत, तौ अति होइहि पाप।
ताते भजिये रामको, दूर होहिं सन्ताप ॥ २ ॥
दशमीवेधी त्यागकै, द्वादशिव्रत्त करेह।
पैंतालिस घटिसे अधिक, दशमी होय जो नेह ॥ ३ ॥

तो अगले दिन व्रत नहिं करई। द्वादशिमाहिं धर्म अनुसरई ॥
एकवर्षमें चौबिस होई। वर्णन करहुँ करो तुम सोई ॥
अगहनकृष्ण इकादशि आवै। शयनबोधिनी नाम कहावै ॥
विप्रकोटिशत भोजन दीन्हे। जो फल सो यहि व्रतकेकीन्हे ॥
मार्गपक्ष सित मोक्षद होई। रहै व्रत्त हरिपुर वसि सोई ॥
ब्रह्मपुराणमाहिं इहि ऊपर। इक इतिहासकह्योअतिसुन्दर ॥
गोकुलनगर मांझ इक राजा। वैखानस अस नाम विराजा ॥
तिहि अपनो पितु नरकमँझारी। स्वप्ने लखो भयो दुखभारी ॥
राजकाज मन लागत नाहीं। किहिविधि तरैशोचमनमाहीं ॥
पुरुपा जासु अधोगति पावैं। जन्म पुत्र तिन वृथा गँवावैं ॥
अस कहि अत्रिकआश्रम जाई। करि प्रणाम निजकथाबुझाई ॥
तबकहऋषि तवपितु इकबारा। ऋतुवालीतियभोग विचारा ॥
सुनि रतिदान दीन्ह तिहिनाहीं। तिहि अघपरयोनरकके माहीं ॥

दोहा-मार्गशीर्षसितपक्षकी, करहु इकादशि आप।
दानकरो फलपिताको, दूरहोहि सन्ताप ॥

बचन सुनत नृप मंदिरआई। करि व्रतफल अपों पितुताई ॥
ताकी मोक्ष भई तत्काला। कहि जय वर्षे सुमन विशाला ॥
जोनभाँतिसे जो व्रत धारै। तिहि सम सो निश्चयफलसारै ॥

पढै सुनै जो कोइ मनलाई। वाजपेयमखकर फल पाई॥
अतिशय सुखद रामको नामा। कलिमें दायक है सबकामा॥

दोहा–एकादशिके कियेते, मिटत सकल भवरोग।
ताते याको सेइये, करहिं ब्रह्मसंयोग॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर एकादशी उत्पत्ति मार्गशीर्षकृष्ण पक्ष शयनबोधिनी मोक्षदाकथावर्णनो नाम त्रिंशोऽध्यायः॥ ३०॥

दोहा–विधि हरि हर गणपगिरा, सुमरि राम सुखदान।
बामन ब्रह्म विवर्त्तका, कहुँ इतिहास बखान॥

कह शौनक अब पौषसुमासा। कह एकादशि सहित हुलासा॥
कहै सूत सुनिये ऋषिबाता। असित पक्षसफला विख्याता॥
कन्या सहसदान जो करही। एकादशि व्रतसम अनुसरही॥
यापर इक इतिहास बखाना। महिष्मत नृपचन्द्रावलि थाना॥
ताको पुत्र अधर्मी भारी। लम्पट मद्यप चोर जुवारी॥
लखि नरेश वन दीन निकारी। कीन्ह निवाह मृगनको मारी॥
पौषकृष्णएकादशिके दिन। मिल्यो अहारताहिनहिं कहुँतन॥
क्षुधितरह्यो नहिं निद्रा आई। व्रत जागरण भयो सुखदाई॥
तुरतहि मन पावन ह्वैगयऊ। आपन दशाज्ञान तब भयऊ॥
भवन आय पितुपद शिरनावा। पितुकी कृपा राजपद पावा॥
ऐसो फलव्रत किय अनजाना। जानेफल किमि कहौं बखाना॥
जो यह कथा सुनै औ कहई। कन्यादानकिये फल लहई।

इति श्रीपौषकृष्णएकादशीकथामाहात्म्यसम्पूर्णम्।

शौनक कहै पौषसित जोई। प्रभु एकादशि कहिये सोई॥
कहैं सूत सुनिये मनलाई। शुक्लपक्ष पुत्रदा कहाई॥

लक्ष्मीनारायणकी सेवा । संयम नियम करै युत भेवा ॥
यापर मैं वर्णहुँ इतिहासा । केतुमाननृप भाद्रनिवासा ॥
तिहिके पुत्र भयो कोइ नाहीं । कारि विचार गमन्योवनमाहीं ॥
जहँ तहँ तरु खग मृगभरपूरी । कानन मंगलमय छवि रूरी ॥
तहँ मुनि सोम मिलेसुखदाई । कारि विनतीनिजकथासुनाई ॥
कह मुनि पौषशुक्कपखमाहीं । करहिं पुत्रदाव्रत सुतपाहीं ॥
ताते व्रत्त करहु तुम जाई । सुन गवने भूपति हरषाई ॥
व्रतकरिकै सुन्दर सुत पावा । सुखसम्पति बाढी गुणगावा ॥

इति श्रीपौषशुक्कएकादशीमाहात्म्यसम्पूर्णम् ।

दोहा—कह शौनक अब माघकी, कथा कहो समुझाय ।
कहत सूत मुनिरायसों, सुनहु कहतहौं गाय ॥

माघकृष्ण हरिवासरनामा । नाम षट्तिला दायककामा ॥
तिलपिंडन नारायण राखै । विविधपूजकर स्तुति भाखै ॥
पावहि तिल विप्रहि तिल देई । तासु पुण्यते सुरपुर लेई ॥
यापर एक कहौं इतिहासा । शशिपुर इक ब्राह्मणीनिवासा ॥
विविध नेमव्रतसंयम करई । दानदेनमें चित्त न धरई ॥
देख व्रत्त हरि यांचा कीनी । तिन रिसायकर माटी दीनी ॥
ताके पुण्यप्रताप सुहावन । सुरपुरमें मंदिर मिलि पावन ॥
पर धन धान्य कछू तहँ नाहीं । तब चिन्ता व्यापी मनमाहीं ॥
दरशनको आईं सुरनारी । देख कुटी यह गिरा उचारी ॥
जोतुम दरश कियो चह मोरा । देहु षट्तिलाव्रतफल थोरा ॥
दरशन हितइकादियव्रतकोफल । ऋद्धिसिद्धि सब भईंताके भल ॥
जो यह कथा सुनै मनलाई । तिनके अवशि पुण्य सरसाई ॥

इति श्रीमाघकृष्णैकादशीमाहात्म्यसम्पूर्णम् ।

दोहा-माघशुक्कएकादशी, कथा सुनो मनलाय ।
जया नाम अतिअघहरत, सुन इक चरित सुहाय ॥
इन्द्रलोकअप्सरा सुहाई । नितितरही शक्र समुहाई ॥
मालव गंध्रव देखि लुभानी । तुरत इन्द्र यह लीनो जानी ॥
शाप दियो वृषलखिमतिकाची । हो दोउ जायपिशाचपिशाची ॥
दोउभू आय रहे वनमाहीं । दुःख लहे कोउ जानतनाहीं ॥
माघशुक्क एकादशि भयऊ । विनजाने दोउ व्रत हुइगयऊ ॥
गये यानचढि स्वर्गमँझारी । यहै भविष्यकथा विस्तारी ॥
इति श्रीमाघशुक्कैकादशीमाहात्म्यसम्पूर्णम् ।

दोहा-अब फागुन पख कृष्णकी, सुनिये कथा विशाल ।
विजयानाम प्रसिद्धहै, देत विजय सबकाल ॥
जब रघुनाथ गये वनमाहीं । हरी जानकी दशमुख ह्वाहीं ॥
ले बहुसेन चढ़े प्रभु जाई । सागरतट उतरे रघुराई ॥
वकदाल्भ्यऋषिहि ढिग जाई । कहो विजयकर आप उपाई ॥
तब मुनि ऐसे बचन उचारी । सुनहु राम जगदीश खरारी ॥
फाल्गुनकृष्णइकादशि जोई । किये विजय पावत सब कोई ॥
करहु जाय हुइहै अतिजीती । सुनि प्रभु व्रत कीन्हा अतिप्रीती ॥
कुटुँबसहित रावण संहारा । कल्पभेद हरिचरित अपारा ॥
यह अस्कन्दपुराण बखाना । पढे सुने पावहिं फल नाना ॥
यमकी त्रास निकट नहिं आवै । जो यह कथा प्रेमकरि गावै ॥
इति श्रीफाल्गुनकृष्णएकादशीमाहात्म्यसंपूर्णम् ।

दोहा-फाल्गुनशुक्लैकादशी, आमलकी शुभनाम ।
शतगोदानसमान फल, सिद्ध होत सब काम ॥

आमलतरुकी पूजा करहीं । विप्र जिमाय दान बहु सरहीं ॥
हरिसुमिरण करि करि गुणगावै । आधिव्याधिदुखदरिद नशावै॥
यह व्रत जब कीन्हों सुग्रीवा । लह्यो राजसम्पति सुखसीवा ॥
दमयन्ती नल यह व्रत ठाना ।व्याधिविपतिअरुदुःखनशाना॥
आमलकी प्रभाव दुर्वासा । नृपके प्रीतम भये सुवासा ॥
जो यह कथा सुनै मनलाई । पुष्कर मज्जनकर फल पाई ॥

इति श्रीफाल्गुनकृष्णआमलकीव्रतमाहात्म्य सम्पूर्णम् ।

दोहा—कह शौनक अब चैत्रकी, कहो कथा समुझाय ।
सुनत सूत बोले हरपि, शुनु मुनिवर मन लाय ॥
चैतकृष्ण एकादशि भाई । पापमोचनी नाम कहाई ॥
व्रतकीनेते शुभगति होई । कहौं कथा इक सुनिये सोई ॥
है भविष्यमें इहि विस्तारा । च्यवनपुत्र मेधावी बारा ॥
ताके तपकी लखि अधिकाई । इन्द्र अप्सरा एक पठाई ॥
हावभावकर मुनिहि लुभायो । वर्ष पचाशी मुनिहि बितायो ॥
तब अप्सरा कही मैं जाऊं । मुनिकह प्रात धारियो पाऊं ॥
कह तिय तबै रात्रिपरमाना । कितने सम्वत् करहु प्रमाना ॥
सुनि अस चेतभयो मुनिराजै । लखि तपहानि लगी मन लाजै॥
दीन शाप करि क्रोध अपारी । होहु पिशाची तपक्षयकारी ॥
सुनि कम्पितहो चरणनलागी । कीजे कृपा दीन अनुरागी ॥
तब ऋषि कही चैत्र हरिवासर । करिहो व्रत जैहैं संकट टर ॥
सुनि तिहि व्रतकीनो मनलाई । पावन ह्वै सुरलोक सिधाई ॥
श्रद्धासहित सुनै जो कोई । चान्द्रायण व्रतकर फल होई ॥

इति श्रीचैत्रकृष्णपापमोचिनीमाहात्म्य संपूर्णम् ।

दोहा—चैत्रशुक्लएकादशी, कहत कामदा नाम।
व्रत करते जो प्रेमसे, सिद्ध होत सब काम॥

यापर इक इतिहास बखानो। पुण्डरीकनृप सुतल रहानो॥
ललितागंधर्वीतिहि तीरा। खेलत करी नृपति तिहिभीरा॥
कामातुर है गान बिगारो। तासु शाप निशिचर वपुधारो॥
पतिगतिलखिपुनितियअकुलाई। गतिहित खोजनलगी उपाई॥
पुनि तिहिवनमें कीन्ह पयाना। तहँ तपशील मिले मुनि नाना॥
तिनसों अपनी विपति सुनाई। तिन कहि कामद व्रत कर जाई॥
तिय कर व्रत्त ताहि फल दयऊ। तजिनिशिचरपन गंधर्वभयऊ॥
चढि विमान सुरलोक सिधारे। कहत सुनत पावत फल भारे॥

इति श्रीचैत्रशुक्लकामदामाहात्म्य संपूर्णम्।

दोहा—कह शौनक वैशाखकी, हरिवासरहैं दोय।
वर्णनकीजे तासु फल, सुनत महासुख होय॥

कहे सूत सुनिये मनलाई। नाम वरूथिनि प्रथम सुहाई॥
सबविधि करत मनोरथ पूरी। कियेव्रत्त पावत फल भूरी॥
इक द्विज सुच यहै व्रत कीन्हा। मारगजात सिंह धरलीन्हा॥
कह द्विज मैं हरिमंदिर जाऊं। करहुँ जागरण हरिगुण गाऊं॥
सो मैं शपथ करहुँ यह भारी। काल प्रात लौटहुँ बलधारी॥
सुनि असवचनसिंहत्ताजिदीन्हा। करिजागरणगमनपुनिकीन्हा॥
किये समय मृगपतिपहँ गयऊ। व्रतप्रसाद ताने तजि दयऊ॥
अन्तसमय हरिपुर पगुधारा। कहत सुनत फल होतअपारा॥

इति श्रीवैशाखकृष्णवरूथिनीमाहात्म्य सम्पूर्णम्।

दोहा-अब माधवशुक्लाकथा, सुनो मोहिनीनाम।
विष्णुचरणसेवाकिये, सिद्धहोत सवकाम ॥

षोडशभाँति पूजि शिरनावै। करै प्रदक्षिण जय यश गावै ॥
चारि अर्घ्य अर्पै हरिहेता। रविहि सात इक चन्द्रसचेता ॥
प्रभुढिग असतविवाद न ठानै। गर्भालयपादुका न आनै ॥
आगे पृष्ठ उपदिशा बामा। जपतपहोमन करै प्रणामा ॥
इहिविधि बारह दोष विहाई। कृष्ण भजे सब पाप नशाई ॥
कर्मपुराणकथा इक भाखी। वर्णतहौं करि ताकी साखी ॥
एक समय रघुनाथ गुसांई। कह्यो वसिष्ठगुरुहि समुझाई ॥
स्वप्नमाहिं दीखत दशकंधर। उपजावत भय तनू भयंकर ॥
याको कहिये कछुक उपाई। सुनि वसिष्ठ बोले हरषाई ॥

दोहा-राम तुम्हारे नामते, मिटत सकल जंजाल।
कियो लोकहित प्रश्न यह, कौशलपाल कृपाल ॥

माधव शुक्ल करहु हरिवासर। मिटहिंदोषदुखसकलभयंकर ॥
यापर एक सुनहु इतिहासा। जासे होय सकल दुखनासा ॥
सोमवतीपुर सरस्वति तीरा। बसै वैश्य धनपाल सुधीरा ॥
तासु तनय कुत्सित अतिपापी। महाधूर्त्त सज्जन संतापी ॥
सुन राजा तिहि दण्डकरायो। जायबसो कानन भयपायो ॥
वनके खग मृग करत अहारा। इकदिन न्हायो सुरसरिधारा ॥
कौडिन्याश्रमलखि शिरनावा। पापनाशहित वचन सुनावा ॥
कह मुनिकरहु मोहिनीको व्रत। सकलपापनाशहिंनिर्मलचित ॥
सो व्रत कीन सकलदुख गयऊ। दिव्यदेहधरि सुरपुर लयऊ ॥
जो यह कथा कहैं औ गावहिं। सो आधे व्रतकर फल पावहिं ॥

इति श्रीवैशाखशुक्लमोहिनीमाहात्म्य सम्पूर्णम्।

सोरठा-कह शौनक शिरनाय, ज्येष्ठकृष्णहरिव्रतकथा।
सो अब देहु सुनाय, सूत कहेउ मुनि वचन अस ॥
ज्येष्ठकृष्णजिहि अपरा नामा। पापहरनि दायक विश्रामा ॥
इक इतिहास शास्त्रमें भाखा। कहहुँ सुनत पूरै अभिलाखा ॥
सत्यवती इक ब्राह्मणि रहई। हरिके मिलनहेत मतिगहई ॥
हरिदर्शनहित पूछत सबहीं। भेंट करत सुन्दर फल तबहीं ॥
लखिलालसा कही मुनिबानी। सत्यवतीसुनिवचन सयानी ॥
ज्येष्ठकृष्ण अपराव्रतकीजे। मिलै सोइपति जिहिमनदीजे ॥
सो सुनिकरन लगी व्रतनारी। द्विजन जिमायदानादियभारी ॥
तजशरीर अन्तहिसो नारी। सतभामा भय हरिकी प्यारी ॥
इकदिन आपन पहले तनकी। पूछी कथा कृष्णके मनकी ॥
भगवत यह वृत्तान्त सुनाई। सुनि एकादशिकीन्ह बड़ाई ॥
अपराव्रत निगमागम गावै। पढत सुनतगोशतफलपावै ॥

इति श्रीज्येष्ठकृष्णअपरामाहात्म्य सम्पूर्णम्।

दोहा-ज्येष्ठशुक्लएकादशी, जासु निर्जला नाम।
याके व्रत औ दानसे, पावत सब मनकाम ॥
निर्जलव्रत्त करै इहिमाहीं। हरिपद धेनुद विप्र जिमाहीं ॥
द्वादशिदिन पारण जो करई। यमयातना तासु निर्वरई ॥
वरण्यो व्यास भीमके पासा। इहिदिनकर एकहु उपवासा ॥
तौ सब एकादशिफल पाई। जो नहिं करै फेर पछिताई ॥
करै न व्रत चाण्डालसमाना। तनुत्यागे दुख पावै नाना ॥
भीम कहो कछु कहो उपाई। विना अन्न मुहिं रहा न जाई ॥
बोले व्यास निर्जला कीजे। चौबिसएकादशिफल लीजे ॥
सुनि सब भीम कठिनव्रतठाना। भे प्रसन्न तिनपर भगवाना ॥

दोहा—सुनै कथा मनलाय जो, गयापिण्डफल जौन ।
सो पावहि निश्चय कही, व्यासदेव गुणभौन ॥

इति श्रीविश्रामसागरसबमतआगरग्रंथउजागरचतुर्विंशएकादशी माहात्म्यवर्णनोनामैकत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३१ ॥

दोहा—विधि हरि हर गणपतिगिरा, सुमरि राम सुखदान ।
बरणौं विविधपुराणके, पुनि इतिहास बखान ॥ १ ॥
शौनक कहैं अषाढ़के, हरिवासरहैं दोय ।
तिनकी कथा पुनीत अति, मोहिंसुनावहु सोय॥ २ ॥

कृष्णाषाढ योगिनी नामा । यहिव्रतरहे सिद्ध सबकामा ॥
यहिपर एक कहौं इतिहासा । ब्रह्मविवृत्तहि जासु प्रकासा ॥
अलकापुरी यक्षपति रहई । वटुक हेम तिन माली कहई ॥
नारी ताहि मृगाक्षी नामा । तिहिके बशीभूत रह कामा ॥
पूजहिं नित कुबेर शिवजाई । माली फूलहार पहुँचाई ॥
इकदिन जब माला नहिं लावा । तब कुबेर निजअनुगपठावा ॥
रमत बाल सँग आय सुनावा । ताते पुष्पहार नहिं लावा ॥
तब कुबेर तिहि दीन्हों शापा । होय कुष्ठ तनुमें सन्तापा ॥
सहे कष्ट अति मन पछिताई । मार्कण्डेयहि विपति सुनाई ॥
कह मुनि करु योगिनिव्रत जाई। तासु पुण्य तव कुष्ठ नशाई ॥
सुनि व्रतकियो गई सब पीरा । निर्मल सुन्दर भयो शरीरा ॥
जो यह कथा सुनै मनलाई । तिनके बहुविधि पाप नशाई ॥

इति श्रीआषाढकृष्णयोगिनीमाहात्म्यसम्पूर्णम् ।

दोहा—शुक्लाषाढइकादशी, अब सुनिये धरिध्यान ।
देवशयनी नाम जिहि, याको पुण्य महान ॥

मिथुनसूर्यमें शयनकरावै। तुला सूर्यपर हरिहि जगावै ॥
इहिदिन नेम यथाविधि साधै। चारमास हरिको आराधै ॥
गुडत्यागी मृदुवादी होई। पुष्पतेल गंधर्वहि सोई ॥
छबिपावै कटुकषयल त्यागै। सूर्यअस्त भोजन सुख पागै ॥
रक्तकंठ ताम्बूलहि त्यागै। लेपन तजै द्वार गज लागै ॥
भूमिशायि नृप अवशै होई। पयदधित्याग लोकगो जोई ॥
अन्न तजेसे सुरपुर पावै। अथतनु अन्नतज लौन गमावै ॥
हरि मंदिर जो देइ बुहारी। दीपदान लेपन अनुसारी ॥
काम क्रोध मद लोभविहाई। सो सायुज्यमुक्ति नर पाई ॥
जिहितिहिभाँति करै जो दाना। सो प्राणी पावहिं धननाना ॥
नृत्य दान हरिमंदिर करई। सो नर भक्ति लहै वर वरई ॥
अम्बरीषकी पद्मा रानी। हरिसन्मुख कलकीनो गानी ॥
निज पानी दइ चून लगाई। तेइ फल अव्रधरानि भइ आई ॥
हरिकी भक्तिकरी सुखदाई। सुरपुर गई भाग्य बड पाई ॥
जो यह पढैं सुनैं मनलाई। लहैं भक्ति सो परम सुहाई ॥
यह नारदपुराणमें भाषा। पढे सुने पूरहि अभिलाषा ॥

इति श्रीआषाढशुक्लदेवशयनीमाहात्म्य सम्पूर्णम्।

दोहा—श्रावण कृष्णैकादशी, कथा सुनो मनलाय।
नाम कामिका व्रतकिये, सब कलिकलुष नशाय ॥

विष्णुचरण पूजै मनलाई। ताकर फल कछु कह्यो न जाई ॥
पुष्कर गंगा गया गुदावरि। वाराणसी प्रयाग न्हाय करि ॥
वस्त्र अन्न बहुदान जो करई। यहि व्रतसरिस न कोइमनधरई ॥
पुण्यबढावनि स्वर्गनिसैनी। इक इतिहास कहौं सुखदैनी ॥
देवसुता रुक्माङ्गद बागा। आवै लेन पुष्प लइ रागा ॥

इक दिन रही भूमिके माहीं । धुआं लग्यो बैंगनको ताहीं ॥
जा न सकी सो स्वर्गसंचारी । सुनि नृप आय लखी सुकुमारी ॥
कन्याकह मुहिं देहु पठाई । अपनो धाम लखौं नृपजाई ॥
कह नृप किहिविधि देहुँ पठाई । कामदव्रत दीजै इक राई ॥
कह नृप यहां न यहव्रत जानै । कन्याकही जो आज अजानै ॥
केहु कारणवश अन्न न पायो । ताहि लाय फल मोहिं दिवायो ॥
सुन नृप अस डचौंडी पिटवाई । सो आवहि जिन अन्न न खाई ॥
तिहि दिन अधिक क्लेशके कारन। वैश्यतिया अन्न कियो न धारन॥
ताको व्रतमान सुरबाला । तासौं लीनो दानविशाला ॥
लहि व्रतफल सुरलोक सिधारी । नृपति देख भो अचरज भारी ॥
सकलप्रजासे व्रत करवायो । आपहु करन लग्योमनभायो ॥
छलि मोहिनी कठिनवर मांगा । तदपि न त्यागो व्रतअनुरागा॥
प्रणविलोकि प्रभु प्रगटे आई । दरशपाय नृप अति सुखपाई ॥
यह ब्रह्माण्डपुराण बतावै । कथा सुनै कलिकलुष नशावै ॥

इति श्रीश्रावणकृष्णकामिकामाहात्म्य सम्पूर्णम् ।

दोहा-श्रावण शुक्लैकादशी, ताहि पुत्रदा नाम ।
व्रतकीन्हे सुत मिलतहै, सिद्धहोत सबकाम ॥

माहिष्मपुर नृप अति रणधीरा । किये दान बहुभाँति सुधीरा ॥
पुत्रहीन सब शून्य लखावै । मनमें कबहुँ नहीं सुखपावै ॥
पुनि वन गयो मुनिनके धामा । लोमशमुनिमिलगयेनिकामा ॥
तब राजा निज कथा सुनाई । किहिअव पुत्र नहीं मुनिराई ॥
कह मुनि पूर्व वणिक तुम रहऊ । धर्मवान जलमाँगत भयऊ ॥
तृषितवत्ससह आई गाई । पियतरही जल दीन भगाई ॥

धर्मवानको जल नहिं दीन्हा। ताते पुत्र दरश नहिं कीन्हा॥
जाय पुत्रदाको व्रत कीजै। पुत्र अवशि हुइहै सुख लीजै॥
राजा वचन सुनत गृह आयो। हरिवासरके फल सुत पायो॥
जो यह कथा सुनै मनलाई। गंगास्नानकिये फल पाई॥

इति श्रीश्रावणशुक्लपुत्रदामाहात्म्यसम्पूर्णम्।

दोहा–कह शौनक अब भाद्रकी, कहो इकादशिगाय।
लगे कहन तब सूतजी, सुनिये कथा सुहाय॥

भाद्रकृष्ण अजिता हरिवासर। व्रतकीन्हे छूटत अघतनुकर॥
हरिको जो पूजै मनलाई। सब कामना सिद्ध होजाई॥
सुनहु कथा इक परम सुहाई। इक हरिचन्द रहे नृपराई॥
विधिवश राजपाट सब गयऊ। सुत तिय बेंच काशिमें रहऊ॥
अजिताव्रत्त कियो मनलाई। मिटे सकलदुख द्वंद्वतहाँई॥
बहुरि राज्य अपनो तिन पायो। सुतवितसकललह्योमनभायो॥
जो यह कथा सुनै मनलाई। ताके सब कलि कलुष नशाई॥

इति श्रीभाद्रकृष्णअजितामाहात्म्य सम्पूर्णम्।

दोहा–भाद्रशुक्ल एकादशी, पद्मा जानहु नाम।
सब दुखहरणी कारणि सुख, वर्णहुँ कछु गुणग्राम॥

मान्धाता नृप अवधभुआला। धर्मवान नय परजापाला॥
तिहिके राज्य वर्ष गे तीना। इन्द्र मेघजल बुंद न दीना॥
तब नृप काननको गे धाई। मिल अँगिरहि सबबातसुनाई॥
मुनि कह इक शूद्री तप करई। तिहि अघ भू जल बूँद न परई॥
ताके वधे वृष्टि नृप होई। राजा कही न करिहौं सोई॥
तब मुनि कह हरिव्रत अनुसरहू। हुइहै वृष्टि धीर उर धरहू॥

राजा व्रत कीन्हों यह आई। तबहीं वर्षा भई सुहाई॥
पुत्र भयो जहँ तहँ सुखछाई। पढे सुने मनवांछित पाई॥

इति श्रीभाद्रशुक्लपद्मामाहात्म्यसम्पूर्णम्।

दोहा-अब आश्विनकृष्णा कथा, सुनहु मुनी धर ध्यान।
नाम इन्दिरा सुखकरनि, नरकहरनि मुदखान॥

यापर इक इतिहास बखानों। इन्द्रजीत नृप महिपुरमानों॥
ताके पितर परे मुखनीचा। शोचत रहे नेत्रजल सींचा॥
नारद आय सुनाई सोई। कह नृप किमि निस्तारो होई॥
कह मुनि व्रत्त इन्दिरा केरा। करहुहोय उद्धार सबेरा॥
राजा सुनत कीन व्रत जबहीं। भे उद्धार पितरतिहि तबहीं॥
जो यह कथा सुनै मनलाई। नैमिषक्षेत्र अटै फल पाई॥

इति श्रीआश्विनकृष्णइन्दिरामाहात्म्य सम्पूर्णम्।

दोहा-शुक्लपक्ष एकादशी, पापांकुशा सु नाम।
अशुभकर्म नाशत सकल, सुखदायक अभिराम॥

इक इतिहास कहों सुखदाई। चेतन नाम विप्र इकभाई॥
विद्याको राखत अभिमाना। आपसमान न आनहिं जाना॥
विद्यावाद द्रव्य परमादा। शक्तीपरदुख करन विषादा॥
साधुनके प्रति खल आचारा। मिथ्याज्ञान मिलै दुखभारा॥
विद्या हरन हेतु पढ विद्या। होत ठूंठ सोइ पाय अविद्या॥
इहिविधि रहै महाअभिमानी। तृणसमान विदुपन कहँजानी॥
सोवतमाहिं स्वप्नमें कोई। कही राज्यद्विज तोकहँ होई॥
ह्यां कोउ भूप रह्योहै नाहीं। चलहु राज्यपर तुम्हैं बिठाहीं॥
हर्षितहोय चल्यो सँग ताके। पहुँचे मध्य एकसरिताके॥

मगरलियो कर मुखमें धारी । जागपरचो तुरतहि भयभारी ॥
सब अगस्त्य कहँ जाय सुनाई । तिन असकहि उपदेश बताई ॥

दोहा—पढे सुने कर फल यहै, करि विवेक हरिध्याय ।
दशरथनन्दनपदकमल, सेवहु क्लेश विहाय ॥ १ ॥
भवनद कालमगर तुम, देखो सपने माहिं ।
मध्यवयसमें खाइहै, इहिमें संशय नाहिं ॥ २ ॥
करि हरिदिन अघनाशिनी, कर हरिपद अनुराग ॥
ह्वै जैहै भ्रम दूर सब, तबह्वै है बड़भाग ॥ ३ ॥
तुरत आय तिन व्रतकियो, भई बुद्धिपरकाश ॥
हरिको भज हरिपुरगयो, मंगल मोद विकाश ॥ ४ ॥
पढ़े सुनै जो यह कथा, व्रत चौथाई अंश ॥
फल पावहि हरिभक्ति लहि, करता जगत प्रशंस ॥ ५ ॥

इति श्रीआश्विनशुक्लैकादशीपापाङ्कुशामाहात्म्य सम्पूर्णम् ।

दोहा—कार्तिककृष्णैकादशी, रमणीनाम विशाल ।
व्रत करिहै सो इन्द्रके, लोकजाय गुणमाल ॥

इहिपर इक सुन्दर इतिहासा । वर्णतहौं सुन बुद्धिप्रकासा ॥
नृपमुचुकुन्द रहे बड़ज्ञानी । करै सुव्रत हरिको सुखमानी ॥
शशिभागा तिहि सुता सयानी । आयो पति इकदिन रजधानी ॥
भोजन आय नारिते माँगा । सुनत वचन बोली शशिभागा ॥
स्वामी आज अहै हरिवासर । पशु पक्षी नहिं अन्न लहैं डर ॥
तुम यातें मत भोजन कीजै । बोलो पति वाणी सुनि लीजै ॥
अन्न मिलै जो हमको नाहीं । तौ अब जैहैं प्राण यहाहीं ॥
भावीवश शरीर छुटिगयऊ । चढि विमान सो सुरपुर गयऊ ॥

बहुत कहौंका करि विस्तारा। व्रतप्रभाव पुर भा निस्तारा॥
जो यह कथा सुनै मनलाई। अन्नदान दीन्हें फलपाई॥
इति श्रीकार्तिककृष्णरमणीमाहात्म्य सम्पूर्णम्।

दोहा–कार्तिकशुक्लैकादशी, कथा परमसुखदान।
सो तुमसे वर्णन करहुँ, सुनहु ऋषय धर ध्यान॥
नाम प्रबोधिनि यहि हरिवासर। सकल कामनादायकगुणकर॥
इहि व्रतसरिस और व्रत नाहीं। यथा सूर्य दर्शन नभमाहीं॥
जनकनगर इकरूपा रहई। हरिशिनिजाग मित्रमग गहई॥
व्रतरूप ताकरह्वै गयऊ। तिहिप्रसाद मनचिन्ता भयऊ॥
भइ गलानि तब तजो शरीरा। तजसि देह सुमिरे रघुवीरा॥
किय धनदान भई सुरबाला। नृत्यगानव्रत करै रसाला॥
जपै प्रेमसे हरिको नामा। ब्रह्मचर्य धारो हरिकामा॥
व्रतके फलते गोपकुमारी। कृष्णचन्द्रकी भइ अतिप्यारी॥
वृन्दावनमें कियो विहारा। यह अस्कन्दवचन अनुसारा॥
कार्तिकमें जो फूल चढावै। हरि अर्पै फल वरणि न जावै॥
देवोत्थान करै गुणगावै। हरिइच्छा मनवांछित पावै॥
इहिविधि चौविसहैं हरिवासर। सो तुमसे वरणे सब अघहर॥
पुरुषोत्तम आवै जब मासा। तवपुरुषोत्तम नाम प्रकासा॥
विधिवत हरिसुमिरै मनलाई। गोपदइव भवनिधि तरजाई॥
छंद–तरहि गोपद सरिस भवनिधि प्रेमयुत व्रत राखई।
व्रत अर्द्धफल सो लहै निश्चय सुनै जो श्रुति भाखई॥
कलिकालमें बहु पाप बाढै करै तस फल चाखई।
पै होय जो हरिभक्त व्रतरत सफल तनु तिहि लाखई॥

दोहा–बिन हरि भजन कर्म जग, पूरण फल नहिं देत ॥
यथा शून्य दशगुणे बिन, अंक सारव नहिं लेत ॥ १ ॥
हे एकादशि देवता, विनवौं वारंवार ।
रामचरणरति देहु मुहिं, सकल सुमंगल सार ॥ २ ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगरग्रंथउजागर चतुर्विंशएका दशीमाहात्म्यवर्णनोनाम द्वात्रिंशोऽध्यायः ॥ ३२ ॥

दोहा–विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिरि राम सुखदान ।
कार्तिकमास माहात्म्यकी, कहुँ इतिहास बखान ॥
तब शौनक कह वचन सुनाई । किहि विधि भई तुलसिका आई ॥
किहि विधि विष्णुशीशतिहिधारी । यह प्रसंग कहिये सुखसारी ॥
बोले सूत सुनो मनलाई । जस कछु विष्णुपुराणहि गाई ॥
इक नारी तुलसी जिहि नामा । तपकरि आराधे सुखधामा ॥
तपलखि विष्णुआप चलिआये । बोले वर माँगहु मनभाये ॥
हाथ जोरि तिहि वचन उचारा । पतिह्वै रहो संग अविकारा ॥
सुनि लक्ष्मीकर क्रोध विशाला । दियो शाप तरु ह्वैहै बाला ॥
तिनहूं शाप रमा कहँ दियऊ । नीचन जाय वास तुम कियऊ ॥
सुनत विष्णु बोले अस बानी । तरु ह्वै रह मम प्रिया सयानी ॥
मैं धरि शालग्रामशरीरा । तव समीप रहिहौं मतिधीरा ॥
प्रथम गंडकी रहि इकनारी । तपकरि लहिवर हों तव प्यारी ॥
मैं कहि सरितरूप तुम होहू । तुम्हरे उर बसिहौं सहनेहू ॥
एककल्प यह कथा सुहाई । सुनि अब अपर चरित मनलाई ॥
छन्द–इकबार मारग जात शंकर वेष योगीकर किये ।
तहँ रहेउ वासव कहन लागो ठहर सुनि शिव चलदिये ॥

तब कहेउवासवसुनत नाहिंशठ वचननहिंमानत हिये ।
सुन इन्द्रवचन सरोष तीसर नैन शिव खोलत भये ॥
प्रगटी अगिनिकी लपट जबहीं इन्द्र तबचरणन नये ।
हे दीनबंधु कृपालु क्षम अपराध बिनजाने किये ॥
सुन वचन होय कृपालु शिव सो अग्निजल डारत भये ।
तिहिते भयो इकबाल सागर पुत्रसम पोषत लिये ॥
तब आय विधि सब कर्म कीन्हें तिहि जलंधर भाषऊ ।
भो तरुणकछुदिनमाहिं वृंदा नारिको अभिलाषऊ ॥
यह कालनेमिकि सुता सुन्दर व्याह तिहिसन ठानऊ ।
कृतकृत्यहोय बलिष्ठ तबतिहि जगतवशनिजजानऊ ॥
सब असुर लिये बटोर योधा सभा करिसुख पायऊ ।
इक नगर उत्तम रचि तहांसब असुर दलहि बसायऊ ॥
इक दिन सभामें बैठ रहुहि देख अस बोलत भयो ।
शिर कौन काटो कहहु सांची सुनत कह चरण नयो ॥

रोला छन्द—सुनोनाथ इक समयदेव दानव दोउ मिलकर ।
मथ्यो सिंधु गिरिडार रत्न चौदह दिय सागर ॥
विष शशि कामद धेनु कल्पतरु गज अरु घोरा ।
धन्वन्तर धनु कम्बु रमा रम्भा गुणजोरा ॥
कौस्तुभमणि वारुणी सुधा यह रत्न निकारे ।
दिये बाँट दुहुँओर रह्यो अमृत घट भारे ॥
असुरनकर अन्याय अमिय निजकिय अधिकारा ।
तब तिहि हरिवेहेतु मोहिनीवपु हरि धारा ॥
लखि तिहि मोहे असुर मोहिनीको घट दीन्हों ।
उभयपांति बैठारि देवदल बांटन लीन्हों ॥

पीजेहैं सुर सबै जान रवि शशि मध जाई।
मैं हूं बैठो जायदेवकर रूप बनाई॥
रविशशि दीन बताय विष्णु तब चक्र चलावा।
महाक्रोधसों शीश मोर तिन काट गिरावा॥
देवासुरसंग्राम भयो अतिशय तहँ भारी।
कल्पवृक्ष सुरधेनु इरावत रम्भा चारी॥
ले वासव गे स्वर्ग तुम्हारी सारी सम्पति।
सुनत जलंधर दूत पठायो तुरत विमलमति॥
तब बोले चर जाय उपधिकी सम्पति दीजै।
कही इन्द्र लेजाय आय तब पति सुनलीजै॥
महिमण्डल लिय जीति यहीसे हुइगे मानी।
जो आवैं चढि करौं खण्डशत सैन नशानी॥
दूत जलंधर पास आय वृत्तान्त बखाना।
यातुधान करि कोप सैनसह कियो पयाना॥
करी इन्द्रसे जाय असुर घनघोर लराई।
प्रबल भये सब असुर गये सुर सकल पराई।
हरिके सन्मुख जाय बहुरि अस्तुति अनुसारी।
चले तुरत भगवान असुरते ठानी रारी॥
बहुत काल करि युद्ध जलन्धर थकित न भयऊ।
हुइ प्रसन्न भगवान ताहि वर मांगन कहऊ॥
कह्यो असुर जो आप हुए परसन्न मुरारे।
तौ कमलायुत बसो सदा तुम गेह हमारे॥
एवमस्तु कहि विष्णु कियो तिहि गेह निवासा।
शोभासबजग आय कियो तेहि भवन प्रकासा॥

तब वासव निलखाय कह्यो चतुराननपाहीं।
सुनि विधि बोले वचन धीर धरिये मनमाहीं॥
बोले नारद पाहिं मृत्यु इहि शंकर हाथा।
करै असुर शिव वैर देव तब होहिं सनाथा॥
सुनि नारद विधिवचन दनुजके गेह सिधाये।
लखि निशिचरपति मुदित देइ आसन बैठाये॥
कितते आये आप कहो ऋषिराज बखानी।
सुनत दैत्यपति वचन कही नारद अस बानी॥

आज जाय देखो कैलासा। शिवविहार बहुभाँति प्रकासा॥
शीशजटा शिरगंग विराजे। भालबालविधुअतिछबिछाजे॥
तनुविभूति अहिगण लपटाने। वेष अमंगल नग्न रहाने॥
तिनढिग सुमुखि सुनैनी नारी। रतिलज्जित जिहिरूप निहारी॥
जिहिके घर ऐसी तिय होई। तिहिसमान जगमें नहिं कोई॥
सुनि अस वचन राहु बुलवायो। तुरत शंभुके पास पठायो॥
कह्यो कि देहु तुरत निजनारी। नतु होई हमसे अतिरारी॥
राहु दियो सब वचन सुनाई। सुनतहि शंभु क्रोधकहँ पाई॥
कीरतिमुख प्रगटायो भारी। गदापाणि दृग अतिभयकारी॥
डरपि राहु शिवशरणै आवा। शिव छुडाय दिय पुनि सो धावा॥
निशिचरपतिके पुनि ढिग आई। दीनो सब वृत्तान्त सुनाई॥
सुनत वचन खल कोप बढावा। सेनसंगले शिवपहँ धावा॥

छन्द-सैनलै शिवनिकट धायो शकुन अशकुन नहिं गिनै।
लखि शंभुअनुचर गणप षट्मुख भिरे एकहि इकहनै॥
अस्त्र शस्त्र चलाय बहुविधि एक एक प्रचारहीं।
कोइ परे कहरत मरे कोऊ आर्त्तनाद पुकारहीं॥१॥

धुनि छई मारहु धरहु दारहु और कछु नहिं सुनिपरै।
इहि भाँति बीतो मास इक शिव ध्यान तब हरिको करै॥
तब आय हरि कह शिव सुनहु इहिनारि पतिव्रत हिय धरै।
बिन भये व्रत भंग वाको असुर यह नाहीं मरै॥२॥
ताते समर करहु कछु काला। करहुँ ताहि व्रतभंग विशाला॥
अस कहि यतीस्वरूप बनाई। वृंदाद्वारे पहुँचे जाई॥
आसनकर तिहि बैठे द्वारी। निशि तिहिनारी स्वप्ननिहारी॥
मनहुजलंधर खरआरूढा। मुंडितशिर दक्षिणगति मूढा॥
चौंकपरी मन व्याकुल भारी। प्रातभये तनुसुधि न सम्हारी॥
क्षण भीतर क्षण बाहर जाई। यती विलोकि तुरत तहँ धाई॥
स्वप्न सुनाय शीश तिन नावा। सुनत विष्णुअस वचनसुनावा॥
यह स्वप्ना दुखदायक भारी। धीर धरहु शुभ करहिं मुरारी॥
तवपतिनिधन अवशहीहोई। इन्द्रकरहिं सुख बहुविधिसोई॥
तिहिक्षण मायाकर शिरकंधर। परचो शरीर सहितआगे अर॥
लखि तिहि बहु विधि रोदनकीना। जरौं चिताकरि अस मनदीना॥
दोहा—कहै यति मम वचनकर, जीवहि तव भरतार।
रुण्डमुण्डदोउ जोर पुनि, वसन उढासुकुमार॥
निजसतसुमिरण रानी कीजै। जीवित पतिहि देख निजलीजै॥
वृंदा अस जब कियो उपाई। मायापुरुष उठ्यो हरषाई॥
तब वृंदा अतिशय सुखपाई। वार २ पतिपद शिरनाई॥
गईलिवाय पतिहिनिजअयना। भोजनदेय कियो पुनि शयना॥
जबकरि प्रेमअंकमें लीना। भयो असुरपति तेजमलीना॥
शिवतिहिसमय असुर संहारा। शिर भुज वृंदावर संचारा॥
मायापति पुनि गयो बिलाई। मर्म जानि यतिके ढिग आई॥

शापदीन अतिहोय अधीरा । छल्यो मोहिं धरि जौन शरीरा ॥
सोइ तनुधरहु भूपकर जाई । यतीरूपधरि मम पति जाई ॥
हरिहै सोइ तुम्हारी नारी । असकहि सररचिअग्निपजारी ॥

दोहा-पतिशिरभुजले गोदमें, बैठ जरी पिय संग ।
तासु भस्मले विष्णुने, मली सकल निज अंग ॥

सोरठा-इत सुर यह सुधि पाय, हन्यो जलंधर शंभुने ।
शंकरसन्मुख जाय, लागे सब अस्तुति करन ॥

तोटक छन्द ।

प्रणमाम सदा शिवपदयुगलं । भवमोचन करुणामय विमलं ॥
भवरोगविनाशं सेव्य अजं । निर्गुण गुणरूप अजयविरजं ॥
सविकल्प अकल्प अमेयविभो। सर्वज्ञ सदा परमीश प्रभो ॥
स्वप्रकाशक नित्य निरावरणं । जय शंकर शंभु उमारमणं ॥
विगताश्रमभेद विभेदपरं । निरवद्यअखण्ड अजं विवरं ॥
सतशीलगुणाकर शान्ततनुं । अतुलितबल शक्ति प्रधानमनुं ॥
मदमोह निशा रवितेज समं । अघओघ विनाशन चंडतमं ॥
कर्पूर सु कुन्द शरीरलसं । शुभभस्मविभूषित शुभ्रदसं ॥
छविकाम अनेक अनूपतनुं । विधुभाल विशाल प्रमोदमनुं ॥
शिरसोहत गंग तरंग वरम् । अम्बकत्रयशंभु त्रिशूलधरम् ॥
बाघम्बरतनु गलमें गरलं । श्रुति कुंडलछबि छाजत तरलं ॥
तनुमेंअहिराजत डमरु करं । भुजदण्ड प्रचण्ड विभूषवरं ॥
प्रणपालक मारक खलवृन्दं । जय शंभुसदाहरहरद्वंदं ॥
सुरसन्तन पालक गोचरगं । वृषवाहन पुनि वृषकेतु जगं ॥
गिरिनंदिनि राजत वाम वरं । उपदेशत ज्ञाननिधानपरं ॥
नहिंपूजत ध्यावत है जबलों । सुखसम्पति पावतनाहिंतबलों ॥

नहिंदानिभवाहशशंभु जनं । सबभक्तनके तुमहीं सुधर्नं ॥
जयजयजयजयजयजयजयजय।नितदुष्टनकी कीजे प्रभु क्षय ॥
नित विनवत मिश्र यही शंकर । दीजै निजभक्तिसुधा शशिकर ॥
यह अस्तुति जो मनलाय कहैं । सब दुःख विहाय सु मोद लहैं ॥

इहिविधि देव विनय जब ठानी । तब बोले पिनाकधनुपानी ॥
विष्णुकृपा साधेउँ सब काजू । तिनके निकट चलहु ससमाजू ॥
यतीरूप जहँ थे भगवाना । शंभुसहित गये देव सुजाना ॥
शोचयुक्त प्रभु रहे विराजा । मनहिलखे देवनके काजा ॥
सतीमरण शोचत मनमाहीं । कही शंभु तब देवनपाहीं ॥
उमा रमा आवहिं ब्रह्मानी । हरिकी करहिं आरती आनी ॥
करैं प्रसन्न विष्णुको आई । सुनि अनुशासन तीनों जाई ॥
करि आरति बहु सुयश बखाना । करुणामय कहि २ सन्माना ॥
तब भारती भस्मजल लयऊ । भूमिधरयो धात्रीतरु भयऊ ॥
देखि भवानीहू जल दीना । पत्ती बेलि हुई अति पीना ॥
कीनइन्दिरा सोइ उपावा । अजगन्धा तुलसीतरु पावा ॥
शीतलछाय सुगंध भई जब । है प्रसन्न हरि खोले दृग तब ॥

दोहा—वृंदातनु तुलसी भयो, शिर लिय विष्णु चढाय ।
उत्तम पद पतिव्रत दियो, विष्णु रहे सकुचाय ॥ १ ॥
देवन हने निशान बहु, तुलसी पूज्य बताय ।
विष्णुप्रिया कलिकलुषहर, जगवन्दिनि सुखदाय ॥२॥

तब प्रभु देवनसे कहवानी । परमप्रीति वृंदाकी मानी ॥
तुलसीरूप पाय यह नारी । मम सुखदायक हुइहै प्यारी ॥
लक्ष्मीवास हियेमें जानो । यह रहिहै शिरपर अस मानो ॥
जो मनवचक्रमसेवहि एही । पावनहो ऋधिसिधि लह तेही ॥

जो दल यह मम शिरपरधरिहैं । तुलसी मिश्रितभोजन करिहैं ॥
दीपदान जो करिहै कोई । अमितयज्ञफल पावहि सोई ॥
कण्ठमाहिं जो तुलसी धारै । सो सब काल शुद्ध संचारै ॥
उनकर दरश मोर दर्शनसम । जानोउनहिय बसहुँ शुद्धतम ॥
तुलसीधारि कर्म शुभ करई । ताको धर्म कोटिगुण धरई ॥
पतिव्रता यह सब गुणधारी । ताते मैं निज शिरपर धारी ॥
नरनारी जो मम व्रतधारी । सो सब तुलसीके अधिकारी ॥
तुलसीमाल नाम मम जापै । तासु पुण्य कहजावै कापै ॥

दोहा-केवल तुलसीधरहिं जो, भक्ति करैं बहुनाहिं ।
सोउ पूज्यहैं विप्र अति, सो जानहु मनमाहिं ॥ १ ॥
तुलसीमालातिलककी, निन्दाकरहिं जो मूढ ।
अथवा श्रीरुद्राक्षके, निन्दकको अघ गूढ़ ॥ २ ॥
तिनकी संगति त्यागिये, दोपलगै तिहिअंग ।
जिमि हरि हरके संगमें, कपिलातनु भो भंग ॥ ३ ॥
तुलसीस्रक्धारे बिना, वैष्णव लेइ न अन्न ।
परम अपावन होय सो, विष्णुहोतहैं खिन्न ॥ ४ ॥
जिहिमें आदर दीन अस, निन्दैतिहिअसकौन ।
जो नृप कहा न मानई, प्रजा दुःखकी भौन ॥ ५ ॥
विष्णुवचनसुनसुरसकल, गये सु निजनिज गेह ।
कार्त्तिकमाहात्म्यकी कथा, वरणी सहित सनेह ॥ ६ ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर तुलसीमाहात्म्यवर्णनो नाम त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३३ ॥

दोहा-विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिरि राम सुखदान ।
वरणों भारतकी कथा, कछु वृत्तान्त बखान ॥

सुनि शौनक वाणी उच्चारी। नृपतियुधिष्ठिरमखअतिभारी॥
तामें जो अचरजकी वाता। सो मोसन वर्णहु तुम ताता॥
कह्यो सूत जब मख नृप कीन्हा। शंखकृष्ण तहँ निजधरिदीन्हा॥
कह्यो यज्ञ पूरण जब होई। आपहि आप बजै यह सोई॥
जब भो यज्ञ विप्र बहु जेमा। तदपि शब्द कछु भयो न तेमा॥
तब अस बोले कृष्ण मुरारी। पूर्ण यज्ञ नहिं भई तुम्हारी॥
ताही समय नकुल इक आवा। लोटयोजहँजहँद्विजनअँचावा॥
निजतनु देखि बुड़ै पुनि सोई। क्षण बूडै क्षण ऊपर होई॥
जूँठनमें बूडै उतराई। निजतनुदेखि बहुत पछिताई॥
तब पुकारकह सभामँझारी। मिथ्या यज्ञ भूप अनुसारी॥
सतुआ यज्ञ भूप इक कीन्हा। ताके सम मखराज न चीन्हा॥

दोहा–सुनत सभासद कह वचन, किहि विधि भो सो याग।
नकुल सुनत अस वचन तहँ, कथा कहन सो लाग॥

सतुआ यज्ञ भयो जिहि भाँती। सो मैं तुमसन कहँ विभाँती॥
कुरुक्षेत्रमें द्विज इक रहेऊ। नामशिलोञ्छताहिसबकहेऊ॥
पूत पतोहू औ निज नारी। चारहुको अति भक्तिपियारी॥
खेतजाय जो चुनकर लावैं। विप्रसाधुको दे पुनि पावैं॥
इहिविधि बीति गयो कछुकाला। हरिइच्छा तहँ परचोदुकाला॥
सबजीवनको भइ कठिनाई। विप्रशिलोञ्छवृत्ति नहिं पाई॥
लागे भ्रमन करन चहुँ घाहीं। लख्यो खेत इक यवकरताहीं॥
जब काटी किशान लेगयऊ। ताकोचुननसकलमिलकियऊ॥
कितिकदिना इहिभाँति बिताये। अन्न तीनपा तब करिपाये॥
सो सुजाय सतुआ करवाये। ताके चार भाग बनवाये॥
भोजन जबहीं चाहैं कीन्हा। धर्म वैष्णवनको वपु लीन्हा॥

द्विजके सन्मुख पहुँचे जाई । लखद्विज आसन दियो डराई ॥
आपन भागदियो धरि आगे । हितकरि धर्मखान तब लागे ॥
क्षुधा न मिटीवहुरि पुनि माँगा । द्विजहियमें तब शोचनलागा ॥
बोलीनारि स्वामि सुनि लेहू । मेरो भाग अतिथिको देहू ॥

दोहा-सुनि द्विजतियको भागले, द्विजको अर्पण कीन ।
क्षुधा मिटी नहिं जब कह्यो, बोलो पुत्र प्रवीन ॥

मेरो भाग सन्तको देहू । करहु धर्म जगमें यश लेहू ॥
विप्रकह्यो सुतपालन योगू । तुम भखदिये निन्दिहैं लोगू ॥
ताते तुम पोषहु अपनो तन । जियोवर्ष बहु होय मुदितमन ॥
कहसुत जियें धर्म बिन जोई । जीतहि मृतक जानिये सोई ॥
असकहितिहि दीनो निजभागा । धर्म खायगे सह अनुरागा ॥
पुनि भोजनकी इच्छा कीना । लखि सुतवधूभागनिजदीना ॥
सो भोजनकरिगये अघाई । करि निजवपु तब धर्म सुनाई ॥
हेद्विज मैं हूं धर्मसयाना । लेन परीक्षा कीन पयाना ॥
तुमसमधन्यसुकृति कोउ नाहीं । बसहु जाय अमरावति माहीं ॥

दोहा-ताहीसमयअकाशते, आयो सुभग विमान ।
चढ चारोंजन प्रेमसे, स्वर्गहि कीन पयान ॥ १ ॥
जहँअचयोनृपअतिथिने, तहँमैंनिकरयोआय ।
भयो अर्धतनु सोनको, जलके परश सुहाय ॥ २ ॥
दूसर यज्ञ न भयो अस, जो सब सोन शरीर ।
करें फिरत देखतसकल, नृपतिन मखमति धीर ॥ ३ ॥
यह विचार आयो यहां, लोटपोट करि देखि ।
सोनेकी क्या बात है, भई न तनुमें रेखि ॥ ४ ॥
सुनि न्योलेके वचन तब, कही युधिष्ठिर राज ।
भयो यज्ञ नहिं पूर्णकिमि, कहिय करौं सो काज ॥ ५ ॥

सुनि अस कही कृष्ण यह बाता। समदृक् सन्त न आयो ताता॥
जो भोजनकरने ह्यां आये। अहंकार इनके मनछाये॥
विद्या कुल महत्व तरुणाई। रूपपांच यह कंटक भाई॥
इनते भक्ति निकट नहिं आवै। अतिसुकुमारनिरखिअकुलावै॥
तिहिते होय जो निरअभिमाना। ताहि बुलाय जिमाउ सुजाना॥
वाल्मीकि श्वपचा इकसन्ता। ताहि बुलाव जिमाव तुरन्ता॥
सुनि प्रभुवचन युधिष्ठिर राई। आदरसे तिहिको बुलवाई॥
व्यंजन परस द्रौपदी नाना। आगे धरे सहित सन्माना॥
उन सब लीने एक मिलाई। तब पंचाली मन सकुचाई॥
इन कछु भोजन स्वाद न जाना। मैं कीन्हों सुन्दर पकवाना॥

दोहा–तबहिं शंखके मध्यतें, भयो शब्द इकबार।
धर्मराज भे मुदितमन, बोले कृष्णपुकार॥

ग्रास २ पर धुनि यह होई। एकहि बार भई कस सोई॥
कहो सत्य सब सभ्य सुजाना। सन्तहिं निरखिक्षोभकिन माना॥
तब द्रौपदि सब बात सुनाई। सुनतकृष्ण कह सुन नृपजाई॥
कंज कीचतें जैसे होई। सुरशीशन पर पहुँचै सोई॥
तुलसीस्वच्छ जहाँतहँ जामें। तिमिमम जनपवित्रसबठामें॥
व्रतन माहिं हरिवासर जैसे। सरितनमें सुरसरि है तैसे॥
सुरन माहिं जिमि रमानिवासा। वर्णनमें अनन्य मम दासा॥
अच्युतगोत्र इन्हैं सब कहई। इनकी वर्णयोनि नहिं गहई॥
ताते ऐसी करिये नाहीं। पूछिलेहु साधुन ढिगजाहीं॥
तब सब जाय सुनाई बानी। सबभोजनलीन्हों किमिसानी॥

दोहा–कह्यो भक्त भगवानको, दीनो भोग लगाय।
भई समान सब वस्तु तब, इहिते लीन मिलाय॥ १॥

सुनतहि भये प्रसन्न सब, अँच्यो भक्त जलडारि ।
नकुल जाय उच्छिष्टले, लोटन लागो वारि ॥२॥
सकल शरीर सोनकर भयऊ । लखत सभासद अचरज कियऊ ॥
कितिक विप्र यहि रहे समाजा । श्वपचभक्तते यज्ञ सुसाजा ॥
व्यास अगस्त्य महामुनि जोई । भे हरिभक्ति पाय अति सोई ॥
तबै युधिष्ठिर पूछत भयऊ । किहिविधिइनतुमकहँवशकियऊ ॥
तब बोले नृपसन भगवाना । जनसमान मुहिंप्रियनहिंआना ॥
तव पुर निकट बसत यह साधू । मन वच कर्म मोर अवराधू ॥
जप तप संयम अरु कर ध्याना । सम शीतल सन्तोष विधाना ॥
दयाक्षमायुत छल मम नाहीं । इन्द्रियजित विरक्त मनमाहीं ॥
काम क्रोध मद लोभ विकारा । हियमें जिननहिंकबहुँनिहारा ॥
मम गुणगावत पुलक शरीरा । मम जनसों अति प्रीतिसुधीरा ॥
तिहिते मैं उनके वश रहऊं । तुमसन वचन सत्य मैं कहऊं ॥
इहिप्रकार प्रभु जबहिं सुनावा । सुनत युधिष्ठिर अति मुदपावा ॥
दोहा-पुनि करजोर कह्यो नृप, वर्णाश्रमके धर्म ।
मोहिं कहहु प्रभु कृपाकर, जिहिसुखपाऊं मर्म ॥ १ ॥
सुनत कृष्णकह सुनहुनृप, सकल कहौं समझाय ।
प्रथम सुनहु द्विज धर्म तुम, सुनि संशय सब जाय ॥ २ ॥
मज्जन सन्ध्या होम जप, देव पितर करसेव ।
वेदपाठ अर्चन क्षमा, अतिथियज्ञ गुरुदेव ॥ ३ ॥
यही कर्महैं विप्रके, सो जानहु मतिधीर ।
क्षमा तेज बल प्रजाहित, रक्षण चित्त गँभीर ॥ ४ ॥
निजहित कृत श्रुतिपाठरत, यज्ञदेश प्रतिपाल ।
यह क्षत्रियके धर्मसब, तुमसे कहे विशाल ॥ ५ ॥

वेदपाठ आस्तिक विनय, व्रत गोपालन कर्म।
यह लक्षण वर वैश्यके, पालहि निज कुलधर्म ॥ ६ ॥
छलतजि सेवै वर्णत्रय, मनराखै सन्तोष।
जो दें सो ले कृतकरै, शूद्रधर्म यह पोष ॥ ७ ॥
नास्तिक कुटिल कठोर चित, कामी क्रोधी जोय।
मिथ्यावाद अशौचप्रिय, नीचजानिये सोय ॥ ८ ॥
क्षमा सत्य परस्वार्थ रत, नहिं असत्य मदमार।
तृष्णात्याग विचार यह, चारहुँ वर्ण मँझार ॥ ९ ॥
अपने २ धर्मकर, पहुँचै सुरपुर जाय।
वर्णभ्रष्ट पावहिं नरक, सुनु मुनीश मनलाय ॥ १० ॥
ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य यह, द्विज कहवावत तीन।
गर्भाधानादिक सकल, संस्कार हैं पीन ॥ ११ ॥

जब उपवीत होय इनकेरा। गुरुढिग पढनजाय तिहि वेरा ॥
दण्ड कमण्डलु मेखल माला। कांधे पुनि मृगचर्म विशाला ॥
संध्या तीनकाल अस्नाना। जनविरक्ति लघुभोजन पाना ॥
आसनदृढ गुरुचरणन सेवा। ताको जानै समकरि देवा ॥
कामी कामिनसंग न ठानै। वेदपाठमें नित मनमानै ॥
करि समाप्त विद्या घर आवै। करि विवाह निजधाम बसावै ॥
इहिविधि ब्रह्मचर्य निर्वाहै। ब्रह्मलोक पावै सुखचाहै ॥
अब गृहस्थके धर्म बखानों। देवयज्ञ जपकरै सुहानो ॥

छन्द–यज्ञकरावै दानलेइ औ वेदपढावै।
पर न प्रतिग्रह लेइ चहै जो तेज बढावै ॥
बिनमांगे जो शुद्धदान वा शिलवृति पाई।
ताहि पाय मम ध्यानकरै अर्चन मनलाई ॥

क्षत्रिय सबकी करै पालना चित मन लाई।
रणसन्मुखदे प्राण अरिहि नहिं पीठ दिखाई॥
गृहवासी नित पंचयज्ञकी विधिहू ठानै।
वेदपाठसे ऋषय होमकरि देवन मानै॥
बहुरि भूतबलिकरै श्राद्धसे पितर मनावै॥
अन्ननीरते अतिथि पूजकर तिहि शिरनावै॥।
मित्ररूप लखि सबहि दुःख काहुइ नहिं देवै।
यहजग मिथ्यामान कुटुम पंथी समसेवै॥
हर्षशोकको त्याग भजे जो मुहिं करि आदर।
सो गृहस्थ तरजाय सुनो मम वचन सुधाकर॥
परे आपदा आय वैश्यवृत्ती तब करई।
जब होवै सो दूर धर्म अपना अनुसरई॥
पुत्रहोय सामर्थ्य सौंप तिहि घरको भारा।
जाय बसै वनमाहिं रहै चह गेह मँझारा॥
इहिविधि वरतै जोय गृहस्थी सो तरजाई।
जो जगमें आसक्तनहीं शुभगति सो पाई॥
खलता जो जन करैं अन्तमें सो पछितैहैं।
पकरलेहिं यमदूत पास यमके लेजैहैं॥
इहिविधि वर्ष पचाश वैस घरमाहिं बितावै।
वानप्रस्थविचार बहुरि काननको जावै॥
कच नख नहिं उतराय करै ऋतुऋतुको तहँतप।
भोग बिसारै कन्दमूलफल खाय करै जप॥
पहरै वलकलवसन करै नित प्राणायामा।
आवै ऋधिसिधि निकट नहीं तासे कछु कामा॥

इहिविधि जप तप किये चित्त निर्मल होजाई।
तब लेवै संन्यास त्याग मनसे दृढताई॥
दण्ड कमण्डलु धारकरै एकान्त निवासा।
क्षुधानिवारणहेत जाय पुरमें अनयासा॥
जबगृहस्थके भवन धूम शान्ती होजाई।
तब मांगै मधुकरी सात घर तक मित पाई॥
ताहि लेइ सरि निकट धोय कछु भाग निकारे।
की देवै लखि पशुहि किंतो तिहि जलमें डारे॥
अथवा तहँ ले जीम ग्रहस्थी जौंन जिमावै।
मग लखि निज पग देइ जीव जनि भूल दबावै॥
नित मम सुमिरण ध्यान योग साधै मनलाई।
तौ तौ है संन्यास नहीं आडम्बर ताई॥
परमहंस अस होय परमपद निश्चय पावै।
दशविधि कहिये विप्र तीनकर अंश जुभावै॥
तत्त्वज्ञान जब होय छूटि जै अभिमाना।
शुद्धि धरै हिय माहिं रहै निज बालसमाना॥
क्षुधा तृषा तप शीत द्वंद्व तनु व्यापैं नाहीं।
हियमें मेरो ध्यान मोह माया बिलगाहीं॥
अहंकार भय मोह कहीं काहूजिहि नाहीं।
दृढता जीवन मरण सदा समता मनमाहीं॥
परमहंसकर तत्त्व यहै नृप शास्त्र बखाना।
देत परमपद यहै यही पद अहै महाना॥
इनलक्षण बिन परमहंस जो कोइ कहवावै।
ताहि जानिये भ्रष्ट वृथा सो जन्म गँवावै॥

हेनृप जे मम भक्त वासना राखत नाहीं।
तदपि करैं शुभकर्म जगतहित रख मनमाहीं॥
जिमि सविताको माहिं लेश तमको नहिं लहिये।
तदपि करत परकाश जगतहित उपकृत कहिये॥
दोहा-तैसहि सज्जन साधु सब, परहितकृत उपदेश।
तिनके सुवचन सुने जो, तुरतहि मिटत कलेश॥

कह नृप अब भक्तन के लक्षण। औ सब वर्णहु धर्मविचक्षण॥
सुनत वचन बोले गिरिधारी। सुनो कहूंकरके विस्तारी॥
कहैं सुनैं नित मेरी लीला। सहितसनेह सप्रेम सुशीला॥
मम अर्चामें निष्ठा राखहिं। विविध भाँतिसे स्तुतिभाखहिं॥
वन्दनकर प्रदक्षिणा देहीं। करि प्रणाम चरणामृत लेहीं॥
सब भूतनमें मुहिंको देखे। मोसे अधिक सन्तको लेखे॥
जो कछु करहि सु मोरे हेता। मोबिन तिहि परिहरै सचेता॥
मेरे हेतु अर्थ कर त्यागा। आठ भोगते करहि विरागा॥
जप तप योग यज्ञ अरु दाना। शयनाशन भोजन जलपाना॥
सब मम हेत करहि मनलाई। अन्तरको परिहरैं सदाई॥
दोहा-आत्मा मम अर्पण करै, प्रेमशस्त्र पुनि लेइ।
ग्रन्थीको छेदन करै; जानतहैं सब भेइ॥

भुक्ति मुक्तिकी करत न आशा। तिनके चितमें करहुँ निवासा॥
जिन मम ऐसी भक्ति कराई। तिन अवशेष न कछु रहिजाई॥
जिहिके हिये भक्ति मम नाहीं। ते जन धर्माधर्म कराहीं॥
भक्ति स्वतंत्र चारफल देई। माता जिमि शुभप्रद सब जेई॥
विरति ज्ञान विज्ञान विवेका। इहि ठाने शुभचरित अनेका॥
आपहि आप बनत सब आई। सो शुचि साधु सुघर सो भाई॥

जिहि मम भक्तिकीन मनलाई । सबसुधर्म तिन किये बनाई ॥
वर्णाश्रमकर जबतक माना । तबतक निगमन दासबखाना ॥

दोहा-जब सब तजि गे भक्तिमग, तब किय उच्च निवास ।
जिहिकर होत प्रसन्नमैं, बिनश्रम कियो प्रकास ॥

कह्यो युधिष्ठिर तब करजोरी । सकल धर्ममय भक्ति अथोरी ॥
तो किमि वेद त्रिकाण्ड बखाना । मुहिं यहभेद कहो भगवाना ॥
इकसिद्धान्त होत सब केरो । यह सन्देह मोर निवेरो ॥
सुनि प्रभु ऐसी गिरा उचारी । जो जैसो जगमें अधिकारी ॥
ताको तैसे कहे उपाई । किमि एकै सिद्धान्त लखाई ॥
जिन यह असत लखो संसारा । ब्रह्मलोक तक दुखसंचारा ॥
यासे तिहि हित उद्यम त्यागी । विधिनिषेधतजिमुहिंअनुरागी ॥
ज्ञानयोगके सो अधिकारी । अस्थिरहो मम करत विचारी ॥
पुनि जिनके ममता दृढ नाहीं । रहे प्रवृत्तिमार्गके माहीं ॥

दोहा-पर ममगुण सुखमानहीं, भजन सत्यकारि जान ।
तिनको भक्ती योग है, तारन तरन बखान ॥

अरु जे विषयनमें अरुझाने । तिनहींके उद्यम मनमाने ॥
कथा सुनन अवकाश न होई । नहिं अभ्यास भजनकर सोई ॥
ते नर कर्मयोग अधिकारी । गहैं न भूलि निषेध अनारी ॥
जो गेही शुभकर्मन त्यागी । सो चंडालसमान अभागी ॥
नहिं घर अन्न न बल तनुमाहीं । ते नृपसरिकिमिकरहिंवृथाहीं ॥
जो तत्पर निजकर्मन होहीं । ते अतिशयउत्तमप्रिय मोहीं ॥
जिनके फलकी इच्छा नाहीं । अन्त समय ते मोकहँ पाहीं ॥
योग ज्ञान जप तप आराधन । बहुत कालतक साधै आसन ॥

दोहा-बहुतजन्ममें जाय जब, हृदयशुद्ध कहुँ होय।
तब पावै मम भक्ति नर, सहजहि मिलत न सोय ॥ १ ॥
करहिं कृपा गुरु सन्त जब, तब ह्वैहै निर्वान।
गुरु सो मेरो रूपहै, गावहिं वेद पुरान ॥ २ ॥
क्रमसे दश व्रतबंधमें, श्राद्ध तीर्थ अरु होम।
गुरू विप्र षटकार्यमें, दीक्षा हरिजन सोम ॥ ३ ॥
सुनत कृष्णके वचन यह, मुदितभये महिपाल।
एकादश मतकरि कही, मैं यह कथा रसाल ॥ ४ ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर युधिष्ठिरयज्ञवर्णाश्रमधर्म हरिभक्तिसाधनवर्णनोनाम चतुस्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३४ ॥

दोहा-विधि हरि हर गणपतिगिरा, सुमिरिराम सुखदान।
नानाग्रंथनकेर सत, संगति कहौं बखान ॥ १ ॥
पुनि शौनकशिरनाय कहि, सत्संगति किहि नाम।
सो अब वर्णन कीजिये, दायक मनविश्राम ॥ २ ॥

सुनत सूत बोले सुखपाई। संगति महिमा कही न जाई ॥
सहसनसम्वत्सरफल जोई। अयुतयज्ञकर फल जो कोई ॥
व्रत चान्द्रायण करै अनेका। करै योग जप दान विवेका ॥
तीर्थाटनकरि ले जगमाहीं। क्षण सत्संगतिफलसमनाहीं ॥
सत्संगति लवभर कर जोई। तिहि सम सुखदूसर नहिं होई ॥
गंगा तापहरै शशितापा। कल्पवृक्ष दारिदसन्तापा ॥
साधुसंग जो करि मनलाई। ताके तीनों ताप मिटाई ॥
जहँ हरिजन बैठैं सुखपाई। इक दो घडी बैठ तहँ जाई ॥
तहँ सब तीर्थ जानिये भाई। मही तपोवनसम सो गाई ॥

दोहा-सन्तवचन जो प्रेमसे, सुनै मोदकहँ पाय।
गंगादिक सबतीर्थके, सो नहाय फल ताय ॥ १ ॥
अन्तकाल जिहिके निकट, भक्त अकामी जाहिं।
ब्रह्महत्यादिक पाप कट, ब्रह्मधाम ते पाहिं ॥ २ ॥

भवनिधिको सत्संगति नावा। चढ़े पारहो जासुप्रभावा ॥
सन्तसंग मन शीतल होई। क्षणमें जन्ममरण दे खोई ॥
सत्संगतिसे पातक जाई। जिमि पावकते शीत नशाई ॥
सत्संगति इमि करत उधारा। पारस छुवत लोहनिस्तारा ॥
सत्संगति जो अधमहु आवै। होय पवित्र निगम अस गावै ॥
यथा अपावन जल चलिजाहीं। होत गंग गंगाके माहीं ॥
तिलसँग फूलफुलेल बखानत। सांभारभया खेत जो जामत ॥
संगति नीरक्षीरकी माना। वर्णभेद पयमोल बिकाना ॥

दोहा-बहुतभाँतिके वृक्ष जे, मलयसंग मुनिराय।
ह्वै चन्दन पावन भये, सुरशीशनपर जाय ॥

वेणु करीर सारसे हीना। ते न भये कछु भाग्यमलीना ॥
ऐसे जे अतिशय खल पापी। देव विप्रगुरुजन सन्तापी ॥
तेसत्संगति फल नहिं पावैं। रमसर नागवेलि जिमिगावैं ॥
भक्तिबीज जिनके उर होई। तबहिं लहै संगति फल सोई ॥
प्रेमवारि सो बाढ़त जाई। नभसम शून्य हृदय नहिं आई ॥
उदयभानु सब जीवन देखा। पै उलूकके मन नहिं लेखा ॥
ताते वचन न जो हिय धरही। ताको सत्संगति का करही ॥
साधुवचन जिन कियसन्माना। तिन निश्चय पायो निर्वाना ॥
अजामेल वच साधुन माना। ताको भयो अमित कल्याना ॥
बाल्मीकिकी कथा सुहाई। सप्तऋषिन सत्संगति पाई ॥

धुंधक विप्र प्रेत जो भयऊ। सो गोकर्ण संग तरिगयऊ॥
महादेवकी संगति करिकै। अण्डजसुन्योउडचोमुदभरिकै॥
सो जगमें शुकदेव कहायो। जाको चरित जात नहिं गायो॥

दोहा-नारदकी संगति करी, व्यासदेव मनलाय।
तपनमिटी शीतल भये, कही भागवत गाय॥

च्यवन संग इक धीमर पायो। मछरिनसह सुरलोक सिधायो॥
शुक उपदेश परीक्षित राजा। तरचो लह्यो सुख सहितसमाजा॥
पांचसहस्र दक्षसुत जोई। नारद वचन तरे सब सोई॥
एकविप्र भिक्षा कहुँ जाई। वैश्य यानकर धक्का पाई॥
सो गिरिगयो मरन जब लागो। क्रोधकियो कटुबैन विभागो॥
मातलिधरि सियारतनु आये। बोले द्विजसे वचन सुहाये॥
विप्ररोप हियमें जनि धरहू। नेक विचार बुद्धिसे करहू॥
हानि लाभ सुखदुःखवियोगा। किये कर्म पावत सब लोगा॥
जो जस करहि सो तसफलपाई। दूजहि काहे दोष लगाई॥

दोहा-यद्यपि हम पशुयोनिहैं, तउ अस शोचत नाहिं।
भावीवश दुखसुख जगत, दोष दीजिये काहिं॥

देखहु हम नहिं धर्म अराधैं। तदपि जीवहिंसा नहिं साधैं॥
जीववधे बड़ पातक होई। ताते प्राण न दीजे खोई॥
नरतनु सदृश और तनु नाहीं। येहू करु विचार मनमाहीं॥
जिहिके वश सचराचर रहहीं। नरक स्वर्ग अपवर्गहु कहहीं॥
ताते हरिको सुमिरण कीजे। प्राणत्यागकी धी तजि दीजे॥
तनुत्यागे हैहै दुख भारी। जानै कौन योनि संचारी॥
ब्राह्मण तनु अति उत्तम भाई। जगसुख हित नहिं देउ गमाई॥
यासे हरि आराधन करहू। मोर वचन हितकर मन धरहू॥

तपहित तुम्हैं ईश जन्मायो। सो काहे जग वृथा गँवायो ॥
जम्बुक वचन सुनत द्विजराई। गयो भजन हरि कानन धाई ॥
सब दुख मिटे गयो सुरलोका। सकल भाँतिसे भयो विशोका॥
अस महिमा सत्संग अपारी। व्याधिमिटीद्विजभयोसुखारी ॥

दोहा–अपर सुनहु इतिहास इक, विधिसुत जाज्जलि नाम।
गये तपस्याकरन वन, महा कठिन निष्काम ॥

कीन तपस्या रोंक्यो श्वासा। पक्षिन कियो जटामें वासा ॥
अण्डा दे सेवहिं खग नाना। पकिनिकसेउडिजाज्जलिजाना॥
इतनहि मन आयो अभिमाना। मोसमान तप कियो न आना ॥
लख नभ गिरासुनीऋषि तबहीं। तुलाधार सम तप नहिं अबहीं॥
जासु हिये समभक्ति समाई। काशीरहत लखहु तिहि जाई ॥
सुनि जाज्जलि काशीको धाये। तुलाधारके घरमें आये ॥
लखितिनाकियोअधिकसन्माना। चरणधोय बैठारिसि आना ॥
किहिविधि कृपा करी सुखदानी। आज्ञा करहु करौं हित मानी ॥

दोहा–कह ऋषि सुनो तुम्हार यश, पूछन आयो तोहिं।
मैं वन तप बहुदिन कियो, गर्वभयो तब मोहिं ॥

तब नभ वाणी मोहिं सुनावा। तुलाधारसमता नहिं पावा ॥
कौन धर्म तुम किय आराधन। मोसन कहो सु वैश्यमुदितमन॥
तुलाधार कह हरिको ध्यावों। हरिहीके गुण मुखते गावों ॥
वचन कर्म मन सन्तहिं सेऊं। विप्र जिमाय दान नित देऊं ॥
तिहिको फल मैं चाहत नाहीं। अर्पहुँ सब हरिके पदमाहीं ॥
चार खान जग जीव बखानै। सबमें व्यापक हरिको जानै ॥
यह विचार शिर सबहि नवावों। ऊंच नीचको भेद न लावों ॥
दुखीदरिद्र लखा कोइ जोई। सेवहुँ सम नारायण सोई ॥

मैं झगरत काहूसे नाहीं । लेत परांश न सपनेहुँ माहीं ॥
शत्रु मित्र अस भेद न मानो । मैं मेरी तेरी नहिं जानों ॥
आये गये न हर्ष विषादा । दुख सुखसमनहिं मोह विवादा ॥
इन्द्रिनके मारग नहिं जाऊं । पाँचहु विषय जीति मैं पाऊं ॥
मीन कुरँग करि सिंह पतंगा । एक एक वश त्यागत अंगा ॥
सब इन्द्रिन वश किमिसुख पावै । तिहिते इनसे दूर रहावै ॥
काहुहि दुःख देत मैं नाहीं । सुमिरौं रामनाम मन माहीं ॥
यहिते बसी शांति उर आई । भ्रम कुमती सब गई बिलाई ॥
मैं न चहत निजगुणदुख वरणा । तुम पूछेउ सो कह्यो विवरणा ॥
कहमुनि शांतिमिलै किहि हेता । कहमुनि वरणौं सुनहु सचेता ॥
ज्ञानकि सप्त भूमिका होई । तिनबिन शान्ति न पावत कोई ॥
ज्ञानते जीव परमपद पावै । बिन हरिभजन भूमि फिर आवै ॥
यहै प्रमाण भागवत पावै । ब्रह्मस्तुति देखहु कस गावै ॥

श्लो०येन्येरविन्दाक्षविमुक्तमानिनस्त्वय्यस्तभावादविशुद्धबुद्धयः
आरुह्य कृच्छ्रेण परंपदंततदापतंत्यधोनादृतयुष्मदंघ्रयः ॥ १ ॥
तथानतेमाधवतावकाःक्वचिद्भ्रश्यन्तिमार्गात्त्वयिबद्धसौहृदाः ।
त्वयाभिगुप्ताविचरन्तिनिर्भयाविनायकानीकपमूर्द्धसुप्रभो॥ २॥

दोहा-सोपुराण इतिहास अरु, शास्त्र तीर्थ नहिं जान ।
जिहिमें सत्संगति नहिं, नहिं हरिचरित बखान ॥ १ ॥
योग यज्ञ औ ज्ञान पुनि, विद्यासुख जो होय ।
जहां रामकर भजन नहिं, विपतिरूप बस सोय ॥ २ ॥
सनकादिकनारदऋषय, शुक लोमश भृगु व्यास ।
यह सब मुनिवर हरिचरण, रजमें चहत निवास ॥ ३ ॥

जाजुलिऋषिमुनिअति सुखमाना । ज्ञानभक्तिहियधरिहरषाना ॥
परमहंस यह ज्ञान बखानत । प्रभुकी कृपा कोइ कोइ जानत ॥

महाकठिन यह मारग अहई। वर्णत सहज कठिनकरगहई॥
ताते चतुर होय नर जोई। तजि सब रामभक्ति गहसोई॥
ज्ञान विराग स्वयं ढिग आवहिं। गोके संग बच्छ जिमि धावहिं॥
ताते तुम अस मनमें धरहू। ज्ञानभक्तिविधिवत ऋषिकरहू॥
जो कोइ त्याग भक्तिका करहीं। ज्ञानहेतु श्रम मनमें धरहीं॥
कामधेनु तज ते शठ प्रानी। चाहत दूध आक दुहि आनी॥
यहै प्रमाण महारामायन। भाषतहै सुनिये सुखचायन॥

श्लोक—ये केवलाद्वैतमतानुरक्ताःश्रीराममूर्त्तिं विमलां विहाय।
तेवैमदान्धाहृदयेस्वमूर्तिंत्यक्तायजान्तिप्रतिबिम्बकुम्भम्॥१॥
ये रामभक्तिममलांसुविहाय रम्यां ज्ञाने रता प्रतिदिनं परि
क्लिष्टमार्गे। आरान्महेन्द्रसुरभिं परिहृत्य मूर्खा अर्कम्भ-
जन्ति सुभगे सुखदुग्धहेतुम्॥२॥

दोहा—प्रथम भूमिका जानिये, शुभ इच्छा संचार।
दूसरि अहै विचारकी, नित्यवस्तु हिय धार॥१॥
करै अनित्य निवारना, सुन तीसरि मनलाय।
कहवावै तनमानसा, रोकै इन्द्रि समुदाय॥२॥
चौथी सत्यायुतजगत, देखै आतम एक।
अंश शक्त पंचम निजै, रूप विश्वास विवेक॥३॥
छठई नाव पदार्थ तब, होत बुद्धि लघुहान।
सप्तमभूमि तुरीय जहँ, मे त्वं होत मिटान॥४॥
सप्तभूमिका ज्ञानकी, गुरुविन लहत न कोय।
यह सातौं साधन किये, शान्ति उदय तब होय॥५॥

शान्ति बसै जिहिके हिय आई। क्रोध लोभ मद जाहिं नशाई॥
हियमें रहत वासना नाहीं। संशय भय कलेश मिटिजाहीं॥

रंक राव बड छोट समाना । खल सज्जन वन गेह कहाना ॥
शीत उष्ण वर्षा सममाना । माटी सोन हीर रज जाना ॥
मातु बंधु सुत कुल औ दारा । शत्रु मित्र सम अपन परारा ॥
मगन रहै लहि ब्रह्मानंदा । सुमिरत ब्रह्महि आनँदकंदा ॥
यहि विधि जो साधन अनुसरई । जीवनमुक्त मगन संचरई ॥
वचन सुनत यह विप्र सुजाना । तुलाधार कहँ गुरुकरि जाना ॥
संशय मिटी शांति उर आई । नभवाणीको ऋषि शिरनाई ॥
सकल जगत में ब्रह्म निहारा । अस प्रभाव सत्संग अपारा ॥
ब्रह्म बीजतरु यह संसारा । सत्संगति यहिकर फल सारा ॥
भरी अमियरस चरचा जोई । तामें बीज रहत है सोई ॥
हरिदर्शन चाहत जो भाई । सो सत्संग करो मनलाई ॥

दोहा-अमृत नहीं पतालमें, नहीं चन्द्रके माहिं ।
सो पैये सत्संगमें, अमृत सार बताहिं ॥ १ ॥
तातें नित सत्संगमें, मिश्र रहो मन लाय ।
बाढै हरिपद प्रेम जिहिं, जन्म मरण मिटजाय ॥ २ ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर युधिष्ठिरजाजुलीतुलाधारप्रसंग वर्णनोनाम पंचत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३५ ॥

दोहा-विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिरि राम सुखदान ।
कथा समुच्चयकी कहौं, कछु एकादश जान ॥

कह्यो सूत सुन ऋषि मम बानी । कथाअपर अब कहौं बखानी ॥
और सुनहु नृप नहुष सुजाना । इन्द्र सिंहासनको मन ठाना ॥
तिनहूं शतमख कीन्हें भारी । शक्र इते द्विजवध करि डारी ॥
वृत्रासुर वध करि भय पाई । दुखी मानसरमें सो जाई ॥
इत ऋषियन नहुषहिबुलवायो । सुरपुरमें ताको पधरायो ॥

मिल्यो इन्द्र सिंहासन जबहीं । भयो नहुषके मन मद तबहीं ॥
बहुतकाल सुख सुरपुर कीन्हों । इन्द्रानीपग कबहुँ न दीन्हों ॥
तब राजा तिहि दियो सँदेशा । अहौं इन्द्र मैं नहीं अँदेशा ॥
तासों तुम समीप अब आवो । रानी बनो न गहर लगावो ॥
सुनतशचीमनअतिदुखमान्यो । ध्यानकरतगुरुनिकटतुलान्यो ॥
तब रानी निज विपति सुनाई । सुनत गुरू अस युक्ति बताई ॥

दोहा–कहो जाय अस नहुषसों, ऋषिवाहन चढ़ि आप ।
जो आवहु मम गेह तो, होय हमार मिलाप ॥

शची नहुषढिग बात पठाई । सुनत नहुष अतिशय मुदपाई ॥
घटज आदि मुनि लीन्हबुलाई । चढि पालकी चल्यो नृपराई ॥
कामातुर नृप कहत बुझाई । सर्प सर्प चलिये ऋषिराई ॥
असकहि नृपजब चरण उठायो । दुर्वासा तब क्रोध बढायो ॥
सर्प सर्प तुम भाषत जैसे । गिरो सर्प बनि भूपर तैसे ॥
शाप सुनत नृप अति दुखपायो । उतरि यानते पद शिर नायो ॥
शापानुग्रह करहु कृपाला । तब बोले ऋषि होय दयाला ॥
द्वापरअन्त धर्मसुत होई । आवहि तुम्हरे ढिग जब सोई ॥
तासे प्रश्न करहु सुख पाई । चरण छुवत तरिहो नृपराई ॥
कह नृप पहिचानहुँ किहिभाँती । कह मुनिपूछत शंक नशाती ॥
प्रश्न किये उत्तर भल देई । धर्मसुवन तुम जानहु तेई ॥
असकहिमुनिनिजधामसिधाये । नहुष गिरे अजगर तनु पाये ॥

दोहा–परे कन्दराके निकट, बीत गयो बहुकाल ।
जब द्वापरके अन्तमें, गे वन धर्म भुआल ॥

तहां तृषाने अधिक सतायो । जलहिततब नृपभीम पठायो ॥
सरवर लखि जल लेने लागे । निकस सर्प बोल्योभय त्यागे ॥

कह्यो कि प्रथम प्रश्न कहिदीजे। पाछेते जल भरकर लीजे॥
कह्यो भीम कह प्रश्न सुहाई। कह अहि जग जीवतको भाई॥
जो कोइ हो अतिशय बलदाई। सुनतहि लीलगयो अहिराई॥
धर्मराज अर्जुनहिं पठायो। देखि सर्प इमि वचन सुनायो॥
कहु जगमें जीवत है को नर। सुनुअहि शर विद्या जाके कर॥
सुनिअहिलील लियोतिहिकाला। तब नकुलै पठयो महिपाला॥
ताहि सर्प इमि बोल सुनायो। कौन धन्य जगमें कहवायो॥
रूपवान जग धन्य कहाई। सुनतहि सर्प गयो धरिखाई॥
इतै युधिष्ठिर जान अवारी। पठयो सहदेवहि हित वारी॥
कह्यो सर्प जीवहि जगको कहु। विद्यावान होय जग जो बहु॥
ताहू निगलगयो सुनि व्याला। तब आये तिहि तट भूपाला॥

दोहा-धर्मसुवन लखि अहि कह्यो, पहिले उत्तर देहु।
पाछे इहिसर जाय ढिग, प्रेम सहित जललेहु॥ १॥
को जीवत को जागही, कहो भेद समुझाय।
बिन उत्तर इहि ठौरते, जल नहिं कोउ लेजाय॥ २॥

धर्मराज तब मनमें जाना। यही जन्तु कछु करचो बिधाना॥
बोले नृप तब अस समुझाई। जीव जौन सो सुनु मनलाई॥
दया शील समता मन रहई। सत्य छांड मिथ्यानहिं कहई॥
विष्णुभक्ति आनै करि ज्ञाना। प्रेमभाव मनमें जो ठाना॥
जीवै सदा सो भक्त कृपाला। तू किमि जीवै सुनु चण्डाला॥
सेवा मातु पिताकी करई। सदा धर्म हृदयमें धरई॥
पाप कपट जिय कबहुँ न जाना। जीवै सदा भक्त भगवाना॥
तब कहसर्प सुनहु तुम ज्ञानी। चार प्रश्न मम कहो बखानी॥
तौ चहुँ भाइन देहुँ जिवाई। पियो वारि विचरहु मनलाई॥

दोहा–को मोदत आश्चर्य क्या, कौन पंथ कस बात।
चार प्रश्न कहिये अबहिं, जियैं मृतक तव भ्रात॥

कहत धर्म तब प्रश्न बखानी। सावधान हो सुन अहि वानी॥
दूजे वा चौथे दिन भाई। शाक अलोना जो नर खाई॥
होय न ऋणी प्रवासी नाहीं। सो अतिसुखी जगतके माहीं॥
सुने वचन अजगर यह जबहीं। दीन्हों उगल भीमको तबहीं॥
प्रतिदिन जीव जात यमपाहीं। शेष जीव समुझत कछु नाहीं॥
इहिते क्या अचरज है भारी। सुनि अर्जुनको दीन निकारी॥
वेद चारि ऋषि वर्ग घनेरे। बहुत प्रमाण तर्क बहुतेरे॥
गुप्त भयो जगमें विज्ञाना। पुरुषाधिष्ठित पंथ बखाना॥
नकुलहि उगलदीन सुनि वानी। धर्मराज पुनि कही बखानी॥
महामोहमय जगत कटाहा। रैन दिवस ईंधन निर्वाहा॥
आयूकर पड तेल विशाला। पाचत सब भूतन कह काला॥
इहिसे अधिक न दूसर बाता। सुन उगलो सहदेवहि ताता॥
सुख मानो सुनि नृपकी वानी। कही धर्म ते बात बखानी॥

दोहा–सुनिये भूपति धर्मसुत, जानत सब संसार।
छुवो जो चरण शरीर मम, तब ह्वैहैं उद्धार॥

परस्यो चरण भूप तिहि जबहीं। दिव्यरूप राजा भो तबहीं॥
धर्मराज पूछो हरषाई। कौन कहो कैसे गति पाई॥
तिन सब निज वृत्तान्त बखाना। तिहि क्षण आयो व्योम विमाना॥
अस सत्संग प्रभाव अपारा। नहुष नृपति कर भा निस्तारा॥
और सुनो इक कथा सुहाई। मंकी शाह रह्यो इक ठाईं॥
धनहित उद्यम बहु विधि करई। होय नफा नाहिं घाटा परई॥
कर्ज काढि दो वृषभहि लावा। जहँ कहुँ जोतन खेत सिधावा॥

मारगमें कीनी मचलाई। भागत परे ऊंट ढिग जाई ॥
गर्दनमें जेवरि अरुझानी। भये मृतक घिसलत ह्वै ग्लानी ॥
दोहा—तब मंकी शोचन लग्यो, बहुविधि कीन विलाप।
दत्तात्रेय महामुनि, आये गत संताप ॥
ताको ऋषि बहुभाँति बुझावा। वृथा शोच कर कत दुखपावा ॥
दुख सुख सकल कर्म आधीना। बिन भोगे नहिं ह्वैहै छीना ॥
बिना दिये कबहू नहिं पावै। देश विदेश कहूँ फिरि आवै ॥
पूरव पुण्य कियो जिहि होई। बिन आरंभ मिलै धन सोई ॥
उद्यमहीन धनी बहुतेरे। पूरवपुण्य दान फल हेरे ॥
प्रथमै दान दियो जिन नाहीं। कैसे धन तिनको मिलजाहीं ॥
ताते हिय धारो सन्तोषा। तृष्णा डायन दहो सरोषा ॥
नहिं कछु धन सन्तोष समाना। चौबिस गुरुकरसिखयोज्ञाना ॥
सुनि मंकी तब वचन बखाना। कहो मोहिं चौबिस कर ज्ञाना ॥
दोहा—सुनि हर्षित दत्तात्रयी, बोले सुनहु सुजान।
हम चौबिस गुरुकीन जग, तिनपर सीखे ज्ञान ॥
प्रथम मोर वसुधा गुरु जाना। तिहिते तीन बात पहिचाना ॥
तिहिपर शैल दुर्ग हम जानी। आतप वात सहत अति पानी ॥
क्षमा शांति तिहिमें अधिकाई। ऐसहि सन्त चाहिये भाई ॥
गिरिवर अचल देखि मैं जाना। प्रभुमायासी करी समाना ॥
अस अपेल ह्वै सन्त सुजाना। भजे राम सहि दुखसुखनाना ॥
दूसरद्रुम लखि परउपकारी। देतसबहिं फल बालक डारी ॥
रहि इकपद वर्षातप वाता। सहतदुःखसुखनहिंकहुँ जाता ॥
बालक पत्र फूल फल डारा। देखेउ करत पराई सारा ॥
पुनि जन काटि मूलते लेहीं। अचलसन्त तरु उतर न देहीं ॥

ताहि देख मैं कीन विचारा। ज्ञानिहु चहिये परउपकारा ॥
जो यह तनु परकारज आवे। तिहिते उत्तम नहिं कहवावे ॥
तीसर भूप्रहारपद सहई। रहै अचलकिहि कछू न कहई ॥

दोहा—हे मंकी मैं देख अस, तब यह जान्यो भेद।
ऐसो ज्ञानी संत है, कबहुँ न मानै खेद ॥

दूसर गुरू प्रभंजन अहई। जो सुगंधदुर्गन्धहु बहई ॥
तैसी चही सन्तमर्यादा। जानै नहिं भोजनकर स्वादा ॥
तीसर गुरु मैं जान अकासा। जहँ रहरवितिहुँलोक प्रकासा ॥
जहँ जड चेतन जीवनिवासा। तिनपर यथा भानुकी भासा ॥
तैसहि प्रभु सबके उरमाहीं। जिमि घटकोटिएकरविछाहीं ॥
गुरु चतुर्थ जलको हम देखा। जो जगपावन करतविशेखा ॥

दोहा—तिहिको देख बिचार मैं, होय संत असभाय।
औरहि पावन कीजिये, ज्ञानवारि अन्हवाय ॥

पंचम गुरू मम याचक भाई। राखे कछु न पास सबखाई ॥
छठा गुरू शशिकला समाना। जन्ममरनइहिविधिजगजाना ॥
सप्तम गुरु पतंग हम कीन्हा। तिनते सीख ज्ञान दो लीन्हा ॥
जलसोखत पुनि वर्षत सोई। ऐसो ज्ञान संत कर होई ॥
पाई वस्तु तुरत देडारैं। जियसुख प्रेम भक्ति उर धारैं ॥
दूसर अस प्रभुकी लखि माया। जिमिघटकोटिएकरविछाया ॥

दोहा—अष्टम गुरू कपोत सम, फँस बच्चनके काज।
तिहिते त्यागकुटुम्ब सब, भजन करहु रघुराज ॥

नौमा गुरू अजदहा होई। रहि इकठौर जन्मभरि सोई ॥
मिले आय भोजन सो पाई। ऐसे सन्त न परघर जाई ॥
दशम गुरू मम कर जलधीशा। जो सबकाल एकसम दीशा ॥

इहि विधि होय सन्तकी रीती । हानिलाभमें करै न भीती ॥
गुरु ग्यारह मम जन्तु पतंगा । जो जल मरै दीपके संगा ॥
तिहि विलोकिजानेउअसज्ञाना । करिअस प्रीति मिलैंभगवाना ॥

दोहा–द्वादशवीं मधुमाक्षिका, मैं गुरुकीन्ह विशेष ।
महापरिश्रम जोरि मधु, पायो बहुरि कलेश ॥

तिहि विलोकि असज्ञानविचारी । इमि दुखलहत द्रव्यधनधारी ॥
गुरू त्रयोदश कियो गयन्दा ।लखिछलगजिनिपरोजिहिफंदा ॥
तिहि विलोकि मैं हृदयविचारी । चहिय न सन्त प्रीति परनारी ॥
गुरू चतुर्दश मोर किराता । जो मधुदेखि तोरि "लेजाता ॥
तिहिते चहिय सन्तको सोई । करै भक्ति जिहि हरै न कोई ॥
पंचदशो गुरु मम मृगराजा । जो सुनि मोह वीणके बाजा ॥
पुनि जियगयो देखि मैं जाना ।कबहुँ न सुनिय नारिकरगाना ॥
षोडशमो गुरु झष मम नीका । जो फँसिगयो लाग वंशीका ॥

दोहा–तिहि विलोकि हौं जान अस, चहै न भोजनस्वाद ।
वैरीके घर जाइहै, उपजे महाविषाद ॥ १ ॥
सप्तदशो गुरु पिंगला, गणिका जानहु भाइ ।
करिशृँगार बैठीरही, विषयिन आयो धाइ ॥ २ ॥

आशामें अधरात बिताई । पुनि मनमारि पौढरहि जाई ॥
कामविवश उपज्यो इमि ज्ञाना । जसनरहितशृँगार नितठाना ॥
इमि शृँगारकारि प्रभुहि रिझाती । तौसहदेह मुक्ति मैं पाती ॥
अस विचार सो तजसब आसा । लगीजपन गुण रमानिवासा ॥
मैं लखि यह मन कीन विचारी । आशा तजिभजकृष्णमुरारी ॥

दोहा–अष्टादश गुरु चील्ह मम, लिये जातही मांस ।
और चील्हका देखि यहि, धायगईं तिहिपास ॥

लपटि झपटि सब मारहिं एही। डारदीन तब आमिष तेही॥
तब सब गइँ उडाय नभ माहीं। सो पुनि बैठिमुदित तरुपाहीं॥
तब लखि मैं यह कीनविचारा। धनलखि लरत बंधुसुतदारा॥
ताते त्याग भजहु भगवाना। ऊनविंश गुरु बाल अयाना॥
जो करमणि गुड बदले देही। उद्यम खेल शोच नहिं तेही॥
नहिं कछु भय न प्रीति नृप रंका। परमहंसगति फिरत अशंका॥
इहि संसार मुदित द्वै प्रानी। इक बालक इक आतमज्ञानी॥
दोहा–तिहि विलोकि मैं जान अस, चहिय बाल गति ज्ञान॥
तजि मोहादिक जगत भय, प्रीति करै भगवान॥
विंशगुरू द्विजसुता कुमारी। रही अकेल गेहमें वारी॥
तिहिके घर पाहुन कछु आये। तिन्हैं टिका आदर दरशाये॥
गई भवन भीतर वह नागर। लगी धानकूटन गुण आगर॥
कूटतधान चूरिका बाजी। तब बाला मनमें अति लाजी॥
तब तिहि सब चूरिका उतारीं। इक इक करमें दो दो धारीं॥
बाजहिं तबहुँ एक इक तूरी। राखी दोउ कर इक इक चूरी॥
शब्द न भयो कूटकर चावर। दिये जिमाय पाहुनें नागर॥
मैं विचार लखि जिय अस हेला। चहिय सन्तको रहन अकेला॥
झगरा होत दुहुँनके संगा। ताते इकलो रहु हरि रंगा॥
दोहा–एक विंश गुरु मोर है, बानबनावन हार।
जिहि सन्मुख नृपसेन गइ, देखेउ बीच बजार॥
पाछेते चर आन सुनाई। नृपदल किते गयो सुनु भाई॥
कहेउ बानकृत हम नहिं देखा। तौ हमतिहिसनकहेउविशेषा॥
गा महीपदल सब तव आगे। बोलत वृथा हेतु किहि लागे॥
कहेउ लुहार तबै शिर नाई। रह निजकाजलगे हम भाई॥

हम नहिं कीन भूपदल ध्याना। यह सुनि मैं जाना यहज्ञाना ॥
ऐसो चहिय कृष्णपदध्याना। जिहिते अंत लहै निरवाना ॥
बाइसमो गुरु व्याल हमारा। जो न करै निजघर परिवारा ॥
संतज्ञान अस चहिय अपेला। वनबागनविच रहै अकेला ॥

दोहा-मकरीगुरू त्रिविंश मम, तारकादि श्रुनि ख्यात।
सो विलोकि मैं जानि अस, प्रभुमाया विख्यात ॥ १ ॥
ऐसहि सब उपजाय जग, करत प्रलय भगवान।
अपनी देह बसावहीं, सबजीवनके प्रान ॥ २ ॥

चतुर्विंश गुरु जन्तु हमारा। भृंगी नाम विदित संसारा ॥
जिहि जंतुहि ले निजगृहजाई। होय रूप तिहि तुरतहि भाई ॥
तिहि विलोकि मैं ज्ञानविचारा। करिय भजन अस रामउदारा ॥
सो प्रताप रघुपति सेवकाई। तनु तजि रामरूप ह्वै जाई ॥
तुमसे हम बरणी सो सीखा। चतुर्विंशगुरुसे जो सीखा ॥
पश्चिमसमय गुरू यह देहा। वैश्य ज्ञान सुनु सहित सनेहा ॥
यहि तनु पल मल मूत्र प्रधाना। देखेउ ताहि मिलो असज्ञाना ॥
लेना राम देनको दाना। यहितनु औरवस्तु नहिंजाना ॥
अस जिय जान प्रथम दे दाना। निकरिचलोसुमिरतभगवाना ॥
जिन गुरु दीन्ह मंत्र अरु ज्ञाना। सो चौबिस ते पृथक सुजाना ॥
सुनि मंकी हिय उपज्यो ज्ञाना। पद शिरधरि वनकीन पयाना ॥
जपतपकरि तहँ तज्यो शरीरा। हरिपुर गयो महा मतिधीरा ॥
अससत्संग प्रभाव अपारा। कहा कहौं तुमसों विस्तारा ॥

दोहा-तीनदेवको तप कियो, सुतहित अत्रीनारि।
तिनदेवनके अंशते, दत्तात्रयी विचारि ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर नहुषनिस्तारदत्तात्रेयमंकीसम्वादवर्णनो नाम षट्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३६ ॥

दोहा–विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमरि राम सुखदान ।
कहौं समुच्चयकी कथा, जैमिनिमतहि बखान ॥

बहुरि सूत बोले अस बानी । धन्य २ तुम शौनक ज्ञानी ॥
और सुनो सत्संग बडाई । पिता पुत्र सम्वाद सुहाई ॥
कश्यप विप्र एक अति ज्ञानी । मेधावी सुत सबगुणखानी ॥
ज्ञानवान ममता नहिं तेही । कियो प्रश्न पितुचरणसनेही ॥
कौन करहुँ जप तप आराधन । जाते जग तरिहौं ह्वै पावन ॥
कह कश्यप सुतपढिये वेदा । ब्रह्मचर्यकर मेटहु खेदा ॥
गृही होय गृहधर्म सँभारो । वानप्रस्थ बहुरि पग धारो ॥
ले संन्यास करहु वनवासा । ह्वै जैहै सब जगत हिरासा ॥
जब तप योग करहु मनलाई । सुततुमको कर्त्तव्य सदाई ॥
मेधावी तब बोलो बानी । मृत्यु विवश हमसबको जानी ॥
इच्छासे जग करत सँहारा । बृद्ध तरुण नहिं करत विचारा ॥
किहिविधि चारहु आश्रम होई । पलको है विश्वास न कोई ॥
लोमशादि चिरजीव बखाने । कलपगये पुनि रोम टुटाने ॥
तेऊ डरत मृत्युके पाहीं । ताते जियविश्वास न आहीं ॥
और सुनहु पाण्डव मख कीन्हा । अश्वछाँडि जगमें यशलीन्हा ॥
अर्जुन कृष्ण हंस वृषकेतू । चले अश्वरक्षाके हेतू ॥
सिंधुपार जब अश्व सिधायो । एक द्वीप लखि तहँ सुखपायो ॥
बकदालभ्य करहिं तहँ ध्याना । सबन जाय पद गहे निदाना ॥
चरणछुवत तिन नयन उघारे । दे अशीश मृदुवचन उचारे ॥
मैं हरिचरित कहूं सुखदाई । जो देखे निज नयन उघाई ॥

दोहा–चारकोटि चहुँ लक्ष पुनि, दो सहस्र अवतार ।
भये रामदशरत्थके, मेरी दृष्टिअगार ॥

तब अर्जुन बोले शिरनाई। कितने दिन तुम यहां बिताई ॥
कह मुनि सुनहु कथा मनलाई। आदिहिते सब कहौं बुझाई ॥
निमिष अठारह काष्ठा होई। त्रिंशत्काष्ठा कला समोई ॥
तीस कलाकी एक मुहूरति। तीस मुहूरतको दिन पूरति ॥
पन्द्रह दिनकर इक पखवारा। दो पखवारक मास विचारा ॥
बारह मास वर्ष इक होई। मनुजवर्ष जानहु यह सोई ॥
सत्रह लख अठाईस हजारा। वर्षनकर सतयुग निरधारा ॥
द्वादश लख छानवे हजारा। त्रेतायुगकर मान विचारा ॥

दोहा-आठ लाख चौंसठ सहस, द्वापरयुगपरिमान।
चार लाख बत्तिससहस, कलियुग करत बखान ॥

चारि सहस युग बीतत जबहीं। ब्रह्माकर इक दिन हो तबहीं ॥
इतनीही पुनि रात कहावै। दोउमिलकर इक कल्पकहावै ॥
तीस कल्प इहिविधिगत होई। तब इक ब्रह्ममास मुनि होई ॥
बारह मास वर्ष इक भाई। शतवर्षायु ब्रह्म कहवाई ॥
ब्रह्मा त्यागत जबहिं शरीरा। ब्रह्मकल्प सोइ प्रलय सुधीरा ॥
मैं यह कहत तुमहिं छलत्यागे। ब्रह्मा बीस भये मो आगे ॥
एक बार ब्रह्मा इक देखे। चारिभुजा मुख चारि सु लेखे ॥
चार वेद चहुँ हाथ सुहाये। प्रभुचरित्र गावत मनभाये ॥
मोते कही ध्यान तजि देहू। हमते कछुक चतुरता लेहू ॥
ताही समय पवन इक आई। हमैं उन्हैं लेगई उड़ाई ॥
पहुँचे जाय अन्य ब्रह्मण्डा। तहँविधिकेमुखआठअखण्डा ॥
आप कौन विधिते विधि कहऊ। मैं ब्रह्मा दिग्मुख रिस गहऊ ॥
अब मत ऐसी कहियो वानी। मैं ब्रह्मा सब जग निर्मानी ॥

दोहा-इतनी कहत पवन पुनि, दोउन दियो उडाय।

गई आन ब्रह्माण्ड तहँ, सोरहमुख विधि आय ॥ १ ॥
पुनि बत्तिस चौंसठ तथा, इहिसे दुगुन अनेक ।
विधि देखे पुनि उडिचले, गगन पार भे नेक ॥ २ ॥
तहँ इक पुरुष विलोके जाई । अति विस्तृततनु वर्णिनजाई ॥
वदन अनन्त अनन्त भुजाजिहि । वेद अनन्त अपारकहततिहि ॥
सब मिलि प्रभु गुणग्रामबखाना ।सकलविधिनकोगोअभिमाना॥
रहि कछु क्षण पुनि आयसु पाई । गे सब निजर लोकहि धाई ॥
अर्जुन सुनत बहुत सुख पाई । कर संपुट कर विनय सुनाई ॥
काहे बसत उजार मँझारी । शीत उष्ण वर्षातप भारी ॥
लीजै इक आश्रम बनवाई । सुनत वचन ऋषि बातसुनाई ॥
लघुजीवन संचय क्या कीजे ।मृत्युखडीलखिहरिभजिलीजै ॥
जो कोइ छुरी चढाया जावे ।क्षण रहिगये कौन सुखपावे ॥
ऐसे दीर्घ आयु जे अहहीं । तेऊ डरत मृत्युते रहहीं ॥
औरनकी फिरि कहा चलाई । इत जन्मै औ इत मरजाई ॥

दोहा—याते त्यागो मोह सब, कर हरिचरण सनेह ।
निशिवासर ऋतुके पलट, क्षीण होत है देह ॥ १ ॥
देखत नित नहिं चेतकर, सोवत ढहते गेह ।
प्राण अन्त नहिं कछु बनै, पैठ उठे क्या लेह ॥ २ ॥

श्लोक—यावत्स्वस्थमिदं देहो यावन्मृत्युश्च दूरतः ।
तावदात्महितं कुर्यात् प्राणान्ते किं करिष्यति ॥ १ ॥

दोहा—पुत्रवचन सुनि पिताको, भयो विमल वैराग ।
तृणसम तज धन धामको, गयो कृष्णलव लाग॥ १॥
करि जप तप संयम नियम, अन्तगयो हरिधाम ।
अस सत्संग प्रभाव है, सकल इष्ट अभिराम ॥ २ ॥

और सुनहु इक कथा पुरानी । विश्वावसुकी सुता सयानी ॥
तालकेतु लेगा हरि ताहीं । ऋतध्वज गालवमखजाहीं ॥
दैत्यमार कन्या सो लीनी । विश्वावसुहि आय पुनि दीनी ॥
तिनतिहि नृपसँगव्याहविचारा । तब कन्या यह वचन उचारा ॥
तीन वचन जो मोर निबाही । ताके संग जाउँ मैं व्याही ॥
इक जो अतिथि द्वार मम आवे । विमुखहोयाकिहुविधिनहिंजावे ॥
दूजे जोलौं जियों भुआरा । दूजे व्याह न करहु विचारा ॥
तीजे जो बालक जन्माऊं । द्वादशवत्सर मही खिलाऊं ॥
मम प्रण कठिनजानमनमाहीं । किहु नृप मोहिं बरी है नाहीं ॥

दोहा—ऋतुध्वज ताही वचन दे, व्याह कियो घर लाय ।
कछुक कालमें सुतभयो, चेरिहु देत न माय ॥ १ ॥
दिन औ रात खिलावती, देती इहि विधिज्ञान ।
ब्रह्म निरंजनरूप तू, किमि जग रह्यो भुलान ॥ २ ॥

श्लोक—शुद्धोसि बुद्धोसि निरंजनोसि संसारमायापरिवर्जितोसि ॥
संसारस्वप्नं त्यज मोहनिद्रां मदालसावाक्यमुवाचपुत्रम् ॥

बडे भाग्य यह नर तनु पायो । सुर दुर्लभ निगमागम गायो ॥
ताहि पाय जिन हरि नहिं ध्यायो। धिक् जीवन जग वृथा गँवायो ॥
ताते सुत प्रभु सुमिरण कीजे । ज्ञानविराग हिये धरि लीजे ॥
सुख दुख क्षुधा तृषा मद मोहा । त्यागहु लोभ काम औ कोहा ॥
सुत पितु मात पिता अरु नारी । स्वारथ साथी लेहु विचारी ॥
अन्त समयकोउ काम नअइहैं । बीचहि मिले बीच रहि जैहैं ॥
सब तज पुत्र गमन वन कीजे । रामरसायन निशिदिन पीजे ॥
क्षणक्षण आयु सिरावत जाहीं । ज्यों काचोघटजलहि समाहीं ॥
काल अचानक लहिहै मारी । वृद्धतरुण नहिं बचै कुमारी ॥
ताते बालापनते चेतू । वेगहि सुमिरो करुणासेतू ॥

दोहा—बहुविधि इमि मदालसा, दियो पुत्रको ज्ञान।
भयो ज्ञान तब वनगयो, भजन कियो भगवान ॥ १ ॥
इहि विधि षट बालक भये, वनहिं पठाये बाल।
जब सप्तम जन्म सुवन, बोले विलखि भुआल ॥ २ ॥

हे भामिनि कछु हिये विचारो। भयो वृद्धपन आन हमारो ॥
बालक सब वन दिये पठाई। पाछे राज्य करहि को आई ॥
तिहिते यह बालक रख लीजे। प्यारी सीख मान मम लीजे ॥
सुनि असवचन गेहतिहिराखी। गेह नीति नृपनीति सु भाखी ॥
तदपि शोच हिय कियो अपारा। नरक परहि यह सुवन हमारा ॥
लिखि इक यंत्र भुजामें बांधी। बोली वचन सकलगुणसाधी ॥
जब कहुँ विपति परहितवआई। याहि खोललखिकियो उपाई ॥
कछुक काल दोउ तजो शरीरा। भयो अलर्क नृपतिमतिधीरा ॥
जब बहु दिवस गये तिहि बीते। आये तिहि के बंधु पिरीते ॥
बोले राजत्याग वन जाई। भजिये कृपासिंधु सुखदाई ॥
नहिं मानी दिय बंधु निकारी। काशिराजपै कीन पुकारी ॥

दोहा—देन कह्यो निज भाग तब, लाये नृपहि चढाय।
किय अलर्क कछुदिन समर,अन्तगयो अकुलाय ॥ १ ॥
गयो विपिनमें भाज नृप, मनमें कीन विचार।
खोल यंत्र सो देखऊं, देखन लगो सम्हार ॥ २ ॥
लख्यो जगतमें मत भ्रमैं, दुखसागर संसार।
सुख स्वप्नेहु यामें नहीं, सत्य वचन निरधार ॥ ३ ॥
हरि विमुखनको संग सुत, भूलि न कबहुँ करेहु।
साधुसंग सुखभौन है, ज्ञान भक्ति जहँ लेहु ॥ ४ ॥

देव दनुज नर नाग खग, किन्नर नाग अनेक ।
युग २ सत्संगति तरे, कर सुत मनहि विवेक ॥ ९ ॥
अस यह यंत्र लख्यो नृप जबहीं । ह्वैगो विमल ज्ञानहिय तबहीं ॥
दत्तात्रेय लखे कहुँ जाई । चरणवंदि निजविपति सुनाई ॥
तिन हिय कीनो ज्ञानपसारा । करि हरिभजन भयो भवपारा ॥
भ्राताहु लखि बंधुहि ज्ञानी । गयो विपिन मनमें सुखमानी ॥
अस सत्संग प्रभाव अपारा । क्षणमें मिटत दुखद संसारा ॥
ताते सत्संगति नित कीजे । मन वचनहीं कुसंगति कीजे ॥
भक्तिलता सत्संगति वारी । श्रद्धापल्लव कही विचारी ॥
गुरु लघु शाखा ज्ञान विरागा । प्रेम सुमन प्रभुसों अनुरागा ॥
हरिकी प्राप्ति मधुरफल गाई । जिहि पाये दुख दोष नशाई ॥
मायाते प्रथमहि कर रक्षा । विटप भये नहिंसकिहै भक्षा ॥
कल्प वेलि यह सब सुखदाई । सेवत चार पदारथ पाई ॥
दोहा-कन्या जन्मै पितासे, रहै पिताकी गोद ।
होय पुत्र तब अति सुखद, भाषत भक्ति विनोद ॥ १ ॥
सागर हरि घन साधु जन, वर्षत यश चहुँ ओर ।
कठिनाई मेटत सकल, कर प्रभु ध्वनिको शोर ॥ २ ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर पुत्रपितासम्वादअलर्क प्रसंगवर्णनोनाम सप्तत्रिंशोध्यायः ॥ ३७ ॥

दोहा-सुमरि राम सिय सन्त गुरु, गणप गिरा भगवान ।
सांख्यशास्त्र वेदान्त मत, कछु २ कहत बखान ॥ १ ॥
पुनिशौनक अस बात सुनाई । सत्संगति महिमा तुम गाई ॥
ज्ञान कथा अब कहौ विचारी । जिहिते मिटै मोह भ्रम भारी ॥
कहत सूत सुनु कथा पुरानी । शयनजीत नृप चरितबखानी ॥

तासु तनय दशवर्ष सुहायो। भयो मृतक कर्मन गति पायो ॥
राजा रुदन कीन अति भारी। प्राण तजहुँ यह मनहिंविचारी ॥
तिहि क्षण लोमश ऋषि तहँ आई। नृपहिदुखित लखिरहेबुझाई ॥
नृप कत शोचतरहो वृथाहीं। मातपितासुत किहु कोउ नाहीं॥
आगे डारो पुत्र शरीरा। जीव नित्य कसधरत न धीरा ॥
जन्मत मरत जीव यह नाहीं। भयो न है नहिं होनिहुँ काहीं ॥
शस्त्र न काटसके कोइ याही। अग्निजराय सकत नहिं ताहीं ॥
गला सकत याको नहिं वारी। शोष सकै नहिं काहु बयारी ॥
यहि प्रकार आतम है भाई। मनमें ताहि न शोचहु राई ॥
याको मृतक जु मानत कोई। अज्ञानी समझहु तुम सोई ॥
नाशवान यह देह सदाहीं। जीवातमा मरत कहुँ नाहीं ॥

दोहा–देह अंग संभव भई, क्षण क्षण होत विनास।
उत्पति पालन भय सदा, मानत अज्ञ निवास ॥ १ ॥

ब्रह्म अखण्ड अजन्म असाया। इच्छामय पूरुष निर्माया ॥
इच्छा तेहि प्रकृति उपजाई। महत्तत्त्व तिहिते भो राई ॥
महत्तत्त्वसे निरहंकारा। तिहिते प्रगटचो प्रणवविचारा ॥
सत रज तम गुण तिन प्रगटाये। तिन ते तनु अनित्यउपजाये ॥
सतते वासुदेव चितहोई। और चतुर्दश देव लखोई ॥
ब्रह्मा बुधि रजगुणते जानो। इन्द्रिय दश दश वायु पिछानो ॥
अहंकार शिवतमसे भयऊ। अन्तःकरणरूप निर्मयऊ ॥
अहंकार ते भा आकाशा। जासु शब्दगुण जगत प्रकाशा ॥
नभते पवन स्पर्शनवारी। ताते अग्नी दृष्टि पसारी ॥
अग्निते जलरसना रस चाहै। जलते भूमि गंधगुण गाहै ॥
इहि विधि प्रगट एक इक राई। प्रलयमाहिं सब जाहिं समाई ॥

सत रज तम बुधि चित हंकारा । शब्द स्पर्श रूप रस सारा ॥
गन्ध मिलत ग्रंथी जब परई । तब उपजत मनविकलपकरई ॥

दोहा-तिहितें अन्तःकरणहै, कहवावत हैं चार ।
मन बुधि चित हंकारकी, वृत्ती कहौं विचार ॥ १ ॥
शील ज्ञान विश्वास व्रत, निश्चय मति अरु धृत्ति ।
सुरति उमँग चंचल अगिनि, रागआदि चितवृत्ति ॥ २ ॥

मान मलिनतामें ते जोई । अहंकारकी वृत्ती सोई ॥
बहु विकलप सुखदुखभयआवे । लाजउचाटन मन वृति गावे ॥
एक वस्तुके नाम अनेका । तिमि अन्तरकी वृत्ति विवेका ॥
अब वर्णहुं इन्द्रिनके देवा । सावधानह्वै सुनिये भेवा ॥
मनके चन्द्र बुद्धि विधि जानो । वासुदेव चितको पहिंचानो ॥
अहंकारके शिव कहवाये । वरुण दिशाकाननके गाये ॥
नयनन देवराज रवि जानो । रसनाके पुनि वरुण पिछानो ॥
मारुत त्वचा देव हैं राई । अश्वीदेव नासिका गाई ॥

दोहा-आनन अग्नी इन्द्रकर, गुदके यम नृप जान ।
प्रजापति हैं मेढ्रके, चरणविष्णु भगवान ॥ १ ॥
निर्भय निसवत देव यह, सबशरीरके माहिं ।
नाड़ी चौदह सहसहैं, चौबिस मुख्य कहाहिं ॥ २ ॥
नाभिकमलते उपर दश, औ दश नीचे मान ।
द्वो दक्षिण उत्तर उभय, बिरलनको पहँचान ॥ ३ ॥

तिनमें दश परधान बखानो । जहाँ बसै सो करहु पिछानो ॥
वामभागमें इडा सुहाई । दाहिनमें पिंगला कहाई ॥
मध्य सुषुम्ना रहत सदाहीं । यहै मुख्य जानहु मनमाहीं ॥
गंधारी रह बायें नैना । हस्तिजिह्वक्षत दहिने चैना ॥

दहिनी श्रुति रह पूषा नारी। रहे यशस्विनी वाम सुखारी॥
नाडि अलंबक नाभि बिराजै। कुहुलि नासिकामाहीं छाजै॥
शंखिनी आनन करै निवासा। दशनाडिन इमि नामप्रकासा॥
दशों पवन इहि तनुके माहीं। निज २ कारज करत रहाहीं॥
प्राणपवन हृदयमें रहहीं। जिहितें निशिदिन सांसालहहीं॥
नाभिसमान गुदाहि अपाना। कंठ उदान सकलतनु व्याना॥
नागपवनते लेत डकारा। नयननपलकैं कूर्म उघारा॥
देवदत्त जमुहाई लावैं। कृकल छींकसे तनुहि खिलावै॥
मुये फुलावे देह धनञ्जय। विचरैं दशों पवनतनु निर्भय॥

दोहा—पांचतत्त्वते प्रगटहैं, यह दशइन्द्रिय जान।
दोदो प्रेम निभावहीं, सोऊ करौं बखान॥ १॥
मुख बोलन श्रवणन सुनत,त्वचा परसकर पानि।
नयन चरणते प्रीतिहै, नैनफँसे पग जानि॥ २॥

रसन उपस्थ चहत दोउ भोगा। गुदा नासिका नेह सुयोगा॥
इन्द्रिनके सुख मन गो पागी। भयो न ईशचरण अनुरागी॥
ताते दीन मलीन रहाई। मनवासा अब देहुँ सुनाई॥
हृदयकमलपखुरी तिहि आठा। तिनपर बैठ फिरत मनपाठा॥
बैठन जिहिदल पर मन जाई। तब तहँ तैसी वृत्ति लखाई॥
पूरब दलपर जब मन जावहि। धीरज दया धर्म उपजावहि॥
आग्नेदलहि धरहि पग जाई। क्षुधा तृषा निद्रालस आई॥
मद मत्सर छल दक्षिण होई। अहंकार क्रोधादिक सोई॥
नैर्ऋतदल हठ माया मोहा। आशा तृष्णा शंका छोहा॥
पश्चिमदल समता हिय आवे। आनँद निर्भय चित्तरहावे॥
वायव सन्तती उच्चाटन। भय लज्जा औ अवउरछतमन॥

उत्तरके दल मन जब आवै। हास्यविनोद काम उर छावै॥
सुधि बुधि क्षमा शील सन्तोषा। सतवृत्ती ईशान अदोषा॥
इहि विधि वायुगती अनुसारा। आठौं पखुरिन मनगतिधारा॥
रोकत याहि सन्तजन कोई। हरिचरणनहिं लगावत जोई॥
नातरु बहत रहत जगमाहीं। कर्मबन्ध कहुँ निपटत नाहीं॥

दोहा-तत्त्व पाँचसे भयो तनु, जो इहिविधि तनुमाहिं।
कोह मोह मद काम भय, वचन जु नभते आहिं॥१॥
वायूते काया बढत, बल चालन संकोच।
स्पर्शन पुनि अग्निते, आलस क्षुधा विकोच॥२॥
तृषा नींद यह अग्निके, गुण नित रहैं शरीर।
मेद रक्त कफ बिन्दु कन, और स्वेद गुण नीर॥३॥
अस्थि मांस अरु चाम यह, है मातितत्त्व विकार।
नाडी रोम विकारयुत, बन्यो शरीर असार॥४॥
यह असत्य तनु जानिये, पुनि असत्य संसार।
यहै सत्य सब जगत सत, सत सब कर्म विकार॥५॥

तनुमें चार देह हैं मूला। व्यापक सूक्षम लिंग स्थूला॥
चार अवस्था तिनकी कुरिया। जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति तुरीया॥
चारभाँतिकी वाणी होई। परा मध्य पश्यन्ती जोई॥
औ वैखरी चार यह वानी। दश इन्द्रिय तत पांचो जानी॥
तिनते तनु अनित्य प्रगटायो। जो स्थूल पुराणन गायो॥
बाल तरुण वृद्धाई रोगा। जागृत स्वप्न उष्ण शितयोगा॥
द्वारनते मलत्याग निहारा। यह स्थूलहि लखो विकारा॥
तासु अवस्था जागृत जानो। जो अवलोकत करत पिछानो॥

दोहा—दशौं पवन औ तीन गुण, पंच मात्रा जोय ।
स्वर चौदह अन्तःकरण, भासतहै तनु सोय ॥ १ ॥
दशौं इन्द्रियें पंच तत्, पंच पवन सँग लीन ।
सतगुण सह दश देवता, यामें रहि सुख कीन ॥ २ ॥

शयनकरत जिहि स्वप्न आवै । सोई लिंगदेह कहवावै ॥
लिंगदेहके तत्त्व बखानो । प्राण अपान समान उदानो ॥
व्यान वायु सतरज तम जाना । अन्तःकरणचार स्वर माना ॥
पांचौं तन्मात्रा जो होई । लिंगदेह बीसनकर जोई ॥
स्वप्नावस्था भोगत सोई । जीव नाम मन सँग रहजोई ॥
जैसे कर्म करत यह प्रानी । स्वर्ग नरक सब भोगत आनी ॥
जन्म मरण सुख दुःख पियासा । क्षुधा जीवके संग निवासा ॥
षट् उर्मी जीवन सँग रहहीं । योगी जन सब जानत अहहीं ॥
लिंग शरीर जान तब पाई । जब नर अजपामें मन लाई ॥
सोहमस्मिनिकसतसह श्वासा । सोई अजपा नाम प्रकाशा ॥
श्वासलेत पुनि रा उच्चारै । तजत मकार चहौं उरधारै ॥
सकल वासना जब मिटि जाई । तब यह जीव ब्रह्म ह्वै जाई ॥
मन रु प्राण आनँदमय कोशा । तीनहुँकर सूक्षमतनु पोषा ॥
घोर नींद प्राणी जब सोवै । ताको सुधि कछुहू नहिं होवै ॥
सूत्रात्मा प्रकाशित रहई । सोइ सुषुप्ति अवस्था अहई ॥
जाग्रतस्वप्नसुषुप्ति विनाशी । सत्संगति तुरिया अविनाशी ॥

दोहा—ईश्वर जीवहि भेदगो, तुरी अवस्था होय ।
कोइ सन्त इहि पावहीं, लक्षण सुनिये सोय ॥ १ ॥

प्रेमविवश तनुसुधि बिसराई । गद्गद बैन रोम तनु छाई ॥
कहुँ उठिजात बैठ कहुँ जाई । कबहुँक नृत्यकरै कछु गाई ॥

कलबलवचन कहत पुनिहामा। दुर्बल तनु नहिं क्षुधापियासा॥
पर्वत ग्राम नगर नहिं बूझत। कहां जात नहिं समुझत झूमत॥
शत्रु मित्र नर नारि समाना। पुत्र पिता माता सम याना॥
मैं अरु मोर तोर सब भूला। त्याग अत्याग समान समूला॥
दोप अदोष न भ्रमकर लेशा। निजस्वरूपसुख मिटै कलेशा॥
मन चित अहंकार धी जोई। इनकी पहुँच तहां नहिं होई॥
लवनपुतारि जिमि सागरथाई। लेन चहत आपुहि गल जाई॥
तिमि आत्मा खोजके माहीं। सुधि बुधि सबही जात हिराहीं॥
जिमिरवितेज रविहिलखिजाई। तिमि आतमते आतम पाई॥
यह मत जिन्न अपने मन ठाना। सो नर जीवनमुक्त बखाना॥
चाहैं जस विचरैं महिमाहीं। दोष अदोष तिन्हैं कछुनाहीं॥

दोहा—चारि अवस्था रहत जहँ, सो अब करहुँ प्रकास।
जाग्रत नैननमें बसत, स्वप्न कण्ठकर वास॥ १॥
कारणतन हृदय रहे, तुरिया गगन विराज।
परब्रह्म परमात्मा, सबते पृथक् सुसाज॥ २॥
पुरुष प्रकृति अन्तःकरण, महत्तत्त्व तनुदेव।
इन्द्रिय अरु तन्मात्रा, इनसे ब्रह्म परेव॥ ३॥
सचराचरमें व्याप्तहो, सब जग करत प्रकाश।
एक अनादि अमेय विभु, सत् चित् आनँदराश॥ ४॥
जिमि बहुघटमें एक रवि, करत प्रकाश महान।
तिमि परमातम एकहै, सबघट रहत समान॥ ५॥
आदि अन्त अरु मध्यमें, तिहि देखत मतिधीर।
बहुविधि मट्टीपात्र जिमि, एकभाँति गोक्षीर॥ ६॥

श्लोक—एकंचमृत्पात्रमनेकरूपमेकंच क्षीरं बहुवर्णधेनुः॥
सुवर्णमेकं बहुभूषणानि चैकःपरात्माहि शरीरभिन्नः॥ १॥

छन्द-अहै शरीर अनित्य आत्मा नित्य कहावै।
ताहीको यह अंश द्वैतके भर्म भुलावै॥
जैसे कोई श्वान कांचके मंदिर जाई।
आपन छाया निरख वृथा भोंकत भयपाई॥
अथवा जैसे सिंह कूप निजरूप निहारी।
कूदपरचो तिहिमाहिं तथा विधि द्वैत विचारी॥
जिमि शचान कोउ कांचभवनमें जाय उडाई।
छाया लखि निजचोंचमार आपहु दुख पाई॥
तैसे निज अज्ञान भये जग द्वैत लखावै।
जैसे दर्पणटुटे बहुत निजमुख लखिपावै॥
अपनेही अज्ञान मान ठानतहै वैरा।
तेरोइ दुख तुहिं भयो और कोइ अहै न गैरा॥
ताते नित्य अखण्ड तिहारो रूप कहायो।
जीवग्रंथिको छांडि रूप अपनो तब पायो॥
काम क्रोध मद मोह राग अभिमान महाना।
मैं तैं हिंसा शोक जीवकर लक्ष बखाना॥
जबतक इनके वशीभूत तू रहि है भाई।
तबतक स्वप्नेहु माहिं रूप निज कबहुँक पाई।
कर्मबंध है जीव कर्म विन आतम कहाई।
बस इतनोही भेद ज्ञानियनने लखपाई॥
कर्म उपासन ज्ञान वेदमें तीन बखाने।
विनउपजे सतज्ञान मुक्तिपद कबहुँ न जाने॥
ज्ञानरूप रवि भक्तिनेत्र कृत दर्पण लीजे।
तब दीखत निजरूप हियेमें निश्चय कीजे॥

ज्ञानभक्तिविन जन्ममरण छूटत कहुँ नाहीं ।
चलेजाहु किहि लोक सदा नहिं रहत तहांहीं ॥
ऋषिके सुन यह बैन शोक नृप दियो विहाई ।
जप तप संयम कियो आय वनमुक्ती पाई ॥

दोहा-हेशौनक सत्संगकी, महिमा अमित अपार ।
श्येनजीतनृपसंगकर, मिलो ब्रह्म निर्धार ॥ १ ॥
सत्यबढावन मोक्षप्रद, कुमतिनिवारणहार ।
सत्संगतिको जान अस, करहु तरहु संसार ॥ २ ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर श्येनजितप्रसंगवर्णनो नामाष्टत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३८ ॥

दोहा-विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमरि राम सुखदान ।
कछु हरिवंशपुराण कछु, अन्यत् कहौं बखान ॥१॥

सुनि शौनक बोले मृदु बानी । पुनि सँगमहिमा कहौ बखानी ॥
कहत सूत सुनि बैन सुपावन । संगतिसम नहिं अन्य सुहावन ॥
जो करिहैं सत्संग सुजाना । तिनके हिय उपजै दृढ ज्ञाना ॥
जप तप व्रत अरु योग अनेका । संगतिविनु लघु करहु विवेका ॥
इकक्षणकर सत्संगति कीने । सम नहिं लाखगुणा तप लीने ॥
इहि पर इक वर्णहुँ इतिहासा । सावधान सुनु सुमति हुलासा ॥
विश्वामित्र भवन इकवारा । मुनि वसिष्ठ मिलने पगु धारा ॥
कछु दिन रहे चलन जब लागे । गाधिसुवन शोचत मुदपागे ॥
कहा भेंट ऋषिका हम देहीं । जिहिते यह अतिशय सुख लेहीं ॥
लक्षवर्ष जो तप मैं ठाना । ताको अर्ध देउँ परिमाना ॥

दोहा-अस विचारविधिसुतहिमुनि, तपनिजआधा दीन ।
लेगे विधिसुत संकलप, विस्मय हर्ष न कीन ॥१॥

इकदिन विश्वामित्र सिधाये। ऋषि वशिष्ठके आश्रम आये॥
चलनलगे घर तब मुनिराई। उभय घरी सत्संग कराई॥
गाधिसुवनको सो फल दीन्हो। विश्वामित्रहिये रिस कीन्हो॥
मैं तो अर्धतपस्या दीनी। तुम दिय दोघटिसंगति कीनी॥
करिविवाद पुनि न्यायचुकावन। गये शम्भु ढिग दोउ जन पावन॥
शिव दोउ ब्रह्मा निकट पठाये। आये निज वृत्तान्त सुनाये॥
चतुरानन हरिपास पठाये। हरिढिग द्वौ वृत्तान्त सुनाये॥
मैं इन अर्धतपस्या दीनी। इन द्वो घटि सत्संगति दीनी॥

दोहा—चारघड़ी इन स्वामसे, कहुँ सत्संगति कीन।
ताहूमेंसे दण्डयुग, चलते मोकहँ दीन॥ १॥

दोमें काको फल अधिकाई। यहै न्याव प्रभु देहु चुकाई॥
सुनत वचन प्रभु कियो विचारा। है सत्संगप्रभाव अपारा॥
मोरे कहे न संशय जाई। करि उपाय सब देहुँ बुझाई॥
कह प्रभु कोउ शेष पहँ जाई। तिनको मोढिग लाउ लिवाई॥
दोऊ गये शेष पर धाई। सुनत शेष अस बैन सुनाई॥
गहहु धरणि तुममें जो कोई। तौ मैं न्याव चुकावहुँ सोई॥
कह्यो गाधिसुत तप जो कीन्हा। तिहिमें अर्ध वशिष्ठ दीन्हा॥
अर्धतपस्याकर फल पाई। भूमी स्थिर रहे सुहाई॥
सुन अस शेष शीश जब टारयो। सधी न भूमि हिये ऋषि हारयो॥
तब वशिष्ठ बोले अस बानी। चारिघरी हम संगति ठानी॥
उभयघरीकर फल देडारी। उभय घरी फल भूमिहि धारी॥

दोहा—सुनत वचन शिर खैंचलिय, भूमि रही थिर पाय।
लख सत्संग प्रभाव बड़, कौशिक रहे लजाय॥ १॥

सत्संगतिमें ऋषि मन लायो। जब ऐसो प्रभाव लखिपायो॥
यह सत्संग महातम भाई। और सुनो इक कथा सुहाई॥

इक द्विज रह अतिभ्रष्टअचारा । तस्करकर्म करै अविचारा ॥
इक दिन गयो नर्मदातीरा । तहँ हरिभक्त रहैं मतिधीरा ॥
चोरीकी इच्छा कर सोई । रह्यो तहाँ यह जान न कोई ॥
हरिकी कथा भई कछु काला । बैठरह्यो श्रोताकर हाला ॥
जब रजनी युगयाम सिरानी । तब विश्रामकरन मनमानी ॥
विप्र गऊको सोवत जानी । चोरी करनलाग सुखमानी ॥
लखि यमराज क्रोधकरि भारी । बोल दूत अस कहो हँकारी ॥
भक्तनकी चोरी सो करई । लावहु वेगि नरकदुख भरई ॥
कह चर वह सन्तन स्थाना । कैसे हम तहँ करैं पयाना ॥
कह्यो धर्म जिहि विधिते पावो । तौनी भाँति ताहि लेआवो ॥
तक्षकरूप दूत इक धारी । हरिजनधाम निकट पगुधारी ॥
मंदिरमार्ग बैठ सो जाई । निकसत द्विजहिलियेतिनखाई ॥
तलफतजानि सन्त जन धाई । तुलसी चरणोदक मुखनाई ॥
रामराम कहवायो धीरा । इतने प्राणन तजो शरीरा ॥
मुद्गरकरकिय दूत प्रहारा । चले तुरत ले यमदरबारा ॥
कह यम तेलकराहन माहीं । डारो याहि दया करु नाहीं ॥
डारतही शीतल ह्वै गयऊ । सो द्विज तहँउ अनंदित भयऊ ॥
तत्तेखम्भ माहिं चिपटायो । शीतलभयो सोउ मुदछायो ॥
जो जो कष्टदियो यम वाही । सब ह्वैगये सुमनसम ताही ॥
तब तिहि डारो नरक मँझारी । व्यथा दूरभइ भो सुखकारी ॥
धर्मराज लखि अचरज माने । नारदमुनि तहँ आय तुलाने ॥
धर्मराज तब कह्यो बुझाई । भगवन संशय देहु मिटाई ॥

दोहा–यह पापी तस्कर महा, याहि दण्ड जो देत ।
याको दुख लागत न कछु, सो कहिये क्या हेत ॥ १ ॥

सुन नारद कहि कहांते, आयो है यह जीव ।
सो हमसे सब वर्णिये, लसत पुण्यकी सींव ॥ २ ॥

धर्मराज सब कह्यो बुझाई । जिहिविधि सन्तनढिगसेआई ॥
सुनि यमवचन कह्यो ऋषिराई । बड़ अपराध कीन तुम भाई ॥
सन्तनमहिमा तुम नहिं जानी । निगमागम जिहिकीर्त्तिबखानी ॥
सन्तसमान जगत कोइ नाहीं । जिनके वश रह ईश सदाहीं ॥
दासी सुवन रह्यो मैं भाई । सब उच्छिष्ट भयो ऋषिराई ॥
संगप्रभाव महातम जोई । हरिसे मैं पूँछो रह सोई ॥
तिनमुहिं जलचर पास पठावा । देखत मरयो अन्यवपु पावा ॥
पुनि शुकढिग पठयो भगवाना । सोउनिजतनु तजादियोविज्ञाना ॥
तब नृपसुतते बूझत भयऊ । दिव्य यान तहँ आवत भयऊ ॥
तिहिचढि नृप सुतबात सुनाई । जलचर वपु तुम दीन दिखाई ॥

दोहा—तुमदर्शनसे शुकभयो, तहँ तुव दर्शन पाय ।
शुकतनु तज नृपसुत भयो, पुनितुम मिले सुभाय ॥ १ ॥
अब विमान चढ़िजात नभ, अस तव दरश प्रभाव ।
सम्भाषण अस्पर्श अरु, सेवा सक को गाव ॥ २ ॥

सुनि मेरे मन आनँद छायो । सन्तप्रभावअमित लखि पायो ॥
रह्यो विप्र हरिजनके पासा । तुम अहिबनकतकीनविनासा ॥
जब सन्तन रट राम लगाई । काहि न छाँडिदियो याहिभाई ॥
अब मम वचनहियेनिजलावहु । याको हरिके धाम पठावहु ॥
शौनक अस संगति प्रभुताई । पापिहु हरिके धाम सिधाई ॥
यह वायुपुराणमें भाषा । तुमसन कहि पूरी अभिलाषा ॥
कमलपत्रजल चंचल जैसे । यह जीवन चंचलहै तैसे ॥
ताते क्षणहू संगति करई । विनहीश्रम भवसागर तरई ॥
चहुँयुगचहुँश्रुतिबुध असकहहीं । विनुसत्संगतिगतिनहिंलहहीं ॥

छन्द-परमपद नहिं लहै संगतिविना इमि श्रुति गावहीं।
अस जानि जे नरचतुर ते हरिनामध्यान लगावहीं॥
जगमाहिं नरतनु पाय जे जनसन्तनिकट न जावहीं।
ते पशुहि जानो शृंगबिन नहिं कबहुँ हरिपद पावहीं॥

दोहा-सत्संगति महिमा अमित, को कवि पावैं पार।
मिश्र कही कछु यथामति, सद्ग्रंथन अनुसार॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ग्रंथउजागर सत्संगमाहात्म्यवर्णनोनामैकोनचत्वारिंशोऽध्यायः॥ ३९॥

दोहा-विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमरि राम सुखदान।
कहौं भावगवत नवममत, कछु ब्रह्माण्ड बखान॥१॥

बहुरि सूत अस वचन बखानी। सुनहु कथा सादर रति मानी॥
धर्मराज इकबार बुलाई। दूतनसों अस बात सुनाई॥
सुनहु कि मर्त्यलोकके माहीं। तुमसमान दूसर कोइ नाहीं॥
पर यह रखहु सदा मन ध्याना। साधुनढिग मत करहु पयाना॥
सदा साधुजन हरिके प्यारे। तिनकरबाना नित रह धारे॥
विष्णुभक्त पूजित सबठाहीं। भूमिस्वर्ग पातालहु माहीं॥
तुमहुँ लखो कहुँ हरिके दासा। करहु प्रणाम प्रेमपरकासा॥
मम आपनि जो चहो भलाई। तौ तिनके ढिग जाव न भांई॥
साधुनको दुख देत जु कोई। तन धन धाम नाश तिहि होई॥
भक्तन से जिन ठानी रारी। सो अन्तहु अति भये दुखारी॥
हिरनकशिपुनिजसुतहिदुखायो। दुर्योधन द्रौपदिहि सतायो॥
कंस उग्रसेनहि दुख दीनो। रावणनिजअनुजहिअघकीनो॥
पुनि सुकंठको बालि सतायो। अम्बरीष दुर्वास दुखायो॥

दोहा—नृगनृप गिरगिटतनु भये, सो जानत संसार।
श्वपचभक्तने मान अति, यथ्यों सहित विचार ॥ १ ॥

धृष्टबुद्धि गा जिहि विधि मारा। चन्द्रहास जिनमरन विचारा ॥
सुरथ सुधन्वाते रिस ठानी। शंखलिखितकी भइ हितहानी ॥
सुनत दूत बोले मृदुवानी। अम्बरीषगुण कहो बखानी ॥
कह रविसुवन सुनो मनलाई। अम्बरीषकी कथा सुहाई ॥
अम्बरीष भूपति बड़भागी। होतभयो हरिपद अनुरागी ॥
श्रीहरि में हरभक्तन माहीं। कियो प्रेम तजि कपट सदाहीं ॥
महामोह माया संसारा। ताको मनमें तुच्छ विचारा ॥
हरिमंदिर हाथनसों धोये। हरिव्रतकरत कबहुँ नहिं सोये ॥
हरिपदकमलतुलसिकहँ राजा। कियो घ्राण नितसहित समाजा ॥
यहिविधि अम्बरीष महाराजा। हरिअहँ सब समर्पि निजकाजा ॥
इकदिन व्रत एकादशि कीन्हा। द्वादशिपारणमें मन दीन्हा ॥
दुर्वासा आये तिहिकाला। देखि प्रसन्नभये महिपाला ॥
कह्यो कि प्रभु भोजनअब करहू। शिष्यनसहित मोद उर भरहू ॥
कह्यो मुनी मैं आवहुँ न्हाई। तब भोजन करिहों मुदपाई ॥
अस कहि यमुनहिं गये मुनीशा। इत विचार किय मनहिंमहीशा ॥
रही दण्डभरि द्वादशि बाकी। याहीमें पारण विधि याकी ॥
द्विजहिं न्योत पारण करिलीन्हें। होइहि पाप कर्म यह कीन्हें ॥
जु न द्वादशि पारण करिलैहैं। तौ व्रतको फल नेकु न पैहैं ॥
अस विचार निज गुरुहि बुलाई। धर्मतत्त्वकी बात सुनाई ॥

दोहा—तिन सम्मतिकर अस कह्यो, चरणामृतकर पान।
भोजन और अभोजन, दोऊ निगम बखान ॥ १ ॥

तब राजा चरणामृत लीन्हों। बैठ्यो मुनि आगम मन दीन्हों ॥
उत दुर्वासा यमुना न्हाई। जानबूझ अतिबार लगाई ॥

लिय वृत्तान्त योगबल जानी। आय भूपसे कह्यो बखानी॥
देखो यह पापी महिपाला। श्रीमद याको बढ्यो विशाला॥
मुहिं भोजन करवावन कहिकै। भोजन कियो आप सुखचहिकै॥
ताको फल मैं देहुँ दिखाई। मुहिं खाये बिन लियो जु खाई॥
असकहि अपनी जटा उखारी। कोपभार नहिं सक्योसँभारी॥
ताते कृत्या कढी कराला। मानहु कालानलकी ज्वाला॥

दोहा-धरणि कँपावत चरणसों, करके शोर कठोर।
ग्रसनहेतु धावत भई, अम्बरीसकी ओर॥

कृत्या आवतलखि तिहिकाला। एकहुपद नहिं टरचो नृपाला॥
अम्बरीष रक्षणके हेतू। चक्रसुदर्शन तेज निकेतू॥
धायो कोटिसूर्य परकासा। कृत्यहि जारो बिनहिं प्रयासा॥
पुनि दुर्वासहि दाहन धायो। मनहु दवानल अहिपर आयो॥
अपनो बललखिविफलऋषीशा। जिय ले भाग्यो सुनहु मुनीशा॥

दोहा-जहँ जहँ दुर्वासा गये, मान चक्रकी त्रास।
तहँ तहँ पाछे लखत भे, ताको दुसह प्रकास॥

जब कहुँ नहीं बचे दुर्वासा। गमनकियो तब ब्रह्मनिवासा॥
त्राहि २ बोलत विधि पाहीं। गिरचो दीन ह्वै चरणनमाहीं॥
दुर्वासहि लखिकै करतारा। टरहु टरहु यह वचन उचारा॥
दुर्वासा गमन्यो कैलासा। गिरचो जाय शंकरके पासा॥
कह्यो मोहिं रक्षहु त्रिपुरारी। सुनि शंकर अस बात उचारी॥
भागहु भागहु द्रुत दुर्वासा। यहां तुम्हारी मिटहि न त्रासा॥
जिन हरिते हम अरु विधिकेते। उपजहिं नशहिं भ्रमहिं बहुतेते॥
ताके भक्तद्रोह जो करई। सो निश्चय कालानल जरई॥
तदपि एक मैं कहौं उपाई। जाते सकलव्याधि मिटजाई॥

जाहु शरण हरिके दुखधारे। वे शरणागत पालन वारे॥
तव निराश है मुनि दुर्वासा। गमनकियो श्रीनाथ निवासा॥
जरत चक्रके तेजहि भारी। त्राहि त्राहि तहँ गिरचो पुकारी॥

दोहा–हे अनन्त अच्युतहरी, हे प्रभु कृपाअगाध।
शरणागत रक्षण करहु, मैं कीन्हों अपराध॥

नहिं जान्यो रावरो प्रभाऊ। रह्यो मोर अतिकोप स्वभाऊ॥
ताते अम्बरीष तव दासा। देनचह्यो मैं शठ तिहि त्रासा॥
सो अपराध मिटहि मम जैसे। मोपर करहु अनुग्रह तैसे॥
अब हिय दया न लागति तोहीं। चक्रसुदर्शन लावत मोहीं॥
नरकहु परे लेत तव नामा। पावत पुरुष अवशि तवधामा॥
मैंतो गह्यो चरण तुव आई। काहे अब नहिं लेहु बचाई॥
आरत वचन सुनत सुरराई। बोले मुनिसों हरि मुसकाई॥
हमतौ भक्तनके आधीना। यामें होत न मम कछु कीना॥

दोहा–मोर भक्त मेरो हियो, हरिलीन्हों मुनिराय।
ताते तिनअपराधमें, कछू न मोर बसाय॥

हम भक्तनके प्राणपियारे। अतिप्रिय भक्तहु अहैं हमारे॥
भक्तन बिन हम चहैं न प्राना। लक्ष्मीको नहिं चहैं निदाना॥
हमी अहैं सरवस मुनि जिनके। सहि अपराधसकैं किमि तिनके॥
जे मम हित तजि सुतगृहनारी। लई ताकि इक शरण हमारी॥
उभय लोककी आशा त्यागी। मेरे चरण भये अनुरागी॥
तिनको हम कैसे तजि देही। वे तो हमरे परम सनेही॥
मैं सन्तनहिय बसौं सदाहीं। सन्त बसैं मेरे हिय माहीं॥
मोहिं छोड ते और न मानैं। तिन्हैं छोड हम और न जानैं॥
यह हम देहिं उपाय बताई। जातइ जहां त्रास मिटजाई॥

यद्यपि तव विद्याव्रत भारी। अहै विप्रको अति हितकारी ॥
तद्यपि जो कोपी द्विज होवै। तिनको तिहि मंगल हठि खोवै ॥
ताते अम्बरीषके पासा। गमनकरहु आशुहि दुर्वासा ॥
क्षमाकरावहु निज अपराधा। तबहीं विप्र मिटहि तवबाधा ॥

दोहा–यहिविधि दुर्वासा लह्यो, शासन रमानिवास।
चक्रतेज तापित चल्यो, अम्बरीषके पास ॥

अम्बरीष अब मोहिं बचावो। दीनहि निरखि दया उर लावो ॥
देखिदशा दुर्वासा केरी। नृपके दाया भई घनेरी ॥
पकरिहाथ लीन्हों मुनिकेरो। कह्यो कियो अपराध न मेरो ॥
अम्बरीष तब दोउ कर जोरी। चक्रहि अस्तुति कियो निहोरी ॥

दोहा–ब्रह्मशिरादिक अस्त्र सब, नाशहु दासन काज।
विप्रहि देहु बचाय अब, राखहु मेरी लाज ॥

तबहिं सुदर्शन परमप्रकासा। दियो बचाय मुनिहिंदुर्वासा ॥
नृप दुर्वासहि पदशिर नायो। बहुप्रकार भोजन करवायो ॥
करिभोजन सन्तोषहि लयऊ। अतिप्रसन्न नृपसों मुनि कहऊ ॥
भोजन करहु तुमहुँ अब राजा। मोर सुधार दियो सब काजा ॥
अम्बरीष तव दर्शनपाई। मैं पावन ह्वैगयो बनाई ॥
असकहि राजासों दुर्वासा। ब्रह्मलोक गो उडत अकासा ॥
चक्रत्रास भागत दुर्वासे। गयो वर्ष इक बिना हुलासे ॥
तबलौं भूप रह्यो तहँ ठाढो। सलिल पानकरिकै व्रतगाढो ॥
जब दुर्वासा गमनहिं कीनो। तब राजा भोजन मन दीनो ॥
ऐसे अम्बरीष महराजा। भये श्रेष्ठ हरिदास समाजा ॥
असप्रभु दीनबंधु भगवाना। रख्यो भक्तको प्रण जगजाना ॥
अपरदेव अस को जगमाहीं। जाको भक्त प्राणप्रिय आहीं ॥

रामभक्ति विन नहिं उद्धारा । सत्यकहौं श्रुतिमाहिं विचारा ॥
जैसे पुरुषहीन कोउ नारी । किहिते निजदुख कहै उचारी ॥
नेकहु पग मर्यादा टारै । लोक और परलोक बिगारै ॥
सौभागिनी खोट जो करई । पतिकी ओट न संशय धरई ॥
गोपी गोप पाण्डुसुत जोई । इनके कृत्य न लेखा कोई ॥
कृष्णकृपा सबथल जयपाई । ऋषभ यज्ञ निजदेह जराई ॥
अर्जुनके प्रति श्रीभगवाना । गीतामें इमि भाष्यो ज्ञाना ॥
भक्तियोग कहुँ छाजत नाहीं । सबहीदिन सो बाढत जाहीं ॥

दोहा–मोरभक्त मुहिं पावहीं, यामें संशय नाहिं ।
असविचार मुहिं जपहिं जन, सुमिरैं नित मनमाहिं ॥१॥
दैवी मायागुणमयी, पायो जात न पार ।
मोरि शरण जो आवहीं, ताहिं न पुनि संसार ॥२॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ग्रंथउजागर अम्ब-
रीषकथावर्णनो नाम चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४० ॥

दोहा–विधिहरिहर गणपति गिरा, सुमिरि राम सुखदान ।
वरणों जैमिनि मत कछुक, चन्द्रहास गुणखान ॥

अब पुनि दूसरिकथा सुनाऊं । चन्द्रहास गुण तुमहिं बताऊं ॥
धर्मी केरलपति इक रहऊ । ताके चन्द्रहास सुत भयऊ ॥
ताके षट् अँगुरी कर माहीं । यही दोष दैवज्ञ बताहीं ॥
बीतगयो इहि विधि कछु काला । चढ़ि आयो तहँ कोउ भुवाला ॥
राजा जूझि गयो करिमारी । सतीभई तिहि नारि पियारी ॥
शशिहासैं धाई ले भागी । आई कुंतलपुर भयपागी ॥
दुष्टबुद्धि मंत्रीगृह नेरे । रही धाय करि यत्न घनेरे ॥

नामछिपाय रही सो धाई। बालकको पालै सुखपाई॥
पंच वर्षको भो शशिहासू। खेलनलाग्यो सहित हुलासू॥
पुर बालकन संग नित खेलै। जीते सबसों रहै अकेलै॥

दोहा-एक समय कहुँ विप्रघर, होतो रह्यो पुरान।
चन्द्रहास कहुँ जायकै, सुन्यो आपने कान॥

रामनाम मुदमंगल मूला। रामनाम हारक भवशूला॥
रामनाम सब संपति दाता। रामनाम है मुक्ति विधाता॥
रामनाम सम कछु नहिंआना। रामनाम अति शास्त्र पुराना॥
रामनाम जीवन हितकारी। रामनाम नाशक भयभारी॥
रामनाम सज्जन सुर रूपा। रामनाम कलिमृतक पियूषा॥
रामनाम जप योग विरागा। रामनाम साधन शिरभागा॥
रामनाम नर नरक नशावन। रामनाम पतितनकर पावन॥
रामनाम सब सुकृत समाजू। रामनाम कारण कृतकाजू॥
रामनाम विधि शिव उरवासी। रामनाम ब्रह्मानँद रासी॥
रामनाम त्रिभुवनकरभर्त्ता। रामनाम कारण अरु कर्त्ता॥
रामनाम हठि दीन सनेही। रामनाम दाहक दुख देही॥
रामनाम ते अपर न कोई। रामनाम जानै जन सोई॥

दोहा-ऐसो कथित पुराण में, चन्द्रहास सुनि लीन।
रामनाम तबते सदा, रटन लग्यो ह्वै लीन॥

तबते रामनाम रट लागी। रामनाम सुमिरण अनुरागी॥
खेलत चागत बैठत माहीं। रामनाम मुख निकसत जाहीं॥
बीत्यो कछुककाल यहि भाँती। जपतराम रघुपति दिनराती॥
एकसमय आये कोउ साधू। बैठे सरतट बोधअगाधू॥
संपुटते निकास तिहि ठाना। पूजनलागे शालिग्रामा॥

खेलत खेलत तहँ तिहि काला । चंद्रहास गो बुद्धि विशाला ॥
साधुहि पूछनलग्यो विनीता । देहुवताय जो पूजहु प्रीता ॥
कह्यो साधु रामजी हमारे । जे कोटिन अधमन उद्धारे ॥
येई रामजानि तहँ बालक । ह्वैहैं मोर अमित दुखघालक ॥
साधु नजरि तहँ तुरत बचाई । लैभाग्यो मूरति अतुराई ॥
रपट्यो ताहि बहुत नहिं पायो । तासु प्रीति गुणि नहिं पछितायो ॥
चन्द्रहास राख्यो तिहि काहीं । शालग्राम शिला मुखमाहीं ॥

दोहा-नितनहाइ हनवाइ तिहि, खावे भोगलगाय ।
खेलतमें सबसों जितै, बंदी ताहि बनाय ॥

यहिविधि वीतिगये कछुमासा । मरीधायगे देवनिवासा ॥
तवते रह्यो ठिकाना नाहीं । भोजन शयन बासहू काहीं ॥
बालक सुभग देखि पुरवासी । होतभये सब तासु सुपासी ॥
कोइ लिवाय घरतिहिं नहवावै । कोउ उवटन बहु भाँति लगावै ॥
कोउ बहुव्यंजन विरचि जिवावै । कोउ निजऐन शैन करवावै ॥
रामकृपाते तेहि पुरलोगू । करवावैं यहिविधि सब भोगू ॥
धृष्टबुद्धिगृह तव इककाला । विप्रन न्योता भयो विशाला ॥
विप्रनसंग गयो शशिहासा । भोजन कीन्हों विप्र हुलासा ॥
विप्र चन्द्रहासहि जब देखे । बालकताहि अपूरव लेखे ॥
धृष्टबुद्धिकहँ कह्यो बुलाई । यहबालक को देहु बताई ॥
किहिसुत कौन देशते आयो । कहां रहत को याहि पठायो ॥
धृष्टबुद्धि कह मैं नहिं जानो । बालक सकल एककरि मानो ॥

दोहा-विप्र कह्यो बालक यही, ह्वैहै यहि पुरभूप ।
तेरी दुहिता ब्याहिकै, भोगी भोग अनूप ॥

धृष्टबुद्धि सुनि अमरष छायो। निजघरते विप्रन निकरायो ॥
कौनजाति को है किहि बालक। ताहि कहत है है पुर पालक ॥
यहि मम सुता व्याह किमि होई। जातिपांति जानै नहिं कोई ॥
तब सब दुष्टमित्र तिहि केरे। बैन धृष्टबुद्धिहि अस टेरे ॥
विप्रवचन नहिं मृषा विचारहु। आसु उपाय तासु निरधारहु ॥
धृष्टबुद्धि तब बोल कसाई। चन्द्रहासकहँ द्रुत पकराई ॥
रुपित कसाइन गिरा उचारी। वनलैजाइ मारिये डारी ॥
यहि बालकहि कालवश कीजै। मोको आइ चीन्ह कछु दीजै ॥
तुमको महिषी देब पचासा। पैहौ पयभषि परमहुलासा ॥
चन्द्रहास कहँ तुरत कसाई। गहि लैचले विपिन भयदाई ॥
चन्द्रहास तब मनहिं विचारा। मारत मोहिं बिना अपकारा ॥
अब रक्षक अवधेश कुमारा। रामनाम जिहि भुवन अधारा ॥

दोहा-सुमिरों श्रीरघुवंश मणि, चन्द्रहास मतिमान।
रामकृपावश श्वपचते, करनलगे अनुमान ॥

यहि बालककी सुंदरताई। हमसों देखि मारिनहिं जाई ॥
कोउकह धृष्टबुद्धि नहिं देखी। सांच असांच कोनविधि लेखी ॥
काटि अंगुली अब बिनु देरी। करहु प्रतीत धृष्टमति केरी ॥
असकहि चन्द्रहासकहँ डांटी। ताकी छठई अँगुली काटी ॥
धृष्टबुद्धिके निकट सिधाई। अंगुलिदियो दिखाइ कसाई ॥
भई सचिव के परमप्रतीती। दियो इनाम कसाइन प्रीती ॥
चन्द्रहास बालक वनमाहीं। रोवत बैठ अकेल तहाहीं ॥
पक्षी जाइ जाइ फल देहीं। तरुछाया शाखन करि लेहीं ॥
मधुमाखी छातन मधुस्रवहीं। विपिनजीव चाहहिं हितसबहीं ॥
यहिविधि बीत गये दिनचारी। रामकृपावश विपिन मँझारी ॥

रह्यो कुलिंद जासु असनामा । कुंतलनृप सेवक मतिधामा ॥
सोइ कुंतलनृपकेर दिवाना । धृष्टबुद्धि सोइ रह्यो अज्ञाना ॥

दोहा—कुंतलभूप कुलिंदकहँ, दिये रहो शतग्राम ।
ग्रामद्रिव्य प्रति वर्षमें, लेतरह्यो करिकाम ॥

सोइ कुलिंद आयो वनमांहीं । देखत चन्द्रहास शिशुकांहीं ॥
ताके रह्यो पुत्रनहिं कोई । चन्द्रहासको लखि मुदमोई ॥
निजरथपर चढाइ घरजाई । निज नारीसों गिरा सुनाई ॥
लेहु पुत्र दीन्हों भगवाना । यामें करहु न कछु अनुमाना ॥
नारिपाय शिशु चन्द्रहासको । मान अनुग्रह श्रीनिवासको ॥
चन्द्रहासको सेवन कीन्हों । द्विजनदान नाना विधि दीन्हों ॥
तब कुलिंद शशिहास पढावन । पठै दियो पंडित घरपावन ॥
लग्यो पढ़ावनतिहि उपरोहित । बोल्यो चंद्रहास गुणअसहित ॥
मैंने द्वै अक्षर पढ़ि लीन्हों । और शास्त्र में नहिं मनदीन्हों ॥
नहिं ऐहैं मुहिं शास्त्र पुराना । कीजत वृथा परिश्रम नाना ॥
पंडित करगहि तिहि शिशुकेरे । लैआयो कुलिंद नृपनेरे ॥
कह्यो भूपबालक मतिहीना । रामकहत में परमप्रवीना ॥

दोहा—हारच्यो कोटि पढायकै, द्वैअक्षरको त्याग ।
यह बालक कछु नहिं पढत, जानीपरत अभाग ॥

मैं जो कौनहुँ ग्रन्थ पढावत । रामराम यह लुखरट लावत ॥
रह्यो कुलिंद रामकर दासा । सुतहवाल सुनि लह्यो हुलासा ॥
कह्यो पुरोहितसों अस बानी । अबै न बालदोष कछु मानी ॥
जब व्रतबंध होय सुतकेरो । तब करिहैं गुणदोष निबेरो ॥
पंडित अपने भवन सिधारहु । याहि पढ़ावन अब न विचारहु ॥
पंडित विमनभयो गृह कांहीं । रहनलग्यो शशिहास तहाँहीं ॥

एकादश संवत जब बीते । कियकुलिंद व्रतबंध पिरीते ॥
धनुर्वेद तब किय अभ्यासू । रामकृपा आयो सब आसू ॥
एकसमय शशिहास प्रवीरा । कहे कुलिंद वचन गंभीरा ॥
पिता देहु हमको कछु सैना । करहुँ दिशाजय अस उरचैना ॥
कहकुलिंद बालक मतिहीना । हम कुंतल नरेश आधीना ॥
धृष्टबुद्धि मंत्री तिहि केरा । सुनै जो कतहुँ उजारै खेरा ॥

दोहा—चन्द्रहास तब अस कह्यो, पांचरथी मुहिं देहु ।
और देश बहु जीतिके, ल्याऊं धननिज गेहु ॥

पाँचहि रथिकलिन्द तिहि दीन्हों । गमनदिशा जीतन कहँकीन्हों ॥
जीत अनेक देश शशिहासा । ल्यायोधन समूह निजवासा ॥
बीतिगयो तहँ पुनि कछुकाला । गो कुलिंद सुरलोक विशाला ॥
चन्द्रहास भूपति तब भयऊ । शासनसकल राज्यमें दयऊ ॥
चन्द्रहासकी फिरी दुहाई । एकादशी रहे सब भाई ॥
विष्णुभक्ति जो करी न कोई । पैहैं घोर दंड हठि सोही ॥
जो नाहिं साधुचरण जल पीहै । सो मेरे करते नहिं जीहै ॥
जो न साधुका कर सतकारा । होई ताको भवन उजारा ॥
जो हुतधेनु साधु सनमानी । सो पैहै विशेष सुखखानी ॥
चन्द्रहास अस शासन फेरा । सबके उर किय भक्तिबसेरा ॥
राममयो सब पुरह्वै गयऊ । चन्द्रहास यश फैलत भयऊ ॥
उपजे राज्यमध्य धन जोई । विप्र साधुमें खरचै सोई ॥

दोहा—कुंतलनृपको डांडजो, देतरह्यो प्रतिसाल ।
सो नहिं दीन्हों भूपको, बीति गयो बहुकाल ॥

तब कुंतल नृप अमरष छाई । धृष्टबुद्धि निज सचिव बुलाई ॥
कह्यो कुलिंद भूपकर बेटा । डांड देतमें डारत छेटा ॥

साजिसैन्य तुम तहाँ सिधारहु । जो न देइ तौ पकरहु मारहु ॥
धृष्टबुद्धि सुनि भूपति शासन । गवन्यो चन्द्रहास को नाशन ॥
चंदनवती पुरी महँ आयो । चन्द्रहास सुनि आनँद पायो ॥
लै अगवानी गृहमें ल्यायो । विविध भाँति सत्कार पठायो ॥
धृष्टबुद्धि चीन्हों शशिहासै । यह तौ वही कह्यो जिहिनाशै ॥
कीन्हों हमसों कपट कसाई । अँगुरी काट मोहिं दिखराई ॥
कौन हेत यहि दियो बचाई । मैं मारौं करि अवशि उपाई ॥
करहु जो सन्मुख शस्त्र प्रहारा । तौ याके भट करहिं सँहारा ॥
ताते यतन सहित यहि मारौं । अब नाहिं और कछू निरधारौं ॥
धृष्टबुद्धि अस मनहिं विचारी । चन्द्रहास सों गिरा उचारी ॥

दोहा—जबते मरे कुलिंद नृप, तबते तुम शशिहास ।
दियो न भूपहि दण्ड कछु, लिय बिसाहि निजनास ॥

चन्द्रहास तब कह मुसकाई । ब्राह्मण वैष्णव लिय धनखाई ॥
देहुँ कहांते कहँ धन पाऊं । रोजहि साधुन हेत उठाऊं ॥
ऊपर मृदुल हिये कुटिलाई । धृष्टबुद्धि बोल्यो मुसकाई ॥
हौं यक देत उपाय बताई । जाते तोर जीव बचिजाई ॥
तोहि देखि लागति मुहिं दाया । विरचीनिजकरविधितवकाया ॥
चन्द्रहास बोल्यो कर जोरी । तुम्हरे हाथ जीवगति मोरी ॥
धृष्टबुद्धि तब कागज आनी । लिखी पत्रिकाछलकीसानी ॥
धृष्टबुद्धि सुत मदन नामको । करत रह्योसो नृपतिकामको ॥
ताको धृष्टबुद्धि यहि भाँती । लिख्योमदनकहँरचि २ पाती ॥
नहिं कुल जाति विचारहु बेटा । जब शशिहास केर हो भेंटा ॥
तबहीं विष यहिको हठि दीजै । औरै कछु विचार नहिं कीजै ॥
असपातीलिखि स्वांमि दिवाना॥ चन्द्रहास कर दिय अज्ञाना ॥

दोहा-धृष्टबुद्धि पुनि कहत भो, देहु मदनकर जाइ।
चन्द्रहास सबकाज तुव, देहैं मदन बनाइ ॥
चन्द्रहास अति आनँदपायो। ले पाती निजशीश चढ़ायो ॥
चढ़ितुरंग कुंतलपुर आसू। चलतभयो करि परम प्रयासू ॥
वाजि दबावत तीजे यामा। आयो कुंतलपुर आरामा ॥
नगरबाहिरे उपवन एका। रहे प्रफुल्लित वृक्ष अनेका ॥
धृष्टबुद्धि मंत्रीकर बागा। चन्द्रहासको अतिप्रिय लागा ॥
फूलिरहीं लतिका चहुँ वोरा। कूप अनूप रूप इक ठोरा ॥
छायासघन फुले तरुवृन्दा। बोलि रहे विहंग सानन्दा ॥
रोसहौद बहुकटीं कियारी। चौकचारुचहुँकित चितिहारी ॥
देखि बाग शशिहास कुमारा। श्रमितरह्यो अस कियो विचारा ॥
नेसुक करौं कूपजल पाना। फेरि मदनढिग करौं पयाना ॥
तुरत तुरँगते उतारि वहांहीं। कीन्हों पान कूप जलकांहीं ॥
पुनि करिमज्जन सहितविधाना। पूज्यो सानुराग भगवाना ॥
दोहा-शीतल मंद सुगंध तहँ, प्रवहत रह्यो समीर।
तरुछाया शीतल सघन, हरत पंथ श्रमपीर ॥
निद्रा चंद्रहासकहँ आई। सोयो पंथश्रमित अलसाई ॥
ताहीसमय तौनही बागा। धृष्टबुद्धिकी सुता सुभागा ॥
सहित सहेलिन तहँ चलिआई। देखनहेतु मंजु फुलवाई ॥
तोरि कुसुम विहरत चहुँ ओरा। गुंजत कुंजन कुंजन भौंरा ॥
बोलिरहे विहंग मदमाते। नवपल्लवित वृक्ष लहराते ॥
विचरत बीतगयो कछुकाला। तृषावतीभै सखियुत बाला ॥
चली हंसगति कूपहि ओरा। सोवतरहे जहँ भूपकिशोरा ॥
विषया कूपनिकट जबआई। देख्यो शशिहासहि सुखदाई ॥

कुँवर मनोहर बैस किशोरा । निजकरविधिविरच्यो सबठौरा ॥
अस जगतीतल सुंदरताई । नैन देख नहिं श्रवण सुनाई ॥
जबते चन्द्रहासमुख जोहा । तबते विषयाकर मनमोहा ॥
भूलिगई करिबो जलपाना । तासु निकट किय तुरत पयाना ॥

सो०—चन्द्रहासको रूप, नखते शिख निरखतभई ।
अंग अनंग अनूप, चकित एकक्षण ह्वै गई ॥

विषया बुद्धि विचारनलागी । कोहै कहँ आयो बड़भागी ॥
कछु नहिं परचो आसु अनुमाना । बारबार मन निरखि लुभाना ॥
गई पाग विषयाकी डीठी । तहँ खोंसी देखी इक चीठी ॥
ताहि पाणिते लियो निकारी । बाँचनलागी खांस उघारी ॥
बाँचि जानि निजपितुकी पाती । दरकि उठी विषयाकी छाती ॥
हाय महापापी पितु मोरा । ऐसहु रूप घात किय घोरा ॥
होइ प्राणपति यही हमारा । अस करु कारुणीक करतारा ॥
तहँ कीन्हीं विषया निपुणाई । हगकज्जलकी मसी बनाई ॥
करि लेखनी नोक नख केरी । कन्या कीन्हीं चारु चितेरी ॥
जहँ अस रह्यो दियो विष याको । तहँ असकियो दियो विषयाको ॥
तैसहि पाती खांसि कुमारी । खोंसि दियो पुनि पागमँझारी ॥
गई भवन सुमिरत भगवाना । देहु यही पति कृपानिधाना ॥

दोहा—कछुककालमें जगतसो, चन्द्रहास मतिमान ।
गुणि बिलंब चढ़िके तुरँग, कीन्हा पुरहि पयान ॥

पहुँच्यो मदन समीप कुमारा । सचिवसुतहिकिय मुदितजुहारा ॥
मदनहु मोहि गयो वपु देखी । चन्द्रहासको अतिप्रिय लेखी ॥
मदन ताहि अस वचन सुनाये । को तुम तात कहांते आये ॥
चन्द्रहास तव नाम सुनायो । क्षत्री कुल निजसंभव गायो ॥

धृष्टबुद्धिकी पाती दीन्हीं । बाँचन लग्यो मदन तिहिचीन्हीं ॥
नहिं कुलजाति विचारेहु याको । पाती लखत दियो विषयाको ॥
मदनबाँचि अस पितुकी पाती । सबप्रकार भइ शीतल छाती ॥
लिय तुरंत ज्योतिषी बुलाई । लग्न धरी सबभाँति शुधाई ॥
तिहि दिन पंडित लग्न बतायो । व्याह साज सब मदन सजायो ॥
दियो व्याह विषया शशिहासै । माचि रह्यो सब नगर हुलासै ॥
याचक वृंद सुनत शुभ व्याहा । आये मदन द्वार सउमाहा ॥
दीन्हों धन द्विज वृंदन काहीं । जाकी जस आशा मनमाहीं ॥

दोहा-धृष्टबुद्धिको मदन तब, पाती दई पठाइ ।
दई व्याहि विषया तुरत, शासन तुमरो पाइ ॥

धृष्टबुद्धि पाती जब पाई । बाँचि कोप पावक तनु लाई ॥
कियो विचार मदन बौराना । लिख्यो आनसमुझो कछुआना ॥
लिखत राम रावण लिख गयऊ । मुहि विपरीत देव अब भयऊ ॥
अस कहि तुरत यान मँगवाई । धृष्टबुद्धि चढि चल्यो तुराई ॥
आयो कुंतलपुरके नेरे । याचकवृंद अशीशत हेरे ॥
धृष्टबुद्धि जय सचिव शिरोमनि । युग २ जीवहु पुत्रसहित धनि ॥
मदन कियो निजभगिनिविवाहा । दियो दान करि महा उछाहा ॥
धन्य धृष्टबुधि द्विज सुखदाई । चन्द्रहास अस लह्यो जमाई ॥
धृष्टबुद्धि तब अति अनखायो । मारि कसहि याचकनभगायो ॥
जरत बरत आयो घरमाहीं । मंगलचार लख्यो चहुँघाहीं ॥
मदन पितै आगू चलि लीन्हों । पुत्र विलोकि कोप अतिकीन्हों ॥
अरे मंदमति तैं का ठान्यो । निज वैरी जामाता जान्यो ॥

दोहा-पाती मेरी कौनविधि, तैं बाँची मतिमंद ।
वैरीको भगिनी दई, कियो कौन तैं छंद ॥

पिता वचन सुनि मदन डराना। कहि न सक्यो कछु वदनसुखाना॥
पुनिपाती पितुके कर दीन्हों। तात लिख्यो जसतसहमकीन्हों॥
नहिं मानहु कछु दोष हमारा। बाँचि पत्रिका करहु विचारा॥
पाती बाँच धुनन शिर लागा। दीन्हीं दगा दैव दुर्भागा॥
पुत्र सहित घर भीतर आयो। तव शशिहास आय शिरनायो॥
देखि चन्द्रहासहि उर दहेऊ। ऊपर कोमल बैनहि कहेऊ॥
भली भई जो भयो विवाहा। तुमतौ चन्द्रहास नरनाहा॥
तब शशिहास गिरा असगाई। यह सिगरी रावरी बड़ाई॥
धृष्टबुद्धि तब कियो विचारा। याको करो अवशि संहारा॥
विषवासुता होइ तौ होई। बची न यह उपाय करि कोई॥
अस मन ठीक दियो अघखानी। चन्द्रहाससों बोल्यो बानी॥
हमरे कुलमें है अस रीती। चन्द्रहास तुम करहु प्रतीती॥

दोहा—ब्याह अन्तमें वर सविधि, देवी पूजन जात।
तातें आजु निशीथ में, देवी पूजहु तात॥

चन्द्रहास शासन शिर धरिके। बोल्यो वचन महामुद भरिके॥
अर्धराति में आजुहि जाई। पुजिहौं सविधि चंडिकामाई॥
धृष्टबुद्धि तब अतिसुखपाई। बैठ्यो तुरत इकांतहि जाई॥
तहां कसाइनको बुलवायो। महाअमर्षित वचन सुनायो॥
अरे कसाई सुनहु अभागी। मोरि भीति तुमको नहिं लागी॥
बालकवधन दियो मैं शासन। तुम अँगुरी दिखाइ किय नाशन॥
तातें युतपरिवार तुम्हारा। मैं झुकवादेऊंगो भारा॥
पै हमार इक वचन उपाई। जीवचहहु तौ करहु तुराई॥
कहे कसाई कांपत अंगा। अब न करब तव शासन भंगा॥
शासन भंग जु होइ तुम्हारा। तौ मारहु सब कुलपरिवारा॥

धृष्टबुद्धि तब कह अस बाता। आजु शिवामंदिर अधराता ॥
जो आवै ताको हठिमारौ। नीच ऊंच नहिं नेकु विचारौ ॥
दोहा-धृष्टबुद्धि शासन सुनत, सकल कसाई जाय।
देवीके मंदिर रहे, सायुध सुखित लुकाय ॥
रह्यो तहां कुंतल महराजा। धृष्टबुद्धि जो सचिवदराजा ॥
तिहिदिन कुंतलभूपति भवना। गालवमुनि आये दुखदवना ॥
राजा उठि कीन्हों सतकारा। गालवमुनि तब वचन उचारा॥
होतहि भोर भूप तव मरणा। सुमिरहुअबयदुकुलमणिचरणा॥
मुहिं ब्रह्मा तुवढिग पठवायो। तासुनिदेश कहन सतिआयो ॥
चन्द्रहास कहँ तुरत बुलाई। देहु राज्य छलछंदविहाई ॥
मानहु तिहि सुत प्राणपियारा। जो चाहौ निज स्वर्गअगारा ॥
कुंतलभूप सुनत सुखपायो। तुरत मदनकहँ सदन बुलायो ॥
कह्यो तुरत शशिहासहि जानो। अब न और कछु कारण ठानो ॥
मदन चल्यो शशिहास बुलावन। तहँ कौतुक कीन्हों जग पावन ॥
चन्द्रहास लै पूजन साजू। अर्धरात तजि सकल समाजू ॥
चल्यो चंडिका पूजन हेतू। जान्यो नहिं कछु हरिकर नेतू ॥
दोहा-मारगमें मिलिगे मदन, वचन कह्यो गहि पानि।
चन्द्रहासकहँ जातहो, सुनहु हमारी वानि ॥
महाराज तुमको बुलवायो। तोहि बुलावन मैं इत आयो ॥
चन्द्रहास तब कह करजोरी। एक बातकी विनती मोरी ॥
पिता आपके दियो रजाई। देवी पूजहु निशिमहँ जाई ॥
शासन उभय कौन विधि टारहुँ। मदन तुम्हीं संदेह निवारहु ॥
मदन कह्यो कीजै अस काजू। मुहिं दीजै सब पूजन साजू ॥
देवी पूजब हम तहँ जाई। तुम नरेशढिग जाहु तुराई ॥

असकहि देवीपूजन साजू। लियो मदन मान्यो कृतकाजू॥
चन्द्रहास भूपति गृह आयो। राजा देखि परम सुखपायो॥
उतै मदन देवी घर गयऊ। माथ द्वार जब नावत भयऊ॥
कियो कसाई खड्ग प्रहारा। कट्यो मदन शिरलगी न बारा॥
इहिविधि कियेमदनकरघाता। चले कसाई पुलकित गाता॥
कुंतल भूप इतै सुख मानी। रत्न जटित कनकासन आनी॥

दोहा—चन्द्रहासको ताहिपर, दिय बैठाइ तुरंत।
राजतिलक कीन्हों हुलसि, दै द्विजदान अनंत॥

राजा गयो गंगके तीरा। भोर होत तजि दियो शरीरा॥
इतै सकल पुरमहँ सुखदाई। चन्द्रहासकी फिरी दुहाई॥
धृष्टबुद्धि यह सुनहु हवाला। पहुँचो मंदिरमें तत्काला॥
लखिसुतनिधनशिलाशिरमारी। मरयो धृष्टबुद्धि अविचारी॥
जो काहूकर अनभल करई। सो इहि भाँति महादुख भरई॥
चंद्रहास जब यह सबजाना। पहुँच्यो देवीके अस्थाना॥
शिरधरिकर जब कियो प्रणामा। कह्यो भवानी सुनु सुखधामा॥
तुम्हरे शत्रु गये अब मारे। मांगहु वर जो रुचै दुलारे॥
चंद्रहास बोले शिरनाई। इन दोउन को देहु जिवाई॥
तस्करमें नहिं धर्म लिखाई। दुष्ट पुरुष गम तनक न खाई॥

दोहा—नाहिं कृपणके दान कछु, कहां मूढके ज्ञान।
वेश्यामें नहिं लाज कहुँ, कामी शांति न मान॥ १॥
नहिं व्यसनीके धन रहत, खलतियके नहिं गेह।
हिंसकके नहिं तनु दया, कपटीके कहँ नेह॥ २॥

ऐसेही हरिजनके माहीं। जगमें शत्रु रहत कोउ नाहीं॥
दुर्जन नहीं दुष्टता त्यागैं। सज्जन नेह किये नहिं भागैं॥

कज्जल नहिं त्यागै श्यामाई। मोतीते श्वेताइ न जाई ॥
लखि अस सरल भक्तकी वानी। दोउ जिवाये पुरुप भवानी ॥
तब द्वौ चन्द्रहासके चरणा। परे प्रेम कछु जाइ न वरणा ॥
राज्य कीन बहुकाल नरेशा। मेट दिये सब प्रजाकलेशा ॥
अन्त समय हरिलोक सिधाये। योगिनको दुर्लभ सुखपाये ॥
जो यह कथा सुनैं मनलाई। मन इच्छित निश्चय फलपाई ॥
जे हरिजनसे द्रोह कराहीं। ते निश्चय बहुतै दुखपाहीं ॥

दोहा-तातेहरिजनसे करहु, प्रेम भक्ति मनलाय।
प्रेमनेमके कियेते, जन्म सफल ह्वै जाय ॥

इति श्रीविश्रामसागरसबमतआगर चन्द्रहासआख्यानवर्णनो नामैकचत्वारिंशोऽध्यायः॥ ४१ ॥

दोहा-विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिरि राम सुखदान।
उत्तरार्द्धकी कथाको, कहुँ इतिहास बखान ॥

कह रविसुत पुनि कथा सुहाई। नृप इक भयो पुण्यकृत राई ॥
इक्ष्वाकूनृपकेर कुमारा। नृग अस नाम विदित संसारा ॥
दानी भूपन कथा श्रवणमें। परचो होय जो नाम रटनमें ॥
जितने हैं अकाशमें तारा। जितनी बूँद वर्षकी धारा ॥
जितने हैं रजकण महिमाहीं। तितनी गो दिय विप्रनकाहीं ॥
तरुणा शीलवती पयवारी। वत्सनयुत कपिला मनहारी ॥
रूपवती गुणवती सुहावनि। देखतहीं मनसुख उपजावनि ॥

दोहा-कनकशृंग खुर रजतके, तामक पीठ मढाय।
न्यायसहित लीन्हीं जिन्हैं, वसनमाल पहिराय ॥

ऐसी गऊ दई द्विजकाहीं। धर्मवान जे रहे सदाहीं ॥
शीलवान गुणवान कुटुम्बी। तपव्रत वेद सत्य अवलम्बी ॥

निपट उदार आपके दासा। तिनहि अलंकृतकरि सहुलासा॥
शय्यारथ आदिक बहु दाना। दियेद्विजन कारि अतिसन्माना॥
कूप तड़ाग बाग बनवायो। निर्मल जलपौसरा करायो॥
एक समय कोऊ द्विज केरी। गऊ हिरान मिली नहिं हेरी॥
वह हरिभक्त परमअधिकारी। सेवै प्रभुहि दूधघृतधारी॥

दोहा-नृपके गोधनमें मिली, गोप न चीन्हीं गाय।
धोखेमें सो लायकै, दीन्हीं दानकराय॥

जब सो गऊ द्विजै देडारी। जासु गाय सो आयनिहारी॥
कह्यो विप्रसों यह है मेरी। पूछिलेहु यह है नहिं तेरी॥
तब उन कह्यो भूप मुहिं दीन्हीं। विप्र रारि अस कह दोउ कीन्हीं॥
लरत लरत नृपके ढिग आये। निजनिज द्वौ वृत्तान्त सुनाये॥
सुनिकै नृपहि भयो भ्रम भारी। तासों तब अस गिरा उचारी॥
विप्र गऊ सति अहै तुम्हारी। मैं धोखेमें यह देडारी॥
लक्षगऊ हमसों लेलीजै। अब यासों झगरो मति कीजै॥
तब बोले सो द्विज नृप पाहीं। लैहौं सोइ लाख मैं नाहीं॥

दोहा-तब नृपने जाको दई, तासों कही बुझाय।
आपहि लीजै लाख गौ, दीजै याकी गाय॥

सोऊ द्विज नृपसों अस भाखो। लैहों सोइ न लैहौं लाखो॥
तब नृप कह्यो फेर करजोरी। सुनहु विप्र द्वौ विनती मोरी॥
नरकपरत मुहिं करहु उधारा। तुम्हरे करहै बनब हमारा॥
पै दोउ द्विज मान्यो नाहीं। छाँडिगये द्वौ निजगृहमाहीं॥
चलत कह्यो गिरगटसमशीशा। तू कंपावत यथा महीशा॥
गिरगटजन्म अवशि तुम हैहो। कृष्णचन्द्रकरते गति पैहो॥
अस कहिगये भवन मतिधीरा। कछु दिनमें नृप तज्यो शरीरा॥

लेगे यमके दूत थमाले। पूँछा तब यमराज उताले ॥
प्रथम पाप की पुण्य भोगिहो। भूपति अब तुम दुहूँ योगिहो ॥
अहै न तोर दानकर अन्ता। पै पापहु कछु भयो दुरन्ता ॥

दोहा—तब नृप यमसों अस कह्यो, प्रथम भोगिहौं पाप।
सुनि यम भाष्यो गिरहु महि, होहु सरट संताप ॥

तब नृपह्वै कृकलास महाना। गिरयो अंध कूपहि युतज्ञाना ॥
द्वारावती निकट सो कूपा। जल बिन रह्यो तृणादिक तूपा ॥
दिव्यवर्ष बहुतक चलिगयऊ। जब अवतार कृष्णकर भयऊ ॥
द्वारावती रहे प्रभु जाई। प्रद्युम्नादिक इक दिन भाई ॥
वनमें खेलन गये शिकारा। लागितृषा सोइ कूप निहारा ॥
लखो कूपमें जब कृकलासा। शैलसरिस ततु परम प्रकाशा ॥
ताहि निकारन किये उपाई। चाममूत रसरानि मँगाई ॥

दोहा—पै न सकेतिहि ऐंच कोउ, तब सब रहे लजाय।
पुनियदुपतिको खबरदे, लाये तहां लिवाय ॥

कृकलासहि लखि वामहि हाथा। बिनप्रयास ऐंच्यो यदुनाथा ॥
भगवतकर परसत तिहिकाला। छूट्यो सरट रूप विकराला ॥
तप्तकनकसम चारु शरीरा। जगमग भूषण अनुपमचीरा ॥
तब पूंछो तिहि रमानिकेतू। यदुकुल जनन जनावन हेतू ॥
हो तुम कौन कहो बडभागे। देवसारिस मेरे मन लागे ॥
तब नृप अपनी कथा सुनाई। जिहि विधिदानशाप द्विजपाई ॥
सुनि बोले यदुराज बहोरी। सुन नृप यह शिक्षा तैं मोरी ॥
अग्निहु अधिक तेज जो धारे। तिहि ब्रह्मंश न पचत निहारे ॥
तौ अभिमानी भूपन काहीं। किमि ब्रह्मंश पचे जगमाहीं ॥
नाहिं हालाहल हम विष मानै। जासु उपाय अनेक बखानै ॥
है ब्रह्मंश हलाहल सांचो। जाको यतन विरंचि न रांचो ॥

दोहा—जो विषखावै सो मरै, आगी सलिल बुझाय ।
खायेते ब्रह्मस्वके, जरामूलते जाय ॥

जो ब्रह्मस्व खाय बिन जानै । तीन पुस्त तिहि गुणहु नशानै ॥
जो ब्रह्मस्वखाय बरजोरी । नरकपरै दश दश दुहुँओरी ॥
भूप राजमद धनमदआँधर । आपन नाश गुणत नहिं ते नर ॥
जो ब्रह्मस्व लेनके नेतू । रच्यो मनहु ते नरकनिकेतू ॥
ब्रह्मवृत्ति जे हरैं नरेशा । जाते द्विजकुल भयो कलेशा ॥
ते विप्रनके रोदन कीने । जेते कण धरणीके भीने ॥
तितने वर्षन कुंभीपाके । पचहिं भूप ते अतिदुखछाके ॥
अपनि दत्त अरु दत्त पराई । विप्रवृत्ति जो हरते भाई ॥

दोहा—वर्ष सो साठ हजार भर, विष्ठाकी कृमि होय ।
पुनि निर्जल वनदेशमें, होत सर्प हठि सोय ॥

द्विजधन लेनकरै जो चाहा । तासु राज्य छूटै नरनाहा ॥
हरि ब्रह्मस्व धरै जो गेहू । होत पराजय नहिं संदेहू ॥
द्विज धन होय न कबहुँ हमारे । सुनहु सबै यदुवंश कुमारे ॥
करै जु विप्रकाजअपराधा । क्षत्रिय तासु करै नहिं बाधा ॥
जो मारै गारिहू देवै । क्षत्रिय तासु चरणही सेवै ॥
द्विजकहँ जस मैं करौं प्रणामा । तैसे तुमहु करहु सब यामा ॥
जो मम शासन नहिं चित लैहैं । ममकर अवशि दण्ड सो पैहैं ॥
बिनजानहु जो द्विजधन लेतो । नरक परहि परिवार समेतो ॥

दोहा—बिनजाने जो मिलत भइ, नृग नरेश द्विजगाय ।
लक्षन वर्षन सरटह्वै, रहे कूपमें आय ॥

द्विज औ मम जन एकसमाना । इनको नहिं निंदै मतिमाना ॥
भक्तहु नित मम प्राणपियारे । सदा रहत वे शरण हमारे ॥

करहुँ सदा तिनकी रखवारी । जिमिबालकहिं राख महतारी ॥
जिहि इन्द्रियसे जनहि सतावै । सोइन्द्रियतिहिअवशि नशावै ॥
वैर करहि हरिजनसे जोई । मूलसहित मेटहु मैं सोई ॥
पाछे नरक अनेकन जाई । जहँ जन्मै बहुते दुख पाई ॥
हरिजनकी सेवाकर जोई । सेवा करति मोरिहै सोई ॥
यद्यपि मैं स्वतंत्र सब भाँती । तदपि भक्तवश रहत सज्ञाती ॥
जहँ मम भक्त जाहिं सुखपाहीं । गंगादिक तीरथ तहँ जाहीं ॥
जिन्हैं भक्त मम प्यारे लागत । तिनके सँगमें मैं सुखपागत ॥
विषयी भक्त होय जो कोई । औरनको पावनकर सोई ॥
भक्तदोष जो मनमें लावहिं । सो नर नीच अन्त दुख पावहिं ॥
कीट पतंगनतक जो होई । मुक्तिक्षेत्र पावहि गति सोई ॥
हरिजनद्रोही सुगति न पावैं । आगम निगम सकल यह गावैं ॥

श्लोक-मुक्तिःकीटपतंगानां सर्वेषामिह देहिनाम् ।
मुक्तिक्षेत्रमिदं प्राप्य वैष्णवो दोषिणं विना ॥

दोहा-वैष्णवकी निन्दा करहिं, प्रगट होहिं नर कोल ।
देखहु सबमें विष्णुको, रँगहु प्रेममय चोल ॥

हरिजनकी जो करहिं बड़ाई । सो निश्चयभव निधि तरजाई ॥
जो हरिजनसँग करहिं प्रसादा । सो पावहिंअतिशय अहलादा ॥
हरिजन परमधर्ममय मानो । विमल करनतिनको पहिचानो ॥
हरिजनचरण तोय शिरधरहीं । वे कुटुम्ब सब पावनकरहीं ॥
सन्तकृपाकरिजिनहिं सिहाहीं । तिनके सकलपाप मिटजाहीं ॥
मो सम मो जन पूजत जोई । मुहिं सम ताको पूजन होई ॥
भक्तिहीन कुलवन्तहु होई । मोकहँ प्रिय नाहिं लागत सोई ॥
जगपावनहित महि विचराहीं । तिन्हैं सुखद जे जगत डराहीं ॥

दोहा–बूडत जेजन जगजलधि, तिनको सन्त जहाज।
जो चढि हैं सो पार हैं, सकल लोक शिरताज॥

सन्तन संग हमारइ जानो। सतसंगति मेरो वपु मानो॥
मैं अरु वे किहुविधि द्वै नाहीं। मही रहौं सन्तनके माहीं॥
किहुकर निजतनुधारि उद्धारा। किहु सत्संगति कर निस्तारा॥
सन्तनकी पदरेणु बखाना। भक्तिमुक्तिदायक जगजाना॥
भक्तनहित धरुँ मनुजशरीरा। भक्तनहित कछु गिनत न पीरा॥
सुनिनृग पुनि अस वचन बखाना। कहो भक्तलक्षण भगवाना॥
है प्रसन्न बोले यदुवीरा। सुनहु भक्तलक्षण मतिधीरा॥
परमदयालु द्रोह मन नाहीं। क्षमाशील अस सत्यसराहीं॥
निन्दाद्वंद्वरहित नित रहहीं। उपकारी समता हिय गहहीं॥
इन्द्रियदमन नम्रता भारी। सबके सुहृद न कामविकारी॥
लघुभोजन एकांत रहाहीं। सदाचाररत पग न डिगाहीं॥
हरिहरमें कछु भेद न जानैं। दोऊ देव एककरि मानैं॥
शीतल चित नितविरतिविचारा। धर्मपरायण रहित विकारा॥
दयाशील क्रोधादि विहीना। मोह मान अपमान न कीना॥
परसुखसुखी दुखी दुख देखी। मानहीनप्रद मान विशेखी॥
मुक्ति न चाहै चारप्रकारा। सबतजि मम सेवा मनधारा॥
लोभ राग मत मत्सर माया। दृढ़विश्वास चरण मम दाया॥
शरणागत पालक विज्ञानी। अनघ अजाति अशत्रुअमानी॥
शांतस्वरूप प्रेम दृढ नेमा। समचित सबकी चाहत क्षेमा॥
दृष्टिपूतकरि पग महिधारै। वस्त्रपूत जल पान विचारै॥
सत्यपूतकरि वचन बखाना। मनपवित्र करि काज कराना॥
एकै धर्मरु आश्रम एका। हरिपदप्रेम समान विवेका॥

मुहिं आधीन करै मुहिं मानैं। स्वप्नेहु स्वयं न कर्तब ठानैं ॥
इहिविधि लक्षण सन्त बताये। सुनि नृगकृष्णचरणशिरनाये ॥
बार बार अस्तुति अनुसारी। चढि विमान हरिपुर पगधारी॥
कृष्णचन्द्र निजपुरमें आये। शौनक बोले वचन सुहाये ॥
किहिविधि सन्तनके सम्वादा। होत रहत कछु सो अहलादा ॥
बोले सूत सुनहु मनलाई। साधुनकी चर्चा सुखदाई ॥

दोहा—जहँ बैठैं कछु साधु मिलि, चर्चा करहिं सुभाय।
हरि धारे अवतार दश, तिहिमें दो अधिकाय ॥

मीन वराह कमठ नरहरी। वामन परशुराम सुखकरी ॥
रघुनन्दन यदुनंदन जानो। बुद्धकल्किदशइहिविधिमानो॥
इनमें दो सबते अधिकाई। रामकृष्ण दोउ परमसुहाई ॥
को वड छोट कहत अपराधू। बोले रामओरके साधू ॥
राम हमार बडेहैं भाई। सो हम तुमको देहिं बताई ॥
चन्द्रवंशमें हरि जन्माये। सूर्यवंश श्रीराम उपाये ॥
वे जन्मे कारे पखवारे। भये शुक्लपख राम हमारे ॥
कृष्णभये नहिं बजी बधाई। रामभये सब जग सुखछाई ॥
राम हमार भूप हैं भाई। रैय्यत तुम्हरे कुँवर कन्हाई ॥
नाथे वृषभ कृष्ण इककाला। राम दुंदुभी अस्थी ताला ॥
त्रिपदेते जिहि बकी न मोही। माता बांधत भइ निर्मोही ॥
नहिं युवती मोही जब जानी। तबै बाँसुरीकी धुनि ठानी ॥
मोहत राम न करतब कीना। चर अरु अचर वशीकर लीना ॥

छन्द—जो तुम कहो गये वन कैसे सोउ बात सुनलीजे।
वरमांगे इक समय मातुसे राजसमय वन दीजे ॥
सो कीन्हों हित मान कैकयी दोष न यामें वाको।
मारयो कंस कृष्णने भाई कछुक देश हो जाको ॥

रामवध्यो रावण बडनरपति सकल लोकजितजोई।
वेदवती तिहि नाश करनको गई लंकमें सोई॥
श्रीकृष्ण निज मात पिताको बंधनसे छुडवायो।
रामनिवाजे देव मुनी नर नाग जगत यश छायो॥
खौर लगाये पावन कीनी हरि कुब्जासी तारी।
चरण परस रघुनाथ हमारे गौतमनारी तारी॥
जरासंधसे समरबीचमें भागगये यदुराई।
रावण सन्मुख कहूं रामने कबहुँ न पीठ दिखाई॥
माखन चोरी करी लालने ब्रजगोपिकार माई।
राम न दृष्टि करी अलखमहुँ नहिं मर्याद मिटाई॥
गोवर्द्धन करपर हरि धारो यहकारज सेवकाई।
यही काज रघुनाथ हमारे कपियनसे करवाई॥
कृष्णपानकर दावानलको नाथ्यो कालीनागा।
राम सेतुबंधन कर रणमें जीते नाग भवलागा॥
तंदुल लेकर मित्र सुदामहि कृष्णचन्द्र धन दीनो।
रामसुकण्ठ बिभीषण दोऊ दुर्दिनमें नृप कीनो॥
गोपिनने सरवस निजदीन्हेंतऊकान्हतिनत्यागी।
भये ऋणी रघुनाथ हमारे महावीरहित लागी॥
कृष्ण शरण उद्धव जब आये तउ भेजो वनमाहीं।
रामशरण जो भये राज प्रभु तिन्हैंदियोशकनाहीं॥
कृष्ण एकसौ वीस वर्ष तक रहे न कीनो राजू।
एकादश सहस्र रघुनंदन कियो राज सुरकाजू॥
जग मर्यादा थापन कारण सीय दीन प्रभु त्यागी।
आप गये सुरपुरले अवधहि सबहिंभयेबडभागी॥

कृष्णचले निजधाम तहां इकव्याधआयशरमारो ।
यासे बडे हमारे स्वामी सब विधि करो विचारो ॥
तब बोले श्रीकृष्ण उपासी बात कही तुम काची ।
हम वर्णत हैं सद्ग्रन्थनसे सो मानहु तुम सांची ॥
पूर्णकला अवतार कृष्णको पूरणब्रह्म बखाने ।
राजपुत्र कहि रामकुमरको ऋषि प्राचेत बखाने ॥
जन्मसमय श्रीकृष्णचन्द्रके गोकुल बजी बधाई ।
बालपनसे असुर मारके निज प्रभुता दरशाई ॥
युवती स्वयं गई सब मोही बालापनसे तिनपर ।
माखन घरहिं बनाय मनावें आवें प्रभु निज मंदिर ॥
तिनकीभक्तिविचार गयेप्रभुअरुतबमाखनखाई ।
चोरीकी कछु बात नहीं है नेक विचारो भाई ॥
कंसहि नहिंमारो नँदनंदन सब भूभार उतारो ।
भारत और भागवततत्त्वहि नेकहु करो विचारो ॥
केवल मातपिताकर कैसे किय अनेक उद्धारो ।
गोपी ऋचा देवकी जानो नहिं परनारि विहारो ॥
जरासंध तपकर वर मांगो भाज काहुविधि जाई ।
वरविचार रणछोड कृष्णने कछु जगरीत दिखाई ॥
गोवर्द्धन करधार कृष्णने सबजग लियो बचाई ।
शक्रमान हरलियो यमुनजल स्वच्छकियो यदुराई ॥
तंदुल गहे सुदामाके जब कर्मरीति दरशाई ।
यही ईश्वरतामर्यादा नेक डिगन नहिंपाई ॥
अर्जुनको भारतमें जैसो कियो दिव्यउपदेशा ।
गीताशास्त्रसमान जगतमें मेटत कौन कलेशा ॥

राजपाटसे ईश्वरको क्या काम पूर्ण है जोई ।
बालिकर्मके पलटेकारण लीन्हों बाण समोई ॥
ताहि प्रथम वैकुण्ठ पठाये पीछे आप सिधारे ।
पूर्णब्रह्महैं कृष्ण हमारे राजाराम तुम्हारे ॥
बोले अपर सभी पूरणहैं जो हरिके अवतारा ।
सबमें दृष्टि बराबर कहिये सबहि करत निस्तारा ॥
बोले अपर सुनहु हम कहहीं नामहि इष्ट हमारा ।
सो सब इष्टनपूरणकर्त्ता सुनिये कहूं विचारा ॥
बिन रकार ब्रह्मा बह्माहै रघुपति घुपति कहावै ।
माबिन महादेव हादेवा प्रणव अविन्दु रहावै ॥
कृष्ण कृष्ण बिन राके कहियत राधा आधा होई ।
आबिन सीता सीतमात्रहै सन्त विचारो सोई ॥
दुर्गा रमा शारदा भैरों गौरि गिरा हरि नामा ।
सबमें रमे राम दो अक्षर उनबिन नहिं कछुकामा ॥
सबही कार्य करैं याके बल देखलेहु मनमाहीं ।
इहिजाने जानोसबहीकछु इहि विनि जानो नाहीं ॥
नाम विवशहै रूप नामबिन रूपाहिये नहिं आवै ।
नामबिना पुरधाम आदि कर पतानहींकछुपावे ॥
अगुण सगुण दोउ रूपब्रह्मके नामहिंतेलखिपइये ।
व्यापक घट२ ब्रह्मरहत है तदपिसकलदुखलइये ॥
प्रीतिसहित जो जपै नामको सबदुख त्रासमिटावै ।
यहांरहे पावै बहुविधि सुख अन्त अमरपुर जावै ॥
निर्गुणते यहिभाँतिनामबड़सुनहुसगुणकी गाथा ।
मनुजरूपधरि असुरसँहारे पुनिकिय देव सनाथा ॥

नामजपतमनलाय तजतदुखपरके क्लेश मिटाहीं ।
कृष्णधरो गोवर्द्धननिजकर ब्रजजनक्लेशहटाहीं ॥
नामजपतअहिराजचतुर्दशभुवनशीशधरिलीन्हा ।
रामचापकरभंगपरशुधर मान चूर्णकरि दीन्हा ॥
नामजपहिंबिनुश्रमतारिजाहींपुनिऔरनको तारें ।
कृष्णपानदावानल कीनो गोप ग्वाल उद्धारें ॥
नामसुमिरिशिव पानकियोविष अमृतकेफलपाये ।
रामभीलनीको निस्तारो जब फलताकेखाये ॥
गीध तरचो अरु नामजपेते अगणितसुरपुरपाये ।
रामसुकण्ठ विभीषणनृप कियनामअनेकरजाये ॥
राम सेतुकरसैन्य पारकर रावणवधकरडारचो ।
नामसुमिरिहनुमान पारभयेनिशिचरवंशसँहारचो ॥
नाम जपतमनलाय बिनाश्रम मोहसैन्य संहारे ।
रामअवधलेगये नाम तिहुँलोक जपत उद्धारे ॥

(यथा हनुमत्संहितायां श्रीरामं प्रति हनुमद्वचनम्)

श्लोक-राम त्वत्तोऽधिकं नाम इति मे निश्चिता मतिः ॥
त्वयैका तारितेयोध्या नाम्ना च भुवनत्रयम् ॥ १ ॥

दोहा-अस हमार है इष्ट बड, शिरधरि सब लिय मान ।
बाद बढावैं अबुध जन, सुख पावत मतिमान ॥ १ ॥
कुइकहैं लीलाधाम प्रभु, एकै नानारूप ।
इहिप्रकार चर्चाकरहिं, भावहिं हरिहि अनूप ॥ २ ॥

बालवचनसम हरि सुख पावैं । यहि विधिसन्तनचाउबढावैं ॥
याहिविधि यमदूतन समुझाई ।पुनि निजकाज लगे सबजाई ॥
शौनक सुन अतिशयसुखपायो । पुनि २ सूतहि शीश नवायो ॥
जो यह कथा कहहिंअरुगावहिं ।भक्तिभावकरि अतिसुखपावहिं॥

दोहा—यह सन्तनके चरित शुभ, सुखउपजावनहार।
पढहिं सुनहिं करिप्रेम जो, पावहिं मोद अपार॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ग्रंथउजागर नृगप्रसंग सन्तलक्षणवर्णनो नाम द्विचत्वारिंशोऽध्यायः॥ ४२॥

दोहा—विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिरि राम सुखदान।
धर्मशास्त्रमत ग्रहणकर, कहुँ इतिहास बखान॥

सन्तनकी सुनि कथा सुहाई। पुनि शौनक बोले हरषाई॥
नाथ कहो अस कौन उपाई। जिहिकर जीव सदा सुखपाई॥
कौन देवके सुमिरणकीने। पितृउद्धार होत किमि पीने॥
कौन देवहै सबफलदानी। सूत सुनतकह सुनुमुनिज्ञानी॥
रामसमान देव कोउ नाहीं। जिहिसुमिरतकलिकलुषनशाहीं॥
इनके पूजन सुमिरण कीने। सकल देव मुनिजनकरलीने॥
मूलसिंचे तरु जाय सिंचाई। डार पात सबमें हरि आई॥
जो निष्काम भजन हरि करहीं। तासुविवशप्रभुनिजहियधरहीं॥
मोक्षकामना करि जो ध्यावे। सो तो अवशि मोक्ष पदपावे॥
सकलकामप्रदसेवहिं दासा। ताकी प्रभु पूरहिं सब आशा॥
नियमअनियमकेबहुविधिसेवहिं मनइच्छित प्रभु ताको देवहिं॥
और देवता नियम विचारे। सेवकको देवहिं दुखभारे॥
याते नारायण सम देवा। नहीं जगत यह जानो भेवा॥
सकल शास्त्रलखि यहनिरधारा। राम भजन है सब जगसारा॥

दोहा—हरीभक्तिके कियेते, होत पितर निस्तार।
वासमहीपति जिमि कियो, अपने चित निर्धार॥

सुन शौनक बोले मृदुबानी। कहो कासकी कथा सुहानी॥
भक्तिकरी सुनि पितर उधारे। सुनत सूत मृदुवचन उचारे॥

शेखरपुरअवीश नृप कासा । अन्तसमय पहुँच्यो यमपासा ॥
लखि यमदूतन कह्यो बखानी । डारो जाय नरक यह प्रानी ॥
दूतन जाय नरकमें डारो । पीवरक्त कृमि भरो अपारो ॥
परे जीव जिहिमाहिं बिहाला । पलनसुखीकियरुदनविशाला ॥
अधः कीट तनु धरधर खाहीं । मध्य अग्निकी ज्वाल डराहीं ॥
ऊपर यमगण करहिं प्रहारा । देख कास हिय भई दरारा ॥
ताहिं नरक निजपुरुषन हेरा । कासहि लखकियरुदनघनेरा ॥
तब कह कास वचन धरिधीरा । को तुम किमि रोवहु तजनीरा ॥
तिनकह हमहैं पितर तुम्हारे । तुमहो सन्तति तन्तु हमारे ॥
तब कह कास कौन अघ कीना । जाते वास नरककर दीना ॥
बोले पितर दिये बहु दाना । गज रथ तुरँग सुखासन याना ॥
देव विप्र पूजन सन्माना । यह परद्रव्यनसे किय दाना ॥
ताते पुण्य क्षीण है गयऊ । जीवन मार अहार कियेऊ ॥
यहै पाप अतिशय अधिकाई । ताते परे नरकमें आई ॥

दोहा–गुरुदीक्षा हम लीन नहिं, हरिको भजन न कीन्ह ।
रही तुम्हारी आश कछु, तुमहुँ भक्ति तजि दीन्ह ॥

तुमहुँ आय इत कीनों वासा । सुनत नृपति अस वचन प्रकासा ॥
जो किहुभाँति भूमितल जाऊं । तौ तुमको सुरलोक पठाऊं ॥
करि हरिभक्ति भजौं भगवाना । जाते पद पावहु निरवाना ॥
हँसि कह पितर धन्य रे वंगा । प्रथमहि नाहिं रँगो हरिरंगा ॥
अब जब परे फंद यम आई । तब हरिभजनकेरि सुधि पाई ॥
जिमिगृहअगिनिलगतकोउधावें । ताहिबुझावन कूप खनावे ॥
तिमि तुम्हार नृप है अभिलाखा । अब सब कर्म हिये धरराखा ॥
दूत लगे तब नरकहिं डारन । तिहि अवसर इकआयो हरिजन ॥
आदरकरि गे दूत लिवाई । यमहुँ कीन सत्कार बनाई ॥

निजआसनपर तिहि बैठारी । पदपखारि पुनि विनय उचारी ॥
लखि प्रभाव नृप तिहिढिग जाई । हाथ जोर अस विनय सुनाई ॥
तुम पतितनतारन सुखदाता । नरकजननके सबविधि त्राता ॥
परउपकार सदा हिय धारो । मोर नरकते करहु उबारो ॥
विनती सुनत दया उर आई । रविसुतते इमिसन्त सुनाई ॥
पाशनते यहि देहु निकारी । मानो इतनी बात हमारी ॥
जाय करहिं हरिभक्ति सुहाई । पितरन देहिं कलेश मिटाई ॥
सुनि यम छांडिनृपतिको दीना । सन्तकृपामन भयो नवीना ॥
तुरतहि मर्त्यलोकमें आवा । मृतकदेहमें प्राण समावा ॥
जियो नृपति परिजनसुखमाना । सबही आपन भाग्य बखाना ॥
तब महीप निज कथा सुनाई । जिहिविधिदीनो सन्त छुडाई ॥

दोहा—यमपुर देखो जाय हम, भक्ति बिना दुखरूप ।
तातें सब भक्ती करहु, करिहैं हमहुँ अनूप ॥

ज्योतिष पूछ घरी धरवाई । जिहिदिन शरण रामकी जाई ॥
गुरुमुखहोय शरण भे राजा । दिये दान महिदेवन काजा ॥
जबही नृप हरिभक्ति विचारी । तबै भये तिहि पितर सुखारी ॥
बैठे निकरि नरकतटजाई । लागे सुतकी करन बड़ाई ॥
अब कबजाहि अमरपुरमाहीं । असकहिसुखी होंय बिहँसाहीं ॥
तब तक पितर पिण्डहितभ्रमहीं । जबतक कहहिं देहुजलहमहीं ॥
जबतककृष्णभक्त कुलमाहीं । पितर पूज्य जन्मत है नाहीं ॥

पद्मपु० श्लोक—तावद्भ्रमन्ति संसारे पितरः पिण्डतत्पराः ॥
यावत्कुले सुतः कृष्णभक्तियुक्तो न जायते ॥ १ ॥
स्कन्दपु०—पतन्ति नरके पूर्वे नृत्यन्ति च मुहुर्मुहुः ॥
मद्वंशे वैष्णवो जातः स मे त्राता भविष्यति ॥ २ ॥

इहाँ पुरोहित कीन विचारा। भयो भक्त जब नृपति हमारा॥
सुनै ज्ञान जब सन्तन केरा। भावै नहीं वचन तब मेरा॥
दान पुण्य सब जाय बिलाई। ताते कोई करहुँ उपाई॥
रानी ढिग निजनारि पठाई। तिनताको बहुविधि समुझाई॥
है अरिष्ट कछु पूछो रानी। सुनि आई निज गेह सयानी॥
रानी उपरोहितहि बुलाई। जब पहुँचे तब बात सुनाई॥
सबविधि कुशल तुम्हारि रहाई। पर इक काज होत दुखदाई॥
जब राजा गुरुदीक्षा लेई। साधुसन्तकी करि है सेई॥
राजपाट त्यागहु मतिधीरा। अइहैं नहीं कबहुँ तव तीरा॥
ताते तुमकरि सकल शृँगारा। मोहित करहु नृपहि बरियारा॥
जिहिते नृप भक्तिहि नहिं करही। सोइ मांगोवर बुधि हियधरही॥
रानी विदा पुरोहित करके। आप मोहिनीको तनु धरके॥
षोडशभाँति कियो शृंगारा। रैन समय नृप ढिग पगुधारा॥
हाव भावकर नृप वश कीना। तब वाचा करिबोलन लीना॥
अमरलोकते तुम फिरिआये। गजमुक्तावर वाजि लुटाये॥
नृपति हमैं कछु तुमनहिं दीना। कह चहिये कहि नृपति प्रवीना॥
कह तिय देव साक्षी दीजै। तो पिय हमहुँ माँग कछुलीजै॥
सुनत शपथ जब नृपति उचारी। बोली तब हँस मुख सोइनारी॥
भक्ति करन इच्छा तजि दीजै। साधुनकी संगति मति कीजै॥
दान पुण्य कीजै बहुतेरा। इहिते बाढ़ै पुण्य घनेरा॥
सुन राजा तब गये सुखाई। कस मांगो वरदान बनाई॥
कहा होय जप तप मख दाना। विन हरिभक्ति वृथा सब ज्ञाना॥

दोहा-दानी नृप गिर्गट भयो, अम्बरीष अहिराज।
ताते भक्ति न रोकहू, किये बनहि बड़काज॥

तब रानी इमि वचन उचारी । जो अस तौ वाचा किमि हारी ॥
शिबि दधीचि हरिचंद भुआला । वाचावश सहि कष्ट विशाला ॥
मधुकैटभ वाचावश होई । हरिको निजशिर दीन्हों सोई ॥
लखहु गयासुर दानव जोई । वाचावश्य अधोमुख सोई ॥
दशरथ प्राण तजे दुखपायो । पै अपनो नहिं वचन फिरायो ॥
सो साखी कर फेरत कैसे । परे वृथा दुविधामें तैसे ॥
त्यागहु यह प्रपंच नरपाला । मत परिये साधुनके जाला ॥
जब रानी अस बात सुनाई । वाचावश नृपभक्ति विहाई ॥

दोहा–जान बूझ नृप कासने, हरिदीक्षा तजिदीन ।
भावी प्रबल न जान सक, यद्यपि रह्यो प्रवीन ॥

इति श्रीविश्रामसागर सवमतआगर ग्रंथ उजागर कासआख्यान वर्णनोनाम त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४३ ॥

दोहा–विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिर राम सुखदान ।
भारत मत कर सो कथा, कहुँ इतिहास बखान ॥

जबहिं भक्ति नृप दिय बिसराई । पुरुषा गिरे नरकमें जाई ॥
यमकिंकर तब कह्यो सुनाई । जिहि सुतकी तुम आशलगाई ॥
तिन हरिभक्ति हिये नहिं आनी । ताते भई पुण्यकी हानी ॥
तब पुरुषा कह आरत बानी । किहि खलसुतकीमतिबौरानी ॥
जिन हमको ऐसे दुख दीन्हें । इहिविधिविकलभयेतनुछीन्हें ॥
तिहि अवसर नारद तहँ आई । पितररुदनलखि कह्यो बुझाई ॥
परे अधोमुख करहु पुकारा । कह अपनो वृत्तान्त उचारा ॥
हे मुनि हमरे कुल सुत कासा । चाही हरिभक्ती सुखरासा ॥
ताको बरजादियोहै कोई । तिहिते दुख पायो हम सोई ॥
भजहूं जो तिहि देहि बुझाई । निश्चय कोटि यज्ञफल पाई ॥

दोहा-नारद कहि समझाय हौं, मैं जैहौं जहँ कास ।
पर कहिहै कोउ लुब्धहै, ऋषि अस वचन प्रकाश ॥
कह्यो पितर तव स्वार्थ न मानै । प्रथमैं दशा लखी सब तानै ॥
जो न मानि है तुम्हरी बाता । खखरा खोदि दिखैयो ताता ॥
तिहि आंगनमें गढा खुदाई । दशा हमारी देहु दिखाई ॥
अस सुनि मुनि नृप गेह सिधाये । पद पखार आसन बैठाये ॥
धन्य धन्य कहि भाग्य सराहा । दरश पाय अति भयो उछाहा ॥
दुर्लभ सन्त समागम मुनिवर । आज्ञा करहु काज करुँ शिरधर ॥
जो भोजनकी होय रजाई । शिरधर करहुँ कहिय ऋषिराई ॥
कह नारद जे दीक्षित नाहीं । तिनको अन्नजल हम न छुआहीं ॥
हरिकी भक्ति जु दीक्षित नाहीं । वृथा अन्न जीवन जगमाहीं ॥
तिनमें कृष्णचरण नहिं ध्यावै । ताको अन्न न हरिजन पावै ॥
गौरीतन्त्रे श्लोकः-कृष्णमंत्रविहीनस्य पापिष्ठस्य दुरात्मनः ।
श्वानविष्ठासमं चान्नं जलं च मदिरासमम् ॥
स्कान्दे-अवैष्णवगृहे भुक्त्वा पीत्वा वाज्ञानतोपि वा ।
शुद्धिश्चान्द्रायणे प्रोक्ता इष्टापूर्ते वृथा सदा ॥
राममंत्र तुम हिये न धारा । किहिंविधि भोजनकरैंतुम्हारा ॥
नरतनुलहि हरिभक्ति न ठानी । मतिगतिजगतअसत्य भुलानी ॥
यमपुरजायलख्यो दुख सबही । तदपि न चेतत तुमनृपअबही ॥
बडे भाग्यसे छूटनपाये । यहां आय सब ज्ञान गँवाये ॥
प्रसवसमय पति त्यागै नारी । दुखबीते पुनि तिहिसँगवारी ॥
तिहिप्रकार तव मति बौरानी । जानबूझि किय कारजहानी ॥
पुरुषा परे नरकमें हेरे । भक्तिवचनदे आये नेरे ॥
तब राजा बोले अस वानी । सुधि बुधि हरलीनी सब रानी ॥

वर मांगा भक्तिहि दे त्यागी। अब क्या करौं प्रणत अनुरागी॥
कह नारद स्वभाव तिय जोई। वर्णतहैं हम तुमसे सोई॥
रहित अचार विचार न जानै। परमभयाकुल छलअतिठानै॥
चंचलबुद्धि चपलचित नितहीं। डाह बैर ईर्षा जिततितहीं॥
असनारिनकी बात जु मानैं। तिनके भाग्य सौख्य नहिंपानै॥

दोहा—जे जे भामिनिवश भये, तिनको भयो अकाज।
शशि शृंगीऋषि इन्द्र विधि, कस न बिगारे काज॥

सुनहुएक कुंडल द्विजराई। उग्रबुद्धि गृहद्रव्य न पाई॥
निर्धन जानि तासुकी बाला। नितप्रति गारी देइ विशाला॥
इकदिन द्विज पुस्तककरधारी। गमन कीन परदेशमँझारी॥
मारगमें इक सरवर पायो। करिमज्जनअरुतिलकलगायो॥
तहँ हरिकथाकहन द्विज लागो। बांबीमध्य सर्प सुनि जागो॥
कथा सुनी तिन धरिकै ध्याना। मिटी तपन तनु हृदयजुडाना॥
करन समापत लागे जबहीं। सर्प निकसिआवा सो तबहीं॥
एक मुहरधरि वचन सुनाये। को तुम कौन कहांते आये॥
कुण्डल कहि विद्याधर भाई। धनहित चले विदेश कमाई॥
बोला सर्प न दूर सिधावहु। प्रतिदिन हमको कथा सुनावहु॥

दोहा—मुहर एक देउँ नित्यप्रति, कहहु न काहुइ जाय।
यह सुनि द्विजभो मुदितमन, भयउ लाभ बडभाय॥

विविधपुराण सुनावनलागा। मुहर एक नितप्रति अनुरागा॥
ह्वै धनवान महल बनवाये। कछुदिनमें गजवाजि बँधाये॥
इकदिन एक परोसन आई। हरुवे ते कहि बात सुनाई॥
तुम तौ निर्धन रही भिखारी। इतनो धन कहँ पायउ नारी॥
कह द्विजतियममपतिधनलावा। सो नहिं मोकहँ भेद बतावा॥
कह तिय जो पति भेद न दीना। तौ किहिकामधामधनलीना॥

नारिपुरुष अस अन्तर होई । तौ सम्पति जरजाइहि सोई ॥
तिहिते पूछहु पतिहि सवारी । अस कहि गृहगवनी सो नारी ॥
इत द्विजनारि रिसाई भारी । अभरण अपने दीन्हेसिडारी ॥
इत द्विज कथाबाँचि गृह आवा।तियदुखलखिअसवचनसुनावा॥
कौन व्यथा व्यापी तनुमाहीं । जो तुम भूषण पहरे नाहीं ॥
कह तिय हमसे भेद छिपायो । इतनो द्रव्य कहांते पायो ॥
कह द्विजहँसि अब त्यागहु खेदा । प्रिय मैं कहउं विभवकरभेदा ॥
दक्षिण दिश सरवरके तीरा । कथा सुनत इक सर्प सुधीरा ॥

दोहा-नितप्रति कथा सुनावहूं, मिलै मुहर इक मोंहि ।
सुनत तिया हर्षितभई, मन सों त्यागो कोहि ॥

निशापाय जब द्विज गा सोई । तब सुतते तिय कह मुदहोई ॥
सरके निकट पुत्र तुम जावहु । सर्पहि मारि द्रव्य खनिलावहु ॥
सुनि सो गहि कुदार तत्काले । पुस्तकसह गो सर्पक आले ॥
सर्प ताहि लखि सहितकुदारी । मनमें शोच कीन अति भारी ॥
कथाअरंभ विप्रसुत करही । बांबी बैठ सर्प मन धरही ॥
विविधरागिनी तान सुनाई । तदपि घात नहिं लागन पाई ॥
जब किय कथाविसर्जन ताने । निकस्यो अहि इकमुहरसुआने॥
मुहर चढाय चल्यो अहि जबहीं । नष्ट कुदारि चलाई तबहीं ॥

दोहा-कछुक पूंछ कटि सर्पकी, फेरि डस्यो तत्काल ।
तुरतमरयोभूमिहि गिरयो, फल तिहि लह्योविशाल ॥

इत द्विज उठ तियते कह वानी । आज कहां सुत कहो सयानी ॥
सो कह भुवन काजवश गयऊ । सुनिद्विजपुस्तकलेचलिभयऊ॥
अहिढिग जाय मृतकसुत देखी । द्विजवर रोदन कीन विशेखी ॥
ताको ज्योंत्यों करि घरलाई । विधिवत कर्म किये दुखपाई ॥

कछुदिन गये सर्पढिग आयो । ताहीभाँति पुराण सुनायो ॥
कह्यो सर्प अब सो रस गयऊ । तुम यह भेद लियहि कहिदयऊ॥
तुमहिय सुतकर शोच न जाई । मेरे पूंछदुःख अधिकाई ॥
तिहिते तुम अपने घर जावो । कबहूँ भूल न इहिथल आवो ॥
यह सुन विप्र गयो निजधामा । इत सुतदुखइतधनगतकामा ॥
लखहु नारिवश है द्विजराई । धन औ सुत दोउ दिये गँवाई॥
यथा विप्र कीन्हीं निज हानी । तिहिप्रकार तव मति बौरानी ॥
जो हरिभजनहि देइ छुडाई । अरु अपनो दे धर्म हटाई ॥
शत्रुसमान देहु तिहि त्यागी । जो नहिं हरिके पद अनुरागी ॥
तजो पिता प्रह्लाद विचारो । माता भरत तजी सुखसारो ॥

दोहा–तजो विभीषण भ्रात निज, व्रजवनितन पतित्याग ।
हरिभक्तीके कारणे, भये सकल बड़भाग ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ग्रंथउजागर व्यासनारदसम्वादवर्णनोनाम चतुश्चत्वारिंशोध्यायः ॥ ४४ ॥

दोहा–विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमरि राम सुखदान ।
व्यासऋषीसम्बादको, कहुँ इतिहास बखान ॥

औरहु कथा प्रसंग सुनावों । परम रहस्य मनोहर गावों ॥
भारतकर आरंभ भयो जब । गाडनखम्भ पाण्डुसुत गे तब ॥
मनमें करि सब परम हुलासा । कह्यो वचन सहदेव प्रकासा ॥
ऐसी सायत देहु बताई । जाते जय हमारि है जाई ॥
कह सहदेव सुनहु ममबानी । शकुनबात इक कहूं बखानी ॥
पावहु जो नर नारी दासा । गाडो तिहि कुरुक्षेत्र बिसासा ॥
ताके ढिग जम्बुक जब आहीं । पावहुगे सब भेद तहाहीं ॥
यह सुनि ढूँढन भीम सिधाये । खोजत एक नगरमें आये ॥

दोहा-तहँ इक तेली लखत भे, करत सकल घरकाम ।
झार बुहारै जलभरै, पलँग बैठि रह वाम ॥
कूटपीसकर पाक बनावै । ताहि खवाय आप पुनिखावै ॥
एकदिना घर आग बुझाई । रमिदिन मांगि फिरो नहिंपाई ॥
तब तियने अस बात सुनाई । मैं तो पगन महावर लाई ॥
जो तुम लेचलु कन्ध चढाई । तो मैं आगी लाऊं जाई ॥
सुनि असकन्धचढ़ातियलीन्हीं । चलेउअगिनिहितलाजनकीन्हीं
अग्निलेन जिहि द्वारे जाहीं । देखिबाल सब ताल बजाहीं ॥
तिय हँसि हँसि यह वचनबखानै । भली अगिनि यह मांगतजानै ॥
कोउ निलजकहि गारि सुनावै । डारि नारिंदू कोउ बतावै ॥
कोउ कह अस वर हमैं न दीना । देखहु इन वशमें कस कीना ॥
पुरुषपुरुषते कहहिं बताई । इनते अधिक निलज को भाई ॥
जो इमि होति हमारे नारी । डारत ताहि जानते मारी ॥
दुष्टनारि नहिं पाले परई । हे विधि अस संयोग न करई ॥
दुष्ट भार्या शठै मिताई । उत्तरदायक भृत्य जु भाई ॥
सबलशत्रु अहिसहगृह वासा । मृत्युरूप मानहु विश्वासा ॥
दोहा-भीम लखो जबचरित यह, नारी तुरत उतारि ।
धरिलाये कुरुक्षेत्रमें, दीनो ताको गारि ॥
आप रहे छिपि तरुकी डारी । लगे सुदेखन कौतुक भारी ॥
बहुतक आये तहाँ सियारा । सूंघनलगे अंग तब सारा ॥
कह इक मांस अशुद्ध बडेई । याको भोजन करिहै जोई ॥
कोटिनवर्ष नरक सो जाई । तब जम्बुक सब बोले भाई ॥
याको कारण कहो विचारी । सुनि जम्बुकतब गिरा उचारी ॥
इन कबहूँ शुभकर्म न कीना । नारि विवश नितरह्योअधीना ॥

हरिगुरुजन नहिंशिरकहुँनायो । तिहिते शिरअशुद्धकहवायो ॥
विनगुरु मंत्र भ्रष्ट हैं काना । हरिदर्शन विन नैन निदाना ॥
मुख अशुद्ध नहिं नाम उचारा । गर अशुद्ध नहिं तुलसीधारा ॥
दोहा–कर अशुद्ध नहिं दान किय, उर अशुद्ध इमि जान ।
करसि दण्डवत कबहु नहिं, उदर अशुद्ध महान ॥
हरिप्रसाद इन कबहुँन लीन्हेसि । पग अशुद्धतीरथनहिंकीन्हेसि ॥
तब सियारसुत गिरा उचारी । सकलशरीरअशुधकहिडारी ॥
हमें क्षुधाने बहुत सतायो । याको करिये कौन उपायो ॥
तब जम्बुक इमि सबन सुनायो । आजुके दिन रहियेसचुपायो ॥
कालिह युद्ध ह्वैहै इत भाई । खायहु पुनिजितनो मनभाई ॥
अस्त्र शस्त्र चलिहैं बहुतेरे । धर्मी जुटिहैं यहां घनेरे ॥
तिनको मांस जु भक्षण करिहैं । तेऊ अमरलोक पगधरिहैं ॥
तब सियारसुत कह इहि रारी । जितिहै कौन जाय को हारी ॥
जम्बुक कहै जीतिहै सोई । प्रथमें ध्वजा रोपिहै जोई ॥
लखि यह शकुन भीम सुखपाई । तेलीको उखार घरजाई ॥
आधोतनु दीन्हों तहँगारी । आधो बाहर रहो सुखारी ॥
तिहि उखारि भ्रातनपै आये । जम्बुकके सब वचन सुनाये ॥
निजगृहगमने सकल सियारा । करहु चेतनृप हिये मँझारा ॥
जम्बुकहु जिहि खायो नाहीं । ऐसी गति नृप तुम्हरी आई ॥
दोहा–रानी कीन अकाज अति, भक्तिहि दीन विहाइ ।
तुहि समान है पतित को, सुनि नृप गयो लजाइ ॥
साथनाय कह भयो अकाजू । अब मुनि कृपा कीजिये आजू ॥
हरिको नाम सुनावहु अबहीं । कह मुनि करहु तयारी सबहीं ॥
सुनिनृप अपनो भवन लिपायो । नूतन केले कलश धरायो ॥

सन्तसाधु सब न्योत बुलाये । मंगल सुनत सकल जुरिआये ॥
द्वारे भई बहुतही भीरा । बाजहिं ताल मृदंग मँजीरा ॥
सज्जन करहिं रामगुण गाना । लखिसमाजनृपअतिसुखमाना॥
नारदते करजोर सुनाई । अब क्या आज्ञा देहु बताई ॥
नारद कह रानीपहँ जावो । ताहूकी सम्मति ले आवो ॥

दोहा-जो वह सम्मति देइनहिं, तो डाटो तुम ताहि ।
जाय सुनायो नृपतितब, सुनिबोली अनखाहि ॥

बहुतभांति मैं तुमहिं सिखावा । तदपि हिये कछु बोध न आवा ॥
यह सुनि नृपति डाट जब दीनी । बोली तुरतहि विनती कीनी ॥
आपहि आप बनो हरिदासा । हमें न साथ लेत गुणरासा ॥
तासों मैं अस वचन बखाना ।सुनितियवचननृपतिसुखमाना॥
बहुत लोग दीक्षाहित आये । नारद सुखहित सब बैठाये ॥
तब नारद सब कियो बिधाना । तुलसी मालतिलक कृत ठाना ॥
राममंत्र जब नृपहि सुनावा । भयो शुद्ध पावन जनभावा ॥
गुरुतल्पग औ मद्यप जोई । तस्कर सोन ब्रह्महा कोई ॥
राममंत्रके जपते भाई । यह सब पातक जाहिं मिटाई ॥

दोहा-द्वादशमंत्रविधानसों, नृप जब किय अस्नान ।
नृपके तब सबहीं पितर, गे वैकुण्ठ विमान ॥

पाछे मंत्र रानिको दीना । जो आवा तिहि हरिजनकीना॥
विप्रन बहुत दक्षिणा पाई । सो शोभा कछु कही न जाई ॥
जहां तहां हरिचर्चा छाई । कथापुराण होत अधिकाई ॥
कह नारद पुरुषनढिग जाऊं । तिनकी गतिहि देखअब आऊं॥
अस कहि गे मुनि यमपुर धाई । दूतनसों अस गिरा सुनाई ॥
बोले दूत पूत उनकेरा । हैगो हरिको भक्त घनेरा ॥

वे पुरुषा वैकुण्ठ सिधाये। सुनि नारद हरिधामहि आये ॥
तहाँ चरनसहथे यमराजा। भाषत रहे विष्णुसे काजा ॥
तब प्रभु नारदसे कह बानी। रविसुत फरियादी मुनि ज्ञानी ॥
जहँ तहँ नारद भक्ति दृढावें। पुरि हमारि खाली करवावें ॥
जगमें सकल दास हरि होई। हमरे पुर फिरि आइहि कोई ॥
कह नारद हम कहा कहाई। जिहिते मानजाहिं यमराई ॥
कह यम नारद जगमें जावें। जहँ तहँ लोगनको भरमावें ॥
कह नारद कैसेहु कर कोई। यह कारज हमते नहिं होई ॥
तुम चाहे नरलोकहि जाई। दीजे भलीभाँति भरमाई ॥
कह हरि करहु जु भावै तुमको। पर जो जन चाहतहैं हमको ॥
ते नहिं त्यागें भक्ति हमारी। सुन यमराज चले गुणधारी ॥
कासनगरमें जब यम आये। लीनो नाउतरूप बनाये ॥

दोहा—लगे हिलावन शीश निज, दूत बजावहिं बाज।
कौतुक देखहिं लोग बहु, पूछत लख सो साज ॥ १ ॥
किमि होवहि कल्याण हम, सो तुम देउ बताय।
यम बोले मल सेवहू, वीर मशानहि जाय ॥ २ ॥

पूजहु शक्ति दारसुत पावो। नितप्रति मनियां देव मनावो ॥
अजयापुत्रमहिषबलि दीने। पावहु सकलमनोरथ कीने ॥
क्षेत्रपाल पूजहु मनलाई। सकलविघ्न तब जाहि नशाई ॥
करहु नियोग प्रचार भलाई। विधवनके दो व्याह कराई ॥
जातिपाँति सब देहु मिटाई। चोकादिये पट्ट होजाई ॥
हरिपूजा चरणोदक पाना। यासे नहीं होय कल्याना ॥
नहीं भयो हरिको अवतारा। वह तो निर्गुण वेद पुकारा ॥
महावीर शंकर अजसेवा। होत न कछु यह जानो भेवा ॥

पूजा पाठ देहु बिसराई। मरघट हिंसामन दो भाई॥
करत दान बहुविधि जगमाहीं। को जानै फल मिलहि कि नाहीं
हरिको भजन भक्ति दुखदाई। सुत वित तिय घर देत छुडाई॥
रोगादिक बहुभाँति सताहीं। जहां तहां निज हँसी कराहीं॥
जब कहुँ कष्ट सहो बहुकाला। ता पाछे हरिहोहिं दयाला॥
तौहू जनहिं कछू नहिं देहीं। मूरख जन यहि मत मन देहीं॥
सुनि सुनि यमदूतनकी वानी। हरिते विमुख भये बहुप्रानी॥
हरिभक्तन विश्वास न आयो। विषयिनको लीनो भरमायो॥

दोहा-कहो तियनसे तुमहुँ सब, पूजि फिरो सब ठौर।
डोरा लोटा भीतिहै, फलदायक शिरमौर॥

काहुइ यंत्र मंत्र विधि देहीं। भूत प्रेतकी विधिकोइ लेहीं॥
काहुइ सुत वित दीनो भूरी। तब सब विश्वासी भे जूरी॥
किहुको बनो जहां कछु कामा। दौरि गये सब तिहिके धामा॥
तिन जो कीन करन सो लागे। तब यमदूत महामुदपागे॥
तुरतहि अपने लोक सिधाये। जगमें बहुत लोग भरमाये॥
करि कुकर्म यमलोकहि जावैं। व्यर्थ आपनी आयु गँवावैं॥
जे हरिभक्त बुद्धिमत धीरा। ते नहिं मानत कारन पीरा॥
तजि सब भर्म शरण हरिरहहीं। तिनको यमगणकबहुँनगहहीं॥

दोहा-रामभक्तिदृढकरनहित, हरन मोहतमशूल।
मिश्रकही यह कथाभल, सकल सुमंगलमूल॥

इति श्रीविश्रामसागर सचमतआगर ग्रंथउजागर राजाकासपितृ-
उद्धारवर्णनोनाम पंचचत्वारिंशोऽध्यायः॥ ४५॥

दोहा-विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमरि राम सुखदान।
भक्तिरत्न मत कहौं कछु, जो हरिजन मनमान॥

शौनक कह हरिभक्ति सुहाई। जो नौ विधि निगमागम गाई॥
नारद जो ऋषि व्यास सुनाई। सो सबवर्णहु सूत सुहाई॥
कहत सूत जब व्यास सुजाना। नारदसे सीख्यो हरिज्ञाना॥
तब अस कही शरणमें आयो। विनगुरु दृढताकोइ न पायो॥
जिमि शिशु मातापय विनुपाये। होत पीन नहिं कबहुँ सुहाये॥
तिमि गुरुके विन ज्ञानदृढाये। होत बोध नाहिं कवनिहु भाये॥
तब नारद कह सुनु मनलाई। कहौं भक्तिके अंग दृढाई॥
श्रवणकीरतनपुनिभल स्मरणन। पदसेवन अर्चन अरु वन्दन॥
दास्य सखा अरु आत्मनिवेदन। दशमी प्रेम लक्षणा मन गुन॥
जो हरिकथामाहिं मन लावहिं। श्रवणमार्गहिय राम समावहिं॥

दोहा-सकलपापतिहिके नशैं, सुन मुनीश मनलाय।
जैसे शरदहि मेघगण, जिततित जाहिं बिलाय॥

जो हरिभक्त विरत जगमाहीं। हरिगुणसुनवेको उमगाहीं॥
शिव ब्रह्मा सनकादि मुनीशा। चाहत चरित श्रवणजगदीशा॥
रामचरित नाहिं सुनत अघाहीं। मतिमन्दनकी बातसुनाहीं॥
जे नर हरिगुण श्रवण न चाहीं। सो पशुसदृश शास्त्रकहजाहीं॥
ते खर कोल श्वान सम जानो। अथवा ऊंटसदृश मनमानो॥
घर घर पाव निरादरश्वाना। तिहिविधि ते पावत अपमाना॥
असतवाद दिनरात बढावैं। चरत ऊंटसम ते कह जावैं॥
गृहको भार बहैं दिनराती। तिहिते खरसम कहत कुभांती॥
कथामाहिं है आनँद भारी। चाहत सुनन न विषयलवारी॥
भ्रवरा चातक हंस मुनीशा। शुक रु मीन मक्षिका ऋषीशा॥
वृषभ मधू वृक तमचर शैला। इहिविधि श्रोता भेद कहैला॥

दोहा-इनमें षट उत्तम कहे, अपर अधम युत दोष।
अन्यमनस्क अधीरदृग, पदछेदक सहरोष॥

असमंजस मन मानत नाहीं। वादरसिक निद्रावश आहीं ॥
अन विश्वास अहित अज्ञानी। श्रोताके यह दोष बखानी ॥
इते दोष विन श्रोता होई। कथाअनंद लहै तब सोई ॥
ताते इतने दोष बिहाई। कथा सुनो राजन् मनलाई ॥
कथा प्रीतितें सफल कहाई। कथारहित नहिं कृत्यसुहाई ॥
श्रवण परीक्षित सबविधि जाना। सुनहु कीरतन भक्तिमहाना ॥
अमितकर्मलीला प्रभु आहीं। मंगलप्रद सज्जन सो गाहीं ॥
तिनको जे आनँद से गाहीं ।अभिमतफल निश्चयसो पाहीं ॥
नारदादिऋषि निशिदिनगावहिं ।रामचरितकहिअतिसुखपावहिं॥
कीर्त्तनविना वृथा जगजाला। द्वादशमें यह कथा विशाला ॥
पांचभांतिके वक्ता होई। रवि,शशि,उडु,मणि,दीप समोई
वक्ताहूमें दोयक आछे। तजिवे योग सुनावहु पाछे ॥

दोहा—पक्षपातयुत चाहधन, उत्तर प्रश्न न देइ।
सारवस्तु सुनि तर्क नहिं, जानत भेद न भेइ ॥

आडम्बरयुत वचन उचारै। सो मूरख कैसे उरधारै ॥
प्रेमप्रतीति हियेमें नाहीं। पूछत वात रोषयुत काहीं ॥
श्रोताजनके पापउदय जब। ऐसे वक्ता मिलें आय तब॥
पढे शास्त्र हरिभक्ति न जानी। चन्दनभार पशुहि परमानी॥
जानत नाहिं सुगंधिक सारा। भ्रमत फिरततिमि द्वारद्वारा॥

आदित्यपुराणे श्लोकः।

यथा खरश्चन्दनभारवाही भारस्य वेत्ता नहि चन्दनस्य।
तथा च विप्राः श्रुतिशास्त्रयुक्ता मद्भक्तिहीनाः खरवद्वहन्ति ॥

ज्यों विधवातियके शिरमाहीं। सोहतहै सिन्दुर कहुँ नाहीं ॥
विधवा अपनो कहिकर गावै। बनरा दुलहिनकेर कहावै ॥
तिमि हरिभक्तिविना कोइ प्रानी। पावत नहिं यथार्थ सुखमानी ॥

दोहा—विद्या गौधन वेद पढ़ुँ, अतिदूध जब पाय।
तब यह प्राणी जगतसे, छूट अमर होजाय ॥ १ ॥
तिहिते भक्त अनन्य है, वरणै हरिगुणग्राम।
तब यह तनु ह्वैहै सफल, सुखबीते चहुँयाम ॥

मुनि शुकदेव कीरतन जाना। सुनहु भक्तिसुमरण सुहाना ॥
हरिको जो नित सुमिरण करई। भवनिधिसम भवसागर तरई ॥
गणिका गज रु अजामिल जोई। सुमिरणकर उधरे जग सोई ॥
विषयन सुमिरै विष इह पावे। राम जपे रामहि ढिग जावे ॥
गणपतिविधिसनकादिमुनीशा। सुमरहि प्रभु भे पूज्य ऋषीशा॥
जो हरिको सुमरहिं मनलाई। तिनके अघ सब जाहिं नशाई॥
हरिसुमिरण करु गाय समाना। चरताफिरतशिशुनहिंबिसराना॥
हरिसुमिरण कामीसम कीजे। मनमें सदा नारि जिमि लीजे ॥
हरि सुमिरण लोभीसम कीजे। निशिदिन द्रव्यहिमें मनदीजै॥
चातकसम सुमिरण रटलावे। और कछू जिहि कृत्य न भावे॥
रामनाम जिन सुमिरण कीन्हा। तिनजगसकलधर्म करिलीन्हा॥
रामनाम जिन हिये मँझारा। तिनको क्या बाधा संसारा ॥

दोहा—साँचो सुमिरण रामको, जिहि किय चाह नशाय।
बहुतजन्मके पुण्यविन, मुखसे नाहिं कढ़ाय ॥

दम्भहुकर जो नाम उचारे। तिनके पाप बहुत हों छारे ॥
शत्रु भाव ध्यावहि जो कोई। कहत शास्त्र मुक्तिहि लह सोई॥
भृङ्गी भयते कीट अनूपा। पावतहै भृंगीको रूपा ॥
तैसहि रामनामके ध्याना। शत्रुहि सो हरिरूप समाना ॥
रामनाम मन देइ बिसराई। हरिलय ह्वै तिहि जगछुटिजाई॥
कलिके [illegible] [illegible]। [illegible] छूटहि संसारा ॥

ते कलिकाल जीव बड़भागी। होहिं करावहिं हरि अनुरागी ॥
इतने पाप जगतमें नाहीं। जितने हरि सुमिरे मिटजाहीं ॥
चाण्डालहु जो राम उचारै। सोउ सम्भाषणयोग विचारै ॥
(यश्चाण्डालो रामेति वाचं वदेत्तेन सह संवसेत्तेन सह संवसेदित्यादि)

छन्द—रामनाम कलिकल्पवृक्षहै सकल शास्त्र यह भाखैं।
दश अपराध त्याग उरधारै तौ पावत अभिलाखैं ॥
गुरू अवज्ञा हरिजन निन्दा भेद ब्रह्ममें मानै।
पाप नामबल करै तापयुत नामप्रताप न जानै ॥
बिन श्रद्धाउपदेशबखानत शास्त्रन दोष लगावैं।
रत प्रपंच निज इन्द्रियपोषन यह दश दोष बहावैं ॥
तजि यह दोष नामजप जोई ब्रह्मलोक सोइ पावै।
नामजपो इहि भाँति नृपति तुम फिर नहिंपापरहावै॥

दोहा—सुमिरण किय प्रह्लादभल, तिहिजानत संसार।
अब सेवाविधि कहहुँमैं, श्रीकीनो निरधार ॥१॥
देव दनुज नर नाग खग, इतर और जो होय।
जो सेवे हरिपदकमल, मुक्तिहि पावै सोय ॥ २ ॥

हरि सेवाबिन कहुँ कित जाई। जन्म मरण नहिं कबहुँ नशाई ॥
तिहिते सेवहु नित हरिचरना। अर्चन भक्ति कहूं नितबरना ॥
हरिपूजन परमानँददाई। इहिसम सुलभ न और उपाई ॥
हरि अर्चन कीने सुर सारे। पावत संतुष्टी गुणधारे ॥
जड़ सींचे तरु पल्लव सारे। हरे होत इमि भक्ति विचारे ॥
जिमि मुखते सब भोजनकरहीं। इन्द्रिय तृप्तिसकलबलधरहीं ॥
प्रभु आनंदसिंधु सुखराशी। करुणाकर सबके घटवासी ॥

निज पूजा सो चाहत नाहीं । निजहितहेत करन जनचाहीं ॥
हरिपूजे सुखसम्पति पावैं । पापदुष्कृत निकट न जावैं ॥
प्रभुके मान किये विन कोई । कबहूं मान न पावत सोई ॥
जैसे मुख तिलकादि लगावे । तैसेइ दर्पण में लखि पावे ॥

दोहा—करहिं मान जो रामको, प्रभु तिहि कर सन्मान ।
सोइ धन्य नर जगतमें, ते बड़भाग्य बखान ॥

सकल देव मुनि ताहि सराहीं । चरणरेणु तिहि पावन चाहीं ॥
ऐसो हरिपूजन सुखदाई । जो न करै सो पुनि दुखपाई ॥
दम्भसहित मदकर जो सेवै । सो श्रमव्यर्थ निगम कह भेवै ॥
प्रेमसहित जलअंकुर देहीं । सादर ईश ताहिको लेहीं ॥
लौही दारुमयी रत्ननकी । चित्र पुरटपवि हारि अरु मनकी ॥
अष्टभाँति प्रतिमा यह होई । पूजनकरत भक्तजन जोई ॥
सोरहभाँति होत हरिपूजन । आवाहन अरु दूजो आसन ॥
पाद्य अर्घ्य आचमन सुहावन । स्नान पटाहुति सूत्रउढावन ॥
चन्दन पुष्प धूप अरु दीपं । ताम्बूल नैवेद्य अनूपं ॥
विनय प्रदक्षिण षोडश गाई । चरणामृतसे व्याधि नशाई ॥

छंद—जल दल चन्दन चक्र घंट दर शिल हारि न्हाई ।
अष्ट वस्तु मिल होत चरण अंमृत सुखदाई ॥
कहांतलक सो कहुं होय जो फल यहि पाना ।
भूमिगिरे अघ होत सुनो अब दीपविधाना ॥
चार चरणयुग देश कटी आनन इकवारी ।
सप्त चक्र सर्वांग यथा आरती उतारी ॥
हरिकी पूजा देइ अमित फल अतिसुखदानी ।
ताते सन्तत करहु प्रीति सह निजहितमानी ॥

सनकादिक जिहि करत सुनो सो विधि मन लाई।
अग जगरूप अनूप देइ आसन सुखदाई॥
पादपुष्टता अर्घ्यनेह अस्नान करावे।
वसन विनय मखसूत्र चित्त चन्दनहि लगावे॥
ज्ञानकि माला देइ वासनाधूप दिवावै।
दीपक दे निजबोध तुरत अज्ञान मिटावै॥
कर्म शुभाशुभ रुई इन्द्रियनको घृत लेई।
कारि वर्तिका अनेक रहै मति हरिपद भेई॥
विरति वह्निकर अरपि भाव नैवेद्य लगावे।
प्रेमरूप ताम्बूल सुगँधपन अंगन लावे॥
सदन सत्यपर्यंकबीच प्रभुशयन करावे।
क्षमा दया परिचारिकानको तहां टिकावै॥
इहिविधि पूजन किये सकल सन्ताप मिटाहीं।
यह निवृत्तिकी रीति जाप हरि कीने जाहीं॥

दोहा-पूजनविधि जानी भली, पृथुमहराज सयान।
छठई वंदनभक्ति अब, सुनु मुनि करहुँ बखान॥

जो करजोर करहिं परणामा। सो नर पावत मंगल कामा॥
सुकृत जीव हरिसन्मुख आवे। मनवचक्रमकारि निजशिरनावे॥
सो हरिधाम मोक्षसुख पाई। कथाभागवतमें यह गाई॥
कारि प्रणाम जु एकहि बारा। अश्वमेधदशफल तिहिसारा॥
दशअश्वमेधी जन्महि आई। कृष्णप्रणामी नहिं जन्माई॥
कहुँ गिरिपरे व्यथाके माहीं। विवशनाम जिहिके मुखआहीं॥
ताके संचितपाप नशाहीं। प्रेमकरै फल किमि कहिजाहीं॥
सो अक्रूर रीति सब जानी। औरहु वन्दन किय सुखमानी॥

इहिमहिमा को सकहि बखानी। ताते नित करिये सुखमानी॥
सतईं दास्यभक्तिहै भाई। दासहोय सेवहु रघुराई॥
जासु नाम सुमिरत अघजाहीं। जासुचरणरज भवदुखनाहीं॥
चाहत जासु कृपा अज ईशा। सनकादिक ऋषिवर्य मुनीशा॥

दोहा–भयो दास जब प्रभूको, फिर कछु रहत न शेष।
दासभये बिन जरन नहिं, जइहै सुनहु विशेष॥

जबतक दास होत यह नाहीं। तबतक रागादिक मनमाहीं॥
दासभये तब धन औ धामा। लागहि सब हरिभक्ति ललामा॥
सब व्यापार होत हरिके हित। मिटत विकार शुद्धहोंनितचित
दाससरिस प्रिय कोउहरिनाहीं। महाबीर कस प्रिय कहिजाहीं॥
वचनकायमन जो कछु करई। सो हरिके सब अर्पण धरई॥
विधिनिषेध नहिं वचन प्रमाणा। रहै अधीन सु दास बखाना॥
हरिको दास भयो जो नाहीं। पाराशर कह शवसम ताहीं॥
अष्टम भक्ति सखा कहवावे। हरिको सखा परमसुख पावे॥
गोप गोपिका ब्रजके ग्वाला। सखाभावकरि भये निहाला॥
सखा बिभीषण सुगल निषादा। मित्रभावकरि भे अहलादा॥

दोहा–सखा जाय परदेश कोइ, तो वियोग दुख होय।
अन्तर्यामी रहतसँग, यह प्रसंग लख कोय॥

अपर सुहृदमें यह गुण नाहीं। जस गुणरासकृष्णके माहीं॥
याते सब सुख हीन विचारी। हरिके सखा बनो गुणधारी॥
मनमलीन अघकरत सदाहीं। पुनिपुनि वे जग संसृति पाहीं॥
जिमि नदफेनु पकर चह पारा। तिमिहरि जपविनुनहिंनिस्तारा॥
वासुदेव वोहितसम अहहीं। करैं भक्ति सो सुखनितलहहीं॥
जब लगि प्रीति न तिनसों होई। कर्मसिंधु नहिं तरिहै कोई॥

प्रभुपद प्रीति होतिहै जबहीं । त्रिविधदुःख नाशतहैं तबहीं ॥
सबसाधनकर फल यह भाई । करिये यतन भक्ति जिमिपाई ॥
नवमी आत्मनिवेदन मानो । इहिसम और भक्ति नहिं जानो ॥
तन मन धन सब हरिहि निवेदन । आशा तज हरि धरहि सदामन ॥

दोहा-रहत सदा निश्चिन्त सो, तिहि सुधि प्रभु नित लेत ।
हरिको दायापात्र सो, स्वयं रखत हैं हेत ॥

जिमि घोडा अरु गाई पाले । राखत ताहि यत्नकर आले ॥
खान पानको फिकर सु करई । तिमि प्रभु नवम भक्ति चितधरई
सोई भक्त मोक्षसुख पावै । आत्मनिवेदन जग बिसरावै ॥
तर्कशास्त्रआदिकशुभ ग्रंथा । पढपढ नर जानत सुखपंथा ॥
पर भगवतकी भक्ति समाना । कबहुँ न होत ग्रंथ यह नाना ॥
परमपुरुष गुणसागर जोई । श्रीपति अन्तर्यामी सोई ॥
आत्मनिवेदन तिनको करई । तौ सब फल जगके अनुसरई ॥
हरिको आत्मनिवेदन कीना । मानहु सकल सुकृत करलीना ॥
गुणातीत सो है विज्ञानी । जिन बलिनृपकी टेक सुजानी ॥

दोहा-तिहिविधि सर्वस अर्पिकर, निर्भय हरिगुण गाय ।
अन्त एकदिन छूटिहै, अबहिं न समझ सुभाय ॥

अब कहुँ शरणप्रभाव अपारा । जाके किये छुटत संसारा ॥
देव पितर ऋषि भूतनकेरा । यह प्राणी है ऋणी घनेरा ॥
हवन श्राद्ध अध्ययन सुकीने । भूतबलीकर ऋण तजदीने ॥
परजो शुद्ध शरण हरि जाहीं । तिनपर रहत कोउ ऋण नाहीं ॥
नहिंतो ऋणकेविना चुकाये । व्यवहरके आधीन रहाये ॥
ऋणीसमान रहैं दिनराती । सुखपावत नहिं कवनिहुँ भाँती ॥
ताते हरिके युगपद जोई । शरणगहो दुखरहै नकोई ॥

जिहिं जब शरणगही सुखकारी। भये भक्त पावन व्रतधारी॥
फिर न सकत यमकाल निहारी। कहहि कि अबनहिं शक्तिहमारी॥

छन्द-सुर असुर नर गन्धर्व किन्नर नाग ऋषि आदिक जिते।
नहिं बचत कोई कालमुखते दृष्टि जग आवत तिते॥
अस कठिनकाल कराल जिहिलखिडरत निकटनआवही।
अस जान शरण न गहत जो नर सोइ पशू कहावही॥

दोहा-प्रेमलक्षणाभक्तिमें, रहत न देह सम्हार।
दशाविधिमें वर्णनकरी, सबहिनको अधिकार॥ १॥
इनमें एकहु भक्तिको, जिनलीनो हिय धारि।
सो वल्लभ हरिको भयो, कहा पुरुष क्या नारि॥ २॥
सन्त सेव्य अरु शिष्यता, अरु वात्सल्य शृँगार।
तोय भूमिं पव अनल नभ, भक्ति पंच रससार॥ ३॥
कृपासिंधु गुरुदेवके, चरणकमल मनलाय।
कहे भक्तिके अंग सब, सन्तनको सुखदाय॥ ४॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ग्रंथउजागर नवधाभक्ति वर्णनं नाम षट्चत्वारिंशोध्यायः॥ ४६॥

दोहा-विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमरि राम सुखदान।
हंसउपनिषद योगमत, अब कछु कहहुँ बखान॥ १॥
कह नृप विनु गुरुकी कृपा, मिलतनहीं सतपंथ।
कहो योगविधि करि कृपा, जो पातंजल ग्रंथ॥ २॥
कह मुनि सब वर्णन करहुँ, सुनो नृपति मनलाय।
आठ अंगहैं योगके, यम अरु नियम बताय॥ ३॥
आसन प्राणायाम अरु प्रत्याहार बखान।
धारण ध्यान समाधि यह, आठ अंग नृप जान॥४॥

प्रथम यमअंग।

छन्द-सत्य अहिंसा पुण्य क्षमा धृति रहै असंगा।
ब्रह्मचर्य भयहीन अचाहन थिर यम अंगा॥

द्वितीय नियमअंग।

शौच धर्म जप अतिथि कृष्ण गुरुसेव सँतोषा।
सौम्य तीर्थउपकार रहितछल नियम अदोषा॥

तृतीय आसनअंग।

आसनहैं चौरासि दोय परसिद्ध कहाये।
एक पद्म दृगशुद्ध और सिद्धासन गाये॥

चतुर्थ प्राणायाम अंग।

चौथे प्राणायाम छहौं चक्रको शोधै।
इकाधार धिष्ठान मणी पूरकको बोधै॥
चौथा अनहद चक्र पांचवां शुद्ध कहावे।
छठवाँ आज्ञा चक्र जपै 'रा' मंत्र सुहावे॥
षोडश पूरक माहिं जपै कुंभकमें चौंसठ।
रेचकमें बत्तीस हरी हरि हरि बोलै हठ॥
ज्यों ज्यों थिर हो वायु मंत्र त्यों देइ बढाई।
कुम्भक आठ प्रकार सुनो तुमसे कहुँ गाई॥
प्रथमैं सूरजभेदि वात पिंगल जो पूरे।
रेचै बायें रोक गातरुज सब करि दूरे॥
उभय उजाई पवनपूरि धारै उरमाहीं।
इड़ाते रेचनकरै रोग कफ धरलेजाहीं॥
तीसरि कारिणि शीत प्राणते वायू पीजिय।
शी शी कही मुखत्याग क्षुधा जीतै सुख लीजिय॥

चौथी शीतल जीह वदनते प्राण पुराई।
रोकि निवारै नाक वृद्धते हो तरुणाई॥
पंचम भास्त्रिक श्वास भरै त्यागै तत्काला।
रविशशि थिरहों।मिटैं त्रिविध रुज विघ्नबिशाला॥
छठी भ्रामरी अंग श्वासते वायु भराई।
रेचै ताही शब्दचपल मन तब ठहराई॥
छठईं मूर्च्छा सुमरि नामले सांस उसासा।
प्रभुहि मिलावै हरै पेटके दुखकर नासा॥
अठई केवल कही प्रथम जो मंत्र गनाई।
सो कुम्भकमें श्रेष्ठ मनुष्यनमें जिमि राई॥

पञ्चम प्रत्याहार अंग।

मन औरै विषयनमें जाई। घेरि ध्यानमें देहि लगाई॥
जिमि माता सुत रोकत धाई। तिमि रोकै मन जहँजहँ जाई॥
तब बनियेके भूत समाना। आपइ मनरुकजाय महाना॥
तऊ सजग रहु रिपुसम जानी। इहिविधि प्रत्याहार बखानी॥

षष्ठ धारणा अंग।

छठी धारणा तत्त्वनधारै। प्राणपवन गुरु हरिहि निहारै॥
कालज्ञान जो विविध प्रकारा। ताको निशिदिन करै विचारा॥
छाया पुरुष चक्रचखु जोई। दीपगन्ध ध्रुवभ्रू जु लखोई॥
भ्रूअदृष्ट नौदिनकर जापा। घ्राण अलख दिन सात प्रमापा॥
जप पाँच दिननको। एकरसन सुख बातकरनको॥
प्रश्न होत बहुतेरे। लिखे स्वरोदयमाहिं घनेरे॥

सप्तम ध्यानअंग।

चारिभाँतिको योगिन ध्याना। पदस्थ और पिण्डस्थ बखाना॥
रूपस्थ रूपअतीत कहाया। इनके भेद सुनो मुनिराया॥

जो प्रभुचरणकमल उर लेई। मुनि पादस्थ कहतहैं तेई॥
नखशिखलौं छबिलखिसुखदाई। पुनि चरणन मनदेइ लगाई॥
करत करत इहिविधि शुभध्याना। हरिको प्राप्त होत सुखदाना॥
अथवा कुम्भक प्रणवसमेता। जपकर पावतहै हरि हेता॥
जो पिण्डस्थ ध्यान मुनि गायो। पिण्डसरोज तहां शुचवायो॥
भ्रमरगुहा चढि युक्तिसमेता। त्रिवली खोजलहै करिहेता॥
तीसर है रूपस्थ सुध्याना। चितवै भ्रुकुटी ओर सुजाना॥
रविशशिउडुगणज्योतिविशाला। सो प्रकाश सबठौर उजाला॥

दोहा-चौथे रूपातीतमें, होत शून्यका ध्यान।
आपहु शून्यस्वरूपहो, भवरुज मिटत महान॥

अष्टम समाधिअंग।

अष्टम अंग समाधि बताई। जिहिमें आपा भान मिटाई॥
ध्याता ध्यान एक ह्वै जाई। मिलै तुरीमें जाय समाई॥
अब षटकर्म सुनो मनलाई। प्रथमै नेती कहौं सुहाई॥
डारि नाकते मुखमें लावै। सोई नेती कर्म कहावै॥
दूजी धोती पट अति झीना। उदर निगल पुनि बाहर कीना॥
तीजी वस्ति गुदाते नीरा। खैंचै पुनि त्यागै मतिधीरा॥
पंचम न्योली कर्म सु होई। नलेचलावन जाते होई॥
छठवीं त्राटक नैननकाहीं। जासों पलकलगावत नाहीं॥

दोहा-पांचभाँति मुद्रा कहौं, प्रथम खेचरी होय।
आनन करत निवास सो, बाढै रसन विलोय॥ १॥
दूजी भूचरिनाम है, नासामाहिं निवास।
प्राण अपान पृथक् पृथक्, तिन्हैं करै इक पास॥२॥

तीजी चाचरि नयनन माहीं। बसै दृष्टिकर नासाकाहीं॥
अग्रभाग देखत जो कोई। अचरज रूप लखै बहु सोई॥
चौथी गोचरि काननमाहीं। करत निवास शब्द बहु आहीं॥
पंचसको उन्मनी बखाना। दशमें द्वार थान जगजाना॥
करै वासनाको निर्मूला। पावै तहां सिद्धि सुखमूला॥
बन्धन चारप्रकार बताये। महाबन्ध अरु मूल सुहाये॥
जालन्धर अरु है उड्याना। मेटत सब व्याधी सुखदाना॥
योगक्रिया यह वरणि सुनाई। गुरुविन सधत नहीं मुनिराई॥
ताते नहिं कीन्हों विस्तारा। ऋद्धिसिद्धिदायक सुखसारा॥
चतुर ऋद्धि सिद्धिनके माहीं। भूलिहु परत कबहुँमुनिनाहीं॥

दोहा—अणिमासे लघु होय तनु, महिमावपुष विशाल।
लघिमा तूलसमान कर, गरिमा गिरिसम जाल॥१॥
पंचम प्रापति पायकर, चहै जहां फिरि आव।
छठी प्रकाम सुवपु धरै, सतईं ईशता पाव॥ २॥

वशीकरणसिधि अष्टम गाई। तिहिते सब जग वश ह्वै जाई॥
रामभजन विनु वादि बखानी। यह विचारत्यागहिं मुनि ज्ञानी
अब नौ निधिकर नाम बखानहुँ। महापद्म औ पद्म सुजानहु॥
कच्छप मकर सुकुन्द कहाई। शंख खर्व अरु नील सुहाई॥
नवमी कुन्द सकलजग जानी। विनुहरि भजे निरर्थक मानी॥
लोगरिझाये लाभ न कोई। नहिं परलोकसहायक होई॥
तिहिते हरिसुमिरण जगसारा। सत्य सत्य मन करहु विचारा॥
अब सुमिरणकी बात बखानो। सुनहु सकल सज्जन दे कानो॥

छन्द—पद्मासन वा करै सिद्ध आसन मनलाई।
मेरु दण्डसम करै चिबुक उरदेहि लगाई॥

नासापर कर दृष्टि लखै त्रिकुटीको ध्याना ।
श्वास श्वास प्रति लेइ रामको नाम सुहाना ॥
तब सो मिलै मिठास आश आगेको होई ।
अग्नि फूलकी सदृश प्रथम झारि आवत सोई ॥
कछुदिनमें लखिपरैदीपकी ज्योति सुहाई ।
पुनि तारनमें होय बिन्दुद्युति परत लखाई ॥
शनैःशनैः पुनि चन्द्र सूर्य बहु परत लखाई ।
सहस कमलपर परमातम पुनि दरश दिखाई ॥
बडी विरहकी ताप मिटै मनमोद महाई ।
झिलमिल झिलमिल जगत तेजमय भासतजाई ॥
जलनिधिभीतर गये सकलदिशि जलहि लखाई ।
तिमि आनँद चहुँ ओर कछुक वरणो नाहिंजाई ॥
दशविधि अनहदनाद तहां बाजत बहुभाँती ।
प्रथम भ्रमर गुंजारकरै पुलकित वपुपांती ॥
दूसरहै परनाद सुनै चितआलस आवै ।
तीसरहै धुनि शंख प्रेमसुनि हिय उमडावै ॥
चौथीहै धुनि घंट शीश घूमत जिहि कारन ।
पंचमहै धुनि ताल अमी वरषावत सारन ॥
छठी मुरलिकानाद कंठतर परमसुहाई ।
सप्तम भेरीनाद सुनत छबि बाढत जाई ॥
अन्तर्यामी होत वातगति दूर सु जानै ।
अष्टम नाद मृदंग सुनै गतिकाल पिछानै ॥
नवम नफीरीनाद अगोचर सुन्तै होई ।
चाहै जहँ चलिजाय ताहि नहिं देखै कोई ॥

होय देहकी दशा सूक्ष्म जिहि कोउ न जानै।
दशमों केहरिनाद सुनै अहमिति नहिं मानै॥
सकल ग्रंथिं कटिजायँ रूप ब्रह्महिको होई।
सत् चित् आनँदरूप होय सब कामहि खोई॥
जिमि सागरके गये सकल जल सागर होई।
जिमि अग्नीसँग जरे वस्तु सब अग्निहि जोई॥
तिमि ध्यानी होजाय ध्यान एकान्त बखाना।
अल्प अशन अनुरक्त शान्तरसमें मनमाना॥
निश्चल कर सब अंग मूंद नवद्वारनको नित।
सुनै सुरतते शब्द भाँति बहु योगमार्ग मित॥
जो चाहै यह प्रेम ध्यान यहि भाँति लगावै।
पूछलेइ गुरुपास भेद तब याको पावै॥
करे प्रेम मन भूरि इष्टको जपै सदाहीं॥
सदा सर्वगत ईश जानकै भेद मिटाहीं।
सुघर सुलोचन श्याम रामको इष्ट सुहावन॥
ब्रह्मलोक सुख नहीं तासुसम गुणयुत पावन॥
जौन भावना होय ताहि विधि हरिको पावै।
होय सन्तप्रभु कृपायोग यह भेद बतावै॥
अल्पइष्टसे अल्पभूरिसे अतिफल होई।
अभिलाषी के निकटप्रेम विन मिलत न सोई॥
निगमागम यह कहत होइहो यहिविधि पारा।
तासे करनी करो अहै करनी जगसारा।
कर्तब दे ऋधि सिद्धि कर्मविन वृद्धि नाहीं।
ताते करनी करो मित्र कारज बनजाहीं॥

जैसे भोजन विना तृप्ति पावत कोइ नाहीं ।
तैसे करनी विना सिद्धिनिधि दूर रहाहीं ॥
विन सुमिरे श्रीराम मिलत नहिं कहुँ विश्रामा ।
ताते सुमिरहु मिश्र नित्य ममप्रभु सुखधामा ॥
विन हरि सुमिरण किये सुःखकैसे कहुँ पावे ।
विन मरदे कहुं हरदिजरदि ओछी नहिं आवे ॥
विनुसुमिरे हरिनाम कौन जानै परभावा ।
जिमि माणिकको मोल विना परखे को पावा ॥
कुटिल कृतघ्नी जौन ताहि जनि तत्त्व सुनाई ।
अन्धा हीरा दिये दूरडारत है भाई ॥
जो जन हों गुरुभक्त तिन्हैं यह तत्त्व सुनावो ।
मानै करिकै प्रेम आपहू मनसुख पावो ॥
वेदशास्त्रको मर्म तुम्हैं सब दियो सुनाई ।
अब सबही को तत्त्व कहा सुनिये मनलाई ॥

दोहा-ऋक् यजु साम अथर्व यह, चार वेद हैं तात ।
शिक्षा ज्योतिष व्याकरण, कल्प निरुक्तविख्यात॥१॥
और छन्दगति अंग यह, छः जानत विद्वान ।
ऋग्कर जो उपवेद तिहि, आयुर्वेद बखान॥२॥
धनुर्वेद उपयजुकों, जामें युद्धप्रकार ।
सामकेर गन्धर्वहे, जहँ संगीत अपार ॥ ३ ॥
शिल्प अथर्वणकर कह्यो, सबविधिजगहितकारि ।
अपर शास्त्र षट् ऋषिनकृत, सुनहुकहतनिरधारि॥४॥

मीमांसा जो शास्त्र बखाना । जैमिनि तिहिकर्त्ताजगजाना ॥
तिहिमें कर्म धर्म अरु यागा । स्वर्गादिक फलकृतअनुरागा ॥

वैशेषिक कणाद निर्मायो । ज्ञान पदार्थ बहुत विधि गायो ॥
न्यायशास्त्र गौतम ऋषि भाखो । जहँ षोडश पदार्थप्रणराखो ॥
योगशास्त्र पातंजलि केरो । विषयनिरोध कह्यो बहुतेरो ॥
सांख्यशास्त्रकृतकपिल मुनीशा । प्रकृतिपुरुषदुखत्रिविधनिरीशा ॥
छठाशास्त्र वेदान्त बखाना । कर्त्ता व्यास सकल जगजाना ॥
ब्रह्म जीव जहँ ऐक्य लखायो । मोक्षकरन सद्ग्रंथन गायो ॥
सर्ग और प्रतिसर्ग सुवंशा । मन्वन्तर वर्णन अवतंशा ॥
वंशानुचरित भक्ति विस्तारा । यह पुराणके विषय विचारा ॥
निगमागम पुराण इतिहासा । स्मृतिशास्त्रसब करहिंप्रकासा ॥
सबको सार ज्ञान भगवाना । सो जानो मुनिवर्य सुजाना ॥

दोहा—एकनगरके मार्ग बहु, सरलकुटिल जिमिहोय ।
अन्त प्राप्ती नगर तिहि, तिमिशास्त्रन गतिजोय ॥ १ ॥
वेदशास्त्रअनुसार जो, करै पुराण विचार ।
तौ न होय सन्देह कछु, यह जानो निर्धार ॥ २ ॥

तत्त्वमसि उच्चारत सामा । ब्रह्म जीव प्रकृति विश्रामा ॥
परमानंद कहत ऋग्वेदा । शिवमय स्वयमानंद अभेदा ॥
ब्रह्मास्मि यजु कहत पुकारी । सबमें चेतनहै अविकारी ॥
अयमात्मा ब्रह्म आथर्वन । भाषतहैं सबविधिअनुशासन ॥
सकल वाक्यको अर्थ यही है । ब्रह्मजीव माया असहीहै ॥
चौहट हाटसमान सुवेदा । विविध भाँतिके कर्मविभेदा ॥
जो जिहि रुचै वस्तु सो लेई । सन्तभक्तिलह हरिपद भेई ॥
निगमागम गिरिसदृश बखाने । विविधभाँति धातुनकी खाने ॥
जो जिहि रुचै लेइ हितमानी । सन्तभक्ति मणि चाहत स्वामी ॥
वेद विपिनबूटी शुभ वानी । हरिजन गहत सदा सुखमानी ॥

खरी जरी राखत निजपासा । खोटी गहत गँवार निरासा ॥
श्रीगुरुचरणकमल सुखदाई । हियधरि वरणी कथा सुहाई ॥

छन्द-कथा सुन्दर कहहिं गावहिं भक्तिहरिकी पावहीं ।
कल्याणकारी पापहारी चरित हरिके गावहीं ॥
जो कामनाकर श्रवणकरिहैं कामनाहित धावहीं ।
ते पाय सकल अभीष्ट अन्तिम रामधाम सिधावहीं ॥
हरिचरित गावत कहत सुन्तहि विघ्न जो कोई करैं ।
होत रोग जलंधरादिक उदरमें नित दुखभरैं ॥
विश्रामसागर ग्रंथके जो तीन अयनन चितधरैं ।
दारुण अविद्या क्लेश तिनके सकल श्रीरघुपति हरैं ॥

दोहा-हरिप्रेरित यहिग्रंथमें, जो कछु कीन बखान ।
सो फुर सद्ग्रन्थन लिखो,सो सबको परमान ॥ १ ॥
विद्वज्जनको मर्मश्रम, जानतहैं मतिमान ।
कबहूं पीर प्रसूतकी, बाँझ सकै नहिं जान ॥ २ ॥
दुर्जन देखत दोप नित, गुण नहिं गहत विशाल ।
जिमि पिपीलिका महल बड़, खोजतछिद्र उताल॥३॥
देवगिरा वर्णी विपुल, वेदव्यास इतिहास ।
सो मैं भाषाकर कह्यो, पावैं सन्त हुलास ॥ ४ ॥
जयति सच्चिदानंद घन, रघुनायक घनश्याम ।
निजजनलखि अपनायके, पूरणकीजै काम॥५॥
इतिहासायनखण्ड यह, कह्यो यथामति गाय ।
कृष्णायन आगे कथा, सो पढिये मनलाय॥६॥

भजन करहु भगवानको, यही जगतमें सार।
हरिसुमिरेसे बहुतजन, भे भवसागरपार॥७॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर विविधशास्त्रआख्यानवर्णनो नाम सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः॥ ४७॥
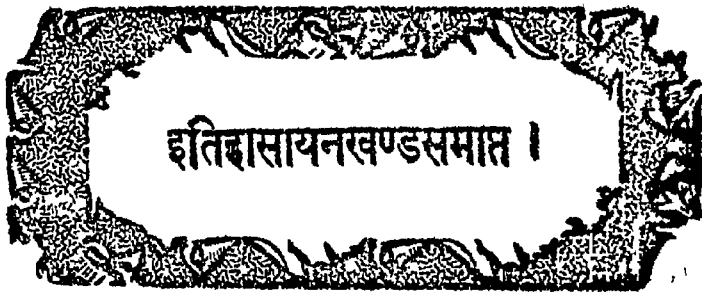
श्रीगणेशाय नमः ॥

ॐनमोभगवते वासुदेवाय ॥

अथ

श्रीविश्रामसागर

कृष्णायनखण्डः प्रारभ्यते ।

छन्द ।

सदा सच्चिदानंदरूपं परेशं । नमामि जगद्वन्द्य गोविंदवेषं ॥
नमामि गणेशं महेशं सुरेशं । नमामि गुरुं ज्ञानगम्यं रमेशं ॥
नमामिमुदा राधिकानाथश्यामं । सदा भक्त आनंदकंदाभिरामं ॥
नमामि अजं निर्गुणंगुणनिधानं । नमामिसदाव्यक्तमव्यक्तमानं ॥
नमामि जगत्कार्यअवतारधारी । नमामि नृसिंहादिरूपं विहारी ॥
नमामि सदा भक्तरक्षाविधानं । नमामि सदा सन्तआनंददानं ॥
नमामि करनकाज कल्याणसारं। नमामि सदा भक्तहृदय विहारं॥
नमामि विविधरूपधारीविहारी।नमामीशब्रजचंदकेशव मुरारी ॥
सदा मिश्रकीयहविनयहाथजोरे । मनोरथकरोपूर्ण भगवन्त मोरे॥

दोहा—कृष्णचरित वर्णन करहुँ, सद्ग्रन्थन अनुसार ।
अपनी कृपाकटाक्षसे, करिये अंगीकार ॥

रामभक्तिमहिमा अतिभारी । मुनिशौनक अस गिरा उचारी ॥
वचन अमीसमनाथ तुम्हारे । तृप्तहोतनाहिं श्रवण हमारे ॥
ताते अब करि कृपा महानी । कृष्णचरित कछु कहो बखानी॥
सुनि सुमंत बोले हरषाई । प्रश्न तुम्हारी सहज सुखदाई ॥
सुनहु कृष्णके चरित सुहाये । जो शुकदेव परीक्षित गाये ॥
कहिहौं सो संक्षेप सुनाई । सावधान सुनु मुनि मनलाई ॥
द्वापर कृष्ण भयो अवतारा । कीन्हें चारित पुनीत अपारा ॥

कलि आगमन जानयदुनाथा। जाय लोकनिज कियो सनाथा॥
तब पाण्डव मन भये दुखारी। राज परीक्षितको दिय भारी॥

दोहा–आप हिमालय गलगये, रहे कृष्ण विनु नाहिं॥
राजपरीक्षितको भयो, सुखयुत दिवस सिराहिं॥

विजयहेतु कटकाइ बनाई। इकदिन गये परीक्षितराई॥
तहँ इक वृषभ और इक गाई। पीडित शूद्र लखी नृपराई॥
राजचिह्न सब अंगन धारी। गाय बैलको ताडत भारी॥
यह लखि भूपनिकट चलिगयऊ। धेनु वृषभते बूझतभयऊ॥
भागे काहे जात बताओ। ताडै कौन मोहिं समुझाओ॥
वृषभ कही मैं जानतनाहीं। तव कह धेनु वचन नृपपाहीं॥
मैंहूँ भूमि धर्म यह राजा। कलिके भयभाजत तजिलाजा॥
कलिमलमलिनभये सब प्रानी। वर्ण धर्म आश्रमकी हानी॥
द्विज नाहिं देत सुमारग पाऊ। बेंचत वेद धर्म दुहिलाऊ॥

दोहा–वेदमार्गतज मन यथा, देत कुमारग पंथ।
तीर्थ श्राद्ध अवतार हरि, निन्दत रच २ ग्रंथ॥

क्षत्रिय दीन धर्म निज त्यागी। विप्रविनिन्दक कलिमलभागी॥
वैश्य मधुरमुख हिये कठोरे। बोलत बहुत सुकरतब थोरे॥
शूद्र त्याग निजधर्म सुहावन। अशुभजीविका करत उच्चमन॥
जो शुभतीर्थ धर्मस्थाना। तहँ कलिकालरह्यो करि थाना॥
सुरसरिसरनमाहिं अब काई। दीखतफले असम अमराई॥
बार बार पुनि परै दुकाला। होत अन्नविन प्रजा विहाला॥
लघुजीवन जे पुण्य कराहीं। पापी जियत सदा अधिकाहीं॥
धनी कृपण निर्धन नर दानी। याचक बहुत दायकन हानी॥

दोहा–भूमि बीजविन स्वादविन, अन्न होय कलिकाल।
विद्या लघु अरु वाद बहु, शास्त्रअर्थके जाल॥

नृपन रोष अति प्रजा दुखारी । चिन्तन नित अनिष्ट नरनारी ॥
नृपअधीन सब कर्म गुसांई । सो देहैं महाराज भुलाई ॥
विनुअघ क्रोध कपटयुत प्रीती । मातपितागुरुद्रोह कुनीती ॥
विधवाब्याह करहिं कलिमाहीं । यमके थलकर पाप बसाहीं ॥
रहहिं सुहागनि नारि दुखारी । विधवाकरैं शृँगार सँवारी ॥
क्रूरसचिव मतिबिन ठकुराई । तियअधीन नर होइहि राई ॥
जिहिके धन सोई कुलवाना । सोई साधु सुधन्य बखाना ॥
सो सुजाति सो सबविधि ज्ञानी । धनविन पुरुष निरर्थक जानी ॥
उपदेशक बहु जँहतहँ धावहिं । व्याख्यान सुनिये गुहरावहिं ॥
वक्ता अधिक न श्रोता कोई । गुरुशिष स्वारथरत मतिबोई ॥
उपदेशक आचारण मलीना । किमिसिखवहिंऔरनमतिहीना ॥
तस्कर चतुर भये वटपारी । सबकहँ जहँतहँनारिपियारी ॥
धनिक यतीजन गृही भिखारी । विप्र कृषीबल लघुतप धारी ॥
भये साधु निर्बल अरु कामी । विप्रदासभे लघुजनस्वामी ॥
मृण्मय पात्र केश आभूषन । परिकरवसनलुऊनबिछावन ॥
भक्ष अभक्ष कराहिं सब भक्षन । परधनपचनकहाहिंसिद्धजन ॥
लघुजीवन अरु आशा भारी । सतभाषीको कहहिं लवारी ॥
निजनिर्मित रच पंथ अनेका । विरचहिंत्यागहिंविरतिविवेका ॥
जिनसद्ग्रन्थनमें हरिनामा । धर्मकथा दायक विश्रामा ॥
ते त्यागहिं खल वैर बढाई । संकर जाति होहिं नृपराई ॥
मात पिता सुत तबलों मानहिं । जबलगनारिननिजगृहआनहिं ॥

दोहा—अन्तिम कलियुग पायकर, वर्ष तीसकी आय ।
आठवर्षकी नारिमें, उपजे सन्तति राय ॥

करहिं कुसंग मनुज दिनराती । तुलसी हरिपदरति न सुहाती ॥
तिय परपतिरतनिजपतिछारी । गालबजावत पंडित भारी ॥

हरि हर वेद जनेऊ गंगा। कारि करिशपथकरहिंव्रतभंगा॥
निजकुटुम्ब कुल त्यागिविरागी। करहिं ईर्षा कलिमल भागी॥
वेषचिह्न बकबाद घनेरी। भक्तिभजनकी रेख नवेरी॥
गांजा चुरट तमाल उड़ावैं। चरस पियैं ते साधु कहावैं॥
जो हरि भजैं करत तिहि हांसी। असकलियुगमहिमापरकासी॥
एकवृषभसे खेत जुतावहिं। श्रद्धाको कहुँ नाम न पावहिं॥
विद्या कृषी वणिज व्यापारा। श्रम अतिहोय सुलामअसारा॥
तरुवर झाऊके सम ह्वैहैं। सुरभी अजासदृश ह्वै जैहैं॥
वर्षा लघु उपजै नाहिं धाना। कलिके दोष गनै को नाना॥

दोहा—गुणहू कलिमें एक अति, मानस होत न पाप।
मानस पुण्य फलै अधिक, करै सो भोगै आप॥

पछितायेसे वाचिक पापा। मिटै न्हाय सरयू संतापा॥
जो शरीरकृत पाप अनेका। सो बिनभोगे जाहिं न एका॥
सतयुगमाहिं पाप कर कोई। भरै देशभर आपद सोई॥
त्रेताकिये ग्रामभर भोगा। द्वापरमाहिं कुटुमभर रोगा॥
कलिमें करै भरै सोइ प्रानी। यह महिमा यहिमें जगजानी॥
रामभक्त नर कलियुगमाहीं। तनुधरि जग हरिभक्ति कराहीं॥
रामभक्ति करिकरिनारी नर। तरिहहिं अति लाघवभवसागर॥
काल स्वभाव कर्म गुण जोई। भक्तिसमीप जात नहिं कोई॥
सतयुग ध्यान यज्ञ युग दूजे। द्वापर जोगति हरिपदपूजे॥
सो गति कलि प्रभुगुणगणगाये। पावहिं नर हरिनाम सुनाये॥
कलिमें रामनाम परधाना। निगमागम हरिजनन बखाना॥
नाम सिद्ध फलसाधन नामा। जो नभजै तिहिकोविधिवामा॥
चारिचरण वृष कलियक दाना। करहिं होय तिनके कल्याना॥

जब निर्मूल धर्म ह्वै जाई। तब पुनि हरि अवतरिहैं आई॥
कलि कीन्हीं अस दशा हमारी। सुननृपक्रोधकियो अतिभारी॥
कलि करिहै मम प्रजा दुखारी। ताते अबहिं डारिहौं मारी॥
दोहा-सुनत वचन भयभीत कलि, परो चरणमें जाय।
अस्तुति करि कह करहुँ सोइ, जो आयसु दें राय॥
कह राजा जबतक मैं राजा। तबतक तुम्हरो अमल न साजा॥
कह कलि तबतक मोर निवासा। होय कटकयुत कहां निरासा॥
गणिका मद तस्कर अरु द्यूता। और कनक महँ बसहु अकूता॥
सुनि नृपमुकुट कियो अस्थाना। चलो भूपमति भ्रमी अयाना॥
तृषितभयो शृङ्गीऋषि जहँवाँ। तपकारिरहे नृपति गो तहँवाँ॥
ध्यानदेख नृप मनहिं विचारा। हमें देख ऋषि ध्यान पसारा॥
मृतकसर्प धनुकोटि उठाई। कंठ माहिं ऋषि डारो जाई॥
समाचार सुन ऋषिसुत आयो। सर्प देख अस वचन सुनायो॥
पितुगलमाहिं सर्प जिन लाई। सतयें दिन तिहि तक्षक खाई॥
उर्गकाढि पुनि पितहि जगायो। नृपको सब वृत्तान्त सुनायो॥
दोहा-सुनत शाप पितु दुखितह्वै, सुतको कीन धिकार।
धर्मनृपतिको दुःख अस, दीन्हों बिना विचार॥
जिहिके राज महासुख पायो। ताको ऐसो दण्ड करायो॥
चूकहोय यदि नृपते कोई। ऐसो शाप योग्य नहिं सोई॥
असकहिऋषिनिजशिष्यबुलाये। समाचार नृपपहँ पहुँचाये॥
मुकुट उतार धरो जब गेहा। भयो नृपतिमन अति संदेहा॥
आज कियो मैं निन्दित कर्मा। कौनभाँति अब रहिहै धर्मा॥
विधि याको फल दे मुहिं अबहीं। तो भलि बात होय यह सबहीं॥
तबहीं शिष्य पहूंचे जाई। राजाको सब बात सुनाई॥

शाप भयो तुमको नृपज्ञानी। सजगहोहुअबविधिगतिजानी॥
सुर नर मुनि अग जग जे प्रानी। होनहार नहिं काहु मिटानी॥
कनककशिपु दशकंधर वीरा। जियतहोत तनु सही सुपीरा॥
कालपाय ते गये बिलाई। औरो किते भये नृपराई॥
गरुड़ कपोत बचावन कारण। अजगरके मुखमें किय धारण॥
होनहार भलि होनी होई। तौ तिहि मारसकै नहिं कोई॥

दोहा-कनककशिपुकी प्रबलता, वाली बाहुविशाल।
जनप्रह्लाद सुकंठके, कर न सके कछु शाल॥

चन्द्रहासके मारनकारन। मंत्री कीन्हें यत्न हजारन॥
करिनसके कछु सो प्रभु जानत। अम्बरीषको कौन न मानत॥
दुर्वासा तिनपर रिस ठाना। लह्यो अन्तमें अति अपमाना॥
सचिव सुधन्वै चहत जराई। शंख लिखितफल आपहि पाई॥
ध्रुवको सुरुचि विपिन पठवायो। तिन प्रभुकृपा अचलपद पायो॥
पाण्डुसुतनको कितो सतायो। दुर्योधन कछु करन न पायो॥
ब्रह्म अस्त्र तुमहित जिहि प्रेरा। द्रोणपुत्र कीन्हों क्या तेरा॥
जबजिहि मृत्यु निकट चलिआई। दाम सर्प ताको ह्वै जाई॥
जैसी होनहार जिहि होई। बिनाप्रयत्न पाइहै सोई॥
सन्तकृपासे सो मिटिजाई। नातरु कोटिन करो उपाई॥
अस कहि शिषआश्रमन सिधाये। नृपतितुरत निजसुवन बुलाये॥

दोहा-सुतको राज्य देइ नृप, आयो गंगातीर।
तहां पराशर व्यास बहु, भई मुनिनकी भीर॥

निजनिजमति सब कहहिं उपाई। दानपुण्य कीजे नृपराई॥
तिहि अवसर किय वेश दिगम्बर। परमहंस शुकदेव विज्ञवर॥
आये नृपसमीपमें जबहीं। ज्ञानवृद्ध ठाढे भे सबहीं॥

करि सन्मान दियो नृप आसन । मानो जन्मधन्य पुनि आपन॥
हाथजोरि पुनि विनय बखाना । कहो उपाय होहि कल्याना ॥
कह मुनि नृप मन शोच नकीजै । नृपखट्वांगबात मन दीजै ॥
तिन दोघरीमाहिं गतिपाई । तोको सात दिवस नृपराई ॥
हरिके चरित सुधा किय पाना । तरिजैहो तुम नृपति सुजाना ॥
असकहि कथा भागवत केरी । कहनलगे करि प्रीति घनेरी ॥
प्रथम कामना कछुक दिखाई । पुनि प्रभुचरित कहे मनलाई ॥

दोहा-जगउत्पति स्थिति प्रलय, ब्रह्मनिरूपण ज्ञान ।
भक्तियोग वैराग्य यह, प्रथमैं किये बखान ॥

पुनि दूजे कछु योग सुनाई । विधि नारदकी कथा सुहाई ॥
पुनि हरिके चौबिस अवतारा । यह स्कंध दुजे विस्तारा ॥
पुनि तीजेकी कथा बखानी । उद्धवविदुर मिलन पहिचानी॥
कहि मैत्रेय विदुरसन ज्ञाना । पुनि ब्रह्माण्डकथा विधिनाना॥
पुनि उत्पति जग यज्ञवराहू । मारेहु कनक विलोचन काहू ॥
पुनि ब्रह्मा वाणी जिमि जाई । सो सब कथा कही मुनि गाई॥
स्वायंभुवमनु अरु शतरूपा । इनकी भईं त्रैसुता अनूपा ॥
पुनिकर्दमकी कथा बखानी । नवकन्यनते सृष्टि सुहानी ॥
वरणो बहुरि कपिल जनत्राता । सांख्यज्ञान उपदेशेउ माता ॥
पुनि चतुर्थ जब वर्णन लागे । सुनत परीक्षितके दुख भागे ॥
वर्णेउ कथा सती तनुत्यागा । पुनि ध्रुवरामचरण अनुरागा ॥
पृथुप्राचीनबर्हिकर वर्णन । नारदकर उपदेश सुखद मन॥
पंचम प्रियव्रत चरित सुहाये । प्रेमसहित शुकदेव सुनाये ॥
पुनि आख्यान ऋषभकर गायो । भरत मृगीरख जिमिदुखपायो॥
पुनिजड़भरत रहूगण ज्ञाना । कह्यो नृपति भा नारि अयाना॥

दोहा–सप्तद्वीप नौखण्डकी, उत्पति जलधि अधार।
ज्योतिषचक्र पताल पुनि, कह्यो सबन विस्तार॥
छठयें अजामील इतिहासा। धर्मदूत सम्वाद प्रकासा॥
सहस इकादश सुत उपजाये। जैसे दक्षचरितसो गाये॥
नारद तिनहिं सिखायो ज्ञाना। भये मुक्त जिमि भज भगवाना॥
पुनि तिन साठ सुता उपजाई। सृष्टि भई तिनसे अधिकाई॥
कश्यपकी जिमि सन्तति भारी। सुरगुरु मघवा वैर विचारी॥
विश्वरूपको जिमि हरि वाहन। वधकीन्हों सो कह्यो सुहावन॥
इन्द्रवृत्रको युद्ध सुनायो। नहुष शक्र पद जैसे पायो॥
चित्रकेतु कर चरित बखाना। पुनिउनचास पवन जगजाना॥
सप्तममें प्रह्लाद चरित्रा। वर्णाश्रमके धर्म पवित्रा॥
मन्वन्तरके चरित अपारा। सो सब अष्टममें विस्तारा॥
गजनारदकी कथा सुहाई। कथा कूर्मअवतार सुनाई॥
सागर मथन रत्न जिमि पाये। पुनि देवासुर समर सुनाये॥
बलि वामनको चरित सुहाना। नवममाहिं रविवंश बखाना॥
च्यवन शंकुकी कथा पुरानी। अम्बरीषकी कीर्त्ति बखानी॥
सगर भगीरथ चरित सुहाये। रामचरित वरणे मनभाये॥
निमिप्रसंग जगनिर्णय कीने। परशुरामके चरित नवीने॥
दोहा–चन्द्रसूर्यके अंशकी, मिलन बखानी प्रीति।
इलावृद्धसंयोग पुनि, शंतनुकथा सुरीति॥
वरणो बहुरि ययाती भोगा। पाछेते वरणो तिहि योगा॥
पुनि यदुवंश चरित विस्तारी। जासें प्रगट भये बनवारी॥
दशयें कृष्णचन्द्र अवतारा। वरणो बकी शकट निस्तारा॥
तृणावर्त्त यमलार्जुन वीरा। वत्स बकासुर जे रणधीरा॥

तिनकीगति औ निधनबखाना। कंस निधनकरचरितसुहाना ॥
विद्यापाय गुरुहि सन्तोषा। वरणो जरासंधकर रोषा ॥
रुक्मिणिहरण द्वारका गमना। सबही चरित दशमकरवरना ॥
एकादशमें ज्ञान प्रकाशा। शापविवश यदुकुलकरनाशा ॥
हरिउद्धवकर ज्ञान सुहावन। नवयोगेश्वर जनक चरित पन॥
दत्तात्रेय गुरू जिमि कीन्हें। सो सब कहे नेम व्रत लीन्हें ॥
भये कृष्ण जिमि अन्तर्धाना। निर्मल पावन चरित बखाना ॥
द्वादशमें सबयुगके लक्षण। वर्णन किये देवऋषितच्छन ॥

दोहा-पुनि जिमि सम्भलग्राममें, सुर मुनि सुखदातार।
कह्यो होय कलि अन्त जिमि, प्रभु कल्की अवतार॥

दलि मलेक्ष सतयुग विस्तारैं। कुमति सबनकी प्रभु निरवारैं॥
तीन भाँति उत्पत्ति सुनाई। चारिभाँति परलय ऋषिगाई ॥
कहिसब पुनि शुकदेव सिधारे। नृपकहँ तक्षक डस्यो विषारे ॥
चढ विमान नृप गे सुरलोका। जयध्वनि छायरही त्रैलोका ॥
पुनि जन्मेजय यज्ञ करायो। शौनकने सो सकल सुनायो ॥
वेदनकी शाखा पुनि गाई। मार्कण्ड ऋषि प्रलय दिखाई॥
कथा बारहों रविकी गाई। सबसंक्षित भागवत आई ॥
नेमपूरवक पढ जे प्रानी। अवशि होय दुखदारिदहानी॥

दोहा-अमल कमल श्रीगुरुचरण, ध्यान हियेमें आन।
सकल भागवतकेर मत, कीन्हों मिश्र बखान ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर कृष्णायन
प्रसंगवर्णनोनाम प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

शौनक वचन कहत शिरनाई। पूर्ण भागवत प्रभु तुम गाई ॥
अब अभिलाष एक मन भारी। कृष्णचरित कहिये विस्तारी ॥

सो चरित्र प्रथमार्ध सुनावो । प्रेमसहित विस्तृतकरि गावो ॥
जहँ तहँ इतिहासायनमाहीं । उत्तरार्द्धके चरित लखाहीं ॥
बालचरित नहिं कहे बखानी । सो कहिये करि कृपा महानी ॥
किहिकारण प्रगटे यदुराई । मर्योकंसकिमि जगदुखदाई ॥
रुक्मिणिमंगल बहुरि सुनावो । भा विवाह किहिभाँति बतावो ॥
औरहु चरित पवित्र अनूपा । कहो नाथ निजमति अनुरूपा ॥
यह सुनि बोले सूत सुवानी । सुनो आदिसे कहत बखानी ॥

दोहा—व्यास गिरा गणपति सिया, राम सुमिरि सुखदान ।
भारतमतसे कंसकी, उत्पति कहत बखान ॥

नगर एक मधुपुरी सुहावन । कालिंदीतट अतिमनभावन ॥
उग्रसेन तहँ बसै नरेशा । प्रियासहित नित जपैं रमेशा ॥
पवनरेख रानीको नामा । सुमिरै नित पुरुषोत्तम रामा ॥
उग्रसेन के देवक भाई । तिनकी नारि परम सुखदाई ॥
इकदिन सब शृंगार सजाई । उग्रसेनकी तिया सुहाई ॥
सखिनसंग उपवनहिं सिधारी । देखनलगी सुघर फुलवारी ॥
तिहि अवसर इक दानव आई । उग्रसेन वपु करि अन्याई ॥
रतिमाँगी रानी अस कहेऊ । दिनरतिकिये पुण्य नहिं रहेऊ ॥
तिन रानीकी बात न मानी । बरबस भोग कीन अभिमानी ॥
लखरति तिया क्रुद्धभइ भारी । बोली तू को रे छलकारी ॥
रे खल छल मोते तैं कीन्हा । देहौं शाप सत्य मम लीन्हा ॥
तब द्रुमलिक निजनाम सुनाई । पूर्वजन्मकी कथा बताई ॥
कालनेमि सतयुग मम नामा । लरो विष्णुसँग पूरे कामा ॥
कोखशून्यलखि मैं रतिठाना । शाप न देहु देहुँ वरदाना ॥

दोहा—रानी मेरे अंशसे, ह्वैहै सुवन तुम्हार ।
महाबली साहसविपुल, जितै अनेक भुवार ॥

असुर अनेक सेवि हैं ताही। मरिहै विष्णुहाथ सुखपाही॥
सुनि रानी मनमें सुखपाई। मिलीआय सखियनसों धाई॥
कह्योसखिन किमि वसनमलीने। कहरानी इक कपि दुखदीने॥
आई भागिचलो गृहमाहीं। चलीं लिवाय सखी सबताहीं॥
यहिविधि तिहि दशमासबिताये। माघशुक्ल कुज तेरस भाये॥
आधीरात पुत्र जन्माई। भये उपद्रव तब अधिकाई॥
उग्रसेन गृह बजी बधाई। कंस नाम धर द्रव्य लुटाई॥
भयो कुमार कंस जब मुनिवर। बालन संग उपद्रव नितकर॥
काहूको जलमाहिं डुबावे। काहुक मार भाग गृहआवे॥
पितावचन कछु मनहिं न लायो। इकदिन मगधदेश पर धायो॥
जरासंधसे कीन लराई। सबविधिताको दीन्ह हराई॥

सोरठा-अस्ति प्राप्ती नाम, ताकी दो कन्या सुभग।
लैआयो निजधाम, कीन्हों व्याह प्रमोदमन॥

इकदिन कह सो पितुके पाहीं। करिहौ तुमहीं राज्यसदाहीं॥
अस कहि पिताहिबंदि इव लाई। लागो राज्य करन सुखपाई॥
बहुतक असुर सहाय बुलाई। समरप्रवीण राखि सेवकाई॥
तिनसँग बहुतक नृपन हराई। विजयरूप दुंदुभी बजाई॥
आगिलकथा सुनहु मनलाई। देवकसुता देवकी गाई॥
ताको व्याह करनके कारन। वर खोजे नृप मिले न भावन॥
शूरसेन सुत श्रीवसुदेऊ। सबहीं कही बाल इहिदेऊ॥
तब राजा करि अधिक उछाहा। तासे किय वसुदेव विवाहा॥
हय गय स्यन्दन बहुतक दीन्हें। दानमानपरिपूरण कीन्हें॥

दोहा-तब चढाय रथ देवकी, आप भयो रथवान।
पहुँचावन अतिहेतुसों, चलो सहित अभिमान॥

सोरठा–तिहिक्षण गिराविशाल, होतभई आकाशते।
होय कंसको काल, देवकिको सुत आठमो॥
सुनिनृपउतरिखैंचकचलीन्हा। मारनहेत खड्ग कर कीन्हा॥
तब वसुदेव विनय उच्चारी। प्रमदावधे पापहै भारी॥
ताते छाँडि याहि प्रभु दीजे। जान बूझकर पाप न कीजे॥
कही कंस नहिं याहि तजैहों। कन्या और ब्याहि तुहिं देहों॥
वृक्ष फलै जो विषफल लागे। ताहि बनै पहलेही त्यागे॥
कह वसुदेव शत्रुसुतआहीं। इन तो कियो पाप कछु नाहीं॥
याके सुत राजा जो होहीं। अवशिलाय मैं देहौं तोहीं॥
सुनिअसविनयत्यागिनृपबाला। आये द्वौ गृह शोचविशाला॥
जन्मो प्रथम बाल जब आई। ले वसुदेव कंस दिय जाई॥
बालक देख कंस हँसि दीन्हों। इनतो कछु अपराधनकीन्हों॥
यह बालक दीजे घर जाई। दीजो मुझे आठवां लाई॥
ले वसुदेव गये घर जबहीं। आये तहँ नारद मुनितबहीं॥
ताके शीघ्रनिधनहित नारद। कहनलगे विज्ञान विशारद॥
राजन् तुम यह भलनहिंकीन्हों। जो बालकहि फेरघर दीन्हों॥
को जानै अष्टम को होई। प्रथमहि यदि आयो हो सोई॥
आठ लकीर खैंच दिखराई। गिन्तीमें सब आठों आई॥
अस कहि गये देवऋषि जबहीं। कंस मँगायो बालक तबहीं॥
ताको पटकशिलापर मारा। यहिविधि षट बालक संहारा॥
दोहा–तब वसुदेवरु देवकी, दुखयुत विनय सुनाय।
हे हरि अब कोऊ नहीं, तुमबिन और सहाय॥
इत अति देख धर्मकी हानी। भई सभीत धरा अकुलानी॥
धरि निजरूप गई विधिलोका। कह्यो करहु प्रभु मोहिं विशोका॥

तब विरंचि शिव हरिके पाहीं। बहुविधि विनयकीन सुखचाहीं
तब इमि भई गगनते वानी। निर्भयहोहु देव वर ज्ञानी॥
नरतनु धरि भूप्रगटौं आई। हरिहौं सकल भूमिगरुआई॥
सबके पूर्ण मनोरथ करिहौं। परमशक्ति समेत अवतरिहौं॥
औ सब सुर गोकुल ब्रजजाई। जन्म लेहिं ममसेवहिं आई॥
वेदऋचा धरि गोपि शरीरा। सेवहिं मोहिं विगतभवपीरा॥
इहिविधि प्रभु देवन समुझाई। आप शक्तिको कह्यो बुलाई॥

दोहा-रह्यो देवकीउदरजो, अब सप्तम मम अंश।
ताहि रोहिणीउदरमें, राखहु तुम निश्शंश॥

सुनतहि मायाने सो कीना। जाना सबन गर्भ भो छीना॥
अष्टम सुवन आप हरिआये। महाप्रकाश भयो छबि छाये॥
देवकि वदन चन्द्र छबि हरई। दिव्य अलौकिक गुण अनुसरई॥
कंसासुरलखि ताहि सकानो। निगडडारिदिय बंदि महानो॥
दिये पहरुए बहुत पठाई। द्वारबंदकरि रखवहु जाई॥
कह्यो होय देवकि सुत जबहीं। समाचार मुहिं दीजो तबहीं॥
इहि विधि मास दशम चलिगयऊ। प्रभुप्रगटनकरअवसरभयऊ॥
भादौं मास प्रथम पखवारा। आठैं रोहिणि अरु बुधवारा॥
रिमझिमि वर्षत मघवा वारी। सकलसुरनअस्तुतिअनुसारी॥
गावहिं गुण किन्नर बहुभाँति। नाच अप्सरन किमि कहिजाती

दोहा-तिहि अवसर करुणायतन,सकलजगतआधार।
ऋक्ष रोहिणी शशिउदय,कृष्ण लीन्ह अवतार॥ १॥
श्यामवर्ण कटि पीतपट, माथे मुकुट अनूप।
शंख चक्र अम्बुज गदा, धरे चतुर्भुजरूप॥ २॥

वदन मयंकशरद अभिरामा। लाजैं निरखि करोरन कामा॥
ललित विलोचन अतिअरुणारे। नासा चिबुकश्रवणअतिप्यारे॥

कुंडल गोल कपोलन लाला। कंठकपोत हिये वनमाला॥
शिरते नखतक अंग सुहाये। लखि वसुदेव हर्ष अति पाये॥
जाने आदिपुरुष अविनाशी। हैं प्रभु यहि घट घटके वासी॥
मृदुल मनोहर वचन सप्रीते। बोले नाथ सकल दुखबीते॥
धन्य २ बड़ भाग्य हमारा। देखि विलोचन दरश तुम्हारा॥
परमज्योतिमय प्रभु अविकारी। निर्गुणब्रह्म सगुणवपुधारी॥
कंस असुरकर भय अति घोरा। हरहु नाथ त्रासत निशिभोरा॥
पुनि देवकी कहत करजोरी। बंधुत्रासते विपति न थोरी॥
हेप्रभु अलखपुरुष अविनाशी। सत चेतन घन आनँदराशी॥
कालव्यालसे बचत न कोई। सो बचिहै जिहि तव रति होई॥
तासों डरत मृत्यु दुखदाई। जिहितवचरणकमललवलाई॥
सो विराट ममउदर निवासी। सुनतबात लागतिहै हांसी॥
तब बोले प्रभु अस मुसुकाई। पूर्वजन्मकी सुरति कराई॥
तपकरि तुम मांगो वरदाना। होहि पुत्र प्रभुतुमाहिं समाना॥
मनवांछित तुमको वरदीन्हा। सो अब आय पूर्ण मैं कीन्हा॥

दोहा—यहिअवसर गोकुल हमैं, देहु तात पहुँचाय।
लावहु तनयानंदकी, देहु कंसको जाय॥ १॥
नन्दयशोदा तपकियो, मोहीं सों मनलाय।
देखोचाहत बालसुख, रहौं कछुकदिन जाय॥ २॥
पुनि आवौं मथुरानगर, हतोंकंस तत्काल।
धरहु धीर प्रभु अस कह्यो, पुनि रोये बनि बाल॥३॥

तब वसुदेव कही भगवाना। जाँय कौन विधि बन्धन नाना॥
इतना कहत निसरि पगवेरी। खुलगे सकल किवाँर घनेरी॥
सोइगये पुनि सब रखवारे। तब वसुदेव उठे मुदभारे॥

सूपमाहिं लालन धरिलीन्हा । गोकुल ओर गमन पुनिकीन्हा ॥
पुलकशरीर तनकसुधि नाहीं । पहुँचे रवितनयाके पाहीं ॥
नदीप्रवाह न जाय बखाना । भ्रमरतरंग उमगि उमडाना ॥

दोहा--हरिमूरति अवलोक सोइ, जानि भाग्य निजपुंज ।
हर्षित बढो तुरंत जल, गहन कृष्णपदकंज ॥

भीतर धसत बढो अति पानी । आयो सलिल नाकतक जानी ॥
सुतहि ऊंचकर अतिभय माना । बूड़ेउ आज बचैनहिं प्राना ॥
देखि कृपालु पितादुख भारी । चरण बढ़ायदीन हुंकारी ॥
गहि प्रभुचरण गई भुवि धारा । गे वसुदेव उतर तब पारा ॥
पहुँचे गोकुल नंददुआरे । मिले तहां सब खुले किंवारे ॥
गये यशोदामंदिरमाहीं । जन्मी सुता तिन्हैं सुधि नाहीं ॥
सुतहि राखि यशुमतिकी खाटा । ले तनया गमने निजबाटा ॥
पहुँचे आय सदनमें जबहीं । लगे कपाट पूर्ववत तबहीं ॥
निजकरकारि पगबंधनवेरी । कन्या रुदनकीन तिहि बेरी ॥
सुनि शिशुरुदन जगे रखवारे । सजगभये सब वीर प्रचारे ॥
जाय कंसको खबर जनाई । सुनत कंस चल आतुरधाई ॥

दोहा--लीन छीन सो कन्यका, कहत देवि करजोर ।
हनिय भ्रात जनि कन्यका, लगै भानजी तोर ॥

जो यहि वरै हतै सो मोहीं । देहुँ कन्यका जियत न तोहीं ॥
अस कहि पुनि बाहर गहिलावा । हतनहेत निजभुजहि उठावा ॥
तकि पषाण कन्या चह मारी । छूटिगई नभ कहसि पुकारी ॥
मोहिं मारि कह लीन नृपाला । जन्मचुको ब्रज तेरो काला ॥
सुनि नभगिरा महादुख पाई । गिरो देवकीके पग जाई ॥
मैं कीन्हों अपराध तुम्हारे । मिटत न कर्मरेख कहुँ टारे ॥

कह देवकी न दोष तुम्हारा। यह सब खोटा भाग्य हमारा ॥
निजकृतकर्मरोग सब भोगै। पावत तहाँ जहाँ जस योगै ॥
कोउ नहीं सुखदुख कर दाता। निजकृतकर्म भोग सबभ्राता ॥
सुनि अस कंस गयोनिजमंदिर। सचिवबुलाय कह्योसंकटउर ॥
भयो प्रगट कहुँ ममरिपु भारी। करहुँ कहा सो कहो विचारी ॥
कह खल सचिवशंककछुनाहीं। कहत उपाय शोच मनमाहीं ॥
एकवर्षके जितने बालक। तिनकहँ कंस करावहुघालक ॥
जो इनमें वह आयो होई। निश्चय मारो जाइहि सोई ॥

दोहा–आज्ञा दीनी कंसने, चले असुर समुदाय।
अब गोकुलकी कथाको, सुनु मुनीश मनलाय ॥

रोयउठे जब नँदके लाला। यशुमति जागउठी तत्काला ॥
बालक देखि महासुख पायो। चन्दन अगरसुभवनलिपायो ॥
द्वारद्वार शुभकलश धराये। जहँ तहँ युवतिन मंगलगाये ॥
बजे बाजने गावहिं गायक। सुनत हर्ष अतिगोकुलनायक॥
युगललक्ष वरधेनु मँगाई। करिशृँगार महिसुरन दिवाई ॥
मुदित नारिनर वीथिनडोलहिं। कलबल प्रेमभरे सब बोलहिं ॥

दोहा–ब्रजवासी टेरतफिरैं, कोऊ वन जनि जाय।
नन्दरायघर सुतभयो, देह बधाई आय ॥ १ ॥
सुमुखि सुलोचनि पिकवचनि, गावैं मंगलचार।
पटभूषणभूषित सबै, करहिं वंशव्यवहार ॥ २ ॥
देहिं बधाई नन्दको, परहिं यशोदापाँय।
कहैं पियारे लालको, नेक हमैं दिखराय ॥ ३ ॥

पुनि पुरजन दधिहर्द बनाई। चले नन्दघर देन बधाई ॥
खेलत फाग भई दधिकीचा। चलीधारकढि वीथिनबीचा ॥

नाचत हँसत नन्द अति मोदा । सुखसमूहभारि हालत थोदा ॥
देखि यशोमति अतिअनुरागी । दीन निछावरि जो जिहिमांगी॥
सवैया-पूत सपूत जन्यो यशुदा इतनी सुनिकै वसुधासबदौरीं ।
देवनके मन आनँद भो सुनि धावत गावत मंगलगौरी ॥
नंद कछू इतनो जुदियो सुरनाथ कुबेरहुँकी मति बौरी ।
मुँहदेखत ब्रजहिलुटायदियो नवचीबछियाछचियानपिछौरी ॥
दोहा-तिहि क्षण श्रीसितकंठप्रभु, धरि योगीको वेष ।
आय दरश प्रभुको कियो, करत अलेख अलेष ॥
दधिकांदोकर कृत अस्नाना । सुखप्रमोद नहिं जाय बखाना॥
विविधभाँति भोजन सबकाहू । दीन नन्द कर हृदय उछाहू ॥
शिशुके पुनि झगुली पहिरावा । बहुरि पालनेडाल झुलावा ॥
इहिविधि बहुदिन भयो बधावा । दीन नन्द जाको जस भावा ॥
पुनि ले नन्द क्षीर दधि माखन । विविधभाँतिकी भेट सुहावन ॥
दई कंसको सब मिलि जाई । पुत्रहोनकी बात सुनाई ॥
ऊपरमनहिं कंस सन्मानी । विदाकीन्ह पुनि जगदुखदानी॥
पुनि पूतना कुनारि बुलाई । कहा नंदसुत मारहु जाई ॥
दोहा-सुनत पूतना सुघर बन, चली नन्दके गेह ।
इत वसुदेवरु नंद दोउ, भेंटे सहित सनेह ॥
कह्यो जन्म बलराम बखानी । कृष्णजन्मकी कथा सुहानी ॥
तब वसुदेव कहो समुझाई । शीघ्र जाहु अब तुम घरभाई ॥
सबपुर कंस उपाधि मचाई । बालक पकरावत बरिआई ॥
चले नंद घर शोचत भारी । उत बकि यशुमतिगेह सिधारी ॥
घिस विष अधम उरोजलगाई । मानहु शूर्पनखा बनिआई ॥
बैठी जाय यशोमतिपासा । पूछत कुशल कुजातिनि हासा॥

दोहा–लीन गोद मुखचूमि सुत, मानहु परमसहेलि।
हलराये पुनि झाँपि पट, दीन्ह वदनकुचमेलि॥ १॥
उरमण्डलमें दीख विप, समझ कपट यदुनाथ।
सहज विहँस पीवनलगे, प्राण क्षीरके साथ॥ २॥
पयसँग प्राण खिचे जब वाके। ह्वैगे अंग शिथिल सब ताके॥
अरी यशोमति कस तव पूता। मानुष नहीं होय यमदूता॥
जोपैं जियत नगर निज जाऊं। पुनि इहिदेह न गोकुल आऊं॥
भागतजाय शिशुहि झकझोरी। गहे पयोधर हरि कर जोरी॥
पुरबाहर रविनन्दनितीरा। गये प्राण तब प्रगट शरीरा॥
जननीसम ताको गति दीनी। यद्यपि रही कर्मसे हीनी॥
रत्नदाम बलिसुता सुहाई। बलिढिग वामनलख मनआई॥
इनको अपन पियावौं क्षीरा। सो मनसा पूरी यदुवीरा॥
दोहा–इत उत सब गोपालको, खोजत गोपीग्वाल।
तबहिं पूतना उदरपर, खेलतपाये लाल॥
लखि यशुदा सुत लीन्ह उठाई। मुखचुम्बनकर मंदिर लाई॥
इतने आये नन्दनिकेता। समाचार सब सुने सहेता॥
बहुतक सुतकहँ दान करायो। बार बार कुलदेव मनायो॥
पुनि पुरजन असि खांडे लाई। काटि तासु अँग दिये जराई॥
तासों कढी सुगंधी भारी। कारण तिहि कुच पियो मुरारी॥
कागासुर पुनि कंस पठायो। चोंच तोर हरि ताहि गिरायो॥
पूर्वजन्मकर द्विज अतिवादी। भयो असुरगुरुशाप प्रमादी॥
हरिके हाथ सुगति अब पाई। कंस सुनत मनमें भयछाई॥
दोहा–प्रगटे हरि जिहि ऋक्षमें, सो नक्षत्र पुनि आय।
चारु बधावे रीति सब, करी यशोदामाय॥

करत काजगृह नँदकी रानी। पलनापर पौढे सुखदानी॥
ऊपर शकट बँध्यो अति भारी। प्रविश्योआयअसुर छलकारी॥
ताकनलगो आपनी घाता। मारिगिरायो हरि इकलाता॥
तुरतहि दौरि गई नँदरानी। लिये उठाय हिये सुखदानी॥
सकल कहैं अचरज भो भारी। बालन कही कीन्ह वनवारी॥
कहत सबै ब्रजके नरनारी। टरीश्यामकी करवर भारी॥
तृणावर्त्त पुनि नृपति पठायो। आय कृष्णको व्योमउडायो॥
गरुएभये कृष्ण अति जबहीं। गिरयो भूमि तनुत्यागोतबहीं॥
पांडुदेशको नृपदलथंभन। दुर्वासाके शाप पुण्यजन॥
छातीपर खेलत प्रभु पाये। महरि आपने भाग्य मनाये॥

दोहा-द्विज भोजन गो वसन अति, दीन नन्द तब दान।
ग्वालिनि खिजवत महरिको, गृहकारज लपटान॥१॥

सोरठा-चौथेपनमें लाल, पायो हैरी महरि तैं।
गृहकारज जंजाल, त्यागइन्हैं सुतलालिये॥२॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर कृष्णजन्मउत्साहपूतनाकागासुरतृणावर्त्तवधवर्णनोनाम द्वितीयोध्यायः॥२॥

दोहा-श्रीकृष्णपदकमल द्वौ, ध्यान हियेमें लाय।
कहौं दशमकी कथा कछु, सुनि संशय भ्रमजाय॥१॥
कबहुँ हरिमुखचूमिकै, कबहुँ खिलावत गोद।
कबहुँ झुलावत पालने, प्यावत दुग्ध प्रमोद॥२॥

यहि विधि गयो काल कछु बीती। अन्नप्रासनकी भइ रीती॥
नन्द बहुत सामां मँगवाई। विप्रजाति भोजन करवाई॥
शोध लग्न मुखमेल सुहावन। लगे नन्द पुनि खीर चटावन॥
प्रेमसहित सब रीति निवेरी। को कहिसकै प्रमोद घनेरी॥

दिन दिन बढ़त कन्हाई कैसे । शुक्लपक्षकर चन्दा जैसे ॥
चंचलता तनु अति प्रगटाई । जहँ तहँ धावतफिरैं कन्हाई ॥
वत्सपूंछगहि ठाढ़े होहीं । देख मातु पितु अतिसुखजोहीं ॥
इकदिन एक विप्र तहँ आयो । महरि पाकहित दूध पठायो ॥
जब तिनसोकरी भोग लगायो । सन्मुख हरिको जेंवत पायो ॥
यशुदाने पुनि पावकरायो । वैसहि पुनि द्विज भोगलगायो ॥
तवतो यशुमति बहुत रिसानी । कह्यो तोतरे सारँगपानी ॥
मैयामुहिं जनि दोष लगावै । बार बार यह मोहिं बुलावै ॥
हाथजोरिकर कह प्रभुअइये । खीरखांडको भोग लगैये ॥
तब मैं रह नसकों उठिधाऊं । याको दीनो भोजन पाऊं ॥
सुनि मृदु गूढ तोतरे बैना । खुलगे विप्रहियेके नैना ॥

दोहा-लोटन लागो चरणमें, प्रेमभक्ति वर पाय ।
गमनो द्विज निजगेह तव, कृष्णचरणचितलाय ॥

कछुदिनमाहिं गर्गऋषि आये । नामकरन वसुदेव पठाये ॥
लखि व्रजपतिकीन्हों सन्माना । चरणधोय लाये स्थाना ॥
पुनि नँदमहरि कह्यो करजोरी । धरिय नाम मुनिवररुचिमोरी ॥
सुनहु जौन वसुदेवकि वामा । रोहिणि सुत जन्मो तिहि नामा ॥
तासु प्रथम संकर्षण नामा । बलदाऊ हलधर बलरामा ॥
रेवतिरमण सदा सुखमूला । कालिन्दीभेदन अरिशूला ॥
सुनो नंद निजसुतकर नामा । जिय सुख इष्टदेव घनश्यामा ॥
प्रगटे वसुदेवहिके धामा । ताते वासुदेव इक नामा ॥
कृष्णनाम पुनि अगम अपारा । कोकवि वरणिजुपावहिपारा ॥

दोहा-इनके अगम अगाध गुण, शेष न पावहिं पार ।
भूतलभार उतारहिं, जगतारण सुखसार ॥

साधु विप्र गोपालन करिहैं । अभिमानिनकीअभिमतिहरिहैं॥
इहिविधि मुनि सब कही बुझाई। गवने भवन दक्षिणा पाई ॥
एक दिवस हरि माटी खाई । सुनि यशुमति अति हेतु रिसाई ॥
मुखपसार तब हरि दिखरायो । माताको त्र्यलोक दिखायो ॥
भुवन चारि दश देखि अखण्डा । रोम रोम प्रति बहु ब्रह्मण्ड ॥
शिवविधि गण मुनि किन्नर देवा। देखे सकल करत प्रभुसेवा ॥

दोहा–चारखानि जगसृष्टि सब, विविधभाँति विस्तार ।
रचना सकल प्रकार बहु, को कहि पावहि पार ॥

लखिअसचरित यशोमतिरानी । हृदयकम्प मुख आव न वानी ॥
मैं मतिमंद विमोह अयानी । ब्रह्म अनादि तनयकर जानी ॥
मातुसभीत कृपानिधि जानी । तब हँसिदीन्ह मधुर मुसकानी ॥
माया प्रेरि तासु मति फेरी । सुत सम जानि सुप्रीति घनेरी॥
कछु दिनमें सज्जन सुखदाई । बड़े भये कछु कुँवरकन्हाई ॥
वाल सखा सब लेहिं बुलाई । दधिमाखन नित चोरहिं जाई ॥
इकदिन गे इकग्वालिनिकेघर । लागे माखन खान ब्रह्मवर ॥
मणिखंभनलखिनिजपरिछाहीं । बोले तुमहुँ खात क्यों नाहीं ॥
सुनि कलवचन हँसी सो बाला । लख तिहि भाजगये नँदलाला॥
इकदिन इकके गेह सिधारे । छींकेते दधिभांड उतारे ॥
आइगई ग्वालिनि ततकाला । तासों कहन लगे नँदलाला ॥
यहां आय कूदी मंजारी । दधि उतार हौं की रखवारी ॥
करत भले जो दोष लगायो । तो जानहु अब कलियुग आयो ॥

दोहा–ग्वालनि बोली वृथाकत, झूंठ कहत नँदलाल ।
खायलेहु जेतो रुचै, दधि गोरस गोपाल ॥

इकदिन गये एक गृह सोहन । छींके लखी धरी दधि दोहन ॥
पेंदी छेद कियो वनवारी । इतने आयगई घर ग्वारी ॥
चले भाजि हरि देखे जवहीं । पकरो कर ग्वालिनिने तवहीं ॥
पूछो कत आगत भयभारी । वोले तव तिहिते वनवारी ॥
कहूं कहा दुखमें दुख आवत । मुंडीकी गति तुम्हैं सुनावत ॥
मुंडी शिर लागो अतिवामा । व्याकुल हो बैठो तरुछामा ॥
मैं तहँ वेल दियो लुरकाई । ताशिरलगो दुखी अकुलाई ॥
सुनि मैया मुहिं मारन धाई । आयो तव घर रह्यो लुकाई ॥
ह्यां देखी दधिखात मँजारी । लखि भाजनकी इतहु विचारी ॥
सुनि तिय हँसि छांडे नँदलाला । गये दूसरे गेह गुपाला ॥
माखनखाय मही लुरकाई । गये तहांते भाज कन्हाई ॥
लखि अनरीत मिली सवग्वारी । देन उरहनो तुरत सिधारी ॥
इकदिन गे कमलाके धामा । तुरतहि तिनपकरे घनश्यामा ॥
वोली चलो यशोमति पासा । देख तुम्हैं आवहि विश्वासा ॥
श्याम कह्यो शंका मुहिं नाहीं । विन कीन्हें कलंक नहिं काहीं ॥
यशुमति निकट सुगई लिवाई । भये तासु पतिरूप कन्हाई ॥
यशुमति हँसी कहत भइ वौरी । निजपतिपकरिदिखावनदौरी ॥
पतिमुखलखिअतिवालजानी । निजगृह तुरतगईखिसियानी ॥
इकदिन और पकरि कोउलाई । तासु तनय वपु भये कन्हाई ॥
यशुमतिके ढिग सोउ लजाई । गई महरि पुनि अधिक रिसाई ॥

दोहा-ग्वालबाल इकदिन सकल, लीन्हें श्याम बुलाय ।
चलो केहु घर खाइये, माखन दधि सदुपाय ॥

जो कोउ मुहिं पकरै आई । तौ तुम हूजो मोर सहाई ॥
एकमते सव रहियो भाई । नातरु वात विगर सव जाई ॥

निजनिजबल बोलत सब जाहीं । प्रविशे लख सूने गृहमाहीं ॥
माखन खायो कपिन लुटाई । निकसिचलेजबसोतियआई ॥
बासनलखि तिहि सोर मचायो । दिनही चोर मोर गृह आयो ॥
बोली एक लखे नँदलाला । जब मैं चाहो कहन हवाला ॥
मुहिं गूंगी काहूने कीनी । तासों कह नसकी दुख भीनी ॥
जबलगि सो तासों बतराई । पहुँचे ताके धाम कन्हाई ॥
गोरस खाय मही लुढकायो । निकस गये जब आहट पायो ॥
घरको ग्वालिनि लखो हवाला । मनमेंअचरजकियोविशाला ॥
दधि माखन अनेक पकवाना । खाय गये नहिं बचोविलाना ॥
जो चुगली काहूकी करई । ताको दण्ड यहै सो भरई ॥

दोहा–बहुरि गये इकगोपगृह, सखन सहित हरि धाय ।
पकरिलिये सब सखायुत, बोले हरि सदुपाय ॥

साधू बहुत हमारे आये । भोजनहित नँदबबा टिकाये ॥
मैया मुहिं तुम पास पठाई । दधि माखन कछु देहु पठाई ॥
देखो सूनो गेह तिहारा । बैठे मोहिं भई बडिबारा ॥
इत मुहिं सखा बुलावन आये । चलो चहत इत तू धारि पाये ॥
जो दधि माखन होय तिहारे । देहु साधुजन हित उपकारे ॥
कृष्ण वदनकी सुनि मृदुवानी । बोलीग्वालिनि हिय सकुचानी ॥
मैं अपराध महरिको कीन्हों । गोरस अवशिचाहिये दीन्हों ॥
बहुतक माखन दधिके भाजन । आनधरे हरि सन्मुख आंगन ॥
चले सखन शिरधारि नँदलाला । कौतुक मगमें करत विशाला ॥
लखिइक सखी तासु घर आई । बोली तू अलि गई ठगाई ॥
सो सुनि कहत भई अस बाला । छलि लेगयो नन्दको लाला ॥
जाय कृष्णढिग कह्यो रिसाई । क्यों तुम झूंठी बात बनाई ॥

बोले हरि हम झूँठ न कहई। मैं महन्त यहशिष सब अहई॥
अस कहि दधिभाजन दियफोरी। भाजगये पुनि डारि ठगोरी॥

दोहा-इकदिन इकके घर गये, लखि सूनो सो गेह।
जडिकपाट दधि दूध सब, खानलगे युतनेह॥

तिहि क्षण आयगई घरवारी। टेरत बारंबार हँकारी॥
बोले श्याम सखन सन वानी। टेरनदेहु खाहु सुखमानी॥
इत सो ग्वालि आनघर जाई। तहँते मांग निसेनी लाई॥
भीतिलगाय चढी इत बाला। द्वारेते भागे नँदलाला॥
देखे गृहभाजन छिटकाई। दिखरायो तब सखिन बुलाई॥
यह देखो हरि धूम मचाई। कहाकरैं रहिये कित जाई॥
जो यशुमति ढिग करैं पुकारी। तहां होत अपनीही ख्वारी॥
तहां न होत कछुक सुनवाई। कहाकरैं रहिये कितजाई॥

दोहा-जो मैं ऐसा जानती, हरि आये ममगेह।
तौ यशुमतिहि बुलायकै, दिखरावति गुण येह॥

अब पछिताये होत कहारी। अब आवैं तौ धरहुँ मुरारी॥
इक दिन इक पकरे गिरिधारी। गालन गुलचे दीन्हें चारी॥
सुनत यशोमति कही उचारी। तुम्हरी कृपा लह्योसुत ग्वारी॥
मुहिं प्राणहुँते अधिक पियारो। विनु अपराध जायकिमिमारो॥
निज नैनन जब लेहुँ निहारी। करिहौं अवाशि दण्ड मैं ग्वारी॥
बोली सो अतिदण्ड न कीजै। इकदो बेर बराजि सुत दीजै॥
नीति विना नृप रति विनु सारे। बिगरतहै सुत बहुत दुलारे॥
इतनी हम भाषैं नँदरानी। बराजिदेहु जबतब सुखदानी॥

दोहा-इकदिन गे गृह एकके, बैठी पाई बाल।
पाछेते मूंदे नयन, औचक तिहि नँदलाल॥ १॥

सैन दई निज सखनको, तिन बहु गोरस लीन ।
गये दूर जब निकसि तब, आपहु भजे प्रवीन ॥ २ ॥

जिन ग्वालिनिकेघर नहिंजाहीं । ते याचहिं बहुविधि विधिपाहीं॥
हमरे गेहमाहिं कब आवैं । माखनले अपने कर खावैं ॥
देखि प्रीति प्रभु तिहि घर जाहीं । प्रेमसहित दधिमाखन खाहीं ॥
खटको सुनत भजहिं दे तारी । उरहनमिस आवहिंनित ग्वारी॥
एकदिना मिलि बहुतिक नारी । यशुमतिढिगजाविनयउचारी ॥
अब भे पांचक वर्ष कन्हाई । छलबलकरत फिरत बहुताई ॥
बड़े भये करिहैं कस कामा । यहै अँदेश हमैं कह बामा ॥
मृदुमुसक्याय चितै जिहिके तनु। सो विनुमोल बिकात जातजनु॥
इच्छाकरि फिरि छाँडतनाहीं । माखनहित सबके घरजाहीं ॥
पूछत बहुतिक बात बनावै । कौनगुरू धौं याहि सिखावै ॥
बछरा खोल गाय ढिगलावै । शिशुसोवत महिछिरक रुवावै ॥
भवन अँधेरे जाय दुराई । बलतदीप भाजत मुसिक्याई ॥

दोहा-तब यशुमति कह कृष्णसों, तेरे घर बहु गाय ।
जो भावे सो खाउ दधि, परघर जात बलाय ॥

माखनचोर कहत सब तोहीं । सुनिसुनिलाजलगतिहै मोहीं ॥
गोपी धरत मुझे नित नामा । मातु न देत फिरत परधामा ॥
इन बातन लाला क्या पावै । काहे अपने बबहि लजावै ॥
सुनत सिखावन कहत कन्हाई । यह सब झूंठ कहतहैं माई ॥
जब मैया मैं खेलन जाऊं । ऊंचेस्वरकरि सखन बुलाऊं ॥
तब यह मोहिं पकर लेजाहीं । नारिवेषकरि संग पिसाहीं ॥
मोपै घरकी टहल कराई । आपु कन्तढिग सोवहिं जाई ॥
मेरे चहुँदिशि ठाढी होहीं । गावहिं आप नचावहिं मोहीं ॥

गुलचे मार श्रमितकर मोहीं । तिहिपर देत उरहनो तोहीं ॥
है यह सत्य बुधनकी बानी । तियपलटतकछु विलम नआनी

दोहा—और कहूं कथा माय सुन, मोरे अँगसों अंग ।
मलत तिरीछे दृगनकर, कछु ऐंडात उमंग ॥

कबहुंक मोसे पीठ मिजावैं । मुंहिं बैठारि आप कहुँजावैं ॥
तब गोपी बोलीं मुसुक्याते । सुनी महरि कान्हाकी बातें ॥
तुमतौ कह जानत कछु नाहीं । कितने गुण तवसुतमनमाहीं ॥
साधुसदृश तुम निकट लखाहीं । बीसविसे इनमाहिं खटाहीं ॥
सचको झूंठ झूंठकी सांची । करत रहत हरि निजरँगरांची ॥
सुनीरही कोउ चतुर सयाना । नृपकी कछु भेटी परमाना ॥
किहुप्रकार इत घर बचिआयो । इन तिहिकानकाट निदरायो ॥
सुनि यशुमति अस गिराउचारी । तुम जानो जानै बनवारी ॥
तुम्हरी इनकी बात अनूढी । जानि नजाय भई मति बूढी ॥
चलीगई ग्वालिनि घरमाहीं । श्याम कही कछु मानत नाहीं ॥
इकदिन महरि श्याम सँगलीन्हें । पौढरही नहिं सोवत चीन्हें ॥
लागी कहन कथा श्रीरामा । भे जिमिअवधपुरीसुखधामा ॥
बालविनोद विवाह कहानी । वरणी सकल यशोदारानी ॥
पुनि तिहि वरणो प्रभु वनवासा । जैसे खरदूषण कर नासा ॥
सीताहरण कहन जब लागी । चौंके हरि धनुही निज मागी ॥
तब यशुमति लीन्हें उरलाई । बोली काहे डरत कन्हाई ॥
कबहुँ उछंग कबहु बतरावै । विविधभाँति भोजन करवावै ॥
कबहुँ करत हठ वस्तु मँगावैं ।महरि महर लखि अतिसुखपावैं॥
कबहुँ धेनुके पाछे जाहीं । कबहुँ भूपबनि नीति सिखाहीं ॥

दोहा-इहिविधि हरि लीलाकरहिं, ब्रजवासिन सुखदाय ।
गाय गाय जन भवतरहिं, को अस चरित अघाय ॥

एकदिना खेलत सुखदानी । दाऊ खिझे कीन अपमानी ॥
दुखीहोय मातहि ढिग आये । पूँछी माता वचन सुनाये ॥
मैया मुहिं दाऊ दुखदीन्हों । मोसे कहत मोलको लीन्हों ॥
मोसे कहत कौन तेरि माता । को तेरो तात कौन तेरो भ्राता ॥
गोरे नन्द यशोदा गोरी । तुम तो कारे आये चोरी ॥
मोल कछुक वसुदेवहि दीन्हों । ताके पलटे तुमको लीन्हों ॥
कहा कहों या रिसके मारे । मैं नहिं खेलनजाउँ दुआरे ॥
औ हाऊसे मोहिं डरावत । कहहिं कि वनमें रहत सतावत ॥
ताते मैं आयो तव पासा । हौं किहि सुवन कहहु विश्वासा ॥
हँसिकह महरि बुरो जो मानत । तौ कत खेल दाउसँग ठानत ॥
जो तू खेलहि निज घरमाहीं । तौ तिहि पकरि पिटावौं वाहीं ॥
तव कछु कृष्ण न उत्तर दीन्हा । मातु लगाय हिये निज लीन्हा ॥
ब्रह्मादिक यशुमति गुण गावें । इहि सम धन्य न आन कहावें ॥
कह मुनि पूर्व कहा तप कीन्हा । बाल विनोद दरश हरिदीन्हा ॥
सूत कही वसुद्रोण कहाये । धरा तियासह तपे सुहाये ॥
देखि उग्रतप विधिअस भाषा । लीजै वर जो मनअभिलाषा ॥
तिन विधिसों माँगो वरदाना । बालचरित देखहिं भगवाना ॥
एवमस्तु कहि ब्रह्म सिधाये । सोई यशुमति नन्द कहाये ॥

दोहा-इहि विधि बालचरित्र लखि, यशुमति परम सुयानि ।
मोद भरी रहसीरहै, कृष्णचरित हिय आनि ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर कृष्णदधिचोरीवाक्य-
विलासवर्णनोनाम तृतीयोध्यायः ॥ ३ ॥

दोहा-विधि हरि हर सिय राम गुरु, बारम्बार निहोर।
कहौं दशमकी रीति कछु, श्रुति सिद्धान्तनिचोर॥
पुनि इकदिना नन्दकी रानी। मथत रही दधि लिये मथानी॥
औरहु मथनलगीं ब्रजनारी। रइको शोर भयो अतिभारी॥
सुत अनुराग श्रवत पय क्षीरा। श्रमकणअतिछबिलहतशरीरा॥
शब्दसुनत मनमोहन जागे। आय निकट दधिमांगनलागे॥
कह जननी धरु धीर कन्हाई। अबहीं देहुँ तोहिं दधि लाई॥
इत हरिने ठानी मचलाई। ताही समय दूध उफनाई॥
दौरी महरि उतारन कारण। तब शोचन लागे जगतारण॥
मोते जननिहि दूध पियारो। मुहिं तजि मैया दूध उतारो॥
मटुकी फोरि मही ढरकायो। यशुमति देख क्रोध उरछायो॥
पकरनको श्रम कीन्हों भारी। आये हाथ जबै गिरिधारी॥
तब ऊखलते बांधनलागीं। न्यून युगल अंगुल रजु मांगी॥
यहि प्रकार रस्सी बहुजोरी। युगअंगुल घटिरही बहोरी॥
गोपी कहत आज तुम जानी। कस उत्पात करत सुतमानी॥
सूधेके कर्तब लखि लीजै। अपनी हानि आज रिसकीजै॥
लखी श्याम मैया खिसियानी। आप बँधायगये सुखदानी॥
दोहा-ब्रजवासी प्रभु भक्तहित, आप बँधायो दाम।
ताही दिनते प्रगटभो, दामोदर अस नाम॥ १॥
लगी यशोमति काजगृह, गई ग्वालिनी धाम।
यमलाअर्जुन सुरति करि, उत चलिभे घनश्याम॥२॥
तिन दोउनकी सुरति सँभारी। चले घसीटत ऊखल भारी॥
यह दोउ धनपतिके सुतवीरा। नलकूबर मणिकंठ सुधीरा॥
नंगे न्हात देवसरि माहीं। लखि नारद लज्जा ये नाहीं॥

जलविहार तहँ करहिं सुनारी । लखिनारद सकुचीं ते वारी ॥
नारद शाप दियो रिसिआई । तुम दोउ विटप होउ ब्रजजाई ॥
विनयमान पुनि वचन उचारा । कृष्णहाथ तुम्हरो निस्तारा ॥
सो अब कृष्ण वहै सुधि आई । चले घसीटत ऊखल लाई ॥
पुनि यमलाअर्जुनके बीचा । ऊखल लाय बहुरि प्रभु खींचा ॥
अतिभुजबल तरुझटकि मुरारी । डारे द्वौ तरु मूल उपारी ॥
निकसे पुरुष युगल तिन माहीं । अति अनूप कहि जाँय सुनाहीं ॥

दोहा-कृपासिंधु अरविंदपग, परे जाय दोउ भाय ।
सजल नयन गद्गद गिरा, विनती करत सुभाय ॥

कृष्ण कृष्ण तुम आदि पुरुषपर । अहो महायोगी दीनोद्धर ॥
सूक्षम थूल विश्व तव रूपा । जानें ब्राह्मण बुद्धि अनूपा ॥
भूतदेह आतम इन्द्रियपति । तुमहीं एककाल हो यदुपति ॥
अविनाशी व्यापक भगवाना । तुमहिं नियन्ता कृपानिधाना ॥

दोहा-सूक्षम सत रज तम मई, प्रकृतिहिं प्रेरक आप ।
तुमहिं पुरुष अव्यक्तहो, त्रिभुवन प्रगट प्रताप ॥

छन्द-तुम सकलक्षेत्रविकार ज्ञाता सदा दीनदयाल ।
प्राकृतिक इन्द्रिनसे अगम प्रभु रहतसो सबकाल ॥
कोइकरहितुमहिंप्रकाशनाहिं तुमकरहुसबहि प्रकाश ।
नाहिं तुमहिं जानाहिं बद्धजीव जे फँसे मायापाश ॥
जय वासुदेव अन्यादि वेधा परब्रह्म मुरारि ।
जयजयअमितअवतारधारी अखिलअधमउधारि ॥
जय कृतअमानुष कर्म भाषत आपनो परभाव ।
जय लोकके कल्याणकारी सरल शील स्वभाव ॥
जय ब्रजधरन विहरन करन जनकामनापरिपूरि ।

जय परममंगल भरन सुन्दर अंगधूसरधूरि ॥
वसुदेवनंदन नन्दनंदन शान्त मधुर स्वरूप ।
यदुवंशके अवतंस दुष्टनध्वंस सुयश अनूप ॥

दोहा–जानहु अपने दासको, दास हमैं यदुराय ।
हमैं दिखायो कृपाकरि, तुव पदसो ऋषिराय ॥ १ ॥
पै अब माँगहिं जोर कर, भवनाशक भगवान ।
रहै तुम्हारे चरितरति, यह वरदान न आन ॥ २ ॥
इहि विधि जब अस्तुतिकरी, नलकूबर मणिग्रीव ।
तब हँसि बँधे उलूखले, हरि बोले सुखसीव ॥ ३ ॥

मदमत्तता हतन हित भूरी । किये अनुग्रह मुनि पुनि पूरी ॥
ममदासन दरशनते आसू । यह भवबंधन होत विनाशू ॥
नलकूबर मणिग्रीव सुजाना । करहु आपने ऐन पयाना ॥
लही भक्ति चरणनकी मेरी । जो नाशन भवभीति घनेरी ॥

दोहा–बँधे उलूखल कृष्णको, करि प्रणाम बहुबार ।
गमनकियो उत्तर दिशा, जयहरि करत उचार ॥ १ ॥
नंदादिक ब्रजगोप सब, युगद्रुमपतन अवाज ।
सुनि चहुँकित धावत भये, जानि गिरी कहुँ गाज ॥ २ ॥

यशुमति सुनत तुरत उठिधाई । बन्धन छोरि लीन्ह उरलाई ॥
कीरति आदि लगी सब दूषण । गोरसहित बांधति ब्रजभूषण ॥
धनगोरस क्या इनते प्यारो । किमि बांधो कैसे तैं मारो ॥
तुरतै नन्दचले घर आये । लखियशुमतिपर बहुत रिसाये ॥
ब्रजवासिनमिलि कीन्ह विचारा । यहां होतहैं विघ्न अपारा ॥
चलो बसैं वृंदावन माहीं । सकल सुपास ठौरतिहिआहीं ॥
तब सब मिलि वृंदावन आई । कीन निवास थान बनवाई ॥

यह सुधि जब श्रीराधा पाई । इकदिन नन्दगेहमें आई ॥
जब कछु कीन्ह चिन्हार क न्हाई । दोउ दोउन घर आवत जाई ॥
साक्षात् हरि शक्ति कहाई । जाने सकल विश्व निर्माई ॥
जिहि छबि लखि सचराचर माहीं। को अस मोहित होय जु नाहीं॥

दोहा—नित्यप्रेर सी कृष्णकी, जिहि गोलोक विहार ।
सो राधा हरिलाडिली, सकल सुमंगलसार ॥

जो नित राधा राधा कहहीं । सदा कृष्ण तिनके वश रहहीं ॥
हरि ब्रह्माण्ड पुराण मँझारी । कह्यो राध अपराध हमारी ॥
जबते कृष्ण लखी निज प्यारी । तबते मुदित भये मन भारी ॥
तिहिक्षण घटा झुकी तहँ कारी । देखी नन्द भई अँधियारी ॥
राधासे तब कही बुझाई । आवहु घर पहुँचाय कन्हाई ॥
करगृह राधा तुरत सिधारी । आये यमुना तीर विहारी ॥
निजमाया कौतुक हरि कीन्हा । क्षणमहँ सबविलास रचि दीन्हा॥
तब राधा बोली घनश्यामहिं । मर्यादा पालहु सुखधामहिं ॥
हरिइच्छा तहँ ब्रह्मा आये । सब विवाह सामग्री लाये ॥
मंगलमय वेदिका सँभारी । विधिवत ब्याह कर्म निरवारी ॥
सुरसुन्दरि गावन तहँ लागीं । राधावर दूलह बड़भागी ॥
कन्यादान विधाता कीन्हा । कृष्णचन्द्र निजकरसे लीन्हा ॥

दोहा—चले ब्याह करि विधि भवन, माँगो यह वरदान ।
भूमिभार अति टारिये, कृपासिन्धु भगवान ॥ १ ॥
गये विधाता कृष्ण इत, तरुण रूप निजकीन्ह ।
प्रिया लडैती प्राणकी, ताको अतिसुख दीन्ह ॥ २ ॥

पुनि शुभ घरी देख नँदराई । गोचारन पठये सुखदाई ॥
लागे कृष्ण चरावन गाई । वत्सरूप धरि दानव आई ॥

चाहत प्रभु पहँ चोट चलाई। हरि पटक्यो तिहिं भूमि भ्रमाई ॥
एकदिवस यमुनाके तीरा। वत्सचरावत श्रीबलवीरा ॥
बकके रूप बकासुर आयो। लील लियो हरिको मुखबायो ॥
उरमें अग्नि लगी तिहि जबहीं। दियो उगल हरिको तिहि तबहीं॥
चोंच पकरि हरि चीर गिरायो। देख सखन सब अचरज पायो ॥
इकदिन खेलत थे बनवारी। आवा दुष्ट प्रलम्ब सुरारी ॥
खेलन लगो सखन सँग आई। चाहत प्रभुपर घात लगाई ॥
ताको कपट कृष्ण सब जाना। ताहि पकर पटक्यो भगवाना ॥
दिव्यरूप धरि सुरपुर गयऊ। मुनि दुर्लभपद लहिसुखभयऊ॥
बक प्रलम्ब वत्सासुर केशी। गँधमादन गँधरव सुत वेशी ॥
दुर्वासाके शिष्य कहाये। तिनको मुनिअस वचनसुनाये॥
सहसपञ्चवत्सर व्रत करहू। विष्णुलोकमें जाय विहरहू ॥
सो सुनि करनलगे तप जाई। हरिमें प्रीति न हरिजन भाई ॥
मिले न तब कुचाल जियलाये। दीन्हों शाप उसा लखिपाये ॥
होउ असुर तुम चारों भ्राता। पतिसुखकृत पायो सन्तापा ॥
बोलो प्रभुकर पैहो मीचा। असुरयोनितज हरिपुर सींचा ॥
तेइ असुरहो अस गति पाई। सुनहु कथा अब अपर सुहाई ॥
एक दिवस श्रीकृष्ण मुरारी। वनमें करतरहे खिलवारी ॥
तहँ अहिरूप अघासुर आयो। इक योजन निजअंग बनायो॥
बैठ्यो अपनो वदन पसारी। तहँ प्रविशे सहसखा मुरारी ॥
बैठे जब हरि तिहि मुखमाहीं। मूंदो वदन अघासुर ताहीं॥
उदरफार श्रीकृष्ण मुरारी। निकसे सखन सहित असुरारी॥
पूर्वजन्ममें नृप यह भारी। पुरी अवन्तिकदेश सुखारी ॥
इक दिन गोतममुनिके आश्रम। पहुँचो जाय करत मृगयाधम ॥

लखि अस कर्म दीन ऋषि शापा। ह्वैहौ असुर सुनत नृपकांपा ॥
विविध विनय जब नृपति सुनाई। तब ऋषि बोले गिरा सुहाई ॥
दोहा—जब ब्रजमें गोलोकते, आवहिं कृष्ण मुरार।
वध ह्वैहौ प्रभुहाथसे, तब तुम्हार उद्धार ॥
भयो अवासुर सो नृप आई। कृष्णहाथते निजगति पाई ॥
एकसमय सहग्वालन भाई। वनमें भोजन कियो कन्हाई ॥
मीठो मीठो स्वाद बखानत। एकसंग भोजन सब ठानत ॥
बालसखा चहुँ ओर विराजैं। तिहिमधि श्याम महाछबिछाजैं॥
लखिविधिके मनभ्रमअस आयो। कस अवतार झूंठ मिलिखायो
ताते कछु प्रभाव विनदेखे। चित थिर नहीं ब्रह्मके लेखे ॥
अस विचार बछरा अरु गाई। हरे सकल विधि माय उपाई ॥
कृष्ण चले ढूंढन वन गाई। इत सब ग्वाल हरे विधि आई॥
दोहा—जब मन जानी कृष्ण यह, ब्रह्मा कीन खुटाय।
ग्वालबाल बछड़ेसहित, रची तथा विधि गाय ॥
निजनिज गृह सब संध्याकाला। गये यथाविधि सँग नँदलाल॥
मातपिता लखि अति सुखपावैं। निजबालनलखि मोद बढावैं ॥
सम्वत्सर इहिविधि चलिगयऊ। इतउतलखिविधिविस्मितभयऊ
पुनि गोबाल कृष्णवपु देखी। सेवत पद विधि भवपति लेखी
पूजत हरिहि तहां सब देवा। विविधभाँतिकी लावहिं सेवा ॥
चकितहोयविधिअति अकुलाई। पर्यो कृष्णके चरणन जाई ॥
शरण शरण प्रभु शरण मुरारी। क्षमाकरहु अपराध हमारि ॥
पुलकशरीर नयन भरिवारी। हाथ जोड अस्तुति अनुसारी ॥
छन्द—मोपर कृपाकर योगिदुर्लभ रूप दीन दिखाय।
जानै न कोउ महिमा तिहारी तौ अचर्ज न आय ॥

नहिं कछु प्रयास विज्ञानमें करि जो पुरुष चितचाय ।
सज्जन वदनते सुनत तुम्हरी कथा नित मनलाय ॥
मनवचनकर्महुँते करत सेवन तिहारी नाथ ।
ते जीततुम कहँ करहिं निजवशजग अजित यदुनाथ॥
जे मूढ मंगलदायनी तव चरणभक्ति विहाय ।
नित ज्ञान अरु विज्ञानकेर विवाद वढत वढाय ॥
ते लहतनहिं तुमको लहत केवल कलेश हमेश ।
जिमि कूट वदरा धानको नहिं लहत तन्दुललेश ॥
योगी अनेकन योगकर नहिं लहै तुम्हरो ज्ञान ।
सुनिकै कथा तुव भक्तजन तुवनिकट करहिं पयान ॥
नहिं तुमहिं जानत योगकरि नहिं ज्ञाननहिं विज्ञान ।
जानत तेई तुमको अवशि जिनभक्तिसाक्रियपान ॥
चित अचित व्यापकब्रह्मको ज्ञानी यदपि लियजानि ।
पै भक्तिविन माधुरी मूरति सकति नहिं उरआनि ॥
नभतार हिमकर धरणि रजकणयदपिजिनगनिलीन।
नहिं तदपि ते बहुकालमहँ तव गुणनगणहिं प्रवीन ॥
कब होइगी हरिकृपा मोपर अस गुणत मनमाहिं ।
तनमनहुँते तुमको नवत जे जननके दिन जाहिं ॥
ते पुरुषहैं सति मुक्तिभागी तिनहिं नहिं संसार ।
सुनि सुनि कथा नितही मगन तुव प्रेमपारावार ॥
प्रभु लखहु मम मति मंदता जो तुवसमीपहि आय ।
देखनचह्यो तव विभववैभव वालवत्स चुराय ॥
मैं ईशमानी हौं अज्ञानी विवशमाया अंधु ।
अपराध मेरो क्षमहु अब प्रभु आशुही जगवन्धु ॥

यह नाथकी सतनाथता कर तो अनाथ सनाथ ।
मेरे तुमहिं हो नाथ ताते माथ धरिये हाथ ॥

दोहा-यहिविधि हरिकी करि तहाँ, बहुस्तुति करतार ।
दे परदक्षिण कृष्णको, चारिचारि त्रयवार ॥

निजपुरगमन हेतु मन दीन्हों । पुनि २प्रभुको वन्दन कीन्हों ॥
मांगि सीख हरिहू विधि पाहीं । ले निज बालक बछरनकाहीं ॥
आये जहां रहे पहिलेही । भोजनकरत सखानि सनेही ॥
विधि गोबाल दिये सबलाई । मायाके गे कृष्ण समाई ॥
बोले बालक सुनहु कन्हाई । तुमबिन हम दधिभात नखाई ॥
बहुरि करन भोजन सब लागे । विधिकरतब न जान मुदपागे ॥
पुनि बोले सब अति मुदपाई । चलहु तालवनके फलखाई ॥
सुनत सखनसँग चले कन्हाई । लगे तालफलखान सुहाई ॥
रासभरूप असुर तहँ रहई । धेनुक नाम दुष्टता गहई ॥
सुनतहि उठ्यो क्रोधकर धाई । पटक्यो तिहि बलरामरिसाई ॥
तुरत मर्यो करि घोर चिकारा । पायो बलके कर निस्तारा ॥
सहसिकनाम रह्यो बलिबालक । लखिअप्सरा मोह तत्कालक ॥
मुनिथलमाहिं कुबुद्धि उपाई । ताते मुनि शापो रिसियाई ॥
भये असुर पुनि हरिगति पाई । गयो धाम हरिके सुखदाई ॥

दोहा-अमित कृष्णके चरित हैं, को कवि पावे पार ।
वरणे कछुक पुराण लखि, कवि निजमतिअनुसार ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर यमलार्जुनउद्धार राधिकाविवाहब्रह्मवत्सहरणधेनुकवधकथावर्णनो नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

दोहा-सुमरि गणेश महेश विधि, सियाराम सुखदान ।
गर्ग अदितिमत दशमकी, कहौं सुकथा बखान ॥

बालचरित प्रभु किये सुहाये। लखि लखि मातुपिता सुखपाये॥
इकदिन रामहिं भवनविहाई। गये कृष्ण चारन वन गाई॥
कालीदह तट पहुँचे जाई। तहँ गो ग्वाल यमुनजलप्याई॥
पीतहिमृतक भये गोग्वाला। सकल जिवाये कृष्ण कृपाला॥
कालिहि छाँति देहुँ निकारी। करि विचार यह कृष्ण मुरारी॥
लागे खेलन गेंद कन्हाई। एकसखाको गेंद चलाई॥
सखा मोरितनु गयो बचाई। गेंद गिरो यमुनाजल जाई॥
कूदिगये प्रभु ताके संगा। पहुँचे कालीदहन उलंगा॥
निरखि लिपटिगो सकलशरीरा। कालीनाग महारणधीरा॥
जब निजतनुहि श्याम विस्तारो। टूटनलगो अंग तब सारो॥
शरण शरण जब शरण पुकारी। अलगभये तुरतहि जगतारी॥
निवुकिचढे प्रभु ताके फनपर। महाभारले नृत्यत तनपर॥
शिथिलभये फन विष झरिआयो। सब अभिमान सुनाग गँवायो॥
रुधिरवमन मुखते अहि कीन्हों। आरत हरण कृष्ण जब चीन्हों॥
नाथ लियो ताको यदुराई। तब विनती अहिनारि सुनाई॥
हे गोविन्द गोपाल मुरारी। दीनबंधु सन्तन सुखकारी॥
पतिअपराध क्षमहु भगवाना। करुणाकर इन नाहिं पहिचाना॥

दोहा—सुनि विनती यदुपति कह्यो, रमणकदीपहि जाहु।
अनतवास नहिं उचित अब, तजहु गरुडभय दाहु॥

बोलो नाग सुनहु भगवाना। प्रतिदिनअहिभोजन हरियाना॥
इकदिन सो भोजन हम खाई। खगपतिते मम भई लराई॥
तब मैं हार रह्यों दहमाहीं। सौभरिशाप न आवत ह्यांहीं॥
इहां बैठ तिन मछली मारी। कह ऋषि पुनि ऐहौ इहिवारी॥
तौ तुम भस्महोइहौ तिहिछिन। आवतनहिंइतखगपतिदुखमन॥

कह प्रभुचरण चिह्न शिर मेरे । परिहै गरुड़ पाँय अब तेरे ॥
पूर्वजन्मको सर्प नृपाला । मदवशहो नहिं नम्यो कराला ॥
ताते सर्प भयो तैं आई । अब निश्चय आपनि गतिपाई ॥
वचन सुनत तिहिपग शिरनावा। इत ब्रजजन सब रोवत आवा ॥

दोहा-कहत यशोदा नन्दसों, धिक धिक बारंबार ।
और कितिक दिन जियहुगे, मरत नहीं मुहिं मार ॥

इत हलधर सबको समझावैं । विना श्याम कोइ धीर न लावैं ॥
धरहु धीर अपने मन माहीं । कतहुँ जाँय कृष्णहि भय नाहीं॥
यमुनाके भीतर तिहि काला । उठ्यो सलिलझकझोर कराला ॥
बोल उठे आतुर बलरामा । वे देखो आवत घनश्यामा ॥
नृत्यकरत अरु बेणु बजावत । मंदहँसनसे प्रभु तट आवत ॥
उतरे प्रभु अहि शीश नवाई । कुटुँब सहित गवनो हरपाई ॥
मिले कृष्णसे सब ब्रजवासी । महावियोग विपति सब नासी ॥
माता आय हिये लपटानी । लिये नंद कनियां सुखदानी ॥
मिले सकल प्रभुते ब्रजवासी । महावियोग विथा तनुनासी ॥
तिहिदिन सब यमुनातट माहीं । टिकेरहे काहुहि गम नाहीं ॥
अर्धरात इक राक्षस आवा । चहुँदिशितृणतिनकोटबनावा ॥
तामें अग्नि दीन्ह तिहि भारी । ब्रजवासी तब शरण पुकारी ॥
सुनत कृष्ण सब आँखमिचाई। करगये अनलपान यदुराई ॥
अग्निचिह्न नहिं कहूँ लखाई । आये सब निजघर सुदपाई ॥
तिहि अवसर वर्षा नियरानी । सचराचर सबकहँ सुखदानी ॥
निज २ गृह सबही जन छाये । पूर्वजरा जिमि बुध सचुपाये ॥
उमड़ि घुमड़ि नभजलधरधाये। दानदेन जनु धनिजन आये ॥
बकपंक्ती इहि भाँति सुहाई । जिमि सुकृती हिय टेकमिताई ॥

दोहा-घननिरखत कूकत मधुर, वृन्दावनके मोर।
गृहीविरति जिमि साधुलखि, मानत मोद न थोर॥

दादुर धुनि चहुँ ओर विराजै। जिमि शठनिरत परान अकाजै॥
विज्जुरिचमकइमिघनमिलिजाहीं। जगकीसम्पतिजिमिथिरनाहीं॥
सिमिटि २ जल सरवर आवहिं। जिमिसद्गुणसज्जनढिगजावहिं॥
चतुर किशानक्षेत्र निज बोवहिं। जिमिशुभसाधनधर्मसमोवहिं॥
वर्षापाय भूरि तृण भयऊ। विषयसंग जिमि बाढ़त गयऊ॥
महिमें विपुल जीव प्रगटाये। प्रजा बढत जिमि नृपति सुहाये॥
अर्क जवास जरयो निज दोषा। जिमिकुलनाशहोतद्विजदोषा॥
फलयुत विटप अवनिनियराये। यथा नवहिं बुध विद्यापाये॥
पिकके वचन मधुर अति लागत। जिमिहरिचरितसन्तसुखछाजत
प्रगटत दुरत छिनहि छिनभानू। संग कुसंगतिसे जिमि ज्ञानू॥
ऊषरवरसे तृण नहिं जायो। कथाज्ञान हतभाग्य न पायो॥
क्षुद्रनदी जलसों इतराई। जिमि थोरे धन खल बौराई॥
पयनिधिआय अचलजलहोई। यथा जीव हरिमय लय सोई॥
वर्षापाय पुष्ट भो नाजा। जिमि हरिनामजपे जनसाजा॥
इहिविधि वर्षाऋतुके माहीं। वनबछरू प्रमोद कुदलाहीं॥

दोहा-विहरत बृन्दाविपिनमें, मोहन नन्दकिशोर।
कबहुँ बजावत बांसुरी, कबहुँ नचावत मोर॥ १॥
कबहुँ सखा फल तोरिकै, खेलत गोली खेल।
कबहूँ बोली बोलहीं, पक्षिनकी कर केल॥ २॥

जबहिं त्रिभंगीछबि बनवारी। करैं मुरलियाकी धुनि भारी॥
जीव चराचर मोहितहोहीं। कांधे दिये सखनकर सोहीं॥
यमुना बहवेते रहिजाई। वत्सतजैं थन पियत न राई॥
आतपते पावस ह्वै आवै। पावसते आतप सरसावै॥

शक्तिमोहिनी सब गुणजुरली । बाजत जब हरिकी प्रियमुरली ॥
फूलत वृक्ष शिलाजल झरहीं । होत मगन धुनि जिहि हियपरहीं
जब थमिजात चेत तब होई । मुरलीधुनि मोहित सब कोई ॥
गये मुंजवनमाहिं कन्हाई । चहुँदिशि ते दावानल आई ॥
शरण गाय गोपाल पुकारी । नैनछुँदाय अनल हरि सारी ॥
जब हेमन्त सुभग ऋतु आई । गोपसुता यमुनातट जाई ॥
मास दिवस तहँ कृत अस्नानी । कात्यायिनिकी पूजा ठानी ॥
हे भगवती कृपा अब कीजै । नन्दसुवन वर हमको दीजै ॥
सोवत खात पियत अरु जागत । हरिपरिहरि मनअन्तनलागत ॥
मगन रहत मन जासु निरत अस। अन्तर्यामी होत तासुवस ॥

दोहा—इकदिन तटपर वस्त्र धरि, नव्या गोपकुमारि ।
करतरहीं मज्जन जहां, पहुँचे आय मुरारि ॥

सोरठा—धरे कदमकी डार, चीर हरे नँदनन्द तब ।
को कवि वरणै पार; अति अद्भुत लीला करी ॥

आपहु चढ़े कदमपर जाई । इत गोपिका यमुनतट आई ॥
देखत तहां वस्त्र हैं नाहीं । लागी शोच करन मन माहीं ॥
पुनि देख्यो पटहरे मुरारी । मांगत सब मिल हाथपसारी ॥
कही कृष्णजल बाहर आवो । तब अपने अपने पट पावो ॥
कियो भानुको तुम अपराधा । न्हाई नग्न यमुनजलगाधा ॥
कोऊ वस्त्र चोर लेजाई ।तौ किहिविधि सकिहो घरआई ॥
ताते तुम सब बाहर आवो । रविको दोउकर जोर मनावो ॥
लखि हठ सब तिय बाहर आई। विनय कीन्ह रविकी समुदाई ॥
तब हरि हँसि सबके पट दीने । बोले वचन प्रेमरसभीने ॥
पूजी तुम जिहि हेत भवानी । सो वर तुम्हैं मिलहि सुखदानी ॥

जबतक जगकी लाज न जाई । तबतक मोहिं कहो नरपाई ॥
अस कहि सबन हिये निज लाई । बिदाकीन्ह सन्मानि कन्हाई ॥
कह्यो शरदमें करिहौं रासा । पुजिहौं सबके मनकी आसा ॥
कबहुँ काहुके घर प्रभु जाहीं । काहु मनावैं काहु रुठाहीं ॥
इकदिन राधेगेह सिधारे । बैठारे निजहित कर भारे ॥
श्यामहिये लखि निजपरिछाहीं । अपर नारि जानी मनमाहीं ॥
कीनो मान न मनी मनाये । दूतीबन हरि मान छुडाये ॥
कबहु सखनसँग पनघट जाहीं । तहँ गोपिनके सँग इठलाहीं ॥
काहूको घर फोरहिं जाई । ते उरहन यशुमतिपहँ लाई ॥
जब ग्वालिन दधिबेचन जाहीं । तिन्हैं घेरि दधिदान चुकाहीं ॥
गोपिन कही कंसपर जाहीं । हम तुमको अतिमार दिवाहीं ॥

दोहा–बोले श्याम रिसायकर, करहुँ कंसविध्वंस ।
हरिहौं भूतलभार सब, करती कहा प्रशंस ॥

कह ग्वालिनि क्या करिहो वारे । काली कमरी ओढनहारे ॥
लकुटी हाथ कमरिया कांधे । माँगखात दधि बोलत राधे ॥
तुमसे कहा होय शूराई । चुप्पे जावहु भवन कन्हाई ॥
बोले हरि तुम निपट गँवारी । जानो कहा विभूति हमारी ॥
अस कहि मृदु मुसक्याय मुरारी । मोहीं सब दधिबेचनवारी ॥
मिल सबहिन सुख दे बनवारी । आय गये वन सदन विहारी ॥
इहां गोपिका भई विहाला । बोली लेहु कोइ नँदलाला ॥
भूलीदधि बेचन सब ग्वारी । बेचत फिरत सकल बनवारी ॥
इकदिन गोचारत सुखदाई । भूखेहो यह बात सुनाई ॥

दोहा–सुनहु सखा इत निकटही, करत मथुरिया याग ।
तिनसमीप जा मोरहित, मांगहु अन्न विभाग ॥ १ ॥

गये सखा सब सुनतही, भोजन मांगो जाय।
दिये न भोजन तनकतिन, रहे अधिकारिसियाय ॥२॥

सखन कृष्णसों आय सुनाई। तब हरि कही सुनो सबभाई ॥
अब तिनकी नारिनपै जाई। भोजन मांगो कह्यो कन्हाई ॥
सखा गये औ विनय बखानी। उठीं नारि सब धनि जियजानी॥
विविधभाँति भोजन भरि थारा। चलीं जहां वसुदेवकुमारा ॥
आय कृष्ण पगबन्दन कीन्हें। भोजन सब आगे धरिदीन्हें ॥
पतिने इक रोकी निजनारी। तनुतजि सो हरिपास पधारी ॥
प्रभुछबिदेखि युवति हरषानी। प्रेम विवश तनुदशा भुलानी ॥
लोचन सफल भये प्रभु आजू। धन्य भाग्य हम सब व्रजराजू ॥
जप तप यज्ञ जासु हित कीजे। ताको कहा न भोजन दीजे ॥
कह प्रभु मुहिं जनि करो प्रणामा। मैंहूं नन्दमहरको श्यामा ॥
वृंदावन घर दूर हमारा। किहिविधि आदर करैं तुम्हारा॥
पुनि कृपालु बहुविधि समुझाई। बिदाकीन्ह युवती घर आई ॥
तुम्हरे दरशन कर पति नारी। तरिजैहैं करि भक्ति हमारी ॥
सुनि निज भवन गईं सब नारी। बैठे शोच करत द्विज भारी ॥
हम मूरख पापी अभिमानी। कीन्हीं दया न हरिगति जानी॥
आदिपुरुषने भोजन मांगे। धिकनहिंदीन्हें भये अभागे ॥
सुनि पियगिरामुदित सब नारी। गावहिं गुण हरिभक्ति विचारी॥

दोहा-वृंदावनके बीच इत, राजत यदुकुलकेतु।
कछुदिन नन्दनिकेतमें, सुरपतिपूजाहेतु ॥

सोरठा-पूजनको सुरराज, भोजन विविधप्रकार बहु।
घरघर होतसमाज, मास ऊर्ज चौदशवदी ॥

देखि चरित अस प्रभु यदुराई। पूछेउ नन्दमहरसन जाई ॥
हर्षि नन्द सब कथा बखानी। पूजन शक्र अपन हित जानी ॥
वर्षत जल तृण जामतजाते। चरत धेनु पयप्रगटत ताते ॥
रहियो दूर छुयो जनि लाला। रूसिरहैगो देव विशाला ॥
सुनि कृपालु बोले अस बाता। कर्म प्रधान इन्द्र नहिं दाता ॥
ईश रजाय धरत शिर सबही। उत्पति लय पालन करसकही॥
ताकी मानत सकल रजाई। कोइ वरषै कोइ रचै सुखाई ॥
जहाँ इन्द्र पूजा नहिं ठानी। तहँ का नहीं बरसतो पानी ॥
इतनेदिन पूज्यो सुर साँई। नहीं आजतक दियो दिखाई ॥
तिहिते ले पकवान मिठाई। गिरिगोवर्द्धन पूजो जाई ॥
जिहिके ऊपर धेनु चरावत। सदा ताहि तुम सब बिसरावत ॥

दोहा–कहों तात सतभावते, और तजहु सब देव।
गोवर्द्धनगिरिराजबड, ताकी कीजै सेव ॥

जबहीं तुम पुजिहो मनलाई। देहैं दरश तुम्हैं गिरिराई ॥
दरशनकर माँगहु वर जोई। देहैं सो तुमको सोइ सोई ॥
तब सबने यह बात उचारी। भली कहतहैं कृष्ण मुरारी ॥
हमैं कहा सुरपतिसे काजा। पूजहिं सब सरिता गिरिराजा ॥
यह सम्बाद सकल पुर व्यापा। हर्षे सुनि गिरिराज प्रतापा ॥
होत प्रात भोजन समुदाई। गिरिवर निकट धरे सबजाई ॥
बहुरि नन्दनिज गणक बुलाई। पूजे गिरि विधिवत श्रुतिगाई ॥
जो निदेश यदुकुलमणि देहीं। सादरकराहिं विलम्ब न तेहीं ॥
कह प्रभु सकल करो अब ध्याना। पुनि तनु उभय धरे भगवाना ॥
आवत प्रभुगिरिते तिन देखे। मनहु प्रगट गिरिराज विशेषे ॥

दोहा–ललित विलोचन इन्दु मुख, शीश मुकुट उरमाल।
भुज विशाल कटिपटकसे, मनो वेष नँदलाल ॥ १ ॥

कह्यो कृष्ण तब नंदसों, भोजन लेहु मँगाय ।
गिरिआगे सब राखिकै, अरपो विनय सुनाय ॥२॥

कह प्रभु अब देखो सब भाई । दीन्ह दरश प्रगटे गिरिराई ॥
कार्त्तिकसुदी प्रतिपदाके दिन । भोग लगायो सबहि मुदितमन ॥
देखि शैलपति करहिं प्रणामा । गोपी गोप आदि घनश्यामा ॥
देख प्रगट गिरि सब हर्षाई । कहैं परस्पर लोग लुगाई ॥
पूजे देव बहुत नँदराई । दर्शन दीन्ह प्रगट नाहिं आई ॥
बहुरि कहे प्रभु वचन सुहाये । भोजन देहु प्रगट गिरिआये ॥
सुनि अस नंद उठे हर्षाई । भोजन प्रथम जिमाये जाई ॥
गोपी गोप सकल पुनि धाये । भोजन दीन सहित हितखाये ॥
ललिता सखी गई सब जानी । राधासन बोली मृदु बानी ॥
देखहु नन्दसुवन चतुराई । आप पुजावत आपहि खाई ॥
एक सखी रहि घर रखवारी । भोग लगायो तिन रुचिभारी ॥
हाथ पसार लियो पुनि सोई । यह चरित्र जानो नहिं कोई ॥
इहि प्रकार गिरिवर पुजवायो । देख चरित सबही सुखपायो ॥

दोहा—प्रीति रीतिके भावसों, भोजन सबको खाय ।
हो प्रसन्न पुनि नन्दसे, तव बोले गिरिराय ॥

सोरठा—लेहु नन्द वरदान, अब जो तुम हमसे चहो ।
मैं लीन्हों सुखमान, बहुत करी तुम भक्ति मम ॥

दोहा—नन्दगोप अरु नन्दसुत, श्रीवृषभानु समेत ।
बार २ गिरिराजके, चरण परत अतिहेत ॥ १ ॥
दे प्रसाद निजहाथसों, करि सबको सन्मान ।
ह्वै प्रसन्न गिरिराज तब, भे पुनि अन्तर्द्धान ॥ २ ॥

कीन परिक्रम प्रेमसों, होत प्रात नँदराय ।
पुनि वृंदावनको चले, गिरि लीला गुणगाय ॥ २ ॥

हनुमत वचन लागि यदुराई । परशि गिरिहि अति दीनवड़ाई ॥
इत यह मघवाने सुधि पाई । लिये तुरत निजदेव बुलाई ॥
समाचार नारदसन पाई । अतिशय हिये कोप सुरराई ॥
मानुष देव कृष्ण सब जानहिं । ताके वचन गोप यह मानहिं ॥
तिनको आज गर्व परिहरहूं । खोऊँ पशु लक्ष्मी विन करहूं ॥

दोहा-तब मेघाधिप बोलके, बोलो देवखुआर ।
महाप्रलय जल व्रजउपर, वर्षहु मूसलधार ॥ १ ॥
और ठौर सब छांडिकै, व्रजपर वर्षहु जाय ।
व्रजवासी गोधनसहित, जलसे देहु बहाय ॥२॥
तबहीं अतिचपला चमक, घन उमडे चहुँओर ।
वर्षनलागे प्रलयसम, व्रजमें छायो शोर ॥ ३ ॥
देखिदेखि व्रजकी दशा, नन्दमहर पछतात ।
कियो निरादर इन्द्रको, मनमें बहुत डरात ॥ ४ ॥

सोरठा-श्याम राम दोउ भाय, लिये निकट शोचत महरि ।
जुरे गोप सब आय, मनहींमन मुसुकात हरि ॥ ९ ॥

दण्डकछन्द-मुसुकात वज्रप्रहार सुनि नरनारि सब व्याकुल भये ।
अतिदीन वचन पुकारि यदुकुल केतुपहँ आतुर गये ॥
प्रभु कालिह गिरिपुजवाय सो गिरि आनि अबरक्षाकरै ।
नहिं इन्द्र आज निपात सब व्रज वारिमें बोरे धरै ॥
सुनि विहँसि यदुकुलचंदधीरजदीन्ह तिनक उरभरा ।
पुनि आय तेज तपाय गिरिवर करजु पंकजपै धरा ॥

तिहि समय गोपी गोप यशुदा नंदके सब दुखहरा ।
यहिभाँति शैल उठाय प्रभु लखि गोपगण अचरज करा॥
तब बोले मुसुक्याय कन्हाई । सुनहु सकल ब्रजबासी भाई ॥
करी सहाय देव गिरिराया । आवहु तुम सब इनकी छाया॥
कनअँगुरी गिरिधर नँदलाला । भीतर लिये गोप गोग्वाला ॥
दाबत भुजा यशोमति मैया । बार २ सुखलेति बलैया ॥
निरखि शैल अति मन दुखपावै । पुनि पुनि गोवर्द्धनहिं मनावै ॥
नाथ आपनो भार सँभारी । करियो कान्हरकी रखवारी ॥
जानी कृष्ण मातु विकलाई । तिहि कारण अस कीन उपाई॥
कह्यो नन्दसन निकट बुलाई । तुमहूं सब मिलि करो सहाई ॥
लेले लकुट राखि गिरि लेहू । करहु न कोइ मनमें संदेहू ॥
गोवर्द्धनगिरि भये सहाई । आप कह्यो मुहिं लेहु उठाई ॥

दोहा—यह सुनि जहँ तहँ गोप सब, रहे लकुट गिरि लाय ।
कहत श्याम तब नंदसों, भलो लियो उचकाय ॥

सोरठा—तटठाढे बलराम, देखि देखि लीला हँसत ।
कौतुक निधि सुखधाम, करत चरित संतन सुखद ॥

कोउ कह देवनदेव मुरारी ।कोउ कह आदिपुरुष अवतारी॥
उत जल वर्षहि मूसलधारा । पवि प्रहार पुनि बारहिबारा ॥
जो जल प्रबल शैलपर परही । तवाछनाँक बूंद जिमि जरही॥
सात दिवस वर्षेउ इकधारा । सब जल सोखेउ तेज अपारा॥
ब्रजपर बूंद एक नहिं आई । श्रीपति चक्र प्रताप दुहाई ॥

दोहा—डारिदियो सब वारिघन, पुनि गमने निजधाम ।
भानुप्रकाश विलोकि पुनि, मन हर्षे घनश्याम ॥ १ ॥
गिरिवर धरो उतार महि, हर्षे ब्रजनरनारि ।
श्रीपति ब्रजरक्षा करी, लज्जित भयो नगारि ॥ २ ॥

माता दौरि कंठ लपटाई । आये ब्रज सब सहित कन्हाई ॥
रहे गोप सब अचरज पाई । जीतो कृष्ण आज सुरराई ॥
दूजे दिन ले सखा कन्हाई । पुनि वन गये चरावन गाई ॥
प्रभु वनगवन शक्र लखिपावा । कामधेनु सुर सँग ले आवा ॥
सजलनैन अतिकंपित गाता । धरेउ शीश प्रभुपद जलजाता॥
पुलकगात मुख आव न बाता । त्राहि त्राहि आरत जनत्राता ॥
संपति धन मदकर सुखमाना । नाथ तुम्हार भेद नहिं जाना ॥

छंद–नहिं भेद जान तुम्हार । तिहुँलोकके करतार ॥
तुव देव शिव अज ईश । नहिं दूसरो जगदीश ॥
शिव ब्रह्मके वरदाय । दइ भूति तुम्हरी पाय ॥
जगजनक दीनदयाल । पदसेव्य कमलाबाल ॥
प्रभु अलख अव्यअनूप । अब शरणहैं सुरभूप ॥
हे नाथ मैं मतिमंद । नहिं जान करुणाकंद ॥
अब नाथ मम अपराध । क्षमिये गुणाधि अगाध॥
सुनि दीनता जन जान । हँस कह्यो तब भगवान॥

छन्द–भगवान लीन उठाय करगहि लाय उरनिर्भय कियो ।
सुरपाल पूजि कृपालुके पद धोय चरणोदक लियो ।
तिहि समय सब वृंदारकगण हर्षि फूलन झरकियो ।
धरि धीर शक्र सुलोक गमने राखि पदपंकज हियो ॥

दोहा–पुनि सुखदायक सखन सँग, कहत शक्र गुणगाथ ।
मुदित चले पुनि भवनकहँ, जानि अंतदिन नाथ ॥

सोरठा–ग्वालनघरघरजाय, शक्रकथा वरणी सकल ।
सुनि पितु मातु सिहाय, हर्षि विलोचन वारि भर ॥

दोहा-यह गोविन्दचारित्र शुचि, गोविंदविनयनगारि ।
श्रवण करैं नरनारि जो, लहैं सुभग फल चारि ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर चातुर्मासचरिहरणदानलीला गोवर्द्धनलीलावर्णनोनाम पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

दोहा-विधि हरि हर गणपति गिरा, शीश नाय कर जोर ।
कहौं दशममत रहसकी, लीला निगमनिचोर ॥ १ ॥
एकदिवस श्रीनन्दजी, व्रत एकादशि कीन ।
कछुक रातमें न्हानहित, गमन सरित कहँ कीन ॥ २ ॥

नंदहि वरुणदूत लेगयऊ । कृष्णजाय पुनि लावतभयऊ ॥
तब व्रजवासिन प्रभुता जानी । सब वैकुण्ठलखन हठ ठानी ॥
प्रभु दीन्हों वैकुण्ठ दिखाई । सब व्रजवासिन अति मुदपाई ॥
इहि विधि कृष्ण करत बहुलीला । देख देख मुद गोपिन शीला ॥
व्रजवनिता हरिरूप लुभानी । तिहिमहँ अधिक राधिकारानी ॥
कृष्णचरण पदपद्मपरागा । सब व्रजवनितनको मन लागा ॥
कौनिहुभाँति धरैं नहिं धीरा । नित सुमिरैं यदुनंदनवीरा ॥
श्रीअवतार राधिका जोई । ताकी प्रीति बढी हरि जोई ॥
रूपराशि प्रभुके मनभाई । इकदिन सों वृंदावन आई ॥
श्रीव्रजराजभवनचहुँ पासा । टेरि लेव दधि परम हुलासा ॥
अधिक प्रीति तनमनसुधि नाहीं । जासु सत्यव्रत यदुपतिपाहीं ॥
प्रेमविकल गइ भूलि दहैया । टेरत विपिनै लेहु कन्हैया ॥
हर्षि सकल हँसि पूछहिं बामा । बेचत आज कहा कहु श्यामा ॥

दोहा-कह राधा छवि कृष्णकी, मोतन रही समाय ।
ज्यों मँहदीके पातमें, लाली लखी नजाय ॥ १ ॥

मेरो मन हरिसों लग्यो, लोकलाज कुल त्याग।
और ताहि सूझत नहीं, ज्यों जहाजको काग ॥ २ ॥

तब जानी ऐसे ब्रजबाला। यहिके तनमनमें नँदलाला ॥
सो हरिके ढिग जाय बखानी। एकनारि बनमें बिलखानी ॥
गई अबहिं बंसीवट बाटा। लेहु खबरि तिहि होय न घाटा ॥
सुनिप्रियविकलविकलप्रभुभयऊ। कर तिहि बिदा तुरत तहँ गयऊ ॥
परमप्रेम दोउ मिले सप्रीती। देव सिहाहिं देख प्रभुरीती ॥

दोहा–परमहर्षि दोऊ मिले, राधा नन्दकुमार।
कुञ्जसदन शोभित मनो, तनुधारि छवि शृंगार ॥ १ ॥
धरि धीरज पुनि राधिका, बिहँसि कहे मृदुबैन।
बिन देखे यह चन्द्रमुख, कल न परत दिनरैन ॥ २ ॥
कही कृष्ण अब जाहु घर, तुमको भई अवार।
पूर्वप्रीति उर गुप्त धरि, करिये जगव्यवहार ॥ ३ ॥

अंकमदे पठई हरिप्यारी। आप गये घर कुंजविहारी ॥
इकदिन ले सँग सखी सयानी। न्हाने चली राधिकारानी ॥

सवैया–गहिहाथसोंहाथ सहेलीकेसाथमें आवतही वृषभानुलली ॥
एक सखी कर चौंर लिये सुनि वारत भौंरनकी अवली ॥
लखिकैमनमोहनको सकुचीकियोचाहत आवनि ओटअली ॥
चितचोरलियोदृगजोरिरंतियामुखमोरिचली मुसिक्यायभली ॥

दोहा–श्यामा नटवररूपको, देखतही सुख पाय।
चित्रपूतरीसी रही, देहदशा बिसराय ॥

सोरठा वे रहे लुभाय, नागर नवलकिशोर वर।
उमुख दृगलाय, नयन नहीं मटकत कहूं ॥

देखि दशा ललितादिक बामा। बोली विहँसि सुनो अब श्यामा॥
राखो चीन्ह इन्हैं अब नीके। यह हैं मन भावत सबहीके॥
आई शकुन भले तुम आजू। भयो सबै विधि पूरणकाजू॥
मिले तुमहिं सुन्दर सुखदानी। अब कछु हमका चहियनिशानी॥
सुनत सकुचि प्रभुको उर आनी। मूँदलिये दोउ नैन सयानी॥
सोरठा-पुनि सखियनके साथ, चली सदनको सुंदरी।
उरमें धारि ब्रजनाथ, प्रेम मगन बोलत नहीं॥ १॥
सखियनकहि मुसिक्याय, क्यों प्यारी बोलतनहीं।
की हमसे रिसिआय, लियो मौनव्रत आजपुनि॥ २॥
यह सुनि कुँवरि कही मुसिक्याई। कहु सखि कैसो रूप कन्हाई॥
तुम सब छवि द्वैनैननि देखी। हौं देखा कछु रूप अलेखी॥
हौं भ्रुकुटी लखि रही लुभाई। और रूप देखो नाहिं माई॥
मैं अपने मन अति पछिताऊं। प्रभुको लखिनाहिं मनाहिंअघाऊं॥
विनपहिचान करों कस प्रीती। जब देखत तब औरहि रीती॥
सुनि यह वचन सखी मुसिकानी। बोली तिहि बडभाग्यबखानी॥
धनि यौवन धनि रूप तुम्हारा। मोह्यो जिहिपर नन्दकुमारा॥
इकदिन विरह विकल अलबेली। चली सरित जलभरनअकेली॥
मिले कुंज नँदनंदन नीके। लाइ हृदय हँसि भावतिजीके॥
गूढप्रेम कस कहौं कृपाला। कनक तरुहिं जनु भेंट तमाला॥
कह राधिका बहुरि मुसुकाई। चित हमार तुम लीन्ह चुराई॥
प्रभु हँसि कही तुमहिं विनदेखे। नाहिं सुखसुहिं दिनरातविशेषे॥
इहिविधिवचन कहत पियप्यारी। तब लगि तहां गई ब्रजनारी॥
तिनहिं देख प्रभु गे इक ओरी। बोली पुनि सब गोप किशोरी
करचो सदा सुख छिप मनकोरी। पकरी आज राधिका चोरी॥

दोहा-कहत रही जबतब यहै, हरिसंग देखहु मोहिं ॥
तब कहियो जो भावही, बेसर लीजो खोहिं ॥ १ ॥
यह सुनि लज्जित राधिका, गइ निज भवन तुरन्त ।
विरहविकल नँदलालके, निशिदिन कल न परन्त॥२ ॥

हार लियो राधा दुबकाई । कह जननीसन वचन बनाई ॥
मातु मोर किहि हार चुरावा । गिरचो नदीके किहु सखिपावा॥
यह सुनिमाय भई रिस भारी । कह धरु हार हमेल उतारी ॥
यह सुनि कंप गई ब्रजरानी । बोली मधुर मनोहर बानी ॥
जात हार मैं लाउब जोही । ललितापास अवशि सो होही ॥
अस कहि गई नन्द पिछवारे । वृथा सखिनके नाम पुकारे ॥
मैं वंशीबटजात अकेली । आवो ले दधि आशु सहेली ॥
तिहि अवसर प्रभु भोजन पावा । प्रथम ग्रास गहि मुखे उठावा ॥

सोरठा-सुनि प्यारीकर बोल, प्रेमलपेटो अटपटो ।
तजगइ क्षुधाकलोल, दीन्ह ग्रास तजि थालमें ॥

तारकछन्द ।

प्रभु दौरिचले कहिकैअसबानी । मुहिटेरिसखा बनधेनुबिआनी ॥
यशुदा तजिभोजनआँगनआई । सुतभूंखोगयोअतिहीपछिताई ॥
पुनि नन्दलला वंशीवट जाई ।कियदम्पतिभोगविलासअघाई॥
हम आय मिलीं प्रभुहारबहाने । सुनि लायलई उर बैनबखाने ॥
तुम टेरो जबै हम ग्रास उठावा । इकधेनु बिआईबहानेसे आवा ॥
भइ साँझगये अपने घर दोऊ ।प्रभुप्यारीको प्रेमकहैकबिकोऊ ॥
पुनि हारदियोनिजमातहिजाई । कहिदीन सखी किहुरेतगडाई ॥

दोहा-एकदिवस प्रभु साँझको, गये प्रियाके धाम ।
रहे रैनभरि प्रेमयुत, चलत कही असबाम ॥

सवैया-मो युग नैन चकोरनको यह रावरे रूपसुधाकर नैबो।
कीजै कहा कुलकानतेआपनिआनपरोअबप्रेमछिपैबो॥
कुंजनमेंघनश्याम कहूं निशिद्यौसहुघातपरेमिलिजैबो।
लालसयानीअलीनकेबीच निवारियहांकीगलीनकोऐबो॥

दोहा-बारबार जिय लाडिली, यहै शोच पछितात।
गये श्याम आलस भरे, नेक न सोये रात॥

पुनिललितादिसखिनप्रभुदेखा। निसरतप्रियकेभवनविशेखा॥
सवतिशाल उपजी उरपीरा। मारे मनहुं मदन उर तीरा॥
गई लाडिली मन्दिर माहीं। हर्ष हाँसि कहिजात सुनाहीं॥
कह्यो राधिका विहँसि बहोरी। हे इत श्याम गये कित ओरी॥
सुनिचतुरतावचन ब्रजबामा। बोलीं सकलविहँसि सुनश्यामा॥
तुम समान कोउ चतुर न होई। प्रभुसँग आज रैनभरि सोई॥
निजमनभेद कहति नहिं कबहूँ। पकरिं लई चोरी हम तबहूं॥
सत्य बात किन कहै न राधा। काहित निठुर मौन व्रतसाधा॥

दोहा-सुनत वचन सबसखिनके, राधा मनमुसिकात।
लखे श्याम इन आज सब, मोरे घरते जात॥

प्यारिहि मौन देख ब्रजनारी। उठिगईं निजनिज गेहमँझारी॥
एक समय मोहन पुनि आये। प्यारी लखनहेतु अतुराये॥

सोरठा-राधे भयो गुमान, टेरिसकी नाहिं श्यामको।
लौटगये भगवान, गर्वप्रहारी भक्तहित॥ १॥
गये श्याम नहिं धाम, तब उठि आई द्वारपर।
देखत चहुँदिशि वाम, लज्जितभइअभिमानते॥२॥

दोहा-भई विकल अति नागरी, विरहबिथाकी पीर।
खानपान भावै नहीं, सुधिबुधि तजी शरीर॥ १॥

अति अधीर भइ राधिका, गइ ललिताके धाम ।
बरणि सकल कारण कह्यो, लाउ बोलि अब श्याम २॥
छिपत छिपाये कौनविधि, सखि तुमसो यह बात ।
देखेबिन नँदनंदके, धीरज धरत न गात ॥ ३ ॥
नैननते छिन टरत नहिं, नीके लखे न जात ।
कहा कहूं तुमसों सखी, यह अचरजकी बात ॥ ४ ॥
कह ललिता सुन राधिका, तुहूं बैठ गहि मान ।
करें जो तेरी चाहना, ऐहैं श्याम सुजान ॥ ५ ॥

सवैया–आवतजात सदा नँदनंदन, नीके विलोचन जात न हेरे ॥
देखेबिना नहिं चैन परे, मम प्राण बसें तिनकी छबिनेरे ॥
ता प्रभुसों रिस कैसे करों, ब्रजरानि कहै सिखये सखि तेरे ।
पूरिरहे मनभावनके गुण, मानको ठौर नहीं मन मेरे ॥

दोहा–पुनि पुनि सिखवत तुमसखी, मानकरनको मोंहि ।
मनतो मेरे हाथ नाहिं, मान कौनविधि होहि ॥

कवित्त–घर तजौं वन तजौं नागर नगर तजौं,
वंशीराम सब तजि काहूपैं न लजिहौं ।
गेह तजौं देह तजौं नेह कहो कैसे तजौं,
आज काजराजबीजऐसोसाज सजिहौं ॥
बावरे भये हैं लोग बावरी कहत मोको,
बावरी कहेते मैंहूं काहू न बरजिहौं ॥
कहैया सुनैया तजौं बाप और भैया तजौं,
दैया तजौं मैया पैकन्हैया नाहिं तजिहौं ॥

सवैया–मोरपखा घनश्यामकिरीट मनोहर मूरतिसों मन लैगो
७ लोलनि गोल कपोलनि बोलनि नेहके बीजनिबैगो ॥

लाल विलोचनि कारनसों मुसुक्याय इतै उरझाय कितैगो ।
वाही घरी घनसे तनसों अँखियानि मनो घनसारसों दैगो ॥

दोहा-अस कहि पुनि व्याकुलभई, नैन रहे जलछाय ।
जैसे मणिबिन दीनफणि, शिरधुनिधुनि पछिताय ॥

सोरठा-लीन्हीं सखियन जान, हरिरँगराती लाडिली ।
सुन्दर श्याम सुजान, रोमरोम याके रमे ॥

दोहा-कह ललिता अब धीर धरु, श्रीवृषभानुकुमारि ।
लैहों आज मनाय कै, श्रीब्रजचन्द मुरारि ॥ १ ॥
वंसीवट वनिता गई, जहाँ रमन घनश्याम ।
देख रूप आनन्दभई, कह सँदेश पुनि बाम ॥ २ ॥
चलो श्यामसुन्दर नवल, छैल छबीले लाल ।
तुम्हैं मिलनको नवल वह, अतिव्याकुल यहिकाल ॥ ३ ॥

सवैया-बारहि बार विलोकत द्वारहि चौंकिपरै तनके खरकेहू ।
सेजपरी ब्रजरानि बिसूरति आइ अहौं अबहीं लखियेहू ॥
होत दशा ज्यों चकोरनकी अजहूं रजनीपतिकेअथयेहू ।
लालनवेलीके जाहु घरै फिर बाल न मानैगी पाँय परेहू ॥

दोहा-इतनी सुनि संभ्रम उठे, गे ललिताके धाम ।
राधा लखो न श्यामको, तब कृपालु सुखधाम ॥ १ ॥

सवैया-श्रीब्रजराज गये तितहीजितव्याकुलबाल सखीगनमें ।
तहँ आपुही मूँद सलोनीके लोचन चोरमिहीचिहखेलनमें ॥
दुरवेको गई सिगरी सखियाँ महिपाल सुनो इतनेछिनमें ।
मुसुकायके राधेको कण्ठलगाय छिपे कहुँ जायके कुंजनमें ॥

दोहा-प्रेमविकल भइ राधिका, पुनि प्यारी ढिग आय ।
प्रियके भूषण पहिर प्रभु, अपने तिहि पहराय ॥

बोले विहँसि प्रियासन योंही । हम कृत मान मनावहु मोंही ॥
अस कहि बैठमान प्रभु साधा । लागी प्रभुहि मनावन राधा ॥
जब न मान तजिप्रियअकुलानी।तब हँसिदीन मधुर मुसुकानी ॥
पुनि राधिकारूप निज धारी । दीन्ह प्रभुहि पटमुकुटउतारी ॥
इहिविधि करत रही सुखश्यामा। तबलगिदिवस रहा भरियामा ॥
नारिरूप दोउ परम अनन्दा । वंशीवटहि चले गोविन्दा ॥
श्याम गौर सोहत वनमाहीं । पटतर योग रमारति नाहीं ॥
मिली अग्र चन्द्रावलि बामा । तिनपहिचानलियेघनश्यामा ॥

दोहा—कह चन्द्रावलि विहँसि पुनि,यह नवनागरि नारि ।
करि ठाढी यहि राधिका, हौं मुख लेहुँ निहारि ॥१॥
अस कहि आई निकट सो, मुख देखनकी चोप ।
तनु सकोचमुखमोरि प्रभु, लीन्हों अंचल रोप ॥ २॥
गहि प्रभुकर चन्द्रावली, यह बोली मुसिकाय यह ।
यह अवलो कहुँ नहिं सुनी, तियसौंतियसकुचाय ॥३॥
मैं तुमको पहिचानती, अस कहि हँसी बहोर ।
घूंघट खोल विलोकि मुख, दीन्हों गाल मरोर॥४॥

अब तुम दोउ वंशीवट जाई । करो केलि निजनिजमनभाई ॥
सुनि कृपालु अतिही सकुचाये । खोल वदनतिहिहँसि उरलाये ॥
वंसीवटहि चले घनश्यामा । आप बीच द्वौ दिशिद्वौबामा ॥
वसे रैनभरि वन यदुराई । कीन्हविविधसुखवरणिनजाई ॥
होत प्रात सब निजघर आये । यह चारित्र कोउ जाननपाये ॥
पुनि एकदिन ब्रजरानि सयानी । लेकरमुकुर निरखिमुसुकानी ॥
निजप्रतिबिम्बअपर तियजानी । निजतेसुघरसमुझिअकुलानी ॥

दोहा—यहि जो देखैं नन्दसुत, मोहि तजैं तत्काल ।
मनमलीन जी सुखगयो, बढो शोचब्रजबाल॥१॥

यह आई किसलोकते, महासुंदरी नारि।
ब्रजमें तौ ऐसी नहीं, कोऊ गोपकुमारि॥ २॥
सोरठा-कह राधा धरिधीर, जाउ भवन निज सुन्दरी।
यहां बसत यदुवीर, गोपिनको दुखदेत नित॥
दोहा-तेरे हितकी कहतहौं, मान चहै मति मान।
फिरि पाछे पछितायगी, जब हरि लेहैं दान॥
सोरठा-ऐसो ढीठ न आन, त्रिभुवनमें कोऊ कहूं।
जैसो ब्रजमें कान, मनभायो सबसों करत॥
दोहा-यहतौ बोलतीहै नहीं, अति गरबीली बाम।
देखतही पुनि रीझि हैं, छैल छबीले श्याम॥
सोरठा-भई सवति यह आय, अब हरियाके वशभये।
मोर मरन भो आय, उपजायो उर विरहदुख॥ १॥
तिहि अवसर यदुराय, आये तिय जान्यो नहीं।
हर्पि झरोखालाय, देखत प्यारीके चरित॥ २॥
कहतरसीली बात, ज्यों ज्यों प्रिय प्रतिबिम्बसों।
त्यों त्यों मन हर्पात, ब्रजवासी प्रभु साँवरो॥ ३॥

तब प्रियनैन मूँदि जगदीशा। निजकरबिहँसिउलटिदियशीशा
फिर न बाल वह सुन्दरि देखी। प्रभुहि देखि हिय हर्षि विशेखी॥
प्रियछवि देखिगये घनश्यामा। आई पुनि ललितादिक वामा॥
कीन्ह सबनकर आदरभाऊ। बैठीं पुनि अतिहित चितचाऊ॥
कह्यो सखी पाये घनश्यामा। तवप्रसाद कह बोली वामा॥
पुनि ललितहि सब कथा सुनाई। जो कछु चरित कीन्ह यदुराई॥
सुनि हरषीं सब सखी सयानी। कीन्ह तासु बड़भाग्य बखानी॥
तिहि अवसर आये नँदलाला। देखनहेत सुभग वरबाला॥

दोहा–देखि भीर तहँ सखिनकी, गये न भीतर धाम ।
दे उझकैयां द्वारते, लौट गये घनश्याम ॥ १ ॥
छबिसागर सुखकी अवधि, गुणमंदिर सुखखान ॥
मोहिलियो मन सखिनको, रसिकनरेश सुजान ॥ २ ॥
सोरठा–मुरलीमधुर बजाय, प्यारी प्यारी नाम कहि ।
सबको चित्त चुराय, गये सदन आनंदघन ॥
दोहा–कहैं सखी चखश्यामके, रहे हमारे नाहिं ॥
बसे श्यामरसरूपयह, श्याम बसे इनमाहिं ।
सोरठा–कहा करैं सखिश्याम, नैननहीको दोष यह ॥
हठिकर भये गुलाम, नेकु मंदमुसुकानपर ।
दोहा–लालचवश ज्यों मीनमृग, आप बँधावत आय ।
रूपलालची नैन त्यों, भये श्यामवश जाय ॥ १ ॥
अब हम तलफत उनबिना, मृत्युभई अफ़सोस ।
पैसा खोटो आपनो, परखैये क्या दोष ॥ २ ॥
सोरठा–असकहि वे सब वाम, मगनगई प्रभुसुयशकहि ।
गई पुनि निजनिजधाम, भरीं प्रेम आनन्दउर ॥
दोहा–प्रेमभरे छबिसों भरे, भर आनन्दहुलास ।
युगल माधुरीरसभरे, व्रजमें करत विलास ॥
सोरठा–करत अनेक विहार, रूपराशि गुणनिधि युगल ।
राधानन्दकुमार, व्रजबासीजियसुखकरन ॥
दोहा–मनमर्दन मनमथनके, कीन्हों रहसविलास ।
वर्णहुँ सोइपद वंदि प्रभु, जस कछु बुद्धि प्रकाश ॥
जिहिक्षण कृष्ण हरे सब चीरा । तब गोपिनहिं कह्यो यदुवीरा ॥
होय शरदशशी जब इसुमासा । करब तबहि हम रहसविलासा ॥

सो पुनि रही रहसकी आसा। आई अवधि लाग सो मासा॥
निर्मल जल सरवर भरपूरी। फूले कमल मधुप सुखहूरी॥
आई पुनि जब पूरणमासी। निशिप्रवेश जाना अविनाशी॥
निर्मल नभ उडुगण शशिसोहा। जो विलोकि सबकर मनमोहा॥
अस अवसर विलोकि यदुराई। हर्षि कदम तर वेणु बजाई॥
परी वेणु धुनि गोपिन काना। अवर दूसरी सुनी न जाना॥
लटपट भूषण वसन प्रधाना। जो जहँ लायक सो नहिं जाना॥
सोरठा-रही न मनमें धीर, बाजी बाजी कहि उठीं।
व्याकुल महाशरीर, सुनि मुरली ब्रजराजकी॥
दोहा-जो जैसे तैसे उठीं, सुधिबुधि सबै बिसार।
तुरतचलीं ब्रजराज पहँ, लोकलाज घर द्वार॥ १॥
इहि विधि सब बाला चलीं, गईं जहाँ यदुवीर।
हर्षविवश नहिं देहसुधि, श्रवत विलोचन नीर॥ २॥
प्रभुमुखनिरखि रहीं छकिबाला। बोले निठुर वचन नँदलाला॥
निशिअवसर कानन क्याकाजा।त्याग्यो लोक वेद मर्यादा॥
नारिधर्म अस वेद बखाना। पियतजिताहिपुरुषनहिंआना॥
पतिवञ्चक परपति रति रांचै। परै घोर रौरव यह सांचै॥
दोहा-निजपति तजि परपति भजै, तिय कुलीन नहिं सोय।
मरे नरक जीवत जगत, भलो कहै नहिं कोय॥
सोरठा-नारिनके पति देव, वेद कहत हमहूं कहैं।
करो उन्हींकी सेव, जो तुम चाहो सुखलहन॥
सुन प्रभुगिरा सखिन दुखपावा। हृदय कम्प मुख वचन न आवा॥
अरु दृगसे छुटी जलधारा। मनु टूटे मुक्तावर हारा॥
पुनि प्रभुसे बोलीं ब्रजनारी। हरे प्राण तुमहो ठग भारी॥

प्रथमैं हम सब आप बुलाई। अब काहे निठुरात कन्हाई॥
लोग कुटुँब हम पति तजि आई। राखहु शरण कृपालु गुसाईं॥

दोहा—आई शरण सरोजपद, राखहु शरण दयाल।
प्राणचकोर मयंकमुख, बहुरत जियैं न बाल॥

सोरठा—पाप पुण्य क्या नाथ, सो तो हम जानैं नहीं।
बिकीं तिहारे हाथ, अधरामृतके लोभसे॥

सुनत गिरा प्रभु मन मुसुकाने। परम प्रतीति रीति जियजाने॥
मृदु मुसुकाय सबै त्रिय ताकी। बोले निरखि भृकुटि करबाँकी॥
जो तुम प्राण रचे मम रंगा। खेलो रहस आज मम संगा॥
सुनि अस गिरा निकट सबआई। हर्षसमेत विषाद बिहाई॥
चारहुँ ओर घेर घनश्यामहिं। निरखिवदनजीवनफलपावहिं॥

दोहा—ठाढे बीच जु श्यामघन, चहुँ दिशि कामिनिकेलि।
मनहु नीलगिरिकेतले, उलही कंचन बेलि॥

पुनि माया प्रेरी नँदलाला। कहा रचो इकमंच विशाला॥
हरिनिदेश माया पुनि जाई। राखेसि मन्दिर मंच बनाई॥
शोभा जासु कही नहिं जाई। शिवविरंचि मोहे लख ताई॥
बहुरँग सुमन हार बहु माया। धरे आन पहिरे यदुराया॥

दोहा—मंचनिकट इक रुचिर सर, कीन्ह सखिन स्नान।
पुनिपटभूषण पहरिकै, लगीं करन कलगान॥१॥
पुनि गोपिका उमंग अति, चढीं मंचपर जाय।
बाजहिं नूपुर किंकिणी, जनु रतिनाथ सहाय॥२॥

लाज सकोच न प्रभु रसमाती। कामरूप वरणों किहि भाँती॥
धुनि बाजने अनेक प्रकारा। धरे आन जहँ नन्दकुमारा॥
बाजहिं वीण पखावज भारी। नाचहिं बाल बजावहिं तारी॥

गावत सखिन मध्य ब्रजचंदू । मनहु गगन उडुगण बिचइंदू ॥
अतिचंचल चमकतीं कामिनी । सहसनमनु दमकतीं दामिनी ॥
छायरही नूपुर झनकारी । मधुर तान लेतीं ब्रजनारी ॥
तिनके मधमें कहि तत्थेइया । नाचत नटवरवेष कन्हैया ॥
उर सोहति वैजंती माला । जनु नीरदमधि धन सुरपाला ॥
करत रास इहिभाँति अखण्डित । थलथलभो वृन्दावनमण्डित ॥

दोहा-इहिविधि विहरत कान्ह तहँ, लेसँगसखिनजमाति ।
तहां महामुद मचरह्यो, शरदपूर्णिमाराति ॥

कोउ सखिको हरि हाथ पसारी । परसि कपोल देहिं मुदभारी ॥
किहुको मिलत धाय मनमोहन । चूमतवदनसछकिछविछोहन ॥

दोहा-कोउ नाचति ब्रजगोपिका, विथुरिजातअलकालि ।
निजकरताहि संभारते, अतिमोदित वनमालि ॥ १ ॥
कोउ सखिकी ऊरू परसि, रम्भखम्भ दरशाय ।
इहिसमताई करहु तुम, अस कहि हँसे हँसाय ॥ २ ॥
काहूकी नीवी गहैं, सो लखिकै मुसुकात ।
मनहु आपने प्रेमको, गर्व दिखावत जात ॥ ३ ॥
किहुके कुचन कठोर निज, कर परशत यदुराय ।
रूपदर्पते दर्प नहिं, हँसि कहि हँसे हँसाय ॥ ४ ॥
कोउकामिनिके कान्ह गुणि, कामकलानिप्रवीण ।
नखछत तिहि अंगनि कियो, मनहु मुहर करदीन ॥५॥
कोउसखिकोकौतुकलखनि, मिषबुलाययदुराउ ।
मिलतभये मोदित मनो, सो किय मुग्धाभाउ ॥ ६ ॥

किहुको करगहि नचत मुरारी ।सो सुखताकि छाकि छबि प्यारी॥
थिरह्वै रहति फिरति नहिं बाला । थकीं थकीं कहि हँसत गुपाला ॥

किहुको करि कटाक्ष मुसुकाई। लियो आशुही चित्त चुराई ॥
सो जब मिलनहेतु ढिग आई। आप गये तब अनत पराई ॥
नीचे शिरकरि रही लजाई। हरि हँसि हेलिन दियो हँसाई ॥
किहुको नैन नचाय विहारी। कहतभये क्या आश तिहारी ॥

दोहा—इहिविधि हरि व्रजसुंदरिन, विविध भाव दरशाय।
कलाकुतूहल करत बहु, मनसिज दियो बढाय ॥

सबको किय सन्मान विहारी। सबको दीन्हों आनँद भारी ॥
मानो अस सिगरी व्रजनारी। हमरेही वश भे गिरि धारी ॥
बहुआदर करवावन लागीं। अतिशय प्रेम गर्वमहँ पागीं ॥
कहनलगीं हरिसों अस वानी। अमितभई गति जात न ठानी ॥
कोउ कह नृत्य दिखाउ कन्हाई। कोउ कह दीजे अलक बनाई ॥
कोउ कह बाज बनाय सुनावो। कोउ कह तुमहिं कान्ह अब गावो ॥
कोउ कह सुमनलाय मुहिं दीजै। कोउ कह भूषण भूषित कीजै ॥

दोहा—ऐसे व्रजनारिन निरखि, निजवशको अभिमान ॥
विप्रलम्भरस सुखलहन, हरिभे अन्तर्धान ॥ १ ॥
अलिनमंडलीमध्यमें, चितै चपल चहुँओर।
अन्तर्हित ह्वै जात भे, राधा नंदकिशोर ॥ २ ॥
जब न लखो श्रीकृष्णको, व्रजवनिता अकुलाय ॥
बूझनलागीं कृष्णको, गये कहां यदुराय ॥ ३ ॥
कहां जाय कैसी करैं, कासन कहैं पुकारि।
हैं कितहूं सूझत नहीं, कैसे मिलहिं मुरारि ॥ ४ ॥
जैसे मणिविनु दीन फणि, यथा मीन विनु वारि।
तिमि व्याकुल भइं गोपिका, विन श्रीकृष्णमुरारि ॥ ५ ॥

एक एकसन बूझहिं धाई। हे सखि कहां गये यदुराई ॥
गेन दीप त्यागी व्रजनाथा। तन मन दीन्ह तुम्हारे हाथा ॥

लोकलाज पतिसेज विहाई । आई शरण शरण यदुराई ॥
तदपि नाथ वनमाहिं बिसारी । जाँय कहाँ सब शरण तुम्हारी ॥
उठो कठिन उर अन्तरदाहू । जडचेतन पूछहिं सब काहू ॥
हे वट पीपर पाकर वीरा । लह्यो पुण्य करि उच्च शरीरा ॥
वल्कल पत्र फूल फल डारा । तिनसन साधत परउपकारा ॥
हे कदम्ब अम्बा कचनारी । तुम कहुँ देखे जात मुरारी ॥
हे अशोक चंपा करवीरा । जात लखे तुम कहुँ यदुवीरा ॥
हे तुलसी नित हरिकी प्यारी । तनुते कबहुँ न राखत न्यारी ॥
फूली आज मिले हरि आये । हमहूँको किन देहि बताये ॥
जाही जुही मालती माई । तुम देखे कहुँ कुँवर कन्हाई ॥
मृगन पुकार कहैं ब्रजनारी । इत तुम जात लखे बनवारी ॥

दोहा-प्रीतम प्रभु जिन द्रुमनसों, परसत श्याम शरीर ।
तिनको भेंटत गोपिका, मेटत उरकी पीर ॥

आगे देख कृष्णपद अंका । हरषीं लाय विलोचन पंका ॥
पुनि त्रियसँग तिनके पद चीन्हा । देखिसखिनअतिअचरजकीन्हा ॥
सुभगसेज इक पल्लवकेरी । गईं आगे पुनि सो तिन हेरी ॥
इत प्रभुसँग वृषभानु किशोरी । करतविलासविविध मनको री ॥
प्रभुहि बाल अपने वश जाना । बोलीबिहँसिसहित अभिमाना ॥
दूखत चरण चलो नहिं जाई । लेहु प्राणपति कन्धचढाई ॥

दोहा-सुनि प्रभु बैठे बिहँसि मग, गईं पीठपरनारि ।
परम प्रमोद कि वर्णहूँ, पंकजपाणि पसारि ॥

सोरठा-भे प्रभु अन्तर्धान, अहंकार ममता दलन ।
बालबिना भगवान, मनहु तडित घनते विलग ॥

हाहा नाथ परम हितकारी । कहांगये स्वच्छन्द विहारी ॥
चरण शरण दासी मैं तोरी । कृपासिन्धु लीजे सुधि मोरी ॥

उठी कठिन उर अन्तरपीरा । गिरे अवनि कहि हा यदुवीरा ॥
तिहिअवसर सब सखी सहेली । गईं राधिकाढिग अलबेली ॥

दोहा–जिततितते धाईं सबै, ब्रजसुन्दरि अकुलाय ।
व्याकुल लखिअतिलाडिली, लीन्हीं कण्ठ लगाय ॥ १ ॥
धरि धीरज पुनि राधिका, मिली सबन बिलखाय ।
परमविलाप कलापमें, कहे कृष्णगुण गाय ॥ २ ॥
पुनि राधा औ गोपिका, खोज विपिन समुदाय ।
बहुरि गईं तिहि थलहि जहँ, भेंटी सब यदुराय ॥ ३ ॥

सोरठा–कह गोपिन धरि धीर, प्रभुके बालचरित्र जो ।
करिय आज सोइ वीर, तिहि मायाको संगले ॥

कोइ गोपिका बनी यदुराया । बन पूतना गई पुनि माया ॥
जो गोपिका बनी गिरिधारी । तिहि वह दूध पियत वरमारी ॥
बनी बहुरि इक युवति यशोदा । लगी मथन दधि परम प्रमोदा ॥
कृष्णरूप गोपी तहँ आई । ले दधि ग्वाल गोपिका खाई ॥
यशुदा ताहि बाँधि ऊखलसन । माया बहुरि बनी यमलार्जुन ॥
कृष्णरूप गोपी तिहि तोरा । माया बनी निशाचर घोरा ॥
कृष्णरूप मारे खल जाई । माया बहुरि धेनु बनिआई ॥
कृष्ण रूप सो लेवन जाई । माया बहुरि व्याल बनिआई ॥
कृष्णरूप गोपी नथ लाये । इहि विधि कीन्हें चरित सुहाये ॥
पुनि सब बैठ मंचके तीरा । गावैं पुनि गुणगण यदुवीरा ॥
हम गोपी सब चेरि तुम्हारी । देहु दयाकरि दरश मुरारी ॥
श्याम सलोन विलोचन हेरी । भइ तबते बिनदामन चेरी ॥
भृकुटी चाप विलोचन तीरा । हमतनु हने बाण यदुवीरा ॥
चले प्राण तिहि पीर हमारे । काढि आन किन नन्ददुलारे ॥
जीवत हमहिं कृपा अब कीजै । तजि कठोरता दर्शन दीजै ॥

दोहा-तुम सम दीनदयालु प्रभु, जगमें और न कोय ॥
कल्पद्रुम तरु जासु घर, सहै दरिद्र कि सोय ॥ १ ॥
हनी हेमवारिज विपिन, यहिविधि महा मलीन ।
हा यदुनंदन प्राणपति, जीवन तुम आधीन ॥ २ ॥
अस कौतुक अवलोकि प्रभु, बिहँसे दीनदयाल ।
साँची प्रीति प्रतीति लखि, मो बिन जियैं न बाल ॥ ३ ॥
पुनि तिनहींके बीचमें, प्रगटभए नँदलाल ।
प्राणपाय तनु ताहि विधि, उठबैठीं व्रजबाल ॥ ४ ॥

निरखि वदन सब गइँ प्रभुपाहीं । ठगिसी रहिं तब कहिकछुनाहीं ॥
पुनि धरि धीर लिये सखिसाथा । रहस भवनमें गे यदुनाथा ॥
दीन सखी कोउ आसन डासी । बैठगये हँसि आनँदरासी ॥
पुनि इकसखी कह्यो करि क्रोधा । कह्यो कठिन कपटी मनरोधा ॥
परमनधनहित चित प्रभु चोरा । जानत पीर न नंदकिशोरा ॥

दोहा-यहिते प्रभु अब उचित यह, बनो योग भलआय ।
निजकर माहुर लायके, सबको देहु खवाय ॥

बहुरि कोपि कोउ गोपकिशोरी । बोली प्रभुतन नैन मरोरी ॥
गुण त्यागे अवगुण जो गहई । मन कपटी तासों क्या कहई ॥
कह इक चारि भाँति जन होई । तुमको अहो कहो प्रभु सोई ॥
एकभलेकी करत भलाई । दूजे भलकी करत बुराई ॥
तीजो बुरे कि करत भलाई । चौथे भल कीन्हें अधमाई ॥
इनको भेद सुनावहु प्यारे । सत्य मानिये वचन हमारे ॥
प्रभु हँसि कहा बूझि भल ज्ञाना । सुना सकल मैं करहुँ बखाना ॥
भलेभले कहँ जानहु नीका । जिमि व्याहन वाहन सबहीका ॥

दोहा-युगल प्रीति इक ओरकी, जिमि सुत पितु महतारि ।
तीजे बुरेहु भलाइ कर, जिमि घन वर्षत वारि ॥ १ ॥

चौथे नेकी पर बदी, करत शत्रु सोइ जान ।
यह सुनि एकै एक लखि, सबगोपी मुसुकान ॥२॥
प्रभुहि बाल चौथे समजानी । बोले बिहँसि श्याम सुखदानी ॥
मोकह कहा हँसो ब्रजबाला । हौंचारहुसन अलग कृपाला ॥
निर्गुण सर्व रूप सब वासी । सतचेतन घन आनँदरासी ॥
नहिं कोउ शत्रु मित्र जग मेरो । पूरणहेतु करों जन केरो ॥
तुम सब भई प्रेम अधिकारी । तिहिते रुचि फुर करहुँ तुम्हारी ॥
सुनहु हमारी तुम यह बाता । मानहुँ एक भक्तिकर नाता ॥
अन्तर्हित तुमसे नहिं भयऊ । केवल प्रेमपरीक्षा लयऊ ॥
दोहा–तुमते प्रिय मुहिं आन नहिं, पुनि पुनि कह भगवान ॥
तजहु शोच अब मोदभर, रचहु राससुखदान ॥ १ ॥
मुखमञ्जनकरि अंगछबि, उठीं सकल हरषाय ।
हरिसँग करहिं विलास बहु, हर्ष कह्यो नहिं जाय ॥२॥
कृष्णयोगमाया ठई, भये अंश बहु देह ।
सबको सुख चाहत दियो, लीला परम सनेह ॥ ३ ॥
जितनी रहसभवन रहिं बाला । तितने रूप धरे नँदलाला ॥
बहुरि कीन प्रभु रहसविलासा । पूजी सकल सखिनकी आसा ॥
पुनि जोरे हाथनसन हाथा । तिनके बीच बीच हरिसाथा ॥
निजनिजपास सखिन हरिजाना । नहिं कोउरूप भयो पहिचाना ॥
फिरत सखी करसों कर जोरे । प्रमुदित हृदय संग हरि मोरे ॥
बिच गोपी बिच नंदकिशोरा । सघनघटा दामिनि चहुँ ओरा ॥
श्यामकृष्ण गोरी ब्रजबाला । मानहु कनक नील मणिमाला ॥
हँसत सुवाति मुख नैन मरोरी । प्रभुतन लिपटि तान बहु तोरी ॥
दोहा–हरिको कर निजकुचनमध, लेती कोउ लगाय ।
मदन विजैहित मनु हरहिं, पूजत कमल चढाय ॥ १ ॥

रासमंडली मध्यमें, रही मधुर धुनिछाय ।
गावहिं राग सुहावने, चतुराई दरशाय ॥ २ ॥
पुनि बहुताल विधान बजाई । कहि न जाय शोभाअधिकाई॥
बाजनलगे झाँझ डफ बीना । नृत्य करहिं गोपिका प्रवीना ॥
तालमृदंग मधुरधुनि बाजे । राग अनूप सभासद भ्राजे ॥
ब्रजनारीके बीच बिहारी । बीच बिहारीके ब्रजनारी ॥
कोउ घुँघरुको करि अतिशोरा । लेहि भेदकरि बहु विधितोरा ॥
कोऊ सखी मंद मुसुकाई । नैन नचावति लाज दिखाई ॥
कोउ नचावत भ्रुकुटिनकाहीं । तालविधानडिगति कहुँ नाहीं॥
कोउ हरिको बहु भाव बताई । देत कपोल कपोल मिलाई ॥
निज मुखकी बीरी ब्रजसाई । तिहि आलीको देत खवाई ॥
सवैया-जो गतिलेले नचैंसिगरी तेउ तालविशालकैकोटिकलैया॥
जोनहिंतान महानहुलेती प्रवीण वे गोकुलगाँव लुगैया॥
तैसेहि ताननतेइ गती सहजेमहँ लेतो रिझाय कन्हैया ।
नाचिरह्योमधिमें मनमोहन देकर ताल कहे ततथैया ॥
कवित्तदण्डक-कोईमृगनैनीकी सुवैनीछबि घनीछुटी,
कोईपिकबैनी वह नीबीहु सँभरतीं ।
कोई चातुरीको भयो अंचलहु चंचलपै,
नैकहूं दृगंचलको चंचल न करतीं ॥
यदुराज भूषणके जाल तनु छूटे टूटे,
फूलनके माल तनु हालको बिसरतीं ।
प्रीतमको प्रेममद पानकैकै प्यारीसबै,
भई मतवारी ब्रजकुंजन विचरतीं ॥
दोहा-पाइंगदरव मधुर अति, चलहिं तालपै नारि ।
क्रीडहिंपाणि झुकाय तनु, कर बर वसन सम्हारि ॥

कृष्णवदन श्रमबिंदु सुहाये। जनु मुक्ता गिरि नील बँधाये॥
युवतींवदन अलक झुकि आई। जनुशशिसुधापियनफणिजाई॥
कोउ कह तान बीणके संगा। कोउ न्यारी ले उठै तरंगा॥
फूली फिरैं रहसके माहीं। कृष्णसमेत तिन्हैं सुधिनाहीं॥
कोउ किहु तान प्रेमभरि ताकी। विहँसैं नैन भौंहकरि बाँकी॥
इकटक चितै प्रेम अति गाढी। कोउ प्रभुकंधदिये भुजठाढीं॥
नूपुर पग कटिमणिमञ्जीरा। करहिं समान शोर गंभीरा॥
हरि तिनके कीन्हें गलबाहीं। डोलत नितनिरखतसुखजाहीं॥

दोहा—यदुपति रासविलास लखि, मोहिगईं सुरनारि।
जे जहँ ते तहँ अचलह्वै, इकटकरहीं निहारि॥

कृष्ण मिलन कहँ ललकत रहहीं। धन्य धन्य गोपिनकहँकहहीं॥
शरद पूर्णिमा दीरघ राती। होतभई ब्रजतिय दुखघाती॥
हरिको रास निरखि सुखसारा। थिर ह्वै रह्यो चक्रशिशु मारा॥
रहीं तहां जेती ब्रजनारी। पुनि तितने ह्वै गये विहारी॥
तितनेही कुंजनमें जाई। विहरत भे करि कला कन्हाई॥

दोहा—श्रमितजान सखियन सकल, करनयमुनचनिलाल।
जलविहारसुखलेन हित, बोले वचन रसाल॥

चलहु करैं अब सलिलविहारा। बहुत कियो कुंजन संचारा॥
करि जलकेलि करैं श्रम दूरी। जैहैं सकल आश तहँ पूरी॥
अस कहि चले यमुन गिरिधारी। प्रीतमसंग प्रमोदित प्यारी॥
मिलत सखिन भइ मर्दित माला। कुच कुमकुमते रँगी रसाला॥
तहँ जलकेलि करन सखिलागीं। परमप्रेम पागीं बडभागीं॥
रत्नजटित कंचन पिचकारी। निज निज कर ले सब ब्रजनारी॥
हरिपै डारहिं बारंबारा। करहिं आडकर नन्दकुमारा॥

आपहु ताकि उरोजन मारैं। चंचल अंचल सखी निवारैं॥
मुरि मुसुक्याय कटाक्षनि करहीं। प्रीतमके उर आनँद भरहीं॥
वर्षहिं कुसुम देव बहुरंगा। चढे विमानन अतिहि उतंगा॥

दोहा-भई कलिन्दी कुसुममय, उडत सुरभि चहुँओर॥
सखिन सहित विहरत सलिल, हिलमिल नंदकिशोर॥

इहि विधि बहुकारि सलिल विहारा। सखिनसहितपुनिनंदकुमारा॥
निकसि सलिलते सखिन समेतू। पहरे नवल, वसन छबिसेतू॥
आलिन सहित तहाँ वनमाली। यमुना कूलन कुंजरसाली॥
बिहरन लगे लखत वनशोभा। जिहिलखिकाकोमननहिंलोभा॥
इहि विधि शरद निशामहँ भूपा। कियो रास यदुनाथ अनूपा॥
सौरतरुद्ध रहे भगवाना। यह प्रसंग काहुहि नहिं जाना॥
रही निशा जब दंडहि चारी। तब व्रजनारिन कह्यो मुरारी॥
गमनहु निजनिज गेह पियारी। मानहु अब यह सीख हमारी॥
सुनि प्रिय वचन दुखित व्रजबाला भवनगमनलागतसमकाला॥
कह हरि तुम जनि होहु उदासा। जानहु सदा मोहिं निजपासा॥
जो मम पद तुम प्रीति बढाई। भई परमपावन अधिकाई॥
सुनतवचन पदगहि घनश्यामहिं। गईसकलते निजनिज धामहिं॥

दोहा-पुनि यदुनायकहू तहां, नंदभवनमें आय।
कियो शयन निजसेजपर, काहु न परयो जनाय॥

गोप सबै हरि माया मोहे। निजनिजतियननिकटनिजजोहे।
दोष दियो कोउ कृष्णहि नाहीं। रहे सबै निजनिज गृहमाहीं॥

दोहा-धर्मव्यतिक्रम साहसहु, लख्यो ईश्वरनमाहिं।
तेजस्विनको दोष नहिं, जैसे पावकमाहिं॥

ईश्वर छाँडि और जगमाहीं। मनहुँते करहिंकबहुँ असनाहीं॥
करहिं जु हठ शठ वसहिं अजाना। पीवहिंविषजिमिहरितजआना॥

वचन ईश्वरनके सत जानो । पैआचरण कहूं मति आनो ॥
अनुचित उचित जु ईश्वरकरई ।तिहिफलसुखदुखनहिंअनुसरई॥
तिनके नहीं देह अभिमाना । वे किमि लहैं कर्मफल नाना ॥
जे जगमें अनन्य हरिदासा । ते नहिं पाप पुण्य परकासा ॥

दोहा—तौ जगके प्रेरक सदा, यदुपति परम प्रताप ।
महाराज कैसे कहैं, तिनको पुण्यहु पाप ॥ १ ॥
गोपिनके तिन पतिनके, अन्तर्यामीनाथ ।
तौ परदारा नहिं रहीं, हिये गुणहु गुणगाथ ॥ २ ॥
वेदऋचा यहि कारणे, भई आन ब्रजबाल ।
पूर्वगिरा हारि कीन्ह फुर, यह चरित्र महिपाल ॥ ३ ॥
कामविजय यह कृष्णकी, कहै सुनै जो कोय ।
कामविजय तिहिपुरुषको, जगतमध्य हठिहोय ॥ ४ ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर कृष्णरासलीला वर्णनोनाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

दोहा—विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिरि राम सुखदान ।
वरणों दशमस्कन्धकी, कथा सुमंगलखान ॥ १ ॥
भे नृप द्वादशवर्षके, यहि विधि कृपा निकेत ।
पूजनको जगदम्बिका, सफलकामना हेत ॥ २ ॥

चले नंद सब कुटुम समेता । गये हर्ष श्रीगौरिनिकेता ॥
करि पूजा पुनि विप्र जिमाये । रहे तहां तिहि निशि सुखपाये ॥
निशि अवसर इकअजगरनागा । नंदचरणगहि निगलनलागा ॥
हाहाकार कीन्ह नँदराई । धाये शब्द सुनत यदुराई ।
जाय अजगर जनत्राता । मारि लात प्रभु ताहि निपाता ॥

तुरतहिं रुचिररूप तिहि पावा । जोरि पाणि प्रभु सन्मुखआवा
मैं विद्याधर सुरपुरवासी । कीन अंगिराऋषिसन हाँसी ॥
तिनके शाप व्यालतनु पाई । तुवपदपरत तर्यो यदुराई ॥
अस कहि प्रभुके पद शिरनाई । गयो गगन आपनि गतिपाई॥
होत प्रात सबही ब्रजबासी । आये वृन्दावन सुखरासी ॥

दोहा—इकदिन ब्रजवासिनसहित, श्याम राम दोउ भाय ।
गायरहे कछु मोदभरि, शंखचूड़ तहँ आय ॥

सो पुनि सकलयुवति ले भागा । कालविवशमतिमंद अभागा ॥
हाहाकार कीन ब्रजबामा । धाये कृष्णसहित बलरामा ॥
रामहिं राखि सखिनरखवारी । आप गये पुनि यक्ष पछारी ॥
ताहि मारि मणि लीन्ह निकारी । बलके राखी आय अगारी ॥
इकदिन असुरे कंस पठायो । वृषभरूपधरि सो ब्रजआयो ॥
फिरै डकारत अति इठलाता ।पकरि सींग प्रभु ताहि निपाता॥
पुनि इकसरतीरथ आवाहन । कर स्नान कियो जगपावन ॥
कंसराज पुनि कोप बढ़ायो । केशी असुर सुब्रजहि पठायो ॥
होत प्रात केशी रणधीरा । गयो मूढ़ धरि अश्वशरीरा ॥
अरुणनैन हँसत बहु बारा । भागत फिरहि लात बहु झारा॥
व्याकुल लोग सुने असुरारी । धाय गये लखि अश्वप्रचारी ॥
सुनतसरोष चला शठपेली ।प्रभुनिज पाणि दियोमुखमेली ॥
बचन चहत कर शैलसमाना । फाटेउ कंठ तजे तनु प्राना ॥
लखि सब ग्वाल बाल सुखपावा । बालक बनि व्योमासुर आवा॥
बालन सँग सो खेलनलागा । वृकबनि बाल उठावन लागा ॥
तब नँदलाल ताहि पहिचाना । मारदीन्ह गति कृपानिधाना॥

दोहा—यहिविधि निजभटनिधन लखि, डर्यो कंस अकुलाय ।
सभा जोर कह आरिकहो, किहिंविधि मार्योजाय ॥

सब मल्लन यह बात जनाई । रामकृष्णको लेहु बुलाई ॥
रंगभूमि जब दोऊ आवहिं । मल्लयुद्ध करि मारगिरावहिं ॥
सुनतवचन नृप अति सुख पायो। करिआदर अक्रूर बुलायो ॥
तुम मधुवनको जावहु भाई । लाहु बोल बलराम कन्हाई ॥
धनुषयज्ञ देखनके हेता । लावहु सबै बुलाय सचेता ॥
सपदि साजि स्यन्दन लेजाओ । ब्रजवासिनको संगे लाओ ॥
कार्तिक वदी त्रयोदशिभोरा । चढ़ि अक्रूर चले ब्रज ओरा ॥
करत मनोरथ मगमें जाता । देखिहौं आजचरण जलजाता ॥
प्रभुके चरण जोर कर परहूं । धुनि पगरेणु शीश निजधरहूं ॥
जगअघहरण जेइ पग आहीं । सेवत सब ब्रह्मादिक ताहीं ॥
जिहिपदकमल देवसारि आई । देखिहौं आज चरण सो जाई ॥

दोहा—देखि शकुन मन हर्ष अति, चली दहिनमृगमाल ।
प्रेमविकलतनु सुधि न कछु, अबमिलिहैं नँदलाल ॥

प्रभुपद अंकलखत रथ त्यागा । लोटत चले उमँगि अनुरागा ॥
यामें परे कृष्णपद पंकज । सेवत जिन्हैं देव शंकर अज ॥
पादपसे भेंटहि सुखसानी । इनतटआवत नित सुखदानी ॥
चल न सकत तनुसुधि रहि नाहीं। बैठगये तिहि मारगमाहीं ॥
प्रेम बिचार तहाँ प्रभु आये । लखि अक्रूर नैन जल छाये ॥
प्रभुपदकमल परे पुनि धाई । जिय सुखमनो व्यालमणिपाई॥
गद्गदकंठ न कछु कहिआवा । प्रभुउठाय निज हृदय लगावा॥
प्रभुबूझत तिहिआव न बानी । चले लिवाय भवन गहिपानी॥
नंद जबै अक्रूरहि देखी । मिले हर्षि उर धाय विशेखी ॥
आसन दीन्ह सुसेवकआये । उबटि सुगंध सुमल अन्हवाये ॥
चौका पटा यशोमति दीन्हा । हर्ष सहित तिन भोजन कीन्हा॥

भोजन करि जब पौढे आई । बूझी कुशल प्रेम अधिकाई ॥
कह अक्रूर कंस महराजा । तुम्हैंबुलायो सहित समाजा ॥
धनुषयज्ञ देखनके हेता । तुम्हैं बुलाये प्रेमसमेता ॥
राम श्याम दधिसहित बुलाये । सुनत नन्द अतिशयअकुलाये॥
बोली यशुमति अति अकुलाई । काहे मेरो जाय कन्हाई ॥
मेरे श्याम राम दोउ बारे । धनुषयज्ञ नहिं जाँय सकारे ॥
बोले कृष्ण जाहुँ मैं मैया । धनुषयज्ञ नहिं लखो कबैया ॥
आवहुँ वेग बबाके संगा । निठुरभये कहि बचन अभंगा ॥

दोहा-यशुमति अति व्याकुल भई, रहे न तउ गोपाल ।
तब व्रजपतिसे कहन लगि, ऐयो वेग दयाल ॥

इहिविधि विलपति रैन विहानी । सोई नहीं नन्दकी रानी ॥
कह्यो नन्द सब गोप बुलाई । लेदधि दूध चलो सब भाई ॥
पुनि बलराम कृष्ण दोउ भाई । लिये सकल निजसखा बुलाई ॥
आगे चले नन्द उपनन्दा । पुनिपाछे हलधर गोविन्दा ॥
कृष्ण गमन जब गोपिन जाना । भई विकल नहिं जात बखाना॥
प्रभुके रथहि घेरि व्रजनारी । बोलीं वचन नैन भरि वारी ॥
किहि अघ हमैं तजत व्रजनाथा । होय रजाय चलैं सब साथा ॥
यह अक्रूर क्रूर है भारी । जानत नहिं कछु पीर हमारी ॥

दोहा-सुनुसखि जीवनप्राण अब, मिलैं न कौनिहुँ भाँति ।
सबकर सुकृत सिरान यह, कहिकहिअसबिलखाति ॥

गोपीपति प्रभु नाम तुम्हारा । तजतकौन अघ साथ हमारा ॥
तुमविन नाथन निशि दिनकटई । पलक ओटभे छाती फटई ॥
हितलगाय अब करत बिछोहू । निठुर निर्दयी धरत न मोहू ॥
परहिं विलोचनसे जल टूटी । मलिन बदन लटतापर छूटी ॥

यहि प्रकार वनिता ब्रजकेरी। भई बिकलकहि जात न हेरी॥
बोले हरि मैं आउँ सवारी। मनमें धीर धरो ब्रजनारी॥
धाई बहुरि यशोमति रानी। सुतलगायउरअतिबिलखानी॥
मोहन इधर देख तौ लीजै। बिछुरत लाल हमें कछुदीजै॥
लेहु निहार जन्मको खेरो। बहुरो ब्रजमें होत अँधेरो॥
यहकहिअतियशुमतिपछिताई। किये यत्न बहुप्राणनजाई॥
तब हरि मायामाहिं भुलाई। पदगहि रथ बैठे दोउ भाई॥
परम विकल भईंयुवतिविशेखी। रहीं ठढीं जबलगि रथ देखी॥
तुरतहि कृष्णपयानो कीन्हों। गोपिनकोलखिमृदुहँसिदीन्हों॥
जब न दीख रथ रेणु उडाई। परीं अवनि पुनिसबमुरझाई॥
उर अतिदाह विलोचन वारी। जनु जुआरि सबसम्पतिहारी॥

दोहा–यहिप्रकार प्रमदा सकल, व्याकुल परम अधीर।
होय अचेत सचेत सब, बहैं विलोचन नीर॥

अवधिआश पुनि सब गृहआईं। मनमलीन हरिसुरतिसमाईं॥
इत अक्रूर विचारन लागा। हौ मैं अतिमतिमन्द अभागा॥
माता अरु जेती ब्रजनारी। सबको मैं दीन्हो दुख भारी॥
सुनो कृष्णको हरि अवतारा। कसयुबतिनसँगकरतविहारा॥
इमि अक्रूर गुणत मनमाहीं। जानलई सबकृष्णतहाहीं॥
यमुनातट जब रथचलिआयो। तहां कृष्ण ठाढो करवायो॥
आप न्हाय रथ बैठे आई। आगे गये गोप समुदाई॥
न्हानहेत अक्रूर सिधाये। गोता जब जलमाहिं लगाये॥
अवलोके तहँ नन्ददुलारे। शिरनिकार पुनि रथहिनिहारे॥

दोहा–भे चकृत अक्रूर तब, पुनि पुनि करत विचार।
बैठे रथपर दूरि प्रभु, कामति भोरि हमार॥

पुनि गोता अक्रूर लगावा। कृष्ण चतुर्भुज रूपदिखावा ॥
मुनि किन्नर गँधर्व सब देवा। करत कृष्णपदकी सब सेवा ॥
पुनि अक्रूर निरखि जल देखा। बन्धुसहित तहँ सुन्दर वेखा ॥
तब स्तुति जलभीतर कीन्हा। दीनबंधुके पदरति भीन्हा ॥
जय जगकरन हरन जगवन्दन। जयजयसृजतमोहदलगंजन ॥
गोद्विजमुनि सुरसन्तन हेतू। धरत वेष बहु यदुकुलकेतू ॥
अग जग जीव सकल जिहि जाये। पुनितनुतांजिसबतुमहिंसमाये ॥
जासु ब्रह्मशिव पार न पावहिं। कह अक्रूर कूरकहि गावहिं ॥
वरणि रूप अति अस्तुतिकीन्हा। तब प्रभु निजमायहि हरलीन्हा ॥
तब अक्रूर धीर धरि भारी। आय कृष्णढिग गिरा उचारी ॥
अहो नाथ मैं भर्म भुलाना। अब प्रभु पाहि कृपानिधिजाना ॥
जब अक्रूर विनय बहु कीन्हा। विहँसि कृपालु भक्तिवरदीन्हा ॥
कह अक्रूर जोर पुनि हाथा। तव माया अग जग यदुनाथा ॥
अब दयालु जनपर हित कीजै। चढि रथ अब मधुपुरपग दीजै ॥
पुनि स्यन्दनचढ कृष्ण सिधाये। लोग सकल पुरबाहर आये ॥
गोपराज सरितावर तीरा। डेराकीन्ह कहेउ यदुवीरा ॥
कह अक्रूर सुनिय ब्रजराजू। करिय पवित्र मोर गृह आजू ॥

दोहा-अबहिं भोजपति से कहो, कथा हमारी जाय।
पुनि निजधाम दिखावहु, सुनत चले शिरनाय ॥

समाचार सब नृपहि सुनाई। गे अक्रूर भवन सुखपाई ॥
इत प्रभुनन्दहि प्रेम जनाई। बोलतभये सुजन सुखदाई ॥
जो पितुकर अनुशासन पावहुँ। नगर देख मैं आतुर आवहुँ ॥
जाहु तात कररारि न कोई। आवहु वेग विलम्ब न होई ॥
सुनि पितु गिरा हर्षि दोउ भाई। चले संग सब सखालिवाई ॥
पुरबाहर शोभा अधिकाई। देखत सुखी भये दोउ भाई ॥

कोट अनूप उच्चअति धामा। वरणिसकै को तिहि गुणग्रामा॥
तहां रजक बहु भूपतिकेरे। लिये जात पट भार लदेरे॥
यदुकुलकमल रजकढिग जाई। कहे वचन अतिहित मुसुकाई॥
हमैं विगत रज अम्बर देहू। राजे मिलि आवैं पुनि लेहू॥
जो नृपके पहिरावनिपैहैं। तामें ते कछु तुमको देहैं॥
कह सो नृप द्वारेह्वै आवहु। पुनि चाहो सो मोहिं झुकावहु॥
वनवन फिरत चरावत गैया। अहिरजात कामरी उढ़ैया॥
नैक आश जीवन के जोऊ। खोवनचहत अबै तुम सोऊ॥
सुनत कृष्ण क्रोधातुर धाये। मारि ताहि सब वस्त्र छिनाये॥
जोपि वसन छीने यदुराई। पहरन लगे सबै हरषाई॥

दोहा—कटि कसि पग पहरे झगा, सूथन मेलीबाँह।
बसनभेद जानत नहीं, हँसत कृष्ण मनमाँह॥

तिहि अवसर सूची इक आवा। प्रभुपदपंकज तिहि शिरनावा॥
आज्ञा ले सब वस्त्र सुधारे। पहिराये रुचि नंददुलारे॥
ताहि भक्तिवर दे वरदाना। पुनि प्रभु चले महीप सुजाना॥
नाम सुदामा माली आवा। चरणवंदि अपने घर लावा॥
सबको सुमनमाल पहिराई। चले भक्ति वर दे यदुराई॥
आगे जात कूबरी देखी। मनमहँ प्रभुकी भक्ति विशेखी॥
प्रभुको लखि बोली करजोरी। पुजवहु नाथ एक रुचि मोरी॥
निजकर चन्दन देहुँ लगाई। तौ मम जन्म सफल होजाई॥
प्रीतिविलोकि हँसे यदुराई। बोले कर जो तोहि सुहाई॥
प्रभुरुचि जान कुवँरि अनुरागी। शिर श्रीखण्ड लगावन लागी॥
सुभग तिलक प्रभुके शिर काढी। मनसिजनेह निरन्तर वाढ़ी॥
बहुरि रामशिर चंदन दीन्हा। सफल जन्म जीवनफललीन्हा॥

तिहिमनकी प्रभु सब गति जानी। गये समीप मधुर मुसुकानी ॥
चरणचरणधारि वेगि कृपाला। चिबुकलगाययुगल करताला॥
धारिकरशिर जबझटककृपाला। भई रुचिर जनुमनसिजबाला॥
बोली जो अस दीन्ह स्वरूपा। करिय पवित्र निकेत अनूपा ॥
देहुँ तोहिं सुख कंसहि मारी। अस कहि चलेकृपालु अगारी ॥

दोहा-परी धूम मथुरानगर, आवत नन्दकुमार।
सुनिधाये पुरलोग सब, गृहको काज बिसार॥

परमसलज जे बडकुलनारी। सुनत गईं चढ झपट अटारी ॥
बूझहिं एकहि एक पुकारी। इत आवत बलभद्र मुरारी ॥
कोउ तिय खात न्हातसे भाजैं। कोउसमीपमिलिप्रभुसुखराजैं॥
कामकेलि पियकी बिसरावैं। उलटे भूषण वसन बनावैं ॥
लाज कान सब अबलन डारी। कोउखिरकिनकोचढीअटारी॥
कोउ वीथिन कोऊ खडि द्वारे। कोउ धावत पुनि बाटबजारे ॥
ऐसहि जहां तहां सब नारी। प्रभुहि बतावैं बाँह पसारी ॥

दोहा-नीलबसन गोरांग जो, पाणि शरासनबाण।
नाम तासु बलभद्र सखि, रोहिणिपुत्र सुजान ॥ १ ॥
पीतवसन लोचन चपल, इन्दुवदन तनु श्याम।
देवकिसुत सो जानिये, नाम कृष्ण सुखधाम ॥ २ ॥

यह भानजे कंसके दोऊ। इनते असुर बचो नाहिं कोऊ॥
सुनतरहीं पुरुषारथ जिनको। देखहु रूप नैनभरि तिनको ॥
पूरवजन्म सुकृत बड़ कीन्हा। जोविधि यह दर्शनफलदीन्हा॥
जहँ जहँ जाहिं नन्दके बारे। देखि वदन सब होंहिं सुखारे ॥
बहुत नारि नर अति अनुरागे। इकटक नैनजाहिं सँग लागे॥
वर्षहिं प्रभुपर सुन्दर फूला। युगल पुरुष जयमंगलमूला ॥

कोउ कह धन कुबरी कर भागा । जाहि दीन विधि रूप सुभागा ॥
इहि अस कहा कठिन तपकीन्हा । गोपीनाथ भेंटि भुजलीन्हा ॥

दोहा–हम नीके नाह नैन भरि, देखे नन्दकिशोर ।
मिलेकृष्णअति भाग्य बड़, धन धन कुबरी तोर ।

इहि विधि कहत परस्पर नारी । उत पुरदेखत फिरैं मुरारी ॥
पुनि प्रभु गये धनुषमखशाला । राम नारि नर संग गुआला ॥
इनहिं देखि कोपे धनुपाला । आवत कहा गवाँर गुवाला ॥
सुनि अस पेलचले नँदलाला । गये जहां भवचाप विशाला ॥
तीन ताल अति सुदृढ विशाला । दीखजाय भवचाप कृपाला ॥
सहजस्वभाव उठाय कृपाला । भंजेउ जिमि गज पंकजनाला ॥
सुनत घोर धनुके रखवारे । आये रिसकर सो प्रभु मारे ॥
रिपुकर सुभट न एकहु देखी । तब निजआसन चले विशेषी ॥
गये नन्द ढिग पुनि दोउ भाई । ग्वालन सगरी कथा सुनाई ॥
कहनँद इत न उपद्रव करहू । मेरी सीख तात मनधरहू ॥

दोहा–नहिं गोवर्द्धन गोकुला, नहिं ब्रज नहिं मम गांव ।
मधुपुर परम कराल यह, कंसराजकी ठांव ॥ १ ॥
अस कहि भोजन पानदिय, पायो दोउ बल श्याम ।
सोयरहे आनंदसों, ब्रजभूषण सुखधाम ॥ २ ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर श्रीकृष्णमथुरापुरगमन वर्णनंनाम सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

दोहा–विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमरि राम सुखदान ।
कहौं दशमस्कंधकी, कृष्णकथा गुणखान ॥ १ ॥

कृष्णउपद्रव सुनि नरनाहा । भय व्याकुल अतिदारुणदाहा ॥
मल्ल बुलाय बचन उच्चारी । आवत डारहु मारि मुरारी ॥

द्वार कुबलिया गज बलभारी। ठाढो करो करै अतिरारी ॥
कही महावतसे झुलवाई। आनतही तुम देहु पिवाई ॥
अवनिरंगपट देहु विछाई। बैठें सकल लोगतहँ आई ॥
गये सचिव तिन वारन लागा। रंग अवनि सबरचेउ विभागा॥

दोहा-तिहि अवसर पुरलोग सब, बोले सचिव प्रवीन।
वैठारे सादर सकल, लख रुचि आसन दीन ॥

सोरठा-पुनि रजनीचरनाह, चढ्यो मंचपर मुदितमन।
भा पुनि उरमें दाह, बैठ्यो सिंहासन बहुरि ॥

दोहा-यहां प्रात नृप गोपपति, कृष्ण राम अरु ग्वाल।
चले विलोकन रंगमहि, मुदित सकल तिहिकाल ॥

नटवर वेष किये भगवाना। युगल कौतुकी परमसुजाना ॥
देखि गयन्द द्वार मतवारो। गजपालहि बलराम पुकारो ॥
जानचहत हम भूपति पासा। छोडो द्वार हमैं सुखरासा ॥
द्वांसे गज टारहु तजत्रासा। नतरु होय यहि गजकरनाशा ॥
सुनि पुनि कोप कियो गजपाला। हम जानत सबहीं नँदलाला ॥
मारे विपुल बीर छलकारी। आज बचो गजते भटभारी ॥
कहि अस क्रोध कियो गजपाला। पेलेउ गज प्रभुपर तत्काला ॥
तब हलधर इक मुष्टिक मारा। फिर भागेउ करिघोरचिकारा॥
पुनिगजप्रभुहि दशनमें लीन्हा। लीन्हों दाव यहै मनकीन्हा ॥

दोहा-डरपिउठे तिहिकाल सब, सुर मुनि जन नर नारि।
युगल रदनबिच ह्वै कढे, बलनिधिकृष्णमुरारि ॥

उठे गयंदहि साथ मुरारी। करैंख्याल प्रभु गजहिंप्रचारी॥
पाछे प्रगट बहुरि हरि टेरा। सन्मुख राम रोष गज हेरा ॥
लागे गजहि खिलावन दोऊ। औचक चितै देखसब कोऊ ॥

कबहुँ कृष्णगहि शुण्ड पछारैं । कहुँ बलदेव पूंछ गहि मारैं ॥
पुनिकृपालु गहि शुण्ड फिरावा । महिपछार निजबलदिखरावा ॥

दोहा–हतिगयन्द पुनि दंत दोउ, लीन्हें वेगि उपारि ।
सारे सकल सहाय तहँ, जे आये असिधारि ॥ १ ॥
पुनि हर्षे नर नारि सब, गहे पाणि गजदन्त ।
गये रंगमहि बहुरि तब, करुणानिधि भगवन्त ॥ २ ॥

जिहिके रही भावना जैसी । प्रभुमूरति देखी तिनतैसी ॥
प्रभुहि देखि सब सन्त सुडाने । निजानिज इष्ट देव पहिचाने ॥
सुभटन सुभट नृपन नृप जाना । सुरन अनादिब्रह्म पहिचाना ॥
ग्वालन सखा नन्दसुत जाना । पुरयुवतिन अतिरूपनिधाना ॥
कंस विलोकि काल निज जानी । बोला समय गिरा अभिमानी ॥
आवत नन्दतनय इत दोऊ । वेगहि सुभट पछारहु कोऊ ॥
कह चतुराई कर चाणूरा । सुनो कृष्ण तुम भुजवल पूरा ॥
मल्लयुद्ध तुम करहु मुरारी । संशय करहु न धीरजधारी ॥
आज नरेश निदेश हमारा । दीखचहत कछुयुद्ध तुम्हारा ॥
सुनि खलगिरा हँसे नँदलाला । बोले नृपकी कृपा विशाला ॥
जो महीपके मन अस आई । तो हम युद्ध करब अब भाई ॥
हम बालक तव गिरिसम देहा । होत हमारे मन संदेहा ॥
हम बालक गोचारन हारे । दांवपेंचसे तुम अतिभारे ॥
करिके कृपा खिलावहु हमको । दियो न मारि बुझावहिं तुमको ॥
सुनि चाणूर कहा भयपाई । तुम्हरी गति जानी नहिंजाई ॥
तुम बालक मानुष पुनि दोऊ । कीन्हे कपट बली हौ कोऊ ॥
शंकरचाप खंड करिडारा । और कुवलयागज संहारा ॥
मारे असुर महाभट ज्ञानी । तुमते समरकिये महिहानी ॥
तिहिते समर करहु तुम होई । डरहु न हृदय अनीति न होई ॥

दोहा–वचन परस्पर गोपबदि, सुनि महीप धरि धीर।
ताल ठोंक चाणूर पुनि, आयभिरो यदुवीर ॥ १ ॥
शिरसों शिर भुजसों भुजा, दृष्टि दृष्टिसों जोरि।
चरण चरणगहि गर्जे अति, लिपटि झपटिझकझोरि॥२॥

मुष्टिक भिरो रामसन जाई। कहें देखि सब लोगलुगाई ॥
सबदिन भई अनीतिहि राजू। बचहि न कंस अहो विधि आजू॥
कीन्ह युद्ध बहुविधि प्रभु सोऊ। पुनि पटके दोउ भाइन दोऊ ॥
तिनके मरत अखिल भट धाये। प्रभु क्षणमें सब मारिगिराये ॥
हर्षे सकल संत नर नारी। वर्ष सुमन सुर जैजैकारी ॥

दोहा–लखि अस कंस सशंकमन, बोला बहुरि रिसाय।
धावहु धावहु सुभट सब, दूरि करहु दोउ भाय ॥ १ ॥
पुनि वसुदेव रु देवकिहि, उग्रसेन अरु नंद।
पुनि देवन हरिभक्त सब, आतुर करहु निकंद ॥ २ ॥

कंसगिरा सुनि विहँसि मुरारी। खलबलदहन भक्तहितकारी ॥
तुरतहि कूद मंच चढि गयऊ। जहँ अभिमान सहित शठरहऊ॥
कालसमान विलोकि मुरारी। उठा सभीत कंप तनु धारी ॥
लाजसमुझि धरि धीर न भागा। प्रभुपर चोट चलावनलागा ॥
पकरि शिखा तिहि दियो गिराई। कूदपरे तिहि पर यदुराई ॥
गये घसीटत प्राण निकारे। चले यमुनतट नन्ददुलारे ॥
यमुनातट कीन्हों विश्रामा। भो विश्रामघाट तिहिनामा ॥
रोई बहुत कंसकी नारी। तिन्हें ज्ञान पुनि दियो मुरारी ॥
उग्रसेनको नृप पुनि कीन्हा। अपने हाथ छत्र प्रभु लीन्हा ॥
जो न मानिहै आनि तिहारी। ताहि दण्ड हम करि हैं भारी ॥
पुनि प्रभु मातुपिता ढिग आये। बंधनतजि अस वचन सुनाये ॥

दियो दरश तिहि प्रेम सुहाये। जन्मसमय जो दर्शन पाये ॥
रोवत मधुर निरखि सुतदम्पति। सुनै नकंस मनहिमन कंपति ॥
तबहीं कृष्ण कह्यो सुनुमाता। मारयो कंस असुर हम ताता ॥
तब जननी निश्चयकारि जानी। रोवन लगी कण्ठ लपटानी ॥
बारहि बार कहहि उर लाये। मैं नहिं कबहूं गोद खिलाये ॥
द्वादश वर्ष कहां रहे प्यारे। मातापिता जाहिं बलिहारे ॥

दोहा-सुनि जननीके वचन प्रभु, करुणानिधि यदुराय।
भये प्रेमवश दुखित लखि, बोले अति सकुचाय ॥

सोरठा-लिख्यो न मेट्यो जाय, मत कर मातु विषादचित।
अब पुरवें दोउ भाय, तुव मनके अभिलाष सब ॥

पुत्रजन्म जगमें सुखकारी। तुम पाये हमते दुख भारी ॥
मातु पिता जाते दुख पावैं। वृथा जन्म सुत तासु बतावैं ॥
अब जननी सब शोच निवारो। तजो शोक आनँद उरधारो ॥
सकल मनोरथ तुम्हरो करिहौं। स्वर्ग पताल जात नहिं डरिहौं ॥
अष्ट सिद्धि नवनिधि लेआऊं। घर घर मथुरा माँझ बसाऊं ॥
सुनिप्रभु वचन जननि सुखपायो। बार बार गहि कण्ठ लगायो ॥
सुतहित स्रवत पयोधर क्षीरा। मिटी सकल उरअन्तर पीरा ॥
वसुदेव हृदय हर्ष अति आयो। सिद्धिलाभ साधक जनुपायो ॥

दोहा-तुरत बोलि सब विप्रवर, प्रीति सहित परिपाँय।
प्रथमहिं संकल्पी हुतीं, दई लक्षते गाय ॥

सोरठा-और दियो बहु दान, बंदीजन आये सुनत।
परितोषे सन्मान, अति उछाह वसुदेव मन ॥

आये तबहीं कुँवर कन्हाई। नृपवसुदेवसहित दोउ भाई ॥
देखत नन्द मिले उठि धाई। लिये लगाय कण्ठ सुखदाई ॥

तब हरि मधुर कह्यो नँदराई। सुनहु तात हम कहत लजाई॥
हमको तुम दीन्हों सुख जितनो। कह्यो न जात वदनते तितनो॥
ह्वैहै दुखित यशोमति मैया। मो बिन ब्रजतिय अरु सब गैया॥
ताते गमन वेग ब्रज कीजे। जाय सबनको धीरज दीजे॥
यशुमतिसों बिनती मम कहियो। माने सदा पुत्रहित रहियो॥
हरि यों नन्दहि वचन सुनाई। बहु रोरहे सकुचि अरगाई॥

दोहा-निठुर वचन सुनि श्यामके, भये बिकल अति नन्द।
उमगि नीर नैनन चलो, परे दुखके फन्द॥

हौंतजि मोहन चरण न जैहों। तुम विन जाय कहा ब्रजलैहों॥
बारह वर्ष कियो ब्रज गारो। नाहिं जानो परताप तुम्हारो॥
श्रीदामा इक सखा प्रवीना। कह्यो धीर धरि बदन मलीना॥
मथुरामें तुम्हार क्या कामा। रहिबो हेतु कहा घनश्यामा॥
चलिये भवन तजिय निठुराई। नाहिं परघर प्रभु रहे भलाई॥
जाहि दीन तुम राज बडाई। करनी परहि तासु सेवकाई॥
ब्रजजन नदीविहार विचारो। गायनको मनसे न विसारो॥
हम न छांडि हैं साथ तुम्हारा। रहहिं संग करु कोटि प्रकारा॥
नंदहि विकल जान बलदाऊ। बोले गद्गद वचन प्रभाऊ॥
तात निरर्थक तुम दुख करहू। उठि अब पितुउर धीरज धरहू॥
खोले नैन सुनत सुतबानी। अतिअधीरसुखद्युतिकुँभिलानी॥
घरलेंचलो कुँवरवर दोऊ। माताहिमिलि आवहुपुनिसोऊ॥
अस कहि गहे चरण नँदराई। बहत नीरलोचन मग आई॥
तब कृपालु जाना मनमाहीं। विछुरत मोहिं जियें यह नाहीं॥
तब यदुपति माया निज प्रेरी। नंदआदि सबकी मति फेरी॥

दोहा-नयन स्रवत जल धीर धर, बोले यदुकुलकेतु।
वृन्दावन औ मधुपुरी, सुनु पितु अन्तर केतु॥

जो तुम शोच करहु अस भारी। पठवन तुमहिं दुखित महतारी॥
सुनि सुतगिरा धीर कछु भयऊ। बोलेविलखि जोरि करद्वयऊ॥
तुम बिन जाँउ नगर किहि भाँती। कुलिशकठोर द्रवत नहिं छाती॥
समझाये पुनि विविध प्रकारी। कीन्ह बिदापितहि करजोरी॥

दोहा—वृंदावनको जात सब, देखत मधुपुर ओर।
विरहव्यथा बाढ़ी हृदय, बिलखत नंदन थोर॥

आये जब वृंदावन माहीं। यशुमति दीखकृष्णबल नाहीं॥
लगी करन विलाप घनेरे। नन्द कह्यो प्रिय वश नहिंमेरे॥
अबन महरि शोकोदुख करहू। ईश्वरजान भजन करि रहहू॥
सुन यशुमति कछुधीरज लाई। ब्रजकी व्यथा कही नहिं जाई॥
अब मधुपुरिको चरित सुहावन। वर्णहुँ जो सज्जनमनभावन॥
जब मनुबंध दुहुन हैगयऊ। ब्रह्मचर्य तब द्वौ गहि लयऊ॥
गर्गाचार्य आय सुखछाई। गायत्री दइ दुहुन पढ़ाई॥
सुवरणस्यंदन चढ़ि छविधामा। गे अवन्तिकापुरी ललामा॥
तहँ मुनिसंदीपनि अस नामा। रह्यो उजैननगर मतिधामा॥

दोहा—विनय कियोकर जोरके, हमैं पढ़ावहु नाथ।
हम दोऊ तुव शिष्यहैं, धरहु हाथमहँ माथ॥

सांदीपन अतिआनँद पाई। लगे पढ़ावन दुहुन बुलाई॥
प्रथमहि वेद अंग अरु वेदा। फिरि उपनिषदन सहित विभेदा॥
धनुर्वेद पुनि सकल पढ़ायो। मंत्रदेवता तासु बतायो॥
धर्मशास्त्र पुनि दियो पढ़ाई। पुनि मीमांसा दियो बताई॥

दोहा—न्यायशास्त्र सिगरो सिखै, षटविधि भूपतिनीति।
रामश्याम सन्दीपिनी, दियपढ़ाय युतप्रीति॥

सबविद्याके दोउ निधाना। सबपुरुषनमें दोउ प्रधाना॥
एकबार जो गुरु कहिदीन्हा। सुनतहि तुरत कंठ करिलीन्हा॥

चौंसठविद्या चौंसठ दिनमें । राम श्याम धरिलिये छुचिनमें ॥
प्रथम गायबो द्वितिय बजाउब । तीजो नाच भावदर्शाउब ॥
चौथे नटको नाचब जानो । पँचयो चित्रलिखन अनुमानो ॥
छठयों तिलकदेव बहुभाँती । सतयों तंदुलफूलनजाती ॥
तिनकी चौक बनाउब नीको । हेरत हरण हार जो हीको ॥
अठयों फूलन सेजविरचिबो । नवमों दशन बसन अंगरचिबो ॥

दोहा—सभा बैठवेकी रचन, वसनबिछाउब तंत्र ।
जिहि जस तिहि तस थापिबो, दशमों जानहु अंत्र ॥

पलँगसेज रचबो इग्यारहिं । सलिलतरंगबजाउब बारहिं ॥
पैरब जलरोकिबो त्रयोदश । चेटक करिबो अहै चतुर्दश ॥
सुमनमाल निर्माण पंचदश । पागबाँधिबो जानहु षोडश ॥
रत्नजड़ब जानिये सप्तदश । नारीभूषण रचब अष्टदश ॥
बहुसुगंध निर्माण उनीसा । भूषणपहिराउब है बीसा ॥
इन्द्रजाल जानिबो इकीसा । करिबो बहुरूपहि बाईसा ॥
हस्तलाघवी है तेईसा । पाप विविध रचिबो चौबीसा ॥
रचिबो बहु मदपान पचीसा । छीपीकर्म जान छब्बीसा ॥

दोहा—कठपूतरी नचायबो, सत्ताइसवों भेद ।
वीणा डमरु बजाइबो, अट्ठाइसयों वेद ॥

कहनी जानब है उनतीसा । मूरति रचन जानिये तीसा ॥
सभाचातुरी है इकतीसा । पुस्तकबांचब है बत्तीसा ॥
नाटक शास्त्रज्ञान तेंतीसा । पुरन समस्या है चौंतीसा ॥
शरचढाय रचिबो पैंतीसा । धातुनतार रचब छत्तीसा ॥
काष्ठकर्म जानहु सैंतीसा । गृहरचिबोसबविधिअड़तीसा ॥
धातुज्ञानहै उनतालीसा । सुवरण रजत रचब चालीसा ॥

रत्नरंग रचिबो इकतालिस। रत्नखानजानिबो बयालिस॥
वृक्षजात जानिबो तितालिस। पशुखगयुधविद्या चौवालिस॥

दोहा—शुकमैनादिपढाइबो, जानो पैंतालीस।
घरते उच्चाटन करहु, यह है पट्चालीस॥

केशरचब ऐंचब सैंतालिस। मुष्टिप्रश्नकहिबो अड़तालिस॥
पारथ भापज्ञान उनचासा। ज्ञानदेश भाषा पंचासा॥
कहब भविष्य प्रश्न इक्यावन। पूजनमंत्र रचब है बावन॥
तंत्र शास्त्र पढबोहै तिरपन। रत्नवेधिबो जानहु चौअन॥
मानसप्रश्न कहब है पचपन। विविधकोषको जानब छप्पन॥
बहुकरि एकसिद्ध सत्तावन। ठगब दूसरेको अट्ठावन॥
सूतरचब रेशम पुनि उनसठि। जुआखेलबोसाठि जानगठि॥
आकर्षणकरिबो है इकसठ। बालखेलकहिये पुनि बासठ॥

दोहा—तिरसठ विघ्नविनाशबो, कौनहुँ विधि जो होय।
चौंसठथोरी वस्तुको, बहुत दिखावे सोय॥ १॥
ये हैं चौंसठहू कला, वर्णहिं कवि मतिधाम।
इक इक दिनमें सिखलिये, राम और घनश्याम॥ २॥

गुरुके निकट बहुरि यदुराई। हाथजोरि अस विनय सुनाई॥
मांगहु गुरुदक्षिणा विचारी। देहैं जो रुचि होय तुम्हारी॥
रामश्यामकी सुनि मृदु वानी। मनहि गुणोसंदीपनि ज्ञानी॥
इनकी महिमा अहै महाई। नहिं मानुषकैसी प्रभुताई॥
अस कहि उठ नारीढिग जाई। करि सलाह द्रुत बाहर आई॥
रामश्यामसों वचन उचारा। क्षेत्रप्रभासहि मोर कुमारा॥
बूडिमरचो सागर महँ जाई। सोइ दक्षिणा दीजै ल्याई॥
सुनत वचन सागरतटजाई। बोले सागरसे यदुराई॥

गुरुको सुवन शीघ्र श्रुहिं दीजे । सागर कही न विस्मय कीजे ॥
पंचजन्य जलभीतर रहई । ताने भख्यो होय को गहई ॥
सुनि अस वेग चले यदुराई । खोजा सकल समुद्रमझाई ॥
देखतही शंखासुर मारो । उदरफारि जलबाहर डारो ॥
तामें गुरुकर पुत्र न पावा । पछिताने हलधर समुझावा ॥
पुनि कृपालु तिहिंनिजपुर दीन्हा। रूपतासु आयुध निजकीन्हा ॥
बहुरि बंधु दोउ रथचढि धाये । संजीवनिपुर आतुर आये ॥

दोहा-देखत हर्षे वंदि पद, दिय आसन यमराज ।
होय रजायसु करहुँ मैं, प्रभु आयहु किहि काज ॥

कह प्रभु गुरुसुत देहु मँगाई । सुनि यमराज दिया सुत लाई ॥
ले गुरुसुत प्रभु रथ बैठारी । चले बहुरि बलभद्र मुरारी ॥
गे गुरुभवन हर्ष यदुराई । दीन्हसुमन अतिजियसुखपाई ॥
जबहीं गुरू सुवन निज देखा । भयो हृदय आनंद विशेखा ॥
प्रभुहि अशीशत सो ऋषिज्ञानी । परम प्रमोद न जाय बखानी ॥
अब तुम अपने गेह सिधारो । पावहु सदा पदारथ चारो ॥

दोहा-सुनि गुरुचरणसरोजगहि, चढि रथ दोनो भाय ।
गये भवन लखि मातुपितु, घरघर बजी बधाय ॥१॥
एक समय श्रीकृष्ण प्रभु, कुब्जाप्रीति विचारि ।
ले उद्धवको संग हरि, गये तासुके द्वारि ॥२॥

कुब्जा जानि नाथ घर आये । अति आनँद पाँवडे बिछाये ॥
अतिआनंद लिये उठि आगे । पूरव पुण्यपुंज सब जागे ॥
भौंह मरोर विहँसि चख फेरी । चली लिवाय भवन नृप चेरी ॥
पुनि उद्धवहि द्वार बैठारी । पहुँचगये गृहमाँझ मुरारी ॥
तहँ प्रभु लखि इक सेज सुहाई । वसन पटम्बर सुमन बिछाई ॥

तिहिपर विहँसि बैठ यदुराई। पुनि कुब्जा इकमंदिर जाई ॥
करि उबटन अस्नान सयानी। पहरअभूषण पट मुसुकानी ॥
निजतनु नखशिखकेश सम्हारी। गई हँसत जहँ बैठ मुरारी ॥

दोहा-तरसाहिं जाके दरशको, दिवि देवनकी दार।
सो कुब्जाके निकट हैं, श्रीवसुदेवकुमार ॥

प्रियहिपेखि नयननभरिप्यारी। नैन सफल निजलियो विचारी ॥
मध्य उरोजन पाय मुकुन्दै। वारति जगके सकल अनंदै ॥
मेटचो मदनताप अति घोरा। सो सुख कहि न सकत मुखमोरा ॥
कोटि जन्म जे यत्न कराहीं। ते योगिन कबहूँ मिलिजाहीं ॥
ते हरि ताको ले अँगरागा। मिले आप करि अतिअनुरागा ॥
सो कैवल्य नाथ कहँ पाई। बडभागिनि मांग्यो सुखछाई ॥
प्रीतम यह वर मोकहँ देहू। जो मोपर अति करहु सनेहू ॥

दोहा-सुन्दर श्याम स्वरूप यह, होत नैनते ओट।
मेरे उरमें लागिहै, कुलिशसरिस चट चोट ॥

ताके वचन सुनत यदुराई। बोले मधुर मंद मुसुकाई ॥
हमरहि हैं मधुपुरी सदाहीं। विहराहिंगे तेरे सँगमाहीं ॥
तुम समान नहिं कोउ जगप्यारी। तुमसें अतिशय प्रीति हमारी ॥
इहिविधि दे कुबरीको माना। उद्धवयुत मानद भगवाना ॥
तासों पूजित है घनश्यामा। आवतभये आपने धामा ॥
शूर्पणखाको यह अवतारा। इच्छा पुरी कृष्णवपु धारा ॥
भावसहित ध्यावे जो प्रानी। ताको मिलैं कृष्ण सुखदानी ॥

दोहा-जो लीला भगवानकी, सुनै प्रेमकर कोय।
ताके मनकी कामना, निश्चय पूरी होय ॥

इति श्रीविश्रामसागर सवमरआगर कंसवधकृष्णकुबरी
गृहआगमनवर्णनोनामाष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

दोहा-विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमरि राम सुखदान।
भ्रमरगीत उद्धवगमन, कहुँ भागवत बखान ॥ १ ॥
यदुपुरमें मंत्री प्रवर, कृष्णसखा अतिप्यार।
शिष्यबृहस्पतिको रह्यो, उद्धव बुद्धिउदार ॥ २ ॥

हरिभक्तनमें परम प्रधाना। हरि विन दूजो कबहुँ न जाना ॥
अंतरंग संगी हरि केरो। प्रीति पात्र प्रभुकेर निबेरो ॥
ऐसे उद्धव कहँ इक काला। करसों कर गहिकै नँदलाला ॥
बोले मधुर वचन मुसुक्याई। सखा जाहुद्रुत ब्रजे सिधाई ॥
मातु पिता मम नंदयशोमति। हुइहैं मेरे विरह दुखित अति ॥
तिनको जाय देहु समुझाई। ऐहैं ब्रजमें अवशि कन्हाई ॥
नंद यशोमति दुख नहिं करहू। कछुककाल उर धीरज धरहू ॥
कान्ह तुम्हार पुत्र कहवाई। अब न औरके ह्वैहैं जाई ॥

दोहा-अस कहियो कान्हर कह्यो, वह माखन अतिमीठ।
ताकी सुधिकरके हमहिं, लागत सुधासुसीठ ॥

औरहु तुम बहुभाँति बुझाई। विरह शोक सब देहु मिटाई ॥
पुनि गोपिनके निकट पधारी। यह पाती तुम देहु हमारी ॥
मात रोहिणी लावहु जाई। सबकर मोह विषाद विहाई ॥
लिख पुनि पत्र दियो यदुराई। कहि तुम बांचि सुनावहु भाई ॥

दोहा-अस कहि निज पटमुकुट शुभ, भूषण सहितसमाज।
पहिराये सब उद्धवहि, हर्षित पुनि ब्रजराज ॥

पुनि निज रथ बैठार सकारे। कीन्ह विदा सो ब्रजे सिधारे ॥
राखि हृदय पदपंकज हरिके। हर्षितमन उर धीरज धरिके ॥
उद्धवनिकट गये बृन्दावन। देखिसघनबनसरितहरषिमन ॥
नन्दधेनु अवलोकि सुहाई। नानारूप वर्णि नहिं जाई ॥

नाना यूथ हरित तृण चारत। तिनपर ग्वाल कृष्णयश गावत
प्रभुविहारलखि स्थल नाना। करि प्रणाम पहुँचे पुरजाना॥
कोउ इक इनहिं बूझि सबभावा। धाय सु नन्दहि मर्म जनावा॥
प्रभुरथपर कोइ उद्धव नामा। नखशिख वेष किये घनश्यामा

दोहा-आयो रथ निज द्वारपर, सुन हर्षे अति नन्द।
चले धाय जल जान जिय, मानो तृषित गयन्द॥

हरिको सखा देखि उरलाये। सजल नैन कर गहि गृहआये॥
बहुरि वारिले चरण धुवाये। अतिपुनीत आसन बैठाये॥
पुनि व्यंजन बहुभाँति खवाये। सुभगसेज पर शयनकराये॥
जागे बहुरि नन्द तब आये। पूँछी कुशल हर्षि उरलाये॥
परममित्र वसुदेव हमारे। कहो तात कस रहत सुखारे॥
कुशल कृष्णहलधरकी कहहु। जिनके संग तात तुम रहहु॥
कबहूं वे सुधि करत हमारी। उनबिन दुखपावत हम भारी॥
सबहीसे आवन कहिगये। बीती अवधि बहुत दिन भये॥

दोहा-नितप्रति दही विलोयकर, धरत सुकर हरिहेत।
रानी ब्रजवनिता सबै, कृष्ण न कछु सुधि लेत॥

महाबली कंसादिक मारे। अब हमको किहि हेतु बिसारे॥
कबहुँ यशोमतिकी सुधि करहीं। जे तिनके दुखपावक जरहीं॥
जबते मैं मथुराते आयो। तबते यशुमति अन्न न खायो॥
श्याम श्याम रट मुखमें लागी। जरत वियोगदशाकी आगी॥
जिन गोपिनके घरमें जाई। माखन खातरहे सुखदाई॥

दोहा-करतसुरत तिनकी लला, उद्धव देहु बताय।
सर्वस मेरो मधुपुरी, लीन्हों देव छुड़ाय॥१॥
ऐसी अभिलाषा भरे, गोकुल गोपी ग्वाल।
चितवहिं मथुराकी डगर, आवन चहत गुपाल॥२॥

उद्धव यहि गोकुलनगर, लख न परत अस कोय ।
हाय श्याम मिलिहो कबै, अस न कहत जो होय ॥३॥
हरण और हरिणी सकल, जे ब्रजवसत सदाहिं ।
धावत कुंजनिकुंजप्रति, मनुहेरहिं हरिकाहिं ॥४॥

वृन्दावनको सुमिरण आवत । जहां रहे बाँसुरी बजावत ॥
गिरिकी सुधि भूली की नाहीं । जिहिदिन सात धरयो करमाहीं ॥
उद्धव कबहुँ आइहैं लालन । कबहुँ करहिं ग्वालन कुलपालन
जबजब आयपरी ब्रजभीती । लिय बचाय कान्हर आरि जीती
उद्धव अब ब्रज कौन बचैहै । हमहिं यशोमति को सुख दैहै ॥
को वृन्दावन धेनु चरैहै । कौन माधुरी वेणु बजैहै ॥

दोहा—नन्दबबा कहि कौन अस, गुहरैहै मुहिं जौन ।
मैया भोजन देहु मुहिं, कहिहै यशुदे कौन ॥

उद्धव कान्ह सुरति जब आवति । तब दवारिसी देह जरावति ॥
वे यमुनाकी कूलनिकुंजैं । जिनमें अलिकुल मंजुलगुंजैं ॥
ते कान्हर बिन सोहहिं नाहीं । जिमि विनु जीव शरीर वृथाही ॥
जो वृन्दावन अतिरमणीको । बिन लालन लागत सो फीको ॥
जहँ जहँ खेलत रहे कन्हाई । ते थल अब कैसे लखिजाई ॥
कहत कहत यहिविधि हरिलीला । सुमिरतश्यामस्वरूपसुशीला ॥
कढ़ो न बैन गरो भरि आयो । नेहनीर निधि नन्द बहायो ॥
जबते मधुनगरीते नन्दा । आवत भये विहाय मुकुन्दा ॥
तबते यशुमति अति दुखपागी । भोजन पान सबै दियत्यागी ॥
सुनत नन्द उद्धवसंवादा । कोउ गोपी लहिके अह्लादा ॥
दौरि यशोदहि वचन सुनायो । कान्हसखा मथुराते आयो ॥

दोहा–कान्हनाम सुनि श्रवणमें, उठी तुरत अकुलाय ।
गिरी कहत लालाकहां, उद्धवके ढिगजाय ॥
कहँ माखन पावत वह होई । किहि ढिग रहत होयगो सोई ॥
कौन करत ह्वैहै सब सोंपति । नहिं मथुरामहँ वसत यशोमति॥
बीतत रह्यो न पहर दिवस जब । देतीरही खवाय ताहि तब ॥
निजकारज वश मथुरामाहीं । तिनकी सुरत करै कोउ नाहीं ॥
ब्रज आवन पावत नहिं सोई । रोंकत ह्वैहैं शठ सब कोई ॥
सुमिरत हरिके गुणन कलापा । करति यशोमतिविविधविलापा॥
वहति पयोधरते पयधारा । तैसहि दृगते आँसु अपारा ॥
दोहा–ग्वाल बाल सँग जोरि अब, को गैयन लेजाहि ।
को आवै सन्ध्यासमय, वनते गाय चराहि ॥
सोरठा–काहि लेहुँ उरलाय, अंचलसों रज पोंछिके ।
कहत यशोमति माय, मथुरामें क्या करत हरि ॥
दोहा–नन्द यशोमतिको अधिक, हरिमें लखि अनुराग ।
ढारत दृगजल नन्दसों, कह उद्धव बडभाग ॥
धन्य धन्य हो नन्द यशोमति । नारायणमहँ किय ऐसी मति ॥
तुमते अधिक पुण्य बड़ काके । पूरण ब्रह्म सगुण सुत जाके ॥
ये दोउ जगकारण भगवाना । रामश्याम हैं पुरुष प्रधाना ॥
भूतनमें व्यापक भगवाना । प्रेरक अहैं विविधविधि ज्ञाना ॥
दोहा–अखिलहेतु मानुष वपुष, श्रीनारायणमाहिं ।
तुमदोऊ नितनित नयो, किय अनुराग सदाहिं ॥
जे परमारथ पंथा साकी । तुमहिं करन कछुरही न बाकी ॥
थोरहि कालमाहिं ब्रजआई । तुमको सुखदेहैं यदुराई ॥
तुम सति मातुपिता हरिकेरे । प्रेमी तुमसम परे न हेरे ॥

यदुकुलको वैरी नृप कंसा । रंगभूमि करि तासु विध्वंसा ॥
तुम्हरे निकट आय यदुराई । जौन दियो अपने सुख गाई ॥
सो करिहैं सुनि अवशि गुविन्दा । तिनसम सत्यसंधको नन्दा ॥
शोच करहु नहिं दोउ बड़भागी । तुमसम कोउ न हरिअनुरागी ॥
लिरखहुगे समीप यदुराई । हरि सबथल निवसत श्रुति गाई

दोहा-बसत दारुमहँ जिमि अनल, मंथतहोत उदोत ।
तिमि व्यापक हरि सकलथल, प्रगट प्रेमते होत ॥

नहिं तिनको अप्रिय प्रिय कोऊ । नहिं अभिमानिनके तनु होऊ ॥
ऊंच नीच किहुको नहिं जानत । सबजीवनसमान प्रभु मानत ॥
नहिं माता न पिता नहिं नारी । नहिं सुत शत्रु मित्र हितकारी ॥
पंचरचित नहिं अहै शरीरा । पै साधुनरक्षण मतिधीरा ॥
लै अवतार करहिं जगलीला । जिनको नित गावहिं शुभशीला
हरि तुम्हरेही सुत नहिं ताता । सकलजगतके सुत पितु माता ॥
चर अरु अचर छोट बड़ जेते । हरिबिन हैं न पदारथ तेते ॥
परमारथ स्वरूप यदुराई । यामें नहिं संशय व्रजराई ॥
ऐसी सुनि उद्धवकी पाती । नन्दयशोमति अस अनुमाती ॥
उद्धव तो कहवावत ज्ञाता । यह बोलत उलटी सबबाता ॥
कान्हर मेरो प्राण पियारो । ताहि कहत पितु मात हमारो ॥

दोहा-कृष्ण विरहते प्राणमम, कढ़ न चहत यदि काल ।
उद्धवसमझावत कहा, रचि रचि बातन जाल ॥

यहिविधि उद्धव नंदयशोमति । कियव्यतीतवतराननिशाअति ॥
चारिदण्ड जब रही त्रियामा । उठतभई सिगरी व्रजवामा ॥
इकएकनको कही पुकारी । उठौ सबै सखि करहु तयारी ॥
तुरत सबै दधिमंथहु आली । ऐहैं आज अवशि वनमाली ॥
यह सुनि उठत भईं व्रजनारी । करन लगीं गृह काज सँवारी ॥

दोहा-इकटगसो हरिदेखतीं, इकटगकरि अनुराग।
मथुराकी मग हेरती, माधोसे मन लाग॥
श्यामरामके गुण अधिकाई। गावत भई ब्रजनारि सुहाई॥
श्यामसुयश ब्रजमें चहुं ओरा। छायरह्यो अति मंजुल शोरा॥
सो सुनि उद्धव जानि प्रभाता। गये यमुनमज्जनहित गाता॥
उदितभयो पूरबदिशि भाना। पूरणभयो प्रकाश दिशाना॥
दोहा-उद्धवको स्यन्दन कनक, रचित परमछविवार।
खडो रह्यो निशिभर नृपति, निकट नंदके द्वार॥
जानि प्रभात सबै ब्रजनारी। दधिको मथिबो दियो निवारी॥
नंदद्वार ह्वै यमुन नहाने। जुरि ब्रजवनितन कियो पयाने॥
कुंदन स्यन्दन उद्धवकेरो। ब्रजनारिन निज नैननिहेरो॥
अली कौनको यह रथ आयो। नंदद्वार कछु उजर बनायो॥
कोउ कह आयो अवशि कन्हाई। फेरि ताहि ब्रजकी सुधि आई॥
कोउ कह श्याम बड़ो निर्मोही। कबहुं न ऐहै ब्रज सुधि वोही॥
काहेको वह ब्रजमें ऐहै। कौन सुमति यह बात सिखैहै॥
दोहा-कोउ अस बोली सुन सखी, अस मेरे मनमाहिं।
रथचढि गमनत नंदपुनि, कान्हलिवावनकाहिं॥
कोउ कह पुनि अक्रूर पठायो। जीवलेन ब्रजगोपिन आयो॥
यहिविधि कहहिंविविधविधि वानी। रथविलोकिब्रजतियचौआनी॥
उते यमुन उद्धवै नहाई। प्रातकर्म करिकै अतुराई॥
भूषण वसन साजि शृंगारा। बंदि इंदपद नन्दकुमारा॥
ब्रजनारिन संभाषण हेतू। देखन कृष्णप्रेमकर सेतू॥
हियमें कीन्हें परम हुलासा। उद्धव गमन्यो नंदनिवासा॥
करत मनहिं मन विविध विचारा। कहँ मिलिहैं गोपिनकी दारा॥

जिनसों कहौं सकल संदेशू । जो दीन्हौं यदुनाथनिदेशू ॥
जो इकांत सिगरी मिलिजाहीं । तौ समझाय देहुँ सब काहीं ॥

दोहा—यहिविधि उद्धव गुणत मन, नन्दभवन नियरान ।
तब ताको रथके निकट, गोपिनयूह दिखान ॥१॥
आवत उद्धवको तहां, अवलोक्यो ब्रजबाल ।
प्रथमहिं सबके मनपरयो, यह साँचो नँदलाल ॥२॥

हैं सुन्दर युगबाहु विशाला । पहरे नवनीरज कर माला ॥
पीताम्बर अतिशय छबि छावै । मुखसरोज दृग सौज बढावै ॥
नवनीरजसम श्याम शरीरा । सोहत चरण मंजु मंजीरा ॥
ऐसे कृष्णसखाकहँ देखी । तिय सब पायो मोद विशेखी ॥
यदुपति प्रीतरीतमहँ सानी । बोलतभईं महा मृदुवानी ॥
कोहौ कौन देशते आये । कौनहेतु इत कौन पठाये ॥
सुनि ब्रजवनितनकी मृदुवानी । उद्धव अतिशय आनँद मानी ॥
तिनहिं मनहिंमन कियो प्रणामा । बोले वचन महासुख धामा ॥
मैं हौं यदुपतिपदलघु दासा । तिनहींकी सबविधिमुहिं आशा ॥
पठयो नन्द यशोमति नेरे । समझावन कहि वचन घनेरे ॥
तुम्हरे हीतल शीतल कारी । अस पाती दिय कुंजविहारी ॥
औरहु कह्यो वहुत सन्देशू । सो कहिहौं इकान्त लहि देशू ॥

दोहा—चलिये कहूँ इकान्तमें, अब सिगरी ब्रजनारि ।
तहँ प्रभुको सन्देश मैं, देहौं सकल उचारि ॥

सुनि सब गईं यमुनतटमाहीं । थल इकांत कुंजनकी छाहीं ॥
तहां गये उद्धव सुखपाई । गोपिन आसन दियो बिछाई ॥
तिहि आसनपर उद्धव बैठे । यदुपति प्रेमपयोनिधि पैठे ॥

दोहा—उद्धवको चहुँओरते, घेरि सकल ब्रजबाल ।
बैठतभईं सनेहयुत, बोलीं वचन रसाल ॥

उद्धव तुम कहँ जान्यो जान्यो। जिहिहित तुमआवन इतठान्यो
पठयो श्याम तुमहिं ब्रजमाहीं। समुझावन मातापितुकाहीं ॥
उनके नन्द यशोमति दोई। प्रीतियोग हैं और न कोई ॥
हम तौ हैं ब्रजनारि गँवारी। काहेको सुधि करहिं विहारी ॥
मातापिताके भये जु नाहीं। हम उद्धव किहि लेखेमाहीं ॥
जो जनती पहले यह ऐसो। तौ हम प्रीति न करतीं कैसो ॥
कियो नेह कहि करिहैं पारा। दीन्ही दगा श्याम मँझधारा ॥
पहले प्रीति करब अति सूधो। पै पुनि कठिन निवाहब ऊधो ॥
जो कोउ फँसो प्रीतिकी फाँसी। सोइ ताकी जानत गति खांसी

दोहा–जे मुनि वनवासी अहैं, निवसत नहिं घरमाहिं।
तिनहूकी लागी लगन, कबहूँ छूटति नाहिं ॥

श्यामहिं यह मति कौनसिखाई। अब नहिं ब्रजे ब्रजो ब्रजराई ॥
जानत कछु न नेहकी रीती। श्यामहि सुखदेखेकी प्रीती ॥
जबलगि रह्यो प्रयोजन वाको। भयो तबै लगि नन्दबबाको ॥
कारनकी यह रीति सदाकी। करतकपट मतिकबहुँनथाकी ॥
अबतौ हमहिं बूढ़ गुणिश्यामा। देखत युवा नगरकी वामा ॥
चलोगयो सब तोरि सनेहू। मानो नहिं ब्रज अपनो गेहू ॥
तुमसों बहुत कहे अब काहे। उद्धव सब मनकी मनमाहे ॥
अस कहि उद्धवसों ब्रजनारी। लागीं रोदन करन पुकारी ॥
तन मन वचन लगे हरि माहीं। नैकहुँ लाज रही तनु नाहीं ॥
रह्यो नहीं तनुकेर सम्हारा। बढ़ी यमुनलहि आँसुन धारा ॥
भूषण वसन यदपि खुलजाहीं। तिनको तदपि सम्हारहिं नाहीं

दोहा–अगरतगरसुरभित सलिल, सीर समीर उशीर।
ब्रजसुन्दरिन शरीरमें, करत तीरसी पीर ॥

तलफहिं परी धरणि ब्रजबाला। नीरहीन जिमि मीनविहाला ॥
बारबार बोलहिं ब्रजनारी। हायश्यामकत सुरतिबिसारी ॥

हाय यशोमति नंददुलारे । रहे तुमहिं ब्रजके रखवारे ॥
तुम बिन यह ब्रज लागतसूनो । दिनदिन बढ़त विरहअबदूनो ॥
होतरह्यो जिनविन युगसम छिन । तिनबिन बीते हाय बहुतादिन ॥
हरि विन जीवन अहै वृथाहीं । पापी प्राण कढत कस नाहीं ॥
यह पपिहाहै मीत हमारो । पियपियकहिकछुकरतअधारो ॥
परतिदीठि यमुना जब जाई । तब कछु नैन होत सियराई ॥
ध्यानकरहिं यदुपतिकी मूरति । चौंकि कहहिं कहँसाँवलि सूरति
तहँ कहुँते इक अलिउडिआयो । बैठो नवलन निकट सुहायो ॥
उद्धवके अपने मधि माहीं । लखि ब्रजवनिता मधुकरकाहीं
कहनहेतु विरहाकुल बानी । तिहि मधुकर कहँ उद्धवमानी ॥
यह पीतमको पठयो आयो । वर्णसमान मीत कहवायो ॥
कहन चहत हरिको संदेशू । यहि नहिं विरहव्यथाकर लेशू ॥
ताते हमहिं प्रथम कहि देहीं । मनकी पुनि सुनाय है केहीं ॥

दोहा—अस विचार ब्रजसुंदरी, उद्धवकाहिं सुनाय ।
कहनलगीं वहि भ्रमरसों, विविध भाव दरशाय ॥

भ्रमरगीत—रेरेमधुकर याब्रजमें तू कैसेके चलि आयो ।
जानिपरत यह कपटी कारो कान्हर तोहिं पठायो ॥
जौन छाँडि यह अनुपम आनँद गोकुल कुंजगलीको ।
भये कंत कुब्जा कुरूपको नायक छैल छलीको ॥
ताके तुमहु मीत हो मधुकर वदन पीत दरशानो ।
ताते सब हवाल मथुराको हमहिं परो अब जानो ॥
कान्ह कूबरीके पग परपर बहुतिकबार मनायो ।
पै कुलटा कैसहु नहिं मानो तब तुमहूं शिरनायो ॥
श्यामभालकी केसरि तापद सो तुववदन लगीहै ।

सो तुम्हरी तुम्हरे ठाकुरकी कीरति जगत जगीहै ॥
मधुप जाहु मधुपुरी लौटि तुम इत नहिं काम तिहारो ।
कहियो उन्हैं संदेशो ऐसो छुवो न चरण हमारो ॥
कुबरी कुचकुमकुमते रंजित उनके उरकी माला ।
हमरे उरमहँ परस होतहै ह्वैहै दुसहकसाला ॥
अब नहिं कामकान्हको ब्रजमें काहेको इत आवैं ।
मानवती मथुराकी नारी तिनको अवशि मनावैं ॥
ग्वालसमाज विहाय लाल अब राज समाज विराजे ।
भूलिगयो माखनको मांगब दरवाजे दरवाजे ॥
यदुवंशिनमें उनकी चोरी करि सुखप्रीति प्रकासी ।
जिनके तुमसे दूत जगतमें तिन्हैं होत हठिहाँसी ॥
तुम्हरी और श्यामकी संगति साँची है हम जानी ।
अपनीरीति सिखायदई तुम उनहूंको छलसानी ॥
तुम वनवनमें सुमनसुमनको करिकै सब रसपाना ।
पुनि तिहि सुमन ओर नहिं झाँकहु कबहूंसांझ विहाना ॥
ऐसो वह कारो छलवारो प्यारो नंददुलारो ।
जाके हेतु विसारो मारो हम सारो परिवारो ॥
मधुकर सो इकबार अधरको आसव पानकराई ।
चलो गयो मथुराको माधव छलिया हमैं छिपाई ॥
जो कारनसों लगन लगावत तासु यहै गति जोई ।
वह वाको हित देह देत पै ताके दरद न होई ॥
पै उपजतअफसोस एक मन सो तुम देहु मिटाई ।
कौनेकारणसों वह कमला हरिपद रही लुभाई ॥
जानी जानी अब हम सोऊ पियकी कोमलवानी ।

घरी घरी छलभरी न जानत सुनिसुनि ताहि लुभानी ॥
भँवर जाय कहियो कमलासे यह हमार सन्देशा ।
भूलि न जाय देख मनमोहन मनमोहनकर वेशा ॥
सुन्दररूप सुधासम बतियां ऊपर मृदुल स्वभाऊ ।
भीतर भरो छैलके छलबल प्रगटत समय प्रभाऊ ॥
देखत सूधो सुन्दर छोटो बात करत गंभीरा ।
जानलेहु यदुपति कहँ तैसे ज्यों नाविकको तीरा ॥
मधुकर ऐसे ठाकुरकी तुम गावहु बहुत बडाई ।
सो हमरे मतमें अब कैसे सांचीपरै जनाई ॥
जो नाहिं जानै कान्हरके गुण सो तिनकी सतिमानै ।
सो उसमें कैसे सतिमानै जो उनके गुण जानै ॥
ब्रजमें एक संगमें इतनी उनकी और हमारी ।
बीती उमरि खेल बहु खेलति जानपरी अब सारी ॥
उनकोनहिंअयोगकोउमधुकर असमनकाहिबुझावैं ।
अर्जुन नामकपाण्डुसुवनके कान्हर सखा कहावैं ॥
जान विजै युगयुग धनु शर गहि सहसनजनसंहारैं ।
ताके सखा कहाय लाल अब अबलनहू नहिं मारैं ॥
जिनके हेतु छाँडि यह गोकुल मथुरै गये मुरारी ।
ते मथुराकी निपट नागरी कस न होहिं पियप्यारी ॥
करि छलबलछलियहुछलिलीन्होंइनकोछलछपिगयऊ ।
धन्यधन्य मथुराकी वासिनि वशकारिहुवशकियऊ ॥
जिन सजनिनकी इन रजनिनमें मेटिमदनकी बाधा ।
चूमि बदनहँसिरसरसिविलसतलहतअनन्दअगाधा ॥
तिनहीके आगे तुम मधुकर गावहु हरियश जाई ।

काहेको ब्रजबाल बापुरिन देते व्यथा बढ़ाई ॥
तेई तुम्हरो सकल मनोरथ पूरण करिहैं आसू ।
हमको तुम्हरे वचन सुननको अब नहिंहै अवकासू ॥
देवनगर नरनगर औरहू नागनगर माथि माहीं ।
ऐसी कोई नारि नवीनी नैनन नहिं दरशाहीं ॥
जे कान्हरकी कपट भरी वह तिरछीताकनि फाँसी ।
तामें नहिं फँसिजाय जायके तैसहिलखिमृदुहाँसी ॥
मधुकर यह नाहिंदेखपरत हग यहिजगमें कोउ बाला ।
भ्रुकुटिकमान बाण नैननके जिहिउर भे न दुशाला ॥
बड़ीशूरता करी श्यामजू ब्रजसुन्दारिन सँहारचो ।
तापै तुम इतआय मधुप कस लवण जरेपर डारचो ॥
हम गँवारनी अहैं ग्वालिनी अतिगरीबिनी वामा ।
उनकी सेवत सदा चरणरज रमारूपअभिरामा ॥
माधवकी औ मधुप हमारी कौन अहै समताई ।
तिनके हम किहि लेखे माहीं ऐसी जासु बड़ाई ॥
पै तुम कहियो जाय कान्हसों ऐसी बिनय हमारी ।
जैसो रूप जैसहूं कीरति विभव जौनविधि भारी ॥
तैसी चालचलैं नँदनन्दन मानैं कह्यो हमारो ।
नातो कहेदेतहैं सांची बिगरजायगो सारो ॥
ऐसी महामाधुरीसूरति अनुचित अस निठुराई ।
पै कुब्जा जस रीति सिखावत तैसइ करत कन्हाई ॥
सूझत नाहिं आपनो परायो नेकहुँ मनमें जिनको ।
जानिपरत कछु कियो कूबरी जालिम जादूतिनको ॥
छोड़हु छोड़हु चरण हमारे धरहु न पगपै शीशा ।

माधवसखा मधुप तुम सांचे तिहरो छल सबदीशा ॥
तुमको सिखै रीति छलकेरी मोहन इतै पठायो ।
मीठे मीठे वचन बोलि बहु आय सँदेश सुनायो ॥
तैसेइ तुमहुँ छली पूरेहो जैसो नाथ निहारो ।
तुम्हरे बैननमें नहिं नैकहुँ परत विश्वास हमारो ॥
जादु करहु बावरी तियनसों उतै यहै चतुराई ।
हमरे नेरे कपटरीति यह छिपिहै नहीं छिपाई ॥
हरिसों प्रीतिरीतिकीन्हेंको गई सकल फल पाई ।
जैसी दगा दई हरि हमको सो न जात मुख गाई ॥
जाके लिये मातु पितु पति सुत और सकल परिवारो ।
लोकलाज परलोकशोक सब ब्रजसुंदरी विसारो ॥
मुरलीधुनि सुनि शरदनिशामें काननमें चलि आई ।
भूरिभयंकर गहनजंतुकी भीति न कछु उरलाई ॥
सो ब्रजनारिनको ब्रजसुन्दर क्षणमहँ तोर सनेहू ।
करनचलोगो क्रूरसंगमें वा कुबरीके गेहू ॥
जो उपकार न मानत एको तासो कौन मिताई ।
मरी एकहींबार दगामें दूजी किमि सहिजाई ॥
जातिदूबरी कुटिल कूबरी ताको हिये लगाई ।
मोदितबसें मधुपुरी मोहन करिहै का ब्रजआई ॥
जोर चलत जो मधुप हमारो तौ बजवोती डौंडी ।
ब्रजवनिताविहाय गहिलीन्हीं कंसरायकी लौंडी ॥
अब नहिं चलत प्रीतिकरबेको मानसमधुप हमारो ।
पै नहिं छाँडो जा मुखगैबो उनको सुयश उदारो ॥
ब्रजयुवतिनके जीवनको अब रहिगो यही अधारो ।

तौनहु चहत छुडायो मधुकर करि उपदेश अपारा ॥
जाकी अतिशय सुन्दर लीला श्रवणपियूषसमाना।
ताको बिंदु ताहुकी कणिका इकबारहु मतिवाना ॥
कवनहु कवनहु करि उपाय जो कैसहु कीन्हो पाना।
ताके तनुको पुनिसुखदुखको रहत तनक नहिंभाना ॥
तुरत दीन निजछर कुटुम्ब तजि कहुँ काननमें जाई।
भौनभौनमें भीख मांगकै जीवनलेत चलाई ॥
भूषण वसन विभवकी आशा रहत नहीं मनमाहीं।
तिनको विचरत यहिवसुधामें बीतिवर्षबहु जाहीं ॥
मधुकर जिनके चरित सुननको ऐसो है परभाऊ।
तिनको कछु नहिं अचरज माने ऐसो होब स्वभाऊ ॥
माधव मथुराबैठ मधुप अब जौनचहैं सो भाखैं।
वे कालिन्दीकुंजनकी सुधि काहेको अब राखैं ॥
जब करजोर नैन नीचेकरि हाहाखात रहेहैं।
तब यह नैन तनक तिरछे ह्वै तिनपै जातरहेहैं ॥
बांधत रही यशोमति जबहीं तब हम देहिं छुडाई।
इकअंजलीछाँछके कारण रहते हाथ ओड़ाई ॥
यह उपकार धूरिमिलगयऊकुछ नहिंमुख कहिजाई।
छोटो खाय होत अतिमोटो तजत न खोटखुटाई ॥
अस कपटीसों करी प्रीति जो हमसों नहिं बनिआई।
विनहि विचार करत कारज जो सो पाछे पछिताई ॥
पै हम महामोहिनी वा मनमोहनकी मृदुबानी।
सुनिसुनि सांची जानजीयमें तामें रहीं लुभानी ॥
अतिहीकपटी कुटिल कान्हरो टेरि कुंजबिच बंशी।

वशकीन्हों ब्रजवधू बावरिन डारि प्रेमकी फंसी ॥
ढिग बुलाय दरशाय भावबहु करि नखछत उरमाहीं ।
नाच गाय उपजाय कला बहु दिय हुलास हमकाहीं ॥
जब मधुकर वह रासविलास हुलास हिये सरसानो ।
तब सब ब्रजयुवतीन जीवलै ह्वैगो अन्तर्द्धानो ॥
जसनसके बहु देव मनाये जो पै पुनि प्रगटानो ।
सो अब कुटिल कंसके कारण किय मधुपुरी पयानो ॥
कहत बनै नहिं सुनत बनै नहिं समुझिबनतपछितातें ।
मधुकर वाकी कथा छोडके और चलावहु बातें ॥
भागविवश कबहूँ जब हमको नन्दनँदन मिलि जैहैं ।
तबपाछिली बातकी सुधिकर निज मनकी करिलैहैं ॥
अबै आपनो चलत न कछु वश परिगो उनको दाऊ ।
भेंटभये इककी दश कहिहैं देखत ही बलदाऊ ॥
हो तुम सखा श्यामके साँचे यह हम जानो जानो ।
होय जु मन कामना तिहारी सो अब सकल बखानो ॥
मानकरनके लायक तुमहो हमको परचो जनाई ।
ब्रजसे हमहिं लिवावनके हित यदुपति दियो पठाई ॥
पै कोनीविधि कान्हकुँवर ढिग तुम हमको लैजैहो ।
जो कदापि लैजेहो मधुकर तौ उत कहां बिठैहो ॥
कमलाछिनभर तिन्हैं न छोड़त निवसातिनितउरमाहीं ।
कहहिं सोंह करि ताके नीचे कैसहुँ बैठव नाहीं ॥
हरिको हमते और आजुलौं रही न कोउ पियारी ।
करिहैं अब अपमान बिहारी कमला वदन निहारी ॥
जन्मभरेको सुख सुहागको अब मथुरामें जाई ।
हमको कहा लाभ है मधुकर आवैं सोउ गमाई ॥

जो तुम श्याम सखा हौ सांचे हमैं होहु विश्वासू ।
तुमसों नहिं अनरीति करैंगे कबहूं रमा निवासू ॥
तो हम सिगरी अबैं मधुपुरी चलिहैं संग तिहारे ।
नातो औरभाँति नहिं बनिहै बिन उनके पगुधारे ॥
कबहूं नन्द यशोमतिको घर सुरत करत वनमाली ।
कबहुंसखनकीसुरतकरत हरि रहे लास अतिख्याली॥
जिन गौअन को रहे चरावत वंशीवटकी छाहीं ।
कबहूं सुरत करत मनमोहन तिनकी निजमनमाहीं ॥
भोजन करिकै मातपितागृह प्रिय छप्पन पकवाना ।
अब गोपिनको मथो तुरतको माखन स्वादभुलाना ॥
यमुनाकूल निकुंजनमें जो खेले खुलिखुलि ख्यालै ।
ताकी सुरति कबहुँ आवतिहै निरमोही नँदलालै ॥
कबहुँ मधुपुरी नारि नागरिन सभामध्य हरजाई ।
चरणकिंकरिन ब्रजनारिनकी सुरति करति सुखदाई ॥
पुरनारिन चातुरी चितैं चख तिनकी छवि महँ छाकी ।
अब न बापुरी ब्रजनारिन में ह्वैहै सुरति ललाकी ।
मधुकर कौन दिवस वह ह्वैहै जादिन प्रिय ब्रजआई ॥
अगर सुरभि निज भुजशिरधरिकै देहैंताप मिटाई ।
पूरणशशीसरिसवह आनन कब इन आँखि परेगो ॥
कौन दिवस वह श्यामसुन्दरो निजभुजमाहिंभरेगो ॥
ऐसहु काल कबहुँ पुनि ह्वैहै ब्रजकुंजनमें आई ।
सखनसहित हरि धेनु चरैहैं मुखबाँसुरी बजाई ॥
मधुकर वह ब्रजराजकाज गृह काजलाज बिसराई ।
श्रीरघुराज समाजसहित प्रभु लेहिं आज अपनाई ॥

दोहा-इहि विधि विलपत ब्रजवधुन, कोमल वदन सुखाल।
प्रेममूर्च्छा ह्वै गई, रह्यो न तनुकर भान॥
सुनि ब्रजनारिनकी अस वानी। प्रेमदशातिमि निरखि महानी॥
उद्धव किय करजोर प्रणामा। समुझावत बोल्यो मतिधामा॥
जननि सुनहु यदुनाथ सँदेशू। यामें मिटि हैं सकल कलेशू॥
पूरणकाम तुमहिं जगमाहीं। तुम सम कोउ दीसत दृगनाहीं॥
त्रिभुवन वंदित चरण तुम्हारे। भये धन्य हम आय निहारे॥
अब जो नाथ पत्रिका दीनी। निजकरलिखी प्रीतिरस भीनी॥
मैं शिरधारि लायो तुव पासा। सुनहु सो अब मैं करहुँ प्रकाशा॥
सोरठा-अस कहि पाती खोल, चरणवन्दि यदुनाथके।
सुनहु जननि अस बोल, उद्धव तहँ बाँचन लग्यो॥
है न हमार तुम्हार वियोगू। यह मन शोचकरहु नहिं सोगू॥
है संयोग सुखद सबकाला। यह जानहु प्यारी ब्रजबाला॥
अनिलअनलअपअशनिअकाशू। जिमि सिगरेजगइनकरवासू॥
तैसहि मैं निवसहुँ सबमाहीं। जहँमैं नहिं असकहुँथलनाहीं॥
मन बुधि इन्द्रिन प्राण अधारा। पालहुँ हरहुँ सृजहुँ संसारा॥
निज संकल्पहुते सब करहूँ। सूक्ष्मरूप सब जग संचरहूँ॥
रहौं भिन्न गुणते सब काला। शुद्धआत्मा ज्ञान विशाला॥
जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति वृत्तिमन। मोरि प्रतीति रीति त्रै श्रुतिभन॥
मनोवृत्तिते भेद प्रतीती। ताते करें अचल मनरीती॥
दोहा-जौने मनकी वृत्तिते, चंचल विषे आनित्य।
तौने मनकी वृत्तिको, करे अचंचल नित्य॥
मनहिं वृत्तिते स्वप्नहि देखैं। ताको सुख दुख अपने लेखैं॥
जागे सो रहिजातो नाहीं। फेरि होत जस जागत माहीं॥

तातें मनवश करे सदाहीं। असत मान जग सुख दुखकाहीं॥
त्याग सत्य शमदम अरु वेदा। तत्त्वज्ञान अरु योग विभेदा॥
मनकी वृत्ति अचंचल ठानो। यही सार सबको फलमानो॥
जैसे बहत सरित समुदाई। मिलि सागरमहँ जाय बिलाई॥
तैसहि सब शास्त्रनको मतभल। मनको करब विशेष अचंचल॥
जो हम इत दृगदूरि तुम्हारे। कढि आये सो देहिं उचारे॥

दोहा—हे ब्रजनारी बिरहवश, ठानि अचंचल चित्त।
मोमें मनहिं लगायकै, ध्यान कराहिंगी नित्त॥

दूरिदेश जब प्रीतम रहतो। तबतियकोजियलगिजसचहतो॥
तस नहिं निरखि नैनके नेरे। यह आई सांची मन मेरे॥
विषयवृत्ति सबभाँति बिहाई। सब विधि मोमें मनहिं लगाई॥
जोतुमधुहिंसुमिरणानितकरिहो। तो मेरे ढिग आशु सिधरिहो॥
जब मैं शरद निशामें प्यारी। कियो रास ब्रजकुंज सुखारी॥
तब निजतियन गोप मति हीने। राखे रोंकि न आवन दीने॥
ते तिय तहँ मोर धरि ध्याना। प्रथमहिं मम ढिगकियो पयाना॥
तातें मोसिमनहिं लगाउब। प्यारी साँचो है मुहिं पाउब॥
पद्मासन निर्मल करि मनको। शोधन करहु सदा निज तनको॥
अनहदनाद योग करि जानो। तब तुम सांचो ब्रह्म पिछानो॥

दोहा—हम तुममें तुम हमहिंमें, यामें नहिं सन्देह।
पिया हमार तुम्हार है, मन एकै द्वै देह॥

ऐसी सुनि प्रीतमकी पाती। ब्रजनारिन शीतल भइ छाती॥
बोलीं कृष्णप्रीति महँ सानी। आगेकी सिगरी सुधि आनी॥
उद्धव तुम्हहिं न समुझि परत है। कन्त जियत कोउ योग करतहै॥
जुगजुग जीवहिं कुँवर कन्हाई। है हमरो अहिवात सदाई॥

उनके संग किये बहु भोगू। हमरेकीन होत नहिं योगू॥
लिखी कान्ह मन थिर करिलेहीं। सो मन थिरकी रुचि नहिं केहीं॥
पै जिनको मन तुममें होई। करैं अचंचल मनको सोई॥
हमरो तौ मन हरि हरिलीन्हों। अब कसलौटि सिखावन दीन्हों
दोहा-तनुतो यह पापी रह्यो, गयो न हरिके संग।
पै सुकृती मन कबहुँ नहिं, छांडेगो हरि अंग॥
करै अचंचल चंचल सोई। जाके मन अपने हिय होई॥
क्यों नहिं कहैं कंत अस वानी। अब भे राजपाय विज्ञानी॥
उद्धव मन गे बिगर हमारे। अब सुधरत कैसहु न सुधारे॥
जिन अंगन लाग्यो पिय प्यारो। तिनअँग योग जात नहिं धारो॥
लपट्यो जिनअँग हरिअँगरागा। तिनमें धूरि धरत मन भागा॥
पिये जे श्रुति हरि वचन मिठाई। तिनश्रुति नहिं पुराण सुनिजाई।
जो पहिलेसे योग सिखावत। तो यहतनु अबक्योंदुखपावत॥
योग विराग भक्ति औ ज्ञाना। इनके कीन्हें मुक्ति निदाना॥
ऐसी मुक्ति परै अब धूरी। बसब कान्हते क्षणभर दूरी॥
योग किये वैकुण्ठहि जैहैं। तहँ वह द्विभुजश्याम कहँ पैहैं॥
परिहैं कब बाँसुरी सुनाई। कहँ ऐहैं हरि धेनु चराई॥
अस वैकुण्ठ लगत नहिं नीको। ब्रजसुन्दर विन है सब फीको॥
दोहा-उद्धव जाकी वानजो, पहिलेते परिजाय।
सो नहिं वह कैसहु मिटति, कोटिन करो उपाय॥
परिगइ छल करिबो हरि रीती। सो नहिं मिटत जाहि युगबीती॥
जो समरथ समुझावन कोहैं। आय बुझावें रोकत कोहैं॥
अब नहिं और बुद्धि अनुरागी। एक लगन लागी सो लागी॥
उद्धव तुमहिं न लागत लाजू। भोग छुडावत योगहि काजू॥

पुनि बोली कोऊ ब्रजनारी। कृष्णसखा सुनु बात हमारी॥
हरि चातुर पुरनारि चातुरी। लगी दुहुँनकी बुद्धि आतुरी॥
धौं हरि जीततहैं पुरनारी। धौं पुरयुवती जितैं बिहारी॥
पुनि बोली कोऊ हरिप्यारी। श्याम सखा यह कहो उचारी॥
करत रहे जस हमसों प्रीती। तैसहि उतहूं राखत रीती॥
हरिको सखि मथुराकी नारी। करती कबहुँ कटाक्ष सुखारी॥
जानगई होंगी छल इनको। मूँदो रह्यो होइगो किनको॥

दोहा–सब दिनसे नँदलालकी, चलि आई यह रीति।
सब नारिनसों हठि करत, मुख देखेकी प्रीति॥

कबहूं अस मुख भाषत प्यारो। है यह गोकुलगाँव हमारो॥
पै नहिं सुरत करत वह होई। पुरनारिनके कानन जोई॥
हम तो उद्धव ग्वारि गँवारी। दही महीकी बेचनहारी॥
अहैं कौन हम उनके लेखे। वह कुलवंतिन कुबरी देखे॥
ब्रजसुन्दरी फेरि कोउ बोली। उद्धवसों यह बात अमोली॥
रही शरदकी पूरणमासी। जगती जगी जुन्हाई खासी॥
कान्ह कलिन्दी कुंजन जाई। टेरि बाँसुरी हमहिं बुलाई॥
रास विलास रच्यो तिहि काला। मध नँदलाल चहूंदिशि बाला॥
मची चरण नूपुर झनकारी। सो सुख किमि मुखजाय उचारी॥

दोहा–तानिशिकी वह साँवरो, कबहुँ सुरत करिलेत।
जानिशिमें याचत रह्यो, हमहिं मिलनके हेत॥

पुनि बोली कोऊ ब्रजबाला। ऐ उद्धव कहँ हैं नँदलाला॥
बढी महा बिरहानलज्वाला। अबतो नाहिं सहिजात कराला॥
कबहुँ गुविन्द गोकुलै आई। देहै हियलगि ताप बुझाई॥
मरी गोपिकन कंत जिऐहैं। अधर सुधारस कबहुँ पियैहैं॥

दोहा-ग्रीषमदिनकरविरहकृत, उठी अनल ब्रजग्राम ।
जारत ब्रजवनितालता, कबवर्षहिं घनश्याम ॥

पुनि बोली कोउ गोपकुमारी । सुनहु सखी सब बात हमारी ॥
हम गरीबिनी गोपिनकाहीं । श्याम सुरति अब करिहैंनाहीं ॥
लाग्यो राजकाजके रंगा । रहिहैं सब यदुवंशी संगा ॥
गोपगँवारन क्यों सुधि करिहैं । रैनदिवस सुहृदन मुद भरिहैं ॥
ब्रजवनिता कोऊ अस बोली । सांची कही सखी चिततोली ॥
वनवासिनी गँवारिन गोपी । ह्वैहैं कस इनके अब चोपी ॥
कहवावत यदुकुलके नाथा । विधिशिव धरत तासुपदमाथा ॥
रमाविहाय अहीरिन लैके । रहिहैं कस जगमें अस कैके ॥
अब नहिं हरि आवन अभिलाखो । मेरी बात कही मनराखो ॥
ब्रजअंगना फेरि कोउ माखी । सिगरीगोपिनसों अस भाषी ॥
गणिका रही पिंगला कोई । भाषतहौं भाषी वह जोई ॥
सबते ह्वैकै रहब निराशी । यही सकलविधि हैं सुखराशी ॥
महाकठिन सखि होत मिताई । पहिले सुख पीछे दुखदाई ॥
ताते बनत प्रीतिके त्यागे । कहिराख्यो पिंगला जु आगे ॥
पै सखि कहा करै यहिकाला । जादू डारिगयो नँदलाला ॥
बिसरत नहिं वह श्यामसलोनो । है धौं कहा हमैं सखि होनो ॥
समझावहिं हम मनको भल भल । क्यों नहिं होत अचल रे चंचल ॥

दोहा-पै मनमोहनरूपमें, मोहिगयो मन दुष्ट ।
उतते तौ लौटत नहीं, होत हमहिपर रुष्ट ॥

कोउ ब्रजवधू कही पुनि वानी । यद्यपि तैं सखि सत्य बखानी ॥
पै नँदनंदन छैलछबीलो । रसिकशिरोमणि बड़ोमजीलो ॥
तासु सनेह तोरि किमिजाई । बीत चारियुग यद्यपि जाई ॥

जौन रंगचढि गो त्रयवारा । सो नहिं छुटै कोटि उपचारा ॥
अब तौ चढो साँवरो रंगा । छूटहि नहिं छोडेहुते अंगा ॥
पुनि व्रजललना कोउ असगायो।किमिअलिहमबिसरो बिसरायो
यह गोवर्द्धन सुन्दर शैला । धेनु चराइ जहँ व्रजछैला ॥
यह वृंदावन मंजुल कुंजैं । जहँ प्रियसंग लह्यो सुखपुंजैं ॥
यह गौवैं हरि चारन वाली । रह्यो संग जिनके वनमाली ॥
और भूलि यद्यपि सब जाई । क्यों वंशी विसरै विसराई ॥

दोहा—या यमुना प्रियरंगकी, ये कुंजैं सुखधाम ।
पुनिपुनि सुरतकरावती, ऐसे सुन्दर श्याम ॥

जाकी गति लखि लघु गयन्दा । सो पराय वनकेर बसिंदा ॥
जाकी ललित मृदुल वह हाँसी । भै व्रजयुवतिनकी गलफाँसी ॥
जासु तकनि तिरछी मतिधीरा । लगी हिये मनु कैवरतीरा ॥
जाके वचन सुधारस साने । हरते हियो परतही काने ॥
जाकी महामाधुरी लीला । गावहिं रसिकरुचिरसवशीला ॥
उद्धव वे मनमोहन ऐसे । व्रजवनिता विसरावहिं कैसे ॥
ऐसी सुनत सखीकी बानी । सबकी प्रीति रीतिअधिकानी॥
करन लगीं मूँदेदृग ध्याना । प्रेमसुसुख नहिं जाय बखाना ॥

कवित्त—सकल अनाथनके नाथ कमलाके नाथ,
व्रजके भये हो रखवार वारवारसैं ।
व्रजवनितानके सनाथके करनवारे,
प्राणनाथ प्राणप्यारे उदित उदारसैं ॥
रघुनाथ आज व्रजराजजू पुकार सुनो,
तुम तजि दूजो ना दिखात संसारमैं ।
करहु उधार अब व्रजके अधार व्रज,
बूडत विहार बीच वारिधिकी धारसैं ॥

दोहा-पुनि उद्धव ब्रजतियनको, नाथसँदेश बखानि ।
पुनि पुनि समुझाये बहुत, हरिप्यारी पहिंचानि ॥
जब उद्धव बहु कह्यो निहोरी । तब भै विरहताप कछु थोरी ॥
आयो तनुमें नेसुक भाना । तनुते नेसुक शोक पराना ॥
धरि धीरज नेसुक ब्रजबाला । पूजनसाजु आनि तिहि काला ॥
उद्धवको हरिसखा पियारो । जानि सबै करि विमल विचारो ॥
उद्धवकी पूजा सब कीन्हीं । आशिषबालविविधविधिदीन्हीं ।
रचि रुचि स्वाद सुखद पकवाना । तुरत मँगाय गृहनते नाना ॥
उद्धवको भोजन करवायो । निजकरसलिलडारिअचवायो ॥
गमन समय लखिकै हरिदासा । आयवसतभो नन्द निवासा ॥
गोपिहु निजनिजभवनसिधारीं । हियमहँ साँवलि मूरति धारीं ॥
दोहा-इहि विधि उद्धव बसतभे, चार पाँचहू मास ।
वर्णत श्रीयदुपति चरित, भेंटत तियन उछास ॥
भोरहिते अरु साँझ प्रयन्ता । हरियश गावत सो मतिमंता ॥
कढ़त जबै गोकुलकी खोरी । धाय धाय मिलतीं ब्रजगोरी ॥
वर्णत सुनत कृष्णकी लीला । चितवत रैन दिवस शुभशीला ॥
उद्धव करि सुखमंजुल शोरा । कृष्णसुयश ब्रजमें चहुँ ओरा ॥
गावत फिरत लाज तनुत्यागी । देत गोपिकन आनँद पागी ॥
दोहा-जहँ जहँ उद्धव जातहैं, तहँ तहँ सब ब्रजबाल ।
संगसंग विचरत फिरैं, कहत हाय नँदलाल ॥
कहुँ उद्धव यमुनातट आवत । गोपिनहरियशसुनतसुनावत ॥
कहुँ वृन्दावन कुंजन माहीं । हरि विहारथल गुणतिनकाहीं ॥
गोपिन संयुत करत प्रणामा । ब्रजरजलोटत ठामहिं ठामा ॥
प्रेम विवश मुख कढत न बानी । उद्धवकी तनु सुरति भुलानी ॥

जहँ जहँ यदुपति लीला कीन्हीं। तौन तौन थल उद्धव चीन्हीं॥
गोपिनको हरि सुरति करावत। तिनके सहित आपशिरनावत॥
ब्रजनारिनको प्रेम महाना। इक मुख को करि सके बखाना॥
उद्धव अद्भुत लखि हरि प्रेमा। जो फल ज्ञानयोग तप नेमा॥
प्रेमरूप सिगरी ब्रजनारी। हरिके हित सब दियो बिसारी॥
कृष्ण कृष्ण मुख रटन लगी हैं। सबकी मति हरि पगन पगीहैं॥
उद्धव अचरज मनमहँ मानी। गमन मधुपुरी सुरति भुलानी॥

दोहा—एक समय ब्रजकुंजमें, बैठि कृष्णको दास।
वन्दत ब्रजवनितन चरण, गायो सहित हुलास॥

कवित्त—सौरभ सरोज तनु बदन सरोज सम,
ऐसी देवदारा महा सुछबि प्रकाशिनी।
तिनहूं न पायो नहिं पायो कमलाहुकहुँ,
यदपि हियेकी हैं निरन्तर निवासिनी॥
नृपतिकुमारी अरु नारीहै विचारी कौन,
जेती रघुनाथ रतिराजकी विलासिनी।
सुखकी अवधि जो पसारे निजहाथै मिलि,
बृन्दावननाथै लूट्यो बृन्दावन वासिनी॥१॥
छोड़ो नहिं जात जो कुटुम्बताहि त्यागदीन्हों,
त्याग कुलकान वेदपंथहू प्रमानके।
हरिकी सनेही भई भई वसुधामें धन्य,
जाके हेत तरसैं मुनीश ब्रह्मज्ञानके॥
ताते रघुराज ब्रजराज कृपाकैके मोहिं,
देहीं वर येहीं देनवारे बरदानके।
पावैं जन्म वृन्दाबन कुंजमलतानि कब,
हौंतो परिजैहौं पग ब्रजवनितानके॥२॥

दोहा-वृंदावनतरुलतनमें, जन्मआश मम भूरि।
जाते नित उडिउडि परै, ब्रजवनितनपगधूरि ॥ १ ॥
ब्रजवनितनकी चरणरज, वंदहुँ बारंबार।
निजमुखनिर्गत हरि सुयश, हरत कलुष संसार ॥ २ ॥

इहि विधिते उद्धव मतिधामा। ब्रजनारिनकरि विविधप्रणामा ॥
पुनि गोपिनसे दोउ कर जोरी। बोल्यो बारहि बार निहोरी ॥
जननि देहु जो मोहिं रजाई। तो अब जाउँ जहाँ यदुराई ॥
सुनि गोपी ह्वै गईं अधीरा। उपजी दुसह दुहुँन उर पीरा ॥
बोलीं नैननसों जल ढारत। उद्धव कहा मरे कहँ मारत ॥
तुमहिं देख आयो कछु धीरा। तुमविन पुनिनहिं रहब शरीरा ॥

दोहा-उद्धव तुमको निरखिकै, रहिंगे तनुमें प्राण।
ब्रजवनितन तनुदाहिकै, तुमहुँ कहत अब जान ॥

सुनि उद्धव अतिशय दुखपायो। नंदयशोमति ढिग पुनिआयो ॥
कह्यो सुनहु हे नंद यशोमति। शासन देहु जाहुँ जहँ यदुपति ॥
नन्द यशोमति सुनि दुखपागे। नैननवारि बहावन लागे ॥
कह्यो कहैं हम किहिविधि जाना। जस मन तस कीजै मतिमाना ॥
उद्धव किय साष्टांग प्रणामा। चढ़तभयो रथपर छबिधामा ॥
नंद यशोमति बहुदुख छाये। उद्धवको पहुँचावन आये ॥
उद्धव गमन सुनत ब्रजवासी। आवतभे सब ह्वै दुखराशी ॥
घेरिलियो रथको चहुँ ओरा। दुखी करहिं अतिआरत शोरा ॥

दोहा-भूषण वसन अमोल बहु, निजनिजघरते लाय।
हरिके हित अस उद्धवै, दीन्हें प्रीति बढ़ाय ॥

गोप नंदआदिक चितचोपी। और यशोमति आदिक गोपी ॥
ढारत आंसु पुकारत आरत। बोलतभे तनुसुधि न सम्हारत ॥

उद्धव मनकी वृत्ति हमारी। अनत जाय नहिं छाँडि विहारी॥
हम हैं कृष्णकमलपद दासा। क्षणक्षण कृष्णदरशकी आशा॥
श्यामनाम निकसै मुखमाहीं। और बात निकसै कछु नाहीं॥
यह तनु करै कृष्ण परिणामा। और न चाहैं कछु धनधामा॥
कर्मविवश जिहि योनिहिं जाई। चौरासीमें भ्रमैं सदाई॥
तहँ तहँ होय कृष्णपद प्रीती। गहै चित्त दूसरी न रीती॥

दोहा-जप तप संयम नेम यम, जौन कियो हम कोय।
जो याको फल होय कछु, तो हरिपदरति होय॥ १॥
नन्द दोहिनी भरिदई, कह्यो नैनभरि नीर।
वा धौरीको दूध यह, भावत हो बलवीर॥

सोरठा-दई यशोमति माय, मुरली ललित गुपालकी।
उद्धव दीजो जाय, प्यारीही अतिश्यामकी॥

उद्धव यह सब हरिसों कहियो। पुनि हमार बदि दोउपदगहियो॥
जो हम करी कछुक सेवकाई। तौ वर देहिं यहै यदुराई॥
अस कहि विकल भये ब्रजवासी। उद्धवभो समान दुखराशी॥
जसतसके पुनि रथहि चलायो। हरिपालित मथुरा पुनि आयो॥
कियो जाय हरिचरण प्रणामा। दौरि मिले तिनको घनश्यामा॥
कह्यो सखा ब्रजते तुम आये। ब्रजमें दिन कस बहुत बिताये॥
कहो सबै ब्रजकेर हवाला। कहा कह्यो तुमसों ब्रजबाला॥
कहो नन्द यशुमति कुशलाई। विरह मोर जिन सह्यो न जाई॥

दोहा-तब उद्धव करजोरिकै, करिगोपिन परणाम।
मंद मंद बोलत भयो, सुनहु नाथ घनश्याम॥

कहा कहौं कछु कहि नहिं जातो। तुमहिं देखि इत मन पछितातो॥
तुमसों बनी न यह यदुराई। आये वृंदावनहिं विहाई॥

मेरे रह्यो ज्ञानअभिमाना। ब्रजतियप्रेमविलोकि विलाना॥
कहनशक्ति इकमुख मनमाहीं। शेष सहसमुख नहिं कहिजाहीं॥
तुम जानहु उनकी रतिरीती। जानहिं वही करब जस प्रीती॥
अस कहि भूषण वसन दिये सब। दीन्हें नन्द पयान कियो जब॥
उग्रसेन ढिग प्रभु पठवायो। उद्धव जायसु सकलदिखायो॥
पुनि वसुदेवहुके ढिग जाई। कही सबै ब्रजकी कुशलाई॥

दोहा-राम निकट पुनि जायकै, ब्रजको सकल हवाल।
आदिअन्तते कहत भे, उद्धव बुद्धिबिशाल॥१॥
प्रभु मनकर ब्रजमें रहे, हित मानो ब्रजमाहिं।
ब्रजवनितनकी सुरति करि, आप विकल ह्वैजाहिं॥२॥
यह लीला हरिरसमई, पढै सुनै जो कोय।
सो हरिभक्तिहि पावही, नारि पुरुष किन होय॥३॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ग्रंथउजागर गोपीउद्धव सम्वादोनाम नवमोऽध्यायः॥९॥

दोहा-विधि हरिहर गणपति गिरा, सुमिरि राम सुखदान।
दशमभागवतकी कथा, कहुँ इतिहास बखान॥

बहुरि लिये सँगमें बलरामा। गे अक्रूरभवन घनश्यामा॥
पूजाकरि बोले ब्रजराजू। हथिनापुरहि जाउ बड़काजू॥
सुनत पाण्डु वैकुंठ सिधारे। होत दुखी पचबंधु हमारे॥
कुंती मातु अधिक दुख पावै। तुमबिन जाय कौन समुझावै॥
सुनत वचन अक्रूर सिधाये। कुन्तीमिलि अतिशय सुखपाये॥
नीके हैं पितुमातु हमारे। भाभी भ्रात कृष्ण बल प्यारे॥
करत सुरत इन भाइनकेरी। सुनहु तात मुहिं विपति घनेरी॥
वे रक्षा करिहैं कब आई। दुख धृतराष्ट्र सह्यो नहिं जाई॥

दोहा—रहत सदा सुतके विवश, मम सुत मारन चीन।
दीन्ह घोर विष बार बहु, भीमसेन पीलीन ॥
जब सब दिन कौरव अस करहीं। तब ममसुतकिहिका सुखचहहीं
जिहि प्रभु भट कंसादिक मारे। तेई मम सुतके रखवारे ॥
सुनहु तात यह पांचौ भाई। इनकर दुख तुम कहियो जाई
सुनि धीरज धारि कह अक्रूरा। तबसुत होहिं सकल रणधीरा॥
करैं अरातिहु मूलनिकंदा। इनके पक्ष सदा गोविन्दा ॥
सुनिय मात मुहिं पठव मुरारी। कहि फूफी जानि होहु दुखारी॥
धरहु धीर अइहैं यदुराई। अस कहिविविधभाँति समुझाई
दोहा—पुनि कुन्तीके चरण गहि, गे धृतराष्ट्रसमीप।
कारि जुहार ढिग बैठि कह, सुनि कौरवकुल दीप ॥
पाय राज्य अब करत अनीती। सुत वशभये बन्धु सुतजीती ॥
बन्धु सुतनकर नृप पदलेहू। करत पाप यदु राख न येहू ॥
लोचन गये न सूझत हिये। कुल बहिजाय पापके किये ॥
कह धृतराष्ट्र बहुरि सुनु भाई। मैं क्या करौं रहौं अरगाई ॥
निजनिजमतिसबकरतकुचाली। सुनै न कोउ मम वचन सुचाली
तिहिते साध रह्यो चुप भाई। करत कृष्णपद भक्ति सुहाई ॥
सुनि अक्रूर उठे शिरनाई। हर्षि चढे निज यान सुहाई ॥
गे मधुपुर कछुदिन महँ भाई। जाय मर्म नृप सभासुनाई ॥
दोहा—उग्रसेन वसुदेवसन, कही पांडुकी बात।
कुन्तीसुत अतिदुखितहैं, मनमलीनकृशगात ॥ १ ॥
सुनत सँदेशा राम प्रभु, शोचकियो मनमाहिं।
होहिं सहायक वेगही, जैहैं कुन्तीपाहिं ॥ २ ॥
अब उतरार्द्ध कहौं कछु गाई। सावधान सुन मुनि मनलाई ॥
कंसराजकी रानी दोऊ। रथचढिचलीं मगधकहँ सोऊ॥

मिलि पितु मातु रुदन अधिकाई। वरणि कथा सब पितुहि सुनाई॥
कंसवधन सुन अतिदुख पावा। पुनि करि क्रोध सभा निज आवा॥
सकल सैन मम होय तयारी। मधुपुरजाय शत्रुसन रारी॥
सुनतहि सबसेना उठिधाई। तेइस अक्षौहिणि सँग लाई॥
इकइस सहस आठसौ सत्तर। होंय रथी जहँ अति बलवत्तर॥
इतनेही गजपति जिहि माहीं। छासठ सहस अश्वपति काहीं॥
एकलाख नवसहस तीनशत। और पचास होहिं पदचर मत॥
तब इक अक्षौहिणि लघु होई। सुनो कहत दीरघ अब सोई॥

दोहा-अयुत नागत्रय अयुत रथ, योधा लख दशलक्ष।
तुरँग कोटि छत्तिस कहत, पदचर यहि दिरघक्ष॥

मथुरै घेरलियो चहुँओरा। करत उपद्रव परम कठोरा॥
देखि विकल पुरवासिन काहीं। हरि बोले बलरामहि पाहीं॥
मागध लेआयो बल भारी। मारहु याको विक्रमधारी॥
याही हेत हमार तुम्हारा। होत भयो अवनी अवतारा॥
हरि बलके अस करत विचारा। नभते द्वै रथ तेज अपारा॥

दोहा-दारुक लेआवत भयो, नाय नाथपद शीश।
कीन्ह विनय करजोर कर, रथ तयार जगदीश॥

चढिकै दोउ वसुदेव कुमारा। करहु जरासुत सैन्यसँहारा॥
सूत वचन सुनि दोउ भगवाना। आयुधसहित चढे दोउ याना॥
कछुक सेन लीन्हें निजसंगा। चले करन मागधसों जंगा॥
पूरवद्वारहिं कढि भगवाना। कियो शंखको शब्द महाना॥
पांचजन्य धुनि सुनि अरिसैना। होतभई आशुही अचैना॥
कृष्ण निरखि मागध मुसुक्याई। कोपित दीन्हें वचन सुनाई॥
बालककृष्ण लौटि गृह जाहू। तुमसों होत न युद्ध उछाहू॥

दोहा–जरासंधके वचन सुनि, यदुपति कछु मुसुक्याय।
मंदमंद माधुरवचन, दीन्हे ताहि सुनाय॥
विक्रम करैं शूर नहिं भाखैं। तेतो यमपुरको अभिलाखैं॥
ताते तोर वचन नहिं मानै। मरणशील किमि औषध जानै॥
माधववचन सुनत मगधेशा। दियो सैन्यको तुरत निदेशा॥
धावहु धरहु धरहु दोउ भाई। जामें कैसहु नहिं बचजाई॥
सुनि प्रभुशासन भट चहुँओरा। छायलियो हनि आयुध घोरा॥
शरऐंचत खैंचत धनु दोऊ। लख्यो न मागधदलमहँ कोऊ॥
दोहा–भये मंडलाकारधनु, रहे दिशन शर छाय।
गजवाजीराजीकटी, भाजी सैन्य सकाय॥
करिन कुंभ कटिगे तहँ केते। कटे तुरंग सवार समेते॥
पैदल रुण्ड मुण्ड महिछाये। टूक टूक बहुरथ दरशाये॥
बहनलगी तहँ शोणित सरिता। कादर डरहिं भीतकी भरिता॥
हल मूसल बलभद्रहु धारी। मागधकी सब सैन्य सँहारी॥
इहि विधि मागध कटक अपारा। राम कृष्ण कीन्हों संहारा॥
यह नहिं तिनको अचरज अहई। जो जगविरचि फेरि संहरई॥
सिंहसमान दौरि तिहि ठामा। गह्यो विरथ मागधकहँरामा॥
ताके मारनकहँ मन दीन्हों। आय कृष्णतब वारण कीन्हों॥
दोहा–लेऐहै यह सैन्य पुनि, मत मारो बलभाय।
जरासंधको छोड़ दिय, कृष्णवचन चितलाय॥
चल्यो करन तप मान गलानी। अब तौ जिये होय यशहानी॥
मारगमें तहँ नृप समुझाई। मगधदेशमें दिय पहुँचाई॥
राम कृष्ण रिपुते जय पाई। मथुरा गे दुंदुभी बजाई॥
नगरमाहिं अति बाजन बाजे। दोउबन्धु निजधाम विराजे॥

इहि विधि मागध इकइसबारा। लैलै आयो सैन्य अपारा॥
पै शठ रामकृष्णसों हारयो। यवनयुद्धतबमनहिंविचारयो॥
तिहि समीप नारदहि पठायो। सो यवनेशहि बहु समझायो॥
सो यवनेश महाबरजोरा। साजि यवन दल तीनकरोरा॥
मथुराकहँ घेरयो द्रुत आई। यदुकुलकहँ अतिभय उपजाई॥
लखि यदुवंशिन शोक अपारा। कृष्णराम अस कियो विचारा॥
यहिके लरनमाहिं मगदेशा। ऐहैं काल्ह परौं यहि देशा॥
मथुरानगरी सूनि विचारी। धरि लैजैहैं यदुकुल भारी॥

दोहा—ताते अब नहिं उचितहै, करिबो यहां निवास।
और ठौर कहुँ राखिकै, याको करूं विनाश॥

तब विश्वकर्माते यदुराई। सागर मध्य पुरी बनवाई॥
द्वादश योजनकी चौंडाई। तैसहि नगरीकी लम्बाई॥
जहँ विश्वकर्मा विधि निपुणाई। विरचि आपनी दियो दिखाई॥
कल्पवृक्षके सोहैं बागा। सुधासरिस जल कूप तड़ागा॥
कनकस्फटिक भवन उतंगा। परसहिं रविमंडल तिनशृंगा॥
लोकपाल निजनिज प्रभुताई। सबै द्वारिका दीन्ह पठाई॥
पारिजात अरु सभा सुधर्मा। पठये इन्द्र परमप्रद शर्मा॥
बसत द्वारिका मरै न कोई। सबको शक्रसरिस सुख होई॥

दोहा—तहँ यदुकुल पहुँचाय प्रभु, सभा इन्द्रकहँ सौंप।
आप निरायुध कढतभे, यवनराजमनचोप॥ १॥
पूर्णिमाके चन्द्रसे, जब कढिचले गुविन्द।
कालयवन लखिकै तहां, पायो परम अनन्द॥ २॥

चारिबाहु सोहत वनमाला। पीताम्बर श्रीवत्स विशाला॥
कमलनैन सुन्दर तनु श्यामा। युग कपोलकुंडलछबिधामा॥

इमि यदुपतिको लखि यवनेशा । सुधिकर नारदकेर निदेशा ॥
येई कृष्ण अहैं अस जानी । धायो शस्त्रछोंडि अभिमानी ॥
आवत यवनहिं लखिहरि भागे । मानहु महाभीति रसपागे ॥
पगपगमें पकरन सो धावत । पावैकिमिजिहियोगि न पावत ॥
यहिविधि तिहि लेगये कृपाला । जहँ सोवत मुचुकुन्द भुआला ॥

दोहा-निजपट नृपहिं उढ़ायकै, किय प्रभु गुहाप्रवेश ।
पाछे कोपितजातभो, आतुर तहँ यवनेश ॥

लखि पीताम्बर जानि ब्रजेशै । भयो कोप अतिशय यवनेशै ॥
मुहिं लिवाय इत सोवत कारो । असकहि कीन्हेसि चरणप्रहारो ॥
उठ्यो नैनमीजत मुचुकुन्दा । चहुँदिशि निरख्यो तेजअमन्दा ॥
भूपति दीठ परत यवनेशा । भयो भस्म तिहिक्षणै नरेशा ॥
कह नृप यह कस रह्यो भुआरा । याकर चरित करहु विस्तारा ॥
सुनि कुरुपतिकी गिरा सुहाई । शुकाचार्य बोले सुखपाई ॥
सो इक्ष्वाकु वंश अवतारा । मांधाताको अहै कुमारा ॥
असुरनसों सुर विजय न पाये । तब मुचुकुन्द सहाय बुलाये ॥
तहँ धनु शर धारि नृप मुचुकुन्दा । रक्षा कीन्हें देवन वृन्दा ॥
बहुत वर्ष सोये नृप नाहीं । कियो पराजय दैत्यनकाहीं ॥
तब प्रसन्न ह्वै कह सुर वानी । मांगहु वर भूपति बलखानी ॥
मंत्री तिय सुत जन परिवारा । रहिनगये संसार तुम्हारा ॥
मुक्तिछोड माँगहु वरदाना । गतिदाता केवल भगवाना ॥
कह नृप गये बहुत दिन बीती । सोयो नहीं असुरदल जीती ॥
ताते मोहिं नींद अति भावै । होय भस्म जो मोहिं जगावै ॥
एवमस्तु कहि देवन दीन्हें । नृप गिरिगुहाशयन तब कीन्हें ॥
गयो यवन जब जरि तिहि ठामा । तब नृपढिग आये घनश्यामा ॥

अतिसुन्दरस्वरूप लखि राजा। शंकितभो सुमिरत निजकाजा॥
पुनि नवाय भूपति निजमाथा। बोल्यो वचन जोरि दोउ हाथा॥
कौन आप हैं मोहिं बतावो। निजप्रकाश त्रिभुवनमहँ छावो॥
की रवि की शशि की सुरराई। की पावक प्रकाश अधिकाई॥

दोहा-पै मुहिं जानो परतहै, हौ नारायण नाथ।
वचन सुधासम प्यायके, कस नहिं करहु सनाथ॥

जब मुचुकुन्द कही अस बानी। तब बोले हँसि सारँगपानी॥
जन्म कर्म मम अहैं अनन्ता। विधि शिव शेषहु लहैं न अन्ता॥
पै तुव प्रीति देखि नरराई। नेसुकतुम कहँ देहुँ सुनाई॥
हरण भूमिभारा करतारा। विनय करी अति बारहिंबारा॥

दोहा-तब मैं श्रीवसुदेवको, भयो सुवन महिआय।
वासुदेव कहवावतो, जानलेहु नृपराय॥

कंस प्रलम्बादिक खल मारचो। बहुविधि सन्तनको दुख टारचो॥
तुम्हरे तेजजरचो यवनेशा। कृपाकरन आयों यहि देशा॥
पूरब तुम माँग्यो वरदाना। मोकहँ दरश देहिं भगवाना॥
तुमको महाभागवत चीन्हों। ताते आय दरश इत दीन्हों॥
माँगहु वर मोसों महिपाला। होहि कामना सिद्ध उताला॥
यदुपतिकी सुनि गिरा सुहाई। नृप मुचुकुन्द मोद अतिपाई॥

दोहा-तीनलोकके नाथको, जानि आपनो नाथ।
करनलग्यो अस्तुति नृपति, मुदित जोरि युगहाथ॥

छन्द-जय जय सुखकारी लोकविहारी भवभयहारीदासनके।
अरिगर्वप्रहारी वरवपुधारी नित्यविहारी रासनके॥
अज शक्र महेशा शारद शेषा सकलसुरेशा पदवंदैं।
प्रभुकृपानिवेशा धरि बहुवेशा हरहु हमेशा दुखद्वंदैं॥

तुवमाया मोहे जनदुखपोहे तुम नहिं जोहेअन्धलखें।
दुखरूप निकेते तियासमेते तहँ सुखहेते विषैभखें॥
सुतवितातियराते नृपमदमाते कालहिजाते मैं नगन्यो।
तजिजगतअशक्तीहियेनभक्तीलक्षोनमुक्ती वृथहिजन्यो॥
तनुसतिपहिचाने नृपमदमाने चढिबहुयाने सैन्ययुते।
महिफिरैं भुलाने करिमदपाने तुमहिं नजाने नंदसुते॥
बहुविषयहुलासे लोभहिफांसे करतविलासे जे जन हैं।
तिनको तुमकाले भक्षतहाले आपुहिब्यालैजिमिवनहैं॥
तनुभक्षशृगालनतिहिकरिपालनरचिबहुमालननरपतिह्वै।
स्यंदन चढिधायो अरिनभगायोकालगमायोशठमतिह्वै॥
समनृपमुहिंवंदे मैं अरिद्वंदेकरिबहुफंदे भूमिजित्यो।
रमणिनरसराच्योतिनवशनाच्योमगसमसांच्योबारकित्यो॥
तजि सब जग भोगै करि बहु योगै चाहत लोगै स्वर्ग सुखै।
तृष्णावशधावै नहिं मुद आवै श्रम भारि पावै होत दुखै॥
जन भ्रमत अभंगे लहि सतसंगे तव भवभंगे होत अहै।
तवचरित अलेखे तुमकहँ देखे अतिसुख लेखे मगन रहै॥
चाहत बनजाई सतनृपराई राज्य महाई तजन इतै।
सो विनहिं उपाई मैं अब पाई श्री यदुराई तुमहिं चितै॥
पदकमलहिलागी भजहिंविरागी तिहिहमत्यागी वरनरै।
तजि दीनदयाले लहि कलिकाले यहिजगजालेकहांपरै॥
तिहिते तजि आशै सहित हुलासै रमानिवासै तुमहिं भजौं।
तुमहो अविकारी अवमदधारी यही विचारी अबनतजौं॥
अति तापनतायो लोभसतायो तोष न पायो भांति कोई।
अब शरणहि आयो दासकहायो सबसुखछायो चरणजोई॥

प्रभु कृपाकरीजै यह यशलीजै भक्तिहि दीजै मोहिं हरे।
मति तुव रसभीजै दुखसुख छीजै प्रेमहिं पीजै मोद भरे॥

दोहा-सुनि स्तुति मुचुकुन्दकी, बोलत भे यदुनाथ।
महाराज तुवविमल मति, पैहो सति मुदगाथ॥

वरदीवो कहि यदपि लुभायो।तदपि न तुव मन डुल्यो डुलायो।
मोरभक्त जे हैं जगमाहीं। तिन्हैं कामना उपजति नाहीं॥
जासु वासना भई न छीनी।कबहुँक तिहि मतिहोत मलीनी॥
पै जिनके उर भक्ति विलासे। तिनकी मतिको विषै न त्रासे॥
विचरहु जगमें मोकहँ ध्याई। पैहो भक्ति मोरि सुखदाई॥
क्षत्रिधर्ममें जिवगण मारा। तप करि तिनको करो उधारा॥
औरै जन्म विप्र वर ह्वैके। सब भूतन दाया दृग ज्वैके॥
करिहो गमन भूप मम धामा। जहां जात योगी तजि कामा॥

दोहा-यामें और न होयगो, जानिलेहु महिपाल॥
भक्त हमारे रहहुगे, तुम सर्वदा विशाल॥ १॥
इहिविधि प्रभुकी लहि कृपा, सो मुचुकुन्द नरेश।
करि प्रदक्षिणा कृष्णको, तजनचह्यो वह देश॥ २॥

कढ्यो कन्दराते महिपाला।लखिलघुजीवगुण्यो कलिकाला
उत्तरदिशि बदरी वन जाई। किय चितदै तप परगति पाई॥
तहँ ते लौटि कृष्णभगवाना। यवनन मारि हर्‌यो धननाना॥
चले द्वारिका वृषन लदाई। जरासंध आयो तहँ धाई॥
मागध सैन्य देखि प्रभु भागे। मनुजचरित्र करन अनुरागे॥
छोडदियो धन मनहु डराई। बहु योजन गे हरि बलराई॥
भगे जात मागध दोउ देखे। लियो यवन धन कादर लेखे॥
सैन्यसहित धायो मगधेशा।कृष्ण राम गमनत जिहि देशा॥

दोहा—दूरि जाय हरि बल तहां, गिरिपर चढे उतैल।
जहँ वर्षहि वारिद नितै, नाम प्रवर्षणशैल॥

इहि विधि गये सुकृपानिकेता। रिपु संताप मिटावनहेता॥
लखि अस हर्षि सैनले धावा। जात पुकारत सुन यदुरावा॥
समुझि त्रास किमि भागत जाता। ठाढे होहु करहु कछु बाता॥
पुनःपुनःलखि कह्यो पुकारी। शिखर चढे बलभद्र मुरारी॥
अब कहँ भागि बचै रिपुराई। या पर्वतको देहु जराई॥
सुचि ईंधन दिय अनल लगाई। शैल प्रवर्षण दियो जराई॥
लहकी लपट शृंगपर जाई। तब उडिचले कुँवर द्वौ भाई॥
जरत शैल तहँते दोउ ढरके। एकादश योजनमें तरके॥
पुनि द्वारिकै गये दोउ भाई। मागध तिनकी खबर न पाई॥
मुए जान तजि निज अंदेशा। मगधदेश गमन्यो मगधेशा॥
द्वारावती जाय यदुराई। वसत भये अतिशय सुखपाई॥
कछुदिन वसत अनरतादेशू। तहँ वस रेवतनाम नरेशू॥
तिहि इक सुता रेवती नामा। पठयो तिलक हेत बलरामा॥
ले द्वारकहि गयो द्विज सोई। सुनि अस हर्षविवश सब कोई॥
सुनि नृप मंगलचार करावा। बहुरि रामशिर तिलक चढावा॥
गये विप्र दिन लग्न बताई। यहां बरात चली सजि भाई॥
गई अनरतादेश बराता। कीन्ह विवाह हर्षि अतिगाता॥
रामकेर इहिविधिसों व्याहू। गये भवन ले कुँवरि उछाहू॥

छन्द—गृहगये परम उछाह पुनि हरि राम कुन्दनपुर गये।
नृपभीष्मककी सुता रुक्मिणिमांग शिशुपालहि दिये॥
तिहि हरेहु कृष्णचढाय स्यन्दन असुरदल सब मारिकै।
घर आनि कीन्हेउ व्याहजी सुख वेद विधिहि सम्हारिकै॥

सोरठा-सुनि नृप परमहुलास, गहे बहुरि मुनि पदकमल।
कीजिय कथा प्रकाश, जिहि विधि व्याही रुक्मिणी॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ग्रन्थउजागर कृष्णायनकथा जरासंधसमरवर्णनोनाम दशमोऽध्यायः॥ १०॥

दोहा-विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमरि राम सुखदान।
अब रुक्मिणीविवाह शुभ, कहँ उत्तरार्द्ध बखान॥

राजोवाच।

यदुपति करि राक्षसी विधाना। रुक्मिणि हरी सुन्यो यह काना॥
जिहिविधि जीतिशाल्वशिशुपाले। हरिरुक्मिणिल्यायेनिजआले॥
कृष्णचन्दकी कथा सुहाई। देहु सुनाय मोहिं मुनिराई॥
कृष्ण कथा अतिशय सुखदाई। श्रवणपरत कलिमल नशिजाई॥
कथा सुधाको पानहिं पाई। कौन रसिक जो जाय अघाई॥
सुनत परीक्षित के मृदुवैना। कहन लगे शुकदेव सुचैना॥
देश विदर्भ एक अति पावन। तहँ को भीष्मक भूपसुहावन॥

श्रीशुक उवाच।

दोहा-ताके इक कन्या रही, अरु नृप पंच कुमार।
रुक्मीतिनमें ज्येष्ठ भो, जगमहँ अतिबलवार॥

सुनि रुक्मिणी कृष्णगुणरूपा। वरिलीन्ह्यों मनते वरभूपा॥
भ्रात मातु पितु सहित उछाहू। करनचहे हठि कृष्णविवाहू॥
तब रुक्मी बरज्यो तिनकाहीं। देनचह्यो शिशुपाल विवाही॥
सुनि रुक्मिणी परम दुखपायो। इकपंडित हरिपास पठायो॥
सो द्वारिके गयो द्रुतधाई। हरिढिग द्वारप दियपहुँचाई॥
सिंहासन बैठे यदुनाथा। लखिद्विजकहँनायोप्रभुमाथा॥

पुनिपूजनकिय विविध प्रकारा । जिमि हरि पूजहिं देव उदारा ॥
पुनि विप्रहि भोजन करवायो । चरणचापि असवचन सुनायो ॥

दोहा—विप्र कुशल है धर्म तुव, करो तो नाहिं कलेश ।
रह्यो सदा संतोष करि, यह द्विजधर्म हमेश ॥

जो संतोष करै मनमाहीं । तासु वचन है सत्य सदाहीं ॥
असंतोष शक्रहु सुख नाहीं । सुख संतोषी दीनहुँ काहीं ॥
जे संतोषी साधु उदारा । तजे अहंकारहु ममकारा ॥
जीव दयापर है तप धामा । शिरसों तिनके अमित प्रणामा ॥
विप्र जौन राजाके राजै । बसै प्रजा सुख सहित समाजै ॥
सो भूपति मोको अति प्यारो । मेरे पुरको गमननहारो ॥
जौन देशते तुम इत आये । ताकी कुशल कहौ सुखछाये ॥
हमको जिहिविधि शासन देहू । सो हम करिहैं नहिं संदेहू ॥

दोहा—जब ब्राह्मणसों अस कह्यो, शीलसिंधु यदुनाथ ।
तब रुक्मिणिकी पत्रिका, दीन्ह्यों हरिके हाथ ॥ १ ॥
तब यदुपति बोलत भये, तुमहीं देहु सुनाय ।
तब ब्राह्मण बाँचन लग्यो, परमानन्दहि पाय ॥ २ ॥

रुक्मिणी उवाच ।

छन्दचौ०—त्रिभुवनसुन्दरजनश्रुतिकन्दरतवगुणबसि दुखछीने ।
तवरूप सुहायो निजहगआयो हगफलपूरणकीने ॥
सुनिसो गुणरूपै परमअनूपै ममभन लाज विहाई ।
तव पदढिगजाई रह्योलुभाई कह्यो सत्य यदुराई ॥
असको कुलवारी अहै कुमारी वरै न तुमहिं निहारी ।
विद्याकुलशीले धन वय डीले तुमसम तुमहिं विहारी ॥

अति आनँदकंदै सबजग बन्दै नरलोकहि अभिरामै ।
यदुकुलकेनायक सब विधिलायक पूरणसब मनकामै ॥
तिहिते बरिलीन्हो तनमनदीन्ह्यो तुमहिंसमर्थहिंजानी ॥
प्रभुदयाविचारी इतपगधारी करोदार गहि पानी ॥
तुवबीरहिं अंशै चेदिपदंशै करै नहीं द्रुत जामें ।
मृगपतिके भागै अब नहिं लागै जम्बुक और दगामें ॥
मैं जो शुभकर्मै करियुत धर्मै दान यज्ञ व्रत नेमा ।
सर कूप अरामै रचि अभिरामै जप्यो हरिहिंसहप्रेमा ॥
तौ सुरगण वन्दन दुष्टनिकन्दन करै व्याह इतआई ।
नहिं नृपशिशुपालादिकविकरालागहैंपाणिदुखदाई ॥
मम कालि विवाहा है उरदाहा ताते करि अतुराई ।
प्रथमहिंछिपिआवोपुनिदलल्यावो सबलैदलोकन्हाई ॥
चैद्यादिक सैनै हरिशर पैनै मोरि मदै हठि नाथा ।
राक्षसविधिखोलै वीरज मोलै मुहिंहरि करहु सनाथा ॥
अन्तःपुरमाहीं बन्धुनकाहीं हनिहम किहि विधिव्याहीं ।
असजो प्रभुभाषो तौ करि राखौ यह उपायमनमाहीं ॥
जिहिंपदरजकाहैं शिवसम चाहैं सज्जन हितअघनाशै ।
तिहिं जो नहिं पैहौं ताजि तनुदैहौं करिव्रत विनहिं प्रयासै ॥
प्रभुसत्य बखानो यहहठि मानो जबलगिमिलिहोनाहीं ।
तबलगि शतजन्मै है यह मनमें वरिहैं आपहिकाहीं ॥

दोहा—यहविधि पाती बाँचिकै, फेरिजोरि युगहाथ ।
कहनलग्यो सो विप्रवर, निरखत मुख यदुनाथ ॥

ब्राह्मण उवाच ।

दोहा—यह रुक्मिणिसंदेश मैं, गोविंद दियो सुनाय ।
अनुचित उचित विचारिकै, करहु सोइ यदुराय ॥

श्रीशुक उवाच।

दोहा-पाती रुक्मिणिकी सुखद, सुनिकै पाय अनन्द।
करसों कर गहि विप्रको, हँसि बोले यदुनन्द॥

श्रीभगवान उवाच।

जबते रुक्मिणिकी सुधि पाई। तबते नैन नींद नहिं आई॥
मैं जानेहुँ यह विप्र उदारा। रुक्मी रोंक्यो व्याह हमारा॥
द्विज सब भूपनको मद मोरी। हरिलैहौं रुक्मिणि वर जोरी॥
कालि जान प्रभु होन विवाहा। दारुकसों कह सहित उछाहा॥
परमवेग चारहु मम वाजी। लैआवहु स्यंदन महँ साजी॥
सुनत सूत रथ साजि तुरन्ता। लाय ठाढभो जहँ श्रीकंता॥
साँझ जानि वसुदेव कुमारा। ले द्विज कहँ रथमे असवारा॥
दारुक ताजिन हन्यो तुरंगा। वाजी चले पवनके संगा॥

दोहा-एक रातहींमें गये, कुंडिनपुर यदुनाथ।
रुक्मिणिको अरु विप्रको, कीन्ह्यों आशु सनाथ॥

भीषमभूप रुक्मकहँ डरिकै। चेदिपको विवाह चित धरिकै॥
व्याह चार सब लग्यो करावन। दुःखित ह्वै सुमिरत जगपावन॥
नगर बजारन गलिन झराई। भवन भवन महँ ध्वजा बँधाई॥
बहुविधि नर नारिन सजवायो। सुरभित धूपित धूपकरायो॥
पितरन देवन पूजन कीन्ह्यों। भूसुरको बहु भोजन दीन्ह्यों॥
विप्रनसों स्वस्तैन पठाई। कन्याको विधिवत नहवाई॥
सुभग वसन भूषण पहिरायो। रक्षाबन्धन पुनि बँधवायो॥
तहां विप्रवर होमहिं कीन्हें। राजा कनक धेनु बहु दीन्हें॥

दोहा-तैसहि दमघोषहु तहां, करि चेदिपको चार।
कुंडिनको गमनत भये, सँगले नृपबल बार॥

तिनको ले रुक्मी अगुवानी। दिय जनवास परम सुखमानी ॥
दंतवक्र शाल्वहु मगधेशा। पौंड्रकविदुरथ आदि नरेशा ॥
चेदिप व्याह करावनहेतू। आये कुंडिन सैन्य समेतू ॥
जो कहुँ राम कृष्ण इत ऐहैं। तो रणमें भगाय हम देहैं ॥
यह हवाल सुनिकै बलरामा। कृष्णहु गये हरणके कामा ॥
युद्ध जानि लै सैन्य महाई। आये कुंडिनको बलराई ॥
रुक्मिणि मन संदेह बढायो। आयहु द्विज नहिं जाहि पठायो॥
गई यामभरि बीतित्रियामा। काहे नहिं आये श्रीधामा ॥

दोहा-मोमेँ कछु निन्दित लख्यो, ताते श्रीयदुराय।
मेरे करको गहनहित, आये नहिं इत धाय ॥

मो अभागिनीपर शिवरानी। भईं प्रतिकूल परत यह जानी ॥
यहि प्रकार चिंताकरि बाला। मूँदेउ अंबुज नयन विशाला ॥
तिहिक्षण रुक्मिणिके छबिधामा। फरकेउ उरू भुजा दृग बामा ॥
ताहीक्षण यदुनाथ पठायो। रुक्मिणिनिकट विप्रवर आयो॥
विप्रहिं पेखि परमसुख पागी। कृष्ण आगमन पूछनलागी ॥
विप्र कह्यो आये यदुनन्दन। तेरो प्रण राख्यो रिपुदन्दन ॥
यदुपतिआगम सुनत कुमारी। मगनभई सुखसिंधुमँझारी ॥
तीनहुँ लोक विप्रकहँ थोरा। देतहोत क्षोभित मन मोरा ॥

दोहा-अस विचारि पंडितपगन, रुक्मिणि कियो प्रणाम।
कह्यो ऋणीहौं उऋण नहिं, तोसों मैं मतिधाम ॥

भूपति सुनि यदुनाथ अवाई। धन्यभाग्य आपनी गनाई ॥
विविधभाँति लै पूजनसाजू। भाँति भाँति बजवावत बाजू ॥
विविधभाँति भूषण पट आछे। विविधभाँति मणिगणबहुआछे॥
विविधभाँति तिय गान कराई। लेनचले नृप हरि अगुवाई ॥

गये जबहिं भूपति कछुदूरी। देखी उड़त व्योम अतिधूरी ॥
निकटजाइ यदुवरकहँ देखी। लह्यो मोद भीषमक विशेषी ॥
कियो धरणिमहँ दंडप्रणामा। पूजन कियो सविधि सुखधामा ॥
पुरबाहर जनवास कराई। विविधभाँतिकी भेंट चढ़ाई ॥

दोहा–यथायोग्य सबको कियो, भूपति सब व्यवहार।
यथायोग्य यदुवरसहित, पायो सब सतकार ॥

रामकृष्ण निरखन पुरवासी। आये सकल मानि मुदरासी ॥
निरखि कृष्णशोभा सुखदाई। रहे पलकतजि दीठि लगाई ॥
आपुसमें सिगरे बतराहीं। येई रुक्मिणि लेहिं विवाहीं ॥
रुक्मिणिके हैं योग्य बिहारी। अहै बिहारिहियोग्य कुमारी ॥
जो कछु सुकृत किये हम होहीं। दैव होहि जो हमपर छोहीं ॥
तौ रुक्मिणिकर गहैं मुरारी। पूजै तबहीं आश हमारी ॥
अस कहि पुरजन गे निजगेहू। बँधे सकल यदुनाथ सनेहू ॥
पुनि माता रुक्मिणि नहवाई। गिरिजागृहको चली लिवाई ॥

दोहा–चली चरणसों रुक्मिणी, कृष्णकमलपद ध्याय।
गहे मौनव्रत सखिनयुत, पीतांबरछबिछाय ॥

गिरिजामंदिरमहँ यदुराई। हरिहैं रुक्मिणिकहँ हठिआई ॥
अस शंकितह्वै सब महिपाला। चले सैन्यलै संग विशाला ॥
भेरी दुंदुभि शंख मृदंगा। बाजे तिहिक्षण एकहि संगा ॥
यहिविधि गिरिजामंदिरमाहीं। चली रुक्मिणी पूजनकाहीं ॥
करहिं मंगलामुखी सुगाना। चलीं अलंकृत द्विजतिय नाना ॥
गायक गिरिजा अस्तुति करहीं। रुक्मिणिसंग परम सुख भरहीं ॥
गिरिजामंदिरमें यहि भाँती। पहुँचगई रुक्मिणि छबिपाँती ॥
चरण पखारि आचमन करिकै। किय मंदिरप्रवेश सुखभरिकै ॥

दोहा—तहँ वृद्धा द्विजनारि सब, विधिकी जाननिहार।
वन्दन करवावत भई, मंगलवचन उचार॥

गिरिजावंदन रुक्मिणि कीन्हों। ऐसे वचन मन्द कहि दीन्हों॥
शक्तिवती जो होहु भवानी। गहैं पाणि मम शारँगपानी॥
बारबार मैं करों प्रणामा। पुजवहु आज मोर मनकामा॥
अस कहि पुनि मज्जन करवायो। चन्दन अक्षत सुमन चढ़ायो॥
धूप दीप पुनि मुदित दिखायो। विविध भाँति नैवेद्य लगायो॥
पुनि सधवानारिनकहँ पूजी। रुक्मिणि कृष्णआश नहिंदूजी॥
ते सधवातिय अति अहलादा। रुक्मिणिकहँ दीन्हों परसादा॥
भूपसुता किय तिन्हैं प्रणामा। तज्यो मौनव्रत सो छबिधामा॥

दोहा—गिरिजामन्दिरसों कढ़ी, भीषमसुता सुजानि।
रत्नजटितकंकणसहित, सखीपाणि गहि पानि॥

कुंडलमंडित युगल कपोला। रत्नमेखला लंक अमोला॥
अलकैंलटकिलटकिमुखहलकैं। अधरबिंब शोभासुठि झलकैं॥
मधुर करहिं नूपुर पग शोरा। गमन जासु गजगतिमदमोरा॥
कुंदकलीसे दंत विराजैं। रतिरंभा जिहि छबिलखिलाजैं॥
भूपसुताकहँ निरखि नरेशा। मोहिगये भूले निज देशा॥
लगे पंच शर शर सुखदाई। गिरे भूमिमें सुधि विसराई॥
अस्त्र शस्त्र छूटे इकसंगा। तिमि स्यंदन मातंग तुरंगा॥
मनहु देवमाया महिआई। सबभूपनकहँ लियो लुभाई॥

दोहा—मन्द मन्द गमनत लली, जब गै मंदिरद्वार।
अलकटारि निरखनलगी, कहँ वसुदेव कुमार॥ १॥
यदुनन्दनको तहँ लख्यो, स्यंदन सपदि सवार।
दुख द्वंदनि दूरीकियो, आनंदनि इकबार॥ २॥

रथआरोहित तुरत तहँ, यदुपति रथहिं चलाय ।
रुक्मिणिको शत्रुनलखत, निजरथलियो चढ़ाय ॥ ३ ॥
युद्ध रामको सौंपिकै, गमन द्वारिका कीन्ह ।
मनहुँ शृगालनमध्यते, सिंह भाग निज लीन्ह ॥ ४ ॥
जब दलते रथ निकसिगो, तब जागे सब भूप ।
गोप हरचो धिकधिक हमैं, अस बोले मतिकूप ॥ ५ ॥

इति श्रीविश्रामसागर ग्रंथउजागर रुक्मिणीहरणवर्णनोनामैका-दशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

श्रीशुक उवाच ।

दोहा-निजनिजवाहनमें चढे, निजनिजलै हथियार ।
निजनिजदललै चलतभे, सब भूपति इकबार ॥
आवत तिनहिं देखि यदुवीरा । सन्मुखखडे भये रणधीरा ॥
करि कोदंड कठिन टंकोरा । कीन्हों सिंहनाद अति घोरा ॥
कोउ मतंग कोउ चढे तुरंगा । कोउ स्यंदनमहँ युद्धउमंगा ॥
नृपनसैन्यमहँ एकहि बारा । यदुवंशी छोडो शरधारा ॥
तैसहि मगधादिक बलवाना । बार बार बर्षतभे बाना ॥
जैसे मघा मेघ गिरिमाहीं । बार बार बूँदनझरि लाहीं ॥
यदुदल मूँदि गयो शरधारै । तब रुक्मिणिको भयो खँभारै ॥
शंकित पतिमुख निरखनलागी । कही न कछु लज्जितभै पागी ॥
दोहा-विहँसि कह्यो गोविंद तब, सुन्दरि भय मतिमानु ।
मेरो दल शत्रुन दलै, अबहिं जितै यह जानु ॥
तिहिक्षण भयो युद्ध अति घोरा । यदुवंशिन भूपन बरजोरा ॥
तहँ गदआदिक यदुवरवीरा । मारि शरन किय अरिन अधीरा

गजवाजिनशिर महि कटि परहीं। सिंहनाद भट बहुविधि करहीं॥
कोटिन कीट कवच कटिजाहीं। रुंड मुंड बहु खंड लखाहीं॥
अंगद गदासहित करवाला। परहिं धरणि कटि भुजाविशाला
कटे उरू मानहुँ गजशुंडा। वाजीराजी भे बहुखंडा॥
खच्चर ऊंट अश्व खर नागे। भागहिं रणमहँ बाणन लागे॥
कोटिन भटन मुंड कटिजाहीं। धावत समर कबंध लखाहीं॥

दोहा-कोटिन शोणित सरि बही, योगिन प्रेत अघान।
काक गृध्र गोमायहू, मच्यो महा घमसान॥

द्वंदयुद्ध पुनि भो तिहिंठामा। जुरे वीरसों वीर ललामा॥
पुनि बलभद्र भयंकररूपा। धारि कियो तहँ युद्ध अनूपा॥
लियो जीति रिपुदल इकछिनमें। भागे भूप दुखित अति मनमें॥
राम बजावत विजयनिशाना। किये द्वारिकै सुखित पयाना॥
जरासंधआदिक महिपाला। गये भागि जहँ रह शिशुपाला॥
शिशुपालहु निज लखो पराजै। दुखितभयो करिकै अतिलाजै॥
सूखिगयो मुख बोलत नाहीं। मरन ठीक कीन्हों मनमाहीं॥
तब मगधादिक भूप अभागे। शिशुपालहिं समझावन लागे॥

दोहा-सुनहु भूप शिशुपाल अब, छोड़हु सकल गलानि।
कबहुँक प्रिय अप्रिय कबहुँ, देहिनको नित जानि॥

गई वस्तुके शोचनवारे। द्रव्यपाय जिन धर्म बिसारे॥
हितकी बात नहीं मन ठानैं। करी कृत्यको अपनी मानैं॥
पन्थचलत जो भोजन खावैं। हँसत हँसत जो कछु बतलावैं॥
जो शठते विवाद कछु ठानै। धनसे अधिक द्रव्यव्ययमानै॥
वैर सबलते जे जन करहीं। अनवैरीको निजघर धरहीं॥
विनमतलब कटु भाषत जोई। पापप्रगट दूसरकर कोई॥

दोके बिच तीसर जो बोलैं। तियकी बात मान कहुँ खोलैं॥
निर्धनके धन धरनेहारे। बूढे होंय व्याहनेवारे॥
सारेसँग जे बहन पठावैं। जो पराइशय्यापर जावैं॥
कर्मक्रियाते जे जन हीना। नारि न होय जु पति आधीना॥
माँगतमें मद करबेवारे। जोरि प्रीति पुनि तोरनहारे॥
निजमुख निजगुणजोकोइगावैं। बालकको अति मुहैं लगावैं॥
त्यागी ह्वै धन जोरैं जोई। व्यर्थ वृक्षफल तोरत सोई॥
विनजाने दें दखल जु आई। गुरुअस्थान चपलता लाई॥
यह सब मूरख शास्त्र गिनाये। यासे शोच तजहु मनभाये॥
सबते बड़ मूरख तिहि जाना। नरतनु लहि नभजे भगवाना॥
तिहिते तजहु मूढ़ता भारी। पुनि करि युद्ध जितैं बनवारी॥
कल वश दारु नारि जिमि नाचै। ईशहाथ तिमि सुखदुख साँचै॥
हरिसों हारयौं सत्रहिं बारा। तेइस अक्षौहिणि दल मारा॥
अष्टादशहिं बार जय पायो। तद्यपि सुख दुखनहिंमनलायो॥
लघु यदुवंशिनते यहि काला। लह्यो पराजय तुम शिशुपाला॥
जानि ईश गति शोचहु नाहीं। राखहु मन उत्साह सदाहीं॥
ह्वैहै जबहिं दैव अनुकूला। तब जीतिहैं फेर गहि शूला॥
यहिविधि चेदिप कहँ समुझाई। गे नृप निज निज ऐन पराई॥
रुक्मी सुन्यो भूप सब हारे। हरि रुक्मिणिको हरिहु सिधारे॥

दोहा-इक अक्षौहिणि सैन्यलै, पुरते कढ्यो कुमार।
करी प्रतिज्ञा मधिसभा, भरयो घमंड अपार॥

बिन रुक्मिणी भगिनि कहँआने। बिन यदुपति वध रणमहँ ठाने॥
ऐहौं नहिं अब कुंडिन माहीं। भाषौं सत्य मृषा है नाहीं॥
अस कहि रथ पर भयो सवारा। सारथि सों असवचन उचारा॥

मारहु ताजिन अश्वनकाहीं । लैचल लैचल जहँ हरि जाहीं ॥
आजु मारि बाणन गोपालैं । लैहो भगिनिछीनि वहिकालैं ॥
दुर्मतिको मद अवशि उतारिहौं । लैभगिनी निजअयन सिधारिहौं
कहत कहत अस हरि नियरानो । कृष्ण प्रभाव कुमति नहिंजानो
आशुहिं अपना यान धवाई । यदुपतिको अस गिरा सुनाई ॥

दोहा-चोर ठाढरहु ठाढ़रहु, लीन्हीं भगिनि चुराय ।
ताको फल आजहिं अबहिं, तोको देहुँ दिखाय ॥

अस कहि हरिहिमारित्रयबाना । पुनि बोल्यो रुक्मी बलवाना ॥
हे कुलदूषण जान न पैहै । आजु समर महँ गर्व गमैहै ॥
काक लहै कहुँ यागनिभागा । ममभगिनीतिमिचहसिअभागा
रे मतिमंद महा छलकारी । जीव चहै तो तजै कुमारी ॥
रुक्मी गिरा सुनत यदुराई । तजे विशिख नेसुक मुसुकाई ॥
धनुष काटि त्रयशरतिहिमारचो । पुनि चारिहु तुरंग संहारचो ॥
सूतहिं हन्यो ध्वजा पुनि काट्यो । मारि बाण रथचक्रनि छाट्यो ॥
तब द्वितीयलै धनुष कुमारा । पाँच बाण यदुपतिकहँमारा ॥

दोहा-बाणमारि यदुनाथ पुनि, काटि दियो तिहि चाप ।
लिय दूसर काट्यो सोऊ, तब उपज्यो सन्ताप ॥

पट्टिश परिघतज्योपुनिशूला । तोमर शक्ति कृपाण अतूला ॥
जो जो रुक्मी शस्त्र चलायो । विनप्रयास यदुनाथ नशायो ॥
तब करमें गहि ढाल कृपाना । रथतें कूदि रुक्मि बलवाना ॥
धायो कोपित यदुपति ओरा । ज्यों पतंग पावकमहँ भोरा ॥
धावत आवत निरखि मुरारी । ढालतेग तिल सम करिडारी ॥
लै कृपाण मारनकहँ धाये । तब रुक्मिणिके दृगजलछाये ॥
चरणपकरि विनती बहु कीनी । भ्रातावध गुणिअतिदुखभीनी ॥
मो भ्राताकहँ मारहु नाहीं । तुमतो करुणासिन्धु सदाहीं ॥

श्रीशुक उवाच ।

दोहा-तहाँ रुक्मिणी वचन सुनि, करुणाकर यदुनाथ ।
रथतें आशुहि कूदिकै, धरे रुक्मके हाथ ॥

बाँध्यो ताहि पागमहँ ताके । सातभाग करि तासुशिखाके ॥
मूँड्यो मूँछ और शिरबारा । भोविरूप भीषमक कुमारा ॥
तबलों मारि सैन्य रिपुकेरी । आये बल बजवावत भेरी ॥
कृष्णसमीप गये बलरामा । निरखिप्रणामकियोघनश्यामा ॥
पुनि देख्यो रुक्मी बलराई । कह्यो कहा कीन्हों यदुराई ॥
भे सयान नहिं गै लरिकाई । करहु रणहुमहँ तुम चपलाई ॥
उचित न बाँधब नातनकाहीं । हँसी होयगी सब जगमाहीं ॥
अस कहि रुक्मीको बलरामा । बन्धन छोरि दियो तिहिठामा ॥

दोहा-पुनि रुक्मिणिके निकट चलि, बलसमुझावनलाग ।
सुख दुख देत न और कोउ, मिलतालिखो जो भाग ॥

क्षत्रि जातिकर है बडरोषू । भ्रातहिं हनत भ्रात गुणिदोषू ॥
भूमि मान धनहेतु कुमारी । क्षत्री लरहिं न दोष बिचारी ॥
सुख दुखमानबहै अज्ञाना । दंडिन दंड देव कल्याना ॥
जनम मरण यह देहहि केरो । जीवहि नाहिं अस वेद निबेरो ॥
एकईश सब देहिन माहीं । जिमि बहुघट रविबहुतादिखाहीं ॥
ताते अज्ञानज यह शोकू । छोडि कुँवारि धारो मुदओकू ॥
अस बलराम जबै समुझायो । तबरुक्मिणिअतिशयसुखपायो ॥
कृष्ण रुक्मिणिहि रथहिं चढाई । सैन्य सहित गमने बलराई ॥

दोहा-रुक्मिप्रतिज्ञा सुमिरि निज, गयो न कुण्डिनकाहिं ।
विरचि भोजकट नगर तहँ, वस्यो दुखितमनमाहिं ॥

द्वारावतिकहँ यदुपति आये। यदुवंशी अतिशय सुखपाये॥
यदुपुर गृह गृह मंगल नाना। लागे करन नारि नर नाना॥
ठाढी कोट झरोखन नारी। लिये आरती मंगल थारी॥
उग्रसेन तिहि अवसर जाई। लाये प्रभुहि नगर हरषाई॥
करि कुलरीति वेदविधि राजा। आये नगर समेत समाजा॥
बाजहिं बाजन विविध प्रकारा। चलेजात यहि हर्ष अपारा॥

दोहा-ठाढ़ी मंगलचार बहु, करहिं योषिता वृंद।
देखहिं छबि हरि रामकी, पावहिं परमानंद॥

तिहि अवसर पुरजन समुदाई। प्रभुहि प्रणाम करहिं हरषाई॥
युवती द्वारद्वार प्रतिनाना। करहिं आरती मंगल गाना॥
वर्षहिं सुमन हारपहिरावहिं। लखि छबि रामकृष्णयश गावहिं
यहि प्रकार गृह गे यदुराई। कुमारि हर्षि निजमंदिर आई॥
शूरसेन वसुदेव एकदिन। बोले विप्र निज पूछिमुदितमन
शुभनक्षत्र तिथि दिन अनुकूला। लग्नशोध बुधिमंगलमूला॥
भूषणवसन पहर पुरवासी। दुलहिन दूलह देखनआसी॥
लेले भेंट मुदित सब आये। कृष्णरुक्मिणिहि लखिसुखपाये
महलन महलन बँधी पताका। शरदमेघ जिमि लसहिं बलाका

दोहा-द्वारन द्वारन कनक घट, फैलत सौरभ धूप।
गजमदते सींची गली, कदली खंभ अनूप॥

जहां तहांते याचक आये। नाथविवाह सुनत हरषाये॥
रुक्मिणितात मर्म सब जाना। अतिदायज नहिं जाय बखाना
हय गज रथ पट भूषण याना। मणिगण कनक चेरिचरनाना॥
मनसंकल्प सुताहित भाई। दीन्ह द्वारकहि भूपपठाई॥
इत नृप देशदेशके आये। उतभीषम दायज द्विजलाये॥

तिहिअवसर सुख सिंधुसमाना । उपमा कहि नसकैंकविनाना॥
आगे बहुरि व्याह दिन आवा । कृष्णमात सब रीतिकरावा ॥
वरकन्या मंडपतर लाई । बैठे हर्षि सकल तहँ आई ॥

दोहा–द्विजअनुशासन सकल सुर, पूजत कुमर कुमारि ।
हिय हर्षहिं वर्षहिं सुमन, तिहिअवसर सुरनारि ॥

भूसुर हर्षि वेद उच्चरहीं । रुक्मिणिसँगहरिभाँवरि फिरहीं
ढोल दुंदुभी भेरि बजावहिं । मंगलगीत नारि सब गावहिं ॥
सिद्ध साध चारण गंधर्वा । अन्तरिक्ष मे देखत सर्वा ॥
चढे विमान हर्ष शिरनावैं । देववधू सब मंगल गावैं ॥
पाणिगही पुनि भौंमरि डारी । वामअंग रुक्मिणि बैठारी ॥
छोरी गांठ भवनमें गयऊ । कुलदेवी पुनि पूजत भयऊ ॥
छोरत करकंकणघनश्यामा । खेलत फाग मचो सुखधामा ॥
अतिआनंद रच्यो जगदीशा । निरखि हरखि सब देहिं अशीशा

दोहा–पुनि सब बहु भोजन दिये, दानमान हितजान ।
षटरस व्यंजन अमिय सम, सो नहिं जाय बखान ॥

दीने दान विप्र जे आये । मागध बंदीजन पहिराये ॥
पुनि सब निजनिजगेहसिधाये । सब पुरवासिन अतिसुख पाये॥
जगपावन यह कथा सुहाई । सुनत श्रवण अघकोटि नशाई॥
रुक्मिणि चरित सुनै मनलाई । पावहि भक्ति सदा सुखदाई ॥
अश्वमेध यज्ञादिक दाना । तीरथराज गयादिक नाना ॥

दोहा–इनकर फल तिहि सुलभ सब, सुनहिं परम हित जान ॥
नितप्रति हिय सुख ऊपजै, जम ता गहै न मान ॥

आठ प्रकार विवाह कहाये । मानवधर्मशास्त्रमें गाये ॥
ब्राह्म दैव प्राजापत जोई । आर्ष असुर गंधर्व सुहोई ॥

राक्षस और पिशाच बताये । तिनके लक्षण कहहुँ सुहाये ॥
सालंकार सुताको दाना । ब्राह्म विवाह शुद्ध जग जाना ॥
दानदक्षिणा कन्यहि देवहि । सो विवाह जग देव कहावहि ॥
तुम दोउजन मिलि धर्म प्रचारो । यहै प्रजापति व्याह सुखारो ॥
ले दो धेनु सुता जो देवै । आर्षविवाह शास्त्रकर भेवै ॥
कन्या सुप्त प्रमत्त हरै जब । ताहि पिशाचविवाह कहतसब ॥
बन्धुबांधव वधि जो बरई । सो राक्षस विवाह अनुसरई ॥

दोहा-जो सकामकन्या गहै, कर स्वतंत्र पतिकेर ।
ताहि कहत गंधर्व हैं, सकल बुद्धजन टेर ॥

हरि रुक्मिणि यहिविधि हरलाये । सो सब चरित सकल जगछाये ॥
आगिल कथा सुनहु मनलाई । कहुँ विधानयुत सबहिं सुनाई ॥
त्रेतामें हरि जारेउ मारा । तब रतिकीन्ह विलाप अपारा ॥
कामवाम अति व्याकुल फिरई । कंतकंत कहि हित शिरधरई ॥
पियबिन बाल महादुख पावा । तब कृपालु शिव ताहि बुझावा ॥
कृष्णतनय अब होहि अनंगा । धरहु धीर सुतमिलनप्रसंगा ॥
रहु अब तुम शम्बर घर जाई । मिलहि तुम्हार तहां प्रिय आई ॥
शम्बरमारि तुम्हैं लैजैहैं । जाय द्वारिकामांझ बसैहैं ॥
इमि पिनाकधृक रति समुझाई । तब तनुधरि शम्बरघर आई ॥
सुन्दरि मांझ भवनमें रहई । निशिदिन पंथ पियाकर गहई ॥
रतिहि आश प्रियमिलन प्रसंगा । व्यापा तिहुँपुर सबहिअनंगा ॥

दोहा-इत करुणानिधि रुक्मिणी, नितप्रति करहिं विहार ।
विगतभये कछुकाल पुनि, जन्मेउ एक कुमार ॥

सुनि वसुदेव गणक बुलवाई । दीन्ह दान बहुराशि गिनाई ॥
कह्यो विप्र सुन कृष्ण मुरारे । होहिं बली सुत रूप तुम्हारे ॥

रहैं बालपन आन निकेता । पुनि आवहिं घर तीयसमेता ॥
राखि प्रद्युम्ननाम अतिनीका । हर्षं सब पुनि यदुकुलटीका ॥
पुनि यदुवीर भवनमें नारी । गावहिं मंगल आनँदभारी ॥
तिहि अवसर नारद मुनि जाई । शम्बर असुरहि खबर जनाई ॥
काल तुम्हार प्रगटभा आजू । नाम प्रद्युम्न तनय ब्रजराजू ॥
तासु करो तुम वेग उपाई । अस कहि गये भवन ऋषिराई ॥

दोहा—पुनि पुनि हृदयविचार कर, निशिचरमन बिलखाय ॥
बहुरिअलख तनुधारि शठ, गयोभवन यदुराय ॥ १ ॥
जिहि मन्दिरमें रुक्मिणी, सुतहि दबाये गोद ।
उरलाये पय प्यावती, को कहिसकै प्रमोद ॥ २ ॥

ठाढ असुर निज घात लगाये । बाल तनय निजगोद दबाये ॥
सुतपरते कर विलग जुकीन्हा । तबहीं असुरसुवन हरिलीन्हा ॥
इहिविधि सुवन गयो हर सोई । बैठियुवतिछल जान न कोई ॥
बहुरि गोदतिय सूनुनदेखा । लागी करन विलापविशेषा ॥
सुनि तियरुदनसकल नरनारी । शोचहिं व्याकुल आरतभारी ॥
नारद आयगये समुझाई । धरहु धीर मिलिहै सुत आई ॥
शम्बर दियो उदधि सुत डारी । बहुरिगयो गृह जिय सुखभारी ॥
सो सुत एक मीन धरिखावा । ऐसहि एक बहुरि तेइ पावा ॥

सोरठा—अवसर एक कहार, गयोजालले सिंधुमहँ ।
कीन्ह अहेर अपार, सो झखभारी हर्षि मन ॥

धरि काँवर झखचलेउ कहारा । गयउतुरत ले शम्बरद्वारा ॥
शम्बर हर्षि निकेत पठाई । मत्सादीन असुरको जाई ॥
सो झषभवनविदारण कीना । सम्भव तासु उदर इकमीना ॥
हर्षि तासुकर उदर विदारा । सम्भव सुन्दर श्याम कुमारा ॥

सुअन देखिअतिअचरजकीन्हा। शम्बरसौंप रतिहि सो दीन्हा ॥
पालनलगी रती सुखपाई। तिहि अवसर नारद ऋषिआई॥
कह सुनि पाल सनेह समेतू। तव पिय सम्भव जलचरकेतू ॥

दोहा—हतहि शम्बरासुर यहै, शिशुपन यहाँ बिताय।
पुनि द्वारिका सिधावही, कहिगे असऋषिराय ॥

सुनिमुनिगिरा सुरति अनुरागी। पतिचितचाहसुपालनलागी ॥
कहुँ रतिपतिहि गोद हलरावै। मुखचुम्बनकर कण्ठ लगावै ॥
निरखि वदन कर उरधरिराखै। प्रमुदित हृदय विहँसि रसचाखै॥
अस विरंचि संयोग बनावा। मच्छी माहिं कन्त निजपावा ॥
पाँचवर्षकर भयउ कुमारा। पहिरावत पट भूषण दारा ॥
पुनि मनस्वाद सु पूरण करई। बैठ सेज प्रीतम उरभरई ॥
जब कछु बड़े भये सुखदाई। इकदिन रति असबात सुनाई॥
तुम मनसिज पिय मैं रतिनारी। लखहु आपनी बाम विचारी ॥
धनु विद्या पुनि पियहि पढाई। कहन लगी इकदिन उरलाई ॥
पिय शम्बरहि निपात सकारे। चलिये जहँ पितुमातु तुम्हारे ॥
सुन तियवचन क्रोधकर भारा। गयो शस्त्रगहि शम्बर द्वारा ॥
कुँवर लखत शम्बर अस कहई। यहमम पुत्रप्राण प्रियअहई ॥
कह बालक मैं शत्रु तुम्हारा। करिय समर बलदेखि हमारा ॥
सुनिअसगिराअसुरहँसिकह्यऊ। उभय प्रद्युम्न कि संभव भयऊ ॥
मैं यह सुवन पुत्र सम जाना। भयउ प्याय पय सर्पसमाना ॥

दोहा—कह्यो कोप पुनि कुँवर वर, है प्रद्युम्न मम नाम।
को किहिको पितु मातु जग, करसि न शठ संग्राम॥१॥
सुनि शम्बर आयुध गहे, उठेउ क्रोध मन भाव।
मनहुँ सर्पकी पूँछपर, परेउ आँधरे पांव ॥२॥

सरुष असुर निजसेन सँभारी। गयो तुरत रणभूमि प्रचारी ॥
निश्चर कृष्ण कुँवरको देखी। हने गदा शठ गर्ज विशेखी ॥
पुनि शम्बर बहु शस्त्र पँवारे। कृष्णतनय सब काट निवारे ॥
बहुरि गर्ज पावकशर मारा। वारिबाण सोउ काटि कुमारा ॥
मल्लयुद्धकर अवनि पछारा। भयो मूर्च्छित असुर भुआरा ॥
उठा बहुरि कीन्हेसि बहुमाया। तब लेउडे गगन हरिजाया ॥
नभथल कुँवर काढि तरवारी। काट शीश खल भूतल डारी ॥
पुनि सब हते निशाचर जाई। पुनि रतिनिकट गयो हरषाई ॥

दोहा-तिहिअवसर इक स्वर्गते, सुरन विमान पठाय।
बैठ ताहि रति पति सहित, चलेभवनहरषाय ॥

चले द्वारकहि लागत कैसे। मनहुँ सतन घनदामिनि जैसे ॥
नगरनिकट जब रतिपतिगयऊ। तब विमान महिआवतभयऊ ॥
तजि विमान दोउपरमहुलासा। गये अचानक प्रभुरनवासा ॥
इनहिं देखि सब नारि सयानी। बैठीं बहुरि सकुचि हरि जानी ॥
तब प्रद्युम्न हँसि कहा विचारी। को मम तात कौन महतारी ॥
तब रुक्मिणि निजसखीहँकारी। पूछहु यहि को हरिअनुहारी ॥
सुनि बोली मुसुक्याय सयानी। है यह तोर तनय महारानी ॥
सुनत गिरा मुखफेरि निहारा। छूटेउ क्षीर पयोधरधारा ॥

दोहा-तबहुँ मन संशय रहेउ, गये समय ऋषिराय।
पूर्वकथा वरणी सकल, सुनत उठीं अकुलाय ॥

नैन सजल मुख आव न बानी। सुतहि लगावत उर बिलखानी ॥
पुनि धर धीर वधूटिसमेता। गई मुदित ले तुरत निकेता ॥
करि कुलरीतिब्याहपुनिकीन्हा। विविधदान महिदेवन दीन्हा ॥
सुनत नारिनर अति हरषाने। पुनि हरि राम निकेत पयाने ॥

दीख जाय हरि सुभग कुमारा । प्रमुदित बही विलोचनधारा ॥
देख वधूटिहु अतिसुखपावा । किय पुनि मंगलचार बधावा
सुनि महीप इहिविधिहरिजाया । बालापन परभवन बिताया ॥
रिपुहि मारि निजआनपियारी । बसे द्वारिकामाहिं सुखारी ॥

दोहा-पावन यश रतिरमणकर, कह्यो यथामति गाय ।
पढ़ै सुनै जो प्रेमसे, चार पदारथ पाय ॥ १ ॥
तीनअंशते जानकी, इत लीनो अवतार ।
देववती सो भीष्मजा, सतभामा महि भार ॥ २ ॥
कृष्ण विराजत द्वारिका, करत सुभग सम्वाद ।
यश गावत कर जोरकर, द्विज ज्वालापरसाद ॥ ३ ॥

सोरठा-मन हरिपदकर प्रेम, यही सार संसारमें ।
जप तप संयम नेम, रामभजे सबही किये ॥ ४ ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ग्रन्थउजागर कृष्णायनरुक्मि-
णीमंगलप्रद्युम्नउत्पत्तिरतिसंगविवाहवर्णनोनाम
द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

शुभमस्तु.

इति

श्रीकृष्णायनखण्डसमाप्त।

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

अथ

श्रीविश्रामसागर.

रामायणखण्डः प्रारभ्यते ।

बालकाण्डम् ।

दोहा–विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमरि राम सुखदान ।
रामचरित वर्णनकरहुँ, मतब्रह्माण्ड पुरान ॥ १ ॥
महाबीर संकटहरण, कीजे आय सहाय ।
अपने प्रभुको आपही, दीजे यश कहवाय ॥ २ ॥
हाथ जोर शौनक बहुरि, बोले वचन विशाल ।
अब कहिये रघुनाथके, सुन्दर चरित रसाल ॥ ३ ॥
सुनत सूत कह सुनहु मुनि, एक समय कैलाश ।
पार्वतीके प्रश्नपर, शिवकिय चरित प्रकाश ॥ ४ ॥
एक समय शंकरनिकट, कहत शिवा करजोर ।
राम सच्चिदानन्दघन, तुमहु जपत निशिभोर ॥ ५ ॥
तनुधरिकीने चरित जो, सो मुहिं देउ सुनाय ।
श्रद्धा करिपूँछत तुम्हैं, प्रभुजानि करहु दुराय ॥ ६ ॥

प्रश्न उमाके सहज सुहाये । सुनत शंभुके मन अति भाये ॥
बोले हो प्रसन्न त्रिपुरारी । धन्य धन्य गिरिराजकुमारी ॥
रामचरित पूँछेउ सुखदाई । सुनो कहूँ सब कथा बुझाई ॥
लीलाकरनचहत जब ईशा । तब कछु कारण करहिं अनीशा
जैसे कोई बाण चलावै । प्रथम लक्षपर तागुणगावै ॥

उभय देवकर लखि अभिमाना। कारि अरिशरण भये भयमाना।
तीसरमनुहि दियो वरदाना। तुर्य सियाको युद्ध दिखाना॥
पंचम जग विरागके कारण। षष्ठ मुनीजन हित जगतारन॥
सप्तम धर्महानि लखि भारी। अष्टम जनकप्रीति उरधारी॥
नवम वचन विधिके बहुभाँती। सत्यकरनकहँ गुणगणपाँती॥
दशम दशानन विश्वसतायो। जहँ तहँ भक्तजनन दुखपायो॥
इहिविधि हेतु सहस्र हजारन। प्रगटभये जिहिहित जगतारन॥
तब गिरिजा बोली करजोरी। सुनहु नाथ इक विनती मोरी॥
किहिविधि प्रभु रावण संहारा। किहिविधिभयो रामअवतारा॥
किहिविधिराज्य कीन्ह रघुराई। सकल चरित्र कहो प्रभुगाई॥
कहनलगे तब शिव सुखपाई। सुनहु कथा गिरिजा सुखदाई॥
एककल्प जय विजय कहाये। रावण भयो जगत यशछाये॥
एककल्प सुरशत्रु जलंधर। रावण भयो महाबल दुर्धर॥
तीसर शिवके गण भे रावण। भानुप्रताप चतुर्थ सुहावन॥

दोहा—कल्पकल्पप्रति होत इमि, हरि धारत अवतार।
जिहिविधिजग अवतरयोप्रभु, सुनुसोकथाविचार॥ १॥
प्रभुकर सखा पवित्र इक, कहियत नाम प्रताप।
सत्यकेतु नृप केकपति, जन्मो तिहि घर आप॥ २॥

नाम प्रतापभानु तिहिकेरा। कीन राज रिपुजीत घनेरा॥
गयो अहेरहेतु वनमाहीं। तहां कपटमुनि असुर रहाहीं॥
राजासे सो कीन्ह मिताई। गुरुबन नृपगृह पाक बनाई॥
तिहिमें अशुचिहि मांस मिलायो। विप्रसमूह अशनहित आयो॥
खाउ न अन्न भई नभवानी। शापदीन्हमुनिद्विजअभिमानी॥
कुटुमसहित राक्षस तूं होई। जलदाता न रहै कुल कोई॥

ब्रह्मासुत पुलस्त्य ऋषि जोई। मरुतट करत रहे तप सोई॥
तहँ तृणबिन्दुनृपतिकी कन्या। क्रांतीनाम रूपगुणधन्या॥
सखिनसहितप्रतिदिनसोआवहि।कलबलमुनिकेनिकट मचावहि॥
ध्यानभंग जानो ऋषिराई। तब बोले अस वचन रिसाई॥
अबसे जो कन्या यहँ आई। निश्चय गर्भवती होजाई॥

दोहा-सो कन्या मानीनहीं, गई आश्रमहिं धाय।
रह्यो ताहि आधान जब, जानो पिता बुलाय॥१॥
सो कन्या तिन मुनीको, दी करि विनय विशाल।
ताके विश्वश्रवा भो, जिहि तप कियो कराल॥२॥

भरद्वाजकी सुता सयानी। नाम सुयशा सकलगुणखानी॥
विश्वश्रवहि सुदीन विवाही। नेमप्रेमसह सो निर्वाही॥
ताके सुत कुबेर गुणधामा। किये यक्षपति लखिगुणग्रामा॥
दिनप्रति मातुपिताढिग आई। करहिं कुबेर सदा सेवकाई॥
इकदिन मयदानव तहँ आई। मायादेवि सुवक्षा लाई॥
ऋषिको देनचही सो बाला। बार बारकरि विनय विशाला॥
पुनि तबतिनकोकियस्वीकारा। साँझसमय तिय रतिहि हँकारा॥
यद्यपि मुनिवर दोष बखाना। तदपि तिया लीन्हों रतिदाना॥
भई गर्भ संयुत सो नारी। प्रसवसमय जब भयोपियारी॥

दोहा-नभते उल्कापात ह्वै, गर्जें मेघअपार।
रविशशिको उपरागभो, दिवसभयो आँधियार॥१॥
भूमिकम्पसहिदेव भय, सुरगण वदन मलीन।
दुष्ट मुदित नभकेतुयुत, भई अग्निद्युतिहीन॥२॥

देवीने इमि दो सुतजाये। रावण कुम्भकर्ण जो गाये॥
जहाँ केकसी मात बताई। सो जय विजय कथा में गाई॥

भये सुवक्षाके सुत जोई । त्रिजटा और विभीषण सोई ॥
मायासुत खरदूषण वीरा । शूर्पणखा त्रिशिरा रणधीरा ॥
इहिविधि भानुप्रताप नृपाला । भयो दशानन आय कराला ॥
भये सयाने तब मुदपागे । काननकरन उपद्रव लागे ॥
खग मृग जीव बचननहिं पाहीं । तपतमुनिनकहँ जाय सताहीं ॥
मारन वशीकरन अरु मोहन । उच्चाटन अरु स्तंभाकर्षन ॥
पढैं मदा साधहिं छलकारी । करहिंअनीतिसकलभयकारी ॥
सुरगण भयते असुर अनेका । जो पाताल रहे सविवेका ॥
तेऊ लखि निजवंश सुहायो । आवागमन भूमिपर लायो ॥
इकदिन दनुज पूज्य कहि जाई । तप तुम करहु जु चहो भलाई ॥

दोहा—बिनु तपसुख जगस्वप्नसम, सुनि अस वचनरसाल ।
किय तप त्रयी सूर्यपर, दिव्य सहस दश साल ॥

लखि तप उग्र बिधाता आये । माँगहु वर यह वचन सुनाये ॥
रावण कह हम मरें न मारे । नर वानर तजि जगवशकारे ॥
एवमस्तु कहि पुनि विधि बोले । वरहु विभीषण सुनि हगखोले ॥
तिन करजोर भक्ति हरि माँगी । दीन्ह विधातालखि अनुरागी ॥
कुम्भकर्ण ढिगपुनिअजआये । ताहि देखिअति विस्मयपाये ॥
जो यह खल नितभोजनकरहीं । तौ सब जीव उदरमें धरहीं ॥
शारद प्रेरि बुद्धि बौराई । माँगी नींद मास षट्काई ॥
जब बीतें मोको षट्मासा । तबइकादिन जागहुँ सुखरासा ॥
दे वर खरदूषण ढिग जाई । माँगहु वर इमि गिरा सुनाई ॥
तिन अस वरी वीरता भारी । मरैं अन्त हरिसन करिरारी ॥
त्रिजटा हरिकी भक्ति सुहाई । माँगी दीन्ह सुरन मनभाई ॥
पुनि लंकिनि जब शीश नवायो । ताहि विधाता वचनसुनायो ॥

जब वानर ताडै तुहिं आई । तासु मारते जब अकुलाई ॥
तब जानियनिशिचरकर नाशा । मानहु मोर वचन विश्वासा ॥
दशमुख वरले कविहि बतावा । सुनि वरदान शोच मन लावा॥
नर वानर त्यागेकिहिकारन । दशमुख कहि तृण सकहिनदारन
अस कहि राज्यकरन सो लागा । भयो विभवले मनहु सभागा ॥
हेमागर्भजात मयकन्या । मन्दोदरी सकलगुणधन्या ॥
सो रावणको तिन दी आई । नारि पाय सुख भो अधिकाई॥
पुनि तिन कुंभकर्णकर व्याहा । मानन्दनिसे कियो उछाहा ॥
वृकदंताहिकी रही कुमारी । भई सो कुंभकर्णकी नारी ॥

दोहा–केहरिमुखकी कन्यका, नगदन्ती सुकुमारि ।
भई विभीषणकी सुभग, सुखदायिनि वरनार॥ १ ॥
रदसुखकन्या तीन भईं, सो त्रिशिरा खरनारि ॥
दूपणको व्याही गईं, कीने मंगल चारि ॥ २ ॥
पांचो भाई नारि सह, भवन रहैं सुखपाय ।
इकादिन दशमुखपितुनिकट,गयोपरम मुदलाय ॥ ३ ॥

तिहिक्षण तहां कुबेर पधारे । लखि पितु कीन्हें आदर भारे ॥
कछुक काल रहि आयसु पाई । गये कुबेर भवन सुखछाई ॥
तिनको लखि आदर अधिकाई । रावणके मनमें रिस छाई ॥
खलके लक्षण यही बताहीं । परसम्पतिलखि जो जरिजाहीं
ऋषिढिगते मन्दिरमें आई । मातासे सब बात सुनाई ॥
तब तिहि कहा धनदसो आहीं । कंचनलंक रहैं मुदपाहीं ॥
चहूं ओर जिहि सागर राजै । अमरपुरी समता नहिं साजै ॥
सो लंका तव नानाकेरी । वसे धनद तव पितहि खदेरी ॥
सुनि दशमुख तब दलले धावा । लंकागढ़ खाली करवावा ॥

पुनि पुष्पक विमान भ्राताकर। छीनलीन बलसे दशकंधर॥
लंकदेखि अतिशय मुद पायो। राजधानिकर असुर बसायो॥
यथायोग्य असुरनको भारे। दीन्हें भवन बांटि तब सारे॥
इत कुबेर अलका निर्माई। बसे तहां सुरमुनिसुखदाई॥
पुनि कुबेर सुरपतिढिग जाई। सकलव्यवस्था जाय सुनाई॥

दोहा—तब सुरेश सबदेवयुत, लंकहि कीन्ह पयान।
सुनि दशमुख सम्वाद सब, साजे असुर महान॥

लेनिकसा अपनी कटकाई। लगी इन्द्रसे होन लराई॥
अस्त्र शस्त्र छूटे बहु भाँती। भई युद्धमें दिनकी राती॥
तब वासव किय वज्रप्रहारा। गिराअवनि मूर्च्छित हुइभारा॥
कुम्भकर्ण तब ठानी रारी। भये देव तब व्याकुल भारी॥
जब यम सैन्य विकल निजजानी। हृदय दंड मारयो तबतानी॥
कुम्भकर्ण गहि दंड कराला। निजमुखमें धरिगयोविशाला॥
तासे उदरमाहिं भा दाहा। तब सो उगलदियोखलनाहा॥
ताहि ग्रहणकरि यमपुनि मारा। तदपिनमरयोअसुरबलभारा॥
तब सुरपति बहु अस्त्र प्रहारे। टूटगये पुनि अँगसेसारे॥
इत रावणकी मूर्च्छा जागी। देवन देख महारिस पागी॥

दोहा—करगहि धनुष प्रहारकर, व्याकुल किय सुरमारि।
तब दिग्गज सन्मुखभये, मची घोर तहँ रारि॥

असुर तोर तिनके रदडारे। तिनहूरद खल हृदय प्रहारे॥
पर्वतसम लखि हियो कठोरा। दिग्गज भाज गये चहुँ ओरा॥
इन्द्र कुबेर विधाता पासा। गये भयो मन अधिकहिरासा॥
कहाविधि रावण तप अधिकाई। तिहिकेबलसो जीति न जाई॥
तिहिते समर तजो तुमभाई। सुमिरहु दीनबन्धु सुखदाई॥

वे सब दुखके मेटनहारे। मानो तुम सत वचन हमारे॥
सुधावचन सुनत सुर सारे। त्यागि समर गिरिखोहपधारे॥
उत दशकंध शत्रु नहिं देखा। कीन्हअमरपुरशोध विशेखा॥
तहँते देवनको धरिलावा। निजगृहके बहु कृत्य करावा॥

दोहा-इन्द्र अमरपुर जाय पुनि, करनलगे निजकाज।
जबधावै सो असुर पुनि, बसैं खोह गिरि भाज॥१॥
एकदिवस दशमुख गयो, श्वेतद्वीपके माँहि।
युवतिनते कहिसुर कहां, दीजै हमैं बताहि॥२॥

तिन्हैं जीति तुमको लेजाऊं। लंकापति रावण मम नाऊं॥
सुनत वचन इक वृद्ध रिसानी। रावण शिखा गही निजपानी॥
बार २ धरि धरि झकझोरा। डारेसि सिंधु मध्यकरि जोरा॥
पहुँचो जाय सुतलके माहीं। जहँ बलिराज रहैं सुखपाहीं॥
लखिदशमुख बलिआदरकीन्हा। कुशलबूझिशुभआसनदीन्हा॥
कह रावण सब कुशल हमारी। सुर न सकत कर सन्मुख रारी॥
हमसँग चलो राज्य महि कीजै। निज २ शत्रुनको गहिलीजै॥
कह बलि कनककशिपुके भूषण। पहिले पहरलेहु गतदूषण॥
लगो उठावन उठे न सोई। यहि पौरुषते किमि जय होई॥
जिन यह भूषण अंगन धारे। ते गे एक पलकमें मारे॥
ताते गमन करहु घरभाई। सुनत चला मनमें लजियाई॥
वामन जानलियो अभिमाना। दियो बालकन बल भगवाना॥
पकरिलीन तिन ताहि नचावा। मार बांध पुर भवन फिरावा॥
दीन देखि प्रभु दीन्ह छुड़ाई। पुनि पम्पापुर आयो धाई॥

दोहा-बाली लखि समुझाव बहु, जाहु भवन दशशीश।
सो किमि मानै मूढ खल, लियो बगल तब खीश॥१॥

संध्याकरि घर आय पुनि, बाँध दियो दशभाल ।
तारा लखि दिय छोर तब, भाजो लाजविशाल ॥२॥
पुनि रेवातट गऱ्यों जाई । सहसबाहु जहँ केलि मचाई ॥
तहँ खल जलस्तंभनकीन्हा । लखितिहिसहसबाहुधरिलीन्हा ॥
दशोंमाथ दश दीप धराये । वाग्बधूटिन नृत्य कराये ॥
रावण तहां बहुत दुख पावा । तबपुलस्त्यमुनिजायछुड़ावा ॥
तब कुलगुरुके गवन्यो पासा । लज्जित निजवृत्तान्त प्रकाशा ॥
कह कवि तुम शंकर आराधो । निजशिर देइ शंभुको साधो ॥
शिरमख करहु शंभुकृतप्रीती । हुइहैं सो प्रसन्न इहिरीती ॥
तिनसे मनवांछित वर पाई । सकल विश्व निजवश कर जाई ॥
नर वानर तुम त्यागे दोई । इनहीते तुमको भय होई ॥
सिन्धुसमीप जाय तब रावन । लाग्यो तपन शंभुमनभावन ॥
बीससहस इमि वर्ष बिताये । मालयज्ञ तब चितमें लाये ॥

दोहा-बारबार शितशस्त्रसे, निजशिर लेइ उतारि ।
हवन करै शिवप्रीतियुत, पूजनलग्यो पुरारि ॥ १ ॥
शतसम्बवसरबीतहीं, पुनि दूजो शिर देइ ।
जब सहस्रवत्सरभये, दशमो शिर तब लेइ ॥ २ ॥

काटनलग्यो खड्गते जबहीं । शंभु आय पकरो कर तबहीं ॥
जो इच्छा हो सो वर लीजै । कह दशशीश अमरमोहिंकीजै ॥
कह शिव विधि दीन्हों वर जोई । ताको टारि सकै नहिं कोई ॥
तदपि वचन मम सुनु असुरारी । ह्वैहै बल तब तनु में भारी ॥
शीश समर्पण कीन्हें मोहीं । इकके कोटि दिये मैं तोहीं ॥
शिवसे जब इहिविधि वर पावा । तब प्रसन्न ह्वै निजघर आवा ॥

छंद-तब भवन आय सजाय निजदल इन्द्रपर पुनि चढिगयो ।
गये भाग देव न मिले विष्णुः महासुख तिहि मन भयो ॥

पुनि सहसभुज औ बालिसे करि मित्रता सब जग जयो ।
गन्धर्व किन्नर यक्ष जयकर यश गवायो नित नयो ॥
दोहा-जहँ तहँ सुन्दरि नारि जो, सुनी दशानन कान ।
जीत यक्ष सुर नर तिया, लेआयो निजथान ॥
इति श्रीविश्रामसागर सबमलअगर ग्रंथउजागर रावण
उत्पत्ति तथा युद्धवर्णनो नाम प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

दोहा-विधि हरि हर गणपतिगिरा, सुमरि रामसुखदान ।
बृहद्रामायणमत कछुक, कोकिल कहौं बखान ॥
इहिविधि सो सुरदुर्लभ भोगा । लागा करन सकलसंयोगा ॥
मद्यमांसभोजन नित करही । देव विप्र हरिजन दुख धरही ॥
मन्दोदरि बहुविधि समुझावे । पर ताके कछु मनहिं न आवे ॥
एक दिवस नारद तहँ आये । रावणको उपदेश सुनाये ॥
पुनि मन्दोदरिके ढिग आये । चरणधोय आसन बैठाये ॥
बोली पतिके कर्तव जोई । इहिते कछु कल्याण न होई ॥
हुइहै क्या सो कहहु दयाला । तुम त्रिकालदर्शी गुणमाला ॥
कह मुनि तपबल अहै अपारा । बहुतकाल करिहै सुखभारा ॥
पुनि मुनि सुरहितप्रभुसुखराशी । सूर्यवंश जन्महिं अविनाशी ॥
पितुनिदेशसो काननआवहिं । तिनकी तियतब पतिहरलावहिं
दोहा-जगदम्बा जब आइहै, भस्मकरहि कपिलंक ।
सेतुबाँधिप्रभु आवहीं, निशिचरवधहिं निशंक ॥ १ ॥
होंय सुखी सुर विप्र मुनि, करहिं विभीषणराज ।
असकहि गमने देवऋषि, कुंभकर्णके काज ॥ २ ॥
कुंभकर्ण जागा तिहि अवसर । मुनिहि देखिलागा चरणनवर ॥
नारद मुनि तिहि दीन्हों ज्ञाना । हरि अवतरिहैं कह्यो बखाना ॥

कह मुनि ब्रह्मलोककहँ गयऊ । कुंभकर्ण पुनि सोवतभयऊ ॥
मयतनया मनमें धरिराखी । जो कछु नारद मुनिने भाखी ॥
रावणके जन्मे सुत नाना । विद्या बल अरुबुद्धिनिधाना ॥
मेघनाद सुत ज्येष्ठ कहावा । जिहि पटतर कोइ वीर न पावा ॥
वीसवर्षकी वय जब आई । देवीके तपमें मनलाई ॥
वर्षसहस्र कीन्हों तप भारी । तब देवी अस गिरा उचारी ॥
मनभावत माँगो वरदाना । मेघनाद तब वचन बखाना ॥
साजसहित इक शुभ विमाना । दीजै मुहिं कर कृपा महाना ॥
जिहिपर चढ मैं करहुँ लराई । तब मुहिं कोउ न जीतनपाई ॥

दोहा—तब देवी स्यन्दन दियो, कह्यो कि धरो छिपाय ।
संकटपडे कठिन जब, तब यहिपर चढ़ धाय ॥ १ ॥
युगलयाममें जीतिहो, योधा वीर अपार ।
जो त्यागै द्वादश वरष, नींद अन्न अरु नार ॥ २ ॥

तासे तुम मत करियो रारी । सो तोको रण डारहि मारी ॥
तब शिरनाय भवन निज आवा । रथछिपायधरि वनहिं सिधावा ॥
तपकर शंकरसे वर पावा । समरमाहिंभय निकट न आवा ॥
एवमस्तु शिव कह्यो उचारी । तब आवा निजभवनमँझारी ॥
एकदिना पुनि ले कटकाई । सुरपतिके वन विहरो जाई ॥
तहाँ इन्द्र दलले चढि आवा । मेघनादसे समर मचावा ॥
मेघनाद शर विशिख प्रहारे । वासवतनु जरजर करिडारे ॥
वासवहू निजशस्त्र चलाये । मेघनादके भये न घाये ॥
पुनि करि झपट परचो तिहिऊपर । मेघनाद गहि तुंड महीपर ॥
लेआवा गढलंकमझारी । पिता निरखि मानो सुख भारी ॥

दोहा—उत्सवकरवायो अधिक, किये रत्न बहुदान ।
ब्रह्मा सुनि सम्वाद यह, लंकहि कीन्ह पयान ॥

हंसारूढ विधाता आये । रावण लखि निजमन सुखपाये
पुत्रसहित उठि माथ नवावा । आसन दे पुनि वचन सुनावा ॥
बड़ी कृपा कीन्हीं प्रभु आजू । कहो कौन करनो है काजू ॥
कह विधि धन्य पुत्र बलधामा । अबते इन्द्रजीत भा नामा ॥
त्यागे इन्द्र अमरपुरजाई । अब तुमते नहिं समर कराई ॥
वचन सुनत बोल्यो लंकेशा । टारि कोसके तुम्हार निदेशा ॥
तुरत इन्द्रकी कीन बिदाई । तब विधिशक्ति दीन करदाई ॥
निष्फल शक्ति होत कहुँ नाहीं । यह निश्चय जानहु मनमाहीं ॥
असकहिविधिनिजलोकसिधाये। मेघनाद अतिशय मुद पाये ॥
नागलोक पहुँच्यो घननादा । वासुकिनगर निरखि किय नादा
वासुकि तब अति कीन लराई । मेघनाद अहि दिये भगाई ॥
चौदह दिन अति समरमचायो । तब वासुकी हिये डर लायो ॥
मेघनाद पकर्‌यो तिहि जाई । करिके बल लंका लेआई ॥
निजपितुकोअहिपति दिखराई । पुनि धरबांधसि घरनिजलाई॥
जब वासुकी महादुख पायो । मेघनादसे वचन सुनायो ॥
जो इच्छा सो हमसे लीजे । जीवत मोहिं छांडि अब दीजे ॥

दोहा-मेघनाद कहि कन्यका, अपनी दे घरजाहु ।
उर्गराज स्वीकारकिय, हर्षभयो पुनि ताहु ॥

मेघनादको घरलेजाई । व्याहदीन निजसुता सुहाई ॥
अतिसुन्दर नारी जब पाई । तब लंकहि आवा हर्षाई ॥
मातपितापद नायो शीशा । पुनि मंदिर गा सुतदशशीशा ॥
शोचविहाय करन सुख लागा । अपर सुनो अब कथाविभागा॥
अक्षकुमार महातप कीना । सहसवर्ष हर दर्शन दीना ॥
बोले शिव मांगो वरदाना । कह्यो अक्ष अस दीजे बाना ॥

जिहिप्रहार जीतहुँ अरिभारी । दे शर तब अस कह्यो पुरारी ॥
यह सायक अमोघ अतिभारी । इक कपिनजिजितिहोअरिरारी
वर लै सो अपने घर आयो । तिहिछिन मन्दोदरिसुतजायो ॥
वीसव्यालसह जन्म्यो बालक । कवि कहिरावनयोगनबालक ॥

दोहा—तब इकदूतबुलाय कहि, गाडि देहु कहुँ जाय ।
दूत दीन नैऋत्य दिय, सो भूखादत पाय ॥ १ ॥
रघुपतिलीलाकरनहित, मर्यो नहीं सो बाल ।
मास एक माटी भखी, गो जहँ उदधि विशाल ॥ २ ॥

राहु जननि तिहि लियो उठाई । भवनलाय निज पालो ताई ॥
इकदिन शुक्र तहाँ चलिआये । कह्यो कहाँ तुम बालक पाये ॥
तिहि पुनि सब वृत्तान्त सुनावा । यह रावण सुत कवि जियलावा
आदिहिते सब चरित सुनाये । अहिरावण धर नाम सिधाये ॥
निजउत्पत्ती सुनत कुमारा । कूदपर्यो तब उदधिमँझारा ॥
अहिपुरगयो वितलके माहीं । सत्तरयोजन नगर बसाहीं ॥
तहँ कर नृप दर्वीकर जोई । वासुकिकर सग सारोसोई ॥
निरखि पुरी सो विचरनलागा । कथा होतरहि सुनि मुदपागा ॥
तपमहिमा तिहिमें अतिपाई । पहुँचो तपहित कानन धाई ॥
बनमें नदीनिकट इक सुन्दर । श्रीकामददेवीको मन्दिर ॥
तहां हर्षयुत तप तिन कीन्हा । चौदह सहसवर्ष मनदीन्हा ॥
तपबल देवी लख्यो अपारा । वरब्रूहि अस वचन उचारा ॥
तब करजोरि दनुजपति कहई । जीतहुँ तिहि जो मोसँग लरई ॥
अमरनते सुख होय विशेखा । किन्नर दैत्य मुनीन्द्र अलेखा ॥
जीतहुँ इन सबको मैदाना । निशिचरपतिहों अमर सुजाना

दोहा—जिहिविधि मातापितानें, किय अपमान हमार ।
औरपड़े दशवदन सोइ, मुहिं पावैं इकबार ॥

देवी कहि सुख करिहौ भारी । त्रेतांशजसमय विधुधारी ॥
हाथजोर याचै तुहिं पाहीं । कपिनजि मारसकैकोउनाहीं ॥
तिहिप्रभुते जो वैर न करिहो । तौतुमअचलनृपतिमुदभरिहो ॥
सुन अस वचन हर्ष कहँ पाई । गहनलाग तहँ राक्षसराई ॥
वर्ष पांचशत दिये विताई । तब अनरीत करन मनलाई ॥
वषधार बहुविधि पुरजाई । अजहय खरन जाय सो खाई ॥
दर्वीकर सुनि सेन बटोरी । तासं युद्ध कीन अति घोरी ॥
अहिरावण कीन्ही अति रारी । दिय विचलायनागतिनझारी ॥
दर्विक तब अनन्त पहँ आये । दुखयुत सब वृत्तान्त सुनाये ॥
शेष कह्यो रावण सुत सोई । तिहिते समर न जीतै कोई ॥
कन्या देह मिताई कीजै । अतिबलनिधिहिगेहरखलीजै ॥

दोहा-तब दर्बिक बुलवाय तिहि, कन्या दई विवाह ।
कुन्दनि नारी पाय सो, मनमें कीन्ह उछाह ॥

तब तिन कानन नगर वसावा । कामददेवी निकट सुहावा ॥
नवयोजनकर नगर सुहावन । बहुतअसुरतहँ वसेअपावन ॥
यह सब आदिरामायण माहीं । लिखि राखो शंकाकछुनाहीं ॥
जो रिपुकर कोइ कहै प्रभावा । सोतिहि घातककरकहवावा ॥
तिहिते राम लषण हनुमाना । नहिं इनकर परभावबखाना ॥
इहिविधि रावण सुत बहुतेरे । भये देव दुखदान घनेरे ॥
सबके चरित पृथक जो गावों । बाढै कथा पार नहिं पावों ॥
औरहु सुत अतिशय भटभारी । को वरणै अति समरजुझारी ॥
खरमुख कुकमुख श्वामुख पापी । कुलिशदन्त शूकरसन्तापी ॥
जम्बुकमाल अकम्पन वीरा । कुसुत केतु वज्रायुध धीरा ॥
कुम्भ निकुम्भ धूम्र बलवाना । कूट प्रहस्त बली जगजाना ॥

खरदूषण विराध अतिकाया । वक्र कबन्धमारीच समाया ॥
कालनेमि सुबाहु रणधीरा । ऊर्ध्वकेश मंजारा वीरा ॥
लवणासुर भंकेश बलभारे । एक एक जगजीतनहारे ॥
इन सबके संयुत दशभाला । करैराज्य गढलंक विशाला ॥

दोहा-ऐश्वर्यहु दशकंधको, को कविवरणै पार ।
जाके पदनिर्वाणहित, रामलीन अवतार ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबगतआगर मेघनादअहिरावणादि-
जयवर्णनोनाम द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

दोहा-विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमरि राम सुखदान ।
बृहद्रामायणकेरमत, कहौं चरित्र बखान ॥

एकबार ले कटक अपारा । विश्वविजय कारण पगुधारा ॥
तीनो पुर फिर आवा सोई । सन्मुखभयो वीर नहिं कोई ॥
तब रावण मनकीन्ह विचारा । जगमें मोसम नहीं जुझारा ॥
तब सब योधा निकट बुलाये । आदरसे निजढिग बैठाये ॥
सबदेशन रखवारी हेता । बांटन लाग्योपृथक निकेता ॥
लाखन असुर किये खरसंगा । पठयो तिहि कश्मीरअभंगा ॥
सोरठदेश खरानन दयऊ । कोटिन असुर संग तिहि कियऊ ॥
करनाटक सुकेशहि दीन्हा । मालवपति मंजारा कीन्हा ॥
कोटिन निशिचर वक्रमुख संगा । मारवाडको चले अभंगा ॥
सेपानन कलिंगको गयऊ । पैंतिस लक्ष असुर सँग लियऊ ॥

दोहा-चारहकोटि असुरदल, तास असुरमहान ।
बंगदेशको चलत भो, सुरद्रुमनिको म्लान ॥

अतिकाय है सुभट अपारा । अवधपुरीको देश विचारा ॥
तरसद ऊर्ध्वकेश दोउ वीरा । मगधदेश पहुँचे रणधीरा ॥

श्वानानन गुजरात सिधावा। अरबदेश सूरज नख आवा ॥
रूस रूम शर्मन पुसदेशा। इनमें भेजे वीर विशेशा ॥
निशिचर कोटि सुबाहुमरीचा। संग ताड़का नारी नीचा ॥
गाधिसुवनके आश्रमनेरे। रहे आय कृतपाप घनेरे ॥
लवणासुरदल लक्ष छियासी। बस्यो आय मधुबन अघराशी॥
चौदह सहस सुभट बलखाना। दण्डकवनको कीन पयाना ॥

दोहा—तिनमें खरदूषण तथा, त्रिशिरा अतिरणधीर।
सहकबन्ध दण्डकरहे, जो वन अतिगंभीर ॥

शत २ योजन वनकेमाहीं। लिये कटक सबअसुर रहाहीं ॥
इहिविधि बाँटदिये सबदेशा। असुर रहैं अघ करैं विशेषा ॥
विविधवेषधरि हिंसा करहीं। सुरमुनिनागनते नहिं डरहीं ॥
कौनउ भेद कतहुँ सुनि पावैं। रावणको सब जाय बतावैं ॥
भुजबल विश्वजीत सबलीन्हा। काहुइ रहन स्वतंत्र न दीन्हा ॥
मण्डलीकह्वै पालत राजू। वशीभूत सब देव समाजू ॥
जिहिको जब जो आयसु होई। माथे मान करत सो सोई ॥
ब्रह्मा वेदपाठ नित करहीं। शंभु दरशदें जब मन करहीं ॥
यम प्रतिहार अग्नि कर पाका। इन्द्र छत्र शिरधरत अवाका ॥

दोहा—पवन बुहारत नगर सब, पग धोवत जहँ काल।
वरुण कुबेर सुनाग नर, सेवैं ताहि उताल ॥

एकबार उत्तरदिशि जाई। लीन्हों गिरि कैलास उठाई ॥
मानहु निजबल तोल विचारी। आया निजघर पुनि विबुधारी॥
एकदिवस सब सुभट बुलाये। मेघनादआदिक सब आये ॥
कही सुनो सुर शत्रु हमारे। वेतो सकल रहे जिय हारे ॥
विष्णु विरंचि महेश बड़ेई। सन्मुख होय सकत नहिं तेई ॥

तदपि भक्तवत्सल भगवाना। धारतहैं तनु कहत पुराना॥
जाहि जपत सब सुरमुनि सन्ता। सो बचिरहे एक भगवन्ता॥
सो कहुँ दृष्टि न आवत भाई। तिहि जीतनहित करहु उपाई॥
श्रुति कह साधुसन्तवश अहहीं। जो वे अपैं सो प्रभु गहहीं॥
तिहिते साधुन जाय सतावो। तिनके जप तप विघ्न करावो॥
जब भगवन्त निबल ह्वैजाई। मिलिहै सो पुनि आपहि आई॥
तब छांडिहौं कि मरिहौं भाई। देखिभाल हरिबल चतुराई॥
सुनि धाये जहँ तहां सुरारी। लागे करन उपद्रव भारी॥

दोहा—योग यज्ञ जप तप कतहुँ, करनदेहिं नहिं दुष्ट।
मुनिन आश्रमन अग्निदे, द्विज गो भक्षहिं पुष्ट॥

श्रुति पुराण कहुं होन न पावैं। हरिजन हरिपुर अग्नि लगावैं॥
जे जन करहिं पुण्य अरु दाना। तिन्हैं पकरिदें त्रास महाना॥
जिहि विधि होय धर्म निर्मूला। सो सब करैं देहिं बहुशूला॥
जब पापी बाढे अधिकाई। होय सभीत धरा अकुलाई॥
गोतनुधारि गई विधिलोका। कीन्हों प्रगट तहाँ निजशोका॥
कह ब्रह्मा चलिये प्रभुपाहीं। ते सब संकट दूरसराहीं॥
शंभु विरंचि देवसमुदाई। क्षीरसिंधुतट विनय सुनाई॥

छन्द—जय जय जगपावन सुखउपजावन करुणासिन्धु मुरारी॥
जय जयति अनन्ता लक्ष्मीकन्ता मायारहित खरारी॥
जय जयति अगोचर इन्द्रसहोदर महिमा अपरंपारी।
जय अलख अनूपा जय सुरभूपा हरिये विपति हमारी॥
जय भूमिउधारन दुष्टसँहारन जय सन्तन हितकारी।
जय सृष्टिउपावन जय करपालन भूतलभारउतारी॥
जय सुरमुनित्राता जनसुखदाता रावण जगदुखकारी।
तिहिते रखलीजै कृपाकरीजै निगम नेति उच्चारी॥

दोहा-इमि देवनकी विनय सुनि, गगनगिरा तिहिकाल।
कहतभई मत भय करहु, धारिहौं वपुष विशाल॥ १॥
कौशल्या दशरथ भवन, अंशनयुत अवतार।
धारिहौं निर्भय होहु तुम, करहुँ असुरसंहार ॥ २॥

नभवाणी सुनि सुर हर्षाने। तब ब्रह्मा इमि वचन बखाने॥
अब तुम शाखामृगवपुधारी। रहो जाय भूविपिनमँझारी॥
सब तहँ हरिकी करहु सहाई। सुनत देह कपि लीन्ह बनाई॥
जो सबके अवतार सुनावौं। बाढै ग्रंथ पार नहिं पावौं॥
महि गिरि वन सबही रह पूरी। जहँ तहँ निज अनीक रचिरूरी॥
यह सब कछु रावण सुनिपावा। जन्मत वधकरिहौं मन आवा॥
रविवंशी वश सकल हमारे। ते करिसकिहैं कहा विचारे॥
तदपि सजगहित अपनो थाना। तहँ बैठायो सह अभिमाना॥
उत्पति मरण आदि कछु होई। करसमेत पहुँचावै सोई॥
जब दिलीपराजा भे आई। तिन सब दीन्हें असुर उठाई॥

दोहा-बल देखन द्विजरूप धरि, तब रावण गो धाय।
पहुँच्यो नृपरनिवासमें, रानिनलखि शिरनाय॥

तिनते कही भूप कहँ रहहीं। कह रानी सरयूतट अहहीं॥
गयो तुरत सरयूतट रावन। तहँ राजा तंदुलगहितिहि छिन॥
फेंकादिये पूरवदिशि ओरी। पूछत कहतभये नय धोरी॥
वनमें सिंह धेनु इक घेरी। शर ह्वै तन्दुल लगे घनेरी॥
सुनि रावण अति अचरजआवा। देखा जाय मृतक हरि पावा॥
समुझि प्रताप गयो गृहधाई। रानिन नृपको सकल सुनाई॥
तब नृप अंजलिमें जललीन्हा। पवनमंत्रपढि पुनि तजिदीन्हा॥
तिहिते भये लक्ष दश बाना। कह नृप लंकहि करो पयाना॥

ताहि थोर लागकेमाहीं। आवहु शीघ्र मिलहो नाहीं॥
तब वे शूर लंकमें जाई। दशवदन सों ननासकुजाई॥
सप्ततन्या करजोरे आई। नृपकुलदीपको दीन दुहाई॥
यहां नृपति कोऊ है नाहीं। अबलनपै बल दृढ नवनाहीं॥
फिरि आवे मुनिवर असथाना। चक्रकुनत उपज्यो सयाना॥

दोहा—मुनि सहस्र चतुर्वर्षपर, रघुराजासे आय।
तिनहूँ मारुतबाणसे, लंकहि दीन उड़ाय॥ १॥
पुनि तिहि कुलमें अज भये, रावण ठानी रारि।
अनिलअस्त्रते कटकयुत, लंकहि दीन्हीं डारि॥ २॥
लखि प्रताप भो मौन पुनि, दशरथ जन्मे आय।
दशसहस्रपंक्तिसहश्र, दशों दिशा रथ जाय॥ ३॥

दशशिररिपु प्रगटै सुत जाको। दशरथ कहत सकलजन ताको॥
सुनि रावण निजदूत पठायो। करदीजै तिन आय सुनायो॥
तब नृप तीक्षण बाण प्रहारे। जडे कपाट लंकके सारे॥
कह्यो सु असुर किंवार उघारी। इस कर अवशि देहिं निरधारी॥
रावण तब कीन्हों बल भारी। पर नहिं सक्यो कपाट उघारी॥
मन्दोदरी बहु विनती लाई। लौटगये पुनि शरसमुदाई॥
तब रावण काननमें जाई। ब्रह्माको तप किय अधिकाई॥
बरदहि जब ब्रह्म बखाना। तब रावण इमि कहत सुजाना॥

दोहा—दशरथनृपके वीर्यते, पुत्र प्रगट नहीं होय।
हुलसानो तथा सुनत, पुनि वरदीनो सोय॥

तब दशमुख कोशलमें जाई। तहँते कौशल्या हर लाई॥
राघवमच्छ निवासी सागर। मंजूषामहँ सौंप ताहिकर॥
चतुरानन धरि ब्राह्मणरूपा। लेआये पुनि सुता अनूपा॥

वनमें रख विधिलोक सिधाये। निजइच्छा सुमन्त तहँ आये॥
पट खोला बोले असवानी। किनकी हो तुम सुतासयानी॥
तब कौशल्या बोली वानी। कौशल नृपकी सुता बखानी॥
नहिं जानत कैसे वनआई। सुनि सुमन्त लेगये लिवाई॥
कौशलपुर दीन्हीं पहुँचाई। रोवत थे कुटुम्ब अकुलाई॥
असमबही वृत्तान्त सुनावा। सुनि नृपहिये हर्ष अतिपावा॥
बोले नृप तुम कोहो भाई। अवध नृपति सारथि नरराई॥
जाको यश प्रताप अति भारी। दशरथ विदितलोकदशचारी॥

दोहा-सुनि राजा कहि तब नृपति, कन्या देहुँ विवाह।
टीका दीनो तुरतही, मंगल भयो उछाह॥ १॥
विदाहोय नृप घरचले, खर रोक्यो मगआय।
मारि विशिख नृपअसुर सब, जहँतहँदियेभगाय॥ २॥

विरथासन सुत सुता सयानी। व्याही सो सुमन्तको आनी॥
दियो गार्ग्यको द्रव्य अपारा। भये मुदितपुनिअधिकसुवारा॥
विदाहोय निज मंदिर आये। बाजे घर घर अवध बधाये॥
पुनि कैकयी सुमित्रा रानी। पाछे व्याहि नृपति घरआनी॥
सेवहिं सब नृपको नृपबामा। भये नृपतिके पूरण कामा॥
इहिविधिबहुतकालचलिगयऊ। नृपके मन अस आवतभयऊ॥
चौथेपनकी होत अवाई। कोइ सन्तान नहीं ममजाई॥
पुत्रविना सब कुल अँधियारो। किहिविधि चलिहै वंशहमारो॥
करि विचार नृपगुरु ढिग आये। निजमनके सब दुःख सुनाये॥
जो कुछ हमको आज्ञा होई। माथे मान करहुँ मैं सोई॥

दोहा-मुदितहोयतब गुरु कह्यो, नृपति धरहु मनधीर।
चार पुत्र ह्वैहैं प्रगट, विश्वविदित वरवीर॥

सुत विभाण्ड शृंगीऋषि जोई । ताहि बुलावो भेजो कोई ॥
लोमपादके निकट निवासी । अंगदेशमें हैं सुखराशी ॥
गणिका भेजी वनके माहीं । सो छलकरि लाईं नृपपाहीं ॥
तब वर्षा भइ नृपके देशा । शान्ता सुता विवाहि नरेशा ॥
सुनि राजा निज मंदिर जाई । हय गय रथ बहु लियेसजाई ॥
मन्त्री मित्र संग कछु रानी । चले अंग नृपकी रजधानी ॥
निकसत नगर शकुन भल पाये । फरकत अंग दहिन सुखदाये ॥
मच्छी दधि औ नकुल सुहावा । गोवत्सा द्विज तिलक दिखावा ॥
घट जलपूर्ण लिये चलि नारी । बायें मधुप करत गुंजारी ॥
गणिकागान अन्न अरु दीपा । पानखाय तिय गई समीपा ॥
सुमन फूल फल सन्मुख आये । मंगलमूल शकुन भल पाये ॥
नील श्वाननिजमखमुखलीन्हें । चलेजात आनँद मनकीन्हें ॥
दाहिने हुइ मृगमाला आई । तैसहि तीतर काग दिखाई ॥
खञ्जन पूरब उत्तर दक्षिन । वाम ओर खर जम्बुक तिहिछिन
लखि सब शकुन भूप हर्षाई । चले अंगदेशहि मनलाई ॥
प्रभुउत्पतिकर कारण पाई । मानहु सत्य शकुन भे आई ॥
इहिविधि नगरनिकट नियराये । लोमपाद आगे चलिआये ॥
करि सन्मान नगरलेआये । दशरथ निजवृत्तान्त सुनाये ॥

दोहा—लोमपादसम्वाद सब, ऋषिहि जनायो जाय ।
दशरथ तुमको लेनहित, आये जाहु सुभाय ॥ १ ॥
रामजन्मकर भविफलगि, चलिभेमुनिसुखपाय ।
अवधनगर आये ऋषी, समाचार गे छाय ॥ २ ॥

पुरवासी सब भये सुखारी । सरयूतट मख भई तयारी ॥
अगणित घट सुवर्णके आये । तिनमें तीरथजल भरवाये ॥

जिहि यज्ञांत होत अस्नाना। ओषधिरस आयो विधिनाना॥
चारसमुद्रनते जल आयो। रत्नखचित सो घटन भरायो॥
ऋधिसिधि देवन दीन पठाई।यदपि नृपतिकर धन अधिकाई॥
गुरुनिदेशलहि किय आरंभा। रचना लखि सुर करत अचंभा
आहुति होनलगी मखमाहीं। स्वाहाकार कहैं द्विज ताहीं॥
सकलभाँति सुरगण परितोषे। अन धन दानदीन अतिचोखे॥
चारहु वर्ण सकल मुदछायो। अन धन भोजनबहुविधिपायो
नारदादि ऋषि तहां विराजे। देखत यज्ञ वेद विधिसाजे॥
इहिविधि पूर्णभयो मखजबहीं। स्तुतिकीन्ह अग्निकी तबहीं॥

दोहा—जयति यज्ञपति सुरनके, हो तुम मख अभिराम।
पावन जगकारक तुमहिं, ताते पावक नाम॥ १॥
बहत हव्य ताते भये, हव्यवाह सुखधाम।
वेद अर्थ जानत सकल, जातवेद कहिनाम॥ २॥
चित्रभानु हरि अनल सुर, ईश हिरण्यसुरेत।
स्वर्गद्वारदाता ज्वलन, शिखि आनंदनिकेत॥ ३॥
नरप्रुवर्ग विश्वा तथा, भूरितेज विहँगेश।
हिरण्यगर्भसुकुमार पुनि, रुद्रअखर्वभगेश॥ ४॥
विप्रदेवऋषिदनुजके, मखसाधक तुम वेद।
धूमकेतु अघनाशकृत, सारभक्ष यशलेव॥ ५॥
जगतपिता अन्तरविदित, वैश्वानर अभिराम।
जिनजनके पूरणकरहु, मनवांछित सबकाम॥ ६॥
पढ यहमंत्र जु होमकर, सिद्धहोत सबकाज।
शृंगीऋषि जब प्रीतिसे, दीन्ह आहुतीसाज॥ ७॥
तब पावकभे प्रकटतहँ, हवि करलिये उदार।
कह्यो हव्य यह लेहु नृप, बाँटदेहुनिजदार॥ ८॥

इहिते चारसुवन जन्माई । जो पहले गुरु दिये बताई ॥
पावक कह भे अन्तर्धाना । सुनि नृपसभासकलसुखमाना ॥
तब नृप गये जहाँ निजरानी । तीनों बोलि बहुत सन्मानी ॥
अर्धभाग कौशल्यहि दीन्हा । शेषहविष दोभागहि कीन्हा ॥
एकभाग कैकयीं खवायो । शेषभाग दोभाग करायो ॥
कौशल्या कैकयिकर लाई । दिये सुमित्रहिं भाग खवाई ॥
भागपाय भइँ गर्भित रानी । तेजरूप गुणसंयुत मानी ॥
दिनदिन तेज सुबाढत जाई । मनहुँ उगे शशि मंदिर आई ॥
इहिविधि रानिन कालबितायो । रामजन्मकर अवसर आयो ॥
योग लग्न ग्रह करण सुवारा । सबअनुकूल भये सुखसारा ॥
सुन्दर पवन चली सुखकारी । वन उपबन फूले तरुडारी ॥
तिहि अवसर सुरगणनभ आये । दुंदुभिबजीं सुमन वरसाये ॥
गावहिं यश गन्धर्व अनेका । सुरगणस्तुति करहिंविवेका ॥
कर्कचन्द्र सितशुभ मधुमासा । अभिजित पुनर्वसू सुखरासा ॥
मध्यदिवस नहिं घाम न शीता । प्रगटे प्रभु जगकरन पुनीता ॥

छंद—चैतमास सितपक्ष भौमदिन नौमीतिथि सुखदाई ।
नीलजलदतनुश्याम रामजू प्रगटभये प्रभुआई ॥
अरुणअलकाविचसुमनविराजतकामकोटिछविलाजैं ।
शीशमुकुट मणिजटित जगमगत कुंडलश्रवणनराजैं ॥
भाल तिलकयुत वारिजलोचननाक बुलाक सुहायो ।
बिम्बाधर वर वदन रदन छबि दमकजात नहिं गायो ॥
भ्रुकुटीकुटिल कपोल गोल दोउ कम्बुकंठ छविधामा ।
कौस्तुभमोतिनमालविराजत घनदामिनि जितकामा ॥
भुजगभोग भुजदण्ड चण्डशर धनुषलिये भगवाना ।

कटि निषंग सबअंग अलंकृत पीतवसन सुखदाना ॥
पाटम्बरकी पहर पिछौरी और जरकसी जामा ।
अंगअंग सबविमल सुहावन को कहिसकै ललामा ॥
चरणकमलमुनि ध्यानलगावहिंअंकुशआदिचिन्हारी ।
देखि रूप अतिभईं अचंभित कौशल्या महतारी ॥
बोली जय जगदीश तुम्हारे चरित अमेय अपारा ।
नेति निगम कहि जाहि बखानत को कवि पावहिपारा ॥
जय अनन्त सुरसन्तकन्त भगवन्त प्रणत हितपाला ।
कोटिकोटि ब्रह्माण्ड रोमप्रति जनमनसरसि मराला ॥
सो मम जठरनिवासी कहियत यहतोहै बडि हाँसी ।
तब प्रभु माताके प्रति सारी पूरवकथा प्रकासी ॥
पुनि बालकह्वै रोवनलागे सखी उठीं हरषाईं ।
बालकदेखनहित कौशल्याके ढिग सबहीं आईं ॥
देखि सुवनमुख रहीं भुलानी मुनिकी कृपा बताईं ।
समाचार दशरथनृप पाये आनँद उर न समाई ॥
बाजनबाजे विविधबजाये नृपतिगयो निजधामा ।
लखि कुमारमुखचन्द्र उजागर सफलभये जियकामा ॥
बोललिये कुलगुरुनिज तबहीं तिन शिशुआयनिहारे ।
श्राद्धकरायो नांदीमुख तब जातकर्म निर्वारे ॥
लगिलगि पांय द्विजनके राजा दान विविधविधि दीन्हें ।
गो गज हय रथ रत्न मनोहर देपरिपूरण कीन्हें ॥
बहुरि बन्धुवर मित्रजननको मानकियो अतिभारी ।
मागध बन्दी सूत याचकन दीन्हों जो रुचिसारी ॥
चारहुँ वर्णमाहिं जिन पायो सो सबद्रव्य लुटायो ।

रामनिछावरहेत भिखारी होन सबन सुखपायो ॥
नगरनारिनरवृंद विलोकनको हरिके उमगाहीं ।
सहजशृँगारनारिनिज करिकरि अन्तःपुरनसिधाहीं ॥
निकटजाय आरती उतारहिं लखिप्रभु सुधिबिसराहीं ।
धन्य आजुको दिवस घडी यह अस कहि भागसराहीं ॥
धन रानीकी कोख जहाँ हरि जन्मे जगसुखदानी ।
धन्य हमारे भाग्य नारिजन कहि अस रहीं लुभानी ॥
करैं निछावरि पटभूषणदे चुकै नेकहू नाहीं ।
याचकभये कुबेर अप्सरा नभमें नृत्य कराहीं ॥
देवदुंदुभी फूलनवर्षा किन्नर गँधरबगावैं ।
नरनारी मृगमद कुमकुम गहि अबिर गुलाल उडावैं ॥
वन्दनवार पताका केतू सबपुरमें फहराहीं ।
गोपुरकलश सुगंधभरे प्रति द्वार द्वार दरशाहीं ॥
बालक वृद्ध तरुण जन डोलहिं सुरधरि मनुजस्वरूपा ।
जयजयकार जहाँ तहँ बोलहिं जय कौशलपति भूपा ॥
तिहि क्षण डावरकेर डाढिइक आयो बोलो वानी ।
ग्यारहभूषण लेन हेतु मैं मनै प्रतिज्ञा ठानी ॥
चलतदेख सम ज्येष्ठ पुत्र कहि मुहिं लैयो दशहाथी ।
मँझले तेंतिस तुरँग मँगाये वीसग्राम तिहि साथी ॥
छोटे डंडकरनाहित महिषी नृपति बयालिस माँगी ।
माताकही पालकी तेरह थान लाहु अनुरागी ॥
पानदान परथान टहलुनी नृपते लइयो तीनी ।
सुनि महीप अति हर्षपायमन ताहि सौंज सब दीनी ॥
मिश्रगये जब याचनकारण लीन भक्तिवर माँगी ।

लोटत रहे चरणरज शिरधर भये प्रेम अनुरागी ॥
जो यह मंगलगाय प्रेमसों सुने रामहियलाई ।
बसै सो हरिपुर जाय यहां सब मनवांछित फलपाई ॥
इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर रामजन्मउत्सववर्णनो
नाम तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

दोहा-विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमरि रामसुखदान ।
कहौं भुशुण्डीचरित कछु, लोमशकथित बखान ॥
रामजन्मके चरित सुहाये । शेष सहसशत सकहिं न गाये ॥
जो यह नवमीको व्रतकरहीं । श्री रघुनायक पाससिधरहीं ॥
वेद पुराण कहत सब सोई । यहि सम अपरव्रतनहिं कोई ॥
जन्म स्थान दरशकर जोई । यमके लोकन पहुँचत सोई ॥
जन्म भवनके उत्तर माहीं । वीसधनुष परमहलसुहाहीं ॥
तामें कैकयिने सुत जायो । दशमीके दिन परमसुहायो ॥
दक्षिणओर सुमित्रा धामा । तीस धनुषपरअतिअभिरामा ॥
दो सुत तहां सुमित्रा जाये । तिसरे पहर इकादशि पाये ॥
तीन यवनकर अंगुल होई । चार अँगुलकर मुष्टिक सोई ॥
छः मुष्टिककर दण्ड कहावा । आठ दण्ड करधनुषसुहावा ॥
दोनौं भवन भीर भइ भारी । भई भीर गावहिं वरनारी ॥
कोकहिसके तिहि क्षणकी शोभा । जो विलोकिसुरनायकलोभा ॥
दशरथके मन सुख न समाई । वरणि सकै को जगकवि आई ॥
तिहि अवसरजिहिविधिजोआवहि । धनसम्पतिनानाविधिपावहि ॥
देश देशके याचक आये । हय गज रत्नबहुत विधिपाये ॥
दोहा-भये रंकते धनिक बहु, जहँ तहँ करैं बखान ।
देहि अशीशैं विविध विधि, जियैं पुत्रसुखदान ॥

अवध पुरी शोभित अधिकाई । जनु वर्षाऋतु उमडत आई ॥
अगर धूम जनु घटा अँधेरी । बाजे बजत गरज जनु हेरी ॥
बन्दीजन जनु बोलत मोरा । गायक दादुर जनु कर शोरा ॥
प्रमुदित देव सुमन वरषावैं । कर्दम कुमकुमकी सब ठावैं ॥
रंगविरंग फिरत नरनारी । बिटपबेलि जनु हरित सुखारी ॥
भवनकलशचमकहिंजनुदामिनि।मन्दिरमणिखद्योतसुहामिनि ॥
सुर नर मुनि भे मुदित विशेखी । आक जवास असुरक्षय लेखी ॥
धनसब ओर बढुरि पुरलागा । मागन सब भरिगये तडागा ॥
कलबल वचन कहत सबडोलैं । झनझनकरझींगुरजिमिबोलैं ॥
यह हरिचरित जानि हैं सोई । भक्ति लहहि रघुनायक जोई ॥

दोहा—सुर नर मुनि भूले फिरैं, करहिं अप्सरा गान ।
दशरथ नृप अति मुदितहो, कीनो सबविधिदान ॥ १ ॥
रत्नजटित पलना सुभग, तक्षा दीनो लाय ।
नेगदियो तब नृपतिने, गयो मुदित मन धाय ॥ २ ॥

कजरौटा लुहार लेआवा । भूपनेगदे अति सुखपावा ॥
माली तहँ डाली ले आयो । नेगपाय मनमुदित सिधायो ॥
इहिप्रकार जो जिहिविधि आवा । नेगपायमनमुदित सिधावा ॥
इहिविधि सुखयुत वासर गयऊ । रजनी भई महासुख छयऊ ॥
दीपावली भई चहुँ ओरा । शंख घंटध्वनि छायो शोरा ॥
विविधस्वांग खेलहिं पुरवासी । देखतफिरहिं सकल सुखरासी ॥
जासु उदर सबविश्व समाना । सो जननी कनियाँ लपटाना ॥
जो अशब्द कहि वेदबतावा । कहा कहा कहि रोवत पावा ॥
विश्वम्भर सब जगका जोई । माताक्षीर पियतभो सोई ॥
महिमा जासु न जात बखानी । ताहि गोदले बैठत रानी ॥

दोहा-शेष महेश विरंचि मुनि, जासु करत नितध्यान ।
सो दुलरावत मायसुत, सखी कर्मकृत आन ॥
सुनु गिरिजा प्रभुकी शुभलीला । दनुजविमोहन सद्गुणशीला ॥
इहिविधि दिवस छठी कर आवा । तिहिदिनअतिशयआनँदछावा
जातिबंधु सब न्योत जिमाये । विविधदान महिदेवन पाये ॥
नामकरणकर दिन जब आवा । गुरुवशिष्ठकहँ नृपति बुलावा॥
विप्रन सहित महामुनि आये । राजा करि सन्मान बिठाये ॥
लोकवेदविधि पूजा करिकै । रानी बुलवाईं मुद भरिकै ॥
गावतचलीं सुहागिनि नारी । दशरथढिग रानी बैठारी ॥
सुरललना अवलोकहिं शोभा । बारंबार जात मनलोभा ॥
चौकपुराये मोतिन केरे । बैठी तहँ रानी गुणचेरे ॥
बालक गोदलिये बड़भागी । को कहिसकै रहीं अनुरागी ॥
रक्षामंत्र पठन मुनि लागे । गणपति गौरि पूजि अनुरागे ॥
जब देवनकी पूजा कीन्हीं । नामकरणकी तब विधि लीन्हीं

दोहा-जो व्यापक चरअचरमें, विश्वविमोहन श्याम ।
सुखसागर भगवानसोइ, तासु राम अस नाम ॥ १ ॥
विश्वभरण पोषणकरण, भवभंजन मतिधीर ।
नाम भरत कैकयिकुँवर, भक्ति करहिं रघुवीर ॥ २ ॥
जाके सुमिरण कियेते, शत्रुरहत नहिं कोय ।
सो रिपुसूदन जानिये, भरतप्रेममय सोय ॥ ३ ॥
भूमिधरन प्रियरामके, तिनको लक्ष्मण नाम ।
ते बडभागी जे लहहिं, इनके दरशललाम ॥ ४ ॥
ऋषिकृत सुन्दरनाम सुनि, हर्षिउठो रनिवास ।
नेगपाय मुनिराज तब, गमने तुरत अवास ॥ ५ ॥

अन्नप्राशकर समय जब, हरिको पहुँच्यो आय।
नगरभयो आनंद अति, कापै वरणो जाय ॥ ६ ॥
जहँ तहँ कहत चलीं वरनारी। चलुसखि दशरथभवन मँझारी॥
दर्शन जाय करहु रघुराई। इहिविधि चलि शृंगारबनाई॥
रानिन सबकर आदर कीन्हा। बैठनको वर आसन दीन्हा॥
कीन्हें मंगलचार सुहाये। विविधभाँति भोजन करवाये॥
जातिबंधु सब नृपति बुलाये। चारहुँ कुमर उबटि अन्हवाये॥
विविधभाँति भूषण पहिराये। घृत मधु जाउरि थाल भराये॥
षट्रस व्यंजन भाँति अपारा। दीन्हें परस कनकके थारा॥
पूजाकर नृप मुख जुठरायो। तनक तनक सब मुखन लगायो॥
पुनि मुखपोंछजननिढिगदीन्हें। मातन मुदित गोदभरि लीन्हें॥
हिये हर्षि दुलरावन लागीं। तीनहुँ पुरमें भई सभागी॥
भाँतिअनेक भई जिवनारा। यथायोग्य सब किय व्यवहारा॥
पुनि कछुदिन पाछे सुखदाई। भये वर्ष दिनके रघुराई॥

दोहा-वर्षगांठ उत्सव कियो, घर घर बजी बधाइ।
विप्रन पायो द्रव्यबहु, कापै वरणो जाइ॥

भरत शत्रुहन दोनों भाई। बारहिते अति प्रीति लगाई॥
लक्ष्मण रामचरण रतिलाई। भृत्यसमान न सो कहि जाई॥
श्याम गौर सुन्दर दोउ जोरी। निरखि निरखिरानिनतृणतोरी॥
ले उछंग कबहूँ दुलरावैं। कबहूँ पलने घालि झुलावैं॥
चारहुँ भ्राता परम अनूपा। तदपि रामकर अद्भुतरूपा॥
मेचककेश लसैं गभुआरे। पीतझँगुलिया तनुपर धारे॥
शिरचौतनी परम रुचिकारी। भालतिलक शोभा अतिभारी॥
भृकुटीकुटिल कमलदल लोचन। भक्तजननके संकटमोचन॥

बघनख कठुला परमसुहायो। द्वैद्वै रद मुख शोभापायो ॥
बिम्बाधर शशि आनन जोहत। मन थकिजात लखतही मोहत
चिबुकचारु नासिका अमोला। लटकनकी लटकनजगतोला
करपंकज कंकणअतिराजैं। नखद्युति निरखत मुक्तालाजैं ॥
हियरे माहिं विभूषण सोहैं। कंठा माल लखत मन मोहैं ॥
कटिकिंकिणी भूमि जब डोलैं। रुनक झुनक करि नूपुरबोलैं ॥
अरुणकमलदलसम पद सोहैं। अड़तालीस चिह्न मन मोहैं ॥
अष्टकोण श्रीस्वस्तिक जोई। हल पन्नग मूसल शर सोई ॥
ऊर्ध्वरेख रथ सुरतरु सोहा। नभ नीरज अरु वज्र विमोहा ॥
मुकुटध्वजा अंकुशयुत जोई। चक्र सिंहासन दण्डक होई ॥
नर यव चँवर छत्र अरु माला। ये दक्षिणपग चिह्न विशाला ॥
पृथिवी गोपद कुंभ पताका। जम्बूफल अरधातृक बांका ॥
दर षट्कोण बिन्दु अरु जीवा। गदा त्रिकोण सरयुसरि सींवा॥
त्रिवलिमीनपुनिशक्तिसुधाघल। पूर्णचन्द्र वंशी वीणाभल ॥
धनुष मराल चन्द्रिका तूना। वामचरण ये चिह्न अनूना ॥
एकएककर फल अति भारी। महारमायण लिख्यो विचारी ॥
सन्तसहायकरन भगवाना। धारे चिह्न सकल जग जाना॥
सब लक्षण युतश्रीरघुराई। विचरत दशरथ अजिर सुहाई ॥
जानुपाणिसह आँगन डोलैं। कलबल वचन तोतरे बोलैं ॥

दोहा-तीनों जननी कहहिं अस, कब डोलैं कहिमाय।
धनुही करगहि जाँय कब, राजसभामें धाय ॥ १ ॥
कबहूँ मोदक देहिं कर, हँसि हँसि कबहुँ खवाय।
इहिविधि मोद प्रमोद लखि, माता बलि बलिजाय॥२॥

जाकी शक्तिपाय सचराचर। चलत खात बैठत बोलतवर ॥
माता तासु अँगुरि गहि पानी। अजिर चलावत जीसुखदानी ॥

वामन तनुधरि इकपग करिकै। नाथलिये सब लोक सुधरिकै॥
सो चढि सकत पलँगपर नाहीं। रहत देहरीतट गहिताहीं॥
कबहुँक हँसि नृपकनियाजाहीं। कबहुँकाकिलकिमातुढिग आहीं॥
कबहुँक पलना झूलैं जाई। कबहुँ खिलौना लखि सुखपाई॥
जाके डर नित काल डराई। सो डरिजाँय लखत निजछाई॥
जिहिमायावश सब जग नाचै। सो बालनसँग नृत्यन राचै॥
दम्पतिने इविवश सुखदाई। करत चरित्र विविध मनलाई॥
इकदिन पूजनहित भगवाना। माता किये विविध पकवाना॥
वसनओटकरि भोग लगायो। तहँ बालकको जेंवतपायो॥
पलनानिकट गई तब धाई। तहँ सोवत पाये सुखदाई॥
पुनिइतलखिपुनिउतलखिपाई। कौशल्याकी मति भ्रमछाई॥
तब प्रभु हँसि निजथूल शरीरा। जाहि विराट कहतमतिधीरा॥
दिखरावा माताको सोई। रोमरोम प्रति अण्ड लखोई॥
शम्भु विरंचि देव बहुतेरे। अण्ड अण्डप्रति वसतघनेरे॥
अगणितरविशशिनखतविराजत। किन्नरनरपशुबहुविधि राजत॥
प्रेत पितर गन्धर्व अनेका। कालकर्मगुण सहितविवेका॥
बन्धनकृत माया को देखा। लखीभक्तिजगछुटतविशेषा॥
द्वीप उदधि प्रतिअण्डनमाहीं। सबदेखे जो सुने न काहीं॥
प्रति ब्रह्माण्ड आपनो रूपा। देखा बालक सहित अनूपा॥
तब ह्वै चकित जोरि दोउपानी। अस्तुतिकरनलगी तहँ रानी॥
जय अमरेश जगत पितुमाता। अज अव्यक्तभक्त सुखदाता॥
त्राहि त्राहि प्रभु कृपानिधाना। जगत पिता मैं सुत करि जाना॥
तब बोले हँसि कृपानिधाना। हमैं त्याग पूजताकिहि आना॥

दोहा—भक्ति विवश आयउ निकट, भूलिगई सुहिं माय।
तिहिते तनु दिखराय निज, दियो विवेक दृढाय॥

यह जनि कहहु काहु तुम माई। कौशल्या तब कहत सुनाई ॥
अब मुहिं नाहिं व्यापै तव माया। यह वरदान देहु करि दाया ॥
एवमस्तु कहि कृपानिधाना। ह्वै बालक पुनि रोदन ठाना ॥
पय प्यावन जननी तब लागी। ईश जान अतिशय अनुरागी ॥
कबहुँ सेजपर पौढैं जाई। नींदरिया प्रभुहेत बुलाई ॥
कबहुँक तनु शृंगार सजाई। भूपनिकट पठवत हरषाई ॥
देख नरेश गोद करलेहीं। सभ्यविसार पलक मुदलेहीं ॥
जो कोइ आपन निकटबुलावहिं। भक्तिजान तिहिंपै प्रभु जावहिं ॥
यह सब सुख जानहिं नरसोई। कृपा रामकी जिनपर होई ॥
कागभुशुण्डिसंग इकबारा। चरित किये रघुनाथ उदारा ॥
कछु दिनमें कनछेदन आवा। पुरजन घर घर बजे बधावा ॥

दोहा-कहत परस्पर चलहु सखि, लख कनछेदन आज।
देखिय गाइय चरित प्रभु, इहिसम और न काज ॥ १ ॥
नव सत साज शृंगार निज, आई दशरथ गेह।
मोदक मालपुये दिये, हाथन कुँवर सनेह ॥ २ ॥
चारहु भाई हँसत तहँ, धकधक हिय करि माय।
इत रोरी भरि सींकमें, दीन्ही द्विजन लगाय ॥ ३ ॥
अतिलाघवता कीन्ह तिन, छेदे कर्ण सुभाय।
तदपि नैनमें नीर भरि, कुँवर उठे अकुलाय ॥ ४ ॥
मणि मुक्ताहल वसन बहु, कीन्ह निछावरि माय।
पहिराये पुरजनदिये, आनँद उर न समाय ॥ ५ ॥
अवधनगरकी चेरिकी, सुरतिय नाहिं समान।
जहँ विचरत सब सखन युत, कृपासिन्धु भगवान ॥ ६ ॥

इहिप्रकार पुनि चारिहु भाई। बडेभये परिजनसुखदाई ॥
चूडाकरण कीन्ह मुनि आई। बहुविधि दान द्विजनने पाई ॥

अनुजसखायुत मिलि रघुराई । खेलहिं नृप लीला सुखदाई ॥
भूप रसोईहित जब आवैं । लालन मात बुलावन जावैं ॥
अहो राम हे लषणकुमारा । अहो भरत रिपुहन सुखसारा ॥
कछु क्षण खेल छोड़ अब दीजे । विलम भई चल भोजन कीजे ॥
देखत नरपति बाट तिहारी । जेंवहु चलि जननी बलिहारी ॥
तब उठि माताके सँग आवैं । बैठ भूपढिग भोजन पावैं ॥
कबहुँक टेरेसे नहिं आवहिं । जननी धरनजाहिं तब धावहिं ।

दोहा–ठुमकि ठुमकि जब चलहिं प्रभु, जननी पाछे जाहिं ।
पकरि लिआवैं भूपढिग, तब जेंवहिं सचुपाहिं ॥

अंचलते रज झारहिं माता । बैठ नृपतिढिग जेंवहिं भ्राता ॥
अवसरलखि पुनि जाँय पराई । दधिओदन मुखमें लपटाई ॥
पुनि बालनढिग खेलहिं जाई । मातुपितामन सुख न समाई ॥
मातुपिता मन जो सुख होई । शेष महेश न कहिसक सोई ॥
जिनगलियन प्रभु विहरहिं जाई । थकितहोहिं लखि लोग लुगाई
कहहिं परस्पर लोग लुगाई । जबते लखे कुँवर सुखदाई ॥
तबते जगव्यवहार न भावत । रहूँ खिलावत अस मन आवत ॥
जब कहुँ द्वार महलके आवैं । पुरजन गोदलेनको धावैं ॥
निजनिजरुचिसबलेहिं खिलाई । करहिं निछावरि वितबिसराई ॥
पुनि पहुँचावन महलनमाहीं । सकल नारिनरप्रेम कराहीं ॥
कबहुँ विहंगधरनको धावैं । जब उड़िजात हँसत रहिजावैं ॥

दोहा–कबहुँक शुकसारिक मँगा, खेलहिं चारहुँ भाय ।
जो जो इच्छा करहिं सब, सो सो देतीं माय ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर रामचन्द्रबाललीला
वर्णन नाम चतुर्थ अध्याय ॥ ४ ॥

दोहा-विधिहारि हर गणपति गिरा, सुमरि राम सुखदान ।
कहौं भुशुण्डीकेर मत, रघुपतिचरित बखान ॥

इहिविधि हरिके चरित अपारा । को कवि वरणिसकै लहिपारा
इकदिन एक कलन्दर आवा । वानर नृपके द्वार नचावा ॥
लखि प्रभु मचलगये ततकाला । कहैं कि लेहौं कीश बिशाला ॥
राजा लागे देन मँगाई । तिन्हें न लेत करत मचलाई ॥
तब नृप गुरुहिं प्रसंग सुनाई । सुनि बशिष्ठ कह सुन नृपराई ॥
जिहिहित प्रभु ठानी मचलाई । है वह और कीश बलदाई ॥
तिहि उत्पत्ती कहौं बखानी । सादर सुन महीप विज्ञानी ॥
गिरि सुमेरु उत्तरदिशि जोई । तहँ केशरी वसत कपि कोई ॥
अंजनि ताकी सुन्दर नारी । एकवार तनु सकल सँवारी ॥
विचरत रहि पर्वतके ऊपर । पवन लुभानो देख रूपवर ॥
तिहि स्पर्श तियाका कीन्हा । जानि शापहित तिनजललीन्हा
कह तब पवन छुवतहौं सबहीं । शाप न दे वर ले इक अबहीं ॥
अतिबलवान पुत्र तब होई । जगमें तिहि सर लहै न कोई ॥
अस कहि सो अन्तर्हित भयऊ । इहिविधिकछुकसमयजबगयऊ

दोहा-कार्त्तिकवदि चौदश शनी, प्रगट्यो सुभगकुमार ।
लखि पितु मातु उछाह मन, को कवि पावै पार ॥

इकदिन सो माताकी गोदा । करत रह्यो पयपान विनोदा ॥
प्रातअरुण रवि फल तिहि जाना । ताहि ग्रसनहित गगन उड़ाना ॥
बीचहि इन्द्र वज्र तब मारा । चिबुकमध्य लगिगिरयोकुमारा
पवन पुत्र निज लिहेसि उठाई । रोकि समीर जगत दुखछाई ॥
व्याकुलहो तब सुरगण आये । विनतीकर बर दिये सुहाये ॥
ब्रह्मा कहि बजरंगी होई । शक्तिबाण मम भय नहिं कोई ॥

वृहद् कह्यो नहिं अग्नि जराई। सुरपति कुलिश अभयकहिवाई।
शिव त्रिशूलयमदंडअभयकहि। वारि न बूड़े वरुण अजयसहि॥
बोली शक्ति सुनहु सबसुरगन। मोर वचन नहिं छेकसकै मन॥
इहिविधि सब सुर दियवरदाना। छुटी समीरसकल सुखमाना॥

दोहा—इकक्षणमें यह भयो सब, महावीर धरि नाम।
जहाँ तहाँ गे सुर सकल, पावा मनविश्राम॥

हनुमान मातापितुनेरे। रहनलगे सुखसहित घनेरे॥
काननमें मुनिढिग जब जाहीं। डारैं फोरि कमण्डलु ताहीं॥
विटपतोरि उत्पात मचावैं। तनुबल अधिक अंग धुनिहावैं
तब ऋषि मिल अस वचनउचारा। भूलिजाहु निजपौरुष सारा॥
सुरत कोउ जब देइ कराई। तब फिरि तैसो बल ह्वैजाई॥
सहसरश्मिके ढिग पुनि जाई। विद्या पढनलगे हरखाई॥
सन्मुख रविके आगेजाहीं। कहहिं सुखागर कंठकराहीं॥
विद्यापढि गुरुदक्षिणहेता। पूछा जब रवि कह्यो सचेता॥
ऋष्यमूक मम सुत सुग्रीवा। तिनके तीर रह्यो बलसीवा॥
तहाँ तुम्हैं मिलिहैं रघुराई। सुनि असरहे सुगलढिग जाई॥
राम मँगावतहैं कपि सोई। देहु मँगाय मोद हिय होई॥
सुनि दशरथ निजदूत पठाये। वे सुकंठढिग आतुर आये॥
नृपसँदेशसुनि कछुदिनहेता। दिय पठाय सुग्रीव सचेता॥
जब मंदिर आये हनुमाना। हियलगायलिय कृपानिधाना॥
जहँ जहँ खेलहिं राम सुजाना। तहँ तहँ सँगराखहिं हनुमाना॥
इकदिन इक आंधर शिशु आई। धूरिडारि प्रभु पीठपराई॥
उरहनदे प्रभु पीठदिखाई। तुरत भई तिहि दृष्टि सुहाई॥

दोहा—इकदिन जौंहरिलाय नग, राजाको दिखराय।
ले प्रभु डारो कूप तिहि, कह नृप देहु मँगाय॥

तुरत कूपमें तरु जमि आयो । लगे अमोलक अचरज पायो ॥
फलत झरत तहँ रत्न बिशाला । दिये लुटाय सकल महिपाला ॥
सातदिवस भइ लूट घनेरी । पुनि छिपगयो वृक्ष अवसेरी ॥
यह लीलालखि विस्मय भारी । चकितभये सब पुरनरनारी ॥
इकदिन एक व्याध चलिआयो । अद्भुत पक्षी नृपहि दिखायो ॥
ले प्रभु दीन्हों ताहि उड़ाई । सो कह मुहिं सो देहु मँगाई ॥
प्रभु तिहिपक्ष भूमिधरि गारो । ताते वृक्ष जन्म्यो अतिभारो ॥
लागतफल फूटतभे जबहीं । निकसत उड़त बिहँग बहु तबहीं ॥
बैठत महलन पर उड़िजाहीं । बालक तिन्हैं धरनको धाहीं ॥
पुरवासिन पाले अधिकाई । दूरदेशके नृपन मँगाई ॥
बहुत द्रव्य ब्याधेको दीन्हा । होसन्तुष्ट गमन तिन कीन्हा ॥

दोहा-जिहिइच्छासे निमिषमें, बनत सकल संसार ।
यह महिमा कछु अधिक नहिं, मन करदेख विचार ॥

इहिविधि कृपासिन्धु सुखधामा । आठ वर्षके भे श्रीरामा ॥
जब पौगण्ड भये सब भ्राता । पढ़न हेतु पठयो पितुमाता ॥
गुरुपदकमल शीश तिन नावा । अतिप्रियजानमुनीशपढ़ावा ॥
साम दान भेदन युत नीती । पढ़त भये राजनकी रीती ॥
नेहपूर्वक जो समुझावन । सो कहवावत साम सुहावन ॥
खान पान धनदे मिलि दामा । भेद कराय मिलावतजामा ॥
अन्तिम त्रास मारहै दण्डा । राजनीतिके चरण अखण्डा ॥
यह सब पढ़ि जाने रघुराई । पुनि उपवेद शास्त्र मनलाई ॥
चार वेद सब तन्त्र पुराना । सहजहि जानलिये भगवाना ॥

दोहा-पढ़त समययुतवर्गके, अन्तक अक्षरशुद्ध ।
नहिं निकस्यो तब जान लिय, मुनि यहब्रह्मप्रबुद्ध ॥

कछु दिनमें विद्यासब पाई। मुनि दक्षिणा बहुतविधिपाई॥
मातुपिता अतिही मुदपावहिं। खेलन जहँ भ्रातासब जावहिं॥
देखि मुदितहो नर अरु नारी। प्रभुहिविलोकहिंपलकबिसारी॥
युवा वृद्ध बालक नर नारी। जुगवहिं प्राणसमान विचारी॥
समयजान उपवीत करावा। तिहिक्षणअवधमहासुखछावा॥
क्षणक्षण अवध बढ़हिं आनन्दा। निरखहिं ब्रह्म सच्चिदानंदा॥
नारदादिमुनि जब तब आवहिं। चरितदेखअजलोकसिधावहिं॥
गावहिं चरित तहां प्रभु जाई। सुखीहोहिंसुर मुनि समुदाई॥
इकदिन रह वशिष्ठकर ध्याना। लखिनारदअसवचनबखाना॥
जाको ध्यान करहु मनलाई। प्रगटसुयहां लखहुकिनजाई॥

दोहा–अनुजसखासुत एकदिन, असरयूमें अस्नान।
करतरहे तहँ असुर इक, दशमुख प्रेरित आन॥

मगररूपधरि प्रभु सुखकारी। निकसे सपदि ताहिप्रभुमारी॥
प्रथम बाल जिनजिनके खाये। दीन्हें काढि मनहुपुनिआये॥
मातपिता दीन्ह्यों बहु दाना। गुरुप्रसाद नित नवकल्याना॥
पुनि किशोरवपु भे सबभ्राता। रूपराशि पुरजन सुखदाता॥
दिनप्रति सरयू न्हाने जाहीं। बहुविधि दानविप्रनितपाहीं॥
कबहुँक जलनावरि प्रभु खेलहिं। कबहुँकगेंदखेलसुख मेलहिं॥
प्रतिकर कन्दुक घूमत कैसे। प्रभुपदबिमुख जीव यह जैसे॥
कबहुँक चढ़िवरवाजि नचावहिं। पुरजनलखिबहुविधसुखपावहिं
कबहुँ करत घुड़दौड़ सुहाई। सब मिलि निजअश्वन दौराई॥
भरतसंग लागहि जब बाजी। तब प्रभु कसैं राशि निजवाजी॥
कह सब भई भरतकी जीती। लोग सराहहिं लखि असप्रीती
कबहुँ अनुज सब सखासमेता। विचरहिं पुरमहँ कृपानिकेता॥

इकदिन न्हायरही इक बाला। बोली तिहिमाता तत्काला॥
नंगीन्हात देखिहै कोई। बोली इनतज को मुहिं जोई॥
अबतक तैं प्रभुदर्शन कीन्हा। मेरे अंग दृष्टि कत दीन्हा॥
कबहुँक जाय अखारन लरहीं। करिबल विपुलमोदमनभरहीं॥
कबहुँ लक्ष भेदहिं ले बाना। घरआवहिं पुनि कर अस्नाना॥
मातपिता लखि अतिसुखपावैं। दशरथसह प्रभु भोजन खावैं॥

छंद–जब बैठे जीमनको राजा संग पुत्र ले चारीजी।
भोजन विविधभाँतिके लाई लषणलाल महतारीजी॥
खोवा खुरमा खाजा मोहनभोग मलाई धारीजी।
खीर मखानेकी खरजूरी खांडखरिख गुणधारीजी॥
मालपुए मधु मिश्री माधुर सो मक्खनसँग डारीजी।
पापर पाक पिराक पटपरी पन्नी पूप पनारीजी॥
मोतीचूर मगदके मोदक मेवाकी उजियारीजी।
सूरन सोवा सरस सेमई सँहजन सेव सुहारीजी॥
पालक पोइ पकौरी पेठा परवर मनरुचिकारीजी।
भात भटाकर भुरता उज्वल भाँति भाँति तरकारीजी॥
बहुविधि कचरी बरी बरा ककरी बहु कटुककहारीजी।
उरद मूँग अरहरकी दालैं चनक कनकसम दारीजी॥
मुनितरुकली फली पाकरकी कूष्माण्ड कचनारीजी।
आम आरुईअविरती अदरख अमराबहुतआचरीजी॥
मैदाकी अतिसुन्दर रोटी घींमें बोरि निकारीजी।
रिकवछ डुभकौरी मुँगछौरी इँडहर छीर छँछारीजी॥
कुँदरू केला कढी करेला बहुविधि की पलिहारीजी।
किसमिस पिश्ता दाख छुहारा गरी बदाम अपारीजी॥

डिंडसा रूप रतालू फेनी फूल निमोना ग्वारीजी।
गुंजा खेखस खीच चचेडा घेवर वनगुदियारीजी॥
जामन बालूसाइ अँदरसा दधिचटनी चटकारीजी।
इहिविधि षटरस चार भाँतिके व्यंजन विपुल सँवारीजी॥
सुवरणथार कटोरे मणिके भरि भरि धरे अगारीजी।
वैश्वदेवकरि जीमनलागे लखि हर्षीं सब नारीजी॥
शीतल जल सुगंधमय सुन्दर पीवत बारहिबारीजी।
मैया कहत पियो मत लालाजल अति करत विकारीजी॥
गये उदरभरि मैया अबतौ एकहु कौर न पारीजी।
तब दशरथ सब कुँवर साथले उठे उतिष्ट उचारीजी॥
दासीने सब जन अँचवाये अँगअछवाये झारीजी।
पुनि सुगंधमय पान खवाये अतर लगाय विहारीजी॥
शीतप्रसाद दास दासीजन पाये सकल पिछारीजी।
जिहिप्रसादको सुरमुनि तरसत परसत कबहुँ न डारीजी॥
मिश्र माथधरि प्रेमभक्तिते पावत बारंबारीजी।
यहिविधि कुटुमसहित कियभोजनदशरथभवनमँझारीजी॥
दिनदिन अलौकिक शोभा कोकवि वरणे पारीजी।
कहँतक बरनिसकहुँ भक्तनहित ब्रह्मभये तनुधारीजी॥
धन्य धन्य दशरथमहाराजे ये जिनअजिर विहारीजी।
जो गावे जेवनार रामकी तासुखकी बलिहारीजी॥

दोहा–कबहूं खेलहिं जांय बन, सिंहन करत शिकार।
शस्त्रत्याग सब युद्धकरि, सिंहहि डारैं मार॥१॥
सखनमाहिं जो वीर हो, पुरस्कार तिहि देहिं।
जिहिमारहिं तिहि धामनिज, देहिं सुजनके नेहिं॥२॥

इकदिन वनसूकर इक आयो । घुरघुराय प्रभुसन्मुख धायो ॥
पकरि चरण प्रभु भूमिपछारा । छुटे प्राण भो दिव्यकुमारा ॥
अस्तुतिकरि कह वचन बखानी । पूरव नृपति रह्यों मैं ज्ञानी ॥
हरिजनको नहिं शीश नवायों । निन्दाकरि निजमंदिर आयों ॥
तिहि अघ तनु सूकर कर पावा । तव दर्शनकरि पाप नशावा ॥
अस कहि गयो धाम हरि सोई । इकदिन वनमें नाहर कोई ॥
लखिधायो प्रभुपै तत्काला । बाणमारि तिहि बध्यो कृपाला ॥
इहिविधि नित वन खेलहिं जाई । पावन करहिं जीव रघुराई ॥
खग मृग कबहुँ न करहिं सँहारा । उत्पातिनकर वध करिडारा ॥
इक दिन एकसिंहने आई । मारी एक विप्रकी गाई ॥
प्रभु धनुले सन्मुख ललकारा । पंचबाणसे वध करडारा ॥
सो गन्धर्व भयो तत्काला । हाथजोर निज कह्यो हवाला ॥
इन्द्रसभा इकदिन मैं नाथा । गावतरह्यों इन्द्रगुणगाथा ॥
इकदिन नारद मुनि तहँ जाई । वरणो हरिगुणचरित अथाई ॥
मैं हँसदियों मुनी रिसपाई । शापदेइ इमि बात सुनाई ॥
जस तैं हँस्यो ठठाय अनारी । होउ सिंह बनमें अघकारी ॥
जब मैं बहुविधि विनय सुनाई । तब कह मृत्यु होइ हरिपाई ॥
असकहि सो निजलोक सिधारा । आये अपने भवन कुमारा ॥

दोहा—विप्र कह्यो मम गाय सो, दीजे नृपति मँगाय ।
राजा कहिहैं अपर बहु, सो लीजै सुखपाय ॥ १ ॥
झरु तरुपात न लागसो, गई वैस नहिं आय ।
हाथ न आवत समय जिमि, गये कहा पछिताय ॥ २ ॥

तिहिले ताकी त्यागहु आशा । अपर धेनु लीजे सुखराशा ॥
विप्र तहां ठानी मचलाई । देखी चहत राम प्रभुताई ॥

तब प्रभु कहा लषणसँग जाई। अबहिं ढूंढ़ि ले आवहु गाई॥
रथचढि पुनि यमलोक सिधाये। लखि यमराज तुरत उठिधाये॥
सोलहभाँति पूजि सन्मानी। किमि आगमन कही मृदुवानी
गाय विप्रकी खोजन आये। तब बोले यम वचन सुहाये॥
पांचकोशतक अवधमँझारी। जो मरिजाय न ह्यां पगुधारी॥
तहँ को न्याय विष्णुके हाथा। राजसभालम सो सबमाथा॥
पुनि लक्ष्मण पाताल सिधाये। तहां देखि पुनि खोज न पाये
सात स्वर्ग लखि गे वैकुण्ठा। जहँवस श्रीपति अकलअकुण्ठा
कर प्रणाम सब हेतु सुनावा। सुनत लोक साकेत पठावा॥

दोहा—कोटि पचास कलोकसो, जहाँ वसत श्रीराम।
अग्नि पवन पवि चन्द्र रवि, पहुँचत जहाँ न धाम॥

स्वयंप्रकाश सदा सो लोका। रहत तहाँ जन सदा विशोका॥
जाय लषण देखा सो धामा। रत्नमणिनमय लोक ललामा॥
सुन्दर बांके चारि दुआरा। बाजत बाजन बिविधप्रकारा॥
उत्तर माहिं महा वैकुण्ठा। महाविष्णु जहँ रहत अकुण्ठा॥
विरजाकर जहँ निर्मल नीरा। न्हात भक्त हरिके मतिधीरा॥
एकज्योति जहँरहत अखण्डा। कोटिभानुसम महाप्रचण्डा॥
योगीजन जिहिध्यान लगाहीं। अन्तसमयमें तहां सिधाहीं॥
तहाँ जनकपुर पूरब द्वारा। दक्षिण चित्रकूट सुखसारा॥
पश्चिमदिशि गोलोक सुहावन। श्रीगोपालविहार सुपावन॥
वय किशोर सबभाँति सुहाई। जोविलोकि मनजाय लुभाई॥
विविधभाँतिके भूषण राजैं। जो विलोकिदामिनिद्युतिलाजैं॥
पीतवसन वनमाल सुहाई। कर मुरली मुख पानललाई॥
संग सखी सोहैं सब भाँती। तहँ सुरभीगण वसैं सुहाती॥

चरणवंदिकरि लषण सुनाई । ब्राह्मणकी कपिला इत आई ॥
सुनत दीन्ह गोपाल मँगाई । पुनि साकेतमध्य लखिजाई ॥

दोहा-जो त्रिभुवनरचना नहीं, सो देखी तहँ आय ।
दिव्यरूप वासी सकल, गतविकार समुदाय ॥ १ ॥
सीतारूपी लक्ष्मी, तहँ नित करत निवास ।
जासु अंश उपजहिं अमित, उमा रमा सुखरास ॥ २ ॥

सेवहिं अगणित सखी सयानी । महिमा अति को सकै बखानी ॥
अगणितजनलखिकरहिंप्रणामा । अगणितसंतजपहिंजिहिनामा॥
अगणित शक्ति करहिं गुणगाना । तिनमें तेंतिस मुख्य सुजाना ॥
श्री भू लीला क्रांति कहाई । योगी कृपा ईशान बताई ॥
उत्कृष्णा भीषणी सुहाई । ज्ञानांकुशा चंद्रिका गाई ॥
पुण्या परवी कला सुहाई । कीर्त्ति क्रांत अहलादिनि गाई॥
भाविन्या शोभना लंबिनी । शान्ता विद्या विमल नंदिनी ॥
ईलानुग्रह उन्नति छाता । महोदया शुभदा विख्याता ॥
सत सोकाहित विमला जोई । और सुविमला जानो सोई ॥
यह शक्ती तेंतीस कहाई । महारामायण करनीगाई ॥

दोहा-लखि लक्ष्मण द्विजके सहित, रहगे शीश नवाय ।
करि सन्मान सिया तहाँ, तिनको लिय बैठाय ॥

प्रीतमके गुण पूछे जोई । लक्ष्मण वरणि सुनाये सोई ॥
हाथ जोरि वच विप्र सुनाये । तुम्हरे स्वामी कहां सिधाये ॥
कह सिय सो प्रभु अवध मँझारा । लीन्हे दशरथगृह अवतारा ॥
कछुदिनसें हमहूं अब जाई । जनकनगर जन्मे द्विजराई ॥
सुनत विप्र अतिशय हरषाना । अखिलभुवनपतिरामहिजाना॥
कह सिय मत भ्रमिये सबठौरी । मूँदहु नैन जाहु गृहओरी ॥

नयन मूँदि देखहिं मुनि जबहीं। पहुँचे राजसभामें तबहीं॥
बोले राम धेनु निजपाई। हाथजोरि द्विज कही सुनाई॥
धन्य धन्य प्रभु कृपानिधाना। मैं तुम्हरो प्रभाव नहिं जाना॥
तव प्रभावहित हे हितकारी। मैं ठानी ऐसी हठ भारी॥
तुमसम ईश अपर कोइ नाहीं। यह मैं जानी निजमनमाहीं॥
मैं जो कीन ढीठता भारी। सो क्षमिये अपराध हमारी॥
सुनि प्रभु कियो बहुत सत्कारा। कहो न यह किछु भेदउचारा॥
आज्ञा ले सो निजघर आवा। पुरवासिनसुनिअतिसुखपावा॥

दोहा—करत चरित्र विचित्र प्रभु, को कहिपावै पार।
इकदिन नारदमुनि चले, आवतप्रभुहि अगार॥

मारगमें लोमश मिलि गयऊ। दोउ सम्वाद परस्पर भयऊ॥
चलो आजुलखिये श्रीरामहिं। सफलकरहुतनुलखिसुखधामहिं॥
लोमश कही मनहि थिर कीजै। बैठहु ध्यान ब्रह्मकर लीजै॥
रघुपति आवतहैं बहुबारा। करत परिश्रम यहि संसारा॥
इनसे हमहि भले ऋषि नारद। थिर ह्वै ध्यावत ब्रह्मविशारद॥
परब्रह्म जब राम न जाना। नारद चले अवध करि ध्याना॥
लोमशको व्यापी हरि माया। चहुँधा सिंधुउमडि तबआया॥
डूबनलगे मुनीश तहाहीं। निजबलकरिजलपरउतराहीं॥
पैरत थके अक्षयवट पावा। तिहि बटमें हरिरूप दिखावा॥
तब कहि मुहिं राखहु भगवाना। त्राहि त्राहि प्रभुकृपानिधाना॥

दोहा—तब बोले प्रभुरामकी, हमको आज्ञा नाहिं।
इतने आई लहरइक, गये अपरथलमाहिं॥

तहँ अवलम्ब सोइ तरुपाई। कह्यो हमें नहिं रामरजाई॥
इहिविधि बहुब्रह्माण्डमँझारी। फिरे ऋषी पायो दुख भारी॥

तब मुनि कही राम को आहीं । जिनकी आज्ञा तुमको नाहीं ॥
कहु हरिसो साकेत अधीशा । जन्मे अवधमाहिं सुर ईशा ॥
तिनकी विनय करहु जवजाई । तरिहो दुखसागर ऋषिराई ॥
नामरूपलीला हरि केरी । रहत नित्य यहलखहुघनेरी ॥
ढूंढे हमैं मिलत सो नाहीं । लहरि संग पठयो हमपाहीं ॥
जलआवरण अवध चहुँओरा । तम्बूसम तानो तिहि ठोरा ॥
पुरवासी सब रहत सुखारी । तब लोमशप्रभुविनयउचारी ॥
सुनि प्रभु भृत्य भेज बुलवायो । रामहिंलखिचरणनाशिरनायो ॥
कहा कि बिन तव कृपासुहाई । तुमको कोउ जान नहिंपाई ॥
तुम सबके स्वामी भगवाना । जीवदशा तुमहाथ सुजाना ॥
मशकहि देव विरंचिबनाई । विधिहि मशककरिदेहु रजाई ॥
प्रभुकरि कृपा विदा तबकीन्हा । लोमश चले ध्यानउरलीन्हा ॥
तब नारद मिलि मंत्र सुनावा । लोमशहिये मोद अति पावा ॥
असप्रभाव रघुपतिको आही । निगम कहत पुनिपारनपाही ॥
इकदिन राम पतंग उडावा । चढि सो देवलोकतक धावा ॥
देखी सो जयन्तकी नारी । निजमनमें असकरतविचारी ॥
जाकी यह पतंग मनहारी । सो कैसो धौं पुरुष सुखारी ॥
हँसि पतंग ताते गहिराखी । तब प्रभु हनूमानते भाखी ॥

दोहा-देखो कौन पतंगगहि, चले तुरत हनुमान ।
देखत बोले नारिते, त्यागहु गुडी अयान ॥ १ ॥
बोली जाकर चंग यह, तिहि दर्शनकी आश ।
चाहत देहु कराय तब, तजिदेहौं सुखराश ॥ २ ॥

हरि सब प्रभुते आय सुनाई । सुनत राम बोले मुसुकाई ॥
चित्रकूटमें जब हम जावहिं । तब वह तहँ दर्श को आवहिं ॥
महावीर तब जाय सुनाई । सुनत छोडदी चंग सुहाई ॥
रघुपति खैंचलीन सुखपाई । संध्याको घर पौढे आई ॥

मणिमय सुन्दर पलँग सुहायो । क्षीरफेनुसम त्रिछवन पायो ॥
तापर शयनकियो सुखदाई । प्रातहिं जननी जाय सुनाई ॥
उठहु तात जननी बलिहारी । पूर्वमाहिं रविकिरण पसारी ॥
मलिनभयेशशिनखतअकाशा । जिमि दरिद्रके गुणसब नाशा ॥
तमचर लुकनलगे सब ऐसे । प्रभुसुमिरणते अघ सब जैसे ॥
रविलखि फूले कमल सुहाये । यथा सन्त सन्तनके पाये ॥
तिनपर मधुप रहे गुंजारी । जिमिजनहरिकीशरणपुकारी ॥
विविधभाँति पक्षिन रव छाई । मानहु मुनिगुण कहत सुनाई ॥

दोहा—कोक मुदित व्याकुल, कुमुद, ऐसे परत दिखाय ।
हानिलाभको पायशठ, सुखी दुखी ह्वैजाय ॥

अनुज सखा भाषत यहि भाँती । जिमिचातकचाहतजलस्वाती
बन्दीगण भाषत विरुदावलि । याचक द्वार उठहु जाऊंबलि ॥
सुनत उठे प्रभु कृपानिधाना । माता करि आरति सुखमाना ॥
मित्र बन्धु पद बन्दे आई । याचक दानपाय मुदछाई ॥
पुनि सरयूतट जाय नहाये । साधु विप्र सन्मान कराये ॥
कथा सुनैं जहँ तहां सुहाई । करिप्रणाम आवहिं रघुराई ॥

दोहा—एकबार सँग सुजनले, तीरथयात्रा कीन ।
घर आये पुनि द्विजनको, दान विविधविधि दीन ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ग्रंथउजागर रामचरित्र-वर्णन नाम पंचम अध्याय ॥ ५ ॥

दोहा—विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिरि रामसुखदान ।
घटजसंहितासार ले, कहुँ कछु चरित बखान ॥

इकदिन निजस्वरूपकर ध्याना । करहिं राम तरके हनुमाना ॥
राम अहहिं सबजगके स्वामी । ब्रह्मादिक इनके अनुगामी ॥

सुमिरण ध्यान करन किहिकेरा । इनसे अधिक कौन जग हेरा ॥
पूछा प्रभुहि चरण शिरनाई । बोले कृपासिंधु सुखदाई ॥
व्यापक ब्रह्म रहै सबठौरा । लोकरक्षहित सुन तिहि ब्योरा॥
सगुण अगुण दोभाँति बखाना । है अभिन्न तिहि काहु न जाना ॥
देखहु तिहि उत्तरादिशि जाई । मुद्री दे प्रभु तुरत पठाई ॥
लोकालोक त्याग गे आगे । अन्धकार पर गये सभागे ॥
पुनि प्रकाशमय लोक लखायो । इक बुढियासे वचन सुनायो ॥
ब्रह्म कहां सो देहु बताई । सो बोली अस बात सुनाई ॥
अवधपुरी दशरथ नृप जोई । ताके घर जन्मोहै सोई ॥
पुनि तहँ रघुपतिदर्शन पावा । विधिहरिहरसेवित सुखछावा ॥
पुनि दण्डवत कीन जब देखा । तबनहिंकोउलखिपस्यो विशेखा

दोहा-तब पीताम्बरखूंटले, अवध पहूँचे आय ।
प्रभुको कीन्ही दण्डवत, बोले कौशलराय ॥

कहो ब्रह्म देख्यो कपिराई । सुनि बोले कपि गिरा सुहाई ॥
तुमहीं हो सर्वत्र समाये । तुमसे परे न कछु हम पाये ॥
कह प्रभु अबहिं लौटि तुम आये । कहो कि तहां न पहुँचनपाये ॥
कह कपि तहँ बहुवर्ष बिताये । इत कछु काल न अचरज पाये॥
असकहिकपिपटचिह्नदिखावा । प्रभुकर पट तस खंडित पावा ॥
लखि प्रभु चरण परे हनुमाना । त्राहि त्राहि अब कृपानिधाना॥
तब प्रभु आपन रूप दिखावा । महावीर अतिशय सुखपावा ॥
सरयूतट प्रभु गे इकबारा । खेलत सखनसंग सुकुमारा ॥
विहँगरूप धरि रावण आयो । चाहत प्रभुको चोंचउठायो ॥
लखत राम बिनफर शर मारा । जायपस्यो खललंकमँझारा ॥
सात दिवसबीते पुनि जागा । लखि प्रतापमनभयोविरागा ॥

तब दूतनसे गिरा उचारी। तपसिनसे लावहु करभारी॥
दूत गये तपसिनके पासा। दीजै कर असवचनप्रकाशा॥
कर सम्मत घट रुधिर भराई। दूतन दे मुनि गिरा सुनाई॥

दोहा—कहियो घटके खुलतहीं, कुटुमसहिततव नाश।
वै जैहै ले दूत गे, कीन्हों वचन प्रकाश॥

सुन रावण बोला दुखपाई। गाड़हु निकटजनकपुरजाई॥
शिवसन्मुख भो ब्रह्मविचारा। रावण तहां जनकसे हारा॥
तिहि रिसते तहँ कुम्भपठावा। दूत गाडि मिथिलापुरआवा॥
हरिइच्छा दुकाल तहँ भयऊ। जनक यज्ञरचना तबठयऊ॥
सुवरणहल लीनो नृप पानी। जोतन लगे भूमि सुखमानी॥
घटमें हलफल लाग्यो जबहीं। प्रगटभयो सिंहासन तबहीं॥
रविसम तेज न जाय बखानी। चार सखी चहुं ओर सुहानी॥
मध्य विराजत भूकी कन्या। रूपराशि गुणत्रिभुवनधन्या॥

दोहा—वेदवती खलवधनहित, शक्तिके अंश समाय।
एकरूपह्वै प्रगट भइ, निमी वंशमें आय॥

देखि जनक तब विनय सुनाई। तुरत भई कन्या सुखदाई॥
सखिन सहित सिंहासन सोई। अन्तर्हित भो लख्योनकोई॥
लखि छबिखान सुनयना रानी। गोद उठाय लीन हितमानी॥
सुनि २ पुर नर नारी धाये। कन्या लखिसबअचरजपाये॥
विविधभांति दीन्हों नृप दाना। भइ अकाशते वृष्टि महाना॥
दिन २ कन्या बाढत जाई। शुक्लपक्षशशिजिमिअधिकाई॥
नामकरण आदिक सब कर्मा। किये जनकनिजकुलके धर्मा॥
बुधजन कियो जानकी नामा। नारद कह सीता सुखधामा॥
कह्यो कि सुरेंजनके कारण। प्रगट भई भूभार उतारण॥

सकललोकपति अज अविनाशी। पावहिंवरसबविधिसुखराशी ॥
औरहु लक्षण बहुत सुनाये। मुनिवरपुनिनिजधामसिधाये॥
सिय मुनिवचन हियेधरि लीन्हें। सखीसहित खेलनमन दीन्हें ॥
बाल युवा वृद्धा नर नारी। लागै सबहिं प्राणते प्यारी ॥
पुनि नृप सीय पढन बैठाई। अचिरसमय विद्या सबपाई ॥
यह चरित्र सब कह्यो रसाला। सुनहुस्वयम्वरकथाविशाला ॥
एकसमय मिथिलेश सुजाना। शंकरकर अतिशय तपठाना ॥
तब शिव कह माँगो वरदाना। कही जनक सुनकृपानिधाना॥
इष्ट तुम्हार नेति कह वेदा। तुमजानत जिहिकर सब भेदा ॥
मैं देखौं ताको भरिलोचन। यह वर दीजै भवभयमोचन ॥

दोहा-तब शिव इक धनु दे कह्यो, पूजो तुम यहि जाय।
इहिकेही आधार पर, मिलैं तुम्हें सो आय॥

सुनि यह जनक मनहिं अनुरागे। नेमप्रेमसे पूजनलागे ॥
इकदिन सेवाढिग गइ सीता। लिय उठाय सो धनुष पुनीता
लखि आश्चर्य जनकको भारी। तिहिक्षणप्रणकी गिराउचारी॥
जो कोइ नृप शिवधनुष चढैहै। सो मेरी कन्याको पैहै ॥
तब कारीगर बहुत बुलाई। रंगभूमि रचना रचवाई ॥
चामीकर मणिमय स्थाना। जहँ बैठहिं बहुनृपति सुजाना ॥
दशसहस्र जे मल्ल विशाला। धनुष कियो पेटिका रसाला ॥
पहियनपर ताको रखवाई। रंगभूमि लाये बलदाई ॥
देशदेशको पत्र पठाये। समाचार सुनि भूपति आये ॥
वन उपवनहि नगरचहुँ ओरा। जहँतहँ टिके नृपति भलिठोरा॥
दशमुख बाणासुर दोउ आये। चाहत इकले धनुष उठाये॥

दोहा-निजबलविपुलबखानकर, रावण धनुढिग जाय।
लग्यो उठावन दबिरह्यो, सक्यो न तनक उठाय ॥

बाणासुर कीन्हों परणासा। गये दोउ जन निज २ धामा॥
दिनप्रति नृपति उठावन आवैं। उठै न लज्जित ह्वै घरजावैं॥
इहिविधि बीतिगये कछु मासा। अब सुन आगेका इतिहासा॥
गाधिसुवन मुनि परमसयाने। यज्ञारम्भ आश्रमहि ठाने॥
तब तब असुर विघ्न तहँ करहीं। नेमहेत ऋषि क्रोध न धरहीं॥
तब मुनिवर मन कीन विचारा। भानुवंश हरिको अवतारा॥
इहिमिष दरशकरहुँ मैं जाई। लावहुँ माँग यहाँ दोउ भाई॥
सो खलदलकर करहिं सँहारा। अस कहि अवधपुरी पग धारा॥
क्वाँरकृष्णनौमीदिन आये। देखि अवधपुर अति सुखपाये॥
कनककोट चहुँओर विराजे। उपवनलखि नन्दन बन लाजै॥
आठदिशाके आठो द्वारा। सेनापति बहु रहैं उदारा॥
धनिक वनिक कुबेरसम सोहैं। नारिपुरुषलखि मुनिमन मोहैं॥
वापी कूप तड़ाग मनोहर। मणिसोपान चित्रअति सुन्दर॥
तरुगण फूलरहे बहुभाँती। बोलरही खगगणकी पाँती॥
मणिमय मन्दिर कलश चढाये। मनहु इन्दुगण उदय कराये॥
ध्वज पताक तोरण पुर छाई। कहि न जाय शोभा अधिकाई॥
राजमार्ग सिंचित सबभाँती। हयगयरथकीनिकसतपाँती॥
विविधभाँतिके बाजन बाजहिं। मत्त गयन्द अनेकन गाजहिं॥
कतहुँ मल्लगण भिरहिं अखारे। कतहुँ गानजन करहिं उचारे॥
जहँ तहँ विप्रवेदधुनि करहीं। कहुँ हरिभक्त नाम उचरहीं॥
शुक सारिका हंस कहुँ बोलहिं। मोर कपोत यूह कहुँ डोलहिं॥
नगरमध्य नृपमहल सुहावा। रचना कहि न जात मनभावा॥
सो दरबार न जाय बखाना। बैठत नृप जहँ परम सुजाना॥
देश देश के नृपगण आवहिं। नृपदशरथको शीश नवावहिं॥

सुरपतिसम नृपको दरबारा । मणियनमय कहि को विस्तारा ॥
उत्तरदिशि सरयू सरि बहई । विमलपुण्यप्रद श्रुतिअसकहई ॥

दोहा-बांधे घाट मनोहर, करहिं सकल अस्नान ।
जहँ तहँ निवसहिं मुनिसुखद, सुमिरहिं श्रीभगवान ॥

मुनि सरयूमें मज्जनकीना । नृपदरबार चलन मन दीना ॥
यह सम्वाद नृपति सुनपावा । आगेह्वै मुनिवर ले आवा ॥
निजगृहमें तिन दीन निवासा । चरणवंदि निजभाग्यप्रकाशा ॥
चारों भाय आय शिरनावा । देअशीश ऋषि मोदबढावा ॥
रामहि देखि थकित भे लोचन । रूप अपार तापत्रयमोचन ॥
सोरहभाँति पूजि ऋषिराई । पुनि मुनिवरसे विनय सुनाई ॥
बड़े भाग्य घर पावन कीना । किहिहितप्रभुआगमनप्रवीना ॥
कहहु सो ऋषी करहुँ तत्काला । सुनि मुनि बोले गिरा विशाला ॥
कानन करहुँ यज्ञ नृपराई । निशिचर विघ्नकरत तहँ आई ॥
ताहित रामलषण दोउ दीजे । निशिचरवधहिंजगतयशलीजे ॥
सुनत नृपति व्याकुलहो भारी । कम्पिततनु अस गिराउचारी ॥
याचकजन जितने जगमाहीं । दाताको दुख जानत नाहीं ॥
चौथेपन बालक यह पाये । तिनमें राम अधिकमुहिंभाये ॥
यह सुकुमार युद्ध नहिं जानैं । कहा असुरसँग यह रण ठानैं ॥
धनुशरगहन न जानहिं बारे । मुनि बोले नहिं वचन विचारे ॥
सुनि सनेहमय नृपकी बानी । भे सन्तुष्ट हिये मुनिज्ञानी ॥
नृप इनको बालक मत जानहु । अतिबलवन्तविष्णुसममानहु ॥
इनकर महिमा रूप प्रभावा । मुनिवसिष्ठकछु २ लखिपावा ॥
याते मोहिं रामको दीजे । हियेशोचदुखकछुक न कीजे ॥
कह नृप चलहुँ संगदलसाजा । कह मुनि सरहि न तुमसेकाजा ॥

जब राजा सुत देन न चाहा। ऋषिवर जागेउ रोष प्रवाहा॥
मुहुर मुहुर कम्पित त्रयलोका। सुर नर मुनि मानेहु भयशोका॥
तब वसिष्ठ मुनि नृपहि बुझाई। दीजै राम त्याग भय राई॥
विश्वामित्र तेज अतिभारी। करिहैं रामलषणरखवारी॥
ह्वैहै रामभद्र कल्याना। पावहिं विजय राम सुखदाना॥

दोहा-सुनि नरेश तब प्रेमकरि, सौंपदिये दोउ भाय।
मेरेप्राणअधार दोउ, सो जानहु ऋषिराय॥

मगकानन वेढर मधु जाता। मुनितुमहौंपितुसमदोउत्राता॥
विश्वामित्रहिये सुख भारी। मनहु रंक निधिपाय सुखारी॥
बोले धन्य धन्य नृपराई। दीनों अपनो वचन निबाई॥
अर्थसिद्धि सब होय तुम्हारी। रक्षा कीन धर्मकी भारी॥
वृत्ति पूर्वजनकी जो आही। सो तुमने भलिभाँति निबाही॥
धर्म अर्थ कामादिक जोई। तुमको सुलभ होय सब सोई॥
राम देत जो दुख मन माना। तितनोइ सुख पैहौ मतिमाना॥
रामप्रेमविन धर्म न कोई। सुलभकीन नृप तुमने सोई॥
फूलहि फलहि राजभू सारी। धीरजदयाशौचतपधारी॥
मृदुता तोष क्षमा गण जेते। नृपति वसहिं तुम्हरे उर तेते॥
निरभिमान वलज्ञान निधाना। हरत पराई पीर सुजाना॥
विनयशील वशकरन सुवानी। प्रजापाल तत्पर गुणखानी॥
मुदितरक्षत नृपनीति सुजानत। मूढन दशा कबहुँ नहिं ठानत॥
न्यूनसमान वशीकरि राखत। श्रेष्ठजननसों वचन सुभाषत॥

छन्द-तुम भाइ गुरु पितु मित्रको अरिओर लखि वधकरतहो।
अरिअन्तकृत सम सन्त सन्तति प्रिय वचन अनुसरतहो॥
तुम शत्रुगणको नाश करिकै पुनि कृपा मन धरतहो।
जे चपल तिनको करत स्थिर कर्मलखि फल भरतहो॥

अति पाय विश्वासी तथापी रहत नहिं निश्शंकहो।
है नहीं विश्वास जिनको रहत शंकित अंकहो॥
जे योग्य चरबर कर्मके परदेश तिन पठवत अहो।
वेषधारि बहुभेद लावत सदा सब जानत रहो॥
तुम रहत नित्य प्रसन्न सबसों कार्य देखत निठुरहो।
मंत्र राखत गुप्त अपनो सावधानी नयगहो॥
दीनरक्षत तुम सदा कृतकार्य रखत न साथहो।
निःशेषकार्य न करत परको रखहु कछु निज हाथहो॥
प्राप्तभय लखि तुरत ताको करत दुसह उपायहो।
जो कार्य आगे होय प्रथम विचार करत सुभायहो॥
तुम काल देश स्वभाव गुणलखि कार्यमें चित देतहो।
सुर सन्त विप्रन तोषकरि आशीश तिनसन लेतहो॥
मत त्याग नास्तिक आयव्ययकेलखनमें चितधरतहो।
गज अश्व गढ भट कार्य सबको देख पोषण करतहो॥
तुम श्रमकिये अनुसार फलदे ज्ञात देशन नामहो।
मालाग्रुहत इकडोर माली तथा तुम कृतकाम हो॥
अन्न जल पट शस्त्रअस्त्रन सदा अर्जन गुनतहो।
निजवश्यमें नरनाह जो ले संग तिनकी सुनतहो॥
जो पंगु रुग्ण अनाथ तिनकी करत तुम प्रतिपालहो।
वेदबुधसुरमंत्रको नमि करत कार्य विशालहो॥
व्यापारिजनसे लेत कर घर क्षेम पहुँचावत अहो।
युद्धव्यय नहिं लोभ लावत चपलता नहिं चितगहो॥
जो काज करहि सुधारहित सो देत तिहि धन भूरिहो।
मन वचन क्रम हरिभक्ति रखकरिरहत अघते दूरिहो॥

निजवंशपाल समान मुदप्रद ब्रह्मके पितु आपहो ।
कहा प्रशंसा करहुँ तुम्हरी विदित पूर्णप्रताप हो ॥
दोहा–निजपुत्रनको शोच तुम, करहुन कछु मनमाहिं ।
तीनलोक चौदह भुवन, इन्हैं दुःख कोउ नाहिं ॥
सब माता सुनि व्याकुल भारी । तब रघुपति मायाविस्तारी ॥
द्वादशिके दिन पारण करिकै । मात पिताको धीरज धरिकै ॥
भूषणवसन अंग शुभ सारे । धनुशर कर तुणीर कटिधारे ॥
मातुपिता पद शीश नवाई । पाय अशीश चले रघुराई ॥
चलत बिदा कीन्हों हनुमाना । आयमिलैं वन कह्योसुजाना ॥
कहत सुनत बहु कथा पुरानी । लख्यो तपोवन शारँगपानी ॥
परिवादिना ताड़का कानन । दिखरायो मुनिवर जगतारन ॥
सन्मुख तुरत ताड़का धाई । नारी लखि प्रभु रहेचुपाई ॥
तब कह ऋषी होय द्विजद्रोही । तिहि वध पापनहींयहओही ॥
दोहा–दीरघजिह्वा कन्यका, वैरोचनकी जोय ।
ताको मारो इन्द्रने, अयश न पायो सोय ॥ १ ॥
असुरहितैषी भृगुतिया, तिहि हरि किय संहार ।
परशुराम वधमातु किय, तुम कत रुकत कुमार ॥ २ ॥
गुरुआयसु सुनि कृपानिधाना । धनुष चढाय तज्यो इकबाना ॥
लागत बाण छुट्यो तनु जबहीं । भई सुघर सो भामिनि तबहीं ॥
स्तुतिकरि निजलोकसिधारी । तबमुनि हृदय हर्षकरिभारी ॥
विद्या प्रभुको अमित शिखाई । अस्त्रशस्त्रकी सब कुशलाई ॥
लगै न जाते क्षुधा पियासा । बल अपार तनु तेजप्रकाशा ॥
पहुँचे ऋषि आश्रममें जाई । रहे एक दिन तहँ रघुराई ॥
। प्रभु कहा यज्ञ अब ठानहु । काहूभाँति न तुमदुखमानहु ॥

ऋषि तब कियो यज्ञआरम्भा । करनलगेतबनिशिचरदम्भा ॥
सेनाले सुबाहु मारीचा । विघ्नकरन को आयो नीचा ॥
छन्द-जब विघ्नहित आयो असुर तब राम धनुशरकर लियो ।
तजि कठिन तीक्षण बाण असुर सुबाहुको वेधो हियो ॥
मारीचके इक बाण मारो जाय सागरतट गिरचो ।
असुरसेन सँहार लछमन क्षणकमें सबदल मरचो ॥
दोहा-सुमनवृष्टि नभ संकुल, सुरकह जैजैकार ।
बिनु प्रयास खलगण हने, कौशल राजकुमार ॥
इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर विश्वामित्रमखरक्षणोनाम
षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

दोहा-विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिरि राम सुखदान ।
अग्निवेषयुत कहौं कछु, पद्मपुराण बखान ॥
यज्ञ भयो इमि पूर्ण सुहावा । आशिर्वाद सबहिंसन पावा ॥
कछुदिन तहाँ रहे भगवाना । जनकदूत पुनि आय तुलाना ॥
कह्यो कि तुम्हें विदेह बुलावा । सहितसमाजसुनतसुखपावा ॥
तब मुनि कही रामसन बानी । चलहुधनुषमखहितसुखदानी ॥
भलेहि नाथकहि सहितसमाजा । चले यज्ञदेखन जगराजा ॥
वनमें एक शिला लखिपाई । मुनि कहदीजै चरण छुवाई ॥
पूछ्यो कारण मुनी सुनावा । गौतमशापकथानक गावा ॥
इकदिन इन्द्र कही जगमाहीं । सुन्दरिअधिकतिया कोआहीं ॥
कही अहल्या सुन्दरताई । सुरपति गौतमआश्रम जाई ॥
जो पहिले विधिसे इन माँगी । दई न इन्द्र रहे अनुरागी ॥
मुनिआश्रमढिग मुरगा बनिकै । बोलतभये प्रात सुनिगुनिकै ॥
गौतम न्हानगये जब गंगा । गौतमवपुधारि इन्द्र अभंगा ॥

जाय अहल्यासँग रतिठानी। सोऊ मुनि अस रही लुभानी॥
इत गंगाने वचन सुनाये। है छल गेह सुनत मुनि धाये॥
इत आश्रममें मुनि पगधारा। सुरपति इत निकसे ह्वै द्वारा॥
लखि मुनि शापदियो तत्काला। इकभगहित ऐसो तव हाला॥
होंय सहसभग अंग तुम्हारे। पुनिनिजतियहिकह्यो रिसभारे॥
शिलाहोय इत सहु दुख भारी। तबतिनकरीहितविनयउचारी॥
कह मुनि रामचरणरजपाई। होयतीयपुनिमम ढिगआई॥
करी इन्द्रने विनय महाना। तबऋषिइहिविधिवचनबखाना॥
करिहौ यज्ञ जबै सुरसांई। भग ह्वैजैहैं आँखि सुहाई॥
ताते पद प्रभु देहु छुवाई। हरिदिन पद लायो रघुराई॥
परसत चरण देह निज पाई। हाथजोरि अस विनय सुनाई॥
जयजयजयहरिअजअविनाशी। प्रेरक सर्व परम सुखराशी॥
ब्रह्म अनादि अखण्ड अमाया। राम अकाम स्वभाव बताया॥
तव पदकमल अमल सुखदाई। तिन्हैं परस मैं निजगति पाई॥
यह पद भवनाशन हित गाये। ये पद शंभु रहैं हिय लाये॥
जे विषयी मोहित तव माया। तिहिं मदछक्के ज्ञान नहिं दाया॥
ते नर होत आश्रित नाहीं। तव पदपंकज दिये भुलाहीं॥
जिनके अहैं भाग्य बड़भारी। ते जनप्रभुसुधिकरततिहारी॥
मुनिको शाप अनुग्रह माना। बिनुश्रमआयमिलेभगवाना॥

दोहा—इहिविधि अस्तुति कीन बहु, पाय भक्ति वरदान।
पहुँची सो पतिलोकमें, गौतम लखि सुखमान॥

पुनि मुनि संग चले सुखधामा। जाय गंगको कियो प्रणामा॥
किहिविधि जगमें आई गंगा। मुनिवरण्यो सबकथा प्रसंगा॥
याहि भगीरथ तपकारि लाये। पुरुषा स्वर्गलोक पहुँचाये॥

मुनि सब प्रेम समेत नहाये। विप्रन दान बहुत विधि पाये॥
पुनि सब चले सहित रघुवीरा। पहुँचे जाय जनकपुर तीरा॥
वन उपवन बहु भाँति सुहाये। जहँ तहँ नृपगण रहे सुभाये॥
नगरमाहिं अति सुघरबजारा। धनिक कुबेर समान अपारा॥
राजमहलकी शोभा जैसी। को कवि वरणिसकैकहितैसी॥
जहाँ वसत सीता सुखदाई। तिहिपुरशोभाकिमिकहिजाई॥
शुचिथलनिरखि कह्योतब रामा। इहिथलकीजियमुनिविश्रामा॥
उतरे मुनि मुनि सहितसमाजा। यहसुधिसुनिमिथिलापतिराजा

दोहा-उपरोहित मंत्रिनसहित, मुनिढिग पहुँच्यो जाय।
शिर नायो मुनिनाथकी, बैठे आज्ञा पाय॥

कुशलप्रश्न कहि नृप बैठारे। नृप जबहीं दोउ बन्धुनिहारे॥
थकितभये नृप कहि मृदुवानी। किनके सुतयहमुनिविज्ञानी॥
नृपकुलतिलककिमुनिकुलजाये। अथवा ब्रह्मरूप धारि आये॥
इन्हैं देखि निर्गुण गति भूली। रहि इनके आननमतिझूली॥
हम भरिजन्म सुकृत जो कीन्हें। हो प्रत्यक्ष सो दर्शन दीन्हें॥
कह मुनि सत्य तुम्हारी वाणी। यहप्रियसबहिंजहाँलगिप्राणी॥
कौशलपति दशरथ नृप जोई। राम लषण तिनके सुत सोई॥
लायो इन्हैं यज्ञ रखवारी। कीन्हें अभय निशाचरमारी॥
पदरजदे तारी मुनि बाला। आयेलखनधनुपमखशाला॥
नृप सुनि महामोद मन पाई। गाधिसुवनकी कथासुनाई॥
इनकर विभव जात नहिं जाना। सुरपतिजिनते रहतसकाना॥
तप बल दूजी सृष्टि उपाई। ब्रह्मा इन्हैं दियो वर आई॥
क्षत्रवंशमें जन्म सुहाना। हविषब्रह्ममय सब जगजाना॥
ऋषि वशिष्ठसे भयो कलेशा। ब्रह्मर्षिहिहिततप्योनरेशा॥

ब्रह्मा सो दीन्हा वरदाना। मे तव यह तपतेजनिधाना ॥
तपबलते जिन नदी सुहाई। विदित कौशिकी दीन बहाई ॥
गुरुअपराध त्रिशंकू कीन्हा। शरणदेइ सुरपुर पठदीन्हा ॥
ऐसे जिनके कर्म सुहाये। विदित पुराणनमें मुनि गाये ॥
सुनि मुनि हिये माहिं सुखमानी। बोले परममनोहरवानी ॥
किहिके उभय लोक हैं नाहीं। किहि परलोकहेत श्रममाहीं ॥
कोउ सुखी दोउलोकमँझारी। तिनमें तुम नृप नयधुरधारी ॥
दोनहुलोक साध तुम लीन्हें। प्रजापाल नयकरि वशकीन्हें ॥
कह नृप यह सब कृपा तिहारी। अस कहि लाये नगरमँझारी ॥
सुन्दर महल निवास कराई। गये पूज निजगृह नृपराई ॥

दोहा—यहां ऋषियसह रामजू, करि भोजन विश्राम।
पहर तीसरे मुनिनिकट, गमने कीन प्रणाम ॥

कह्यो लषण पुर चाहत देखी। कह ऋषि देखहु जाय विशेखी ॥
चले दोउ जन आयसु पाई। यह सुधि सुनसब लोग लुगाई ॥
देखनको अतिआतुर धाये। लोचन सफल किये लखपाये ॥
कहहिं परस्पर मिल सब कोई। इन सम रूप अपर नहिं होई ॥
देवनहूके रूप न ऐसे। ये दोउ बन्धु मनोहर जैसे ॥
धन धन मातुपिता जिन जाये। धन्य सु नगर जहांते आये ॥
ते धन धन पुरवासी अहहीं। जब तब इन्हें विलोकतरहहीं ॥
कोउ कह धन्य दरश हम पावा। कोउ कह सीताभाग्य सुहावा ॥
जिन भलि जोरी दीन मिलाई। कोउकहकठिनव्याहयहभाई ॥
बिनु धनु उठे व्याह किमि होई। कोइकहकार्यकराहियहसोई ॥
इन मगमें गौतमतिय तारी। वधे सुबाहु असुर छलकारी ॥
कोउ कह ऐसहि होय विधाता। जो सबविधि हमकोसुखदाता ॥
कोउ कह इन्हें भूप जब देखी। प्रणतजिकरहिविवाहविशेखी ॥

कोउ कह नृपति विलोके जाई। प्रण नहिं तजो रही हठछाई॥
कोउ कह मन अस होत उछाहा। सीय रामकर होय विवाहा॥
जो संयोग बने अस आई। जब तब दरश मिलैं सुखदाई॥
बार बार नृप सीय बुलावैं। यह दोउ बंधु लेनको आवैं॥
तब तब हम सब दर्शनपाई। कोउ कह ममदृग गये समाई॥
हमैं विधाता यह वर दीजै। लोचनओट न इनको कीजै॥
जो न होत बड़भाग्य हमारा। तौ कहँ देखत युगलकुमारा॥

दोहा-"फिरकीसी थिरकी फिरैं, खिरकिन खिरकिन नारि।
सिरकिन तजि रघुनाथछबि, निरखहिं पलकबिसारि॥१॥
अनव्याही संशयकरैं, व्याही लेत उसास।
गौनेकी मौने रहीं, देख राममृदुहास॥ २॥
नयनओट हो जायँ जिहि, सो मानत जियहानि।
कोउ कह तुम भल देखिलिय, हमनसकींपहँचानि॥ ३॥

कोउ कह मम मन लीन चुराई। सखि साँवल कुमार सुखदाई॥
कोउकह जगमें अस सखि कोहै। इनको रूप न लखि जो मोहै॥
कोउ कह सत्य वचन उचारे। मोहलिये मन विवश हमारे॥
अब पुनि कब इन दरशन पैहैं। लखिहैं रंगभूमि जो जैहैं॥
कोउ कह स्वप्नेकी निधि सारी। बिनु सम्बन्ध पाव को नारी॥
कोउ कह जो विधि होय दयाला। तौ तोरहिं यह धनुष विशाला।
नहिं तौ इनके दर्शन दूरी। हैं सखि यही सजीवन मूरी॥
इहिविधि जहाँ तहाँ सब नारी। प्रभुहि बतावैं हाथ पसारी॥
सबको दरश देत रघुराई। रंगभूमि पुनि पहुँचे जाई॥
अति विचित्र रचना तिहि केरी। देखत अनुजसहित प्रभु हेरी॥
संग भये बालक अधिकाई। प्रभुहि दिखावैं निकट बुलाई॥

प्रेम विवश प्रभु तिनढिग जाहीं । पूछहिं नाम प्रेम दरशाहीं ॥
जाकी तनुइच्छासे माया । रचिडारै ब्रह्माण्डनिकाया ॥
सो प्रभु चकित लखैं धनुशाला । भक्तवच्छल प्रभु दीनदयाला ॥
इहिविधि लखिगुरुकेढिगआये । सादर चरणन शीश नवाये ॥

दोहा-संध्याकरि विश्राम लिय, जागे पुनि लखिप्रात ।
गुरुआयसुलहि सुमनहित, चले सुदित दोउ भ्रात ॥

भूपबागमें पहुँचे जाई । जहँ वसन्त नित रहत लुभाई ॥
विविधभाँति तरुगण सब फूले । गुंजतरहैं भ्रमर नित भूले ॥
मध्य बाग सरशोभा भारी । परमरम्य मुनिजनमनहारी ॥
मणिन जटित सोपान सुहाई । जिहिनिरखतमनजायलुभाई ॥
तिहिके निकट भवानीमंदिर । मणिगणजटितसबहिविधिसुन्दर
चहूँओर फूली फुलवारी । जहँ तहँ बनीमनोहरक्यारी ॥
मालीगणसे पूछे दोउ जन । तोरनलागे फूल मुदितमन ॥
गिरिजापूजनहित तिहि काला । आई सीय सखीसँग बाला ॥

दोहा-करिसरमज्जन सखिनसह, गवनी गौरिनिकेत ।
प्रेमसहित पूजा करी, वरवांछितके हेत ॥ १ ॥
एक सखी सब संग तजि, गई लखने फुलवाइ ।
ते दोउ बंधु विलोकि तहँ, आई सियढिग धाइ ॥२॥

बोली सखि यहिबागमँझारा । आयेहैं दोउ राजकुमारा ॥
श्याम गौर दोउ परमसुहाये । सोइ धन्य जिन वे लखिपाये ॥
जिनकी शोभा कही न जाई । छोडसकलदेखहुसखिआई ॥
कह इक सखी होइहैं सोई । जिन मोहे पुरजन सब कोई ॥
वर्णत छवि जहँ तहँ नरनारी । अवशि चलहु सब लेहिं निहारी
सियहिय बात भली यह लागी। चली सखिनसँग जियअनुरागी

विटपओट देख्यो तिन जबहीं । गइ अपनपो भूल सब तबहीं ॥
सुधि न रही सीतहि तत्काला । श्याम शरीर बसो हियआला ॥
धारि धीरज तब सखिन जगाई । इत सन्मुख दरशे दोउ भाई ॥

दोहा-अंग अंग छबिसों भरे, भूषणयुत सब गात ।
हाथन दोना सुमनके, प्रेमभरे दोउ भ्रात ॥

लखि सियहीय परम सुखपावा । पुनिपितुप्रणलखिभोपछतावा ॥
कहैं सखी नृप प्रण तजिदेहीं । साँवर कुँवर व्याहि मुद लेहीं ॥
भूलिरहीं कछु कही न जाई । इत सियलखि बोले रघुराई ॥
तात जनककी सुता सयानी । नृप यहिहेतु धनुषमख ठानी ॥
जासु अलौकिक सुन्दरताई । मम मन स्वच्छ क्षोभ दरशाई ॥
मोरे जिय विश्वास अपारी । नहिं परनारिनओर निहारी ॥
फरकत दहिन अंगहू भ्राता । कारण जानै सकल विधाता ॥
कह लक्ष्मण होनी जो होई । प्रथम आय दरशावत सोई ॥
इहिविधि लक्ष्मणते बतरावत । प्रभुमन सियके रूप लुभावत ॥
कह्यो सखिन अबघरचलसीता । होत अबेर लखे मन चीता ॥

दोहा-तब सिय प्रभुमूरति हिये, धारि चलि गौरिनिकेत ।
करि प्रणाम पुनि पूजकर, अस्तुति करहि सहेत ॥

जय जय जय गिरिराजकुमारी । आदिशक्ति जयशिवहिपियारी ॥
वेद न जानत अमित प्रभावा । जगवजननितवयश जगछावा ॥
जे गणपतिषट्मुखकी माता । पतिव्रतप्रथमरेख विख्याता ॥
जगउत्पाति पालनलय कारिनि । जयनिजजनकेकाजसँवारिणि ॥
सेवत तुम्हैं चार फल पावैं । जन्म जन्मके दुख बिसरावैं ॥
विश्वविमोहनिजनवरदायिनि । स्ववशविहारिणिशिवमनभायिनि ॥
जे पूजहिं पदकमल तिहारे । सुरमुनिनरसबहोहिंसुखारे ॥

मोर मनोरथ सब तुम जानहु। ताते प्रगट न तुम्हैं बखानहु॥
अस कहि सुन्दर माल चढाई। द्वौ पद गहि सिय रहीचुपाई॥
तब गौरी मन हर्ष बढाई। मृदुवानी अस सियहि सुनाई॥

दोहा–सुनि सिय सब शिरमौरतुम, सबजगसिरजनहार।
मोहिं बडाई देनहित, कीन्हीं विनय उचार॥१॥
तातें सत्य अशीश मम, पूर्णहोय मनकाम।
नारद वचन न झूँठ कहुँ, पावहु वरघनश्याम॥२॥

जो मनमें तुम कीन विचारा। सो पावहु साँवर सुकुमारा॥
सकुचि सीय तब धाम सिधारी। प्रभुहिय मूरति लिखी सँभारी॥
पुष्पदेय सब चरित बखानी। ऋषी अशीषदीन मृदुवानी॥
पूजाकरि तब मुनि अस भाषा। पूजहि सब तुम्हारि अभिलाषा॥
इहिविधि सोऊ दिवस बिताई। संध्याकरनलगे दोउ भाई॥
प्राचीदिशिलखि चंद्र सुहावा। सियमुखसदृश जानसुखपावा॥
पुनि मनमें अस कियाविचारा। नहिंसियमुखसमचन्द्र असारा॥
घटै बढै दिनमाहिं मलीना। ग्रसै राहु जब तब बलहीना॥

दोहा–सुरतिय शारद रति रमा, आदिक जे वरनारि।
तेनहिंसियसमहैसकत, मनकरिदीखविचारि॥१॥
गिरा मुखर तनु अर्धशिव, प्रियाअतनुरतिकन्त।
विष वारुणि तिहि बंधु अस, रमासदृशाकिमि सन्त॥२॥
जो छवि सुधापयोधि हो, कच्छपरूप अपार।
शोभारजु मंदर बनै, सबजगको शृंगार॥३॥
मथे पाणिसे मारु निज, इहिविधि लच्छिउपाय।
तदपि शोच संकोचयुत, सियसम सो कहिजाय॥४॥
इहिविधि करत विचार प्रभु, निजथलपौढेआय।
अरुणोदय लखि प्रातही, उठिबैठे हरषाय॥५॥

उठहु लषण अरुणोदय होई। काहुहिदुखदकरहि सुख कोई॥
उठे लषण बोले मृदुवानी। प्रभुप्रताप रविउदय महानी॥
विकसे सन्तसरोज अनूपा। ह्वै मलीन तारागण भूपा॥
अघउलूक खल दुरे पराई। भृगुपतिशशि मलीनतापाई॥
पुरजन भृङ्गराजसम डोलहिं। जहँ तहँ कलरवसमकरिबोलहिं
बंधुवचन करि प्रभु मुसुकाई। शुचि ह्वै सरवर न्हाये जाई॥
ह्वै निचिन्त आये गुरुपासा। बैठे सुनन लगे इतिहासा॥
शतानंद तिहि अवसर आये। कह्यो चलहु सबनृपतिबुलाये॥
ऋषियनसहितलषण अरु रामा। चले लोकलोचनसुखधामा॥
रंगभूमि दोउ कुँवर पधारे। आये जुटि बहु देखनवारे॥
वह शोभा कछु कही न जाई। जनु छबिसागर उमड्यो आई॥
जनक नारिनर सब बैठारे। ऊंचनीच निज २ अधिकारे॥
जिहिंके मन जस रह्यो विचारा। तिन ताहीविधि प्रभुहिनिहारा॥
योगिन ब्रह्म नृपन नृप वारे। बुध विराट भक्तनसुखकारे॥
सुरन ईश असुरनने काला। शिशुन सुहृदमनसिजसमबाला
जनकजनकरानिन यामाता। तिनके बंधुजनन निजनाता॥
वैदेही देख्यो जिहि रीती। सो कछु कहीजात नहिं प्रीती॥
सबके मन भो यह विश्वासा। धनुष तोरिहैं प्रभु सुखराशा॥
नृपरचना सब मुनिहि दिखाई। कौशिकऋषिलखिकीन्हबड़ाई
सबमंचनते मंच सुहावा। मणिरचनाकरि सुघर बनावा॥

दोहा-मुनिसमेत दोउ बंधु तहँ, नृप बैठाये आन।
नृपतारागणसे मनहुँ, दो शशिआय तुलान॥

चितवैं सबहि रामकी ओरा। जिमि चंद्रहिलखियूथचकोरा॥
सब नृप तबहिं हार जियमानी। बोले भले भूप अस बानी॥

चलहु भवन फिरिचलिये भाई। सिय वरिहैं धनु हनि रघुराई॥
बिनु भंजेउ धनु सीय कुमारी। देहैं माल रामगरडारी॥
सुनि अस कुटिलभूप असबोले। बैठरहो निजथलन अडोले॥
तोरे धनुष व्याह कठिनाई। बिनुतोरे को कुँवरि विवाई॥
एकबार कालहुसन लरहीं। सियहित समरभाँतिबहुकरहीं॥
सुनि सज्जन नृपकह मृदुबानी। गालबजावनते बडि हानी॥
जगतपिता रघुनायक अहहीं। इनको परब्रह्म मुनि कहहीं॥
जगन्मात सियको मन जानहु। इनसे नहीं कुटिलता ठानहु॥
त्रिभुवन तीन काल जगमाहीं। इनको जीतिसकै कोउ नाहीं॥
चितके सकल विकार विहाई। लोचन सफलकरहु सब भाई॥

दोहा—करहु जाय जिहि जो रुचै, जीवनफल हम पाय।
तिहि अवसर बंदीसकल, पठये जनक बुलाय॥

कह्यो मोरप्रण कहिये जाई। बोले बंदी भुजा उठाई॥
सुनहु सकल जगकेर भुआला। जो उठाय शिवचाप विशाला॥
त्रिभुवनजय समेत सो सीता। पावहि निश्चय परम पुनीता॥
सुनि हियहर्ष इष्ट शिरनाई। उठे भूप धनुहित बलदाई॥
निज २ शक्ति तोलि धनु धरहीं। उठै न कोटिभाँति बल करहीं॥
बैठहिं लज्जा शीश नवाई। तब सबमिलअसकीनउपाई॥
चलहु सबहि मिलि लेहिं उठाई। पुनि बरिहै जो जितै लराई॥
दशसहस्र इकसंग नृपाला। लगे उठावन नेकुनहाला॥

दोहा—भये हास्यके योग्य जिमि, बिनु विरागसंन्यास।
चतुर गये नहिं चापढिग, देखत रहे विलास॥१॥
लखि विदेह आतुर भये, बोले वचन गँभीर।
देव दनुज नर नागकी, विपुल भई ह्यां भीर॥२॥

धनुष चढावन कौन कह, तिलनहिं सके हटाय।
सियको पावनहार विधि, जगमें नहिं जन्माय ॥२॥
ताते सब निज २ घर जाहू। लिख्यो न विधि वैदेहिविवाहू ॥
अब भट रह्यो भूमिपर नाहीं। यह निश्चय जानी मनमाहीं॥
जो यह बात प्रथमते जानत। काहे कठिन रूप प्रण ठानत ॥
सुकृत जाय जो प्रण तजिदीजे। रहो कुमारिकुँवरि क्याकीजे ॥
सुनत वचन पुरके नर नारी। सीतहिलखिभेव्याकुलभारी ॥
शरसम वचन लषण सो माने। ठाढ़ होय इमि बैन बखाने ॥
नाथ जनककहि अनुचित वानी। विद्यमान प्रभु तुमको जानी ॥
तिहिते जो प्रभु आयसु होई। कौतुक आज लखैं सब कोई ॥
कन्दुकसम ब्रह्माण्ड उठाई। धनुषसहित खण्डों रघुराई ॥
जो नहिं करहुँ शपथ अस करहूं। पुनिनिजहाथधनुषनहिंधरहूं ॥
लषण क्रोधकर अस जब बोले। थरथराइ भू दिग्गज डोले ॥
दोहा- सियसमेत पुरजन सुखी, जनकहिये सकुचान।
प्रभुसैनहि वरजे लषण, बैठे निजथल आन ॥
तब ऋषि प्रभुते वचन उचारा। उठहु राम भंजहु धनुभारा ॥
उठे तुरत गुरु आयसु पाई। सहज स्वभाव चले रघुराई ॥
सबमुनि सन्त भयो सुख भारी। हर्ष शोकवश पुरनरनारी ॥
जनकरानि रामहि लखि बोली। सखि नहिं बुद्धिभूपकीडोली ॥
यह बालक जानत संसारा। किमि तोरिहैं शंभुधनुभारा ॥
बैठे बुधजन सभामँझारी। कोउनहिं वरजतरामहिं आरी ॥
कहँ शंकर धनु घोर कठोरा। कहँकोमलतनु रामकिशोरा ॥
बालकको धनुनिकट पठाहीं। हंससुवन किमि मेरुउठाहीं ॥
दोहा-बोली सखी सयानि इक, तेजवन्त जे होंय।
तिन्हैं न लघुकर जानिये, कहत शास्त्रलखिसोय ॥ १ ॥

तनुपावक जारै विपिन, वामन नपि ब्रह्मण्ड।
रविमण्डल लागै लघू, दिपै प्रताप अखण्ड ॥ २ ॥
प्रणवमंत्र अतिशयलघु अहही। तीनों देव तासुवश रहही ॥
अंकुशलघु करिको वशकीना। ऋषि अगस्त्य सागरपीलीना॥
भृगुसुत च्यवन जन्मके काला। असुरपुलोमहिवध्योविशाला ॥
वालखिल्य अंगुष्ठ प्रमाना। मर्दन कियो इन्द्र अभिमाना ॥
ऐसहि रघुपति धनुष उठैहैं। सियसह तीनलोक जय पैहैं ॥
सुनि रानी मन धीरज धारी। सियप्रभुलखिभइव्याकुलभारी॥
कमठपीठ सम धनुष कठोरा। माधुरि मूरति गात किशोरा॥
कौन भाँति जिय धीरजधारौं। कठिनपिताप्रणकिमिनिरवारौं॥
हेगणपति हेगिरिजामाई। आजहेत कीन्हीं सेवकाई ॥
हेधनु निरखि प्रभुहि हलकावो। हेशिव रक्षाहित इत आवो ॥
जो मन वचन कर्म गति मेरी। श्रीहरिके पद रहत घनेरी ॥
दोहा-तौ सब घटवासी अजित, अविनाशी भगवान।
चेरि करहिं रघुनाथकी, यह वर मिलै न आन ॥

इति श्रीविश्रामसागर सवमतआगर ग्रंथउजागर रामरंगभूमिआगमनो नाम सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

दोहा-विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिरि रामसुखदान।
वरणौं मानसमत कछुक, सकल सुमंगल खान ॥
सिय यहिभाँति कियोप्रणजबहीं। जानलियो रघुनन्दन सबहीं ॥
पुनि चितयो अस धनुकी ओरा। करिहिलखतजिमिसिंहकिशोरा॥
लषण लख्यो प्रभु तोरैं शिवधनु। लोकपालकियसजगताहिछिनु॥
पगते चाप भूमिको लीना। प्रभु धनुनिकट गमनतबकीना॥
गुरुप्रणामकर धनुष उठावा। शशिमण्डलसम भयो चढ़ावा ॥

लेत चढ़ावत खैंचन माहीं । ठाढ़े सबै लखे किहुँ नाहीं ॥
तीन खण्ड इमि धनुके करिके । डारिदिये महि नृपहिय दरिके ॥
तिहिक्षण शोर भयो अति भारी । कमठ कोल डोले बहुबारी ॥
नृप सिंहासन गिरे अनेका । ते हढरहे जु कीन विवेका ॥

दोहा-हरषे पुरनरनारि सब, सियहिय मोद अपार ।
पुरनारी गावन लगीं, प्रभुके मंगलचार ॥

जनकहिये सुख कह्यो न जाई । जन्मदरिद्र मनहु निधिपाई ॥
देवन मुदित दुन्दुभी दीन्हीं । पुष्पवृष्टि बहुभाँतिन कीन्हीं ॥
गुरुनृपआयसु सीता पाई । रघुनायकके ढिग तब जाई ॥
सो शोभा कछु कही न जाई । दहिने कर जयमाल सुहाई ॥
संग सखी गावहिं सुकुमारी । सियजयमाल रामगरडारी ॥
सो छबि कहि न जात मुहिंपाहीं । शेष शारदा कहत सकाहीं ॥
कंकणमणिमें लखि प्रभु सीता । ठठकिरही देखत मनचीता ॥
रघुपतिगल सोहत जयमाला । जयजय धुनितहँ उठीविशाला ॥
पुनि सिय प्रभु आरती उतारी । सुभग सुमंगल गावहिं नारी ॥
कह सखिपदगहु प्रभुके सीता । छुवत न मुनितियगतिलखिभीता ॥

दोहा-भूषणमें मणि जटित अति, ह्वै न जाहिं कहु नार ।
छुवत न पद लखि नेहहँस, बिहँसे राम उदार ॥

सखिनसहित पुनि भवन सिधारी । भूपन कियो कुलाहल भारी ॥
कोइ कह सीतहि लेहु छिनाई । कोउ कह धरि बाँधो दोउ भाई ॥
जो विदेह बोलै इनओरा । तौ मारहु तिहिको बरजोरा ॥
सुनि सरोष तब लषण निहारे । भले भूप तव वचन उचारे ॥
जो अस बल धनु काहे न तोरा । अबकिमिकरतवृथाबकिशोरा ॥
तेज प्रताप नाकअभिमाना । धनुके सँग सब कीन पयाना ॥

तजि रिस देखहु रामविवाहू । इहिते अधिक न और उछाहू ॥
राजनके इमि वचन सुहाये । कुटिलनृपनके मनहिं न भाये ॥
धनुषभंग धुनि सब जग छाई । परशुराम सो कहुँ सुनि पाई ॥

छन्द–परशुरामकी कथा कहूं सज्जनमनभाई ।
गाधिराजकी सुता रूपकेशी कहवाई ॥
भृगुसुतऋषिको जाय अश्व दे कीन विवाहा ।
भृगु बोले वर माँगु कह्यो सुत देय उछाहा ॥
इक मोको इक मोरि मायको ऋषिसुत दीजै ।
तब ऋषि हवि दो देय कह्यो दोउभक्षण कीजै ॥
इकसे ब्रह्मस्वरूप मातुके क्षत्रिय होई ।
खाई तिन हवि बदल जानलीन्हों ऋषि सोई ॥
कह्यो तिया सों गर्भ तुम्हारे क्षत्रिय रूपा ।
तब माताके पुत्र होयगो ब्रह्म स्वरूपा ॥
तिन मांगो वरदान पौत्र तैसो मम होई ।
वरदीनो ऋषि सोय पौत्रसुतभेद न कोई ॥
तिनके भे जमदग्नि तपस्वी काननचारी ।
उत भे विश्वामित्र भई विधिसुतसों रारी ॥
कौशिकको दलसहित जिमायो ब्रह्माके सुत ।
तब माँगी नृप गाय वसिष्ठ न दीन तिन्हैं उत ॥
हारे विश्वामित्र कियो कानन तप जाई ।
तहँ विधिसे ब्रह्मर्षि महापदवी तिन पाई ॥
जमदग्निहि प्रसेन रेणुका सुता विवाही ।
भये परशुधर ज्येष्ठ सुअन हरिअंशकलाही ॥
इकदिन तिनकी माय गई जलहित सरितीरा ।

तहँ करिरहो विहार चित्रसेनहु मतिधीरा ॥
मोहिरही ऋषि जान सुतनसों वचन उचारे ।
देहु मातुशिर काट मौन सुन भे सुत सारे ॥
पुनि दिय इन्हैं निदेश परशुधर माय सँहारी ।
शुनि वरले निजमात जिवादी ऋषि तपधारी ॥
गये परशुधर तपन तबै हयहयसुत जाई ।
जमदग्नीको मार हरी सो कामद गाई ॥
परशुराम सुन कियो आय तिनकर संहारा ।
मारे क्षत्रिय सकल भूमिके इक्किसबारा ॥
विप्रनको सो भूमि दानमें सब देदीन्हीं ।
आपलगे तपकरन शंभुधनुधुनि सुनलीन्हीं ॥

दोहा-इत खरभर भइ नृपनकी, तिहि अवसर भृगुनाथ ।
गौरवर्ण शिरपर जटा, लिये परशु शित हाथ ॥

आये नृपनमध्यमें जबहीं । सिटपिटाय सकुचे नृप सबहीं ॥
अरुण नयनशुभतिलकलगाये । जासु ओर लखिलेहिं सुभाये ॥
सो जानै जनु देहैं मारी । खिसकिचले बहु नृपतिअनारी
वहुतनने चरणन शिरनावा । पितुसमेत निजनाम सुनावा ॥
सीतासहित जनक शिरनावा । दीन्ह अशीशमोद मनपावा ॥
विश्वामित्र कुँवरदोउ साथा । मिले प्रणामकियो रघुनाथा ॥
चरणपरत मुनिदीन अशीशा । रहे रामलखि थकित मुनीशा ॥
पुनि जनकहि असकह्योरिसाई । यहसमाज किहिविधिजुरिआई
पुनि धनुखण्डदेख - करिक्रोधा । बोले सुनहु नृपति निबोधा ॥

दोहा-वेग बतावहु धनुष यह, किन तोरो महिपाल ।
नाहित उलटौं भूमिसब, जितनो राजविशाल ॥

सो आवहि मम सन्मुखअबहीं । नतु मारे जैहैं नृप सबहीं ॥
सुनत नारिनर व्याकुल भारी । कुटिल भूप सुनि भये सुखारी॥
हिये न हर्ष विषाद कलेशा । बोले तब सुत अवधनरेशा ॥
सुनहु नाथ विधिगतिबलवाना ।तृणतेकुलिशकुलिशतृणजाना॥
कहां शम्भुको धनुष कठोरा । कहँ इक कुँवर हाथधरि तोरा ॥
सो यह दोष परचो शिर आई । काकताल जिमि न्यायकहाई ॥
सबप्रकार हम दास तिहारे । क्षमहु सु यह अपराध हमारे ॥
सुनहु राम जो कर सेवकाई । सोई जन तौ दास कहाई ॥
अरिकरणी करिहै जो कोई । सो किहिभाँति दास मम होई॥
तोरो जिन गुरुको धनु मेरे । करिहौं खण्ड तासु तनुकेरे ॥

दोहा-सुनत वचन भृगुराजके, लषणलाल मुसुकाय ।
बोले बालकवैसमें, धनु भंजे अधिकाय ॥

तब असरिसनहिंकियोमुनीसा । आज वृथाकिहि कारण रीसा ॥
तवमाताअघ त्रिपुरासुरकर ।अपरनृपनकरअवयाहिधनुपर ॥
रघुपतिभुजतीरथको पाई । दिये प्राणतजि धनु बरिआई ॥
बिन समुझे कत रोष बढ़ावत ।प्रभुको लखि परतोष न लावत॥
रे बालक मुहिं ज्ञानसिखावत । उन धनुहीं सम यहधनुलावत ॥
बंधुसहित वध करिहौं आजू । उलटिदेहुँ दशरथको राजू ॥
बोले लषण गाल कत मारहु ।करहु जु भावै लाहु न बारहु ॥
हमको सब धनु एकसमाना । यामें कहापरत नहिं जाना ॥
रह्यो घुनो छुवतहि भो भंगा । तापर वृथा करतहो जंगा ॥
जो अति प्रिय तौ लेहु जुराई । सुनि बोले भृगुनाथ रिसाई ॥
रे नृपबालक परशु निहारो । जिहिते नृपन बार बहुमारो ॥
भूमि बारबहु विप्रन दीनी । समरयज्ञ बहुभाँतिन कीनी ॥

तोको बालकजान अनारी। क्षमाकीन मैं देखिविचारी॥
मातपितहि जनि शोच करावहु। डारिहौं मारि न क्रोधभरावहु॥

दोहा—कह लक्ष्मण दिखरात किमि, फरसा बारम्बार।
फूंकनते तृण उड़तहैं, नाहीं बिकट पहार॥१॥
यद्यपि तुम केते सुभट, तद्यपि रविकुलमाहिं।
विप्र धेनु सुर साधुसे, कबहुँ न समर कराहिं॥२॥
वधे पाप हारे अयश, ताते करत न रारि।
अस विचार जो कहहु सब, सहिहैं रोष बिसारि॥३॥

गाधिसुअन यह बालक खोटा। चहयमलोककरहुममओटा॥
कहि मम सुयश वरजिये याको। नाहिंत मारिदेहुँ फल पाको॥
कौशिक मन कह परशु अयाने। जगतपतिहि बालककर माने॥
कह मुनिलक्ष्मण सुयश तुम्हारा। जगमें छायरह्यो विस्तारा॥
जो न सको कहि भाट बुलावो। तिनसे भलीभाँति कहवावो॥
शूर कबहुँ नहिं कृत्य बखाने। कादर करत प्रलाप अयाने॥
सुनि वाणी अस जनक डराहीं। पुरवासी कहँ आपुसमाहीं॥
भूपकिशोर छोट यहि अहही। मनमें कसक निडरतागहही॥
भृगुनन्दन इत परशु उठावा। युद्धदेहि अस कहि समुझावा॥

दोहा—कह लक्ष्मण इमि अपरकोउ, बोलत हमैं प्रचार।
तौ फिर देखत समर सो, को जीते को हार॥१॥
पूजेपर रिस जो करै, गुरुकर पदकर लोप।
पदपर राखै पाँव जो, नीचकर्म यह ओप॥२॥

कौशिक कहा क्षमहु अपराधू। बालकदोष गिनतनहिंसाधू॥
कह मुनि बच्यो जु अबतकबारो। केवल कौशिक शील तुम्हारो॥
नाहित काट एकपल माहीं। गुरुऋणउऋणहोतकसनाहीं॥

गाधिसुअन मनमाहिं विचारी। अयमय लखत ऊखतपधारी॥
कह लक्ष्मण जननी जब मारी। पितुऋणसे निज भये उधारी॥
गुरुऋण हमरे माथे लावा। विते बहुत दिन व्याज बढावा॥
सो व्यवहरिया आनहु जाई। तुरतदेउँ सब द्रव्य चुकाई॥
जो चरअचरनमाहिं समाई। तासु अनुज किमि सकहिडराई

दोहा–सुनहु जनक कटु बकत यह, मरन चहत मम हाथ।
बेगकरहु इग ओट यहि, परशुहरहि नतु माथ॥१॥
जासु घोर गर्जन सुनत, गर्भस्रवहिं वर नारि।
सो बालक तृणमूल सम, ह्वैजैहै जरि छारि॥२॥

बोले लषण मूँदिये नैना। लखे न कोउ पाइये चैना॥
अथवा कानन जाहु सुभाये। तुम्हें यहां नहिं काहु बुलाये॥
जरै गाततौ जलहि नहाहू। वैद्य बोलि ज्वर दोष मिटाहू॥
लषण निवार कह्यो तब रामा। नाथ बिगारो मैंने कामा॥
कृपाकोप मोपर मुनि कीजे। बालकको कछु दोष न दीजे॥
धनु शर परशु देखि कछु कहेऊ। जो मुनिवेष आवतै रहेऊ॥
तौ बालक पदरज शिरधारत। क्षमहु चूक अनजान उचारत॥
हमरे कुलकी रीति सदाहीं। कालहुते नहिं नेकु डराहीं॥

दोहा–परशुराम कहि कौन विधि, राम मोर रिस जाय।
अजहुँ विलोकत बंधुतव, करि भ्रूबंक रिसाय॥१॥
जो नहिं यहि फरसाहि हन्यो, तौ कीनो क्यारोष।
चलत न कर कुंठित परशु, चित भो मृदुल सदोष॥२॥

फिरो स्वभाव जानविधिकारन। नाहित करत अबै संहारन॥
कह्यो लषण मैं दास तिहारा। टूटा धनु न जुरै इहिबारा॥
अतिप्रिय जो तौ करहु उपाई। जोरिय कोर बडगुणी बुलाई॥

बैठहु ठाढ भई बडिबारा। सैनहि तब प्रभु लषण निवारा॥
तब भृगुपति बोले रिसिआई। तू विनवत उत भाइ बराई॥
करो समर नहिं डारौं मारी। निपटहि मोको विप्र विचारी॥
धनुष तोरकर अस अभिमाना। मानहु जितो जगत सब जाना॥
करत विप्रको जिमि अपमाना। याको फल परिहै अब जाना॥
सो तव मेटदेहुँ वल सारे। सुनि रघुपति तब वचन उचारे॥
विनवहुँ मैं तुम रिसहि उपावो। का अभिमान हु मोहिं सुनावो॥
जो हम निदरहिं द्विज मुनिराई। तो अस को जिहिं शीश नवाई॥
टूटो छूतहि धनुष पुराना। यापर कहा करहुँ अभिमाना॥
स्वामिहि सेवक कस रण होई। तुमते डरै अभय है सोई॥

दोहा-गूढगिरासुनि रामकी, उघरे हिये किंवार।
कह्यो परशुधर धनुष यह, लीजे करमें धार॥

आकर्षहु वैष्णवधनु येहू। दूर करहु मेरो सन्देहू॥
छुवतहि चाप आप चाढिगयऊ। तब मुनिवर पछतावत भयऊ॥
कह्यो राम तव सुकृत सुहाई। अथवा तव गति देहुँ नशाई॥
कह्यो परशुधर गति रखलीजे। अर्जितलोक छीनचह कीजे॥
छुटचो बाण गे लोक नशाई। परशुराम तब विनय सुनाई॥
जय दयालु सुरमुनिप्रतिपालक। मुनिमनहंस असुरकुलघालक॥
शोभासिंधु जयति गुणआगर। जय बलिष्ठ रघुवंशउजागर॥
जबतक जीव न सन्मुख होई। जय नहिं छूटत जगते कोई॥
जो अनजान वचन कछु भाखे। क्षमहु दोउ दाया अभिलाखे॥

दोहा-परशु गये वन तपनहित, प्रभुपर वर्षहिं फूल।
गावहिं पुरकी नारि सब, मिटी हृदयकी शूल॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ग्रन्थउजागर परशुरामरामसंवादवर्णनं नामाष्टमोऽध्यायः॥ ८॥

दोहा-विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिरि राम सुखदान।
वरणौं मानस मत कछुक, सकल सुमंगलखान॥

तब विदेह मुनिके ढिग जाई। पूछो अब क्या करहिं गुसाँई॥
कह मुनि व्याह चापआधीना। रह्यो सो भयो सुजान प्रवीना॥
तदपि होय जस कुलव्यवहारा। करहु व्याहउत्सव विस्तारा॥
नृप दशरथको लेहु बुलाई। आवहिं सुघर बरातसजाई॥
नृप दीनो मुनि पत्र लिखाई। दूत अवधपुर दिये पठाई॥
कार्त्तिकप्रथम बोल कारीगर। तिनते बनवायो वितानवर॥
कदलीखंभ कनकनिर्माये। मणियनपातअधिकछबिछाये॥
हरितमणिनके फल अरु पाता। बन्दनवार बँधी विख्याता॥
खम्भनमें सुरमूर्ति बनाई। मंगलद्रव्य लिये सुखदाई॥
मणिमय मुक्ताचौक पुराये। कंचन कलश सकल धरवाये॥
लालमणिनके दीप धराये। ध्वज पताक तोरण छबिछाये॥
मोतिनकी झालर बहु तेरी। लटकाईं शिलिपन जन हेरी॥
सो मण्डप किमि जाय बखाना। जहँ दुलहिनसिय वरभगवाना॥
नृपगृह सदृश नगर सब साजा। गृह गृह कंचन कलश विराजा॥
ध्वज पताक चहुँओर बजारा। झिलमिलकरैंमणिनउजियारा॥
श्री जहँ प्रकट रहीहै आई। कोकहिसक तहँकी अधिकाई॥
नृपविदेहकर चरित उचारा। अब कहुँ अवधचरितविस्तारा॥
रामलषणबिन कोशलवासी। मनमलीन जिय रहैं उदासी॥
कौसल्यादि बाट नित हेरैं। कब आवहिं ललना मम नेरैं॥
जबते मुनिवर गये लिवाई। तबते सुधि कछुहू नहिं पाई॥
भेजहु कोउ खबर जोलावै। मैया नित ऐसे पछितावै॥
तिहि क्षण दूत अवधपुर आये। खबरि कीन नृपनिकट बुलाये॥
करि प्रणाम दीन्हीं तिन पाती। रामांकित लखि लाई छाती॥

दोहा-पाती खोली प्रेमसे, पढनलगे नृप आप।
समाचार लखि रामके, दूर भये सन्ताप॥

स्वस्तिश्री सुन्दर अस्थाना। कौशलपुरजिहि सबजग जाना॥
कौशिक लिखी विदेहनगरते। मिलि बाँचिनी अशीश सुघरते॥
कुशल क्षेम तव सुत मम साथा। तेउ प्रणामकरत धरि माथा॥
तव प्रताप मम मख रखलीन्हा। पदरजधरि मुनितियगतिदीन्हा॥
जनकनगर देखी धनुशाला। जहाँ जुरे बहु नृपति विशाला॥
तहाँ राम किय हरधनुभंगा। सिय दीन्ही जयमाल अभंगा॥
परशुराम आये करि क्रोधा। गये बनहि पायो जब बोधा॥
अब तुम लाउ बरात सजाई। करहु रामको व्याह बजाई॥
जनकहु तुम्हैं करत परणामा। आवहु व्याहहेत श्रीरामा॥
पाती पढ़त भयो सुख जैसो। शारदहू कहिसकत न तैसो॥
भरत शत्रुहन दोनों भाई। आये सुनत पिताढिग धाई॥
पूँछी भाइनकी कुशलाई। नृप तब पत्री बाँचि सुनाई॥
सुनत दोउजन अति सुख पावा। नृपति दूत तब निकट बुलावा॥
सभासमेत नृपति अनुरागे। दूतहि देन निछावरि लागे॥
सो अनीति कहि लीन्हीं नाहीं। सुख सबहिन मानो मनमाहीं॥

दोहा-तब राजा गुरुगेह गे, दीन पत्रिका जाय।
बाँची ऋषि पायो हरष, बोले प्रेमजनाय॥ १॥
सुकृतीजनके सम्पदा, आवहिं बिना बुलायँ।
जिमि सबसरिता सिंधुमें, बिनबोले चलिजायँ॥ २॥
तुमते अधिके कौन जग, पुण्यवान नरपाल।
रामभरतरिपुहनलषण, जिनके सुवन विशाल॥ ३॥
करहु न राजन देर अब, जाय सजाहु बरात।
सुनत उठे नृप रानिढिग, जाय कही सब बात॥ ४॥

सुनि मन मुदितभई सब रानी । दीन्हें दान द्विजन सन्मानी ॥
पुरवासिन जबहीं सुनिपाई । भयो हर्ष सो को सक गाई ॥
निजगृह कलश सुमंगल साजे । घर घर विपुल बाजने बाजे ॥
नृपगृह सुन्दर बन्यो विताना । सुन्दरि तहाँ करहिं कलगाना ॥
विप्र वेदमंगलधुनि करहीं । बंदी बिरदावलि उच्चरहीं ॥
नृप सबदेशन खबर जनाई । चलहु बरात रामकी जाई ॥
देशदेशके राजा आये । नृप सबके आदर करवाये ॥
अवधपुरी सब कौशलदेशा । लीन्हों अपने संग नरेशा ॥
मंत्रिनते अस कह्यो बुलाई । चलिये बेग बरातसजाई ॥
सुनि सबपुरजन सजिसजिआये । सबहिनको रथमें बैठाये ॥

छन्द—बैठाय रथगजबाजिऊपर बरबरातिन साजहीं ।
मतवार सिन्धुरपर अँबारी कलशसुवरण राजहीं ॥
घंट घनसम बजहिं जिनके झूलडारी गाजहीं ।
बाँध कँलगी चढ़े नरपति लखि सुरेशौ लाजहीं ॥
बरबाजि रंग अनेक साजे जीन धरी सुहावनी ।
छमछम छमकैं घुघुरु चमकैं रालअरिमददावनी ॥
तिनपर कुँवर भरतादि राजैं गतिअनेकफिरावहीं ।
झिलमिल करहिं रथ रथी बैठे इन्द्रसमसुखपावहीं ॥
सुखपाल मोतिन लगी झालर रँगबिरंगीसोहहीं ।
विप्रगण तिनमें विराजत सुरगुरू मन मोहहीं ॥
बहु ऊंट खच्चर रेशमीपट डारि पाँतिनपाँतिहीं ।
ठाढे लदे बहुभारसौं जु बरात भाँतिनभाँतिही ॥
बालकनहित यान बहुते मणिजटित मँगवायकै ।
बैठारि सेवक संग कीन्हें रखहु इन चितलायकै ॥

बहुभाँति ढोल नफीर झाँझनबाँसुरीसुबजावहीं ।
मनहु भादौं मेघ गरजैं मोर कूक सुनावहीं ॥
हथियार बाँधे वीरवर शिरपाग अनुपमभावहीं ।
बहुभाँति व्यंजन संग शकट भरायलीने जावहीं ॥
सामान फरश बिछावने शमियान कहूं लदावहीं ।
मखमलगलीचा रेशमी दारि लदीं छबि दरशावहीं ॥
गहने विपुलसन्दूक भरि भरिसचिवगणलावतभये ।
बहुअतरकुप्पिगुलाबजलबहुपात्रनिजसंगनलये ॥
तहँ नर्तकी बहु नृत्य करिकरि भाँड बंदी नट नये ।
चले संग बरातके सबभाँति तहँ आनँद छये ॥
चढ़ि चले दशरथ गुरुसहित रथबैठ शंखबजायकै ।
भे शकुन नानाभाँति मगमें रामव्याहलुभायकै ॥
जबकीन सकल पयान मगमें नगरमनहुचलायकै ।
इत सुचरसुरगणव्योमयाननव्योमदीनोछायकै ॥
भइ भीरलाखनजननकी तिहिं पावहीं को पारहीं ।
जहँ तहाँ मगमें बासकर पुनि प्रातहोत पधारहीं ॥
इहिभाँति मिथिलापुर निकटगे खबरदी असवारहीं ।
पुरजनसकल जयधुनि करी जयराम बारहिंबारहीं ॥

दोहा–आवत जान बरात तब, भूषण बसन बनाय ।
दधि चिउरा बहु भेंटकी, सामग्री मँगवाय ॥ १ ॥
कनककलश कोपर अमित, विविधभाँतिमिष्ठान ।
सज रथ हय गय प्रेमभरि, लेन चले अगवान ॥ २ ॥

जब अगवान बरात निहारी । दोउदिशि भे आनँदभारी ॥
दोसागर सम दोउ उथलाने । मिले परस्पर प्रेम लुभाने ॥

सामग्री राखी नृप आगे। लीन्ह सकल नरपतिअनुरागे॥
पूजन करि बहुविधि सुखपाये। जनवासनमें लाय टिकाये॥
सियलखि इमि बरात अधिकाई। ऋद्धिसिद्धि तहँ दीन पठाई॥
सुरपुरके सब भोगविलासा। राखिदिये तिन सबके पासा॥
सकल जनकक्कर करहिं बखाना। सियप्रभाव रघुनायक जाना॥
पितुआगमन राम सुनपायो। सादर मुनिचरणन शिरनायो॥
कौशिक प्रीति देखअधिकाई। जनवासेको चले लिवाई॥
लखि नृप मुनिहि उठे तत्काला। शिरनायो चरणनमहिपाला॥
निरखि गाधिसुत दीन अशीशा। राम नयो पितुचरणनशीशा॥
विप्रनसहित गुरुहि शिर नावा। आशीर्वाद सबहिंसन पावा॥
भरतशत्रुहनते मिलि रामा। भये सकल विधि पूरणकामा॥
बैठे अनुजसहित प्रभु जबहीं। मंगलगान अरंभे तबहीं॥
चारहुँ कुँवर बैठि नृपपासा। देखिदेखि सब हिये हुलासा॥
कोइ कह चारहु वेद सुहाये। जो इहिभाँति चार सुतपाये॥
धन्य विदेह सुनैना रानी। जिन पाये अस वर सुखदानी॥
हम सब भाँति धन्य पुरवासी। देख हिंयह विवाह सुखरासी॥

दोहा—एकमाससे अधिकदिन, पहले आइ बरात।
तिहिते पुर आनंद अति, पुरवासी हरषात॥

कहैं निहोर मनाय विधाता। देहु बढाय दिवस अरु राता॥
इहिविधि बीतगये सब वासर। आयोलग्निदिवसअति सुन्दर॥
हिमऋतु अगहन मास सुहावा। शुभग्रहनखतयोगलखिपावा॥
लग्नशोध नारदके हाथा। विधि भेजीजहँतिरहुतिनाथा॥
जो न लग्न नृपगेह विचारी। सो विधिकी देखी सुखसारी॥

सुनि विदेह अस वचन उचारी । बोलहु अवध नरेश सवारी ॥
शतानन्द सब साज सजाई । जनवासेमें पहुँचे जाई ॥
नृपदशरथकर विभव विलोका । अतिलघुलगेलोकपतिलोका ॥
भयो समय चलिये महराजा । यह सुनि बजे सहस्रनबाजा ॥

दोहा-देवनहू दुंदुभि हनी, हर्षित वर्षहिं फूल ।
पुरशोभा अनुपम निरखि, गये लोक निज भूल ॥

विधि मनमें अचरज अति भारी । निजकरणीनहिंकतहुँनिहारी ॥
शंकर कहि जनि अचरज करहू । देखहु रामव्याह मुदभरहू ॥
भ्रुकुटि विलास सृष्टि जिहि होई । इहिपुर आजु विराजत सोई ॥
सुनि सब सुरगण चले अगारी । दशरथ संग लखे सुतचारी ॥
हयमतंग पर शोभित आहीं । दोउकर कनकलुटावतजाहीं ॥
जोनवाजिपर राम विराजे । उच्चैःश्रवा लखत तिहि लाजे ॥
जिनसुरके लोचन अधिकाई । तिन निजभागमानमुदपाई ॥
सहसनैन अतिशय बड़भागी । देखत रामरूप अनुरागी ॥
रामहिं निरखि नगर नारी । करहिं आरती मंगलथारी ॥
लखि आगमन सुनयना रानी । लागी सजन साज सन्मानी ॥
देववधू बहु नरतनुधारी । मिलीआयपरिछिनहितसारी ॥
देख सबन सन्मानी रानी । बिनपहिंचान प्राणसम मानी ॥
गावत गीत मनोहरवानी । परिछनकरनचलींइमिरानी ॥
दूलह देखि रही सुधि नाहीं । प्रेमभरी तन मन उमगाहीं ॥
लोकवेदकरि रीति सुहाई । अर्घ्यदेइ मण्डपतर लाई ॥
प्रीतिसहित आसन बैठारी । बार बार आरती उतारी ॥
भूषणवसन निछावरि कीन्हें । प्रेमसहित नेगिनने लीन्हें ॥

दोहा-मुदितहोय समधी मिले, उपमा कही न जाय ।
देत पाँवडे अर्घ्य शुभ, मण्डप गये लिवाय ॥

सबहिन आसन दिये सुहाये। विप्रवृंद पूजे मनभाये॥
ईशसहश दशरथै पूजा। सकल बरात भाव नहिं दूजा॥
रामचन्द्रमुखचन्द्रचकोरी। इकटक सब देखैं तिहिओरी॥
समयजान बोले ऋषिराई। कुँवरिहि लावहु बेग बुलाई॥
उपरोहित इमि कह्यो सुनाई। सखी साज सिय मंडप लाई॥
जिहिपदलखि भवसिंधु सुखाहीं। तिहि लखि नमे देव मनमाहीं॥
चन्द्रमुखी सब संग सुहाई। मृगनयनी शोभा अधिकाई॥
सियशोभा को बरणै पारा। रूपराशि गुणखान उदारा॥

छन्द–गुणखान सीतहि लखि बरातिनमनहिमन वंदन कियो॥
दशरथ सुतनसह हर्षनिर्भर जन्मको फल जनुलियो॥
सुर सुमन वर्षहिं शान्ति पढ़ द्विज गौरिगणप पुजाइयो।
सुर प्रगट पूजालेहिं मुनि मुनि रानि बेग बुलाइयो॥
वामदिशि सोहत सुनयना सकृतमूरति गुणभरी।
कनककलशन जलभराये मुनिन जब आज्ञाकरी॥
लाग पखारनपाँय दोउ मिलि राउरानी अनुसरी।
जे पद विराजतशंभुउर जिहि परशि मुनिपत्नीतरी॥
ते भाग्यभाजन जनकरानी रामचरण पखारहीं।
वरकुँवर करतलजोर मुनिगण वंशशाख उचारहीं॥
पुनि भयो पाणीग्रहण कन्यादान विधि अनुसारहीं।
करि होम विधिवत गाँठजोरी भाँवरी हरिपारहीं॥
रामसियपरछाइँ मणिखंभन परत इमि सोहहीं।
मानहु मदनरति दुरत प्रगटत रामछबिलखि मोहहीं॥
करि भाँवरी बैठार सियशिर राम सेंदुर देहहीं।
मानहु उरग शशि करत भूषित जन्मफल सब लेहहीं॥

दोहा-पुनि मुनिजन बरबनीको, इकआसन बैठार।
करी निछावर लोग सब, लखैं निमेषबिसार ॥ १ ॥
तब विदेह मुनिराजको, सुभग सुआयसु पाय।
तीनहुँ कन्या अपर जे, सोऊ लई बुलाय ॥ २ ॥

नाम मांडवी सबगुणखानी। सो दइ व्याह भरत सन्मानी ॥
परमसुशील उर्मिला जोई। दीन्हीं व्याह लषणको सोई ॥
श्रुतिकीरति रिपुदवने व्याही। सकल भाँति शुभगुणअवगाही ॥
रामसरिस भे सबके व्याहा। तैसियविधि सब भये उछाहा ॥
विभुनअवस्थासह जिमि होहीं। वरनसहित इमि दुलहिन सोहीं ॥
वपुष वितान जीव अवधेशा। ताकर करहु विचार विशेशा ॥
जाग्रत श्रुतिकीरति जो अहई। विभु विश्वक रिपुहन श्रुतिकहई ॥
स्वप्न मांडवी जान सुहाई। विभु तैजस तिहि भरत कहाई ॥
पुनि उर्मिला सुषुप्ति बताई। प्राज्ञ लषणविभु बुध सुखदाई ॥
तुरी सिया ताके विभु रामा। अन्तर्यामी सब सुखधामा ॥

दोहा-अवधराज सब वधुनयुत, निरखे जबहिं कुमार।
भये मुदित इमि क्रियनसह, जनु पाये फलचार ॥ १ ॥
"अर्थक्रिया आधीनता, धर्मकि श्रद्धाशक्ति।
कामक्रिया कर्तव्यता, कहत मोक्षकी भक्ति ॥ २ ॥"

श्रुतिकीरति रिपुहन सुखदाई। जानहु अर्थक्रिया मुनिगाई ॥
भरत माण्डवी काम बखाना। लषण उर्मिला धर्म सुहाना ॥
मोक्ष जानकी राम बताये। यह सिद्धान्त निगममें गाये ॥
दायजदीन जनक अतिभारी। हय गज रथ भूषण मणि झारी ॥
दासी दास रत्न गो हीरा। नानाविधि रेशमके चीरा ॥
हो प्रसन्न दशरथ नृप लीन्हा। जोजिहि मांगा सो तिहिदीन्हा ॥

उबरा सो आवा जनवासे। सब नर पूरण प्रेमप्रकाशे॥
तब विदेहँ अति विनय सुनाई। महाराज मुहिं दीन बडाई॥
कीन अवधपति अतिसन्माना। जनवासेको कीन पयाना॥
इत नारी मुनि आयसुपाई। वरदुलहिन कोहबरहित लाई॥
बरछबिलखिरहिंसकल भुलानी। को हम कहां परीनहिंजानी॥
नेकहु प्रभु जिहिओर लखाहीं। सो तिहिक्षणअपनपो भुलाहीं॥
देवन तिय तिहिक्षण धरि धीरा। लगीं सिखावन मतिगंभीरा॥
प्रभुहि उमा शारद सियपाहीं। लहहुकवरइमिरीतिसिखाहीं॥
कर मणिरूप लखत सियरामा। टारत करन विरहवशवामा॥
हासविलासविविधविधिकियऊ। पुनि जनवासे गमनत भयऊ॥
पुनि भोजनहित जनक बुलाये। परतपांवडे मन्दिर आये॥
असुनसहित दशरथपग धोये। पुनि तिहिभाँतिबरातिनजोये॥

दोहा—सुन्दर आसनपर नृपति, बैठारे सब आन।
पनवारे धर भोज्य बहु, परसन लगे सुजान॥ १॥
नानाविधि पकवान बहु, दधि गोरस मिष्टान।
क्षणमें सबको परसिगे, करि संकलपविधान॥ २॥

पंचकौर करि जीमन लागे। नारिगानसुनि जियअनुरागे॥
सुनहु राम हम गावहिं गारी। गुरुसँग काननफिरनविचारी॥
तौ किहिविधितुम कारज करिहो। गुरुकी सीख तुमहुँमनधरिहो॥
जनकसुताके पितुहैं जोई। तिनको जनक कहतसबकोई॥
कौनकौनके जनक अहैं यह। याको करहु निवाहसबहिकह॥
अजकेसुत सुनियत दशस्यन्दन। कह दशस्यंदनके अजनन्दन॥
उलटी रीति परी क्यहि भांती। ऐसेइ दीसत सकल बराती॥
मधुर मधुर इमि गावहिं नारी। सुनि सुनिसबसुखमानतभारी॥

दोहा-इहि विधि भोजन कीन सब, अचिपुनि पाये पान।
जनवासे गवने नृपति, मुदित बजाय निशान॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ग्रंथउजागर रामचन्द्र विवाहवर्णनं नाम नवमोऽध्यायः॥ ९॥

दोहा-विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमरि राम सुखदान।
रामकलेवा कहहुँ कछु, कौशलखण्ड बखान॥
प्रातहोत नृप दशरथ राई। चार लक्ष वरगाय मँगाई॥
विप्रनको दीं कर सन्माना। औरहु जो जिहिके मनमाना॥
याचक सकल अयाचक कीन्हें। भूषण वसन विविध विधि दीन्हें॥
तिहि अवसर लक्ष्मीनिधि आई। भूपतिसे इमि विनय सुनाई॥
करन कलेवा कुँवर बुलाये। सुनत नृपति भेजे सुखपाये॥
चढि चढि घोडन कुमर सिधारे। संग सखा लीन्हें निज सारे॥
कोइ मुश्की कोइ चढ़े इराकी। कोइ अरबी पर्वती सुराकी॥
कोइ चम्पा कोइ ले कन्धारी। दर्याई किसमिसी सुधारी॥
टांगन तुरकी पचकल्यानी। चढि चढि चले कुँवरसुखदानी॥
घोडे सकल अलंकृत कीने। इमि भूचलत लेत मन छीने॥
विश्वविमोहन सुन्दर बाजी। चढे राम तिहिपर सब साजी॥
करत कुतूहल बहु मगमाहीं। चपल तुरंग नचावत जाहीं॥
छन्द-तुरँग जात नचात मग नर नारि देखि सिहावहीं।
पहुँचे भवन इमि जाय सबही मानकर बैठावहीं॥
बहु भाँति व्यंजन धर अगारन प्रेमसहित जिमावहीं।
कर आचमन बैठारि आसन नारि व्यंग्य सुनावहीं॥
दोहा-एक सखी कहि जन्म किमि, खीरखायते होय।
कह्यो राम बूझहु कहा, नृपति निकट हैं सोय॥

तिनढिग जाय परीक्षा लेहू। दूर करहु अपनो सन्देहू॥
तिहि क्षण लक्ष्मीनिधिकी नारी। सिद्धिनामलेसखिनिजसारी॥
माधुर्या उज्वल चन्द्रानानि। मदनमंजरी सहजानंदनि॥
चन्द्रकला चन्द्रावति योगा। चन्द्रमुखीविमलाप्रियभोगा॥
चारुशील अतिशील अनूपा। सहित सिद्धगइँसकलस्वरूपा॥
रघुपतिछवि अवलोकि ज़ुड़ानी। बोली सिद्धि मनोहर बानी॥
चित्त चुराय हमारो लालन। आय सासढिग बैठे पालन॥
सुनियत कामअधिकअभिरामा। सोतुमकोलखिभयोनिकामा॥

दोहा–तुम्हरी भगिनी शृंगऋषि, कैसे गई बिवाहि।
कह्यो लषण जस भाग्य है, सो नहिं मेंट्यो जाहि॥ १॥
हम नृपसुत योगी जनक, भावीवश भो व्याह।
कहि सिधि राजकुमार तुम, कबते भये निवाह॥ २॥

पाल्यो ऋषियऋषियउपजावा। सुनिलक्ष्मणअसवचनसुनावा॥
आये गेह अपूरब योगी। लखलीजै करतब रस भोगी॥
कलावती सिधि भगिनी बोली। सुनहुलषणतुमबातअमोली॥
तुम कुमार मुनि संग रहाये। रसकी बातकहाँसिखिआये॥
की ऋषिनारिकि नागर नारी। सीखे तुमअस खेल खिलारी॥
कह रिपुहन अस्तितुमहुँ कुमारी। कहँ अससिख्योज्ञानकहुप्यारी
किहि जनसे लागहु अनुरागा। तासों असबातन मन पागा॥
चन्द्रकला इमि वचन सुनाई। रौरेको जगहास नचाई॥
हमहुँ दरशहित तुम्हरे आई। तुम्हरेकर बिनमोल बिकाई॥
सो अब विनय यहै सुनिलीजै। सेवामाहीं राखि पतीजै॥
सर्पडसे झारे नहिं जोई। दोष तासु मंत्रीशिर होई॥
इहिविधि हासकरैं मिलि नारी। होंय मुदित तनुदशा बिसारी॥

कह सिधि हमहु अपावन वासा । पर इकशुपहु सुनहु तुम रामा ॥
जिहिते प्रेमकरैं अनुरागी । तनधनजाहुसकैं नहिं त्यागी ॥
तुमते तिमि हम प्रीतिलगाई । करो निवाह सुजन सुखदाई ॥
कह प्रभु नेहलगावत जोई । ताहि न तजों जान सबकोई ॥
तुम सब प्राणसमान पियारी । कहि प्रभु सब तोषी इमि नारी ॥

दोहा-इहिविधि सबसे बिदा ह्वै, आये प्रभु पितुपास ।
दर्शन शोभासिंधु करि, उमगिउठ्यो जनवास ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ग्रंथउजागर जनकपुर रामकलेवांवर्णनं नाम दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

दोहा-विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिरि सुमसुखदान ।
बिदाहोय आये अवध, कहूं चरित्र बखान ॥

आदर दिनदिन जनक कराहीं । यद्यपि नृपति अवधगा चाहीं ॥
विश्वामित्र कही तब जाई । बहुदिन गे अब देहु बिदाई ॥
भले नाथ कहि सचिव बुलाये । करहु तयारी कहि समुझाये ॥
सुनि नृपगमन नगरनरनारी । जहाँ तहाँ भे व्याकुल भारी ॥
विविधभाँति पकवान्न मिठाई । जनक पंथकहँ दीन पठाई ॥
बीस सहस्र मयंद सँवारे । स्यन्दन सुभग पचीस हजारे ॥
तुरँग लाख इक लाख सु गाई । कनक वसन भूषण बहुताई ॥
औरौ वस्तु भाँति बहुतेरी । अवध पठाई जनक घनेरी ॥
पुनि गुरुमंत्रिनको पठवाई । नृप नृपदशरथ लिये बुलाई ॥
दशरथनृप नृपआलय आये । चारहु भाई परम सुहाये ॥

दोहा-लखि पुरलोग सुनावहीं, जैहै आज बरात ।
भूरिभाग्य कब मिलहिं अब, रामादिक सब भ्रात ॥

भूपभवन सब पहुँचे जाई। करि आदर सबहिन बैठाई॥
बहुत परस्पर विनय सुनाई। सम समधी गुणकहि न सिराई॥
दायज दीन जनक अति भारी। अचरज कीन लखत नरनारी॥
मणि सुवर्ण दीन्हों अति भूरी। भूषण वसन सौज अति रूरी॥
वसन रोम पट पाट अपारे। भाजन मणि सुवर्ण चितकारे॥
बहु मेवा पकवान मिठाई। भरि भरि भाजन सब धरवाई॥
अस्त्र शस्त्र गज हय बहु स्यन्दन। शिबिका अरु सुखपाल अनेकन
औरौं वस्तु भाँति बहु दीनी। हाथजोरि पुनि विनती कीनी॥

छन्द—करि विनय हेअवधेश पूरणकाम तुम सबभाँति हो।
का देउँ कनका मेरुहित तव महिम नहिं कहिजातिहो॥
जे बडे जन तिन गति सुहावन वेद इमि बतरातिहो।
दें दास फल दल प्रेमकरि जो लेत आदरलातिहो॥
अस जान दृढविश्वास मेरी आश मनकी पूरिहो।
सुनि होय गद्गद कहत नृप तुम प्राण प्रीतम भूरिहो॥
किमि कहुँ बडाई हमहुँ पाई जहँ प्रतिष्ठा रूरिहो।
निजसम कियो दोउलोकभाजन धर्मधारण धूरिहो॥
यामें न अचरज मलयके जे निकट तरुगण राजहीं।
ते होत चन्द्रन याहिविधि बड़ लघूजनहि निवाजहीं॥
इमि वदत सुन्दर परस्पर दोउ सहित कण्ठलगावहीं॥
इति जयति जय जय धन्य कहि कहि सुमन सुर वर्षावहीं।

दोहा—तब विदेह निजहाथ सब, दूलह दिये सजाय॥
मणि भूषण पट लाय तनु, नखशिख अंग सुहाय॥१॥
यदपि अलौकिक वस्तु सब, जनक तऊ लघुमान।
प्रभुपदगहि हिय प्रेमभरि, जन्म सफल निज जान॥

मनमें कहत सकल नरनारी । चाहत पुत्र सकल तनुधारी ॥
कन्या का कमती कछु आई । देखहु कन्यनकेरि बडाई ॥
जो जानकी न होत नृपतिघर । रामचन्द्र आवत किमि असवर ॥
विप्रन वेदध्वनि अति कीनी । नृपसामान सौंज धरिदीनी ॥
सकलबरातिन पुनि पहिरावा । यथायोग्य जो जिहि मनभावा ॥
मनइच्छित बन्दीजन लेहीं । नृपतिनको पहिरावनि देहीं ॥
रघुपतिछवि अतुलित अभिरामा । नरनारिनलखि पूरे कामा ॥
बहुरि सुनयना लिये बुलाई । भाइन सहित गये रघुराई ॥
रानिन देखि बहुत सुख पावा । आदरकर सबहिन बैठावा ॥
दिव्यवसन भूषण मँगवाये । सखनसहित पुनि कुँवरसजाये ॥
चन्द्रहि जिमि हितलखैं चकोरी । नारिवृन्द चितवैं चहुँओरी ॥
सीयमातु तब दोउ कर जोरी । कहत सुनहु प्रभु विनती मोरी ॥

छन्द—यहविनयममनृपसचिवपरिजनमोहिंदासीजानिये ।
यह प्राणप्यारीसुतामोरी किंकरी निजमानिये ॥
नहिं लगीताति बयारि नैनन पूतरीइव आनिये ।
निर्वाहु तुम्हरे हाथ याको नेह मम पहिचानिये ॥
अस कहिदुलन्हसबसौंपदूलह हिये रानि लगावहीं ।
बहु करि निछावर चरण परिपरिनेहनीरबहावहीं ॥
करि विदापुनिपद गहहिंनानाभाँतिविनयसुनावहीं ।
प्रभुनमहिं रानिअशीषदेदे सुताहित समझावहीं ॥
भइँविकलअबला वसन भूषणदेतबहुविधिरामहीं ।
नखशिखसजायेवारितनमन प्राणपूरणकामहीं ॥
पुनिजानराम वियोग बिलखहिं नैननीरविराजहीं ।
तब पायआशिषचलेरघुपति गये अपनेधामहीं ॥

सब माय कन्या बोल बारंबार हिये लगावहीं ।
देवगुरुसम श्वसुर सासू सेवहू समझावहीं ॥
सबभाँति पतिकर तोष कीन्हें जन्मके फल पावहीं ।
मिलतपुनिपुनिरुदनकरकर चलहिंपुनिउठिधावहीं ॥

दोहा-तिहि अवसर नृपजनकघर, करुणाकीननिवास ।
द्रवत पषाण विशेष कर, चेतन कहाप्रकाश ॥

कहैंसुता सुनिये महतारी । बेगहि लीजै सुरति हमारी ॥
सुनिअस मातु मुरछि भूआई । सखीसहेलिनअतिसमुझाई ॥
शुक सारिका पींजरन माहीं । जातकहाँसिय कहिबिलखाहीं ॥
सुनिअस वचन प्रेमरस भीने । शुक सारिका संगसियदीने ॥
पशु पक्षी व्याकुल इहि भाँती । मनुजदशाकैसे कहि जाती ॥
जनक आय वर सीय निहारी । लाई हिये प्राणकी प्यारी ॥
हियते ज्ञानधीरता भागी । यद्यपि सबविधि रहे विरागी ॥
इत मंत्रिन पालकी सजाई । तिनमें सब सामान धराई ॥
अशन बसन बहु वस्तु सँवारी । आनि यानमें धरी सुधारी ॥
सुमिरि गणेश कुँवरि बैठाई । बहु दासी हित सेव पठाई ॥
मंगलगान करहिं वरनारी । हियमें सबहि धीरता धारी ॥
इहिविधि चले उठाय कहारा । नृप पदचर पाछे पशु धारा ॥
पुरजन परिजन मंत्री जोई । पाछे नृपति चले सबकोई ॥
शिबिकाघेरहिं पुरकी नारी । करहिं आरती मंगलथारी ॥
बार बार इमि विधिहि मनावैं । बेगि कुँवर नृपघर पुनि आवैं ॥

दोहा-इत सब सजी बरात पुनि, गवने शंखबजाय ।
पुरबाहर ठाढेभये, तहाँ जनक नृप आय ॥

सह कुशकेतुसुता समुझाई । बेगि लेव हम तुमहिं बुलाई ॥
इहिविधि कन्यन धीर धराई । आये नृपदशरथढिग धाई ॥

बोले वचन प्रेम जनु बोरे। कहा कहूँ सबविधि गुण तोरे॥
मुहिं सब भाँति लियो अपनाई। कारि आदर अवधेश सुनाई॥
सब विधिसे तुम नृपति हमारे। भवनहु गेह धीर उर धारे॥
पुनि अवधेश सकल पुरवासी। फेरे कारि कारि विनय प्रकासी॥
देखि प्रेम ते फिरि फिरि आहीं। बिदाभयेपुनिजियबिलखाहीं॥
पुनि याचकन दान बहु दीना। फिरे पाय मन तदपि मलीना॥
तब नृप जनक रामढिग आई। बोले अधिक सनेह जनाई॥
राम सच्चिदानंद गुसाईं। सबविधिमोहिंलियोअपनाई॥

दोहा-यह वर दीजे कृपाकर, रघुनंदन सुखदान।
मन तव पदरति नहिं तजे, कबहुँक दयानिधान॥

सुनि रघुवर नृपको सन्माना। पितुबशिष्ठकौशिकसमजाना॥
पुनि नृप भरत लषण रिपुसूदन। मिले बिनयबहुकीन विरहमन॥
पुनि कौशिक चरणन शिरनायो। आपकृपा सब काज बनायो॥
इहिविधि सकल मुनिन शिरनाई। चलेभवनफिरि तिरहुतिराई॥
इतै अवधपति कीन पयाना। देवन सुमनवृष्टि की नाना॥
इहिविधि प्रमुदित चली बराता। कौतुकविविध होयँमगजाता॥
मग जे प्रभुहि लखैं नर नारी। पाय जन्मफल होयँ सुखारी॥
बीच बीच मग करत निवासा। पहुँचे आय अवधके पासा॥
जायजनेतन खबर जनाई। हर्षि उठे पुर लोग लुगाई॥
कौशल्यादिक सब महतारी। लगीं सजन मंगलअनुसारी॥

दोहा-दधि तंदुल फल मूल दल, धरि धरि कंचनथार।
आरतिहित ठाढीभई, गावहिं मंगलचार॥

पहुँची द्वारे जाय बराता। करहिं आरती प्रमुदित माता॥
सकल वेदकुलरीति कराई। देत पाँवडे मंदिर लाई॥

सबसुत वधुअन सहित निहारी। भइँअतिमगनसकलमहतारी॥
चार सिंहासन तुरत मँगाये। तिन सब कुँवरि कुँवर बैठाये॥
करि कुलरीति निछावर कीनी। सुतवर वधू निरखिसुखभीनी॥
जन्मरंक जनु पारस पावा। इहिविधिमातनहियसुखछावा॥
लोकरीति सब मातु कराहीं। बरदुलहिन मनमें सकुचाहीं॥
देव पितर पूजे बहुभाँती। याची वरदुलहिन सुखपाँती॥

दोहा—इत नृप बोल बराति सब, विदाकिये सन्मान।
पट भूषण बहु पायगे, प्रमुदित निज अस्थान॥

पुरनरनारि सकल पहिराये। दिये याचकनको मनभाये॥
तब भूसुर वशिष्ठ मुनिराई। नृप बुलायअस विनय सुनाई॥
सुत सम्पदा राखि सब आगे। कह्योलेहु सब अतिअनुरागे॥
नेग माँगि मुनि द्विजगण लीना। देइ अशीश गमनगृहकीना॥
तब रानिनसँग दशरथ राई। पूजे विश्वामित्र अघाई॥
भीतर महलन दीन निवासा। जहँसबहीविधिसकलसुपासा॥
जब जब चाहैं आश्रम जाई। राखहिं राम विनय बहु लाई॥
तब नृप द्विज गुरुज्ञाति सुहाये। बोलि सकल भोजन करवाये॥
अचवन कर निजगेह सिधाये। घर घर रानिन मंगलगाये॥
दशरथ नृप रानिन ढिग जाई। कथा सकलमिथिलापुरगाई॥

दोहा—जनकनृपतिगुणवरणि कहि, लरिकाश्रमितपियारि।
शयनकरावहु जाय सुनि, हर्षि उठी महतारि॥

मणियन जटित पलँग मँगवाये। अतिकोमलबिछवनाबिछवाये॥
तहँ पौढ़ाये चारहुँ भाई। हरुवे माता कहत सुनाई॥
यह अति कोमल भुजा तुम्हारी। कैसे पंथ ताडकामारी॥
असुर मार ऋषिपत्नी तारी। किमिभञ्जेउ शिवधनुअतिभारी

परशुराम किमि भये निवारन । सुनि अस कहतभयेजगतारन॥
मुनिकी कृपा भयो सब भाई । सुनि दाबतभुज माय सुहाई ॥
सकल मातुपरितोष कराई । भये नींदवश जन सुखदाई ॥
संग बधुनले सासू सोई । जिमि माणि सर्पहिये निजगोई
प्रातहि बंदी गावन लागे । परम पुनीत काल प्रभु जागे ॥

दोहा-सकल शौचकर न्हाय पुनि, दान द्विजनको दीन ।
सकल बंधुयुत नृपति ढिग, सभागमन प्रभु कीन ॥

सभामाँझ हर्षे सब कोई । शिर नवाय बैठे सुख होई ॥
सभासहित नृप चारों भाई । सुनें कथा इतिहास सुहाई ॥
यहि विधि मंगलयुत कछुकाला । बीतगयो प्रमुदित महिपाला ॥
विश्वामित्र बिदा पुनि माँगी । उठे सुतनयुत नृप अनुरागी ॥
सुत धनधामसहित मम स्वामी ।जानिय मुहिं आपन अनुगामी॥
दरशन देत रहो नित मोहू । करहु सदा लरिकन कर छोहू ॥
कहि अस सुतन सहित नृपराई । चरणपरे पुनि आशिषपाई ॥
मनधारि रामसिया छवि भारी । मुनितपहित कानन पगुधारी ॥

छन्द-मुनि गये कानन इत अवधपति मुदित राजविराजहीं ॥
सुर विप्र पूजत दिनहिं दिन लखि राम सब सुख साजहीं॥
अवधेशको लखि विभव सुरपति लोकपालक लाजहीं ॥
नहिं अधिक महिमा रामसे सुत भवन जाके भ्राजहीं ॥
रघुवीरव्याहउछाह निशिदिन शेष शारद गावहीं ।
बहुकल्पबीतहिंकहतसमुझत तदपि पार न पावहीं ॥
जो कहत समुझत सुनत गावत गेह मंगल आवहीं ।
पाय रघुवीर भक्ति अविचल मिलें जो मन भावहीं ॥

दोहा–जो सप्रेम गावहिं सुनहिं, व्याह उछाह अनंद ।
देहिं भक्ति भगवन्त तिहि, मिटै सकल दुखद्वंद ॥
सोरठा–प्रभुके चरित उदार, कहे ज्वालाप्रसाद कछु ।
निजमतिके अनुसार, सुमरि रामयुगपङ्कमल ॥
इति श्रीविश्रामसागर सवमतआगर ग्रंथउजागर दशरथअवध
आगमनोनामैकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

अथ

श्रीविश्रामसागर.

अयोध्याकाण्डप्रारंभः ।

दोहा–विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमरि राम सुखदान ।
अध्यातम मानस कछुक, कहौं सुसार बखान ॥ १ ॥
जबते आये व्याहि घर, कौशलराजकिशोर ।
तबते मंगलचार बहु, पुर छाये चहुं ओर ॥ २ ॥
तात मात पुरनारि नर, मगन रहैं सब काल ।
इक दिन विश्वावसु तहाँ, गायो गीत रसाल ॥ ३ ॥
सब तिहि निज पुर रहनको, कह्यो सहित अनुराग ।
सो कह इन्द्र निदेश बिन, रह न सकत बड़भाग ॥ ४ ॥

तब बोली कैकयी सयानी । हमरे बल सुरपति रजधानी ॥
हमरे आवत सो रिस ठानै । अस कहि लिखी पत्रिका तानै ॥
लखि पत्रिका इन्द्र चुप साधी ।अवसर पर हम करहिं उपाधी ॥
रानीको कलंक हम देहीं । लिखे गर्वके अंकुर तेहीं ॥
विश्वावसुको लिख पठवायो । करो तुमहुँ भूपति मन भायो ॥
यह सत्योपाख्यान मँझारी । कथा लिखी सुन्दर सुखकारी ॥
इहि विधि द्वादश वर्ष बिताये । केकय नृप सुत केकय आये ॥
कह्यो कि खरसुख देश उजारा । तिहि हित दीजे भरत कुमारा ॥
गुरु निदेशसे भरत बुलाये । रिपुसूदन सह दोउ पठाये ॥
पहुँचावन हित लषण समेता । चले राम गुरु मंत्रि सहेता ॥
कछुकदूरचलि पुनि फिर आये । मामा नगर भरत नियराये ॥

दोहा—आगे चलि केकय लियो, भयो नगर आनंद।
भयो यज्ञ तब भरतने, कीन्ह्यों असुर निकंद॥
नेह विवशह्वै मातुलके घर। रह्यो भरत सह अनुज प्रेम कर॥
वर्ष अठारह की तब सीता। सत्ताइसके राम पुनीता॥
बैठे मुदित सुरम्य निकेता। आये नारद तहाँ सहेता॥
आय कहा सुरकाज सम्हारो। जिहि हित नाथ सुभग तनु धारो॥
तब प्रभु विदा कीन्ह समुझाई। एक दिवस श्रीदशरथ राई॥
मनमें ऐसो कीन्ह बिचारा। वृद्धापन है निकट हमारा॥
देहुँ रामको राज सँवारी। सुखी होंहिं पुरके नरनारी॥
गुरुहि पूछ सब कीन्ह तयारी। मंगल द्रव्य सजे सब झारी॥
जो अभिषेक हेतुकी सामा। सब मँगवाई नृप सुखधामा॥
पुर बाजने बजे बहु भाँती। नृत्यगीत किय भई सुराती॥
सब कह नृप भलि बात विचारी। ह्वैहै राजा राम सुखारी॥
कहहिं एकते एक सुनाई। काल्ह राजहित लग्नधराई॥
यह मंगल नहिं सुरन सुहावा। शारदको समुझाय पठावा॥
नाममंथरा केकयि चेरी। शारद आय तासु मतिफेरी॥
सो मंथरा नगरकी शोभा। देखत पूछत मन करि छोभा॥
राम राज्य सुन भई उदासा। पहुँची तुरत केकयी पासा॥
वामन ह्वै जिन सोदर राजू। विघ्नकिये तिहिकरहुँ अकाजू॥
दोहा—करि विचार यहि भाँति तिन, भरत मातुढिगजाय।
पग बंदन कर उग्रमन, बैठ गई बिलखाय॥
कह केकयी लषण शिख दीनी। इहिते मन करि रही मलीनी॥
हमैं शीख देवहि को माई। तब दुख लखि मनमें बिलखाई॥
बरत अग्नि आई शिर ऊपर। तुम्हैं नहीं सूझत सुन्दर वर॥

तुम्हरी सवत धन्य है आजू । ह्वैहै काल्ह राम युवराजू ॥
सुनि रानी अतिशय मुद पाई । भूषण देन लगी हरषाई ॥
जो तव वचन सत्य हो आली । देहौं और होत तुहिं काली ॥
हमैं रीझि देहो क्या रानी । सूझत तुम्हैं नहीं निजहानी ॥
राजा राम होयँगे जबहीं । तुम्हैं कौशला दुखदे तबहीं ॥
जिमि कद्रू विनतहि दुखदीन्हा । चित्रकेतुतियअनभलकीन्हा ॥
पुत्र सुनीताको हो जोई । सुरुचि पठायो वनमें सोई ॥
शर्मिष्ठाको कष्ट अनेका । शुक्रसुता दिय करहु विवेका ॥

दोहा–सगर गरलयुत जन्म लिय, वंध्यासब शशिनारि ।
सौतकाहि नहिं दुखदहै, मनमें करहु विचारि ॥ १ ॥
यद्यपि सरलस्वभावकी, तुम्हरी सवत सयानि ।
करपर कुआसि न घावकर, जानो काहे न रानि ॥ २ ॥

नृप तव आदर मानत भारी । सक्त देखि नहिं सकै तुम्हारी ॥
तव सुत नानागेह पठाये । राज्यपुत्रको देत बजाये ॥
पुत्रसहित जो करिहौ सेवा । तौ रहिसकिहो जानो भेवा ॥
विश्वा वीस परत मुहिं जानी । परीविपति तुम्हारे शिरआनी ॥
जो कह मुहिं चाहतअतिरामा । निर्बल शत्रु मित्रकर कामा ॥
जिमि वन अग्निजरावत जबहीं । पवन सखा ह्वै जातसुतबहीं ॥
दीपकको कृश जानत सोई । दीपक देइ बुझाय कहोई ॥

दोहा–ग्रह भेषज स्थान लहि, सुखद दुखद ह्वै जाँय ।
तैसहि वैरी मित्रगण, निजअधिकारन पाय ॥

तिहिते अब कछु करहु उपाई । जिहि न होय पाछे पछिताई ॥
नृपपर जो थाती सो लेऊ । सुतहिराज्यरामहिं वन देऊ ॥
इकतौ दुखितकाज सुखडारी । दूसर देवयुद्ध मंझारी ॥

सुनि प्रतीति रानी मन आई । कोपभवन कहँ तुरत सिधाई ॥
इत राजा मनमें सुख पाये । सन्ध्यासमय प्रियागृहआये ॥
कोपभवन मंथरा बतायउ । सुनत नृपतिमनमेंभयपायउ ॥
जो कालहुते डर नहिं पाई । सुनि तियारिससोगयेसुखाई ॥
कम्पित भये काम शर मारे । धरि धीरज तियढिगपगुधारे ॥
पूछ्यो रिसकिमि कीन्हों प्यारी । सो तौ वचन कहो सुकुमारी ॥

दोहा-कहु किहि देशनिकारहूँ, रंकराउ करदेहुँ ।
अमर होयअरि मारहूँ, जगतविदित यश लेहुँ ॥

कहो खोल रिसि कीन्हों केही । ह्वै प्रसन्न निज लखहुसनेही ॥
देहुँ काल रामहिं युवराजू । हर्ष समयकत दुखकरकाजू ॥
अस कहि पाणिपकर बैठाई । झटकिदीन्हनृपकरारिसिआई ॥
राजा कहि तब रिस न करीजै । भावै जोइ मांगसो लीजै ॥
रामशपथ करि कहौं सुबानी । जो भावै सो लीजै रानी ॥
देन कहे पिय दो वरदाना । सोउनहिं दियेजातजगजाना ॥
तब नरेश हँसि वचन उचारी । दोके चार लेहु किन प्यारी ॥
अस कहि रामशपथ नृपखाई । तब बोली तिय हर्ष जनाई ॥
प्रथमहि पिया यहै वर दीजै । भरत बोल युवराज करीजै ॥
राम तापसी वेष बनाई । चौदह वर्ष बसहिं वनजाई ॥
सुनत वचन मूर्च्छित नरनाहू । भयो हृदय अतिदारुण दाहू ॥
धीरजधरि बोले मृदु बानी । सत्य कहत की हँसतसयानी ॥
तब कह रानि भरत सुत नाहीं । काहे शोच करत मनमाहीं ॥
जाउ राजसुनि अस दुख माना । प्रथमै किमि बोल्यो वरदाना ॥
कह राजा सुनि वचन पियारी । भरतराज दुख मोहिं न भारी ॥
दूसर वर माँगेहु दुखराशी । सो सुनि चितमें भई उदासी ॥

तुमकहँ राम रहे अति प्यारे। आज भये किमि शत्रु तुम्हारे॥
जो वैरिहुकी करैं भलाई। उनपर किहिविधि मातु रिसाई॥
कारण कौन भई रिस तोहीं। सो भामिनि समझावहु मोहीं॥
दोहा-मीन जियै बिनु बारि वरु, दिवस भानु बिन होय।
राम बिना जीवन नहीं, सुमुखि बतावहुँ तोय॥
फिरि पछितैहै अन्तमें, जो हठ करहि सुभाय।
राम बिना जीवहुँ नहीं, मान वचन सुखदाय॥
तिहिते पुनि माँगहु वरदाना। रहैं राम घर वन दुख नाना॥
जाते भरत लखहुँ अभिषेका। सो कर तिया कठिन तज टेका॥
कह कैकयी शोच जनि करहू। निज कुलरीति हियेमें धरहू॥
शिबि दधीचि हरिचन्द्र नरेशा। सहे धर्महित कोटि कलेशा॥
मधु कैटभ हरिको शिर दीन्हा। निजनिजवचनसबहिपुरकीन्हा॥
निज निज वचन प्रेम प्रण राखा। तिनके लोक वेद शुभ भाखा॥
तिहिते सत्य वचन अनुसरहू। जाहिं राम वन सो अब करहू॥
जो प्रभात नहिं राम सिधारे। तौ नहिं बचिहैं प्राण हमारे॥
सुनि तव नृप बहुविधि समुझावा। तदपि हृदय तिहि बोध न आवा॥
गिरयो मूर्च्छि तब दशरथ राऊ। राम लषण सिय आन दिखाऊ॥
दोहा-हृदय मनावत शिवहि नृप, प्रात न जिहि विधि होय।
गुरु महेश शारद शिवा, राम रहैं करु सोय॥
इहिविधि विलपत भयो प्रभाता। जागे सब पुरजन हरषाता॥
बन्दीगण यश करहिं बखाना। सुनिनृपहियेलगतजिमिबाना॥
ऋषी वसिष्ठ सभामें आये। लखि सुमन्तते वचन सुनाये॥
सदा प्रथम आवतथे राजा। आज न आये हैं क्या काजा॥
आनहु समाचार तुम जाई। चले सुमन्त रजायसु पाई॥

कैकयि भवन सुनत सकुचाये । ड्योढ़ी सात लांघ जब आये ॥
प्रथम तरुण पुनि जरठ सुहाये । बालक क्लीब युवा पुनि गाये ॥
छठे वृद्ध पुनि गोरी नारी । यहि विधि लांघी ड्योढी सारी ॥
पुनि कैकयी निकट पगु धारी । व्याकुल परे भूमिपति भारी ॥
शीश नाय बोले अस वानी । व्याकुल परे भूप कस रानी ॥
कह कैकयी रामकहँ लावहु । समाचार तब पाछे पावहु ॥
नृपरुख लखि पुनि मंदिर आये । रघुनायक उठि शीश नवाये ॥
आदर करि बैठारो आनी । कह्यो सुमन्त निदेश बखानी ॥
तुरतहि पितुगृह गवने रामा । पहुँचे तुरत कैकयी धामा ॥
पितहिदुखितलखिरघुकुलनायक । जननीते बोले सुखदायक ॥
कहु जननी पितुको दुख कारण । करहुँयत्नजिहिहोय निवारण ॥

दोहा—कह रानी तब निठुर ह्वै, राजाके तुम प्रान ।
मोसे हू कीन्हीं शपथ, मैं मांगे वरदान ॥

इकसे भरत करहिं पुरराजू । दूजे तुम वन जावहु आजू ॥
सोइ सुत जो पितु आज्ञा पालै । नाहित पितरवंश निज घालै ॥
कैकयि वचन मनहिं मन भाये । बोले प्रभु तब सहज सुहाये ॥
नेक बात पितु बहुदुख माना । कारण जान परत कछुआना ॥
भरतशपथ कारण कछु नाहीं । यही शोच नरपतिमनमाहीं ॥
तब पदगहि प्रभु पितहि जगावा । करसम्पुटकर वचन सुनावा ॥
तात वृथा जनि करहु गलानी । मंगल समयसुनहु ममबानी ॥
माता जो माँगेहु वरदाना । सो सबभाँति मोर मनमाना ॥
मुनिजन मिलन भरतकर राजू । सबहि भाँति मोरा भलकाजू ॥
मातु पिता आज्ञा भल होई । सबविधिदेव सुलभमुहिंसोई ॥
इतनेहुपर कानन नहिं जाऊं । तौ द्विजसभा मूढ कहवाऊं ॥
सत्रहभाँति मूढ जन होई । सो मैं कहहुँ सुनहु तुम सोई ॥

दोहा-जो अशिष्य शिक्षाकरहि, धनदे तिय जो सेइ ।
शत्रुरक्ष चाहत कुशल, पुनि निजकृत कहि देइ ॥ १ ॥
वैर ठानहीं प्रबलसों, करहिं जु कुत्सित कर्म ।
अश्रद्धेयसों गुणकहत, सप्तममूर्ख सुपर्म ॥ २ ॥
निन्दित कर्म जु ठानहीं, गोत्रतियनके संग ।
सुतनारी गति मान चह, नवम मूर्ख अधरंग ॥ ३ ॥
निजवीरज परखेतमें, डारत मूरख सोय ।
तियसे जो निज मंत्रकह, रुद्रमूर्ख सो होय ॥ ४ ॥
देनकहै नहिं देय पुनि, मूर्ख बारहों जान ।
भेदज्ञान बिन बकत जो, सो तेरह मति मान ॥ ५ ॥
पाप कर्मफल गुणत नहिं, कहत चौदवां सोय ।
जो याचकको कटु कहत, मूर्ख पंचदश होय ॥ ६ ॥
दान भोग नहिं करत जो, मूर्ख सोरहों मान ।
बंधुभाग जो हरणकर, सो सत्रहौं बखान ॥ ७ ॥
लखत लोक परलोक नहिं, सो मूरख शिरताज ।
ऐसे समय न चूकही, तेउ करत निज साज ॥ ८ ॥

धृति शमदम शुचिता अरु दाया । सतिप्रियसुवचन नेमअमाया ॥
आनँदवर्द्धन अघन निवारन । दोउदिशि दायक क्षेम अपारन ॥
मोह दीनता भूपनकेरे । करत सकल गुणनाश घनेरे ॥
ताते सहित हुलास दोउ जन । राखहु अपनो धर्म मुदितमन ॥
सुत तिय तनधनत्यागहिंधामा । तजत न कीर्त्तिमान गुणग्रामा ॥
ताते पितु आज्ञा मुहिं दीजे । हर्षसमय विस्मय मत कीजे ॥
राजा सुनत बहुत अकुलाये । कारि प्रबोध प्रभु तहँ पौढाये ॥
विदा होय आवहुँ मैं ताता । चलत दरश करिहौं सुखदाता ॥

अस कहि जनक ललीके धामा। गये राम तब पूरणकामा॥
ललकि उठी सियआसनदीन्हा। चरणधोय परिदक्षिणकीन्हा॥
तब प्रभु सब वृत्तान्त बखाना। पिता दीन बनराज सुहाना॥

दोहा—आयसु करिहौं अवशि सो, चौदह वर्ष प्रमान।
सासससुरसेवा करहु, तबतक तुम सुखदान॥

काननमें बहुतै दुख भारी। नाहित सँग लेचलत पियारी॥
जो हठकरहु न सुख तुम पावहु। गालवकेर चरित मन लावहु॥
कौशिकशिष गालव ऋषिराई। गुरुदक्षिणादेन मन लाई॥
कह ऋषि हम संतुष्ट सदाहीं। गुरुदक्षिणा हमैं नहिं चाहीं॥
जब हठ कीन्ह कह्यो ऋषिराई। श्यामकर्ण हय अष्ट शताई॥
लावहु गालव सुनत सिधाये। जा ययाति ढिगवचन सुनाये॥
सुनिनृप तिहि इक कन्यादीनी। कह्यो कि याकी बात नवीनी॥
एक सुवन जन्मावहि जबहीं। कन्या होयजाय पुनि तबहीं॥
दो शत अश्व देइ जो कोई। इहिते सुत जन्मावहि सोई॥
ले हर्यश्वनिकट मुनि जाई। सो नृपको कन्या सौंपाई॥
तामें एक कुमर जन्मायो। श्यामकर्ण दो शत तहँपायो॥
अरु काशीश उशीर्ण नरेशा। दोदो शतदिय अश्वविशेशा॥
इकइक कुमर तिनहुँ जन्मायो। दुइशत मिले नपुनिमुनिआयो॥
विनय कीन मुनिके ढिग आई। कन्या ले मुनि रहे चुपाई॥
सुनि बोली तब जनककुमारी। सुनहु प्राणपति विनयहमारी॥
मातु पिता सुतगृहसुखनाना। तुमबिन सकल मोहिंदुखदाना॥

दोहा—रहै चन्द्रबिन चाँदनी, जियै मीन बिनु वारि।
मम जीवन तुम बिन नहीं, देखो हृदय विचारि॥

किहि विधि प्राणराखिहौं नाहीं। चलिहौं संगनाथ वनमाहीं॥
तब इमि कही भानुकुलनाथा। जो अस चलहु प्रियावनसाथा॥

लक्ष्मण समाचार सुनि पावा । तुरत आय चरणन शिरनावा ॥
मनही मन अस करहिं विचारा । किहि विधि लेहिंसंगसुखसारा ॥
देखि विकल बोले प्रभु बानी । तुम घर रहो भ्रात सुखदानी ॥
भवन भरत रिपुहनदोउ नाहीं । राउविकल मम दुख बिलखाहीं ॥
जो मैं चलहुँ तुमहिं ले संगा । सबविधि होय अवधनयभंगा ॥
जाके राज प्रजादुख पावै । सो नृप अवशि नरकको जावै ॥
अस विचार घर रहिये भाई । करिये मात पिता सेवकाई ॥
जो इहिभाँति सीख उर धरहीं । उभय लोक अपने वशकरहीं ॥

दोहा–ह्वै व्याकुल रोये लषण, कहे वचन अकुलाय ।
नाथ दास मैं स्वामि तुम, मेरी कहा बसाय ॥

मोरे सबहि भाँति तुम स्वामी । कहउँ बहुत का अन्तर्यामी ॥
नाथ आपनो दास विचारी । मुहिं जनि तजहु भक्तभयहारी ॥
तब बोले प्रभु गिरा सुहाई । बिदा मातुसे माँगहु जाई ॥
गये लषण तब माके पासा । चरणगहे मन किये उदासा ॥
पूछ्यो माय मलिन मुख जानी । तब लक्ष्मणसबकथाबखानी ॥
सहमगई सुनि वचन कठोरा । मृगीदेखि जनु दवचहुँओरा ॥
पुनि बोली अस वचन बखानी । तात तुम्हारि माय सिय रानी ॥
पिता राम सब भाँति तुम्हारे । कानन अवध समान सुखारे ॥
मात पिता दोउ कानन जाहीं । यहां तुम्हार काज कछु नाहीं ॥
ताते पुत्र संग वन जाहू । लेहुभली विधि जीवनलाहू ॥
मुहिं समेत सुत भे बड़भागी । रामचरणरति जो अनुरागी ॥
सबविधि सो तुमकहँ करणीया । दुखनपावरघुपतिअरुसीया ॥
सुनि लक्ष्मण तब शीश नवाई । पहुँचे रघुनायकढिग जाई ॥
तब जानकी लषणयुत रामा । आये कौशल्याके धामा ॥

माता चरण शीश तिन नाये। मुदितमातु निज हृदय लगाये॥
तात जाउँ बलि भोजन कीजै। केतिक बार लग्न कहि दीजै॥
तब रघुपति बोले सुन माई। पिता दीन मुहिं वनहि रजाई॥
वर्ष चतुर्दश कानन माहीं। रहिहौं माय शोच करु नाहीं॥

दोहा—सहमगई सुनि वचन अस, बोली पुनि दुखपाय।
किहि अघ भेजत तात वन, कारण कहो बुझाय॥

सचिवसुवन सब बात बखानी। सुनि व्याकुल हो बोली वानी॥
तात कीन्ह भलि बात विचारी। पितुआयसु सबविधिसुखकारी॥
जो मैं घर राखहुँ हठ करिकै। बाढै वैर पाप शिर धरिकै॥
किहिविधि तुमको वनहिं पठाऊँ। तुमसे सुवन पाय पछिताऊं॥
जो नहिं सुत तुमको जन्माती। तौ इहि समय न मैं दुख पाती॥
अस विचार सुत कीजिय सोई। जननी जियत वदनविधु जोई॥
सिय अति अहै तात सुकुमारी। किमिचलिहैवनदुखअतिभारी॥
शिक्षा बहुत भाँति पुनि दीनी। जनकसुता कुछ कान न कीनी॥
तब माता भरि लोचन वारी। बोली वचन सुनीतिविचारी॥

दोहा—जाहु सुखेन बसहु वन, करहु जीव जनि घात।
थोड़ा चलियो तात मग, वसचलियो प्रतिरात॥

देउ संदेश यहाँ जो आवहि। मोहनतुमबिनजगकछुभावहि॥
मो समान को नारि अभागी। सुत कानन भेजत अनुरागी॥
जात विपिन मम बालक बारे। तदपि न निकसत प्राणहमारे॥
अस कहि मुरछिपरी महि आई। करि प्रबोध तब राम उठाई॥
बहुरि लाल कहि वत्स उचारी। रक्षा करनलगी महतारी॥
विष्णु करहिं पगकी रखवारी। जानु त्रिविक्रम वीर तुम्हारी॥
कटि रक्षहिं श्रीहरि गोविन्दा। नाभिः अच्युत ब्रह्म मुकुन्दा॥

प्रभु पद्माक्ष गुल्फ रखवारी । हरिजू उदर रखैं अविकारी ॥
उर रक्षक करिहैं श्रीनाथा । भुज मधुसूदन पातु सुपाथा ॥

दोहा-पृथिवीधर तव कोखकी, रक्षा करहिं सुभाय ।
कण्ठ जनार्दन कृष्णमुख, पातु सदा सुखदाय ॥ १ ॥
कर्णमूल बाराहरख, श्रीदामोदर घ्रान ।
नेत्र निरंजन भालश्री, लक्ष्मीयुत भगवान ॥ २ ॥
केशव पातु कपोल दोउ, सब तनु चक्रधुरीन ।
पूर्व पातु पुरुषोत्तम, सब जग जिहि आधीन ॥ ३ ॥
गरुडध्वज आग्नेयसे, नरसिंह दक्षिण ओर ।
नैर्ऋतमाहिं चतुर्भुज, जो सबके शिरमोर ॥ ४ ॥
वासुदेव वारुण्यते, विश्वम्भर वायव्य ।
शंख दिशा कौबेरते, रक्षहिं तुमको भव्य ॥ ५ ॥
देव गदाधर रक्षहीं, तुमको दिक् ईशान ।
कमलनाभ अध ऊर्ध्वमें, वामन जल गिरि थान ॥ ६ ॥
व्याघ्र सिंहते रक्षहीं, शिवशंकर भगवान ।
भूत प्रेत बैताल अरु, ब्रह्मराक्षस जान ॥ ७ ॥
अग्नि चोर अहि सरीसृप, इनसे रखहिं मुरार ।
परविद्यायुत मंत्र जे, यंत्र तंत्र संसार ॥ ८ ॥
रुज दुख शूल जगत जे, माधव देहिं निवार ।
इहिविधि रक्षा कीन पुनि. दे अशीश बहुवार ॥ ९ ॥
बिदाकिये सुत बंधु सह, चले जननि शिरनाय ।
नृपमंदिरकी ओरको, पदचर चले सुभाय ॥ १० ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ग्रंथउजागर रामभवनयात्रा नृपविषादवर्णनो नाम द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

दोहा-विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिरि राम सुखदान।
मानस अग्नीवेशमत, कहुँ हरिचरित बखान॥
धीर धुरीण राम सिय लछमन, नृपति समीप चले उन्नत मन॥
भये विकल सब पुरजन ऐसे। निघटत नीर मीनगण जैसे॥
मनी मलीन तनु दशा भुलाई। कर शिर धुनहिं भाग्यहत पाई॥
कोइकह केकयिभलनहिं कीन्हा। कोउकह नृपवर शोच न दीन्हा॥
कोइ कह विधिइच्छा बलवाना। कोउ कह कर्मजात नहिंजाना॥
कोइ भरतमत इहियें कहहीं। एक उदास भाव सुनि रहहीं॥
रवि शीतल शशि अग्नि उपाई। भरत नहीं अस भूल कराई॥
होइ पाप मन आवत ऐसी। कहियो नाहिं कबहुँ फिरि तैसी॥
इहि विधिविरह विकल सबलोगा। भे व्याकुल सब रामवियोगा॥
नृप दरबार भीर भइ भारी। बरणि न जाय विषाद अपारी॥
तिहि अवसर रघुपति तहँ आये। हाथ जोरि अस वचन सुनाये॥
पितु मन मुदित बिदा मुहिं दीजै। हर्ष समय विस्मय कत कीजै॥
तब सुमन्त दशरथहि जगावा। आये राम यकहि समुझावा॥

दोहा-सुनत उठे व्याकुल नृपति, रामहिं निज हिय लाय।
लषण सीयकी दशा लखि, मुखते वचन न आय॥
पुनि कह तुमको मुनि कहहिं, राम चराचर ईश।
करहिं कर्म फल भावहीं, कर्त्ता विश्वे बीस॥ २॥

पर अपराध और कोई करहीं। ताको फल कोइ औरहि भरहीं॥
गति भगवन्त जात नहिं जानी। तमकि उठी सुनि केकयि रानी॥
मुनिपट भूषण भाजन लाई। आगे धरि इमि वचन सुनाई॥
नृपहि प्राणप्रिय तुम अति रामा। सो किमि जान कहैं घनश्यामा॥
अस विचार भावे सो करहू। अवशि मातुपितु वच अनुसरहू॥

जननि वचन सुनि प्रभु अनुरागे । मुनिपट हित कर पहरनलागे ॥
जब मुनिवसन राम तनुधारे । नर नारी लखि भये दुखारे ॥
पहिरे लषण वसन तनुमाहीं । सीयगई लखि सहम तहाहीं ॥
हाथ लिये वल्कल सुकुमारी । ठाढी भई लाज उर भारी ॥
पहरि न जानत मन अकुलानी । रामओर लखि कह मृदुवानी ॥
मुनिजन किहिविधि बाँधतचीरा। सो मैं नहिं जानत रघुवीरा ॥
अस कहि चल्यो नैन वह वारी । सुनि प्रभु उठे धीरधरि भारी ॥
निजकरसों पहिरावन लागे । लखि नर नारि महादुख पागे॥
तब वशिष्ठ उठि कियोनिवारण । सियनहिं करिहै यह पटधारण॥

दोहा—सुन्दर भूषण वसनयुत, सिया चलहि वन साथ ।
सुनि वशिष्ठके वचनतब, तजे वसन रघुनाथ ॥ १ ॥
इहिविधिरघुकुलकमलविधु, वल्कलपहरसुभाय।
करि प्रणाम महिपालको, चलत भये सुखपाय ॥ २ ॥
कृष्णपक्ष वैशाख छठ, चले राम वनमाहिं ।
विप्रवधू कैकयीको, बहुत भाँति समुझाहिं ॥ ३ ॥
सो मानत किहुभाँति नहिं, उठिआई बरनारि ।
चले राम वनओर इत, वेष तापसिन धारि ॥ ४ ॥

भूप सुमन्तहि कीन्ह रजाई । रथपर लीजे राम चढाई ॥
वन दिखाय सुरसरित न्हवाई । आनहु वेगि फेरि दोउभाई ॥
तब सुमन्त रथ लियो सजाई । विनतीकर प्रभु लिये चढाई ॥
चलें सकल पुरजन उठि साथा । फिर न समुझाये रघुनाथा ॥
प्रथम वास किय तमसा तीरा । भई बहुत पुरजनकी भीरा ॥
श्रमवशलोग गये सब सोई । राम कह्योजिहिजाननकोई ॥
खोजमार रथ हाँकहु भाई । जिहिविधिलोग जान नहिंपाई॥

तब सुमन्त सोइ कीन उपाई। रथ लेगयो जान नहिं कोई॥
जागे लोग न पाये रामा। फिरिआयेव्याकुलनिजधामा॥
राम दरशहित जप तप भारी। करनलगे सब नर अरु नारी॥

दोहा-यहाँ राम सियलषणयुत, शृंगवेरपुर जाय।
उतर गंगअस्नान किय, जल निरखत सुख पाय॥

यह सुधि गुह निषाद जब पाई। ले फलफूल मिल्यो प्रभुआई॥
सादरभेंट मिले रघुनाथा। पूछी कुशल पकर तिहिहाथा॥
सकल कुशल गुहराज सुनाई। पूछी रघुकुलकी कुशलाई॥
तब रघुपति निजचरित बखानी।जिहिजिहिभाँति दीनवनरानी॥
सुनि निषादमनअतिदुखसाना। कह्यो बहुरिसुनुकृपानिधाना॥
चलहु मोरघर पावन करहू। बैठे राज्य करो सुख भरहू॥
कह प्रभु ग्राम वर्ष दश चारी। जा न सकौं पितुआज्ञाकारी॥
सुनि शिंशपानिकट तृणशाला। रचवाई सबभाँति विशाला॥
कन्द मूल फल पावन जानी। दोना भरि भरि राखे आनी॥

दोहा-सिय सौमित्रि सुमन्त सह, कन्द मूल फल खाय।
शयन कीन्ह रघुवंश मणि, पाँय पलोटत भाय॥

सोवत प्रभुहिं निषाद निहारी। व्याकुलभयोनसक्योसँभारी॥
मणिमयपलँग शयन जो करहीं। कुशसाथरी नींद अनुसरहीं॥
कह सौमित्रि दोष नहिं काहू। कर्माधीन हानि अरु लाहू॥
राम सच्चिदानन्द भुआरा। गुणनिधिरहितसमस्तविकारा॥
करत चरित सुर मुनि सुखहेतू। अज अव्यय भवसागरसेतू॥
अस विचार सब मोह विहाई। प्रभुपदकमल करहु सेवकाई॥
मृगतृष्णा सम जगकर काजा। हरि सुमिरण सत्संगतिसाजा॥
तात परम परमारथ सोई। रघुपति चरणकमलरति होई॥

इहि विधि जागत भाभि तुसारा। जागे सकललोक उजियारा॥
सकल शौच कर कियअस्नाना। पुनिबटक्षीर मँगाय सुजाना॥
सो लगाय शिर जटा बनाई। तैसेइ कीन लषण लघु भाई॥
नाथ कह्यो अस दशरथ राई। वन दिखाय लावहु रघुराई॥
तब रघुपति कह सुनहु सुजाना। धर्म न दूसर सत्य समाना॥
सब विधि आज सुलभकरिपावा। त्यागेअपयश जगमें छावा॥
तिहिते शौच त्याग घर जाई। देहु भलीविधि नृप समुझाई॥

दोहा-मोरि ओरते तातसे, अस कहियो समुझाय।
मोर शोच जनि करहिं कछु, मैं वन सुखी सुभाय॥

मातासों कहियो समुझाई। आवहिं शीघ्र लौटि दोउ भाई॥
कहियो भरत गेह जब आवैं। करहिं राजजिहि सबसुखपावैं॥
गुरु पितु मातु वचन जो पालैं। चलहिं सुमग पग परतनखालैं॥
तुम पितुसम विनवहुअति प्रीती। ह्वै नृप सुखी करहु सो रीती॥
अस कहि सुरसरितट प्रभु आये। लाउनाव कहिवचन सुनाये॥
केवट कही न लाउब नैया। जानहुँ मर्म तुम्हारो भैया॥
पाहन छू भइ नारि सुहाई। जो कहुँ मोरी नाव उड़ाई॥
तो कैसे कुटुम्ब कर पालन। ह्वैहै सो कहिये जगतारन॥
जो चाहत प्रभु पार सिधावा। तौ प्रभु करन देउ मनभावा॥
चरणकमल प्रभु देहुँ पखारी। तब ले चलिहौं सहजहिपारी॥

दोहा-सुनि केवटके बैन प्रभु, हँसे लषण तन हेरि।
कह्यो कि लेहु पखारपग, करहु नहीं अबदेरि॥ १॥

केवट तुरत कठौता लाई। धोवन चरण लगो सुखपाई॥
करि जलपान कुटुम्ब पिलाई। तबहिं पारको नाव चलाई॥
पारहोय केवट शिर नावा। प्रभु सकुचे इहि कछु नहिंपावा

सिय मुद्री दइ तुरत उतारी । देनलगे प्रभु कही उचारी ॥
जो दोउ एक काज प्रभु करहीं । सोनहिं लेन देन अनुसरहीं ॥
तुम केवट भवसागर माहीं । नदीनारके हम प्रभु आहीं ॥
तुम आये मैं कीन्हों पारा । तुम करदीजो मम उद्धारा ॥
तब प्रभु ताहि भक्ति वर दीन्हा । मज्जन करि शिवपूजन कीन्हा ॥
कीन्हों विनय गंगकी सीता । दीन्हीं तिन आशीष पुनीता ॥
तब प्रभु गुहहि कहा घर जाहू । सुनत भयो तिहि हिय अतिदाहू ॥
कह्यो कि प्रभु चलिहौं मैं साथा । रहिहो जहाँ कुटी कर नाथा ॥
तहां कुटी रचि देहुँ बनाई । ऐहौं गेह तुम्हैं पहुँचाई ॥
तब प्रभु ताहि संग लेलीन्हा । करि विश्राम गमन पुनि कीन्हा ॥
नौमी दिन प्रभु गये प्रयागा । मज्जन कीन सहित अनुरागा ॥
विप्रनको सन्मान कराये । पुनि प्रभु भरद्वाजपहँ आये ॥
कीन दण्डवत कहि मृदु वानी । हिय लगाय बोले सन्मानी ॥
आज सफल मम जप तप यागा । जन्म जन्मकृत अघ सब भागा ॥
अब करि कृपा देहु वर मोहीं । जिहिविधिचरणकमलरतिहोहीं ॥

दोहा—अस कहि करि सन्मान बहु, कन्द मूल फल दीन्ह ।
भोजनकरि विश्राम ले, गवन प्रात वन कीन्ह ॥

ग्रामनिकट जब निसरहिं जाई । थकितहोहिंलखिलोगलुगाई ॥
लखि पछिताँय कहहिं मनमाहीं । वनके योग्य कुमर यह नाहीं ॥
कोइ कह मातु पिता ते कैसे । जिन पठये वन बालक ऐसे ॥
कोइ कह यह नृप कुँवर अहेरी । वन विचरततिय प्रीति घनेरी ॥
कोइ कह नर नारायण दोऊ । माया सहित जातहैं सोऊ ॥
कोइ कह जगमोहनके काजा । रति रतिपति वसन्तवपुसाजा ॥
कोउ कह कछु सुकृती यह अहहीं । तपहित काननको मग गहहीं ॥

कोउ कहै बड़ भाग्य हमारे। जो हम इनको नैन निहारे ॥
कोउ साहस करि पूछहि जाई। लषण देहिं वृत्तान्त सुनाई ॥
सुनत वचन शिरधुनि पछिताहीं। रानी राय कीन्ह भल नाहीं ॥
तिहि अवसर तापस इक आई। करि विनती आपनि गतिपाई॥
कोउ कलशभरि लावहिं पानी। बैठिय तनक कहहिं मृदुवानी ॥
एक देहिं तरु पात डसाई। तनक विलम्ब करहिं रघुराई ॥

दोहा-इमि मग लोगन देत सुख, उतरे यमुनहिं जाय।
मज्जनकरि तहँ गुहहि पुनि, बिदा कीन्ह वरिआय ॥१॥
करि प्रणाम सीतासहित, चलत भये दोउ भाय।
श्रमितभई सीतहि निरखि, बट तरु बैठे जाय ॥२॥

इक तिय सियसह बंधु निहारे। ग्रामजाय अस वचन उचारे ॥
अलि वटतर दो पथिक सुहाये। गौर श्याम राजत मनभाये॥
तिनके सँग सुन्दर इक नारी। रति लाजहि जिहि रूप निहारी
सुनत नारि नर देखन धाये। प्रभुढिग जा लखि अचरजपाये
सीताढिग आई जुरि नारी। पूछनलगीं विनय अनुसारी ॥
स्वामिनि यह सुकुमार शरीरा। तुम्हरे को लागत मतिधीरा ॥
तब सिय सैननमें पति रामा। देवर लषण कहे सुखधामा ॥
कोशलेश सुत दशरथकेरे। सासु सवति वन दिये घनेरे ॥
चौदह वर्ष वसहिं वनमाहीं। सुनत नारि जहँ तहँ बिलखाहीं॥
विधि बलवान जान धरि धीरा। कहनलगीं तिय वचन गँभीरा॥
विधिगति काहु जान नहिं पाई। शशि कलंक सुरतरु तरुताई ॥
जिन कीन्हों समुद्रजल खारा। नीचन धनी उच्च कंगारा ॥

दोहा-इनको रूप अनूपदे, तिहि वन दीन पठाय।
जो पै यह वन वसहिं तौ, वादिभोग अधिकाय ॥ ३ ॥

कोउ बोले इमि रामसों, आजु रहो इहि ग्राम ।
सब विधि हम सेवा करहिं, निशि करिये विश्राम ॥ २ ॥

कह प्रभु ग्राम रहनकी आना । पूछ कौन वनओर पयाना ॥
लखि सब विकल भये नर नारी । मनहु जीतकर सम्पति हारी ॥
दृगजलभरि करि विनय सुनाई । आवत इत टिकियो सुखदाई ॥
प्रभु कहि वचन लोग सब फेरे । फिरे वार सहसन करि हेरे ॥
प्रभु सिय रामलषण इमि जाहीं । ज्ञान विराग भक्ति जनु आहीं ॥
मगमें गणितन प्रभुहिं निहारे । कहैं राजसी चिह्न तुम्हारे ॥
बिनु पदत्राण फिरहु वनमाहीं । अब ज्योतिष हम करिहैं नाहीं ॥
बहुरि गणितकर करहिं विचारा । पाछे मिलहिं राज विस्तारा ॥
देखें जोइ संग उठि धावहिं । फिरहिं रामजब अति समुझावहिं ॥

दोहा-जिन जिन निरखे रामसिय, तरिगे बिनहिं प्रयास ॥
अजहुँ जासु उर स्वप्नमें, करहिं राम छबि वास ॥

हरिके लोक जाइहैं सोई । धरे ध्यान घनश्याम बटोई ॥
मग निवास करि होत प्रभाता । सियसह चलत भये दोउ भ्राता ॥
वाल्मीकिके आश्रम आये । करत दंडवत मुनि हियलाये ॥
लषण राम सिय रूप निहारी । मुनिमन आनँद मानो भारी ॥
आश्रमलाय निकट बैठाये । कन्द मूल भोजन करवाये ॥
भोजनकरि श्रमकियो निवारण । बोले तब मुनिसे जगतारण ॥
चौदह वर्ष भूप वन दीन्हा । कहाँ वास प्रभु चाहिये कीन्हा ॥
जहँ उद्वेग लहै कोउ नाहीं । अस थलकहियसुखदसदाहीं ॥
कह मुनि तव चरित्रभगवाना । काहुइ भाँति परत नहिंजाना ॥
काहूपै नहिं जाने जाहीं । जाने सो जेइ देहु बताहीं ॥
पूछहु रहनकेर अस्थाना । सो सुनिये अस कृपानिधाना ॥

दोहा-कहहिं सुनहिं तव चरित जे, तिन हिय करहु निवास।
मंत्रराज तव जपहिं जे, नाम जपैं सुखरास॥१॥
जो निर्द्वन्द विकारगत, मन इच्छा कछु नाहिं।
जननीसम परतिय लखहिं, बसिये तिनउरमाहिं॥२॥
परधन जानहिं गरल करि, कंचन लोष्ठसमान।
जाति पाँति तजि तव भये, तिनमन करहुसुथान॥३॥
जिहि मन मोह कोह मद नाहीं। राम बसहु तिनके मनमाहीं॥
तव प्रसाद भोजनपट धरहीं। दीननको पालन नितकरहीं॥
दुख सुख जे नित समकरिजानैं। शांत स्वभाव मौनता ठानैं॥
जगत रीतिमें मन न लगाहीं। राम बसहु तिनके उरमाहीं॥
षटविकार गत आतम जाने। रहै सदा सत्संग लुभाने॥
गुरुचरणन रत द्विज शिर नावैं। नामप्रभाव कहैं कहिवावैं॥
तप तीरथ व्रत नित करि दाना। माँगहिं तव पदप्रीतिमहाना॥
तिनके हृदयसदन सुखदायक। लषणसियासहबसरघुनायक॥
इहिविधि बहुतिकआश्रमअहहीं। वसहु राम जे हिततवगहहीं॥
दोहा-आश्रम कहहूं समय सम, चित्रकूट सुखदाय।
लषण सीयसहमोदभरि, वास करहु तहँ जाय॥
चले रामसिय लषण समेता। चित्रकूट गे कृपानिकेता॥
मन्दाकिनी न्हाय रघुराई। हरिदिन चित्रकूट लखिपाई॥
सुरमुनि आय दर्श प्रभु कीन्हा। पर्णकुटीयुग शुभरचिदीन्हा॥
शुभ मुहूर्त्त प्रभु कीन निवासा। कोल किरातन भयो हुलासा॥
कन्द मूल ले प्रभुपहँ आये। भेंट देइ मृदुवचन सुनाये॥
पतित जान प्रभु दर्शन दीन्हों। सबविधिहमहिकृतारथकीन्हों॥
यहाँ वसहु सबभाँति सुखारी। सबविधि सेवाकरहिं तुम्हारी॥

हम तव सेवक सह परिवारा। आयसु देत न करहु विचारा॥
तव प्रभु तिन्हैं बहुत सन्मानी। बिदा कीन्ह ते गे सुखमानी॥
जबते राम बसे गिरिआई। तबते ओ गिरि सबसुखदाई॥
फूलहिं फलहिं विटप बहुतेरे। सुरतरुसम नित नये घनेरे॥

छन्द-नित घने वृक्ष प्रसून वर्षहिं फलहिं अतिफूलतरहैं।
करिवृक मृगादिकवैरत्यागे विचर जहँतहँ सुखलहैं॥
सिद्ध तापस सुर सराहहिं चित्रकूटहि बडकहैं।
गिरिराज पदवी भई तबते सकल दर्शन चितचहैं॥

दोहा-चित्रकूटमहिमा अमित, कापै वरणी जाय।
सीता लक्ष्मणसहित जहँ, राम विराजे आय॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर रामचित्रकूटगमनो नाम
त्रयोदशोऽध्यायः॥ १३॥

दोहा-विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिरि राम सुखदान।
मानसमत वर्णन करहुँ, सकल सुमंगलखान॥

चित्रकूट जिमि रह रघुराई। सो मैं तुमको कथा सुनाई॥
कहौं सुमन्त अवध जिमिआवा। जबनिषादको घरहि पठावा॥
लख्यो सुमन्त गंगके तीरा। रटत राम हा प्रभु रघुवीरा॥
जायनिषाद हिये भरि लीन्हा। रथहि चढाय बिदा करिदीन्हा॥
सेवक चार संगकरि दीन्हें। हयहिंहिनात दखिनसुखकीन्हें॥
हरिदिन पहुँचे अवधहि जाई। साँझ समय जव अवसर पाई॥
तब सो नगर मँझार सिधावा। मनमें करत बहुत पछितावा॥
पूछहिं अवधलोग जब धाई। उत्तर देहुँ तिन्हैं क्या जाई॥
रानि राउ पूछहिं जब बाता। तिनसे कहब कहब कुशलाता॥

जो रथ देखहि होय मलाना। निकसत नहीं निठुर ममप्राना॥
उभय घरी निशि मगहि बिताई। गयो भवनकौशल्यहि धाई॥

दोहा-जाय नृपतिढिग दुखित मन, कीन्हेसि दण्ड प्रणाम।
सुनत उठे महराय नृप, कहु सुमन्त कहँ राम॥

तब सुमन्त बोले धरि धीरा। सुनहु नृपति तुम चरित गँभीरा॥
गंगातटमें प्रभु पहुँचावा। तहँते बरवसमोहिं पठावा॥
सबको प्रभुने कियो प्रणामा। गये आप काननकहुँ रामा॥
सुनमहीप भो व्याकुल भारी। गिरयो धरणिमें खाय पछारी॥
शरवनकी त्यहि क्षण सुधि आई। कौशल्यासे कथा सुनाई॥
गयो अहेर करन वन माहीं। रह्यों रैनभर प्रिये तहाँहीं॥
तिहिंक्षण शरवन जलहित आयो। सरवरमें घट जबहिं डुबायो॥
भयो शब्द मैं तिहि गज जाना। शब्दवेध त्यागो इक बाना॥
लगत बाण हा शब्द उचारी। तब मैं गयो लखो दुख भारी॥
ताके मात पिता तहँ लाई। बैठाये सुतढिग दुख पाई॥
लख सुतमृतक तिनहुँ तनुत्यागा। दियो शाप रे नृपति अभागा॥
जैसे सुतवियोग हम मरहीं। तिहिविधितुमहुमरो हम जरहीं॥

दोहा-इहि विधि शरवचितिहूं जन, सुरपुर पहुँचे जाय।
वही शापकी बात अब, साँच होतहै आय॥ १॥
कौशल्याकहि नाथ जो, कछु मन धारहु धीर।
लक्ष्मण सीताके सहित, पुनि मिलिहैं रघुवीर॥ २॥

राम राम सिय पुनि कह रामा। हाय राम सुमिरे पुनि रामा॥
तृण सम नृपनिज तजो शरीरा। सुरपुरगयो नृपति मतिधीरा॥
रोवहिं रानि दास अरु दासी। सुनिसुनि रुदन करहिं पुरवासी॥
मुनि वशिष्ठ सुनि प्रातहि आये। बोधहेतु बहु ज्ञान सुनाये॥

जो जनमहि सो मरहि विशेषी। जीवन मरन दशा नित देखी॥
हिरनकशिपु अरु हाटकलोचन। सगरसहसभुजअनतनृपतिगन॥
एक एक इनमें जग जीता। कालपाश परिगये सभीता॥
ते कहँ आज कतहुँ कोउ नाहीं। कर्माधीन आव नित जाहीं॥
प्रथमहि सृष्टिरची जिहि काला। तब नहिं मृत्युबनी विकराला॥

दोहा–सृष्टि मृत्युकरि वधनको, जब तिहि दियो निदेष।
अयश समुझि रोवनलगी, आँसू गिरे विशेष॥

ते सब रोग भये जग आई। विधि कहिये सब तोरसहाई॥
इनकी ओट जनहिं संहारो। कहिहैं कोउ नहिं दोष तिहारो॥
ब्रह्मादिक सुरगण नर प्राणी। इकदिन सबहि मृत्युगह आनी॥
नृप तौ जियन मरण भलजाना। तिनकर शोक वृथा तुम माना॥
जीवहि शस्त्र छेद सक नाहीं। पावक जार न सकै तहाँहीं॥
मारुत शोषसकै नहिं ताही। तोय न बोरसकै कहुँ याही॥
जिमि जीरण पट त्यागै कोई। धरै नवीन वसन पुनि सोई॥
तिमि देही तनु तजै पुराना। नूतन धारि लेइ जग जाना॥
आदि अन्त अव्यक्त कहावे। मध्यमाहिं कछु व्यक्त रहावे॥
नश्वर यह तनु रह न सदाहीं। ताते शोच न कर मनमाहीं॥
रुदन किये जो वह मिलि जाई। तौ रोदनहै उचित सदाई॥
जो न मिलै तो धीरज धरहू। जनि अजानइव करुणाकरहू॥
सज्जनकी सत्संगति कीने। मनके ताप होत सब छीने॥

दोहा–तेलनाव धरि नृपति तनु, युग वर दूत बुलाय।
कह्यो वेग धावहु दोऊ, लावहु भरत लिवाय॥

इतना जाय कहहु तिनपाहीं। तुम दोउनको गुरू बुलाहीं॥
चले दूत गति पवन लजाई। भरत स्वप्न देख्यो दुखदाई॥

करत विचार मनहिं मनभारी । दूत जाय अस गिराउचारी ॥
तुम्हैं गुरूने सपदि बुलावा । पूँछ चले तुरतहि दुखछावा ॥
चपल वाजि चढ़िचलि दुहुँभाई । अस मन जानहु जाहिंउड़ाई ॥
कछू दिवस पहुँचे सब आई । अशकुन भये नगर पैठाई ॥
पुर चारहुँ दिशि छई उदासी । दीन मलीन लखे पुरवासी ॥
लोग आय सब करहिं जुहारी । कहैं न कछुक रहे मनमारी ॥
भरत कुशल नहिं पूछिसकाहीं । गवने गेह कैकयी माहीं ॥
बैठारे आदर करि भारी । पूछनलगी कुशल महतारी ॥

दोहा-भरत कुशल तहँकी कही, पूछी निज कुशलाय ।
कहाँ राम लक्ष्मण सिया, कहँपितु कौशलराय ॥

तब कैकयी कह्यो समझाई । सुरपुर गे दशरथ नृपराई ॥
कारण कहा विरह श्रीरामा । राम कहाँ किय काननधामा ॥
इहि विधि बोली कथा सुनाई । राज करहु तुम सुत अधिकाई ॥
सौतसुअन पठये वन माहीं । रह्यो तुम्हैं कंटक कछुनाहीं ॥
सुनत गिरे मूर्च्छित महिमाहीं । भरतहि शोध रही कछुनाहीं ॥
हपितु कहाँ न देखन पायहु । बीचहि सुरपुरजीव पठायहु ॥
रामहिं सौंपगये नहिं मोही । ऐसे भये आप निर्मोही ॥
मोसमान को पाप पहारा । जिहिहितरामविपिनपगुधारा ॥
हा जननी तैं कस वर मांगे । हरे सकल सुख एकहिलागे ॥
राम लषण सिय वल्कल धारी । मेरे हित भे कानन चारी ॥
जो तेरे मन रहि अस बाता । जन्मत मोहिं न कीन्हों घाता ॥
सबहि राम प्रिय प्राण समाना । किमिविधिकह्योतिन्हैंवनजाना ॥
कैसे भूप कियो विश्वासा । मरणसमयभइबुद्धिनिराशा ॥
तोको दूषण व्यर्थ लगाना । खोटा भाग्य हमार बखाना ॥

लोचनओट बैठ किन जाई। इतना कहत मंथरा आई ॥
रिपुसूदन किय चरणप्रहारा। गिरी भूमि करि हाहाकारा ॥
केश पकरि तिहि लगे घसीटन। परअपकारकेर फल भोगन ॥
भरत ताहि लखि दीन छुड़ाई। कौशल्यागृह गे दोउ भाई ॥
जाय प्रणाम कीन्ह दोउ जबहीं। कौशल्या हिय लाये तबहीं ॥
करि करि रुदन चरितसब बरना। रामगमन वन भूपति मरना॥
जन्ममरण फल तव पितु पायो। विधि मम हिये वज्र करवायो॥
पितुआज्ञा रघुवर पट भूषण। त्यागन कीने राम मुदित मन॥
तीनहुँ जन धारि वल्कलचीरा। वनको चले तात रघुबीरा ॥
मैं सब देखत रही सुभाये। चली न संग न प्राणपठाये ॥

दोहा-अब शोचत सब बैठकर, मुहिं न कोउ समझाय।
रामगमन साँचो सुपन, मुहिं परतीत न आय ॥

आगेइ लागे रहत पुनीता। राम लला अरु लक्ष्मण सीता॥
अस कहि गिरी मुरछि महतारी। लइउठाय भरत धुरधारी ॥
"मातु तातकहँ देइ दिखाई। कहँसियरामलषणलघु भाई"
मातु दोष सव मेरोइ अहई। रविकुलसबममाहितदुखसहई॥
को नहिं कहै मोर मत नाहीं। मातुमतेमें को न कहाहीं ॥
मात पिता गो द्विजके मारे। सुत तिय वध गोपुर घर जारे॥
तिनकी गति मुहिं देइ विधाता। यामें होय जो मम मत माता॥
वेदविदूषक खल व्यभिचारी। जो ताकहिं परधन परनारी॥
तिनकी गति पावहुँ मैं घोरा। जो जननी यह सम्मत मोरा॥

दोहा-भरतवचनसुनि माय कह, तुम प्रिय प्राणसमान।
रामप्राणके प्राणतुम, कस हुइहो दुखदान॥

जो कोउ तुमको दोष लगैहैं। कबहुँ नहीं सद्गति ते पैहैं॥
इहिविधि शोचत भयो प्रभाता। आये गुरु वशिष्ठ विख्याता॥

भरतहि बहुत भाँति समुझाई। उठे तुरत गुरुआयसु पाई॥
नृपकर सुभग विमान बनावा। राखीं मातु चरण शिर नावा॥
चन्दनसे रचि चिता बनाई। दाहक्रिया तट सरित कराई॥
विधिवत दीन तिलांजलि सबहीं। भरतअश्रु उमड़े अति तबहीं॥
श्रुति पुराणजस कृत्य बखाना। कीन भरत दशगात्र विधाना॥
भाँति अनेक द्विजन सन्माना। किय अनेक हयगयरथदाना॥
पितुहित किय जसभरत विधाना। सो सुख लाख न जायबखाना॥

दोहा-भे निवृत्त सबकृत्यते, जुरी सभा सब आय।
बैठि सचिव गुरुजन सकल, बोलि लिये दोउ भाय॥

कह गुरु सुनहु भरत सुखदाना। शोचतकत भावी बलवाना॥
शोचिय विप्र धर्म निजत्यागे। त्याग सुकर्म विषयरत पागे॥
शोचिय नृपति नीति नहिं जानै। निजतनु पोषक भरे गुमानै॥
शोचिय वणिक न धर्म कराई। महाकृपण धनगाड़त जाई॥
पतिवंचक शोचिय सो नारी। शोचिय शूद्र विप्रअपकारी॥
शोचिय यती जु रहितविरागा। सबविधि शोचिय सोइअभागा॥
नरतनु पाय भजे हरि नाहीं। जाके राम नहीं मनमाहीं॥
शोच न योग्य न दशरथ राई। भरत रामसे जिन सुतपाई॥
आपन पन सब विधि प्रतिपाला। अन्त अमरपुर गये भुवाला॥
प्रेमप्रीति जग प्रगट दिखाई। तिनहित शोच करहुमतराई॥
पितुआयसु सुत पालन कीजै। दीन्हों राज तुम्हैं सो लीजै॥

दोहा-सुरपुर नृप परतोष लहिं, भल मानहिं सियराम।
जिहि पितु सौंपे राज्य सो, लेइ न दोषनिकाम॥

कौशल्या सुनि कहत सुनाई। गुरु पितु आज्ञा किये भलाई॥
राज्य करहु सुत अवध मँझारी। पालु प्रजा पुरजन महतारी॥

सुनि अस वचन भरत अकुलाई। सहित प्रेम कहिविनयसुनाई ॥
मातु पिता गुरुवाणी जोई। बिन विचार कीन्हें भल होई ॥
तदपि मोहवश कहौं निहोरी। क्षमहु दीन लखि ढीठी मोरी ॥
पिता अपन प्रण पूरण कीना। राम लषण सियवनमगलीना ॥
मोको राज्य देत अब जोई। मोर तुम्हार काहु हित होई ॥
हित तुम्हार हमते नहिं होई। केकयिपुत्र जान सब कोई ॥
जिहिं बलपाय सबहि दुखदीन्हा। कारण ते कारज दृढ़ चीन्हा ॥

दोहा–सबकर हितकारी सदा, धर्मशील नरनाह।
सो गादीपर चाहिये, मोते नाहिं निबाह ॥

तुम सब विनयसुनहु इक मोरी। आयसु देहु सबै बरजोरी ॥
प्रातकाल रघुपति पर जाऊं। दर्शन कर जियजरनि मिटाऊं॥
भरतवचन सुनि मुनिजन सारे। सजल नैन पुलकावलि धारे ॥
धन्य धन्य कहि सकल सराहीं। शोकसिंधु अवलम्बन आहीं॥
मातुमते जो तुम्हैं बतावहिं। निश्चय रौरवमें ते जावहिं ॥
अवशि चलहु वन जहँ श्रीरामा। दर्शनकर हों पूरण कामा ॥
भरत लिये सबभृत्य बुलाई। भवन भँडार दिये सौंपाई ॥
लीन्हों सकल तिलककर साजा। विपिन करहिं रामहिं महराजा॥
चढि चढि वाहन होत प्रभाता। सब चलिभे जहँ सब सुखदाता॥
जिहि राखहिं घर रहु रखवारी। सो जानै जनु विपति सवारी ॥
शुक सारिका पिंजरन बोलैं। हमहु चलैं किन खिरकिनखोलैं
ऋषि मुनि द्विजरथ चढि चढि आगे। चलत भये प्रभुहितअनुरागे ॥
सुन्दर शिबिका विविध सँवारी। द्विजतिय मुनितिय चढिनृपनारी
प्रथमहि ज्येष्ठ पयादे पाये। भरत चले प्रभुढिग भवलाये ॥
भरतहि देख सकल पुरवासी। तजि तजि वाहन चले उदासी॥

दोहा-तब कौशल्या जाय ढिग, कह्यो चढो रथ तात।
पुरजन व्याकुल रामहित, सुनत चढे दोउ भ्रात ॥१॥
प्रथमदिवस तमसा रहे, द्वितिय गोमती वास।
तीजे दिन उतरे सई, रघुपति विरह विकास ॥२॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ग्रंथउजागर भरतचित्रकूटगमनोनाम चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

दोहा-ज्येष्ठ कृष्ण तिथि चौथको, शृंगवेर नियरान।
सुनि निषाद आवत भरत, सेन देख बिलखान ॥१॥
प्रथम मातु मिस रामको, भेजो कानन ओर।
राज्य अकंटक करनहित, लाये कटक बटोर ॥२॥
जो न होत मनकुटिलई, सेना लेत न साथ।
अस मन गुन गुहज्ञाति सब, बोलिनिषादन नाथ ॥

तिनसे कही सजग ह्वैजाहू। आज मिलहि जग जीवनलाहू॥
भरत रामसे रणहित जाहीं। तिनसे निवटलेहु तुम ह्याहीं ॥
भरत भाइसे हुइ संग्रामा। अस अवसर नहिं कवन्यो धामा॥
जीवन छीन चाहु निज कीजै। जियतन सुरसरि उतरन दीजै॥
भलेहि नाथ कहि सब रणधीरा। साजि ठाढ़े भे सुरसरितीरा ॥
गुह कह मारू देहु बजाई। इतना कहत छींक भइ बाँई ॥
कही शकुनियन विग्रह नाहीं। रामहिं भरत मनावन जाहीं ॥
कह निषाद देखहुँ मैं जाई। तुम सब सजग रहो ह्यां भाई॥
लेहुँ भेद सब कर मैं जाई। वैर प्रीति नहिं छिपत छिपाई॥
कन्द मूल फल गंगानीरा। ले चल गयो भरतके तीरा ॥
मुनिकोलखिकिय दंड प्रणामा। दीन अशीश जान प्रिय रामा ॥
पुनि गुह भरतहि जाय जुहारा। लखिगुरुइहिविधिवचनउचारा॥

दोहा-रामसखा यह जानहू, हिय भेंटे श्रीराम।
सुनत भरत हिय लायऊ, जनु पाये मनकाम ॥
पूछी कुशल भरत उर लाई। तिनकहिअबभइकुशल सुहाई ॥
तुहिं लखि जेन भजन हरि करहीं। सो न कबहुँ भवसागरतरहीं ॥
रिपुसूदन पुनि भेंटेउ आई। पुनि तिन रानि जुहारी जाई ॥
जानि लषणसम आशिष देहीं। पुरजन प्रीति देख सुख लेहीं ॥
कहैं सकल इहि कर बड भागा। भेंटे राम सहित अनुरागा ॥
तब निषाद सेवकन बुलाई। भली भाँति भूमी सुधवाई ॥
तहाँ शिबिर बहु दिये डराई। उतरी सकल भरत कटकाई ॥
सुरसरिकर मज्जन सब कीन्हा। कन्द मूल फल भोजन लीन्हा॥
दोहा-माँगि माँगि रति राम पद, टिके थलन सब आय।
कन्द मूल फल गुह दिये, पौढे रुचिसों पाय ॥
भरत निषादहि लीन बुलाई। गे जहँ रैन बसे रघुराई ॥
कुशसाथरिलखि नैनन जलभारी। दक्षिणकीन दंडवतकारिकारि ॥
कह्योकि जो सबविधि सुखयोगू। जिन्हैं मिलतसबभाँतिनभोगू ॥
कुशपर सोवहिं सो सिय रामा। सबविधिमोहिंभयोविधिवामा॥
जो सिय सबहि भाँति सुकुमारी। सासश्वशुर सबकुटुम पियारी ॥
लालनयोग लषण लघु भ्राता। सोवत सो महि वाम विधाता ॥
सकल विश्वके प्राणअधारा। रविकुल वंश जन्म उजियारा ॥
सो प्रभु सोवहिं कुशा बिछाई। विधिगति अजहु जानि नहिंजाई
मात पिताके प्राणपियारे। जुगवत जिन्हैं नारि नर सारे ॥
ते वन कन्द मूल फल खाहीं। निठुर हृदय मम फाटत नाहीं ॥
दोहा-धिक धिक बारंबार मुहिं, धन पितु किय प्रणपाल।
सुनिनिषाद कर जोर कह, त्यागहु शोच विशाल ॥

रघुवरके तुम अधिक पियारे। कहतरहे उत्कर्ष तिहारे॥
धरहु धीर भल हो परिणामा। करहुशयनआई निशियामा॥
इह सुनि भरत अवास सिधाये। रघुवरगुणकहि समय बिताये॥
होत प्रभात नाव चढि सबही। उतरिगये बहुनावनतबही॥
रातहि रातन नाव सुहाई। बहुतक तहाँ निषाद मँगाई॥
उतरि कटक चलिभो मन सादे। अग्र निषादरु भरत पयादे॥
आये तीसर पहर प्रयागा। कीन सबै मज्जन अनुरागा॥
विप्रनदिये विविध विधि दाना। रामचरण रति कर वरदाना॥
सकल कामप्रद तीरथ नाथा। बोले भरत जोरि दोउ हाथा॥
तीरथ राज महिम जग जाना। देहु प्रेम लखि इमि वरदाना॥

दोहा—धर्म अर्थ नहिं काम रुचि, ऋधि सिधि चाहत नाहिं।
बढे रामपद प्रीति नित, यह चाहत मनमाहिं॥

शशिहि चकोर मोर घनमाँहीं। धनमें कृपणभ्रमरमधुकाँहीं॥
चातक जिमि चाहत जलस्वाती। बढे प्रीति पुनिदिनअरुराती॥
भरत वचन सुनि माँझ त्रिवेनी। भइ अस गिरा सुमंगलदेनी॥
तात हृदय जनि करहु मलाना। हो तुम रामहि प्राणसमाना॥
वेणीवचन सुनत सुख पाई। भरद्वाज आश्रम गे धाई॥
भरद्वाजको कीन प्रणामा। मुनिअशीशदीन्हीअभिरामा॥
सकुचे भरत कही ऋषि वानी। हमतपबल सब बातें जानी॥
दोष कैकयी हू कछु नाहीं। गिरा बुद्धि फेरा गइ ताहीं॥
तुमसम रामहि प्रिय कोउ नाहीं। कारि देखा विचार मनमाहीं॥
पालत प्रजहि सोउ अति नीका। तोष होत रघुबरके जीका॥

दोहा—अब तुम कीनो नीक अति, हम सबकर बड़भाग।
राम कृपामूरति अहो, देहधरे अनुराग॥ १॥

बाल विधूसम यश विमल, नित नूतन अधिकाय।
बड़े भाग्य हम लखिपरे, तुमसे सरलसुभाय ॥ २ ॥

सबसाधनकर फल यह भयऊ। रामलषणसियदरशनदयऊ ॥
तिहिकर फलसा दर्श तुम्हारा। सुनतभरत तनुपुलकअपारा ॥
नाथ शोच पितुकर मुहिंनाहीं। पोच कहै जग मन न दुखाहीं ॥
जाय लोक परलोक नशाई। लग्योकलंकनदुखअधिकाई ॥
एकहि शोच हिये अति भारी। मुहिंलगिभेसियरामदुखारी ॥
महाव्याधि यह जब मिटिजाई। तब कहुँ और बात कछु भाई ॥
कह मुनि शोच तजहु मन केरे। सब दुख मिटिहैं प्रभुपद हेरे ॥
आज रहो ले मम पहुनाई। भलहिनाथकहि भरत सुनाई ॥
तब मुनि ऋद्धि सिद्धि हँकराई। कह्यो कि करहु भरत पहुनाई ॥
ऋषिआज्ञा ऋधि सिधि सब धाई। रचे महल सुन्दर हरषाई ॥
अशन शयन सब भवन भराई। नानाभाँतिन भोगनिकाई ॥
नृत्य नाट संगीत सुहाये। भवनभवनऋधिसिद्धिकराये ॥
सुरदुर्लभ सुख रच पलमाहीं। दिये भरत बल तहाँ वसाहीं ॥

दोहा—लखि सुभोग सब अवधजन, गये गेह सुधिभूल।
भरत विलोकि प्रभाव मुनि, नेह रामपद मूल ॥

चक्रवाकसम रैन बिताई। प्रात नहाय मुनिहि शिरनाई ॥
आयसु पाय सुसेवक लीन्हें। चले चित्रकूटहि चितदीन्हें ॥
बीच बासकर यमुनहिं देखी। प्रभुतनु सम लखि हर्षविशेषी ॥
भरतभाव अरु शीतलताई। शारद शेष सकै नहिं गाई ॥
सो मैं वरणिसकौं किहि भाँती। सबविधिप्राकृतिमतिअधिकाती
तहँ करि वास होत भिनुसारा। एकहि साथ भये सब पारा ॥
न्हाय चले सुमिरत रघुराई। देखि कहत सब लोग लुगाई ॥

रामलषण सम दोउ जन आहीं । पर सखि सीय संगहै नाहीं ॥
सेन साथ मन कछुक मलीना । तब बोली इक सखी प्रवीना ॥
बोली सो वृत्तान्त सुनाई । जात मनावन प्रभु लघु भाई ॥
सुनितिहिंवचनसकल अनुरागीं । भरतहि सविधिसराहनलागीं॥

दोहा-केकयियोग न सुवन यह, कहतभई इमिनारि ।
एक कहै भल भूपकिय, हमें दरश कहँ प्यारि ॥१॥
राज्यहरण अरु पितुमरण, विपिनगमन बिनु रीस ।
इक कह ऐसी विपति सखि, परै न काहू शीश ॥२॥

इहि विधि ग्रामग्राम नर नारी । जहाँ तहाँ लखि करैं विचारी ॥
भरतदशा जिन जिन लखिपाये । तिन तिनके भवरोग मिटाये ॥
सहित समाज जाहिं दोउ भाई । किये जाहिं घन तहँ तहँ छाई ॥
महिमा बडी भरत यह नाहीं । सुमिरत जिन्हैं राम मनमाहीं ॥
तब सुरराज गुरूसे कहहीं । बनी बात अब बिगरन चहहीं॥
रामहि जावैं भरत मनावन । होय भेंट नहिं यतन करहु मन॥
कह गुरु जे हरिभक्त सयाने । सब विधि हरिके नेह लुभाने ॥
हरभक्तनते किये कुरीती । मानत हैं रघुपति अनरीती ॥
सेवककी सेवाके कीन्हें । मानत प्रभु परितोष प्रवीने ॥
वैर करत भक्तन ते जोई । तापर रामरोष अति होई ॥
यदपि एक रस राग न रोषू । तदपि भक्तहित विषम समोषू ॥
अस जियजान तजहु अविचारा । भरतचरण सेवहु सुखसारा ॥
सुन सुरपति मन धीरज लाये । वर्षि सुमनअति प्रेम जनाये ॥
इत करि प्रेम भरत चलि जाहीं । राम प्रेममूरति जनु आहीं ॥

दोहा-सबके उर अभिलाष अस, पूरित पुलक शरीर ।
कबहिं देखिहौं नैन भरि, राम लषण दोउ बीर ॥

तबहीं कामद गिरि नियरावा। प्रेम मग्न सबहिन शिरनावा ॥
सुमिरत रामदरश करि आसा। गयोबीति दिन कीन निवासा॥
प्रातकाल चलिभे सुख पाई। इत सिय जागी स्वप्न सुनाई ॥
जनु कुटुम्ब पुरजनके साथा। आये भरत सुनहु रघुनाथा ॥
सासू आनभाँति जनु देखी। सुनिप्रभु चिन्ता कीन्हविशेखी॥
करस्नान पुनि सन्ध्या कीन्हा। उत्तर ओर ध्यान पुनि दीन्हा ॥
धूरिउडत लखी अधिकाई। खग मृग बहुतक चले पराई ॥
प्रभु भे चकित किरातन आई। भरत आगमन खबर सुनाई ॥

दोहा-भरत आगमन सुनतही, रघुवर पुलक शरीर।
इत सकोच प्रियबंधु कर, उत देखत सुरपीर ॥

बहुरि विचार कीन्ह मन माहीं। भरत कहेमें चिन्ता नाहीं ॥
इत लक्ष्मणप्रभु मनहिं खँभारू। लखत कहेउ कछुनीतिविचारू॥
नाथ जीव क्षण नृप पद पाई। थोरे माहिं जात बौराई ॥
सहसबाहु पुनि नहुष भुआला। वेणु सुरेश त्रिशंकु नृपाला ॥
दक्षचन्द्र कृतवीर्य नरेशा। भयउ राजमद पाय विशेशा ॥
भरत सयान सकल जगजाना। पाय राजपद भो अभिमाना ॥
जानइ काकी सेन बटोरी। आये राज अकंटक कोरी ॥
जो मनमें नहिं होत कुचाली। किहि भावत रथ वाजिगजाली॥
माता मिस की प्रथम खुटाई। अव संगसेन युद्ध हितलाई ॥
इहिको फल देहौं भलिभाँती। भरत मार भंजहुँ दलपाँती ॥
रजहु सहत अपमान न भारी। मैं नृपसुअन डारिहौं मारी ॥
सुनत वचन वसुधा भयरानी। जगमय मगन भई नभवानी ॥
तात तुम्हार विदित बल अहई। पर बुधजन विचार कछु कहई ॥
अनुचित लषण सुनत नभवानी। रामकीन सन्मान महानी ॥

भरत सरिस शुचि नेही भाई। भयो न है नहिं परत दिखाई॥
वरु गरुडहि भक्षै अहिराई। गोपद बूड़ि घटज वरु जाई॥
होय न नृपमद भरतहि भाई। विधि हरि हर सुरपति पद पाई॥
विधि प्रपंच गुण अवगुण रूपा। भरत गहहिं पय हंस स्वरूपा॥
इहि विधि प्रभु किय बन्धु बडाई। उतै भरत मन्दाकिनि न्हाई॥
सब समाज तहँ दीन टिकाई। आप चले जहँ श्रीरघुराई॥
संग निषाद और लघु भाई। विविध कुतर्क करत मग जाई॥

दोहा—केकयिसुत लखि तजहिं सुहिं, सेवक लखि सन्मान।
जो कछु करहिं समर्थ सो, पितु मैं शिशू अयान॥

फेरत मातु कृत्य तिहि पाछे। प्रभुचित लखिचालत गतिआछे॥
इहि विधि करत बहुत पछितावा। प्रभु आश्रम अतिशय नियरावा॥
जहँ तहँ फूले विटप सुहाये। खग मृग विहरत बोलत भाये॥
पाकर जामन सुभग तमाला। तिहि मध वटतरु श्याम विशाला॥
तिहि तरु तर प्रभु कुटी सुहाई। तुलसी तरु वेदिका बनाई॥
तहँ बैठे बहु मुनि जन आई। कहैं कथा इतिहास सुहाई॥
भरत लख्यो प्रभु आश्रम जबहीं। मिटे सकल मनके दुख तबहीं॥
करत प्रणाम चले दोउ भाई। प्रभुके निकट पहूँचे जाई॥
त्राहि त्राहि कहि त्राहि गुसाई। भूतल परे लकुटकी नाई॥

दोहा—प्रभु जब निरख्यो भरत कहँ, उठे तुरत अकुलाय।
कहुँ निषंग कहुँ धनु कतहुँ, बाण गयो छिटकाय॥

धाय उठाय लिये उरलाई। राखे हिय बडि बार लगाई॥
मिलत नेह नहिं जाय बखानी। जयजयजय सुरगणकहिबानी॥
भरतहि लषण मिले पुनि धाई। पुनि रिपुहनहि मिले रघुराई॥
पुनि दोउ बंधु सिया ढिग जाई। गहे चरण पुनि आशिष पाई॥

तब केवट इमि वचन सुनाये। सहित मातु गुरु पुरजन आये॥
सुनत चले प्रभु सरिता तीरा। देखी अवध-नरनकी भीरा॥
कीन्ह प्रणाम धरणि शिर लाई। गुरु उठाय लिय हृदय लगाई॥
विप्रमंडलिहि पुनि शिर नावा। आशीर्वाद सबहिंसन पावा॥
आरत लोग राम सब जाना। पलमें सबहिं मिले भगवाना॥
मातु सभय जब राम निहारी। भे अति विकल धर्म धुरधारी॥
प्रथम कैकयी पद गहे जाई। कर प्रबोध संकोच विहाई॥
मिले सुमित्रहि पुनि दोउ जाई। गहे कौशलापद पुनि धाई॥

दोहा-वारि विलोचन पुलक तनु, मातु लिये उर लाय।
रहे लाल भल वत्स भल, पूँछत आँसुबहाय॥१॥
यथायोग्य मिलि सबहिं प्रभु, कह्यो गुरुहि शिरनाय।
आश्रममें पगुधारिये, सुनत चले सचुपाय॥२॥

गने लोग लै सँग रघुराई। आये निज आश्रम सुखदाई॥
अन्य लोगलखि जलथल सुन्दर। उतरेजहँतहँशुचिमनरुचिकर॥
सिय मुनिपद वंदेउ पुनि आई। मनभावति अशीशपुनि पाई॥
पुनि गुरुतिय विप्रनकी नारी। सिय सबके पग लगिसुकुमारी॥
ले अशीश सासुन ढिग आई। मिलि पगलगिलखिगईसुखाई
दे अशीश सब हिये लगाहीं। अचल रहै अहिवात सदाहीं॥
तब मुनि प्रभुहि निकट बैठावा। नृप कर सुरपुर गमन सुनावा॥
सुनि सिय राम महादुख माना। लषण सुनत अतिरोदन ठाना॥
तब वशिष्ठ सबहीं दिय ज्ञाना। उठि रघुनाथ कीन्ह अस्नाना॥
दशमी दिन किहुँ अन्न न लयऊ। बिनुजलसबहिदिवसनिशिगयऊ
प्रातहि जो आयसु मुनि दीन्हा। सोप्रभुश्रद्धायुत सबकीन्हा॥
कर पितु क्रिया वेद अनुसारी। भे पावन जग पावन कारी॥

दोहा-यथा वेष धरि नट कोई, कौतुक करै अनेक ।
तस चरित्र रघुनाथके, जानै जासु विवेक ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ग्रंथउजागर भरत मिलापवर्णनो नाम पंचदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

दोहा-विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिरि राम सुखदान ।
वरणौं मानस मत कछुक, अग्निवेश युत आन ॥

चित्रकूटमें अवध निवासी । रहैं मुदित प्रभु दरश हुलासी ॥
तब रघुपति इमि गुरुहि सुनाई । नाथ कष्ट पावत समुदाई ॥
फल भक्षत कृशतनु नर नारी । लख न सकत इनको दुख भारी ॥
अब मुहिं जैसी होय रजाई । सोइशिर धरि करिहौं सेवकाई ॥
सुनि बोले गुरुहिय सुख पाई । प्रथम लोग दुख सहे अघाई ॥
जबते पाये दरश तुम्हारे । तबते जन कछु भये सुखारे ॥
तिहिते कछुदिन करहिं निवासा । भलेहिनाथकहिगये अवासा ॥
विचरैं जहाँ तहाँ नर नारी । निरखिरामछविहोहिंसुखारी ॥
पयस्विनि तीनों काल नहाहीं । कहैं होय रति राम सदाहीं ॥
कोल किरात मूल फल लावहिं । आगे धरि धरि शीश नवावहिं ॥
"देहिं लोग तिन्ह मोलन लेहीं । फेरत राम दुहाई देहीं" ॥
तुम सुकृती नीच वनचारी । दरशन भे बडि भाग्य हमारी ॥
बडे पाहुने तुम सुखदाई । सेवा योग न हम रघुराई ॥
दीन जान लीजै फल मूला । रीझत सुजन प्रेम अनुकूला ॥

दोहा-सुनि मृदुवचन विनीत अति, सबै सराहन लाग ।
यद्यपि कोल किरात यह, तदपि अहैं बडभाग ॥

यहि विधि लोग रहैं हरषाहीं । पलकसरिसनिशिवासरजाहीं ॥
सबके मनमें अस अभिलाषैं । जहँ सियराम तहां विधिराखैं ॥

सीय सासु प्रति वेष बनाई । सेवहिं सबै प्रीति अधिकाई ॥
ऋषिवासर इहि भाँति बिताये । द्वितियादिनसबइकथलआये ॥
राम भरत मुनि पुरजन रानी । निर्णय हेत कहत सब बानी ॥
रामहिं वेग लेहिं लौटारी । कहत भरत इमिवचनविचारी ॥
तिहि क्षण जनकदूत दो आये । मुनिपदकमल शीशतिननाये ॥
बूझी गुरु विदेह कुशलाई । समाचार कहि दीनसुनाई ॥

दोहा–कुशल हेतु जो सबहि कर, सो गुसाँइ मुनिराज ।
अथवा दशरथसँग कुशल, गइ बिगरे सब काज ॥

अवध समान दशा मिथिलाकी । भइविदेहगतिथकिविमलाकी ॥
नृपपरलोक नृपति जब जाना । सहित समाज महादुख माना ॥
पुनि धरि धीरज दूत बुलाये । समाचार हित अवध पठाये ॥
जाय अवधतिन चरित निहारा । भरत चले जहँ कृपाअगारा ॥
जा विदेहसे खबर जनाई । चलेजनकसुनतहिअकुलाई ॥
आगे सुधहित हमहिं पठावा । निकटअहैकहितिनाशिरनावा ॥
जनकागमन सुनत रघुराई । आगे चले सहित समुदाई ॥
पुरजन परिजन भये सुखारी । ह्वैहै रहव और दिन चारी ॥
प्रभुगिरिनिरखिजनकरथत्यागा । कीन प्रणाम सहित अनुरागा ॥
इहि विधि आश्रमतट सब आये । रामहिलखिसबजनअकुलाये ॥
जनक मुनिनपद शीश नवावा । रामहु ऋषिन वंदि सुख पावा ॥
मिले जनकसन पुनि रघुराई । आश्रमको ले चले लिवाई ॥
दोउसमाजमिलिव्याकुलभारी । ज्ञान धीरता विरति बिसारी ॥

दोहा–भूपरूप गुण शील कह, रुदन करत सब रानि ।
रामहिं लखि हिय दाह अति, भयो वास विधि आनि ॥

नृप विदेहकी दशा निहारी । ऋषिमुनिसेसबनिपटदुखारी ॥
जनक नृपति नहिं मोह भुलाई । महिमा रामप्रेम अधिकाई ॥

राम प्रेम बिन जप तप योगा। वादिविभूषण नाना भोगा ॥
मुनिवर सबहिं सिखायो ज्ञाना। रामघाट सब किय अस्नाना ॥
जल थल लखि सब उतरे तीरा। तिहिदिन लियो न अन्ननीरा॥
प्रात होत सब जाय नहाये। कोल किरात मूल फल लाये ॥
मुनि विदेहके पास पठाये। परिजन सहितनृपतिसबपाये ॥
इहि विधि वासर बीते चारी। निरखिसकलप्रभुहोहिंसुखारी॥
दोउ समाज मिलि वचन उचारे। जहाँ राम तहँ रहैं सुखारे ॥
ज्येष्ठ शुक्क जिष्णुग दिन जानी। आई जनकराजकी रानी ॥
सीयसासुके ढिग सब आई। कौशल्या सादर बैठाई ॥

दोहा-सीयमातु कह वाम विधि, कर्त्तब जानि न जाय।
विष वायस जहँ तहँ घने, मानस हंस रहाय ॥

कहँ वह व्याह उछाह घनेरा। कहँ वनदुख हिय कीन बसेरा॥
सुनि कह देवि सुमित्रा रानी। भयो विधाता वाम सयानी ॥
कौशल्या कह दोष न काहू। निज कृत कर्म दुःख सुख लाहू॥
राम सीय वन बसैं दुखारी। बैठी देख रहति महतारी ॥
भूपति जन्म मरण भल जाना। ममहियसाखिखलुवज्रसमाना ॥
मुहिं न शोच वन राम रहाहीं। दुख इक भरत गूढ मनमाहीं ॥
रामबिना सो भल न रहाहीं। कहेउ सुनाय नृपतिके पाहीं ॥
बहुरहिं लषण भरत हों साथा। सब विधि हैं समरथरघुनाथा ॥
भरत शील गुण प्रेम बड़ाई। शेष शारदा सकहिं न गाई ॥

दोहा-भरतहि कुलदीपक गुण्यो, मुहिं इमि कह्यो महीप।
कनक कसौटी जिमि कसे, अवसर पुरुष प्रदीप ॥

सुनि वर वचन विकल भइरानी। धरहु धीर बोली मृदुवानी ॥
लषण मातु तब बोली बानी। देवि दण्ड युग रैनि बितानी ॥
सुनत उठी कौशल्या रानी। उठी सुनैना पुनि दुख मानी ॥

कह कौशल्या थलहि पधारो। नृपकर अब निर्वाह हमारो॥
जनक प्रियाकह तुम सबलायक। दशरथघरत्रिभुवनरघुनायक॥
गिरि निजशिरन धूरि तृणधरहीं। अंगीकृत नहिं जनहिं बिसरहीं॥
राम सीय लक्ष्मण वनजाहीं। सबविधिसुरजनकार्यकराहीं॥
आनहिं बहुरि करहिं पुर राजा। सुखी होय तिहुँ लोकसमाजा॥
नारद याज्ञवल्क्य इमि भाषा। होयनमृषाजु कछु कहिराखा॥
अस कहि सियहित विनय सुनाई। सीयसहितनिजथलपुनिआई॥
सीय मिली सबहीसन आई। प्रिय परिजनहियगेदुखछाई॥
जनक आय सियजबहिं निहारी। लाई उर मे व्याकुल भारी॥
पुत्रि दोउ कुल पावन कीन्हें। पावन सुयशलोक तिहुँ लीन्हें॥
सुनि पितु वचन सियासकुचाई। इहाँ रहब नहिं भल मन लाई॥
लखि रुख भइ प्रसन्न महतारी। पठै दीन सीतहि सुकुमारी॥

दोहा-समयपाय नृपसन कही, कौशल्याकी बात।
सुनत वचन गद्गद भये, नृप तब पुलकित गात॥

सुनत वचन कह तिरहुतिराऊ। ऐसेइ है जग भरत प्रभाऊ॥
मैं वशिष्ठ बहुभाँति विचारी। भरतबुद्धिकी थाह न पारी॥
भरत भाग्य गुण शील बड़ाई। शेष शारदा सकत न गाई॥
भरत अगम महिमा प्रभु जानत। तदपिप्रगटनहिंसकतबखानत॥
तौ फिर और सकै को पाई। सीपमाहिं किमि सिंधुसमाई॥
फेरहुँ लखण भरत वन जाहीं। कहिहौं तबै थाह कछु पाहीं॥
राम भरतकी बात सयानी। जाने भरत राम नहिं आनी॥
इहि विधि करत भरत गुणगाहा। उठे प्रभात होत नरनाहा॥
प्रातकाल पय सरि सब न्हाई। जनक वशिष्ठ भरत रघुराई॥
कौशिकादि मुनि परिजन सारे। बैठे सब जुरि धीरज धारे॥

कह प्रभु मुनि वशिष्ठके पाहीं । सहत कष्ट सब काननमाहीं ॥
प्रथम जो आज्ञा मोकहँ होई । माथे मान करहुँ मैं सोई ॥
दोहा-कह मुनि धर्मधुरीण तुम, कस न कहहु अस बात ।
अस कहि बोले भरतसे, कहो मनोरथ तात ॥
तब मुनि भरत दोउ कर जोरे । कहे वचन जनु अमृत बोरे ॥
जहँ त्रिभुवनपति राम विराजत । कौशिकगुरुविधिसारिससुछाजत
निधिगति छेकी जिन मुनिराई । बैठे सो पुनि तिरहुतराई ॥
औरहु सचिव अवधके लोगा । बैठे जहाँ सभा संयोगा ॥
तहँ मैं कहौं कौन विधिवानी । जो सब कहैं करौं हितमानी ॥
कह मुनि हमैं बात यह भाई । राम कहैं सो किये भलाई ॥
अग जग जीव जगतके जोई । राम रजायसु सब शिर होई ॥
कौशिक सचिव विदेह नृपाला । सबन कह्यो भल मंत्र रसाला ॥
राम आपने शिर लखि भारा । श्रुति सम्मत असवचनउचारा॥
दोहा-नाथशपथ कर कहतहौं, भरत सरिस शुचिभाय ।
भयो न है नहिं होयगो, सकुचत करत बडाय ॥
गुरुपदरज जे जन शिर धरहीं । ते जनु सकल भुवनवश करहीं॥
जापर रौरी कृपा विशेषी । भरत सरिस कहुँ बंधु न देखी ॥
सकुचत मुखपर करत बडाई । निन्दे इनहिं पाप सरसाई ॥
गातहिं दोष देइ जन सोई । जो हरि सन्त विमुखनर होई ॥
मातनमें अति प्रिय सोइ माता । भ्रातनमाहिं भरत शुचिभ्राता ॥
भरत आज आयसु जो देहीं । निश्चयसोइ शीश धरिलेहीं ॥
सुनत वचन सब देव डराने । शारद बोल विनय बहुठाने ॥
सोन गई तब कीन उचाटन । जनकभरत मुनितजगासबतन॥
सबको मन तब भयो उचाटा । क्षण वररुचिक्षणमन वनवाटा॥
दोहा-तब मुनि बोले भरतसन, तात कहो अभिलाष ।
जिहि विधि हितसब जगतको, होइ करहु सोइ साख ॥

तब कह भरत कहौं सतभाऊ। मैं जानों निज नाथस्वभाऊ॥
जननी जनकसखा निज सोदर। सेवक सचिव प्रजा नारी नर॥
सबहिनसबविधि कियो भरोसा। काहुन लख्यो बदनसहरोसा॥
सबपर कृपाकटाक्ष घनेरी। तदपि प्रीतिअति मानत मेरी॥
शिशुपनते सब रीति निबाही। कियो न भंग मोरमन काही॥
हौंहुँ लखी नित आयप भाई। मोहिं दिये बिन आप न खाई॥
मैं प्रभुरीति बारबहु जोही। हारे आप जितायहु मोही॥
महूँ सनेह सकुच वशभारी। सन्मुख नहिं वाणी उच्चारी॥
निशिदिन दरश पियासे नैना। इनहिं लखे नित पायो चैना॥
सो सनेह नहिं भयो निबाहा। ताजे प्रभु केकदेश अवगाहा॥
पुनिप्रभु मातुपिता सिख जोई। परिहरि इत आयो मैं सोई॥
सो अघप्रभु मनसे नहिं लाये। शरण जान मुहिं भल अपनाये॥
अस प्रभुसे नहिं होत ढिठाई। सेवक स्वामिधर्म कठिनाई॥

दोहा—जो सेवक निज स्वार्थवश, स्वामीसे छलठान।
ताहि पोच खलु जानिये, यामें शास्त्र प्रमान॥

याते प्रभु जो आयसु होई। माथे मान करहुँ मैं सोई॥
भरतवचन सुनि सब सुखमाना। अतिशय धर्मधुरंधर जाना॥
राम भरतते वचन उचारे। मही रही थमि पुण्य तिहारे॥
सुनहु मोर सिख जगहितकारी। पितुआयसुसबविधिसुखकारी॥
हमैं तुम्हैं करनो है सोई। तुमहू करो कहानहु सोई॥
मातु पिता गुरु आज्ञा टारैं। सो जनु त्रिभुवन तिनको मारैं॥
अस जिय जान मोर शिखमानी। पालहु प्रजा अवध रजधानी॥
तुमहिं तनक नहिं होय कलेशू। माथेपर गुरु मुनि मिथिलेशू॥
महूं चतुर्दश वर्ष बिताई। ऐहौं बेग तजहु भय भाई॥
रामके वचन रसाला। मिटा सकल दुख दोष बिशाला॥

दोहा—फल पायो जनु जन्मकर, भा भरतहि सन्तोष।
हाथ जोरि बोले वचन, पावन शुचि गतदोष॥

तिलकसाज सब लायों साथा। आयसु कहा ताहि रघुनाथा॥
तब प्रभु कहा अत्रि कह जोई। याको तात करहु तुम सोई॥
सुनि गे भरत अत्रिके गेहा। किय प्रणाम शुचि सहज सनेहा
बैठारे मुनि कर सन्माना। भरत अत्रिते वचन बखाना॥
नाथ सकल तीरथ जल आना। धरैं कहाँ कहु कृपानिधाना॥
कह मुनि निकट कूप इक अहई। बहुत समयते लोपित रहई॥
तृण निकार जल दीजे डारी। होइहितीर्थ सकल अघहारी॥
भरतकूप ह्वैहै तिहि नामा। मज्जन पान किये फुर कामा॥
कीन भरत यह सब सुखपाई। पुनि रघुनायक आयसु पाई॥
देखनचले तीर्थ तहँकेरे। नेम उपासन करत घनेरे॥
पाँच दिवस देखे सब धामा। हरिदिन न्हाय गहे पद रामा॥

दोहा—कह्यो देहु आधार मुहिं, सेउँ अवध भरिजाय।
सुनि प्रभु दी निजपादुका, लीन्हीं शीश चढाय॥१॥
करि प्रणाम माँगी बिदा, राम लिये उरलाय।
जननि जनक गुरु सचिवप्रिय, मिलेसबहिरघुराय॥२॥
भेंट सबन कीनो बिदा, चलिभे सकल मलीन।
उर उचाट व्यापो सबन, जब सहाय तिनकीन॥३॥

जनु सियराम वियोग मँझारी। भरत अवधवासी नर नारी॥
सब मातनको बोध दृढाई। बिदा कीन राघव बरियाई॥
सबहि पठे निज आश्रम आई। बैठ भरतकी करहिं बड़ाई॥
भरत नृपति यमुनातट आये। तिहि दिन तहाँ रहे दुखछाये॥
दूसर ग्राम भीलपति वासा। तीसर भयो गोमती पासा॥
चौथे दिवस अवधपुर आये। जनक चार दिन तहाँ बिताये॥

कर प्रबन्ध सब भाँति सुहावन । निजपुर गये विदेह सपरिजन ॥
भरत यहां शुभ दिवस सुझाई । निज गुरुकर अनुशासन पाई ॥
प्रभुपादुका सकल सुखदाई । सिंहासन ऊपर बैठाई ॥

दोहा—पुनि निज अनुज बुलायकै, सौंप मातु सेवकाइ ।
पुर दक्षिण योजन इकै, नान्दिग्राम सुखदाइ ॥

तहां जाइ निजकुटी बनाई । नेम धर्म व्रत सुरति लगाई ॥
कन्द मूल फल करत अहारा । तपनलगे रविवंश उजारा ॥
अवधविभव लखिधनद लजाहीं । भोग बिलोकि सुरेश सकाहीं ॥
सो सुख भरत त्याग सब दीन्हें । रहत विराग हियेमें कीन्हें ॥
जो रघुवरको बन्धु सुहाई । तिहिकि निकट माया नियराई ॥
सन्मुख राम रहत जे प्रानी । तृणसम तजतभोग सुखहानी ॥
भरतचरित अति पावन कारी । मंगल भवन अमंगल हारी ॥
जे सप्रेमकर सुनहिं जे गावहिं । सुखसम्पतिनानाविधिपावहिं ॥

छन्द—ते पाइहैं सुख विविध भाँतिन भरत कीरति गाइहैं ।
सुख भोग कर बहुभाँतिअन्तिम रामधाम सिधाइहैं ॥
रघुनाथको यश विमल गाकर पाप सब बिसराइहैं ।
अर्थ कामादिक पदारथ मुक्तिहू ते पाइहैं ॥

दोहा—श्रीगुरुपदरजशीश धर, भरत राम सम्वाद ।
भाषामें कछु कारि कह्यो, द्विज ज्वालापरसाद ॥

सोरठा—भरत चरित सुखदान, नेम रूप सादर सुनहिं ।
कृपा करहिं भगवान, भक्ति देहिं आनन्द नित ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ग्रंथउजागर भरतअवध आगमनोनाम षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

इति अयोध्याकाण्ड सम्पूर्ण ।

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

अथ

श्रीविश्रामसागर।

अरण्यकाण्डप्रारंभः।

दोहा–विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिरि राम घनश्याम ॥
आदिरमायणसार ले, वर्णहुँ प्रभु गुण ग्राम ॥

भरतचरित वरणे सुखदायक। अबतुमसुनहुकथारघुनायक ॥
लक्ष्मणसहित सीय अरु रामा। वसत चित्रकूटहि अभिरामा ॥
चहुँदिशि सुन्दर वृक्ष सुहाये। पुष्पलता बहु जहँ तहँ छाये ॥
मंद सुगंधित चलत समीरा। श्रमहारी कर स्वच्छ शरीरा ॥
इक दिन प्रभु चुनि कुसुम सुहाये। भूषणकर सीतहि पहराये ॥
तिमि सीता प्रभुको पहराये। बैठे फटिक शिला मन भाये ॥
अपने कर सीताके भाला। दीनोंप्रभुकरितिलक विशाला ॥
रही छिटक पूनो उजियारी। तिहिनिशि तहाँ जयन्ता नारी ॥
संग सखी दर्शन हित आई। विनय कीन वर माँग सिधाई ॥

दोहा–यह सुधि पाय जयन्त तब, धारयो काकशरीर।
सीताचरणन चोंच हति, भागत चल्यो अधीर ॥

रुधिर देख प्रभु सींक उठाई। ब्रह्म मंत्र पढ़ दीन चलाई ॥
चल्यो ब्रह्मशर पाछे ताके। भाग चलो वायस भय पाके ॥
रूप राखि पितुके ढिग गयऊ। विमुखरामलखिठौरनदयऊ ॥
शिव ब्रह्माके लोक सिधारा। बैठनको न कियो सत्कारा ॥
ताको सकल जगत विपरीता। रामविमुख जो शिवे पुनीता ॥
विकल देख नारद समुझावा। सपदि रामके निकट पठावा ॥

जाय जयन्त परयो पग धाई। हाथ जोरि वहु विनय सुनाई॥
तुम बिन कोउ रक्षक नहिं ताता। दया करहु भक्तन सुखदाता॥

दोहा—सुन कृपालु आरत वचन, एक नैन तिहि खोय।
बिदा कियो समुझाय कर, करु न उपद्रव कोय॥

इहिविधितहँ कछुकाल बितायो। सीतालषणसहितसुखपायो॥
अवधलोग नित भरे रहाहीं। बीस जाहिं पचीसक आहीं॥
तब प्रभु निजमन कीन विचारा। भयो नगरसम वास हमारा॥
सबऋषियनसन बिदा कराई। कारमास चलिभे रघुराई॥
प्रथम अत्रिके आश्रम आये। करतदण्डवत ऋषि हियलाये॥
आसन देय मूल फल दीन्हें। प्रेम सहित प्रभु भोजन कीन्हें॥
बैठे प्रभु आसन सुख पाई। पूछी प्रभु सब मुनिकुशलाई॥
कहि सब पुनि ऋषिप्रेम बढाई। अस्तुति करत भाग्य निजपाई॥

छन्द—जयरामराघव भक्तहित कर नौमिसुरगणनायकम्।
जय दीनबंधुकृपालु दुखहर जयतिपरसुखदायकम्॥
शेष ब्रह्म महेश सेवित दासदुख अघ भंजनम्।
भूमि सुर गो ऋषि मुनीश्वर साधुजनके रंजनम्॥
तवपदकमलजे भजतनिशिदिनतेमनोरथपावहीं।
ते पतत भवसिंधुमें जे चरणतवबिसरावहीं॥
अव्यक्त एकअनादिअजजगपालरमानिवासहो।
भक्तजनको योगि दुर्लभ देत गतिगुणरासहो॥
श्यामसुन्दर रूपलखकर कामकोटिकलाजहीं।
जनहेतविचरतकरतपावनकियेतपसिनसाजहीं॥
भक्तवत्सल जगतकारण सानुकूल स्वच्छन्दहो।
बुद्धि निर्मल बसततुम्हरे चरणमें गतद्वन्द्वहो॥

दोहा-इहि विधि अस्तुति कीन मुनि, भरे विलोचन नीर।
प्रभुतोषे करि बिनय बहु, मिटी सकल भवपीर ॥
सिय मुनिके चरणन्न शिरनावा। आशीर्वाद बहुत विधिपावा ॥
पुनि अनसूयाके ढिग जाई। चरणवंदि बहु विनय सुनाई ॥
अनसूया लखि अति सुखपाई। देव दिये भूषण पट लाई ॥
दे अशीश सीतहि पहिराये। जो नित असल नवीन रहाये ॥
पुनि कछु नारिन धर्म बखाना। तियकर पतिही देव न आना ॥
अंध बधिर पंगुल किन होई। तियको पूजनीय है सोई ॥
सब छलछांडि करै पतिवन्दन। बिनुश्रम छूटजाय भवबन्धन ॥
पति प्रतिकूल लोक दोउ नाहीं। यह सिय सत्य जान मनमाहीं ॥
पतिही गुरू पतिहि सब देवा। पतिकी करै सकल विधिसेवा ॥
तुमहिं रामप्रिय प्राण समाना। यहजगहितकछु कीनबखाना ॥

दोहा-तब बोले प्रभु अत्रि सन, आज्ञा देहु सुजान।
जाय विलोकहुँ आन वन, तब मुनि कह्यो बखान ॥

तुम समान जब पाहुन पाये। कैसे कहों जाहु मन भाये ॥
तब प्रभु बहुविधि विनय सुनाई। चले लषण सिययुत रघुराई ॥
सरिता गिरि मारग लखिदेहीं। भूभइ मृदुल मेघ छालेहीं ॥
सब मुनियनके आश्रम जाहीं। शिर नवाय कछु दिवस रहाहीं ॥
आवत हर्ष न कछु कहिजाई। जातसाथ मन देहिं पठाई ॥
गिरि अनेक कंदर वन नाना। लाँघत चले जाहिं भगवाना ॥
मिला विराध असुर विकराला। रूप भयंकर मानहु काला ॥
बोला लखि अति क्रोध बढाई। हो तुम साधु नारि कहँ पाई ॥
काहूकी छललाये नारी। कहि असिय गहिसो कुविचारी
चल्यो गहन काननको धाई। प्रभु दुख पायरहे अरगाई ॥

दोहा-अस्तुहि झुझायो लषण निज, छाँड़े विकट नराच ।
उर लागत व्याकुल भयो,सियतजि चल्यो पिशाच ॥
काल समान लषण पहँ आवा । सुर मुनि खगमृग अतिभयपावा ॥
पविसमवपुषचल्यो जिमि भूधर । लषण मार शर तनु कियजर्जर ॥
मूर्च्छा खाय बहुरि पुनि धावा । रामबाण तजि मार गिरावा ॥
तुरतहि ताहि दिव्य तनु पावा । व्योमयान चढि स्वर्ग सिधावा ॥
तासु अस्थि गाडी भूमाहीं । चले सीय ले काननकाहीं ॥
उत सुरपति शरभंग निकेता । जातरहे प्रभु लखि चित चेता ॥
करि प्रणाम निजलोक सिधाये । प्रभु शरभंग आश्रमहि आये ॥
निरखि रामछबि मुनि सुखपावा । आदर कीन निकट बैठावा ॥
करि बहु विनय भक्तिवर मांगा । योग अग्निसे निज तनु त्यागा ॥
चढि विमान वैकुंठ सिधारा । भइ गति भेद भक्ति अनुसारा ॥
गे प्रभु अन्य मुनिनके धामा । बहुप्रकार सुख पायो रामा ॥
इहि विधि द्वादश वर्ष बिताये । तब दक्षिण कानन चितलाये ॥

दोहा-ऋषि अगस्त्यकर शिष्य इक, जासु सुतीक्षण नाम ।
तिन सुनपायो विपिनमें, आवतहैं श्रीराम ॥
चलिभो देहदशा बिसराई । नृत्य करै कबहूं ठहराई ॥
लखि अति प्रेम हियेमें आई । कृपासिंधु प्रभु दरश दिखाई ॥
इत पहुँचे आपहु ढिग जाई । उठहु उठहु द्विज कहि समुझाई ॥
उठो न तब प्रभु कीन उपाई । हियते लीनो रूप दुराई ॥
तब व्याकुल ह्वै नैन उघारे । राम लषण सियसोहिं निहारे ॥
कीन दंडवत लखत सनेही । हिये लगाय लियो प्रभु तेही ॥
आश्रम लाय बहुत सन्माना । लीन्हों अचल भक्ति वरदाना ॥
सीता लषण सहित रघुनायक । बसहु सदा ममहियसबलायक ॥

दोहा-एवमस्तु कहि प्रभु चले, संग लग्यो मुनिराय।
गे अगस्त्यके आश्रमहि, मुनिको खबर सुनाय॥

सुनत अगस्त्य तुरत उठि धाये। प्रेम सहित आश्रम ले आये॥
कुशल प्रश्न करि आसन दीना। कन्द मूल दे पूजन कीना॥
कह ऋषि हैं बड़ भाग्य हमारे। जो तुमको करि प्रेम निहारे॥
बैठे प्रभुहि बहुत मुनि घेरी। जिमि चकोरगणचन्द्रउजेरी॥
कह प्रभु मंत्र देहु अस मोही। जिहि विधि मैं मारों सुरद्रोही॥
कह मुनि मुहिं का बूझहु स्वामी। कृपासिंधु प्रभु अंतर्यामी॥
तुम्हरे भजन तुमहिं प्रभुताई। जानपरी है कछु रघुराई॥
जिहि माया सब जगहि नचाई। सो तुम्हारि दासी बर दाई॥
काल कराल भखत जग जाई। सो तव डर डरपत रघुराई॥

दोहा-ते तुम बूझत मनुजसम, सुयशहेत मुहिं राम।
भक्त वछल तजि तुमहिं जो, भजहि अन्यविधिवाम॥

तुम बिन गा चह भवनिधि पारा। श्वान पूंछ गहि उतरनहारा॥
कबहूं पार न पावहि सोई। देव दनुज नर कोउ किन होई॥
देहु भक्ति आपनि सुखदाई। अब सो कहा बसहु जहँ जाई॥
है प्रभु परम सुहावन ठाऊं। पावन पंचवटी जिहि नाऊं॥
वास करहु तहँ श्रीरघुराई। दंडकवनहि देहु हरिआई॥
दण्डकनृप कवि सुता सयानी। भोगनकी अपने मन ठानी॥
तिन निज पितुसे जाय सुनाई। शाप दीन मुनि क्रोध बढाई॥
सात दिवस इहि देशमँझारी। गिरे तप्त बालू दुखकारी॥
वृक्ष वेलि तृण सबहि सुखाहीं। होंय हरित जब रघुवर आहीं॥

दोहा-सुनत वचन सिय लषण युत, गये तहाँ श्रीराम।
पंचवटी शोभा निरखि, कीनो तहँ विश्राम॥ १॥

शाप मिट्यो वन हरित भो, गीध मिल्यो तहँआय।
प्रभु सन्मान्यो पितु सम, प्रीति करी अधिकाय ॥ २ ॥
गोदावरी निकट सुखदाई। रघुवर पर्णकुटी जहँ छाई ॥
तहां विराजैं प्रभु सुखदाई। ऋषि मुनि दरशकरैं बहु आई ॥
एक दिवस प्रभु सुख आसीना। लक्ष्मण पूँछत भे छल हीना ॥
प्रभु पूछौं आपन हितहेतू। मुहिं समुझाय कहो नयसेतू ॥
भवसागरको को आधारा। गुरु दयालु पग पोत निहारा ॥
कौन गुरू जो बोध करावे। कौन शिष्य जो सुनहि मलावै ॥
जगमें कौन विषय अनुरागे। होय मुक्त को विषयनत्यागे ॥
नरक कौन यह आपन देही। स्वर्गकौन तृष्णातजि जेही ॥
तमकी द्वार नारिको जानो। मोक्षमार्ग सत्संगति मानो ॥
को सोवत जगमाहिं लुभाये। को जागै सतअसत गिनाये ॥
कौन शत्रु निज इन्द्रिय जानो। सुहृद सोइजिनजयमनमानो ॥
रंक कौन तृष्णा जिहि भारी। धनी कौन सन्तोष विचारी ॥
कौन अंध मदनातुर जोई। चतुर भला निज मानत होई ॥
क्षमावन्त जगमें को प्रानी। परुषवचनसुनिक्रोध न ठानी ॥
मृतककौन अपकीरति जाकी। जीवतको कीरतिजिहि बाँकी ॥
दीर्घरोग को यह जग भाई। का औषधि विचार जो लाई ॥
को मैं कौन कहाँते आयो। कित जैहौं को पिता कहायो ॥
को जननी को कुटुम हमारा। यहि निर्धारन कहत विचारा ॥
दोहा—का अनीत आगम विरुध, तीर्थ कौन मन शुद्ध।
को प्रतीत बिन नारिधन, सेव्य सन्त अविरुद्ध ॥
कोज्वर चितकी चिन्ता भाई। को शठ जो निजधर्म विहाई ॥
लाभकौन हरिभक्ति विशाला। हानिकहा नभजनजगपाला ॥

कौन शूर जिन जित्यो स्वभावा । भूषण कौन ? शीलहियलावा ॥
विद्या कौन भेद कारि दूरी । भेद अविद्या कृत भरपूरी ॥
लज्जा कौन विकार न करई । महावीर को मन वश धरई ॥
धीरजवन्त बली जग को है । जो तिय नैनकटाक्ष न मोहै ॥
को दुख अनित वस्तुमें प्रीती । सुख को मम चरणन दृढ रीती ॥
पातकमूल लोभ है भाई । पढ़नो कुपथपंथ बिसराई ॥
को त्यागी जो करै सुकर्मा । अर्पै फल हरिको कर धर्मा ॥
सत्य वचन मम कीरति गावै । पंडित को विकार नहिं आवै ॥
ज्ञानी मम स्वरूप जिन जाना । मूरखजिहि तनुकर अभिमाना ॥
कौन पन्थ जिहिमें मुहिं पावै । को दानी मम भक्ति बतावै ॥
महापतित को हिंसक जोई । धन्य जो परउपकारी होई ॥
श्रेष्ठ कौन सत्कर्म कराई । नीचकौन कुकरम मनलाई ॥
संग्रह कौन सदा गुण मेरे । त्याग कुसंगति जाय न नेरे ॥
को तप विषय भोग परिहारा । दया भूतविद्रोह बिसारा ॥
को यमजाल तामसी प्रेमा । प्रेमकहा तनुछोह न जेमा ॥
साधु कौन दाया उर जाके । माया को हरिविमुख नसाके ॥
सुखदुखसम किमि करैंतितिक्षा । को विज्ञान विवेक परीक्षा ॥

दोहा-पंचतत्त्व निर्मित वपुष, होन ज्ञात कुल एक ।
व्यापक चेतन सबनमें, कहियत याहि विवेक ॥ १ ॥
जीव चराचर जगतके, सबमें रहो समाय ।
शान्तरूप निश्चय कियो, सो विज्ञान कहाय ॥ २ ॥
जीव ईशमें भेद कत, इतनहिं जानो तात ।
बद्धदशामें जीवहै, तिहि बिन मुक्त कहात ॥ ३ ॥
जो कह जीव भयो किमि, सब घट चेतनरूप ।

सुनहु अविद्या वृक्ष यह, जगको परम अनूप ॥ ४ ॥
गुणसुपक्ष बिन ईश है, चहै विहँग गुणपक्ष।
निवसत तापै आय जब, हुइगुणपक्ष प्रत्यक्ष ॥ ५ ॥
अमत वासना नित लिये, इमि जीवत्व उपाधि।
ज्ञान कर्मकरि होत है, मोक्षबन्धश्रुतिसाधि ॥ ६ ॥
जैसे मठ आकाशते, घटाकाशको भेद।
तैसे मिटै उपाधि जब, जीव रु ब्रह्म अभेद ॥ ७ ॥

सत्संगती वासना त्यागा। विद्या आत्मविचारहिलागा ॥
प्राण निरोधनमें मनमाना। चार मुक्तिके द्वार बखाना ॥
पुरुष अयोगि विषय रत जोई। ताको ब्रह्म न दरशन होई ॥
बिनु विराग जिमि ज्ञान न आवै। यह सब वेद पुराण बतावै ॥
विरति कौन विधिलोकप्रयन्ता। सबसुखलोष्ठसमानदिसन्ता ॥
भूत कहा भय चितकर जोई। परम जाप ममनामजपोई ॥
कौनपिशुन पर अवगुण कहई। मौनीको मितभाषण लहई ॥
पिता विवेक सुमति मा जानो। हरिजनमिलनमोक्षसुखमानो॥
दुस्तर कौन दुराशा भारी। रार मूल किमि हास उचारी ॥
को पशु जो बिनु पुण्य रहाहीं। बंधु विपतिमें काम जुआहीं ॥
श्रद्धा क्या कारजमें प्रेमा। क्रियामाहिं आलस तजि नेमा॥
को विश्वास साँचसुनि माना। तोष कहा निष्काम अमाना ॥
निष्ठा कहा प्रेम जिहि होई। तासु अभाव कष्ट जिय जोई ॥
का रुचि शोचरहितसुखपावन। भावक्षमादि सकलगुण आवन॥
का आसक्ति बिनाप्रियदरशन। रुचत न कछुकप्राणनिजतनधन
भोजन कहा सुतीन प्रकारा। उत्तम मध्यम नीच विचारा ॥
मृदु मधु मंजु सात्विक अहई। ताता तिक्त रजस श्रुति कहई ॥

भक्ष्याभक्ष तामसी जानो । तीन भाँति इमि नरन पिछानो॥
तीन भाँतिकी पूजा होई । आतम साधु मूर्त्ति जग जोई ॥
शान्ति कहा जु विकार न राखे । निरअभिमान ज्ञान वचभाखे॥
वशीकरण क्या कोमल बैना । मारण मंत्र क्षमा बड़ चैना ॥
जीव उभय क्या मोक्षसबन्धन । रहित सहित वासना सदामन॥
भाग्य स्वधाम कुमति परनारी । जगतमान्यता आशाभारी ॥
क्याउज्वल पन धन क्या धर्मा । करनी बिन जो वदत अकर्मा ॥
सबपर कौन ईश्वर अहई । प्रकृतिनियन्ता तिहि श्रुतिकहई
इहि विधि प्रभु जबकीनबखाना । सुनि उपदेश लषण सुखमाना॥

दोहा-रत्नमाल उपदेश यह, रामवचन सुखसार ।
हृदय धरैं करि प्रेम जे, हों भवसागर पार ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ग्रंथउजागर रामदण्डकारण्यागमनप्रश्नोत्तरवर्णनोनाम सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

दोहा-विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिरि राम सुखदान ।
वरणौं मानस मत कछुक, सकल सुमंगल खान ॥

लषण धनुष शर करनिजधारी । करत चहूँ दिशि प्रभुरखवारी॥
प्रभु सिय राजत पर्ण कुटीरा ।विष्णु रमायुत जिमि मतिधीरा॥
तिहि अवसर रावणकी बहिनी ।शूर्पणखाजिमि दारुण अहिनी॥
मोहित भई लखतही रामा ।वन सुन्दरि कह वचन ललामा॥
नृपनन्दन मैं राजदुलारी । निज सम वर न मिलो हूँ क्वाँरी॥
तुमहिं देख कछु निजमनमाना ।करु मुहिं निजभामिनिसुखदाना
सियदिशि लखि प्रभु बोले बानी। मोरि तिया है यह सुखदानी ॥
अहै कुमार मोर लघु भाई ।तिनको अवशि वरहु तुम जाई॥
हस्तिनियोग शशा नहिं होई । दुखदायक सुखहरनी सोई ॥

पद्मिनि मोहिं वरो मम वरनी । तुम न सकत है पुनिममवरनी ॥
तब सो लक्ष्मणपै गइ धाई । सुनिलक्ष्मणइमि कही सुनाई ॥
मैं उनकर हूँ दास सयानी । उनको वरो कहैहो रानी ॥
पुनि सो रघुवर पास सिधाई । प्रभु लक्ष्मणपर बहुरि पठाई ॥
कह लक्ष्मण तुहिं वरिहै सोई । जो लोकहु परलोकहु खोई ॥
"सुनि खिसियाय रामपै गई । रूपभयंकर प्रगटत भई ॥"

दोहा-बोली तुम कपटी दोऊ, कीनो हास हमार ।
अब तुमको भक्षणकरहुँ, तीयसहित छलकार ॥१॥
सीय सभय लखिराम तव, अनुजहि कहि समुझाय ।
वेदवाद नभ कहतही, लषण उठे रिसिआय ॥२॥

नाक कान काटे तत्काला । हाय हाय करि भई बिहाला ॥
रुधिर स्रवत ताही क्षणधाई । खरदूषण कहँ जाय सुनाई ॥
बोली धिक तव पौरुष भाई । तुमहिं अछत मैं यह गतिपाई ॥
खर दूषण पूँछी सब बाता । कहिसबबातअधिकबिलखाता ॥
दो पुरुषनके सँग इक नारी । रति विमोह जिहि रूपनिहारी ॥
तव हित सो मैं हरण विचारी । तुरत नाकश्रुति बिन करिडारी ॥
सुनतहि खर दूषण करि क्रोधा । चौदह सहस बुलाये योधा ॥
अस्त्र शस्त्र गहि गहि सब धाये । गर्जहिं मारू वाद्य बजाये ॥
कोउ कह धर मारहु दोउ भाई । कोउ कह नारी लेहु छिपाई ॥

दोहा-इहि विधि गर्जत विपुल भट, आय गये प्रभुतीर ।
लखि सेना इमि अनुजसँग, बोले श्रीरघुवीर ॥

सीतहि ले गिरिकंदर जाहू । रहिहो सजग डरेहु जनि काहू ॥
निशिचर सेना आइ घनेरी । चले लषण ले सियतिहि बेरी ॥
१ लखि राम असुरदल आवा । बिहँसि कठिन सारंग चढावा ॥

जैसे सिंह करिन कहँ हेरत । आये असुर चहूं दिशि घेरत ॥
लखि अकेल असुरन सुखमाना । सहजहिं लेहिं मनुजके प्राना ॥
प्रभु छवि देख कही खर दूषण । यह नृपकुमर सकलजगभूषण ॥
सकल जगत विचरे हम भाई । नहिं देखी अस सुन्दरताई ॥
यद्यपि कीन कुकर्म अपारा । तदपिन वधनयोग्य सुकुमारा ॥
नारि देइ अपने घर जाहीं । तौ हम इन्हैं मारिहैं नाहीं ॥
दूतन प्रभुसे जाय सुनाई । सुनत राम बोले मुसुकाई ॥

दोहा-हम क्षत्री वन खेलहीं, मृगया करै निशंक ।
तुमसे खग मृग खोजहीं, हरत निशाचर वंक ॥१॥
जो तुम्हरे नायक डरैं, तो घर जाँय पराय ।
समर विमुख नहिं किछु हतौं, कही दूत सुन जाय ॥२॥

खर दूषणकर शासन पाई । धाय परे निशिचर समुदाई ॥
जब प्रभु किय सारंग टँकोरा । दबिगे सकल निशाचर शोरा ॥
शूल शक्ति तोमरन प्रहारा । करहिं रामपर एकहि बारा ॥
तिलसमान प्रभु शस्त्र निवारे । पुनि अपने शर निकर प्रहारे ॥
कटनलगो निशिचरदल सारो । हाय हाय निशिचरनपुकारो ॥
कोइ कह खर दूषण मतिहीना । इनते वृथा समर जिन कीना ॥
सुनि सकोप तिहुँ भाइ उचारी । समर तजै तिहि डारैं मारी ॥
फिरे वीर सुनि मारन लागे । निज २ प्राणनके भयत्यागे ॥
रामबाण लगि तनु कटजाहीं । मारुमारु कहिपुनिउठिधाहीं ॥

छन्द-उठ भिरहिं पुनिपुनि लरहिं पुनिगिरपरहिं करिमायाघनी ।
सुर डरहिं चौदह सहस निशिचर एकहै कौशलधनी ॥
बहु कंक काक शृगाल प्रेत पिशाचगण तहँ धावहीं ।
गहि आंत डोलहिं योगिनी कर रुधिरपान अघावहीं ॥

निज दल विचल लखि दूषणादिक अस्त्रशस्त्र प्रहारहीं।
दशदश विशिख प्रभुमार तिनके सकलशस्त्र निवारहीं॥
पुनि कीनकौतुकरामनिशिचररामवपुसवलखिपरचो।
तब लगे मारन परस्पर करियुद्धदलइमिलरमरचो॥

दोहा-रामराम कहि त्याग तनु, असुर गये हरिधाम।
क्षणमें मारे सब असुर, बिनु श्रमही श्रीराम॥

देवन विपुल सुमन वर्षाये। पुनि लक्ष्मण सीतहिलेआये॥
शूर्पणखा रावणपै जाई। रोदन करिकरि कथा सुनाई॥
तोहिं अछत अस दशा हमारी। समुझि परत यह राजउजारी॥
सुनि सब सभा उठी अकुलाई। रावण कह कहु कौन सताई॥
नाककान बिनकिन तुहिं कीना। अबयमराज चहतकिहिलीना॥
शूर्पणखा इमि वचन सुनाये। दो तपसी वन सुन्दरि लाये॥
मैं लखि नारि हिये अस आनी। रावण योग्य ए नारि सयानी॥
छल करि मैं तिहि लेन सिधाई। तिन काटी श्रुति नाक रिसाई॥
रावण भगिनी अहौं बखानी। तिन काननमें कौन न कानी॥
खर दूषण लेगई सहाई। क्षणमें तिन सब सेन नशाई॥
त्रिशिरादिकखर वधसुनि काना। मनमें दुखअरु अचरज माना॥
त्रिभुवनमें अस नर को आही। जो निदरै मम अनुचरकाही॥
शूर्पणखहि समुझाय पठाई। भवन गयो दशमुख बलदाई॥
लग्यो करन मनहि अनुमाना। खर दूषण मोसम बलवाना॥
बिनु भगवान तिन्हैं को मारी। जो प्रगटे सुर मुनि हितकारी॥
तौ करि बैर प्राणनिज देहौं। सुरदुर्लभ गति बिनु श्रम लेहौं॥

दोहा-तामस तनु साधन नहीं, भजन बनतहै नाहिं।
जिहि सुधरो परलोक नहिं, वृथा जन्म तिहि जाहिं॥

जो नृपसुत कोउ आये होई । करि छल हरौं नारि मैं सोई ॥
गयो यान चढ़ि जहँ मारीचा । नायो शिर निज स्वारथ नीचा ॥
लखि मारीच कियो सन्माना । किमि आये तिहि कीन बखाना ॥
होउ कनकमृग तुम छलकारी । तपसिनकी हरिहौं प्रिय नारी ॥
सुनि बोलो मारीच सयाना । तिनसे मत करिये अभिमाना ॥
मुनिमख राखन गे दोउ भाई । बिनु फर शर मारो रघुराई ॥
शत योजन आयों इहि ठाहीं । तिन सन वैर किये भल नाहीं ॥
खर दूषण क्षणमें संहारा । कुशल चहो घर जाहु सबारा ॥
सुनि दशकंठ कह्यो करि क्रोधा । कहु शठ मुहिं समान को योधा ॥

दोहा-गुरुसम करत प्रबोध मम, मृत्यु निकट है तोरि ।
सुनत वचन मारीच तब, मनमें गुणत बहोरि ॥

उतर देत मुहिं बधे अयाना । कस न मरौं रघुपतिके बाना ॥
नैनन भरि देखहु छबि आजू । जन्म मरण छुटिहै बड़ काजू ॥
अस कहि रावण संग सिधारा । इत सिय लखिप्रभु वचन उचारा ॥
करो अग्निमें तुम सिय वासा । अब हौं करहुँ निशाचरनासा ॥
सुनिसिय तबहीं अनल समानी । वेदवंत वपु राखि सयानी ॥
लक्ष्मणहू यह भेद न जाना । गये रहे देखन तरु नाना ॥
बैठे सीय सहित रघुराई । मायासीय निकट सुखदाई ॥
हेम सुवर्ण हरिण मारीचा । निकसा सिय सन्मुख ह्वै नीचा ॥
लख मृग सिय बोली मृदु वानी । यह अद्भुतमृगमुहिं सुखदानी ॥
यहि मृगकर अतिसुन्दर छाला । लावहु बधकर दीनदयाला ॥
कारण लखि प्रभुधनु शर धारा । लक्ष्मणसे इमि वचन उचारा ॥
सीताकी रक्षा तुम करहू । देशकाल बुधि बल अनुसरहू ॥
अस कहि चले शरासन साजी । लखत चलो मृग आतुरभाजी ॥

प्रगटत दुरत करत बहु माया। लेगयो गहन विपिन रघुराया॥
तब प्रभु ताकि बाण तिहि मारा। गिरो तुरत हा लषण पुकारा॥
पुनि पाछे सुमिरे सिय रामा। तनु तजि गयो रामके धामा॥

दोहा—इत सीता आरत वचन, सुनत गई अकुलाय।
जाहु वेग संकट परचो, बोलतहैं रघुराय॥

कह्यो लषण सौंपी रघुराई। छोडि जाहुँ कैसे मैं माई॥
तब सिय वचन कठोर सुनावा। सुनत उठे लक्ष्मण दुख पावा॥
मंत्ररेख चहुँ ओर खिंचाई। चले रामपहँ हिय दुखपाई॥
शून्य बीच लखि रावण आई। भिक्षा माँगी सुनि सिय लाई॥
कह रावण बंधनकी भीखा। मैं नहिं लेत शास्त्र गुण दीखा॥
माघशुक्ल भूतादिन जोई। वृन्द मुहूरतमें गुण सोई॥
रेख लाँघि सिय ज्यों भइ बाहर। चरण बंदि ले चला निशाचर॥
जीवज्योति जिमि तनुमें होई। धूममाहिं अग्नी जिमि गोई॥
तिमि रावणके कर गइ सीता। नभमारग लेचलो पुनीता॥

दोहा—गगनजात विलपत सिया, हा रघुपति हा नाथ।
हा करुणाकर देव मम, आरतहर गहु हाथ॥

हा कहँ अहो लषण मम देवर। कहेवचनकटु फलयह तिहिकर॥
मैं तुमको कटु वचन सुनाये। पतिकी सीख कान नहिं लाये॥
हा पितु मातु कहां मम सासू। आज कैकयी करहि हुलासू॥
हा मम सदृश दुखी नहिं कोई। इहि अवसर सहाय को होई॥
सीताके विलाप अति भारी। सुनिसुनिखगमृगभयेदुखारी॥
गीधराज सीतहि पहिचानी। लियेजातनिशिचर अभिमानी॥
बोला पुत्रि हिये धरु धीरा। जात कहाँ निशिचर गत पीरा॥
अस कहि गीध चोंचगहि केशा। रथते पटकादियो लंकेशा॥

सिय उतारि पुनि कीन्ह लडाई। धनु शर काटे खग रिसियाई॥
चोंचन मारि बिदारो सब तन। मूर्च्छित ह्वै गिरपरचो दशानन॥
जागा दशमुख असि ले धावा। पंख काट खग धरणि गिरावा॥
सीतहि पुनि रथमें बैठारी। चलो लंककहँ व्याकुलभारी॥
गीध परा इमि शोचन लागा। सबविधियहतनुअहैअभागा॥
दशरथ कर नाहिं प्रेम निवाई। सीताको नहिं सक्यों बचाई॥
दर्शन अन्त न प्रभुके पाई। सीतासुधि नहिं प्रभुहि सुनाई॥
इतनो भल हरि करहिं सनेहा। तिनके हेत छुटै मम देहा॥

दोहा—इत सिय विलपत जात नभ, रावण लीन्हें जाय।
गिरिपर बैठे कपिन लखि, कही राम रघुराय॥

दीन्हें निज पट भूषण डारी। धरे उठाय कपिन द्युतिकारी॥
सम्पातीसुत पकरो आगे। विनयसुनत तिहिदीन्होंत्यागे॥
इहिविधि सो लंकहि ले आवा। बहुतभाँति सीतहि समुझावा॥
अकुल अमान पिताजिनत्यागा। तिनसे कहा करत अनुरागा॥
रहे अभाग्य परी उन हाथा। अब बडभाग्य आइ ममसाथा॥
मोसन शूर जगत कोउ नाहीं। सुर मुनि सब मोरे वश आहीं॥
ताते रानी होउ हमारी। मन्दोदरि आदिक जे नारी॥
ते सब करिहैं टहल तुम्हारी। सुनत सिया नहिं बैन उचारी॥
तबनिज वैभवलग्योदिखावन। लखिसिय दुखितभईअतिशयमन॥
यथा चन्द्र लखि विरही नारी। अपनेमन दुख पावत भारी॥
कह रावण अति कोमल वानी। देखहु मम ऐश्वर्य सयानी॥

दोहा—तृण धरि ओट कहत सिया, सुन दशमुख अज्ञान।
मानस बिन कहिं हंसिनी, काकठौर सुखमान॥१॥
सुनि सिय वचन अशोकवन, सिय राखी दशशीश।
छिपकर गये खवाय हवि, क्षुधाविजय सुरईश॥२॥

सीता इमि रहि ध्यान लगाये । इत लक्ष्मण प्रभुके ढिगआये ॥
जनकसुता कहँ छोडी भाई । आये कस अकेल वन धाई ॥
द्वादश वर्ष गये शर मासा । तजी न जनकसुता गुणरासा ॥
आज जनकतनया तुम खोई । कही लषण मम दोष न कोई ॥
इहि विधि गये आश्रमहि धाई । लखी न सीय मुरछि रघुराई ॥
कहनलगे जस प्राकृत वानी । दुरिगइ कहाँ आउ सुखदानी ॥
तुम बिन प्रिया मोर भल नाहीं । करि देख्यों विचार मनमाहीं ॥
इहिविधिखोजिकतहुँ नहिंपाई । तब पुनि मुरछि गिरे रघुराई ॥
कहुँ धनु पट निषंग कहुँ तीरा । लषण उठाय लिये धरिधीरा ॥
पुनि प्रभुको बहु भाँति बुझावा । कतप्राकृत सम तुम दुखपावा ॥
धीरजवान सकल करि लेहीं । सीतहि खोज आन हम देहीं ॥

दोहा–तुम सर्वज्ञ कृपायतन, देखहु हिये विचार ।
सुनि प्रभु कह मैं कौन तुम, दशरथ राज कुमार ॥ १ ॥
तुम को मैं लघु दास तव, कहा करत वनमाहिं ।
ढूँढतहौं प्रिय जानकी, हा सीता कहँ पाहिं ॥ २ ॥

कही अनुज ढूँढैं वनमाहीं । निश्चय जनकसुताको पाहीं ॥
अस कहि दोउ चले वनमाहीं । तरु खग मृगते पूँछत जाहीं ॥
हे हरि करि मृग पक्षिन श्रेनी । तुमकहुँ सियदेखी मृगनैनी ॥
सब तजि सीयसाथ मम आई । सो अब कहाँ रही सुखदाई ॥
भृंग जलज शुकपिकअरुकुन्दा । करिहरिश्रीफल आज अनन्दा ॥
इहिविधि खोजत वनमें जाहीं । लख्यो गीध व्याकुल भूमाहीं ॥
कर सरोज परसा तिहि शीशा । भयो चेत बोल्यो खग ईशा ॥
रावण यह गति करी हमारी । तिहि खल सीता हरी तुम्हारी ॥
सो दक्षिणदिशि गयो पराई । दरशहेत जीवौं रघुराई ॥

दोहा-आज्ञा दीजै चलनकी, सुनि प्रभु जल भरि नैन ।
धूरि झारि निज जटनसे, बोले अमृत बैन ॥
पितुसुख तुमसे मैं भलमाना । सो तुम तात कहत हो जाना ॥
सहि न सक्यो सो लाड़ विधाता । खल कीन्हों पक्षनकर घाता ॥
रुचै देह राखहु तुम ताता । मनमुसुकाय कहत खगबाता ॥
जासु नाम जप भवछुटि जाहीं । सोसन्मुखबडभाग्यन आहीं ॥
अस अवसर प्रभुमिलहिनकबहीं । अस कहि प्राणतजेखगतबहीं ॥
रामरूप है विनय सुनाई । भक्तिलेइ योगिन गति पाई ॥
कह प्रभु सिया हरणकी बाता । मत कहियो जहँ दशरथताता ॥
कछु दिनमें रावण तहँ जैहै । सो अपने मुख सकल सुनैहै ॥
भलेहि नाथ जब कीन्ह उचारी । सुमनवृष्टि सुरगण करि भारी ॥
चढ़ि विमान सुरपुर सो गयऊ । मृतककर्म विधिवत प्रभुकियऊ ॥
अस प्रभुत्याग भजहिं जे आना । ते भवपरहिं जन्म लहिनाना ॥
पुनि सीतहि खोजत रघुराई । चले विपिन कहि क्रोध बढाई ॥
जो नहिं मिलै सिया सुखदानी । करिहौं भस्म जगत मन ठानी ॥
अस कहि प्रभुनिज धनुषचढायो । काँपडच्यो ब्रह्माण्ड लखायो ॥
तब लक्ष्मण पद गहि समुझावा । करहु न अस बहुभाँति बुझावा ॥
मान्धाता इक्ष्वाकु नरेशा । भागीरथ दिलीप विश्वेशा ॥
रघु अज आदि भये महिपाला । पालि प्रजा करि प्रेम विशाला ॥
तिनकी कीर्त्ति बढावन कारण । प्रगट भये प्रभु तुम जगतारण ॥
बिन अपराध सकल जग जारत । काहे नहिं विज्ञान विचारत ॥

दोहा-सुनि लक्ष्मणके वर वचन, रोष त्याग भगवान ।
हिये लाय बोले वचन, भ्राता सुनहु सुजान ॥
लखहु तरणिको तेज अब, मन्द होत इहि काल ।
उदित चन्द्र भा नखत गण, कुमुद खिलैं निज ताल ॥

देखहु कमल रहे मुरझाई। मित्रदरशबिन दुख अधिकाई॥
शत्रुसमान कुमुद खिलजाहीं। कहत चले पुनि काननमाहीं॥
पंथ कबंधहि दीनो मारी। दे गतितिहि पुनि चले अगारी॥
शबरी सुधि कर दीनदयाला। तिहि आश्रमहिं चले तत्काला॥
इहां प्रात शबरी जब जागी। भले शकुन लखि मन अनुरागी
राम लषण अइहैं मम गेहा। होइ आज मम पावन देहा॥
ब्रह्मादिक जिहि ध्यान लगावहिं। सो बड़ भाग्य मोरगृह आवहिं॥
आज दरश तिन चरणन होई। हर उर सर सरोजमें जोई॥
कन्द मूल फल धरि धरि दोने। चितवत चकित दिशनके कोने
क्षण बाहर क्षण भीतर जाई। प्रीति देखि रीझे रघुराई॥
शीघ्र पहूँचे आश्रम जाई। शबरी चरण परी अकुलाई॥

दोहा—आश्रम लाई पूजकर, प्रभु कहँ आसन दीन।
दिये मूल फल अशनहित, प्रेमसहित प्रभु लीन॥

प्रेमसहित प्रभु लागे पावन। मीठे सीठे स्वाद बतावन॥
बेर बेर प्रभु माँगत बेरा। देहु बेर जनि कीजै बेरा॥
सुमन वरषि सुर सकल सराहीं। इहि सम भाग्यवन्तकोउनाहीं॥
त्रिभुवनपति माँगत फल अंकुर। योगिन हिये कबहुँ आवतक्कुर॥
हैं रघुनाथ प्रेमके भूँखे। रहैं विषय रसते अति रूखे॥
ऊँचे उठे शबरी कह बानी। सुनहु नाथ सज्जन सुखदानी॥
नीच जाति सब भाँति गँवारी। कीनो पावन पावनकारी॥
कह प्रभु तैं निज कर्म सयानी। भई उच्च यह सब जगजानी॥
जिन मम चरणनमें रति नाहीं। तेइ जगतमें नीच कहाहीं॥
तब कछु मुनि रघुवरढिगआये। पूर्व शबरिते जे अनखाये॥
पूछेउ सरशुद्धी किमि होई। कहु बुझाय रघुनायक सोई॥

कह प्रभु शबरीते रिस कीना । तिहिते सरवर भयो मलीना ॥
शबरी चरण परहि जल जबहीं । निर्मल होय सरोवर तबहीं ॥
जब यह कियो कर्म मुनिराई । सरवर तबै शुद्धता पाई ॥
इमि प्रभुदासन कीर्त्ति बढावैं । ते मतिमंद जो इन्हें भुलावैं ॥
पुनि प्रभु कही प्रेमयुत वानी । सीतासुधि कछु अहै सयानी ॥
सुनि शबरी अस कही सुनाई । पम्पासरहि जाहु रघुराई ॥
तहाँ मिलै सुग्रीव कपीशा । तिहिको मित्र करो जगदीशा ॥
सो सीताकी खोज करावै । कौनभाँति प्रभु आय मिलावै ॥
इहि प्रकार वृत्तान्त सुनाई । योग अग्नि तनु दियो जराई ॥

छन्द-दियो योग अग्नि जराय निजतनु गई हरिके धामहीं ।
तिहि कृत्य निजकर कौन करुणासिंधु पूरण कामहीं ॥
गुण कहत शबरीके चले पम्पासरोवर रामहीं ।
तहँ न्हाय बैठे अनुज सह पाये अमित विश्रामहीं ॥

दोहा-तहाँ मिलन आये विपुल, मुनिजन ज्ञान निधान ।
बिदाकिये समुझाय प्रभु, गवने लहि सन्मान ॥

सोरठा-बहुरि देव ऋषि आय, पूँछी मायाकी कथा ।
जिन बहुबार नचाय, समुझायो सुन राम तव ॥ १ ॥
निज जनके हिय होय, तात जबहिं अभिमान कछु ।
तुरतदेतहौं खोय, जिमि जननी शिशुदुख हरे ॥ २ ॥
सुनि नारद प्रभु बैन, चरणवंदि विधि भवन गे ।
ते पावहिं सुखचैन, सुनहिं कथा जो प्रेमकारि ॥ ३ ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ग्रंथउजागर रघुवरपम्पातीरगमनो नामाष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥

इति
आरण्यकाण्डसमाप्त ।

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

अथ

श्रीविश्रामसागर.

किष्किन्धाकाण्डप्रारंभः ।

दोहा-विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिरि राम सुखदान ।
वरणों कोकिल मत कछुक, बृहदचरित्र प्रमान ॥ १ ॥
ऋष्यमूकपर्वत निकट, पुनि चलिभे श्रीराम ।
तिहि गिरिपर सुग्रीवने, लखे सकल सुखधाम ॥ २ ॥

लखि सुग्रीव परम भय माना । लाग्यो कहन बोलि हनुमाना ॥
देखहु कौन पुरुष यह दोई । वालि भ्रात पठये नहिं होई ॥
कपि द्विज रूप पूँछि सब जाई । तब रघुवर निज बात सुनाई ॥
सुनत वचन कपि चरणन परेऊ । लिये उठाय परम मृदु भरेऊ ॥
इमि सुग्रीव निकट ले आये । कीन मित्रता भाव सुहाये ॥
जनकसुताकी बात चलाई । पट भूषण दीन्हें कपिराई ॥
पट भूषण रघुवर हिय लाये । लक्ष्मणते इमि वचन सुनाये ॥
यह कंकण कुंडल हैं भ्राता । पहिचानतलक्ष्मणकहिबाता ॥

दोहा-नहिं जानत केयूर मैं, कुंडल जानत नाहिं ।
सियनूपुर मैंने लखे, पगवन्दनके माहिं ॥

प्रभु व्याकुल लखि कह सुग्रीवा । मिलिहैं सीयसकलगुणसीवा ॥
सब प्रकार सोइ करहुँ उपाई । जिहि विधिमिलैजानकीआई ॥
सुनि हरषे प्रभु कहि तिहि पाहीं । कारण कौन वसहु वनमाहीं ॥
तब सुग्रीव कही सब बाता । वालिनिकारिदीनमुहिंताता ॥

हरलीने सर्वस अरु नारी। सुनि बोले अस वचनखरारी॥
एकहि बाण वधों रिपु तोरा। सत्य वचन मानहु तुम मोरा॥
सखा दुःखते दुखी न होई। ताके सखा कहत नहिं कोई॥
कह सुग्रीव सुनहु प्रभु वानी। वालि महाबल यह जग जानी॥

दोहा—यह दुंदुभिकी अस्थि जो, वेधै एकहि बान।
सो नर मारै वालिको, नातरु मिथ्या ज्ञान॥

दुन्दुभिनिधन इन्द्र सुनि काना। सात तालफल दियसन्माना॥
इनकर भक्षण वाली करई। अजर अमरह्वै बहु सुखभरई॥
नारद दिये वालिको आई। रखतिन वालि नदी रह न्हाई॥
सर्पआय तहँ कुंडलि बाँधी। भक्षण करन लगा सुखसाधी॥
लखि वाली बोला तत्काला। तव तनुछेद जमैं यह ताला॥
कह्यो सर्प जो मुहिं उद्धारै। निश्चय वालि तुम्हैं सो मारै॥
सर्पाकृति यह ताल सुहाये। एक बाण प्रभु जाहिं ढहाये॥
तीसर वर वासव अस साधा। सन्मुख अरिबल पावतआधा॥

दोहा—वालिवधनमें शीघ्रही, आवत नहिं विश्वास।
सुनत वचन परतीतिहित, बोले रमानिवास॥

तालअस्थि चलि देहु दिखाई। सुनि लेगा सुग्रीव लिवाई॥
लखि प्रभु हनै एकही बाना। दश योजनपर गिरे महाना॥
एकहि बाण गिराये ताला। सर्प निकसआयोतिहिंकाला॥
अस्तुति करि पुनि सर्प सिधारा। सुमनवृष्टि नभ भई अपारा॥
लखिकपीश अतिशय सुखमाना।पदशिर धरिअसवचनबखाना॥
तुम्हरी कृपा मिटे सब शोका। अब सो करहु बनैपरलोका॥
शत्रु मित्र सुख दुख मनमाहीं। मायाकृत परमारथ नाहीं॥
तिहिते त्याग सकल जग जाला। भजनकरहुँतवचरण दयाला॥

दोहा-वालि मोर हितकार जिहि, दर्शन भये तुम्हार ।
सुनि हँसि बोले राम नहिं, मिथ्या वचन हमार ॥

तब सुग्रीवसंग रघुराई । किष्किन्धामें गर्जा जाई ॥
चला वालि तारा समुझावा । जाहु न राम सहायक लावा ॥
कहा वालि तो है भलि वाता । दुहूँ हाथ मोदक सुखदाता ॥
अस कहिजाय भिरो बरिआई । मुष्टिक हनि सुग्रीव रुवाई ॥
भागो जाय कही प्रभुपाहीं । बाली अरि मम सोदर नाहीं ॥
कह प्रभु तुम एकै अनुहारी । तासों शर नहिं कीन प्रहारी ॥
कर परसा सब पीर मिटाई । सुमन माल गरमें पहिराई ॥
पुनि पठवा गर्जा कपि जाई । नाना विधिते भई लराई ॥

दोहा-चैत्र शुक्ल चौदशि दिना, दोऊ भिरे प्रचार ।
प्रभु ठाढे तरु ओटमें, देखत युद्ध उदार ॥

जब सुकंठ जानो हिय हारा । तब प्रभु वालि हिये शरमारा ॥
लागत बाण गिरचो भू आई । तब चलिगये निकट रघुराई ॥
प्रभुहि निरखि उठि बैठकपीशा । बोला वचन किये जिय रीसा ॥
राम तुम्हार प्रभाव अपारा । बहुत भाँति वरणो सुहितारा ॥
देखा काम किरात समाना । कारण कौन वध्यो मुहिं आना ॥
जो तुम मिलते मोसे आई । तुरतहि सिया देत हौं लाई ॥
तुम कादरते प्रीति लगाई । विनपराध मारो मुहिं आई ॥
कह प्रभु हम निर्बल सँग रहहीं । अभिमानी सँग भूल न गहहीं

दोहा-शरणपाल है बाण मम, शीलहेतु कपिराय ।
मारचों तरुकी ओटसे, सुख नहिं परे दिखाय ॥

अनुजवधू कीन्हसि निज नारी । तो सम कौन पतित अविचारी ॥
प्रभु अजहूँ का मैं अघरूपा । अन्तसमय तव दरश अनूपा ॥

सुनि कृपालु कहि राखहु आना । बालि प्रेमयुत वचन बखाना ॥
जासु नाम सुनि बहुविधि ध्यावहिं।अन्तसमयकहुँसुमिरनआवहिं
सो भे मम सन्मुख सुखधामा । रामकहा अब तनुसे कामा ॥
किहिसुखलगि अब राखौं शरीरा। पाथर ले डारै को हीरा ॥
यह वर देउ जन्म जहँ पाऊं । तहँ तवचरणकमलचितलाऊं ॥
है अंगद मो पुत्र समाना । ताहिदास कीजै भगवाना ॥

दोहा-प्रभुपद शीश नवाय इमि, बालिगयो प्रभुधाम ।
तारा परिजन आय सब, रोवत कहिगुणग्राम ॥

मैं पति तुमहिं बहुत समझायो । काल विवशपियमनहिंनलायो॥
व्याकुल लखि तारा भगवाना । भाँति अनेक सिखायो ज्ञाना ॥
जो जन्मै निश्चय मरिजाई । है यह जगकी रीति सदाई ॥
मातु मही पितु शालि कहावैं । काल कृषीकर सदृश बुझावैं ॥
बोय प्रथम पुनि पालत ताही । लूनखात पुनि करुणा नाहीं ॥
अस विचार शोचहु मति रानी । कर्माधीन जीवगति जानी ॥
सब दिन कोइ न रहत संसारा । पथिक मेवसम जनव्यवहारा ॥
भूमि विकार घटादिक होई । उपजतविनशततिमितनुसोई ॥

दोहा-जीव सदा रह एकरस, अज अव्यय अविकार ।
जो यह भेद न जानहीं, ते जग सत्य निहार ॥

ते वियोग सुख दुख जगभोगहिं।भोग सुखी नश्यतकरि सोगहिं॥
ईशकृपा जब होत सुहाई । नित्य अनित्य ज्ञान तब पाई॥
नित्य वस्तु भगवतकर संगा । सोइ सुखी जो भे इहिरंगा ॥
इहि विधि जब तारा समुझाई । ज्ञानसूर्यप्रगट्यो हिय आई॥
चरणन लागि भक्तिवर मांगा । दीन्हों राम सहित अनुरागा ॥
तब सुग्रीव रजायसु पाई । मृतक कर्म कीन्हें मनलाई ॥

तब प्रभु लषणहि कहा बुझाई। देहु राज्य सुग्रीवहि जाई॥
लक्ष्मण पुरजन विप्र बुलाये। कीन्हों राजतिलक मन भाये॥

दोहा-दियो राज्य सुग्रीवको, अंगद किय युवराज।
विविध भाँतिकी सीख दे, आये जहँ सुखसाज॥

तब सुग्रीव निकट बैठाई। प्रेम सहित बोले रघुराई॥
अंगदसहित राज्य अब कीजै। काज हमारेमें मन दीजै॥
ग्रीषम गत वर्षा अब आई। रहिहौं मैं गिरिपर कपिराई॥
सुन सुग्रीव गये रजधानी। राम रहे पर्वतपर आनी॥
प्रथमहिं देवन गुहा बनाई। राम रहैंगे कछु दिन आई॥
जबते आय रहे रघुराई। सब सुख सम्पति गिरिपरछाई॥
नाना रूप धारि मुनि देवा। करहिं आय रघुपतिकी सेवा॥
नित नूतन सत्संगति होई। कोउ कर प्रश्न उतरदे कोई॥

दोहा-वर्षामें घनघोर घन, रहे जहँ तहँ नभ छाय।
इमि गर्जत मनु सूर्यते, चले युद्धको धाय॥

अथवा पावसतिय सरसाई। रामहिं निरखि रिझावन आई॥
अथवा सम्वतसर तरुणाई। अथवा भूमि नव्य गुणलाई॥
ज्यों चपला चमकै कौंधाई। त्यों त्यों सियसुधि कर रघुराई॥
अतिशय राम विकल ह्वै जाहीं। लक्ष्मण समुझावें गहिबाहीं॥
वर्षाऋतु इहि भाँति बिताई। अतिशय सुखद शरद पुनि आई॥
प्रभु लक्ष्मणहि कहा समुझाई। आइ शरदसिय सुधि नाहिंपाई॥
एक बार सुधि पावहुँ जबहीं। तात सियाको लावहुँ तबहीं॥
सुग्रीवहु सुधि कछु नाहिं लीनी। काज हमार ढिलाई कीनी॥

दोहा-भूलिगयो वध वालिको, सुधि बिसरी भो बान।
सुनत लषण करि रोष गहि, धनु भे सन्मुखआन॥

जो प्रभुकी आज्ञा मैं पाऊं । जायबाँध सुग्रीवहि लाऊं ॥
कह प्रभु क्रोध त्यागिये भाई । सुग्रीवहि लावो समुझाई ॥
महावीर इत मनहि विचारा । कपिपतिप्रभुकरकाजबिसारा ॥
जाय सुकंठहि कहा बुझाई । सुनत डरपि बोले कपिराई ॥
मारुत सुत अब दूत पठावहु । कपि सब वसुधाकेर बुलावहु ॥
पुनि अंगद कह वचन सुनाई । महावीरको पठवहु जाई ॥
हनूमानते कह कपिराई । जाय बुलाहु कपिन समुदाई ॥
सुनत चले द्रुत पवनकुमारा । पारिपात्र पर्वत पगुधारा ॥

दोहा—गज गवाक्षको बोलकर, सब वृत्तान्त सुनाय ।
सातपद्म दल कोटि असि, लेचलिभे सुख पाय ॥

पुनि बलबीरहि जाय सुनावा । साठसहसशत सँगकपिलावा ॥
धुन्धमाल गिरि जाय तुलाना । मिलिशिखण्डिसेवचनबखाना ॥
छपन कोटि वनचर ले साथा । चले कहत जहँ श्रीरघुनाथा ॥
अंजनगिरि ऊपर पुनि आये । समाचार सब कुमुद सुनाये ॥
चारि पद्म सत्तासी लाखा । दललेचल्योकरतअभिलाखा ॥
पुनि चलि तावगिरी पर आयो । मिलिनलनीलहिभेदबतायो ॥
सोलहखर्ब सेन तिन साजी । चले दरश अभिलाषा ताजी ॥
बद्री पर्वत पुनि कपि आये । गन्धमदनते भेद सुनाये ॥

दोहा—ग्यारह अर्ब संग दल, ले तिन कीन पयान ।
रेवत कदली वन गये, दुर्धर कपिहि बखान ॥

अशी शंकुशत सात गिनाई । दुर्धर चलो हिये हर्षाई ॥
पुनि हनुमत अर्जुन गिरि जाई । तारापितुको खबरि सुनाई ॥
नब लाख दल कोटि सतासी । चलिभे सब रघुनाथ उपासी ॥
पुनि सुमेरु पर्वत पहँ जाई । केशरिसे सब बात सुनाई ॥

सो दशकोटि लक्ष नव सेना। चले साज जहँ राजिवनैना॥
पुनि कैलास गये हनुमाना। जयअरुविजयअण्डसन्माना॥
सत्रह शंकु कोटि इक कोरी। चलेउ पुलिन्द चाह नहिं थोरी॥
पुनि विंध्याचल भूधर जाई। सब सुधि बाण वसन्त सुनाई॥

दोहा-हरि हर कोटि सहस शत, ले सँग कीन पयान।
गये विजय गिरि पवनसुत, रति सुखकिय सन्मान॥

अष्ट पद्म नव शत इक्यासी। यह कपि चले महाबलरासी॥
पुनि हनुमान कास गिरि जाई। सुद मयंदको बात सुनाई॥
सुनि दल एक पद्म इक कोटी। चले सपदि प्रभुपद रति मोटी॥
जाम्बवन्त भूधरपहँ जाई। महाबीर सब खबर जनाई॥
धूमकेतु सोदर सँग जाहू। बाण वृन्द वसुशंक सुलाहू॥
छप्पन कोटि अपर अरु लाखा। चले राम दर्शन अभिलाखा॥
पुनि धवलागिरि आय तुलाना। द्विविद बोलि वृत्तान्त बखाना॥
एक कोटि अरु लाख पचीशा। ले कपि चलो जहाँ जगदीशा॥

दोहा-पुनि उदयाचल जाय कपि, सर्वासर्व बुलाय।
सुनत शल्य वृत्तान्त सब, महा मोद कहँ पाय॥

अर्बुद आठ पद्म इक सेना। कपि लेचले जहाँ सुख देना॥
इहि विधि सब बुलाय हनुमाना। आय सुकंठहि वृत्त बखाना॥
सुनि सुकण्ठ अतिशय सुखपावा। बृहद्रामायण यह मत गावा॥
तिहि अवसर लक्ष्मण तहँ आये। जारि देहुँ पुर कहि रिस छाये॥
वालिकुमार तुरत तहँ जाई। हाथ जोरि बहु विनय सुनाई॥
इत सुग्रीव क्रोध सुनि भारी। महावीरते गिरा उचारी॥
तारासहित लषणढिग जाई। विनती कर ह्याँ लाउ बुलाई॥
सुनि अस तारासहित सिधाये। करि सन्मान भवन ले आये॥

दोहा-मिलि सुकंठ अति प्रेमसे, आसन दे सन्मान।
क्रोध निवारो लषणको, कहि कहि वच सुखदान॥

इति श्रीविश्रामसागर सकलमलआगर ग्रंथउजागर सुग्रीवमित्रता वानरागमनोनामैकोनविंशोऽध्यायः॥ १९॥

दोहा-विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिरि राम सुखदान।
सार रामायण कहत, कछु, करि संक्षेप महान॥

कहलक्ष्मणसियसुधि यह लीनी। सुनत सुकंठविनयइमिकीनी॥
सकल जगतके कपि बुलवाये। सो चाहत अबहीं प्रभु आये॥
अस कहिकपि उठिलषणसमेता। चले जहाँ प्रभु कृपानिकेता॥
देखि जोरि कर विनय सुनाई। तव माया अति प्रबल गुसाँई॥
सदा जीव भ्रमहीं वश जाहीं। सुरनर मुनि मैं पशु किहि माहीं॥
विन तव भजन किये रघुराई। इन्द्रियजनित न दुःखमिटाई॥
सुनिप्रभुअधिकाकियोसन्माना। सीतासुधिहितवचनबखाना॥
कह सुग्रीव सुनहु रघुराई। अबहीं आवत सैन महाई॥

दोहा- तिहि अवसर आये कपी, दलबल वर्ण विशाल।
गयगवाक्ष नल नील मुद, मर्कट विकट कराल॥

सातताल जिन देह विशाला। तनुबिलोकिभयमानतकाला॥
युद्ध विशारद सब कपि वीरा। प्रभुहित प्राण न मोह सुधीरा॥
आय सबनि प्रभुको शिरनावा। देखिदेखि प्रभुछबि सुखपावा॥
राम कुशल पूछी सब केरी। विश्ववास नहिं महिमघनेरी॥
कह सुग्रीव सुनहु बलवीरा। जिहिते हो निस्तार सुधीरा॥
जप तप दान यज्ञ कर कोई। बिनु हरि भजन न भवतर सोई॥

विद्या बुद्धि विवेक सुज्ञाना। धर्म कर्म सोइ सत भलजाना॥
अन्तर्यामी राम सुजाना। जिहिते होंय प्रसन्न महाना॥
दोहा-मुख भुज कटि अरु चरणते, जन्मे वर्ण सुचार।
जो न भजै हरि प्रेम करि, ताहि कपूत विचार॥
वर्णाश्रम जो देइ नशाई। सो भ्रमकूप परत है जाई॥
पावत है यमकष्ट अपारा। अस विचारि भज राम उदारा॥
छल तजि काज रामकर करहू। मोर वचन शिक्षा उर धरहू॥
सकल वीर चहुँओर सिधावहु। मास दिवसमें सिय सुधिलावहु॥
अवध मेटि जो वानर आई। सो बड़ दण्ड अवशही पाई॥
गज गवाक्ष दोउ पूर्व पठाये। सात पद्म कपि संग सिधाये॥
तार सुषेण मयन्द बुलावा। तिनको उत्तर ओर पठावा॥
ग्यारह पद्म कीश ले साथा। चले हिये धर श्रीरघुनाथा॥
दोहा-पुनि वसन्त शतवीरको, पश्चिम दयो पठाय।
षोडश कोटिक सेन ले, चलभे सहस सुभाय॥
जाम्ववन्त अंगद नल नीला। महावीर सह विधि बलशीला॥
दश करोर वानर सँग करिकै। दक्षिण दिशि भेजो मुद भरिकै॥
हनूमान जब कीन प्रणामा। कर मुद्रिका दीन श्रीरामा॥
भलीभाँति सीतहि समुझाई। दीजो खबरि वेग मुहिं आई॥
सुनि प्रभु वचन हर्षि हनुमाना। दक्षिणदिशि कहँ कीन पयाना॥
वनमें वज्रदंष्ट्र खल पायो। ताको अंगद मारि गिरायो॥
चले गहन वन तृषा सतायो। मारगमाहिं विवर इक पायो॥
कर गहि गहि सब प्रविशे जाई। तहँ देखी इक नारि सुहाई॥
दोहा-सबनि जाय शिर नायकर, किय वृत्तान्त प्रकाश।
सुनि बोली सो मूल फल, पावहु सहित हुलास॥

कन्द मूल फल वानर पाये । पियो नीर पुनि तिहि ढिग आये ॥
तब सो कहत तापसी वानी । हेमा इक अपसरा सयानी ॥
स्वयंप्रभा मैं हौं सखि ताकी । मय हरिलायो रखि इहि थाकी ॥
इन्द्र ताहि लेगयो उठाई । मैं ह्यां रही भजत रघुराई ॥
नेम धर्म कीन्हें व्रत भारी । अब पूजी सब आश हमारी ॥
मूँदहु नयन निकरिहो तबहीं । मैं हौं जात रामपर अबहीं ॥
नयन मूँदि कपि खोले जबहीं । ठाढ़े लखे सिन्धुतट सबहीं ॥
सो तिय गई जहाँ रघुराई । कीन दरश बद्री तप जाई ॥

दोहा—यहाँ विचारहिं कपि सकल, गइ सब अवधि बिताय ।
सीतासुधि कछु नहिं मिली, बन्यो मरण अब आय ॥

सुनत वचन सम्पाती वीरा । निकरि खोहते लखि कपिभीरा ॥
कह्यो कि आजअशनबड़ आवा । लखि अंगद इमि वचन सुनावा ॥
धन्य न कोइ जटायु समाना । राम काज हित दीन्हें प्राना ॥
सुनत गीध जब गो नियराई । ताहि निरखि कपि चले पराई ॥
शपथ दिवाय ठाढ कपि कीन्हें । अभयदान दे धीरज दीन्हें ॥
सागर तटते गयो लिवाई । दीन जलांजलि हेतु जटाई ॥
पुनि निजगाथा गीध सुनाई । गे जिमि दोउ रवि निकट उड़ाई ॥
गीधतेज लखि पुनि फिरि आवा । मैं रविके अतिशय नियरावा ॥

दोहा—जरे पंख मैं गिरिपरयो, इहिं पर्वत पर आय ।
रहे चन्द्रमा नाम मुनि, तिन बहु ज्ञान सिखाय ॥

कह्यो कि ब्रह्म मनुजतनु धरिहैं । निशिचरपतितिहि तिय वनहरिहैं ॥
तासु खोजहित जब कपि आवहिं । सीताकी सुधि तुमसे पावहिं ॥
तब तव पंख जमहिं पुनि आई । सो सब बात सत्य मैं पाई ॥
गिरि त्रिकूट पर लंका अहई । तहँ अशोक वनमें सिय रहई ॥

सागर लाँघ वीर जो जाई। सो निश्चय सिय दरशन पाई ॥
मार्ग असित दशमी तिथि पाई। जमे पंख हर्षित खगराई ॥
गयो गीध निज गतिहि उडाई। यहां शोच कपियन मन छाई ॥
सागरपार कहो को जाई। निज गति सब कही सुनाई ॥

दोहा—तब ऋछेश लखि सबनकी, गति शंकित तिहि काल।
महावीरको बोलिके, बोले वचन विशाल ॥

महावीर तुम सब गुण आगर। करहु कार्य यह तुम बलसागर ॥
अब निज बलकी सुरत सम्हारो। सीताकी सुधि हेत सिधारो ॥
सुनि हनुमान हर्षहिय कियऊ। तिहिक्षणअतिविशालतनुभयऊ॥
कह्यो ऋक्षपतिसे हनुमाना। कहा करौं शिख देउ सुजाना ॥
कहो रावणहि डारौं मारी। ले आवहुँ ह्याँ जनकदुलारी ॥
अथवा लावहुं लंक उठाई। जाम्बवन्त तब कही बुझाई ॥
इतनी करहु वायुसुत जाई। सीतहि देखि कहो सुधिआई ॥
तब राघवसँग करहिं चढाई। रावण वधहिं जगत यशगाई ॥

छन्द—जग सुयश गवाहिं राम रणमें असुरपतिको मारिहैं।
जे लव लगाये रहत निशिदिन तिनजननको तारिहैं॥
रघुवंशचरित विशुद्ध निशिदिन नारिनर जे गाइहैं।
हरिकी कृपासों मिश्र बिनु श्रम भवजलधितरजाइहैं॥

दोहा—कष्टहरण मंगलकरण, प्रभुके चरित महान।
सादर सुनहिं जे प्रेमकर, कृपाकरहिं भगवान॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ग्रंथउजागर जाम्बवन्त महावीरसम्वाद वर्णनोनाम विंशोऽध्यायः ॥ २० ॥

इति

किष्किन्धाकाण्डसमाप्त ।

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

अथ

श्रीविश्रामसागर.

सुन्दरकाण्डप्रारंभः ।

दोहा–विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमरि राम सुखदान ।
कहौं आदिकवि रीति कछु, नाटकसार बखान ॥ १ ॥
जाम्बवन्तके वचन सुनि, बलनिधि पवनकुमार ।
हरिदिन चलिभे लंककहँ, रामबाण गतिधार ॥ २ ॥

महाबीर करि वेग विशाला । तरके गिरिते वपुष कराला ॥
गर्जत प्रलय पयोद समाना । उछरे पवनवेग हनुमाना ॥
सुर प्रेरित सुरसा तहँ आई । रोकनलगी पंथ मुखबाई ॥
वदनपैठ कपि बाहर आई । पुनिचलिभे तिहि आशिषपाई ॥
छायाग्राहिनि पुनि गहि लीन्हा । ताहिचरणधरिकपिहाति दीन्हा ॥
उठि मैनाक कियो सन्माना । ताको परसि चले हनुमाना ॥
कर्षत पवन समीर कुमारा । इहिविधि गयो सिंधुके पारा ॥
शिलाशैलपर उतरयो जाई । प्रभुप्रताप नहिं श्रमतनु पाई ॥
गिरिपर चढि सब लंक निहारी । कहिन जाय शोभा अतिभारी ॥

दोहा–फिरत असुर कहुँ ओर जिहि, रक्षहिं नगर विशाल ।
कहुँ गर्जत भटयूथ अति, किय मुख वपुष कराल ॥

लखि असतनु शशकी समधारी । निशि प्रवेश कियगढपैसारी ॥
लंकिनिलखि पुनि रोकोजाई । जात कहाँ कपि मुहिं निदराई ॥
अरे चोर तुहिं जैहौं खाई । कहाँजात अब वृथा पराई ॥
मुष्टिक एक ताहि कपि मारी । गिरी धरणि उठि विनय उचारी ॥

जो ब्रह्मा दीनो वरदाना। सोइ समय अब आय तुलाना॥
धन्य भये अब भाग्य हमारे। नैनन रघुवरदूत निहारे॥
जाहु नगर निज काज सम्हारो। सुनत चले कपिनगर निहारो॥
दशमुखके मंदिर पुनि आये। खोजनलगे अधिक मनलाये॥
सबहि भाँति खोजो कपिराई। पर कहुँ नहीं जानकी पाई॥
सकल कामप्रद मणिगण पूरी। कहिनजायजिहिछबिअतिरूरी॥
देव दनुज नागनकी बाला। सकल रूपगुण बुद्धि विशाला॥
रावण तहँ निशंक रह सोई। वैभवलखि सुरपति मतिखोई॥
कह कपि निज मनमाहिं विचारी। वृथा हरी इन सिय सुकुमारी॥
सीतहि चुपके देइ पठाई। तो नहिं नाश होय प्रभुताई॥
इहिविधि खोजत सबगृह माहीं। देखिपरी सीता कहुँ नाहीं॥
लख्यो विभीषण गेह सुहावा। रामायुधयुत अति छबिछावा॥
तिहिलखि मन असकीन विचारा। सज्जन यहां कहां निरधारा॥

दोहा–जागे तबहिं विभीषण, सुमिरण किय हरिनाम।
सज्जन लखिभे मुदित कपि, भे सहाय अब राम॥

राम राम कहि वचन सुनाये। सुनत विभीषण द्वारे आये॥
पूछी कुशल दोउ उर लाई। मारुतसुत सब कथा सुनाई॥
कह्यो विभीषण श्रीरघुराया। कबहुँ करहिंगे मोपर दाया॥
तामस तनु कछु भजन न होई। पर अब मन भरोस भा मोई॥
विनप्रभुकृपा दरश तव नाहीं। यह जानी अपने मनमाहीं॥
जिन कियसचिव भालु कपिराई। अस प्रभुकरिहैं मोरि सहाई॥
जो अस प्रभुको देहिं बिसारी। ते भ्रमही जगमें बहुवारी॥
सुनतवचन करि अति सुखमाना। प्रभुकी कृपा कही विधिनाना॥

दोहा–पुनि पूछी सीता कथा, कही विभीषण गाय।
सुनि अशोक वनमें तुरत, पहुँचगये कपिराय॥

लागे विटप मनोहर नाना । अतिविचित्रनहिंजाँय बखाना॥
खोजत गये शिंशुपा तीरा । जगमाता जहँ रहि मतिधीरा॥
कृशतनु शीश किये इक वेणी । मनहिं जपत रघुपतिगुणश्रेणी॥
निज नयननसे चरण निहारत । प्रभुगुणसमझ नयनजलढारत॥
देखतही कपि शीश नवायो । तरुपल्लवमें रह्यो छिपायो॥
तिहि अवसर रावण तहँ आयो । संगनारि बहु साज बनायो॥
सीतासे बोला अस बानी । सुनु सिय मोर गेह जे रानी॥
मेघनाद आदिक बलवीरा । जिनसन्मुखकोइधरत न धीरा॥
ते सब करहिं तोरि सेवकाई । एकबार लखि मोहिं सुहाई॥

दोहा-सुनि सीता तृण ओट कर, कहत सुमिरि रघुवीर।
रे दशमुख जे रामपद, रति राखत मति धीर॥

सुरिपतिको चुल्लूसम मानै । परतियको अग्नी सम जानै॥
चिन्तामणि तिन अश्म समाना । तमरिपु तिन खद्योतदिखाना॥
लोष्ठ समान मेरु तिनकाहीं । भूप भृत्यसम तिन्हैं लखाहीं॥
कल्प विटप तृणवत तिन लेखे । देह भारवत लखैं विशेखे॥
ताते यह लघु लंका नगरी । कहा दिखावतमुहिंगुणबिगरी॥
कहुँ प्रकाश खद्योतक पाई । नलिनी खिलत निशाचरराई॥
निज नाशनहित तैं हठ ठानत । ताते मोर वचन नहिं मानत॥
सीता वचन बाण सम लागे । लेइ खड्ग आवा तिहि आगे॥

दोहा-तब मन्दोदरि हाथ गहि, बहु प्रकार समुझाय।
तब राक्षसी बुलाय कहि, त्रास दिखावहु जाय॥

मास दिवसकी अवधि रहाई । नहिं मानि है मारिहौं आई॥
अस कहि दशमुखभवन सिधारा। देहिं राक्षसी दुःख अपारा॥
तब त्रिजटा सबही धमकाई । रघुबरकी किय अधिक बडाई॥

सिय समुझाय सुभवन सिधारी । तब सीता विलाप किय भारी ॥
पावक माँगी दीजै लाई । देहौ अपनी देह जराई ॥
इहि विधि बहुतक रैन बिताई । सोयरहीं निशिचरि तव जाई ॥
सीता पुनि शिंशुपतर आई । करत विलाप सुमिरि रघुराई ॥
तब मारुतसुत हिये विचारी । सन्मुख दीन मुद्रिका डारी ॥

दोहा-रघुपति मुद्री देखि सिय, चकित भई तत्काल ।
किमि बिछुरी कर रामते, कहु मुँदरी सब हाल ॥

कुशल राम लक्ष्मण दोउ भाई । उन करते तू ह्यां किमि आई ॥
हनूमान भल अवसर जानी । मधुर वचन कहिसियसन्मानी ॥
दशरथसुवन लषण अरु रामा । आये सँग वैदेही वामा ॥
सो सीता निशिचर हरलायो । खोजत दोउ बंधु दुखपायो ॥
जब जटायुसे कछु सुधि पाई । तब दोउ बंधु उठे अकुलाई ॥
की सुकंठसे आन मिताई । तहँ सियके पट भूषण पाई ॥
शरद पाय कपियूथ बुलाये । सिय खोजन चहुँओर पठाये ॥
जब मैं चल्यो मुद्रिका दीन्हीं । मैं मन मुदितहोय सो लीन्हीं ॥
सीताके समुझावन हेता । कहे वचन बहु कृपानिकेता ॥

दोहा-आयों सागर लाँघि मैं, काल लंकगढ माय ।
खोजत डोल्यो चहूं दिशि, दरश भयो अब आय ॥

रामचरित इहिभाँति पुनीता । सुनि सब कहतभई इमि सीता ॥
जिहिअस सुन्दर कथा बखानी । प्रगटहोतकिनसन्मुख आनी ॥
सुनि हर्षे उतरे कपिराई । देखतही सिय रही सकाई ॥
रामशपथ करि कह हनुमाना । रामदूत मैं माय सुजाना ॥
कह सिय कछु गुण कहो सुनाई । कौन भाँति देखे रघुराई ॥
प्रथम दया दुख सकहिं न देखी । कृपा करहिं जन जानविशेखी ॥

अनुकम्पाहित करहिं न त्यागे । करुणा कष्ट न सह अनुरागे ॥
आनृशंस गुणसहित सदोषै । ताकी रक्षा करत अदोषै ॥
आनुक्रोशनिजशरण जुआवहिं । तिनके गुण बहुबार सुनावहिं ॥

छन्द-दम गुण इन्द्रियविजय दर्प परिभवअसुरनसन्तापी ।
सम गुण नाहिं विरोध काहूसों पूर्ण बोध निष्पापी ॥
सत्य सदा गहि रहत प्रीतिकी रीति निबाहत जाहीं ।
क्षमा छिद्र लखि कहत नहींकछुप्रातिसुलभ्यसदाहीं ॥
कौशल खान सुजान बुद्धियुत शरणागत प्रतिपालैं ।
करत प्रणाम प्रणत हितकारी जनपर भाव कृपालैं ॥
सबउरव्यापीअघटन घटनाकी सामर्थ्य विशाला ।
रज तम गुण नहिं व्यापतसुमिरत जन परहोतदयाला ॥
गुणगंभीर धीरता भारी कोउ गति मति नहिं जानै ।
चतुर विचित्र चित्र रचनामय अद्भुत कौशल ठानै ॥
अति उदार थिरनाम अचल बिन कारणविप्रनदानी ।
धीर धुरीण विजय रिपुकारी माया मोह न मानी ॥
शूर समरमें तंत्र रहत नित जीवन निज वश राखैं ।
महाकाज विनु श्रमकरि डारत तनमर्याद न नाखैं ॥
सौन्दर्य सब अंग मनोहर जहँ इच्छा तहँ जाहीं ।
सौम्य महा माधुर्य आर्य गुण भल बोलहिं सबपाहीं ॥
ब्रह्मादिक जिहि भाग्य पायकर भाग्यवन्त होजाहीं ।
अति सुकुमार सिरसफूलनसमअचलअजीतरहाहीं ॥
शुद्धवेप सौंदर्य मार्दव वय किशोर विज्ञानी ।
धर्मधाम निष्काम राम नित आप अनाथ अमानी ॥
किहुके कहत न गहते गहत न देत देत न काहू ।

वधिके वध तनु त्यागत ताजिकै भजेहिभजततजनाहू ॥
संग सुमित्रासुवन लषणहैं अधिक भरतमें प्रीती ।
वहुतिक बार कही प्रभु मोते कुटिल कागकी रीती ॥
दोहा–मारुतसुतके वचन सुनि, भो सीतहि विश्वास ।
जाना मन क्रम वचन यह, कृपासिंधुकर दास ॥
बोली कुशल अहैं दोउ भाई । किहि अघ तात मोहिं बिसराई ॥
सब तज जिनके सँग वन आई । भयो वियोग प्राण नहिं जाई ॥
जो ऐसहि दुख सहिहैं प्राणा । तौ इन निदरे कुलिश पषाणा ॥
आर्यपुत्र करुणा गुणसागर । सरलस्वभावविदित नयनागर ॥
मोर अभाग्य दुःख ते पावहिं । कहु कपि कवहुँ सुरति ममलावहिं ॥
सुनत कहत कपि पुलकित गाता।हैं सब भाँति कुशल दोउ भ्राता ॥
यद्यपि प्रभु आनन्दनिधाना । तव वियोग दुख तदपि महाना ॥
बिन सुधि मिले कालचलिगयऊ।अबकहुँवचै कुछलजिनकियऊ ॥
जो सुधि होत कहौं सतभाऊ । नहिं बच सकत निशाचरराऊ ॥
अब कछु काल धीरधरु माता । सेन सहित ऐहैं दोउ भ्राता ॥
निशिचर वधकर तुम्हैं उवारैं । तीन लोक कीरति विस्तारैं ॥
जात तुम्हैं मैं अवहिं लिवाई । पर इमि बहुतक काज नशाई ॥
दोहा–सुनि सिय बोली सकल कपि, लघुहैं तुम्हैं समान ।
सुनत वचन गिरि सम तुरत, निज तनु किय हनुमान ॥
बिना किये का कहौं बुझाई । कालि दिखैहौं निज बल माई ॥
जो निशिचर कटु बैन सुनाये । शर सम हिये लगे कसकाये ॥
समयपाय काढ़हुँ वे बैना । किय लघु रूप भयो सिय चैना ॥
दीन अशीश सुहावन सीता । करहि प्रीति नित राम पुनीता ॥
अजरअमर गुणनिधि सुत होहू । रघुनायक कर राखहु छोहू ॥

सुनि कपीश अतिशय हर्षाई । भूँख लागि इमि कह्यो सुनाई ॥
देखि बुद्धिबल कहि सिय वानी । खाहु जाय फल जो रुचि मानी ॥
सुनत वचन पहुँचे कपिराई । फल खाये तरु दिये गिराई ॥

दोहा-क्षणमें सकल अशोकवन, दीन्हों कीश उजारि ।
चले भाज सब रजनिचर, कीन्हीं जाय पुकारि ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ग्रंथउजागर मारुतिसीता सम्वादवर्णनो नामैकविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥

दोहा-विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिरि राम सुखदान ।
कहौं आदि कवि कहन कछु, सकल सुमंगलदान ॥

मेघनादते अति प्रिय बागा । खाये फल तरु तोरन लागा ॥
रखवारे सब कपि संहारे । गये पुकारत कछु अधमारे ॥
सुन रावण मंत्रीसुत बोले । जे कबहूं संग्राम न डोले ॥
अस्सी सहस सुभट सँगलीन्हें । चले युद्धहित अतिमन कीन्हें ॥
लखि हनुमान दीन किलकारी । जयरघुपति जय जयति खरारी ॥
जय लक्ष्मण सुकंठ कपिराई । लखि किन्नर शर बीस चलाई ॥
महावीर तरु एक उपारा । तीन बाण खंडित करडारा ॥
पुनि इक शिला गही कपिराई । बाण समूह मार खसकाई ॥
तब अति कोप कियो हनुमाना । मारेउ मुष्टिक जोर महाना ॥

दोहा-मुष्टिक लागत महि गिरो, तुरत कीन तनुत्याग ।
अपर निशाचर पुनि हने, गये कछुक पुनिभाग ॥

सुनि रावण सुत अक्ष पठावा । लक्ष सेन ले सँग सो आवा ॥
ते गर्जत जब सन्मुख आये । व्यंग्यवचनकहिअधिकसुनाये ॥
तब तिन मध्य कूदि हनुमाना । जिमि मेघनमें सिंह समाना ॥

किहुके लात चपेट लगाई। काहु मींजि किहु धूरि मिलाई॥
बल वधलखि तब अक्ष रिसाई। लोहखम्भ ले सम्मुख जाई॥
हनूमानके मारसि आई। लागत कपि कछु मोह जनाई॥
इतने तिहि बहु बाण प्रहारे। महावीर रघुनाथ सँभारे॥
झटक दई ते बाण गिराये। शिला लेइकर सन्मुख धाये॥
जबतक सो कर बाण प्रहारा। तबतकतिहिशिरमें गिरिमारा॥
चूर्णभये सब ताके अंगा। हय रथ सूत भये सब भंगा॥
संग पांच मंत्री सुत जोई। इहि विधि कपि मारे पुनि सोई॥
बैठे एक महलपर जाई। बोलनलागे राम दुहाई॥
मैं सीतासुधि कारण आयो। कौशल पति कर दास कहायो॥
जिहि बल होय लरै सो आई। अखय समान यमालय जाई॥
अखयनिधनसुनिकरअतिक्रोधा। पठवा मेघनाद वर योधा॥
कहो बाँधलावो सुत वानर। मारेसि जनि देखों काको चर॥

दोहा–आज्ञा ले घननाद निज, बलसह कीन पयान।
लखि बलनाशन हेत तिन, मध कूदे हनुमान॥

बहुतै राक्षस वध कर डारे। पुनि दोउ भिरे महाबलभारे॥
बहुत बारलगि भई लराई। जब देखा कपि जीति न पाई॥
ब्रह्म अस्त्र तब कीन प्रहारा। लागतही हनुमान विचारा॥
ब्रह्म अस्त्र जो मानौं नाहीं। महिमा मिटै ब्रह्म जगमाहीं॥
अस विचारि मूर्च्छित कपिराई। जान बूझकर गये बँधाई॥
निशिचर रावणढिग ले आये। कुधर समान दशानन पाये॥
अरुण नैन हिय क्रोध विशाला। सभय देव आयसु प्रतिपाला॥
लखि प्रभाव अशंक कपिराई। दशकन्धर तब बात सुनाई॥
कपि तू को जिहि अक्ष नशाई। किहि बल नहिं जानत रघुराई॥

को रघुनाथ न जान खरारी । लक्ष्मण युत नित काननचारी ॥
लक्ष्मणको तव भगिनी जानत । परशुराममद हर सब मानत ॥

दोहा-कौन परशुधर सहस भुज, जिन मारो विख्यात ।
जिन दीपक तव शीश धर, नृत्य लखो बहुरात ॥

किहि पठवा सुग्रीव हरीशा । को सुग्रीव न जान कपीशा ॥
बाली अनुज न जानत रावन । को बाली जिन काँख रखोपन ॥
सिंधु लाँघि किमि गोपद जैसे । किहिहित सीयचोरलखितैसे॥
सीय कौन सोइ जनक दुलारी । गये बाण सह मख देवारी ॥
कौन बाण बलि सुअन कहावा। जिहि बांध्यो तुहिं नाचनचावा
कौन कहत सो जठर सयानी । धरि तुहिं फेंक्यो सागरपानी ॥
इन बातन शठ गयो बँधाई । तब तिय लखि पातकफलपाई ॥
पुनि तुहिं ज्ञान देन सुविचारी । कौन ज्ञान तजि प्रभुते रारी ॥
बिना मृत्यु किमि मरत निशाचर। सीता देइ पाँव प्रभुके पर ॥
सुन कपि मोहिं कौन संहारैं । तेरे कर्म अवश तुहि मारैं ॥
राखैं कौन कृपानिधि रामा । शरण गये बनिहैं सब कामा ॥

दोहा-सब जग मेरी शरण है, कौन शरण गहुँ जाय ।
नहिं जे है तो पाइहै, मृत्यु निशाचरराय ॥

एक बार जब सन्मुख आवहिं । रावण कर बल देखन पावहिं ॥
तब कछु आगे चलिहै बाता । कह कपि जब कोपहिं सुरत्राता॥
तब को समर सहै वह बाना । बीसहुँ लोचन अंध अजाना ॥
डरत नहीं रे पोतक वानर । मैं तोसे का डरहुँ निशाचर ॥
प्रभु आयसु मुहिं दीन्हों नाहीं । लंक बोरतो सागरमाहीं ॥
सब देवनको दुःख मिटाई । जातो लेइ जानकी माई ॥
सुर नर नाग मुनीश्वर झारी । सब जग वशवर्त्ती नर नारी ॥

तातें बैर किये भल नाहीं । शोच लेहु अपने मन माहीं ॥
मैं सब सेन सकल लखि डारी । मोते अधिक न कोउ सुरारी ॥
रघुवरके आयसु भय पावौं । नातो अबहिं सबन हत जावौं ॥
सुनि निशिचरपतिकहअसबानी । डारहु मारि कीश अभिमानी ॥
बाँटिदेहु अधिकारिन मासा । उठे निशाचर सहित हुलासा ॥

दोहा—कह्यो विभीषण जोरि कर, दूत न मारिये नाथ ।
आन दण्ड कछु कीजिये, सुनत हँसो दशमाथ ॥

कह्यो कि पट दीजे लिपटाई । देहु पूंछमें आग लगाई ॥
जिहिते निज स्वामी पै जाई । सेना सहित यहां ले आई ॥
एक गये जो बहुतिक आवैं । तौ इकत्याग मोहिं भलभावैं ॥
सबहिन कहा मंत्र यह नीका । कपि मन कहाभयोसमजीका ॥
जहँ तहँ निशिचर बहुतक धाये । पट घृत तेल लंकते लाये ॥
लगे लपेटन पूँछ बढ़ाई । देखन धाये लोग लुगाई ॥
पाछे पावक दीन लगाई । प्रलयअग्नि सम सो बढि आई ॥
तब मारुतसुत लघुतनु भयऊ । बन्धन खुले कूदि चढ़ि गयऊ ॥

छन्द—गयो कूदि रावणभवन कपितन लूम निज विस्तारेऊ ।
आकाशते जनु अग्निकी सरि ग्रसनको अवतारेऊ ॥
जिमिकालनिशिचरवधनकोनिजजीभप्रबलपसारेऊ ।
अथवा प्रबल यमराज कोई महा सैफ निकारेऊ ॥
जिमि इन्द्रचाप कलाप दामिनि तथा लूम घुमावहीं ।
देख व्याकुल भे निशाचर जहँसो तहँको धावहीं ॥
इक एक गृहमें भली विधिसों अग्नि कीश लगावहीं ।
हय गय छुराओ वर बचा बालक गहो गुहरावहीं ॥
बहु बालकी अरु बाल तिहिं क्षण तात मात पुकारहीं ।

कहैं वृद्ध लेउ बचाय हमको दीन वचन उचारहीं ॥
कोउ लात बाल निकार कोई दौरहीं हित वारहीं ।
कोउ कन्त वीर पुकारकर कारि घटनते जल डारहीं ॥
कोउ कहै लेहु उठाय सामग्री जहाँ जो पावहू ।
कोउ कहत माकी तीयलों को कन्त बकस उठावहू ॥
लखि देवता यों कहैं यज्ञ कपीश ठानो आनिकै ।
हैं सौंज निशिचर कुंड लंका हांक साहस जानिकै ॥
अथवा सुरारिक रोग बड़ लखि तासु नाशन मानिकै ।
गढ़ लंकको मिरगांक सुन्दर देतहैं हठ ठानिकै ॥
अथवा मथत मन्दर मनहुँ पुनि काम फगुआ खेलई ।
अथवा अनल शिवनेत्रजन्मा पाप खलगण ठेलई ॥
जब गिरे लंक कँगूर तब मन्दोदरी इमि बोलई ।
तजलोकलाजहु भजोरानी अनल निजमुख खोलई ॥
रे रे अकंपन रे महोदर कंटकी अतिकाय रे ।
पूत नाती सोदरंको लेहु वेग बुलाय रे ॥
कही बार अनेक याहि विभीषणै समझाय रे ।
नहिं मान डाढीजारने भो वंशकंट कुठाय रे ॥
चौहट्ट हाटन द्वार घर भीतर जहाँ जो जावहीं ।
जहँ जहँ लुकावैं नीरके तट कीश तहँ तहँ पावहीं ॥
कोउ लहत नहिं विश्राम अग्नी लपट चहुँदिशि धावहीं ।
सोइ बचत जो जयराम सीता लषण कहि गुहरावहीं ॥
करहिं हाहाकार निशिचर नारि जहँ तहँ धावहीं ।
छोड़हिं जबै जब राम सीता लषणजय कहवावहीं ॥
घटकर्णकी पुनि नारि दोउ कर जोरि इहिविधि भाषहीं ।

है रामचन्द्रदुहाइ कपिवर कन्त मेरो राखहीं ॥
बहु धाय रावणपास गढ़को हाल सबै सुनायहू।
सुनि दशवदन तब इन्द्रजितको निकट वेग बुलायहू ॥
ले अस्त्र शस्त्र अनेक धाये कपि लँगूर घुमायहू।
व्याकुल भये रजनिचर सारे जहँ सो तहाँ परायहू ॥
सुमंत्र जाय सुनाय इहिविधि कीश बडो बलायहै।
निश्शंक बंक न सुनो देखो लंक जिमि भखजायहै ॥
लखि अग्निज्वाल विशाल मेघबुलाय रावण यों कही।
दो आग शीघ्र बुझाय जल सब लंककर दीजै सही ॥
सुनि मान आज्ञा मेघपति करि वेग अति जल छाँडेऊ।
जिमि पाय तेल कृशानु तैसी चौगुनी ह्वै बाढेऊ ॥
बाणसम जब लगी अग्नी मेघ भाजे छोरिकै।
तब मालवान सयान बोले दोउ कर निज जोरिकै ॥
यह अग्नि है नहिं नाथ है यह वामता सब ईशकी।
सीयश्वाससमीर अथवा रामरोष कपीशकी ॥
इन्द्र ब्रह्मा विष्णु रुद्रादिक सकल भय मानहीं।
अब और को है ईश जाको माल्यवान बखानहीं ॥
तब कालसे इमि बोलि बोलो लाउ वानर मारिकै।
ले संग अनुचर चले यम तब दण्डपाणी धारिकै ॥
तब देखि सैना मारकपि सब कालको गालहि धरचो।
भे विकलसुर निविकलतेहिक्षणसकलजगखरभरपरचो ॥
ब्रह्मादि शंकर व्योममारग कीश ढिग आवतभये।
करि बहुत भाँति बड़ाइ कपिकी कहे वच अमृत मये ॥
कवित्त–वायुपूत जयति विख्यात बल पौरुषमें,
बालपन माहिं रवि गालमें धरन हार।

वेद अरु शास्त्र अस्त्र मंत्रमें प्रवीण महा,
जगते विरक्त मंहि मारके हरणहार ॥
जयति बजरंग युद्धरंग शत्रुभंग कीन,
बास ऋष्यमूक नाहिं काहुसे डरनहार ।
रामचन्द्र पायक सुग्रीव सुखदायक हो,
रुद्रके शरीर निज जनके भरनहार ॥ १ ॥
जयति वैराग गुण ज्ञानरु विज्ञाननिधि,
आठों याम हियेमें विराजे ध्यान रामको ।
दैत्य गण गंजन विबुध साधु रंजन हो,
दुष्टसुखभंजन न चाहतहो वामको ॥
जय जन इष्टरूप भक्तके अभीष्ट सदा,
वार नहीं लाओ रघुनायकके कामको ।
स्वर्णशैलआभ जल दाभ सु विशाल देह,
महावीर आपकी समान गुणधामको ॥ २ ॥
वैदेहीके शोचके विमोचनहो जय नित,
रावणके काननको नाशक प्रवीण हो ।
निपटनिशंक गढ लंकके जरावनमें,
कामआदि दोष नहिं धर्मके धुरीणहो ॥
प्राची औ प्रतीची अथ उत्तर रु दक्षिणमें,
पातु सब ठौर नहिं विधिके अधीन हो ।
जय शिर कर्ण नेत्र जिह्वा कटि पेट शूल,
करतनिर्मूल रामचन्द्रगुण लीन हो ॥ ३ ॥
जय पर यंत्र पर मंत्रके निवारकहो,
शाकिनी रुडाकिनी निवारणमें वीर हो ।

भूत यमदूत प्रेत चोररु बैताल गण,
सर्प भय नाशतहो हाँकमें सुधीरहो।
जय सुरसिद्ध मुनि पूज्य हैं चरण युग,
शरण भय हारी कर गिरि गतपीर हो।
अंजनीकी आनहै दुहाई रघुराईकीहै,
मिश्रके दुःखन नाथ हरो महावीर हो ॥ ४ ॥

दोहा—देहु छाँडि यमराजको, मानहु वचन हमार।
परवश आयो लरन सुनि, मुखते दियो निकार॥१॥
धुर कृशानु लखि जानकी, कपिहित शोचन लागि।
हरिहरको सौंपन लगीं,जिहि तनु छुए न आगि॥२॥
महावीर सिय सुरति करि, उत लागे पछितान।
पुनि रघुपतिकी लखि कृपा, दूरकियो अज्ञान॥ ३ ॥
गेह विभीषण बच रह्यो, अरु घटश्रुतिको द्वार।
अपर लंक सब फूंकि कपि, कूद्योजलधिमँझार॥४॥
पूंछ बुझाय मिटाय श्रम, करि लघु आपनि देह।
जनकसुता सन्मुख गयउ, बोल्यो सहित सनेह॥५॥

मातु मोहिं कछु देहु चिन्हारी। जैसे मुद्री दीन खरारी॥
चूडामणि सुनि दीन उतारी।कहिभलसमयसुरतिलियम्हारी॥
जिमिमणिबिनव्याकुलअहिराई। तिमि तलफत मैं बिनु रघुराई॥
कब आवहिं प्रभु अब इहि पारा। कब करिहैं निशिचर संहारा॥
विजय पाय मुहिं सह रघुराई। कब राजहिं सेना कपिराई॥
देव बंदिते कब छुटि जैहैं। कब वे प्रभुको विनय सुनैहैं॥
कौशलपुर कबविधिपहुँचावहिं। भरत शत्रुहनकबलखिपावहिं॥
कब हुइहै वह मंगल काजा। राम होहिं कब अवधहिं राजा॥

कबवहनखशिखछबिअभिरामा। मैं देखहुँ परिपूरण कामा ॥
शीशमुकुट मणिजटित सुहावन। श्रवणन कुंडल लोलन पावन ॥
जगमगात मुख ज्योति सुहाई। कब नैनन देखहुँ कपिराई ॥
अलकैं सिंची अतरसों सोहीं। निकटकपोलनझुकिसरसोहीं ॥
कुसुम कलिन संयुक्त सुहाई। भूरि भाग्य लखिहौं कब जाई ॥
भाल तिलक भ्रू धनु अनुहारी। कब देखिहौं निमेष बिसारी ॥
चंचल चारु विशाल विलोचन। कबलखिहौंवहशोचविमोचन ॥
शुक समान नासिका सुहाई। लटकनकी छबि कही न जाई ॥
मुखमयंक मम नैन चकोरा। कबलखिहौं अवधेश किशोरा ॥
अरुण अधर दाडिमरद जोई। रसन चारु मृदु हास भलोई ॥
शशिकरसममुखवचनप्रकाशा। भूरि भाग्य कब लखहुँ हुलासा
मधुर वचन मन हारक जोई। भूरि भाग्य कब सुनिहौं सोई ॥
चिवुक चारु चितवन सुखदाई। कब लखिहौं कहिये कपिराई ॥
कम्बुकण्ठ तुलसी मणिमाला। उर दीरघ त्रिवली सुखजाला ॥
भुज विशालकरि करसम सोहैं। करतललखिसरसिजनितमोहैं॥
भूषण भूषित लिय धनु तीरा। कबनिरखहुँइहिविधिरघुवीरा ॥
झीन झगा पहरे रघुराई। ताऊपर पट पीत सुहाई ॥
निरखि उदर उपवीत सुहावन। कबकारेहौं दोउलोचनपावन ॥
कटि केहरि करधनी सुहाई। पट परदनी सुरंग बनाई ॥
जानुपाणि सबअंग लुनाई। कब पदपद्म पलोटहुँ जाई ॥
मैं जानत उन सरल सुभाऊ। ताते कहत न दुख तनकाऊ॥
तुमहिं देखि शीतलतनु भयऊ। तुमहुँ जात मुहिं दुख निर्मयऊ ॥
दीन वचन जब सीय सुनाये। कपिके द्वौ लोचन भरिआये ॥
बहु प्रकार सीतहि समुझावा। विरह शूल कछु सीय मिटावा ॥

कछुदिन धीरजधरु सियमाता । अइहैं वेगि भक्तसुखदाता ॥
बिदा होय गर्जों कपि भारी । गर्भगिरे सुनि निशिचर नारी ॥
दोहा-सिंधु लाँघि अति वेगसों, पुनि आवा इहि पार ।
कुहू दिवस लखि पवनसुत, कपि जय जयति पुकार ॥
इति श्रीविश्रामसागर सवमतआगर ग्रंथउजागर मारुतिसीतासम्वाद वर्णनो नाम द्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥

दोहा-विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिरि राम सुखदान ।
सार रामायण कहौं कछु, सकल सुमंगल खान ॥
महावीर पहुँचे जब आई । उठे सकल वानर हर्षाई ॥
मिले सबहिं सादर हनुमाना । समाचार सब किये बखाना ॥
सुनत चले हर्षित सब वानर । जहाँराम लक्ष्मण सुकंठ बर ॥
पाँचै मार्ग शुक्रदिन वानर । पहुँचगये मधुवनके भीतर ॥
रखवारे सब दिये भगाई । भली भाँति मधुफल बहुखाई ॥
छठे दिवस गे जहँ सुग्रीवा । समाचार दीने सुखसीवा ॥
पुनि सब चले जहाँ रघुराई । चरण परे सब वानर धाई ॥
रघुवर सबहि कीन सन्माना । जाम्बवन्त तव वचन बखाना ॥
महावीर सव कीनो कामा । सुनत हिये लाये श्रीरामा ॥
पुनि बैठार बूझि कुशलाई । किहिविधितातसीयसुधिपाई ॥
बोलेउ पवनतनय शिरनाई । ढूँढे गिरि गह्वर वन जाई ॥
सागर लाँघि गयो गढलंका । है सब भाँति दुर्ग अतिवंका ॥
छन्द-अति बंक दुर्ग त्रिकूट ऊपर लंक गढ जिहि नामहै ।
तहँ पांच लक्ष पषाणगृह नव लक्ष दारु निकामहै ॥
ताम्र चाँदी सोनके गृह लंकमें बहु कोटिहैं ।
सब गलिनमें बिछो सुवरण मेरुकी जनु मोटिहैं ॥

तृण वंश अरु स्फटिकमणिके कोटि गृहजहँ सोहहीं।
वसत शत योजन सुहाई लखत सुर मुनि मोहहीं॥
दशशीश तामें करत प्रभुता लोकत्रय भयमानहीं।
तहँ वन अशोक निवास सीता विरह तप तन ठानहीं॥
सियश्वास गर्म समीरलगिलगिविहँगतहँकेभजिगये।
अकुलाय चलिभेअन्य ठौरन आयतिननाहिंपगादिये॥
तूल सम कृश गात जारिहैं नैननीर बहावही।
तब नाम सुमिरै याम आठों प्राणतनु इमि आवही॥
जब चहत त्यागन प्राण सीता तिरजटा समुझावही।
उठि गईघर जब निशिचरी तब सीयव्याकुलतागही॥
तब डारि मुँदरी आपकी गुणग्राम बहु वर्णन किये।
तब भेंट करि तव कुशल कहिकहि भाँतिबहुधीरजदिये॥
वन भंज अक्षहि मार लंक जराय सिय समुझायके।
पुनि लेइ चूडामणि निशानी दरशकीने आयके॥
रघुनाथ ले मणि हिय लगाई प्रेमजल नैनन छये।
सियविरहसागर उमडि आयो शिथिलतनुगद्गदभये॥
तब कहत कपिवर तजहु चिन्ता हौं तिहारी शरणमें।
कहो रावण मारि दलयुत आनि डारौं चरणमें॥
कहो लंकहिं बोर सागर अचल कूटहिं तोरहूं।
कहो पाटि सागर गिरिनते कहु पियों सागर बोरहूं॥
कहो देहुँ देह बढाय तापर सेन सब चलि जाइ है।
कहो अबहिं लावहुँ जाय सीतहि शोच का रघुराइ है॥
जो होइ इच्छा करहु आज्ञा करन देर न लाइहौं।
तुम्हरी कृपा प्रताप तुम्हरे कालहू धरि खाइहौं॥

दोहा–कहि अस वचन विलोकि मुख, चरण परे हनुमान ।
देखि प्रीति निज भक्त लखि, हियलाये भगवान ॥
कह प्रभु तुम समान जगमाहीं । हितू और कोउ दीसत नाहीं ॥
कहा करौं तव प्रति उपकारा । सन्मुख मन नहिं होत हमारा ॥
सुनि हनुमान कहत शिरनाई । तव प्रताप मैं सब कछुपाई ॥
धूरि मेरु गोपद तिहि सागर । जलपावकभयप्रीतिउजागर ॥
नाथ कृपा जापर तव होई । जौन असंभव सम्भव सोई ॥
सुनि प्रभु फेरि लियो उरलाई । सबदलजयजयजयतिसुनाई ॥
कह प्रभु तुम ऐसेइ बलवीरा । रहिहैं क्षुधित हमारे तीरा ॥
ताते हौं बधिहौं तिहि जाई । जन तरिहैं लीला सोइगाई ॥
ताते अब अति बिलम न कीजे । कपिन रजायसु अबहीं दीजे ॥
सुन सुग्रीव परम सुख माना । अभिजितदिन आठैंशुभजाना ॥
सुमिरि गजानन कीन पयाना । प्रभुको विजयशकुन भे नाना ॥

छन्द–भये शकुन सुन्दर चले प्रभु निज धनुषको टंकारऊ ।
सुनि शब्द घोर कठोर दिग्गज भूमि भल विधि धारऊ ॥
भो विदित चौदह भुवनमें सुरसिद्ध मुनिजयजयकरी ।
भयो मोह बारहिं बार शेषहिं भार भूते खल वरी ॥
दशमौलि मनमें विकलता गढ लंकको शोभा गई ।
कपि भालु धावहिं तालठोकहिं चिक्करहिं मारगछई ॥
कूदहिं गगनमें चलहिं वनमग नगरग्रामन त्यागहीं ।
अति पीन परमविशाल तनुसब रामकारजलागहीं ॥
पिंग लोचन बिकट मुखलखिकालजिहिभयमानहीं ।
धरि मारडारो रावणहिं सब वीर वचन बखानहीं ॥
इहिभाँति मर्कट कटक बोलत वृक्ष तोरत जावहीं ।

रज उडी रवि छिपगये सरवर पटे जल थल धावहीं ॥
अनिमेष चहतनिमेष लावन सहसदृग व्याकुलभयो ।
महावीरकीसुनिहाँक भय भयमानकिहुँ दिशिभजिगयो ॥
कोल कूरम चिक्कराह गज बार बहु डोली मही ।
गहि दशन कूरसपृष्ठअहिपति भाँति बहुदृढता गही ॥
पृष्ठपर श्रीपवनसुतकी राम रघुवर राजहीं ।
सौमित्रि अंगद कंध शोभित महा शोभा साजहीं ॥
इहि भाँति सेना चली सागरतीर पहुँची जायकै ।
उतरे निरखि जल फूल फल लखि करत भोजन धायकै ॥

दोहा–इहि विधि राम कृपानिधि, उतरे सागर जाय ।
खाउ जहाँतहँ फल लखो, कपियन कह्यो सुनाय ॥

उत दशमुख शठ सचिव बुलाई । कुंभकर्णको लियो जगाई ॥
और सभाके लोग बुलाये । सुनत वचन सब आतुर धाये ॥
सबसनसम्मति किय दशभाला । कुंभकर्ण कहे वचन विशाला ॥
अस को जो सक नैन मिलाई । पुनि रह सोय नींदतिहि आई ॥
कह अतिकाय जु आयसु पाऊं । नर वानर बिनभूमि कराऊं ॥
कामरूप घननाद सुनावा । ममप्रताप सब जगमें छावा ॥
इन्द्रादिक वश अहैं हमारे । का नर वानर भालु बिचारे ॥
कुम्भनिकुंभ दम्भ अस भाषा । हमहिं पूरिहै प्रभु अभिलाषा ॥
कृपादृष्टि चाहत सुर सारे । देत उच्च आसन भयभारे ॥
सन्मुख बोल सकत नहिं एकू । कपि मानुषहम गिनत न नेकू ॥
कहै अकंपन का तनु धारी । जियत करैं लंका पैसारी ॥
नर वानरकी कथा चलावत । निशिचरकुलहिलाजअतिलावत
कहत महोदर कपिदल अइहैं । भक्षण कर कर उदर अघइहैं ॥

सहसनलाख भखहिं पलमाहीं । हमसमअपर क्षुधित को आहीं ॥
कह दुर्मुख जो आयसु पाऊं । तो छलकर दोउ तपसी लाऊं ॥
पाछे जो हुइहै सो होई । तब मकराक्ष वचन कह सोई ॥
विपुल विप्र लावैं बरिआई । अथवा हम द्विजतनु धर जाई ॥
तिन्हैं निमंत्रण कर धरिलावैं । इहि विधि निजनिज वचनसुनावैं
कहैं प्रहस्त मोर मत एहू । सीता रामचन्द्रको देहू ॥
नारि पाय जो घर फिरि जाहीं । तब तो रारि कियेभल नाहीं ॥
अरु जो नाहिंन फिरे खरारी । तौ फिर करहिं युद्ध अति भारी ॥
तब रावण कह वचन रिसाई । अबहींते अस तैं भय पाई ॥
आगे कहाँ युद्ध करसकई । चुप रहु वृथा न अब तू झकई ॥

दोहा–तब मन्दोदरि कहत अस, सुनहु कन्त मम बात ।
यम रिपु अग्नी ऋण नृपति, रुज लघु गने न जात ॥

भुवनेश्वर सर्वज्ञ महाना । ताहि मृत्युवश तुम लघु माना ॥
सुवन सचिव अनरीत बखानत । अपने हाथ मृत्यु तुम ठानत ॥
जारत नगर न इक कपि खावा । बैठ वृथा अब गाल फुलावा ॥
तिहिते सीतहि देउ पठाई । दूषण वालिगती नहिं आई ॥
नारि वचन सुन कह अस बानी । मुहिं समान को योधा रानी ॥
जासुनाम सुनि सुरगण भाजत । ताके सौंहि युद्ध को छाजत ॥
तपसी भये कालवश दोई । मम महिमा नहिं जानत सोई ॥
कह्यो विभीषण पुनि शिरनाई । मम मत सीतहि देउ पठाई ॥

दोहा–तात राम नरनाथ नहिं, अखिल लोकके ईश ।
गो द्विज महि सुर सन्त हित, प्रगट भये जगदीश ॥

जप तप व्रत तीरथ अरु ध्याना । कियेनदरशमिलतजगजाना ॥
सोइ प्रभु कृपासिन्धु रघुराया । घर बैठे आये कर दाया ॥

मेघनाद आदिक भट भारे। बैठे गाल बजावत सारे ॥
जब छुटिहैं रघुपतिके बाणा। तबहों कठिन वचन यह प्राणा ॥
तिहिते सकल विकार विहाई। रघुपति पद शिर धरिये जाई ॥
इहि विधि लंक अचल रहजाई। नाहित कछु दिन माहिं नशाई ॥
सुनि बोला दशकंठ रिसाई। शठरिपुबड़कहसुहिंसमुझाई ॥
चल जा जहाँ शत्रु नर वानर। कहिअसमारयोचरणनिशाचर ॥

दोहा—उठो विभीषण तुरतही, कही मातुसों जाय।
सुनत मातु बोली वचन, सुन उपदेश सुहाय ॥

बड़भ्राता पितुसदृश तुम्हारा। कहा भयो किय चरणप्रहारा ॥
इहाँ रहे हैं कुशल घनेरी। वहाँ गये बाँधहिंगे वैरी ॥
सुनि अस धनपतिगेह सिधाये। समाचार सब तिन्हैं सुनाये ॥
सुन कुबेर तब वचन बखाना। तात कियो तुम नीक प्रमाना ॥
जिहि औषधि उपदेश न लागे। सो असाध्य भलहातिहित्यागे ॥
अब तुम शरण रामकी जाहू। यह भलिबात न बूझो काहू ॥
राम विमुख जे जगके प्रानी। भूलरहे जगमें अभिमानी ॥
ते सब हैं इक वैश्य समाना। चलो सौंज सहदेश पराना ॥
आगे गज आवत भय पाई। गिरो कूपमें सो अकुलाई ॥

सोरठा—तिहिमें वटकी डारि, लटकरही गहलीन्ह सोइ।
नीचे लखो निहारि, तहँ अजगर बैठ्यो प्रबल ॥

तरुपर मधु टपकत कछु जाई। ताके हेत दीन्ह मुख बाई ॥
श्याम श्वेत मूषक दो भारी। काटरहे सोइ तरुकी डारी ॥
कटगइ जबै गिरो हहराई। तुरतहि अजगर मुखधारिखाई ॥
येही दशा जीवकी ताता। आयु डारि मूषक दिनराता ॥
अजगर काल गृहस्थी कूपा। मधुमाखी सम नारि अनूपा ॥

नोचतहैं कछु मधु टपकाई । तिहिमें सुखमानत अधिकाई ॥
बिनु हरिभजन ठिकानो नाहीं । देखहु करि विचार मनमाहीं ॥
रामशरण बिनु तजै न काला । कतहुँजाउनहिंकोउप्रतिपाला ॥
तीन ताप नित आय सतावैं । इहि कर यह उपाय श्रुतिगावैं ॥
जिमि शिशु रोगभये पितुमाता । देत चिराय अन्त सुखपाता ॥
तिमि प्रभु करत दासरखवारी । भजन विपति जानहु अघहारी ॥

दोहा-सत्य शरणदाता सुखद, तुम जानहु रघुवीर ।
बिनागये तिनकी शरण, मिटै नहीं भवभीर ॥

अस सिखपायशिवहिशिरनावा। चार सचिव सँगसपदिसिधावा ॥
अन्तःकरण जीव सँग जैसे । चलत भयो मंत्रिनसँग तैसे ॥
अहो आज है भाग्य घनेरे । जागे कौन पुण्य अब मेरे ॥
साधु विप्र का दीनो दाना । कौन अपूरव तप हम ठाना ॥
जो सर्वोपरि श्रीरघुराई । लोचन सफल करहुँलखिपाई ॥
निज जन हित धारे अवतारा । हरिहैं सकल भूमि को भारा ॥
शोभासिंधु दरश जब करिहौं । परमानन्द मोद मन भरिहौं ॥
जे पद पद्म सन्त नित ध्यावैं । ब्रह्मा सुरपति अन्त न पावैं ॥
जो सब भाँति धरा दुख हारी । जिनपदपरसितरीऋषिनारी ॥

दोहा-जासु वारि भइ सुरसरित, जिहिशिवधारत शीश ।
जिहि तारे जग अधम बहु, साखि भरत गौरीश ॥

जिन पदकी पादुका सुहाई । पूजत भरत सदा मनलाई ॥
भूरिभाग्य तिन दर्शन होई । सुहिंते अधिक न पूजित कोई ॥
जिन कर कमल असुर संहारे । धर्म साधुपथ रक्षनहारे ॥
जिन भवचाप खंड करडारो । परसत मिटत काल डरसारो ॥
करहुँ प्रणाम जाय मैं जबहीं । सोइकर शीशधरैं मम तबहीं ॥

पुछि हैं जब तब नाम सुनाई। कहिहौं आव करन सेवकाई ॥
छाँड़ि कपट छल सेवा करिहौं। प्रभु उतरे वस्तर तनु धरिहौं ॥
सुनि कृपालु अपनैहैं मोही। तब सब भाँति मोरभलहोही ॥
निशि दिन लखहुँ मनोहरझाँकी। तब का रहै करनको बाकी ॥

दोहा-नाहित होती कौन गति, मिटत न यह भवरोग।
शंभुकृपा भे काजसब, मिट गे सकल कुयोग ॥

इहि विधि करत मनोरथ भारे। सिंधुपार आ वचन उचारे ॥
जय सर्वज्ञ कृतज्ञ दयाला। कृपासिंधु शरणागत पाला ॥
नाथ दशानन कर लघु भाई। आयो शरण देहु रघुराई ॥
प्रभु बहु शरणागतके पालक। लखहुविभीषणकोअरिघालक ॥
श्रवण सुयशसुनि कृपानिधाना। आयोशरण करहु कल्याना ॥
दूतन प्रभुसे खबर जनाई। राम सचिव निज लिये बुलाई ॥
कहा करहिं आवा रिपुभाई। कह सुग्रीव सुनहु रघुराई ॥
भेदलेनहित आयो होई। राखहु बाँधि काज भलसोई ॥

दोहा-कह अंगद है अन्त वध, निशिचरकर रघुराय।
ताहिमारिये अबहिं किन, कह ऋक्षेश बुझाय ॥

रिपुकर जो भ्राता कहवायो। अब का नातकरनकोआयो ॥
सीयहरण लखि काहि न आवा। जान देहु घर शरण सुनावा ॥
कह नल दूत पठै तहँ देहू। ताके हिये भेद भल लेहू ॥
राखनयोग्य होय रखलीजे। खल जो होय तासु वध कीजे ॥
मम मनमें यह परत लखाई। साँचहु यह शरणागतआई ॥
सभय तजे अव लागै भारी। तब मारुतसुत गिरा उचारी ॥
जो जग जीव शरण तव आवे। नहिं निशिचरनहिं दैत्यकहावे ॥
छली नहीं कोउ सन्मुख होई। अब प्रभु कहैं सत्य सब सोई ॥

बोलो बीच निशाचर राई। आये अबतक बहु शरणाई॥
किये प्रणाम हरे दुख सारा। मम अभाग्यते होत विचारा॥
दोहा–दीनबन्धु सुनि दीनके, वचन कपट छल हीन।
बोल उठे लावहु अबहिं, वृथा देर का कीन॥ १॥
सुनत वचन रघुराजके, कहि जय जय हनुमान।
भूसवदी भूतादिवस, लाये करि सन्मान॥ २॥
प्रभुछबिलखहियअतिसुखलीन्हा।कहि प्रभु त्राहि दंडवतकीन्हा॥
प्रभु उठाय लीनो उर लाई। आदर करि समीप बैठाई॥
कहु लंकेश कुशल निज सारी। खलसंगतिकिमिरहतसुखारी॥
कह्यो विभीषण तव शिरनाई। जो तव भजन करत रघुराई॥
तिनको मंगल कुशल घनेरे। देत विरंचि स्वयं बहुतेरे॥
जिहि सूरति सुनि ध्यान लगावैं। कबहुँक ध्यान माहिं नहिं पावैं॥
सो भरि अंग भेंट किय आजू। इहिते कौन अधिकसुखसाजू॥
सुनत वचन बोले रघुराई। नहीं दाससे प्रिय मुहिं भाई॥
जिनके हेत धरत अवतारा। अस कहि बोले वचनउदारा॥
सागरजल लेआवहु जाई। महावीर लेआये धाई॥
प्रभु निजहाथतिलकतिहिसारा। कह्यो भये तुम लंकभुआरा॥
लखि सब वानरगण हरषाने। सुमनवरषिसुरजयति बखाने॥
जो पुर निज शिर सुमन चढाई। दशमुख शंकर ढिगते पाई॥
सो प्रभु कुदिन विभीषण दीनी। सकृत प्रणामकृपाअसकीनी॥
दोहा–ऐसे प्रभुहि बिसारि जे, करत अन्यको जाप।
ते सुख सम्पति खोजहीं, जहां भरे संताप॥ १॥
सकल कामना देत हैं, रघुनायक गुणगान।
सादर सुनहिं सुतरहिं भव, भाषत वेद पुरान॥ २॥

महावीर संकट हरहिं, राम रहहिं अनुकूल ।
तिनकी कथा सुहावनी, सकल सुमंगल मूल ॥ ३ ॥
भजहु रामपद कमल युग, जपहु रामको नाम ।
पावहु सकल मनोरथ, नित नूतन विश्राम ॥ ४ ॥

इति श्रीविश्रामसागर सद्गुणआगर ग्रंथउजागर रामसिंधु तटागमनोनाम त्रयोविंशोऽध्यायः ॥ २३ ॥

इति सुन्दरकाण्ड सम्पूर्ण ।

इति

सुन्दरकाण्डसमाप्त।

इति।

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

अथ

श्रीविश्रामसागर.

लंकाकाण्डप्रारंभः ।

दोहा-विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिरि राम सुखदान।
वरणों कोकिलमत कछुक, मानस मत गुणखान ॥

प्रात पंचमी दिन रघुराई। पूँछा अस मत सचिव बुलाई ॥
किहि विधि सागर उतरहिं पारा। सुनत विभीषण वचन उचारा ॥
एक बाण शोषहि शत सागर। तदपि नीति वर्त्तहु गुण आगर ॥
माँगहु मग प्रभु सागरपाहीं। रुची बात रघुवर मनमाहीं ॥
लक्ष्मणमन यह बात न भाई। ईश भरोस कौन रघुराई ॥
कह प्रभु भाइ सुनहु मम बानी। साधु अवज्ञा उचित न जानी॥
अस कहि राम सिंधुतट जाई। बैठ गये तहँ दर्भ डसाई ॥
तीन दिना इहि भाँति बिताये। रघुवर सन्मुख सिंधु न आये॥

दोहा-तब प्रभु लीनो अग्नि शर, उठी उदधि उरज्वाल ।
विप्ररूप धरि भेंट ले, चरण गहे तत्काल ॥

तुम्हरी सृष्टि सकल रघुराई। जिहि जस कियो सुते सरहाई॥
अब प्रभु मुहिं जो आयसु होई। माथे मान करहुँ मैं सोई ॥
जो प्रभु मैं अब जाउँ सुखाई। मरिहैं सकल जीव समुदाई ॥
कृपासिंधु सुनि वचन उचारा। जिहि विधि कपिदल उतरहिंपारा
सोइ तात तुम करहु उपाई। सुनि सागर अस विनय सुनाई॥
नाथ नील नल वानर दोई। तिन परसे गिरि तरु जो होई ॥

सो सब सागर पर उतराई । रचैं सेतु प्रभु देहु रजाई ॥
अस कहि नवमी दिवससिधावा । दशमीते प्रारंभ करावा ॥

दोहा–वानरगण गिरि लावहीं, नल नीलहिं सो देहिं ।
रचहिं सेतु लिखि राम अस, सहजागिरिनधरिलेहिं ॥

चार दिनामें सेतु बनायो । लखि रघुवरइमि वचनसुनायो ॥
इहां थापिहौं श्रीशिवशंकर । वानर सुनत रच्यो शुभ मंदिर ॥
लिंग थापि प्रभु पूजन कीन्हा । विपुलमहातमकहिसुखलीन्हा ॥
दश योजन पुलकी चौंडाई । शत योजनकी शुभ लम्बाई ॥
नल नीलहि सराहि रघुराई । चौदशते सैना उतराई ॥
हनूमान कांधे श्रीरामा । अंगदपर लक्ष्मण सुखधामा ॥
देखनको रघुवर छबि भारी । प्रगट भये तहँ जलचर झारी ॥
जलचर गण ऊपर कपि जाहीं । कोउ सेतु कोउ गगन उडाहीं ॥
भवनिधि तरण हेतु जनु ज्ञाना । कर्म उपासन ज्ञान समाना ॥
इहि विधि द्वितियातक भे पारा । पाय रजाय भालु कपिधारा ॥
जहँ तहँ उतर मूल फल खाये । तृतियादिन सुवेल गिरि छाये ॥
दशमी तक सुख भयो निवासा । हरिदिनदशमुखवचनप्रकासा ॥
देखनहित रघुवर दल भारी । शुक सारण पठये दुइचारी ॥

दोहा–पहँचानो जब कपिनने, दोउन दीनी मार ।
लक्ष्मण दिये छुडाय तब, गे दशमुख दरबार ॥

लखि रावण कह वचन सुनाई । केतिक भालु कीश कटकाई ॥
एक दिवसकर होइ अहारा । भयो क्षुधित अतिकटकहमारा ॥
कहे भीरु भ्राताकर बाता । कीनो निजतनु आपहि घाता ॥
कहु तपसिनकी कथाविशाला । दियो निकार जिन्हैं महिपाला ॥
तब शुकसारण विनय बखानी । सुनहु कथा सादर सुखमानी ॥

सहस लक्ष कोटी इक होई। कोटि सहसकर शंकूसोई ॥
सहस शंकु इक अर्बुद मानो। अर्बुदसहस त्रिदंकू जानो ॥
सहस त्रिदंकू पद्म प्रमाना। ऐसे पद्म अठारह जाना ॥
यूथपहैं रघुपति दलमाहीं। कालतुल्य लंकहि धरिखाहीं ॥

दोहा-कियो विभीषणको तिलक, दियो लंकको राज।
तिनते बूझत सकल मत, करत सकल प्रभुकाज ॥

तब रावण अस बात सुनाई। मिथ्या काहे करत बड़ाई ॥
भीरु विभीषण जहां अधूरा। तहाँ कौन विधि परिहै पूरा ॥
कह शुक जो नहिं सुनत हमारी। चढि अट्टाल लखहु दलभारी ॥
तब रावण शँग ले शुक सारन। चढ़ो धवर दल देखन कारन ॥
शुक सारन भट दीन चिन्हाई। जे बैठे रघुवर कटकाई ॥
देखहु वे अंगद हनुमाना। वे सुकण्ठ नल नील सुजाना ॥
वे सुषेन वे दधिमुख वानर। वे केहरि गवाक्ष भट आगर ॥
गौर श्याम छबि परम सुहाये। शीश जटाके मुकुट बनाये ॥
मुनिपट धनुर्बाण तूणीरा। मृगछाला आसन रघुवीरा ॥
निकट विभीषण पाछे लक्ष्मण। बैठे रघुवर लखहु मुदित मन ॥
सुनि दशमुख हँस वचनउचारा। लखहुकालकर खेल अपारा ॥
जमें पंख चींटिनके आई। स्वयं नाशहित सेना लाई ॥
इत प्रभुलखिरावणअभिमाना। सजि सारंग तजा इक बाना ॥
छत्र मुकुट सब दिये गिराई। प्रविशा पुनि निषंगमें आई ॥

दोहा-रहे अचम्भे असुर सब, अशकुन भयो अपार।
कह रावण शिर खसे शुभ, यामें कहा विचार ॥

तिहिते अब गृह गवनहु भाई। गये सकल ले असुर रजाई ॥
मन्दोदरी बहुत समुझावा। सुनहु प्राणपति मोर सिखावा ॥
लखहुकालगति भइ विपरीता। साधारण कपि तुमको जीता ॥

सन्मुख सकैं न नैन मिलाई । करैं ठठोली ते अब आई ॥
जहँ लोकप प्रविशत भय पाई । ताहिं तुच्छ कपि दीनजराई ॥
जिहि लांघन आश्चर्य महाना । तापै पर्वतपुल उतराना ॥
जासु नाम भय पावत काला । तिहिपरचाढि वानरऋच्छमाला ॥
तुमहूँ अस हठ कबहुँ न ठानी । विधिगतिपरतनहींकछुजानी ॥
अबहुँ समझ पिय कारज कीजे । सीतासौंप रामको दीजे ॥

दोहा—मधु कैटभ हाटकनयन, कनककशिपु बलवान ।
जिन मारचउ प्रयास बिन, बाली एकहि बान ॥१॥
सोइ सागरमें सेतु रचि, आये कृपानिधान ।
घर बैठे दरशन मिले, करहु हिये कछु ज्ञान ॥२॥

जाहु चरण पकरो पिय अबहीं । नमतहि कृपा करैं प्रभु तबहीं ॥
सुनि रावण अस गिरा उचारी । कहत सत्य तुम सबही प्यारी ॥
पर मैं मनमें कीन विचारा । शिवनिर्माल्यशीश सुखसारा ॥
सो यह रघुपति लायक नाहीं । देहुँ निवार समर महि माहीं ॥
अपनो बल सब उन्हैं दिखैहौं । अपने मनकी साध मिटैहौं ॥
तनु तज मिलौ रामसन जाई । कीरति तिहूँ लोक इमिगाई ॥
चौंसठ युग निजभुज बलपारा । कीनो राज्य विदित संसारा ॥
अछत बाहु अरि पगपर जाई । धिकधिकममपौरुषअधमाई ॥
जग सब भये मोर आधीना । तैं किहि हेतु हिये भयकीना ॥
मन्दोदरी हिये अस जाना । कालविवशप्रियभो अभिमाना ॥
जासु विनाश निकट अतिआवै । सब विपरीत क्रिया तिहि भावै ॥

दोहा—अस कहि गयउ शयनगृह, प्रात भये दशशीश ।
गयो सभा अति बल कह्यो, हर्षे भट वागीश ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ग्रंथउजागर रामसुवेलागमनोनाम चतुर्विंशोऽध्यायः ॥ २४ ॥

दोहा-विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिरि राम सुखदान।
मानस मत कर सारले, वरणौं चरित महान॥

दशमुख सब निज सेन बुलाई। लंका चहुँदिशि दीन पठाई॥
आप जानकीके ढिग आवा। साम दान बहुविधि समुझावा॥
माघ बदी परवा जब आई। अंगद ते बोले रघुराई॥
बालितनय बल बुद्धि निधाना। लंका जाहु अबै बलवाना॥
विविध भाँति दीजै समुझाई। नहिं मानै तब लौटहु भाई॥
भलेहि नाथ कहि चले तुरन्ता। आये जहँ गढ लंक दुरन्ता॥
पुर प्रविशत रावण कर बालक। खेलतमिल्योकह्योकुलघालक॥
काको दूत रामकर भाई। जासुतिया ममपितु हरलाई॥
कह अंगद सोइ राम अनूपा। जासुअनुजतवभगिनिविरूपा॥

दोहा-पुनि अंगद तिहि पकरिकै, मारो टाँग फिराय।
सहम गये सब असुर लखि, जिततित चले पराय॥

बिनु बूझे मग देहिं बताई। कहैं कि रावण मीच बुलाई॥
जारा नगर सोइ कपि आवा। अबविधिकिहिविधिबनैबनावा॥
अब जब निशिदिन मचै लराई। किमिनिशिचरकुलकेरभलाई॥
समाचार रावण सुनि पावा। इतने अंगद दूत पठावा॥
रावण भीतर लीन बुलाई। लखी जाय अद्भुत प्रभुताई॥
कज्जलगिरिसम दशशिर सोहत। लोकपदिशपजासुमुखजोहत॥
सुर गन्धर्व असुर मुनि नागा। भ्रुकुटिसभीतविलोकनलागा॥
उठी सभा लखिकै कपि कुंजर। भयो छोभ रावण उर अन्तर॥
बोला वचन करत प्रभुताई। विधि न पढ़हु बैठहु अरगाई॥
जीववाद मत बहुत बढाओ। धर्मचरणकी सेव जनाओ॥
रहैं दिनेश दूर इहि बारा। नारद स्वर मत करहु उचारा॥

यह सुरपति कर नहिं दरबारा। बैठजाहु तज कलरव भारा॥
बैठ गयो तब हियरिस आनी। अंगद से कहि दशमुख वानी॥

छन्द–कहँ ते आयो कीश, मुझे रघुराज पठायो।
किमि कीनो आगमन, तोर रक्षण मन लायो॥
मोपर विपता कौन, राम अरि शिरपर आये।
कौन राम, शठ असुर जासुकी सिय हरलाये॥
को भाषत, हनुमान जौन तब लंक जराई।
करुणामय भगवान वचन यों कहे जनाई॥
रावणसे कोइ जाय वचन मम देइ सुनाई।
जो सिय देइ पठाय तुच्छकर जिय बचिजाई॥
सुनि बोले अस सुभट नाथ जो आज्ञा पावैं।
तुरत बधैं तव शत्रु सियहि तब ढिग ले आवैं॥
सुनि प्रभु तिनको बरजि साधुलखि मोहिं पठायो।
मोरेहु मन भइ दया मित्रपितु लखि हौं आयो॥
मानो मेरी बात प्रजाकी होइ भलाई।
श्रीमद मनमें लाय वृथा मातहि हरलाई॥
भयो सु अब ह्वैगयो सिया सँग कर निज नारी।
जाहु शरण श्रीराम क्षमै अपराध तुम्हारी॥
कह रावण चुप कीश वृथा कत बाद बढावै।
विश्व विदित परभाव मोर तिहि पार कु पावै॥
सुर नर मुनि जन जीत किये अपने वश सारे।
शिवहि चढाये शीश करन कैलासहि धारे॥
महा सुभट सम भाय देखि जिहि जगभय माने।
मेघनाद सम पुत्र इन्द्र लंकहि गहि आने॥

कह अंगद सब सत्य अहै बल सत्य तुम्हारा।
पै रघुनायक संग युद्ध नहिं पैहो पारा॥
जो जो भे प्रतिकूल पूर नहिं काहू पाई।
शठ ताडका सुबाहु मरे खर दूषण आई॥
शंभुचाप अति सुदृढ तुमहुँ नहिं सके चढाई।
सो प्रभु डारो भंजि मान सिख करहु मिताई॥
कह रावण मम सरिस जगत योधा को भाई।
कौन पिता जिहि हेत करी तुम आन मिताई॥
है वाली मम पिता रहा कहु कुशल सुनाई।
कछु दिनमें ढिग जाय कुशल पूछो हिय लाई॥
राम विमुख जस कुशल होय सो तुम्हैं सुनैहै।
जान बूझ निज मृत्यु होत कस तुम्हैं बतैहै॥

दोहा-मर्म वचन सुनि कीशके, कह रावण रिस मार॥
अहो बालिके पुत्र तुम, निजकुल भये कुठार॥

छन्द-तुम समान भये पूत तासु ऐसी गति होई।
जन्मत काहे न मरे बापकर नाम नशोई॥
जिन डारो पितु मार तासुके दूत कहाये।
ले सब सेना मोरि संग चल रणहित भाये॥
हम तुम दोउ मिलि संग शत्रुको हनिहनि मारैं।
बलि देवहिं निज देव हेत मन दुख निर्वारैं॥
कह अंगद रे नीच बात कत कहत बनाई।
ठानत मम मन भेद पवन गिरि सक न डुलाई॥
ब्रह्मादिक जिहि भृत्य तासुके हम हू दासा।
हम कुलघालक हुए आप कुलपालक खासा॥

जो नहिं करत विचार शीघ्र ताको फल पैहै ।
सेन सहित रघुवीर बाणते तैं नशिजैहै ॥
कह रावण जग मध्य मोहिं को है फलदाई ।
लोकपाल यम काल सदा मोते भय पाई ॥
करों चाहुँ जिहि नृपति चहौं जिहि रंक बनावौं ।
सकैभेंट को वचन बहुत का तोहि सुनावौं ॥
कह अंगद असरहे सहसभुज औ बलि वाली ।
इन्है न जीतो कबहुँ बँधे रहे घर बलशाली ॥
सुनि लज्जित ह्वै कहैं बालपनकी सो बाता ।
तब थो निर्बल गात भयो अब बल विख्याता ॥
भे दिलीप नृप विनय कीन कर अवध छुटायो ।
सो का है बडि बात मान कछु गर्व घटायो ॥
शिवा सहित शिव शैल शिलासम निज कर धारो ॥
शीश काटकर हवन कीन यश जगत उचारो ॥
कह अंगद शिर कटे काह कछु होत बडाई ।
बाजीगर किमि वीर अंग निज देत कटाई ॥
कहा भयो गिरि धरो भालु कपि लेत उठाई ।
नहिं यामें कछु सुयश शोच मन निशिचरराई ॥
वृथा भयो तिहि जन्म भजे नहिं जिन रघुराई ।
धन सम्पति सुख सकल स्वप्न सम जाय नशाई ।
रावण बोला बिहँसि भले तुम तपसिन दासा ।
दिये कालमुख लाय लाभ का भयो विनाशा ॥
सकल लोक परिवार कुटुम सुख दिये नशाई ।
जब जानहिंगे शूर जियत ह्याँसे चलिजाई ॥

तब रिपु तहँ सुग्रीव विभीषण रिपुहै मोरा।
अपर कीश भखलेंहिं निशाचर मेरे घोरा॥
सुन अंगद कह मूर्ख बालि जिन इक शर मारो।
परशुरामको गर्व लखतही जिन निरबारो॥
खर दूषण त्रिशिरादि गये क्षणमें जिन मारे।
चाप तोर सिय वरी गये दबि भूपति सारे॥
सेवक लघु जिहि आय तुम्हारी लंक जराई।
तिनसों लरिहैं कहा वृथा कत गाल बजाई॥
कह रावण जो स्वामि तुम्हारे हैं बलदाई।
तो कहिये किहि हेतु दूत मम निकट पठाई॥
करैं क्षत्रिको धर्म घोर संगर इत ठानैं।
रिपुते ठानत प्रीति लाज मनमें नहिं मानैं॥
जो मनमें भय होय अबहिं तो जाँय पराई।
भागे मारैं नाहिं समर कालहुँ सन पाई॥
सागर बाँधे कहा वीस भुज सागर बीशा।
इन्हैं लाँघिहै जबै विदित बलहोइहि कीशा॥
कह अंगद अज्ञान ज्ञान बल निर्बल जोई।
कारजते खुलिजात कपट सुत तियकर होई॥
तुम्हैं जान तब लियो करी छिप सियकी चोरी।
सके न रेखा लाँघ धनुषकी लक्ष्मण डोरी॥
आयो मैं न वसीठ राम पठयो इहि कारन।
मान्जाय तो नाहिं परे शशकर संहारन॥
रावणको वध किये हमारो यश नाहिं होई।
जिमि मृगपति हत मेष कहा यश पावत सोई॥

तदपि रोष अति होत क्षत्रकुलको निशिचरपति ।
ताते सीता देय शीघ्र मिल जाय मन्दमति ॥
रावण कह उन संग भये सब कोशलवारा ।
आवा प्रथमै एक वृथाही जाय पुकारा ॥
मरचो भीरमें अक्ष कपिहि मैं दीन छुडाई ।
लगी किहू गृह आगि कही मैं लंक जराई ॥
तैसनकी मतिमन्द तुहूं इत करत बडाई ।
मोको जानत छोट विश्व मम विदित शुराई ॥
कह अंगद रे नीच बात किन बोल विचारी ।
कल्पवृक्ष किमि वृक्ष कहाँ सीतासी नारी ॥
चिन्तामणि किमि उपल सरित साधारण गंगा ।
अभय दान विज्ञान सरिस किमि रे शठ वंगा ॥
जिय आवत तब लंक लेइ सागरमें डारौं ।
सकल निशाचर अबहिं तोर सन्मुख संहारौं ॥
पर तव शोणित पियन चहत रघुनायक बाणा ।
ताते रिस मन रोक तोर नहिं मारत प्राणा ॥
अथवा कामी मूढ कलंकित सरुज सुनाये ।
वृद्ध विमुख भगवान जियतही मृतक कहाये ॥
इनके मारे कहा होत अपनी मनुसाई ।
कह रावण इहि भाँति रह्यो जो तनु बल भाई ॥
तौ पितु अरिकी कौन भाँति कीनी सेवकाई ।
मात भ्रातके गेह रही तिन नारि बनाई ।
डूब मरत नहिं जाय बात हमसे बड मारे ।
नर वानरकी कहा लोक त्रय जो बलधारे ॥

तऊ लरौं मैं जाय न पग पाछेको धारूं।
सुन रे शठ सब सेन वानरनकी संहारूं॥
तब अंगद करि कोप भुजा धरणी देमारी।
गिरे सभासद मुकुट गिरे रावणके भारी॥
कुछ लिय शिरन सँभार कछुक अंगद गहि लीन्हें।
प्रेरे प्रभुके पास पवनसुत प्रभुको दीन्हें॥
रविसम तेज अपार भालु कपि निरखनलागे।
राम विभीषण शीश धरे लखि सुर मुदपागे॥
उत रावण करि कोप कह्यो सब निशिचर जाई।
पाओ जहँ कपि भालु तुरतही डारो खाई॥
दोउ तपसिनको मार कीशकर करहु सँहारा।
हिये न लायो रोष कियों मैं नीति विचारा॥
यह चढि चलो कपार वृथा बोलत कटुवानी।
अहैं अलपबल दोउ तापसी मति गति जानी॥
कह अंगद करि कोप चरण जो मम सक टारी।
फिरैं राम निज धाम जानकी मैंने हारी॥
रावण आज्ञा पाय उठे घननादिक तबहीं।
झूमे पग पर सकल टर्यो नहिं लज्जित सबहीं॥
बैठ गये हिय हारि उठो तब स्वयं निशाचर।
चरणछुवत तिहि देख कहत युवराज वचन वर॥
गहो रामपद जाय न मम पद गहे उबारा।
सुनत सिंहासन जाय बैठ निशिचर हिय हारा॥
तब बोलो कर क्रोध मारडारो इहि कीशा।
सुनत वचन कह कीश अरे सुन शठ दशशीशा॥

शिर पर आयो काल वचन नहिं मानत मेरो ।
अस कहि उड़े अकाश शिखर इक गढकर गेरो ॥
दोहा–आय चरण प्रभु कर गहे, प्रभु कीनो सत्कार ।
कियो काज भले मोरे हित, बोले राम उदार ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर अंगदरावणसम्वादवर्णनो-
नाम पंचविंशोऽध्यायः ॥ २५ ॥

दोहा–विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिरि राम सुखदान ।
वरणौं मानस मत कछुक, सकल सुमंगल खान ॥
उत निशिमें दशकंधर जाई । बैठ अखारे नृत्य कराई ॥
प्रभुसुसकान निरखिअभिमाना। कियो तुरत सुग्रीव पयाना ॥
पहुँचे इक कुलांचमें जाई । मारि तमाच पटकि भूलाई ॥
गिरो न सँभर उठ्यो देवारी । लागे करन दोउ पुनि मारी ॥
एक याम भरि भई लराई । कोउ काहू नहिं सको गिराई ॥
तब माया की मन तिन ठानी । कपिपतिचले तुरतयहजानी ॥
इत प्रभु नहिं सुग्रीव निहारी । भये शोचवश लषण खरारी ॥
इतने पहुँच भये कपिराई । पूँछेते सब बात सुनाई ॥
कह प्रभु अससाहस जनि कीजे । तुमनायक सबको सुखदीजे ॥
दोहा–तुम बिन सिय ले करहिं का, सखा समुझ मनमाहिं ।
सुनि तोषे सुग्रीव प्रभु, अब करिहैं अस नाहिं ॥
प्रात होत प्रभु कटक बनावा । चारहुँ लंकाद्वार पठावा ॥
पूरव दिशि राजे नल नीला । दक्षिण में अंगद बलशीला ॥
पश्चिम महावीर हनुमाना । उत्तर लषण सहित भगवाना ॥
मध्य सुकंठ वीर सँग लीन्हें । चहुँदिशि शोधविभीषणकीन्हें ॥
द्वितियापुर निरोध सुनि रावन । लाग्यो अपनो सेन पठावन ॥

पूरव ओर प्रहस्त पठायो। दक्षिणद्वार महोदर आयो॥
मेघनाद पश्चिम दिशि आवा। उत्तर ओर दशानन धावा॥
विरूपाक्ष मध्यम पैसारा। नारांतक चहुँओर विचारा॥
इहि विधि सेन राखि कह बाता। करहु भालु कपिदलकर घाता॥
आज्ञा माँग निशाचर धाये। परशु भिन्द बहु शूल उठाये॥
विविधभाँतिके बाजन बाजे। दोउ दल भिरिभिरिगर्जतराजे॥

दोहा-धाये कपिवर क्रोधकर, वर्षनलगे पषान।
अस्त्र शस्त्र लागे चलन, मच्यो महा घमसान॥

कोउ गिरत उठि भिरत प्रचारी। कोउ ललकार करत अतिमारी॥
मुरत न बीर सुकरहिं प्रहारा। गढपर चढी कीशकी धारा॥
मारदिये सब असुर भगाई। पुरमें हाहाकार मचाई॥
जहाँ तहाँ लंकाकी नारी। देहिं दुखी दशमुखको गारी॥
निजदलविकलविलोकिसुरारी। कहेसिसकलनिशिचरनपुकारी॥
भागजाय रणते जो कोई। मोरे कर ताकर वध होई॥
फिरे सुभट पुनि मानि गलानी। महाभयंकर पुनि रण ठानी॥
वानर भालु विकल करदीने। गहि गहि गढते चले प्रवीने॥
दोदो निशिचर वानर मारहिं। कूद परहिं ऊपर दे मारहिं॥
भागचले कपि भालु सयाने। आरत वचन कहत भयमाने॥
पश्चिम महावीर यह जाना। पगगहि मेघनाद ढिगआना॥
सारथि मार तोर रथ डारयो। लंकआय पुनि असुरप्रचारयो॥
संग संग अंगदहू आयो। लंकआय दोउ शोर मचायो॥
भवन ढहायलगे डरपावन। लागे प्रभुके गुणन गवावन॥

दोहा-देहिं दुहाई राम जो, तिन्हैं छोड कपि देहिं।
फांदि पुनि रिपुसेनमें, पकडि निशाचर लेहिं॥

खरभर परो लंक गढ माहीं। शिरधुनिनिशिचरनारिकहाहीं॥
अब किहिविधि हुइहैकुशलाई। ऊधम दोउन कीश मचाई॥
खग छोरैं बहुविधिडरपावहिं। पुनिकछुरावणपास चलावहिं॥
इहि विधि बहु निशिचर संहारे। साँझ जानि प्रभुपास सिधारे॥
गये जान अंगद हनुमाना। फिरे भालुकपिनिशिचरजाना॥
पाय प्रदोष निशाचर धाये। जयजयकरिसन्मुखकपिआये॥
पुनि दोउ दल माचीअतिरारी। तब अतिकाय कपट विस्तारी॥
भयो निमिषमें अतिअँधियारा। सूझ न आपन हाथ पसारा॥
रुधिर हाड कच वर्षत आगे। व्याकुल हो कपि भागनलागे॥
दोहा-मर्मजान रघुनाथ तब, धनुले छाँड्यो बान।
भयो प्रकाश निमेष महँ, सब कछु परो दिखान॥
तब कपि भालु रोषकरि भारी। दीन कठिन असुरनको मारी॥
गये तुरत सब असुर पराई। कपि निरखे आ प्रभु रघुराई॥
इहि विधि आठ दिवस संग्रामा। भयो बिकट लंकागढ धामा॥
तब रावण निज सचिव बुलाई। पूंछत करिये कौन उपाई॥
अर्ध निशाचर कटक नशानी। सुनि कह मालवन्त असवानी॥
जबते सियलाये तुम ताता। तबते पुरत न एकहु बाता॥
ताते सिय रघुनाथहि दीजे। इतना कहा मोर प्रभु कीजै॥
कह रावण उठजाहु अभागे। कारोमुख कर आउ न आगे॥
पूँछत कछुक कहत कछु ओरा। सो उठि गयो परुष कहिघोरा॥
दोहा-तब सकोप घननाद कह, काल करहुँ जो काम।
कहौं न निज मुख देखियो, वधहुँ लषण अरु राम॥
सुन सुतवचन बहुत सुखपावा। नौमी प्रात होत चढिधावा॥
कहां राम लक्ष्मण हनुमाना। आज कठिन हुइजैहैं प्राना॥

सुनि कपि भालु कुधर लेधाये । मेघनाद शर मार गिराये ॥
उठे लषण तब ले धनु बाना । बाण मारकिय विकलनिदाना ॥
सूत मार रथ भंजन कीन्हा । बाण अमोघ वधनको लीन्हा ॥
संकट जान इन्द्रजित क्रोधा । ब्रह्मदत्त ले शक्ति सुयोधा ॥
सो घुमाय लक्ष्मण हियमारी । गिरे अनन्त मुरछि तपधारी ॥
लगो उठावन असुर सयाना । उठे न लषण रहा खिसियाना ॥
जगदाधार कु सकै उठाई । महावीर लखि आये धाई ॥
मुष्टिक एक आय कपि मारा । करि अचेत गहि लंक प्रचारा ॥
निशा जान लिय लषण उठाई । आये जहँ राजत रघुराई ॥
देखि राम भ्रातहि हिय लायो । करुणाकर इमि वचन सुनायो ॥
जगसागरको पोतसरूपा । ईश रहे मम भ्रात अनूपा ॥
सो अब अस्त चहत का करऊं । तुमविनप्राणननिजतनुधरऊं ॥
तजि पितु मातु संग वन आई । सब विधि मोरी विपति बटाई ॥
मैं तुम साथ न प्राण पठाये । तुम सुकृती निज कर्म कहाये ॥
तुम विन मैं तनु राखब ताता । जगमें अपयश हो विख्याता ॥
निदरी हिये कुलिश कठिनाई । तुम बिन जो नहिं दरकि नशाई ॥

दोहा-पिता मरण भामिनि हरण, खग वध दहिनी बाँह ।
दी गँवाय सब भाँति मैं, कुलकालिम सकनाँह ॥ १ ॥
जिन सौंप्यो तुम भुजा धरि, ताहि कहों का जाय ।
तियहित खोयो बंधु प्रिय, ताहि सक्यो नहिं लाय ॥ २ ॥

गिरि कानन जैहैं कपि भालू । हुइहै कौन विभीषण हालू ॥
सकहु न मोको दुखित निहारी । अब किमि सोवत प्रेम बिसारी ॥
उतर देत नहिं काहे भाई । किहि बल धनुशर सजिहैं आई ॥
सुत तिय धाम धरणि कुल भारी । होत जात जग बारहिं बारी ॥

मात पिता सोदर प्रिय भाई। कहूँ नहीं जग देत दिखाई॥
नर चरित्र कृत श्रीभगवाना। सुनिकपिभालुबहुतदुखमाना॥
तब ऋछेश कह सुन हनुमाना। उठहु काज कछु करहु सुजाना॥
सुनि हनुमन्त जोरि युग पानी। बोले वाणि वीर रस सानी॥
लषण शोच प्रभु नेकु न कीजै। सेवक जानि रजायसु दीजै॥
कहो चन्द्रको जाय निचोरों। अमिय लाय लक्ष्मणमुख गेरों॥
कहु अश्विनीकुमारहि लावों। मृत्यु मार जग क्लेश मिटावों॥
कहो सूर्यके द्वारे जाई। तमसहित राहु देहुँ बैठाई॥

दोहा—कहु हरि हरको आनकर, अमर अमर बुलवाय।
जा पताल हति नागकुल, अमियकुंड दूँ लाय॥१॥
कहो देहुँ तजि देह निज, उठों लषणवर जाग।
जो आज्ञा प्रभु होय अब, करौं सहित अनुराग॥२॥
महावीरके वचन सुनि, सब जन भये सचेत।
बोले तब रघुनाथ इमि, कपिसों वचन सहेत॥३॥

तुम सब लायकहौ हनुमाना। तुरत लंकगढ़ करहु पयाना॥
वैद्य सुषेण रहै तिहिं लावो। अब मत यहि में बार लगावो॥
धारि लघु रूप गये हनुमाना। भवन समेत तुरत तिहि आना॥
तासु वचन सुनि लेन सजीवन। चलतभयेहनुमानमुदितमन॥
मगमें कालनेमिको मारा। साठ सहस खल गण संहारा॥
पहुँचे जब पर्वत ढिग जाई। लखि अर्थी गईं सकल छिपाई॥
तब कपि गिरिको लियो उठाई। दशमुखभट मारे बलदाई॥
छांडिशम्भुगण संग सुखदाई। अवध ओर चलिभे कपिराई॥

दोहा—देखि भरत मन असुर गुणि, बिनु फर मारो बान।
लगतागिरे महि पवनसुत, लूम रह्यो गिरिमान॥

मुखते राम राम उच्चारी। सुनत भरत भे व्याकुल भारी॥
दौर भरत तिहि हिये लगावा। जागत नहिं बहुभाँतिजगावा॥
तब कहि जो मैं रघुपतिदासा। तौ कपिके ह्वां शूल विनासा॥
सुनत वचन उठि बैठ कपीशा। कहिजयजयतिकोशलाधीशा॥
भरत शत्रुहन लखि भ्रमपाये। किमिघररामलषण फिर आये॥
पुनि सब जानि चरण शिरनावा। समरचरित संक्षेप सुनावा॥
सुनत भरत धिकअपन सुनायो। मैं प्रभु एको काज न आयो॥
कुसमय जानि धीर धरि भारी। बोले मम शर चढ गिरिधारी॥
देहुँ सपदि प्रभु ढिग पहुँचाई। सुनिकपिचढोलखनबलदाई॥
भरत उठायो सुमन समाना। लखि अस उतरपरे हनुमाना॥
शीश नाय कह तुमहिं प्रतापा। जैहौं बाण सरिसकरि दापा॥

दोहा-तब बोले इमि वच भरत, सुनि दुख पैहैं मात।
तातै चलि समझायकर, गमन करहु तुम तात॥

आय भवन सब कथा सुनाई। सुत घायल सुनि लक्ष्मणमाई॥
हर्ष शोकवश कहि मृदुवानी। ईश अधीन कर्म गति जानी॥
धन्य सुवन मम सबविधिआजू। जूझेउ समर स्वामिके काजू॥
पर मनमें आवत अकुलाई। कुसमय भये राम बिन भाई॥
पुनि रिपुहनते बोली वाणी। जाहु तात जहँ शारँगपाणी॥
नरतनुको फलसुत यहि जानो। मन वच कर्म रामरति मानो॥
सुनत उठे मन हर्षित भारी। तब कौशल्या गिरा उचारी॥
प्रथम भेंटकर कहियो जाई। कह्यो कठिन उरकरइमिमाई॥

दोहा-लक्ष्मणते लागत ललित, तुम जानहु यह राम।
बोले मारुतसुवन तब, धीर धरहु सुखधाम॥

लषण जानकी सह रघुवीरा । ऐहैं कुशल धरहु मनधीरा ॥
अस कहि गिरिले कीनपयाना । आये सपदि जहाँ भगवाना ॥
तुरत सुषेण कीन उपचारा । उठे लषणकहिजयसुखसारा ॥
कृपासिन्धु भ्रातहि हियलायो । मिटे सकल दुख हर्ष बढायो ॥
लखत भालु कपि सब हरषाने । विजय भई जनु अस मन माने ॥
भेंट सचिव सब बूझत बाता । बडदुखसह्यो आज तुम ताता ॥
कह लक्ष्मण नाहिं क्षतमोरेतन । पीर भई प्रभुके तन अरु मन ॥
सेनकरत जिमि काज अनेका । दुख सुख मानत भूप विवेका ॥
शुकमुख केवल पाठ बखाना । अर्थ पढावन हारन जाना ॥

दोहा-विमल वचन सुनि लषणके, भये मुदित सबबीर ।
जयति लषण जयराम कहि, जय जय जय रघुवीर ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ग्रंथरजागर लक्ष्मणहित राम-विरहवर्णनो नाम षड्विंशोऽध्यायः ॥ २६ ॥

दोहा-विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिरि राम सुखदान ।
वरणौं मानसकहन कछु, सार सार मत आन ॥

महाबीर पुनि गिरि ले सोई । धरि आये तहँ लखो न कोई ॥
होत प्रात कपि पुनि गढ घेरा । लंका खरभर भयो घनेरा ॥
मेघनाद पुनि रथ चढि धावा । बाण वृष्टि कपिदल बिचलावा ॥
दश दश बाण हने कपि सारे । जहँ तहँ मुरछि वीर सब डारे ॥
पुनि विधि करते दोनों भाई । नागफाँस बाँधे रिसिआई ॥
जीत पितासे आन सुनाई । सुनिदशमुखअतिशयसुखपाई ॥
कह्यो कि पुष्पक माहिं बिठाई । सीतहि समर दिखावहु जाई ॥
सीतहि त्रिजटा समर दिखावा । प्रभुबन्धनलखिअतिदुखपावा ॥
इत विधि गरुडहि तुरत पठाये । आये सकल पन्नगतिनखाये ॥

स्तुतिकरि निज लोक सिधाये। इहाँ विभीषण हनुमत आये ॥
शोधन लगे कटक तब सारा। जाम्बवन्त लखि वचन उचारा ॥
चेत अहै तनुकी कछु नाहीं। जाम्बवन्त बोले पुनि ताहीं ॥
नीके अहैं कहहु हनुमाना। सुनत विभीषण वचन बखाना ॥
राम लषण युवराज विहाई। कत बूझत हनुमत कुशलाई ॥
कह ऋछेस जिय जो हनुमाना। तौ जानो सबहींके प्राना ॥
अरु जो नहीं जगत हनुमाना। तौ सब जीवत मृतक समाना ॥
सुनि लंकेश परम सुख माना। चरणगहे तिहि क्षण हनुमाना ॥
कह्यो आय जो आयसु होई। माथे मान करहुँ मैं सोई ॥
अहै ऋछेश गिरि ऊपर जाई। लावहु चार ओषधी भाई ॥
इक विशल्य करनी है भाई। दूजी सांवरनी बुध गाई ॥
तीसरि संजीवनि कहवाई। चौथी संधानी बलदाई ॥

दोहा-सुनि मारुतसुत शीघ्रही, लाये ओषधि जाय।
पाय गंध ओषधिनकी, कटक उठो हर्षाय ॥

हरिदिन धूम्राक्ष चढिआयो। मारि बाण कपिदल बिचलायो ॥
द्वादशिदिन पवनज तिहि मारा। लरचोअकंपन करि रिस भारा ॥
तेरसदिन तिहि अंगद मारा। बहुरि प्रहस्त आय ललकारा ॥
बाण मार जर्जर बल कीना। तेरस किय वध नील प्रवीना ॥
तीन दिना पुनि भई लराई। पांचे दिन पुनि निशिचर राई ॥
नाना विधि करि बहुत उपाई। कुंभकर्णकहँ दियो जगाई ॥
जाग निशाचर भोजन कीन्हा। कहा काज पुनि कहबे कीन्हा ॥
कह रावण द्वै मनुज शरीरा। तिनकी तिया हरी रणधीरा ॥

दोहा-सेतु बाँध आये इत, मारे निशिचर भूरि।
मिला विभीषण जाय तिन, भेद कहत भरपूरि ॥

कपिन सहित तिनको कर भक्षण। मोहिं सुखी तुम करहु भ्रातजन॥
कुम्भकर्ण कह भल नहिं कीन्हा। कीन कुचाल पूछ नहिं लीन्हा॥
इक दिन थोरी बात जनाई। सिय चोरी नहिं प्रगट बताई॥
त्रिभुवनपतिसों वैर बढावा। पुनि सुख चाहत मति भ्रम पावा॥
ताते त्यागिदेहु कुटिलाई। दे सिय मिलो रामसों जाई॥
तौ सब विधि सुख पावहु भाई। सुनि रावण बोला दुखपाई॥
कि तो जाय तुम करो लराई। अथवा सोय रहो पुनि भाई॥
नाहित कीन विभीषण जैसे। करहु जाय तुमहूँ अब तैसे॥
मैं निज बल यह कीन विरोधा। देखहुँ प्रबल रामकर क्रोधा॥

दोहा–कुम्भकर्ण यह वचन सुनि, ताहि कालवश जान।
चले समर हित पान कर, प्रभुदर्शन मन आन॥

अनुजे भेंट मिलो हर्षाई। तब रावण बहु सुरापिलाई॥
करि मदपान चला रणधीरा। कहां लषण कहँ श्रीरघुवीरा॥
लखि तिहि खेचर चले पराई। आगे मिलो विभीषण आई॥
चरण नाय शिर नाम सुनावा। ज्ञान देइ प्रभुपास पठावा॥
समाचार तिन जाय बखाना। कुंभकर्ण आवत भगवाना॥
रावण बंधु अहै बल भारी। गिनत नहीं काहुहि देवारी॥
जा अकाश खेचर संहारै। धस पताल सर्पन फन फारै॥
जो षट्मास न सोवत येही। विनहीं प्रलय प्रलय करदेही॥
पर प्रभुके सन्मुख हैराई। सुनि कपि भालु चले हर्षाई॥

दोहा–गिरि तरु विविध उपारके, तिहिपर दीने डार।
सुमन सरिस तिन जानसो, धावा वदन पसार॥

बहुतक पकर गये दबाई। बहुतनको मुख धारि धारि खाई॥
बहुतक श्रवण नासिकामाहीं। निकसिनिकसिकपिभालुपराहीं॥

कोटिन कपि प्रभुपाछे जाहीं। त्राहि त्राहि कहिके गुहराहीं॥
कोइ अंगद हनुमान पुकारैं। कोइ छिपत सागर तन डारैं॥
इहिविधि करतभालुकपिघाता। सन्मुख कही रामसों बाता॥
अहौं ताडका नहीं सुबाहू। नहिं मारीच न खरकपि नाहू॥
मैं देवन रिपु सब जग जाना। कुम्भकर्ण जगविदित बखाना॥
जिहि बल होय सु सन्मुखआई। युद्ध देहि तजिकै कदराई॥

दोहा-सुनत वचन सुग्रीव तब, कीनो चरण प्रहार।
कुम्भकर्ण तिहि काँख धरि, चलो हर्ष हियधार॥

तब वानर गण कीन्हा मारी। निकरि गये कपिराज सँभारी॥
श्रवण नासिका काट सिधाये। कहि जय जयति रामपहँ आये॥
चलारुधिरतिहि जब असजाना। फिरातुरतकरिकोपमहाना॥
महावीर तब ताहि पछारा। उठिपुनि तिहि तब कीनप्रहारा॥
इहि विधि भालु कीश बध कीना। तब प्रभु धनुषबाणकरलीना॥
बहु सायक मारे तनु माहीं। पर्वतमें जिमि सर्प समाहीं॥
मुखपसार कर गिरि ले धावा। लखिप्रभुगिरिभुजकाटिखसावा
वामबाहु धरि पुनि सोइ आवा। सोउ बाहु प्रभु काटि गिरावा॥
बिनु भुज धावा वदन पसारी। लखि प्रभु तीक्षण बाणसँचारी॥
शीश काट तिहि लंक गिरावा। रुंड प्रचण्ड कियो पुनिधावा॥

दोहा-प्रभु ताके युग खण्डकर, दिये धरणिपर डारि।
मुदित देव वर्षत सुमन, जय जय कहत पुकारि॥

रावण लखि मानो दुख भारी। भयो कान्ति बिन तब विबुधारी॥
आय महोदर पुनि रण ठाना। कीनो ताको वध हनुमाना॥
फाल्गुन कृष्णा परिवा आई। नारांतकने कीन चढाई॥
बहुत भाँति तिहिने रण ठाना। फणिदिनमरचोसकलजगजाना

तब अतिकाय कियो रणभारी। आठें दिवस मरो विबुधारी ॥
कुम्भकर्णके पुत्र सयाने। कुम्भ निकुंभ आय विरुझाने ॥
पाँच दिना किय युद्ध अपारा। तेरस दिवस भयो संहारा ॥
तब खरसुत मकराक्ष सयाना। आय लषणसन संगरठाना ॥
अस्त्र शस्त्र बहु लषण चलाये। मरो न भालु कीश घबराये ॥

दोहा-लीलनहित तब लषणको, धावा वदन पसार।
सुमरि राम तब लषणने, कियो तासु संहार ॥

फागुन शुक्ल प्रथम दिनमाहीं। रावण शोच भरयो सुखनाहीं ॥
मेघनाद निज पितु समझावा। मोहिं अछत कसक्षोभबढावा ॥
देखहु आज मोर बल भारी। करहुँ प्राणविनअरिबलसारी ॥
अस कहि चढयोदिव्यरथमाहीं। अन्तरहित कोइ देखत नाहीं ॥
क्षणमें सेन निकट सो जाई। गर्जा प्रलय समान हँसाई ॥
अस्त्र शस्त्र पुनि किये प्रहारा। भादौं मघा मेघ जस धारा ॥
गहिगिरितरुअकाशकपिधावहिं। मिलैनकोउदुखितफिरि आवहिं।
व्याकुल हो कपि सेन परानी। मारग मिलतनअतिभयमानी ॥

दोहा-हनूमान नल नील अरु, अंगद सहित कपीश।
दुर्धर सहित विभीषण, व्याकुल किये अहीश ॥

पुनि जहँ राम गयो घननादा। करि अतिसमर कहत दुर्वादा ॥
नागपाशवश किये खरारी। स्ववश अनन्त एक अविकारी ॥
जासु नाम भवपाश नशाई। ताहि कि ऐसी सोह लराई ॥
लीलाहित चरित्र अस करहीं। अस विचार बुध मोह नपरहीं ॥
इहिविधि सबहिबाँधि विबुधारी। होय प्रगट पुनि गिरा उचारी ॥
उठे ऋक्षपति करि रिसभारी। लखिखलतीव्रशक्तितकिमारी ॥
जाम्बवन्त सोइ करगहिलीन्हीं। मारिअसुरहियजयधुनिकीन्हीं ॥

चरण पकरि पुनि ताहि फिरावा। फेंक दियो गढ़ लंक गिरावा ॥
इत खगराज वेग सों आई। बंधन काट गये हरषाई ॥
कृपादृष्टि रघुनाथ निहारे। भये प्रबल कपि वीर प्रचारे ॥
दोहा—गहि गहि गिरि पादप चले, दिय निशिचर विचलाय।
मेघनाद इत जाग कर, हिये लाज अतिपाय ॥
करन अजय मख तुरतसिधावा। जानिविभीषणवचनसुनावा ॥
गयो निकुम्भिल थल घननादा। करतअजयमखमनअहलादा ॥
सो प्रभु जबतक सिद्ध न होई। विघ्न करै इतने जा कोई ॥
जो कहुँ सिद्ध होय मख सोई। नाथवेगि फिर जीत न होई ॥
प्रभु लक्ष्मणते बोले बानी। जाहु वेग मख कीजै हानी ॥
सुनिलक्ष्मणसजिबाणशरासन। हनुमदादिसह चलेमुदितमन ॥
जाय कपिन जब असुर निहारा। तबहीं यज्ञ ध्वंस करिडारा ॥
उठो असुर करि रोष अपारा। धनुष बाण कर लियेकरारा ॥
जाम्बवन्त के दो शर मारे। तीन विशिख युवराज प्रहारे ॥
पांच बाण वेधा हनुमाना। चारि विभीषण के तनु बाना ॥
दोहा—एक एक सब कपिन तनु, कीनो बाण प्रहार।
पुनि लक्ष्मण सन्मुख समर, लागो करन अपार ॥
लक्ष्मण तिहि शरकीननिवारन। छाँडे अपने बाण हजारन ॥
आवत बाण लोप हुइ गयऊ। शूल लषणपर छाँडत भयऊ ॥
लक्ष्मण तासु खंड शत कीन्हें। तब तिहिशिलागहरुकरलीन्हें ॥
लक्ष्मण तेइ रजसमकरिडारी। अस्त्र शस्त्र पुनि हने प्रचारी ॥
द्वादश दिन यहि भाँति विताये। सुरमुनियुद्धनिरखिअकुलाये ॥
तब लक्ष्मणप्रभु सुमिरणकीन्हा। तीव्र बाण धनुपर धरि लीन्हा ॥
छाँडहु सो करि कोप विशाला। शिर भुज काट दियेतत्काला ॥

गर्जेउ प्रलय पयोद समाना। राम लषणकहि छाँडिसिप्राना॥
तेरस दिवस मर्यो विबुधारी। धन्य मातु कपि गिरा उचारी॥
दहिनी भुजा गई तिहि गेहा। शिर ले लषण चले प्रभुनेहा॥

दोहा–देखि राम अति मुदित हो, अनुज लिये हियलाय।
कर परसे तनु निरुज किय, देव सुमन वर्षाय॥

कृपादृष्टि कपि भालु निहारे। भये विगतश्रम सबहि सुखारे॥
बैठि थलन कीन्हों विश्रामा। गइ भुज मेघनादके धामा॥
भइ अति दुखित असुरकी नारी। पतिभुज लखि मनभ्रम भोभारी॥
बारह वर्ष नींद अरु नारी। त्याग सकै सो मम पति मारी॥
संशय जानि खरी कर दीनी। लक्ष्मण कीरति लिखी नवीनी॥
कोटि कल्प जो साधै योगा। सो न लषण सम पावहि भोगा॥
सुनत सखिन सह रोवत रानी। आज मुयो दशमुख यह जानी॥
कीश फिरहिं लंकागढ माहीं। देवबंदिसे अब छुट जाहीं॥
कोउ जय लहै अपन का कामा। मैं अब जाउँ शीघ्र पतिधामा॥
अस कहि भुज सुखपाल धराई। आपहु चढ़ि रावण पहँ आई॥

दोहा–सास ससुर पग शीश धरि, कथा कही सब रोय।
जो पाऊं पतिमाथ तो, जरउँ संग सुख होय॥

मयतनयादिक सुन यह वानी। रोदन करन लगीं दुख मानी॥
दशमुख गिरो मूर्छा खाई। पुनि उठि तिहि बहुबिधि समुझाई॥
समुझि शोक मत करहु सयानी। मर्त्यलोक यहि नाम बखानी॥
माता भूमि बीज पितु होई। काल किसान जीव तृण सोई॥
पालत पुनि काटत है सोई। किहि किहि हितु रोवैं बुधि खोई॥
रहा न कोई नाहिं रहाई। अपने साथ कछू नहिं जाई॥
धन्य भाग्य निशिचर हैं सारे। प्रभुके हाथ गये जे मारे॥

पर मैं नहिं उन तुच्छसमाना । देखहु काल मोर परमाना ॥
देहुँ सकल कपि मान मिटाई । कपिपति नील विभीषण भाई ॥
पवनज राम लषणकर माथा । सौंपिदेहुँ मैं तेरे हाथा ॥
नहीं सुलोचन उत्तर दीन्हा । मयतनयातिहिसिखवनकीन्हा ॥

दोहा-कहि राखी नारद सकल, वधूत्याग संदेह ।
जाहु रामपहँ लाय शिर, सफल करहु निज नेह ॥

सदा धर्मरत राम नरेशा । तहँ सन्देह न कर लवलेशा ॥
श्वशुर विभीषण है तहँ तोरा । वालितनय बालक सम मोरा ॥
ब्रह्मचर्यरत नित हनुमाना । तहां न शंक जाहु चढ़ि याना ॥
सुनत चली कपिदल सो आई । लखि कपि भालु उठे हरषाई ॥
दशमुख सीतहि दीन पठाई । तजहु शोच अब गई लराई ॥
सो चलि जब रघुवर ढिग आई । कीन्ह दण्डवत विनय सुनाई ॥
तासु चरित सब कह्यो विभीषण । बोले तब रघुवंश विभूषण ॥
जो भावै वर लेहु सयानी । कहो जिवाय देहु पति आनी ॥
करहु कल्प भरि राज्य सुखारी । प्रभु जब ऐसी गिरा उचारी ॥
सुर नर मुनि भय पाय डराने । बहुरि सुलोचन वचन बखाने ॥
कृपासिंधु मैं कीन विचारा । इहि मरनेते जियब असारा ॥
अमृत बदले विष जो लेई । नाहिन बुध समाज तिहि सेई ॥
ताते पतिशिर देहु मँगाई । तुरत मँगाय दीन रघुराई ॥
मस्तकले पुनि ताहि हँसाई । चली सिंधुतट चिताबनाई ॥

दोहा-देत अग्नि ज्वाला बढी, पहुँच गई पति धाम ।
हिये सुमिरि भगवानको, लह्यो अमित विश्राम ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ग्रंथउजागर मेघनादवध-
सुलोचनासतीवर्णनोनाम सप्तविंशोऽध्यायः ॥ २७ ॥

दोहा–विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिरि राम सुखदान ।
वरणों मानस मत कछुक, सार कथा गुणखान ॥
तिहि दिन भयो नहीं संग्रामा । शोच रह्यो दशमुखके धामा ॥
तब अहिरावणकी सुधि आई । आकर्षण जप निशिचरराई ॥
दण्ड चारमें सो चलिआवा । रावण निज वृत्तान्त सुनावा ॥
सकल सेन कपि भालु सँहारी । अब हमको इक आश तिहारी ॥
सुनि अहिरावण वचन उचारा । लेजैहों दोउ भूपकुमारा ॥
देहौं बलि पतालमें जाई । सिद्ध होय नभज्योति लखाई ॥
असकहि धारि विभीषणरूपा । गयोजहां दोउ कुमर अनूपा ॥
सोवतही ले गगन उड़ाना । भोप्रकाश दशमुख हर्षाना ॥
इहि विधि सो लेगयो पताला । प्रभुबिन भा इत कटकविहाला ॥
तब अस कही विभीषण बाता । अहिरावण लैगा जनत्राता ॥
रहत पताल कोइ तहँ जावै । प्रभुहि लाय सबसेन बचावै ॥
कह हनुमान तजहु सब शोका । लावहुँ खोज प्रभुहिं त्रैलोका ॥
चले तुरत खगते सुधिपाई । अरिपुर क्षणमें पहुँचे जाई ॥
दोहा–द्वारपाल मकरध्वजहि, तासु लूमते बाधि ।
लघुबन देवीमठ गये, बैठगये चुप साधि ॥
तुरत शक्ति तिनको थल दीना । अन्तर्हित पुनि भई प्रवीना ॥
मुख पसारि ठाढे हनुमाना । प्रगटी शिवा दनुज हर्षाना ॥
नाना विधि पकवान मिठाई । हनुमतके मुख गई समाई ॥
प्रगट भई सब कहै भवानी । धन्यभाग्यनिशिचर कुलमानी ॥
बाजहिं बाजन विविध सुहाये । पुनि बलिहित दोउ भाइ बुलाये ॥
प्रभुते शठ अस वचन सुनाये । सुमिरहु जो तुम होहिं सहाये ॥
कह प्रभु तुम निज सुमिरहु रक्षक । भई तुम्हारि देवि तुम भक्षक ॥

सुनि सब मारन हित भे ठाढे । घन समान गर्जें कपिगाढे ॥
तब निशिचर अस बोले वानी । नर लखि क्रोधित भई भवानी ॥
तव कपि आपन देह बढाई । कन्ध चढाय लिये दोउ भाई ॥
निजहि लूमकर कोट बनावा । असिलेखलदलसकलनशावा ॥
अहिरावण शिरकाट खसावा । अग्निकुंडमें ताहि गिरावा ॥
इहि विधि सकल सेन संहारी । प्रभुहि लिये आये पुनि द्वारी ॥
विनय बहुत मकरध्वज ठानी । राज्य देइ तिहि कीन पयानी ॥
इहिविधि ले निज सेनहि आये ।प्रभुहिनिरखिसबअतिसुखपाये॥
सबने कपिकी कीन बडाई । महाबीर सुनि रहे लजाई ॥
तुम प्रभु जाकहँ देउ बड़ाई । तासु काज सबविधि बनजाई ॥

दोहा-इत दशमुख सुनि दूतमुख, अहिरावणकर घात ।
एकदिना निज सेनले, चढा समर सरसात ॥

विविधभाँति बाजे तहँ बाजैं । हय गज मत्त भयंकर गाजैं ॥
अशकुन अमित होहिं भयकारी। गनहिंनमृत्यु विवशखलझारी ॥
बाण बूँद सम शरकी वर्षा । अस्त्र शस्त्र छाँडहिं करि कर्षा ॥
छायो अंधकार चहुँ घाहीं । विद्युत सम तरवारि लखाहीं ॥
गिरहिं सुभट मंदिर सम भारी । शोणित सरिता चली अपारी ॥
भुजासर्प कच्छप सम ढाला । कुंजर घोडे ग्राह कराला ॥
फिरत चक्र आवर्त्त समाना । उछरहिंशीशसूसिढिगनाना ॥
भूषणभेक उपल जनु धूरी ।धनुष तरंग फेन पट रूरी ॥
कर पद मीन सुकेश सिवारा । दोउ दल कूल विटप रथभारा ॥
योधा बहैं चढे खग ऊपर । जनु नावरि खेलहिं नरसरिवर ॥
खैंचहि आँत गृद्ध गणतीरा । जिमि वंशी खेलहिं करिकीरा ॥

प्रेत पिशाच भूत अरु योगिनि। मज्जहिं मुदित होयसुखसंगिनि॥
हर्षहिं वीर डरावहिं कादर। ठहर सकैं नहिं समर भयंकर॥

दोहा–कोप कीन हनुमान तब, मर्दन लागे सैन।
गजपर गज हय हयन पर, डारत मान न चैन॥

कोटिन पैदल मार गिराये। कोटिन पटकि सिंधुमें नाये॥
बहुतक कर पद बिनु कर दीने। कोटिन गगन फेंक बिनजीने॥
हँसि प्रभु कहत लषणसे बाता। देखहु लरनि पवनसुत भ्राता॥
निज दल व्याकुल देख सुरारी। बीसहु भुज धनुसायक धारी॥
धावा सब सेना बिचलाई। व्याकुलहो कपि चले पराई॥
अंगद हनूमान दोउ योधा। गिरि तरु ले धाये करि क्रोधा॥
ताहि अंगलगि गिरि सब फूटहिं। करिकरिक्रोधकीशगणटूटहिं॥
रावण बहु कीशन संहारा। विकलपुकारहिं कृपाअगारा॥
लक्ष्मण तुरत लियो धनु हाथा। ललकारे जहँ हो दशमाथा॥

दोहा–होउ सजग दशभाल अब, मैं आयों तव काल।
रावण छांडे अस्त्र बहु, काटे लषण कराल॥

पुनि निजबाण लषण संचारे। सूत मार रथ तिलसम डारे॥
शत शत शर दशशीशन मारे। छूटन लागे रुधिर पनारे॥
बीसहु भुज छेदीं शत बाना। हियमें हने बाण बलवाना॥
तब कर क्रोध निशाचर धाई। विधिकी सांग कराल उठाई॥
आय लषणके उर सो मारी। लषण गिरे जय राम पुकारी॥
तब रावण तिन रहा उठाई। उठे न दशमुख रहा खिसाई॥
रज सम जिहिशिरसबजगभारा। तिहि किमिसकैउठायलबारा॥
देखि पवन सुत मुष्टिक मारा। परेउ भूमि नहिं रह्यो सँभारा॥

दोहा–लषणहि लियो उठाय कपि, लाये जहँ भगवान।
लखि दशमुख अचरज भयो, महाबली हनुमान॥

लखिप्रभुअनुजाहिवचनबखाना। तुम कृतान्तभक्षकजगजाना ॥
सुनत उठे धनु शर गहि धाये। रथमें खलहि अचेत कराये ॥
लखि इमि विकल सूत लेभागा। अर्ध निशामें रावण जागा ॥
निज सारथिसे बोला वानी। धिक धिक तव कर्तब अज्ञानी॥
अस कहि दशमी दिवसप्रभाता। करनलाग अजमख विख्याता ॥
कह्यो विभीषण जब सब हाला। तब बोले इमि वचन कृपाला ॥
अंगद हनुमदादि कपि जाहीं। तासु यज्ञ विध्वंस कराहीं ॥
गे कपि मख विडरावनलागे। लातन हन हन तिहिपथ पागे ॥
उठो न सो कपि कीन विहाला। दिये छोर रथ हय गय शाला ॥
पट वितान डारे बहु फारी। दुखी करी रावणकी नारी ॥
वानरगण लखि जहँ तहँ भागीं। हाहाकार करन सब लागीं ॥
अंगद घेरे नाच नचावहिं। जहां छिपें सुर सुता बतावहिं ॥
असुरनिकट रानी कपि लाये। भूषण वसन सकल छिटकाये ॥
पतिसों आरत वचन सुनावा। तैं जस कियो सु तस फल पावा॥
सीतहि दुख दीनो तुम भारी। तैसिय देखहु दशा हमारी ॥
नारिवचन सुनि उठो निशाचर। कपि सब गये जहां सीतावर ॥
तब दशमुख जिय आश विहाई। लीन संग सबही कटकाई ॥
रणमदमत्त होय सो धावा। इत देवन अस वचन सुनावा ॥
वेग हतहु प्रभु इक खल एही। अतिशय दुखित होति वैदेही ॥
सुनिप्रभु कटिनिषंगकसबाँधा। करतलचापकठिनशरसाधा ॥

दोहा-इत प्रभुहेत सुरेशने, निज रथ दियो पठाय।
हरिदिन प्रभु तापर चढे, विप्र चरण शिर नाय ॥

लखि सब कपि सुख पावा भारी।उत हियकिय अति कोप सुरारी॥
कहत कठोर वचन अति भारी। लागो करन बाणकी मारी ॥

लखि वानर गण चले पराई । अग्निबाण छाँडे रघुराई ॥
दशमुख बाण किये संहारा । रथ सारथी तोर महिडारा ॥
दूजे रथ चढि सो खिसियाना । प्रभुसे लरन लगो विधि नाना ॥
कट कट गिरहिं वीर पुनि लरहीं । मारहिं कोटिभाँति बल करहीं ॥
बहुतक रुंड मुंड बिन डोलहिं । शीश परे महि दारुण बोलहिं ॥
धरु धरु मारु मारु गुहरावहिं । सुनिसुनि कादरजन भय पावहिं
चंचल कीश भालु बहु धावहिं । पकरिपकरिनिशिचरनगिरावहिं
उदर विदारहिं आँत निकारें । बहुतक मरदि गरद करि डारें ॥
लखि निज सेन घात दशभाला । चल्यो रामढिग क्रोध विशाला ॥
रथपर रिस करि बाणचलाये । तुरँग चारि भूमाहिं गिराये ॥
तुरँग उठाय राम गहिबाना । अतिरिसधनुश्रवणलगिताना ॥
छाँडेउ बाण लगा दश भाले । ले शिर चले यथा शिर माले ॥
तुरतहि तिहि शिर जमे नवीने । प्रभु काटे पुनि भये विहीने ॥
इहि विधि बहुत वार शिर काटे । ते दिशि विदिशि सिंधु महिपाटे ॥
तब दशमुख शठ साँग चलाई । लगी शिथिल कछु भे रघुराई ॥
प्रभु श्रम जान विभीषण धायो । गदाप्रहार कियो मन भायो ॥
लागत गिरिसम गिरो निशाचर । उठाझपटिमुखरुधिरवमनकर ॥

छन्द—उठि चल्यो रिसकर अस्त्रशस्त्रहि बहुतभाँति चलावहीं ।
लखि श्रम विभीषण सुअन मारुतभिरे दावनपावहीं ॥
लखि युद्ध अद्भुत कहत जय जय पुष्प सुर वर्षावहीं ।
कपि भालु गिरितरुलेइ निशिचर मारिदेपुनिधावहीं ॥
तब रूपधर बहु वन निशाचर भालु कपिव्याकुलकरे ।
जित तित धावत उतहि खावहिं जाहिंकहँ सबभटसुरे ॥
देवता डरि धाम चलि भे शम्भु अज ऋषि मुनि अरे ॥
तब राम एकहि बाण त्यागो सकल दशकन्धर हरे ॥

दोहा-रावण एक विलोकि तब धाये वानर कीश।
रावणके शिर बाहु पुनि, हते कौशलाधीश॥

सात दिवस तक दिन अरु रांता। धनु घंटा बाजो विख्याता॥
इहि विधि असुर भये संहारा। जिमि कटजात खेतकरवारा॥
घंटाकी सुनिये परमाना। नाग अयुत दश लक्षहयाना॥
रथी डेढ शत त्यागहिं प्राना। पैदर दश करोड नशिजाना॥
तब रण एक कबन्ध उठाई। कोटि उठे इक खेचरधाई॥
खेचर कोटि बिना शिर नाचैं। तब प्रभु धनुघंटा झकराचैं॥

श्लोकाः-नागानामयुतं तुरंगनियुतं सार्द्धं रथानां शतं
पत्तीनां दश कोटि तन्नियतमे नृत्यत्कबंधोरेणे।
एवं कोटिकबन्धनर्तनविधौ नृत्येत्तथा खेचरः
तेषां कोटिकनर्तने रघुपतेःकोदण्डघण्टारवः॥ १॥
एवं सप्त दिनं ख्यातं स्वर्गे मर्त्ये रसातले।
याता भूरि भटा नाशं रामरावणसंयुगे॥ २॥

दशमुख अपन अकेल निहारा। तब माया कौतुक विस्तारा॥
भूत प्रेत वैताल पिशाचा। प्रगट भये बहु नाचहिं नाचा॥
लीन्हें हाथ सकल धनुबाना। मारु मारु धरकरहिंबखाना॥
बोलहिं करहिं रुधिर सब पाना। आय योगिनी नाचहिं नाना॥
मुख पसार धावहिं चहुँओरा। कपिदलमाहिं उठो अतिशोरा॥
अग्नि बालु वर्षा भइ भारी। भई थकित कपिसेना सारी॥
त्राहि त्राहि कपि कीन उचारी। तब लीन्हों धनु बाण खरारी॥
एकहि बाण हरी सब माया। जिमिदिनकरहरतिमिरनिकाया
लखि धाये वानर करि हूहा। दिये डारि तिहिपर गिरिजूहा॥
पुनि खल भालुकीश उपजाये। गिरि तरुले वनरन पर धाये॥

मर्कट भये असुरकी ओरा। भयो कीशदलमें अति शोरा॥
भयो भेद यह कौने कारण। अबकिमि कुशलहोय जगतारण
आपन पर किछु सूझत नाहीं। भागचले कपि भयमन माहीं॥
प्रभु सोउ माया काट निवारी। बहुरि करी माया त्रिपुधारी॥
प्रगटे बहुत लषण हनुमाना। लखि कपि भालुरहे थकि नाना॥
एकहि एक सकै नहिं मारी। लखिदेवन मानो भय भारी॥
तब प्रभु कीन्ह धनुष संधाना। क्षणमें माया कपट नशाना॥
रिपु शिर प्रभु काटे बहुबारा। बाण विधे बोलत हुंकारा॥
राम और रावण जय वानी। नभ जल थल सर्वत्र समानी॥
सुर नर नाग सर्व अकुलाहीं। जात जहां तितही भय पाहीं॥
मारु मारु शिर कहहिं उचारी। सुन कादर भय पावत भारी॥

दोहा–इहिविधि अष्टादश दिवस, भयो महा संग्राम।
इतने आये घटज मुनि, लखिप्रभु कियो प्रणाम॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ग्रंथउजागर रामरावण समरवर्णनोनामाष्टाविंशोऽध्यायः॥ २८॥

दोहा–विधिहरि हर गणपति गिरा, सुमिरि राम सुखदान।
सार रामायण कहौं कछु, विजय करण मुदखान॥

बोले प्रभु सुनिये मुनिराई। बहुत दिवस हम कीन लराई॥
जिहिविधि शत्रु निधन अब होई। करिकै कृपा कहो मुनि सोई॥
कहमुनि तवकुलगुरु सुखदायक। रघुनायक जानो दिनदायक॥
तिनकी अस्तुति करहु सँभारी। कवच देहुँ सुनिये अघहारी॥
प्रीति सहित तुम याहि उचारो। होय सबल निशिचर संहारो॥

छन्द–जय मार्तण्ड प्रचण्ड तम हर नमो अघ दुख नाशनम्।
पातु प्राची भानु दक्षिण वेद अंग प्रकाशनम्॥

तापेन्द्र पातु प्रतीच रवि नित रक्ष मोहिं उदीचनम् ।
ईशान रक्षहु रश्मिगर्भा सकल संकट मोचनम् ॥
पातु संयम दिशा अग्नि हिरण्यरेत निऋत्यमें ।
देवार्क वायव पातु नितही नमो जाग्रत सत्यमें ॥
मित्र मूर्द्धा धिष्णु वर्द्धन अरुण रूप नमामिहम् ।
सर्वांग रक्षहु सूर्य तोषं प्रेम भाव भजामिहम् ॥
जन्म व्याधी जरा मृत्यू नाशकर्त्ता जानहीं ।
धर्म मुक्ती कामदाता अर्थके सब मानहीं ॥
दोष दारिद दुःख हारी विश्ववासी सकल मय ।
विश्व चक्षू विश्व रूपी ज्ञानदाता हरत भय ॥
विज्ञान रूप अनूप लोकप आदि मध्यम अन्तमें ।
रहत एकहि रूप प्रभु तुम तीव्र तेजा जक्तमें ॥
अर्क अरु इक चक्र कर रथ दिव्य गति कालात्मकं ।
कारुण्य स्वामी काल ज्ञाता कन्द नौमि सुखात्मकं ॥
नित निर्विलोक विशाल निर्मल रत्न भूषण भूषितम् ।
स्वर्ण आभा व्योम वासी सज्जनानंद तोषितम् ॥
अव्यक्त सूक्ष्म प्रगल्भ वेगिन् ईश ब्रह्म बलिष्ठहो ।
नित ब्रह्म विद्या विभवरूपी त्रैगुण्यमाहिं प्रतिष्ठहो ॥
त्रैमूर्त्ति अरु त्रयकाल नित्य निरीहतुरियनिरालहो ।
सुर असुर सेवहिं जगनियन्ताजगतमाहिंविशाल ॥
कृपा कीजे शत्रु जीतों विनय प्रभु चित दीजिये ।
मिश्रके दुख दोष अघ हर विश्व मम वश कीजिये ॥
पढहिं अनुदिन जपहिं जो मध्याह्न ध्यानलगावहीं ।
सब दोष दुःख विहाय अपने मनोवांछित पावहीं ॥

दोहा-इहि विधि प्रभु विनती करी, पुनि शर गहे कराल।
छाँड़े सो करि रोष अति, भयो विकल दशभाल॥
इक शर नाभिअमियसर लागा। शोषतही खल भयो अभागा॥
शिर भुज माहिं लगे पुनि बाना। लिये काट शिरभुजबिलगाना॥
दश दिश माहिं गये शिर सारे। धायो रुण्ड बाण प्रभु मारे॥
कहाँ राम मारौं रणमाहीं। इमि रावणके शिर गुहराहीं॥
तब प्रभु तीव्रबाण कर लीन्हें। युगल खण्ड रुंडहुके कीन्हें॥
गिरो भूमि तब रुंड महाना। तासु तेज प्रभु वदन समाना॥
तब देवन दुंदुभी बजाई। जयजय धुनि चहुँओर सुनाई॥
जय जय कोशलराज किशोरा। जय जयकार भयोचहुँओरा॥
वानरगण चहुँओर विराजत। तिनके मध्य रामप्रभु राजत॥
छन्द-रघुराज मध्य विराज शोभाधाम तनु शोणितकनी।
जनु रायमुनिय तमाल माहीं अतुलछबिशोभाबनी॥
कर शर शरासन जटा मंडित मुकुटकीआभा घनी।
राजीव लोचन कृपादृष्टी देखही कपिदल अनी॥
दोहा-यह छबि अजहूं जासु उर, बसहि सदा सुखदान।
मोह शोक भ्रम दूरहों, करहिं कृपा भगवान॥
पतिगति लखि मन्दोदरिरानी। आई तहां अधिक बिलखानी॥
तनु सुधि भूल रुदन करभारी। कहन लगी गुण बल अनुसारी॥
निजभुजबलसबजगवश कीन्हें। लेले दंड त्याग सुर दीन्हे॥
सो वपु आज गृध्र आहारा। राम विमुख भू पर्यो पछारा॥
कीन्हें स्वामि पाप अधिकाई। तदपि सुगति दीन्ही रघुराई॥
तिन समसुखदायक को आना। दीन्ह तुम्हें निजलोकसुजाना॥
सुन मन्दोदरि वचन विभीषन। भ्रातहिलखिअतिदुखमानोमन

प्रभु प्रेरित लक्ष्मण तब आये। बहुत भाँति तिनको समुझाये॥
कीन्हीं क्रिया शास्त्र अनुसारी। द्वितिया दिन गे जहां खरारी॥
तब रघुपति लक्ष्मणहिं बुलावा। अंगद हनुमंतहि समुझावा॥
तुम सब वीर नगर पगुधारो। तिलक विभीषणको अनुसारो॥
आज्ञा पाय चले सब वीरा। कियो विभीषणतिलकसुधीरा॥

दोहा-विविधभाँति बाजन बजे, कीन्हें मंगल गान।
पुनि सब संग विभीषण, आये जहँ भगवान॥

प्रभु हनुमन्तहि कह्यो बुझाई। जनकसुतहि अब लावहुजाई॥
सुनत विभीषण अरु हनुमाना। गये निकट सियवचनबखाना॥
मातु कुशल प्रभुकही तुम्हारी। जीत्यो असुर समर कर भारी॥
जिन तमचारिन तुम्हेंदुखदीन्हा। इनकर वध हम चाहतकीन्हा॥
सीता कह जो आश्रित होई। ताको वध नहिं चाहत कोई॥
ऋच्छ मनुजकी कथा बखानी। कर्म अधीन दुःख सुख जानी॥
तब लंकेश नारि बुलवाई। तिन्ह सीतहि विधिवतअन्हवाई
करि शृँगार सब भाँति सजाई। सुभग पालकी सीय चढ़ाई॥
आदरसे प्रभुके ढिग लाये। देखनको वानरगण धाये॥
पावक ते सिय प्रगटन हेता। कटुक वचन कह कृपानिकेता॥
सुनि सिय लषणहिं कह्योबुझाई। सर रचि पावक देहु लगाई॥
पावक लखि सिय वचन उचारा। प्रभु बिननहिं मनअनत हमारा॥
तौ पावक चन्दन सम होई।कहिअस प्रविशिलखा सबकोई॥
तुरत अग्नि धरि विप्र शरीरा। सिय लेचले जहाँ रघुवीरा॥
कह्यो शुद्ध सबविधि सियताता। आसन बाम दियो सुरत्राता॥

दोहा-लषण जानकी सहित इमि, शोभित कृपानिधान।
देखि भालु कपि सुखित अति, पुष्पवृष्टि सुर थान॥

तिहि अवसर दशरथ तहँ आये। देखतही प्रभु शीश नवाये॥
तव प्रसाद पितु अरि संहारा। असकहिज्ञानदियोसुखसारा॥
तब दशरथ सुरलोक सिधारे। चतुरानन आ सूक्त उचारे॥
भक्तिमाँगि पुनि सोउ सिधाये। त्यहिं अवसर शंकर तब आये॥
अस्तुतिकर वर पाय सिधारे। तव सुरेश वर बैन उचारे॥
जो आयसु हमको प्रभु होई। माथे मान करैं हम सोई॥
सुनि प्रभु कह्यो अमिय वर्षाई। तात देहु कपि भालु जिआई॥
सुनि सुरपति अमृतवर्षाई। दीने सब कपि भालु जिवाई॥
लंकापति तव वचन उचारा। प्रभु वैभव हो अंगीकारा॥
कह प्रभु कोश राज सब मोरा। करहु राज इक मोर निहोरा॥

दोहा–करहु कल्प भर राज तुम, जरा मृत्यु भय त्याग।
पुनि मम धाम सिधारहु, जहाँ सन्त बड भाग॥

अबसुहिं भरत भ्रात सुधिआवत। एक पलक सम वर्ष बितावत॥
अवधि बिता जो निज घर जैहौं। तौ निज भाइ जियत नहिं पैहौं॥
ताते सो कछु करो विचारी। देखौं वेग भरत सुख भारी॥
सुनत विभीषण भवन सिधाये। पुष्पकयानहिं मणिभर लाये॥
मणिभूषणलखि प्रभु हँसकहहीं। वानर गण क्रमसे किमि लहहीं॥
ताते तुम नभ ऊपर जाई। वर्षि देहु मणि भूषण भाई॥
सुनि नभ जाय सकल वर्षाये। पहरि पहरि कपि प्रभुपहँआये॥
विविधवेष लखि हँसि भगवाना। प्रेमसहित इमि वचन बखाना॥
तुम्हरे बल आरिको संहारा॥मिलिसियतिलक विभीषणसारा॥
त्रिभुवन कीरति चलै तुम्हारी। पुनि जैहो मम धाम सुखारी॥

दोहा–अब तुम निज निज भवनको, वेगहि करो पयान।
सुनत चले कपि भालु सब, कहि जय श्रीभगवान॥

दोहा-सहित जानकी लषण प्रभु, अंगद अरु हनुमान ।
यूथनाथ सुग्रीव पुनि, लंकापति बलवान ॥

मुख्य मुख्य सब वीर बुलाई । लिये संग गुणनिधि रघुराई ॥
लीन्हें पुष्पक यान चढ़ाई । फणि दिन चले अवध हर्षाई ॥
जहाँ जहाँ प्रथमहिं रहि आये । प्रभु सो सीतहि सकल दिखाये ॥
घटज भेंट दण्डक वन माहीं । चित्रकूट आये मुनिपाहीं ॥
पुनि तीरथपति दीख प्रयागा । भरद्वाज मिलि अतिअनुरागा ॥
मही सुरन दीनो अति दाना । हनुमन्तहि बोले भगवाना ॥
शीघ्र अवधपुरको अब जाई । लावहु कुशल भरतकी भाई ॥
प्रभु इत चल निषादपहँ आये । मिले प्रेम करि अतिमुदपाये ॥
सुनत चले कपि प्रभुकी वानी । इत लखिअवधअवधिनियरानी ।
जहँ तहँ इमि शोचहिं पुरवासी । कब आवहिं इत आनँदरासी ॥
रघुपति विरह सतावत भारी । पुनि अकुलाय उठीं महतारी ॥
फणि दिन रवि भरणी जब आई । गणक बोलअसविनयसुनाई ॥
कब आवहिंगे बालक मोरे । कहो गणक लागहुँ पग तोरे ॥

दोहा-सुनत गणक तिथि पहर दिन, और नक्षत्र मिलाय ।
देइ सात कर भाग जो, बचे सो फलकहि जाय ॥ १ ॥
एक बचे तेइ थल रहत, द्वैते आवन होय ।
बचैं तीन मगमें समुझि, चौथे आवत सोय ॥ २ ॥
पंचम पाछे लौटही, छठयें व्याधि समेत ।
सप्तम मृत्यु विचारिये, प्रश्न पथिकके हेत ॥ ३ ॥
पहर तीसरे प्रश्न यह, प्रभु आये पुर पास ।
सुनि मातन दिय दान बहु, मनमें भयो हुलास ॥ ४ ॥

समर विजय रघुवीरके, चरित सुनहिं कर ध्यान ।
नित नूतनपावहिं विजय, बाढ़हि नितकल्यान ॥८॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ग्रंथउजागर, रावणवध राम-अवधआगमनो नामैकोनत्रिंशोऽध्यायः ॥ २९ ॥

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

अथ

श्रीविश्रामसागर.

उत्तरकाण्डप्रारंभ ।

दोहा–विधि हरि हर गणपति गिरा, सुमिरि राम सुखदान ।
सार रमायणमत कहौं, सुभग चरित्र बखान ॥ १ ॥
रहा एक दिन अवधि कर, भरत हिये अति शोच ।
शोचन लागे सुरति कर, कहि निज करणी पोच ॥२॥
जो नहिं अइहैं आज प्रभु, तौ मैं त्यागहुँ प्रान ।
तिहि अवसर तनु विप्र धर, आयगये हनुमान ॥ ३ ॥
प्रेमअश्रु गद्गद गिरा, जपत भरत हरिनाम ॥
देखतही तनु पुलकि हो, हनुमत कियो प्रणाम ॥ ४ ॥
जासु विरह शोचत अमित, जपत जासु कर नाम ।
सीता लक्ष्मण सहित सोइ, आवतहैं श्रीराम ॥ ५ ॥
बोले भरत सँदेश जस, द्विज तुम दियो सुनाय ।
याको का पलटो दिहैं, ऋणी तुम्हारे भाय ॥ ६ ॥
मारुतसुत निजनाम कहि, पुनि तिन आज्ञापाय ।
चले भरतकी प्रीति सब, कही रामसों जाय ॥ ७ ॥
सुनत यान चढ़ि प्रभु चले, गये अवध नियराय ।
भरत शत्रुहन गुरु सचिव, पुरजन चलि हर्षाय ॥ ८ ॥
जहँ तहँ पुरजन नारि नर, धाये दर्शन काज ।
एक एकते कहहिं अस, तुम देखे रघुराज ॥ ९ ॥

बहुतक नारी अटन चढ़ि, निरखन लगीं विमान।
बहुतक मंगल द्रव्य ले, लगीं करन गुणगान॥ १०॥
अवध उमड़ि सागर सदृश, चली राम शशिओर।
मनउछाह भरि लहर जनु, शब्द करत घनघोर॥११॥
भूषण वसन सँभारि सँभारी। जहँ तहँ चलतभये नरनारी॥
जहँ तहँ ध्वज पताक फहराहीं। इक बूझहिं इक आवहिं जाहीं॥
उचकहिं कोउ चढ़ि उच्चअटारी। उलटे पुलटे भूषण धारी॥
कोउरहिनिरखि झरोखन लागी। कब निरखहिं रघुवर अनुरागी॥
इतहिं भरत सब साज सजाई। गमनत भये जहां रघुराई॥
भरतहि आवत लख भगवाना। उतरायो भूमाहिं विमाना॥
तिहि कुबेरपहँ दीन पठाई। चले आप जहँ आवत भाई॥
धाय गहे गुरुचरण सुहाये। पुनि द्विज वृन्दनको शिरनाये॥
भरत गिरे पुनि चरणन जाई। बलकर प्रभु लिय हियेलगाई॥
मिले शत्रुहन भये सुखारी। पुरवासी लखि व्याकुल भारी॥
क्षणमें सबहिं मिले रघुराई। यह महिमा किछु जान न पाई॥
लषण भरत रिपुसूदन भेंटे। संभव विरह कठिन दुख मेंटे॥
भरत सीय पगरज धरि शीशा। मनभावति पुनि लही अशीशा॥
पुनि सबकपि धरि मनुजशरीरा। मिले सबनसों प्रेम अधीरा॥
बाजहिं बाजन विविध विधाना। सुमन वृष्टि नभते भइ नाना॥
तब प्रभु चले नगरके सोहीं। द्वार द्वार प्रति आरति होहीं॥

दोहा–पुनि धाईं सब मातु इमि, वत्स हेतु जिमि गाय।
प्रथम कैकयी भेंटि पुनि, मिले सबहिं रघुराय॥१॥
गये सबनके गेह पुनि, सबहिं मिले इक साथ।
सबके भोजन पान किय, व्यापक श्रीरघुनाथ॥२॥

मुनि दूजे दिन भरतकी, जटा प्रथम बिवराय ।
आपहु जटा निवारि प्रभु, न्हाये चारहु भाय ॥ ३ ॥
प्रात सप्तमी दिवस मुनि, कह्यो तिलकके काज ।
सुनत वचन अति नम्र ह्वै, बोले इमि रघुराज ॥ ४ ॥
विद्यामद अरु द्रव्यमद, बलमद यौवनजोर ।
इन सबहिनते राज्यमद, हैविशेष बड़घोर ॥ ५ ॥
तिहि पाये बौरात नर, ताते मुहिं न सुहाय ।
जग जीवनकर फल यहै, ब्रह्मविचार लखाय ॥ ६ ॥
कह मुनि तुम बिन कौन अस, वचन कहै रघुनाथ ।
काल कर्म गुण जासु वश, सो माया तव हाथ ॥ ७ ॥
छूटै सब अभिमान तिहि, जो सुमिरै तव नाम ।
अखिल विश्वपति मानबिन, तुम परिपूरणकाम ॥ ८ ॥
तिहिते लीजै तिलक प्रभु, पूजहु सब मन काम ।
जो आज्ञा कहि तनु सजे, पट भूषण अभिराम ॥ ९ ॥
घर घर बाजे बाजने, घर घर मंगलचार ।
तीरथजल मंगल कलश, सब आये तिहिबार ॥ १० ॥

जातरूप मय मण्डप सोहा । जो विलोकि सुरनायक मोहा ॥
मणिमय कंचन खंभ सुहाये । सुभग चँदोवा विमल तनाये ॥
मणि माणिक मुक्ता लटकाये । तिहि बिच रत्न सिंहासन लाये ॥
तिहि पर कमल अष्टदलसोहत । भाजन विविधनिरखिमनमोहत ॥
गुरु वशिष्ठ सब सुभग सँभारा । कहाँ राम अस वचन उचारा ॥
कर शृँगार सिय सह रघुराई । आये सकल द्विजनशिरनाई ॥
सीता सहित सिंहासन ऊपर । बैठारे रघुपति श्रीमुनिवर ॥
रतियुत जिमि सोहत है कामा । किधौं तडित युत मेघललामा ॥

किधौं सिद्धियुत बृहद विराजत। विद्या सहित ज्ञान जनुछाजत॥
शशि सम छत्र सुकंठ लिये कर। चँवर विभीषण हाथलिये बर॥
लषण लिये आदर्श सुहावन। अंगद पावन पाथ मुदितमन॥
रिपुहन पान खवावत निजकर। पंखा करत निषाद मुदितवर॥
जाम्बवन्त अरु श्रीहनुमाना। सेवत चरणकमल विधिनाना॥
भरत करत सब विधि सेवकाई। इहि विधि शोभित भे रघुराई॥

दोहा–अंग अंग शोभा अमित, जय धुनि सुनियत कान।
पुष्प वृष्टि नभते विपुल, करहिं अप्सरा गान॥१॥
पग घुँघरू अरु घंटिका, नूपुरकी झनकार।
नाकनटी अघटन घटी, गावहिं मंगलचार॥२॥
तिहिं क्षणकी शोभा अमित, को कवि वरणै पार।
उमड़ि उठ्यो आनँद जनु, फैल गयो संसार॥३॥
लख्यो समय अभिषेकको, तिलक कियो मुनिराय।
पुनि सबने कीनो तिलक, करी आरती माय॥४॥
भई निछावर विविध विध, विप्रन दीनो दान।
राजन दीनी भेट अति, को करि सकै बखान॥५॥
तब विरंचि कर जोरिकै, बहु विधि विनय सुनाय।
जय रघुनाथ अनाथपति, प्रणतपाल रघुराय॥६॥
धन्य भाग्य हैं तासुके, जिन यह लख्यो समाज।
मोहिं भक्ति दो दानमें, अपनी कौशल राज॥७॥
एवमस्तु कहि राम जब, विधि बैठे सुखपाय।
आये शंकर प्रेमवश, बोले वचन सुहाय॥८॥
भवसागरको पद कमल, प्रभु तव अहैं जहाज।
धैर्यमुनि हिय पग सुई, नित्त नमहुँ रघुराज॥९॥
हो शरण्य शिव अज सदा, सेवहिं सो जनपाल।
देत अभीष्ट सुहावनो, हरण पापदुखजाल॥१०॥

मुनिजन वन्दतपद कमल, सेवहिं नितहियलाय।
गुणागार रक्षहु सदा, जनको कोशलराय॥ ११॥
करि अस्तुति श्रीरामकी, बैठे शम्भु सुजान।
विप्ररूप धरि वेद तब, लगे करन गुणगान॥१२॥

छन्द—जय जगदीश अजेश ईश निर्गुण गुण रूपम्।
तारत भव संसार भूपकर रूप अनूपम्॥
जे नर तज तव भक्ति लगैं जगके सुखमाहीं।
सुरदुर्लभ तनु पाइ नरक हित कर्मकमाहीं॥
चरण कमलकी भक्ति हमैं दीजै रघुनायक।
एवमस्तु प्रभु कही गये विधिको गुणगायक॥
तब मुनि विश्वामित्र जयति कहि वचन उचारे।
रघुकुल कुमुद चकोर शशी धनु भंजन हारे॥
असुर निकन्दन आप जयति मुनि पालक रामा।
जय सुरवर सुखकरन जयति दशरथसुत श्यामा॥
भक्ति आपनी देहु सुनत प्रभु ओम् उचारा।
आये बालस्वरूप तहाँ सनकादि कुमारा॥
बोले जय भगवन्त अनामय एक अपारा।
करुणामय सर्वज्ञ सेव्य अज शम्भु उदारा॥
सुखप्रद नाम अनेक कर्म अति पावन कारक।
काम क्रोध मद लोभ दुःख हर जन उद्धारक॥
जगतारनको पोत सकल भय त्रास निवारक।
बसहु सदा मम हिये लषण सिय सहित सुधारक॥
तब मुनि कहत वशिष्ठ जयति रघुनन्दन रामा।
जयति सच्चिदानन्द अगोचर मन वच कामा॥

तुम्हरी महिमा अमित जीव जड़ जान न पावै ।
प्रगट विष्णु अवतार वेद कहि कहि गुण गावै ॥
देव पितर नर नाग जगत जहँ जहाँ लखावै ।
सो तव माया अलख रूप परभाव बतावै ॥
दोहा—तुमको जानै जबहिं जन, कृपा करहु जब आप ।
मम हिय बसहु निरन्तर, हरहु शोक सन्ताप ॥
इहि विधि सबहिन विनती कीनी । रघुपति कपिन प्रसादी दीनी ॥
लंकापतिहि मुकुट पहरावा । कुंडलयुगल कपीशहि पावा ॥
हनुमतको दीन्हीं गलमाला । पीताम्बर युवराज विशाला ॥
ऋक्षपतिहि जामा पहिरायो । औरन तनु भूषण सजवायो ॥
सबहि प्रसन्न कियो भगवाना । मुनिते इहिविधिवचन बखाना ॥
यह सब सखा विपतिके मेरे । समर जलधिको जानहु बेरे ॥
इन जस कियो परिश्रमभारी । सहसहुमुख नहिं सकहुँ उचारी ॥
भरतहुते मुहिं अधिक पियारे । मेरे हेत जन्म इन हारे ॥
लषणहुकी का करहुँ बड़ाई । लखि लघु बंधु जिया सकुचाई ॥
दोहा—सुनत रामके वचन वर, हर्षौ सकल समाज ।
धन्य धन्य सुर सुमन करि, करहिंजयतिरघुराज ॥ १ ॥
बोले पुर नर नारि इमि, रघुवर रूप निहार ।
नयन सफल करि लीजिये, शोभा अमितअपार ॥ २ ॥
नील मेघ मणि सरिस तनु, रविमणि सदृश प्रकाश ।
कोटि काम शोभाअधिक, कोशलपति सुखराश ॥ ३ ॥
मणि माणिक मुक्ताजटित, मुकुट विराजत शीश ।
रत्नजटित कुंडल सुभग, श्रुति राजतजगदीश ॥ ४ ॥
टेढी अलकावलि छुटी, माथे तिलक विराज ।
मनु अलि रवि लायेकिरण, कमलखिलावनकाज ॥ ५ ॥

दीरघ चंचल चारु दोउ, लोचन जग चख चोर।
खंजन मद भंजन सदा, मोहे लखि सब कोर ॥ ६ ॥
घुँघरारे कच सुमन युत, मणियुत मानहु नाग।
मुखशशिलखिजनुअमीहित, लखिअतिकियअनुराग
बिम्बाफल दाडिम दशन, मध्य रसन रसखान।
पद्मकोशमें कुलिश जनु, ताडितसंग सुखमान ॥ ८॥

मन्द हँसन बोलत मृदुवानी। मुखमें ताम्बूल सुखदानी ॥
कृपादृष्टि किय असी समाना। कम्बुकण्ठकौस्तुभ शुभमाना ॥
गल मुक्तनकी माल विराजै। बक पंक्ती जनु मेघन छाजै ॥
जानु प्रयत भुजा दोउ सोहैं। जनु युग यमुनधार मनमोहैं ॥
धनु शर तट भूषण अस जानो। भँवर कंज कर उत्तम मानो ॥
असित शैल जिमि तडितलखाई। तिमि उपवीत लसै सुखदाई ॥
नाभि शिरस त्रिवली पथ मानो। रोमावलि सेवालहि जानो ॥
कटि केहरि हरि किंकिण सोहै। जनु सुरवर मराल मन मोहै ॥
कदलि जंघ युग गुल्फ मनोहर। नूपुर बजनि अमोल लसतवर ॥
पुरट पद्मकी कलियन माहीं। जनु अलिगण बोलत हरषाहीं ॥
अरुण चरण शुभ चिह्नसुहाये। विधिहर जिन्हैं रहत हियलाये ॥
तिन पाँयनमें प्रीति दृढ़ाई। मिश्र सदा लव रहत लगाई ॥
इहि विधिनखशिखरूपनिहारी। मुदित भये सब नर अरु नारी ॥

दोहा—कहन लगीं नर नारि सब, देखहु प्रभु छबि आज।
अंग अंग शोभा अचल, तनुमें रही विराज ॥

अंग अंग शोभा अति भारी। अद्भुत रचना रची सँवारी ॥
युगल कमल दशदल तिनमाहीं। बसत हंस नहिं कबहुँ डराहीं ॥
बकपिकलालकीरमिलिफिरहीं। बैठे घेर चहूँदिशि थिरहीं ॥

तिनके बीच कामरथ शोभित । मणिमयचक्रविराजतअतिहित ॥
कमल माल रतिहासा गलकी । तिहि ऊपर रंभातरु झलकी ॥
तापर करि करिपर मृगराजा । दिव्य वसन तिहि ऊपरभ्राजा ॥
सरमधि हरिपर भँवर विराजैं । तिहिपर बहुविधिखगगणसाजैं ॥
सरपर द्वो गिरि सुवरण केरे । तिनपर सखीनील घन हेरे ॥

दोहा-पँचरंगी तिहिपर सुमन, रहे परेवा सोह ।
तिहिपर कुसुम सुभगअति, तापरअलिगणमोह ॥ १ ॥
तापर द्वो फल बिम्बके, तिहिपर शुक पिक देख ।
तिहिपर बिंब खंजन शुभग, खंजनपर घनरेख ॥ २ ॥
तिहिपर शशि रंजन सुभग, दिनमणि चहूँ उदोत ।
मानहु चन्द्र सहायहित, आये मंगल होत ॥ ३ ॥
शशिपर बहुतक नखतभा, इन्दु मयन्दु सुभाय ।
तिहिपर गिरि गिरिपर सुभग,काननरह्योसुहाय ॥ ४ ॥
तिहि बिच शुभ पथ लाल इक, तिहिपरमणिधरएक ।
नागिनि शोभित ताहि अध, दीरघ सरिता टेक ॥ ५ ॥
ताते सरित सुहावनी, युगल बही सुखदान ।
जलचर विपुल विविध तहाँ, कोकरिसकैबखान ॥ ६ ॥
युगल कमल फूले विमल, क्रीडत विविध विहंग ।
सुनत सखी देखन चली, भूप भवन यह रंग ॥ ७ ॥

दम्पति रूपनिरखिसुखपावहिं । लखिछबिसफलहोयघरआवहिं ॥
सायंकाल भयो इहि भाँती । जहँ तहँ बरी दीपगण पाती ॥
शेष मिलन जनु भूसुत आये । तब मुनिसबहिंरजायसुनाये ॥
सन्ध्या करि सब मुनि शिरनाये । राजसभामें पुनि सब आये ॥
एक पहर तक सुनो पुराना । उठिपुनि भवन चले भगवाना ॥

गये सभासद निज निज गेहा। रघुपति मातन मिले सनेहा॥
अनुजसहित प्रभु भोजन कीन्हा। सखनसहित अतिआनँदलीन्हा
कह्यो मातु तब सोवहु लाला। सुनत चले प्रभु भवन विशाला॥
दोहा-सखिन कीन सेवा तहाँ, स्रक् सुगंध अँग लाय।
नृत्य गान बहु भाँति किय, प्रभु पौढ़े हरषाय॥
होत प्रभात उठे सब भ्राता। मातन हिय आनँद न समाता॥
शौच होय कीन्हों अस्नाना। दिये याचकनको बहु दाना॥
मातन मुदित आरती कीन्हीं। हरिमूरतिछबिउरधारिलीन्हीं॥
पुनि सब सखा संग भगवाना। सरयू जाय कियो अस्नाना॥
तहाँ दान बहु विप्रन दीन्हें। आशीर्वाद सबहिंसन लीन्हें॥
पूजन करि मन्दिर पगु धारा। मातन अशन परोसे थारा॥
भोजन करि कछु करि विश्रामा। पुनि दरबार गये श्रीरामा॥
पृथक् पृथक् सबहिन समुझावा। रामराज्य सबहिन सुखपावा॥
दोहा-रामचन्द्रके राज्यमें, सुख पायो सब लोक।
आधिव्याधि संकट तथा, त्रिविध ताप नहिं शोक॥
कामधेनु भइ भूमि सुहाई। माँगत वर्षा होत सुहाई॥
वर्णाश्रम निज धर्म कराहीं। वैर भाव काहू में नाहीं॥
बाल युवा बूढ़े नर नारी। रघुपति पद रति सबहिन धारी॥
रघुपति चरित सुनें सब कोई। परमानन्द छिनहिं छिन होई॥
अजहूं जो प्रभुपद मन लावहिं। रामराज्यकर सुख ते पावहिं॥
रघुपति लीला कहहिं जु गावहिं। सुखसम्पतिनानाविधिपावहिं॥
प्रभुके चरित लहै को पारा। कहे यथामति मैं करिसारा॥
सुनत सकल श्रोता हर्षाने। धन्यभाग्यनिजलखिसुखमाने।
मिश्र कहत कर जोर निहोरी। प्रभुसुनिये विनती कछु मोरी॥

दोहा–तुम प्रभु जो आज्ञा करी, सो मैं शिर धरि कीन्ह ।
चरित कहे कछु आपके, तुमको अर्पण कीन्ह ॥ १ ॥
बुरो भलो जस ग्रन्थ यह, अपनी ओर निहार ।
कृपासिंधु रघुराज प्रभु, करिये अंगीकार ॥ २ ॥

श्रीगुरुचरण कमल हिय लाई । कीनो ग्रन्थ सुजन सुखदाई ॥
इष्ट हमारे हैं सिय रामा । तिनको नितप्रति करत प्रणामा ॥
राम रकार मकार सुहाये । बिन्दु जानकी लाल कहाये ॥
जो पावन कर पावनकारी । शुचि सन्तनके प्राण सुखारी ॥
बहुत ग्रन्थको लेकर सारा । विश्रामोदधि कियो विचारा ॥
स्वच्छ मधुर आयुष्य प्रदायक । कहे चरित्र कछुक रघुनायक ॥
बहुत चरित्र कहे यहि माहीं । कथारसिक सुनि नाहिं अघाहीं ॥
सन्त परिश्रम देखहिं मोरा । सुख सम्पति पावहिं बरजोरा ॥
तीनों ताप मिटहिं क्षणमाहीं । मनइच्छित सबही जन पाहीं ॥
चारों युग हरि भक्ति प्रतापा । जानत सन्त हरत सन्तापा ॥

दोहा–सहजहि जो हरि वशकरत, तिहिसमान नहिं कोइ ।
कलिमें भवनिधि तरनको, अन्य उपाय न होइ ॥ १ ॥
विधि सुरपति गुरु शुक्र ऋषि, मुनि जो भये अगार ।
ते सबही हरि भजनकर, भे भवसागर पार ॥ २ ॥

औरहु नव नन्दादिक जोई । गोपादिक अहिनाथक होई ॥
नीवादित्य तरणि सुरतरुही । स्वामी मध्वाचार्य कुरुही ॥
स्वामी विष्णु निम्बलाचारज । रामानन्द रंग श्रीआरज ॥
पद्मपानी कीलाग्र सुहाये । शंकर पारस सन्त कहाये ॥
श्रीधर अरु जयदेव अनेका । मंगल विल्व महान विवेका ॥
प्रभु वल्लभ अरु भये त्रिलोचन । कुवा गदाधर मंगल हरिजन ॥

यह सब भक्त भये भगवाना। जिन रिझाय लीने भगवाना॥
मासू भांजे अरु हरिहंसा। भे सद्भक्ति महान् प्रशंसा॥
मोरध्वज तनु अपण कीन्हा। दर्शन कियो भक्ति वर लीन्हा॥

छन्द-लियो भक्ति वर दीन्ह महिषी गोपकी द्विजकारने।
भरी साखीहेतु गणिका गये आप उधारने॥
राम कहि सुख लीन्ह सुन्दरि भक्ति रैदासहि करी।
कित वार हेत कबीरकी प्रभु आन प्रतिज्ञा धरी॥
धनाको पुनि बीज बिन भगवान खेत जमायहू।
सेनहित छुर लियो आपहि भक्तिपथ दरशायहू॥
सुख दियो माधवदासको हरि व्यास दीक्षा दीनहू।
नरहरी तोषे भक्ति तत्वा जीव नाभा कीनहू॥
भूगर्भ देव मुरारि नित्यानन्द गिरिधरके सखा।
गोपाल गज गोविन्द रूप सनातनादिकहूं लखा॥
विठ्ठलेश नरसी भक्त हित बहुभाँति सिद्धि दिखायहू।
पीपापतित पावन कियो परमार्थ रूप लखायहू॥
कोतछु केशव भट रत्नावती करमैतीतरी।
पुनि भई गिरिधर लीन मीरा भक्ति अनुपम दृढ़करी॥
पुनि भक्त तुलसीदास पावन रामयश विस्तारऊ।
कवि कृष्ण लखन प्रयाग जूड़े बहुत सन्त उधारऊ॥
भे सन्त जगत अनन्त औरहु अहैं आगे होयहैं।
मिश्र तिनके चारित सुन्दर प्रगट कहँ अस कोयहैं॥
सन्त जनके चारित अद्भुत पार कोइ न पावहीं।
निज बुद्धिके अनुसार कर निर्माण कविजन गावहीं॥

दोहा–सब सन्तनसे विनय मम, अति हित बारंबार।
आपहि के हित ग्रंथ यह, करिये अंगीकार ॥ १ ॥
सन्त और भगवंतकी, कीरति लिखी बनाय।
सन्तनको सर्वस्व यह, देखहु यह मन लाय ॥ २ ॥
कविता ओछी देखके, होत न तुहिं परतीति।
रघुपतिचरित विलोकिके, सन्त करहिंगे प्रीति ॥३॥
तुम्हरी कृपाकटाक्षसे, सफल मनोरथ होय।
निज स्वभावकी ओर लखि,हो प्रसन्न सब कोय॥४॥
सद्ग्रन्थनको सार ले, रच्यो अनूपम ग्रंथ।
सन्तनको सुखकारि यह, धर्मिनको शुभ पंथ ॥ ५ ॥
भूल चूक जो होय कछु, सज्जन लेहिं सुधार।
मैं सब कछु यामें कह्यो, सद्ग्रंथन अनुसार ॥ ६ ॥
अब रघुपति पदपद्म गहि, विनय करहुँ शिरनाय।
तुम्हरी कृपा कटाक्षसे, काज सकल बन जाय ॥७॥
बहुत बार रक्षा करी, जैसे कृपा अगार।
तैसे अबहूं पालिये, दीनबन्धु सुखसार ॥ ८ ॥
चहौं न जगके सुख अधिक, पद न चहौं निर्वान।
निजचरणनकी भक्ति मुहिं, दीजै कृपानिधान ॥ ९॥
सीता लक्ष्मण भरतसह, ममहिय करहु निवास।
दीनबन्धु सन्तन सुखद, सच्चित् आनँदरास ॥१०॥
महावीर संकटहरन, दुष्ट दलन जगजान।
अपनोदास विचारिके, रक्षा कीजे आन ॥ ११ ॥
यह चाहत कर जोर कर, प्रभु ज्वाला प्रसाद।
जन्म जन्म तव भक्ति रह, प्रेम बढ़ै अहलाद ॥१२॥

सम्वत शशिशरअंकविधु, आश्विन शुक्लसुमास ।
विजयादशमीके दिवस, पूरयो ग्रन्थप्रकास ॥ १३ ॥
दीनबन्धु सुन्दरसुखद, जनपरिपूरण काम ।
द्विजज्वाला प्रसादके, हिये बसहु नितराम ॥ १४ ॥

इति श्रीविश्रामसागर सबमतआगर ग्रंथउजागर पण्डित ज्वालाप्रसाद मिश्रकृतौ उत्तरकाण्डे रामराज्याभिषेकवर्णनं नाम त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३० ॥

इति श्रीविश्रामसागर समाप्त ।

पुस्तक मिलनेका ठिकाना-
खेमराज श्रीकृष्णदास,
"श्रीवेङ्कटेश्वर" छापाखाना-बंबई.

इति

श्रीविश्रामसागर

समाप्त ।